॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

युग प्रमुख चारित्र शिरोमणि सन्मार्ग दिवाकर आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ती वर्ष के उपलक्ष में

पुष्प न ५५

मूल ग्रन्थ कर्त्ता श्रीमद् रविषेणाचार्य

श्री पद्म पुराण जी भाषा-वचनिका

हिन्दी अनुवाद

स्वर्गीय पण्डित दौलतरामजी कृत

प्रेरक

उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज

निर्देशिका

आर्यिका स्याद्वादमती माताजी

~~स्व. पूज्य पिताजी [illegible] जी अजमेरा एवं स्व. पूज्य माताजी श्रीमती कमलाबाई की पुण्य स्मृति में सादर भेंट~~

ताराचन्द अजमेरा

एच ५/५ कृष्णा नगर, दिल्ली ११० ०५१

प्रबन्ध सम्पादक

ब्र श्री धर्मचन्द्र जी शास्त्री प्रतिष्ठाचार्य

जैनमदिर उदासीनआश्रम गुलाब वाटिका (लोनी रोड दिल्ली)
ब्र प्रभाजी पाटनी (आचार्य विमल सागरजी सघ)
प्रतिया १०००
न्योछावर रुपये १०१/ रुपये
जनवरी १९९१
वी नि स २५१६
मुद्रक
राधा प्रेस गाधी नगर दिल्ली
ग्रन्थ प्राप्ति स्थान
१ श्री आचार्य विमलसागरजी सघ
२ सुमेरचन्द जैन कटरा शाहन शाही दिल्ली ६
३ राजीव टेक्सटाईल महावीर बजार कटरा शाहन शाही दिल्ली ६
४ ताराचन्द जैन एण्ड क
१९५१ कटरा शाहन शाही चादनी चौक दिल्ली ११० ००६
५ अनेकान्त सिद्धान्त समिति लोहारिया जि बासवाड़ा
६ जैन मदिर गुलाब वाटिका लोनी रोड, दिल्ली ६
ताराचन्द्र अजमेरा
एच ५/५ कृष्णा नगर दिल्ली ११००५१ दूरभाष प्रतिष्ठान ३२६९८८४ निवास २२४२६६८

आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज

उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज

समर्पण

युगप्रमुख
चारित्र शिरोमणि
सन्मार्ग दिवाकर
करुणा निधि
वात्सल्य मूर्ति
अतिशय योगी
तीर्थोद्धारक चूड़ामणि
अपाय विचय धर्मध्यान के ध्याता
शान्ति सुधामृत के दानी
वर्तमान मे धर्म पतितो के उद्धारक
ज्योति पुञ्ज पतितो के पालक
तेजस्वी अमर पुञ्ज
कल्याणकर्ता दु खो के हर्ता समदृष्टा
बीसवी सदी के अमर सन्त
परम तपस्वी इस युग के महान साधक
जिन भक्ति के अमर प्रेरणास्रोत
पुण्य पुञ्ज
गुरुदेव आचार्यवर्य श्री १०८ श्री विमलसागरजी महाराज के कर कमलों में
ग्रन्थराज" समर्पित

आशीर्वाद

उपाध्याय मुनि श्री भरतसागर जी

आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज का हीरक जयन्ती वर्ष हमारे लिए एक स्वर्णिम अवसर लेकर आया है । तीर्थंकरों की वाणी स्याद्वाद वाणी का प्रसार सत्य का प्रचार है ।

असत्य का उखाडना है तो असत्य का नाम भी मुख से न निकालो सत्य स्वय ही प्रस्फुटित हो सामने आयेगा ।

वर्तमान में कुछ वर्षों से जैनागम को धूमिल करने वाला एक श्याम सितारा ऐसा चमक गया कि सत्य पर असत्य चादर थोपने लगा । वह है एकान्तवाद निश्चयाभास ।

असत्य को अपना रग चढाने में देर नहीं लगती यह कटु सत्य है । कारण जीव के मिथ्यासस्कार अनादिकाल से चले आ रहे हैं । फलत पिछले ७ ८ वर्षों में एकान्तवाद सस्कार ने जैन का टीका लगाकर निश्चयनय की आड में स्याद्वाद को कलकित करना चाहा । घर घर में मिथ्याशास्त्रों का प्रचार किया । आचार्य कुन्दकुन्द की आड में अपनी ख्याति चाही और भावार्थ बदल दिये अर्थ का अनर्थ कर दिया ।

बुधजनों ने अपनी क्षमता से मिथ्यात्व से लोहा लिया पर अपनी तरफ से जनता को सत्य साहित्य नहीं दिया । आर्यिका स्याद्वादमती जी ने इस हीरक जयन्ती वर्ष में एक नया निर्णय आचार्यश्री व हमारे सानिध्य में लिया कि असत् साहित्य हो हटाने के पूर्व हमारा आगम जन जन के सामने रखें अनेक योजनाओं में से एक मुख्य योजना सामने आई आचार्य प्रणीत ७५ ग्रन्थों का प्रकाशन हो । जिनागम का का भरपूर प्रकाशन हो सूर्य का प्रकाश जहा होगा श्याम सितारा वहा क्या करेगा । सत्य का मण्डन करते जाइए असत्य का खण्डन स्वय होगा । असत्य को निकालने के पूर्व सत्य को थोपना आवश्यक है ।

ग्रन्थों के प्रकाशनार्थ जिन भव्यात्माओं ने अपनी स्वीकृतिया दी हैं परोक्ष प्रत्यक्ष रूप से सहायता दी है सबको हमारा आशीर्वाद है ।

सकल्प

णाणा पयास सम्यग्ज्ञान का प्रचार प्रसार केवल ज्ञान का बीज है । आज कलयुग में ज्ञान प्राप्ति की तो होड लगी है पद्विया और उपाधिया जीवन का सर्वस्व बन चुकी हैं परन्तु सम्यग्ज्ञान की ओर मनुष्यों का लक्ष्य ही नही है ।

जीवन में मात्र ज्ञान नही सम्यग्ज्ञान अपेक्षित है । आज तथाकथित अनेक विद्वान् अपनी मनगढन्त बातों की पुष्टि पूर्वाचार्यों की मोहर लगाकर कर रहे हैं ऊटपटाग लेखनिया सत्य की श्रेणी में स्थापित कीं जा रही है कारण पूर्वाचार्य प्रणीत ग्रन्थ आज सहज सुलभ नहीं है और उनके प्रकाशन व पठन पाठन की जैसी और जितनी रुचि अपेक्षित है वैसी और उतनी दिखाई नहीं देती ।

असत्य को हटाने के लिए पर्चेबाजी करने या विशाल सभाओं में प्रस्ताव प्रारित करने मात्र से कार्य सिद्ध होना अशक्य है । सत्साहित्य का प्रचुर प्रकाशन व पठन पाठन प्रारम्भ होगा असत् का पलायन होगा । अपनी सस्कृति की रक्षा के लिए आज सत्साहित्य के प्रचुर प्रकाशन की महती आवश्यकता है —

यनैते विदेलन्ति वादिगिरय स्तुष्यन्ति वागीश्वरा
भव्या येन विदन्ति निवृतिपद मुञ्चति मोह बुधा ।
यद् बन्धुर्यमिना यदक्षयसुखस्याधार भूत मत
तल्लोकजपशुद्धिद जिनवच पुष्याद् विवेक श्रियम् ।।

सन् १९८४ से मेरे मस्तिष्क में यह योजना बन रही थी परन्तु तथ्य यह है कि सकल्प के बिना सिद्धि नहीं मिलती । सन्मार्ग दिवाकर आचार्य १ ८ श्री विमलसागर जी महाराज की हीरक जयन्ती के मागलिक अवसर पर मा जिनवाणी की सेवा का यह सङ्कल्प मैंने प पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री व उपाध्याय श्री के चरण सानिध्य में लिया । आचार्य श्री व उपाध्याय श्री का मुझे भरपूर आशीर्वाद प्राप्त हुआ । फलत इस कार्य में काफी हद तक सफलता मिली है ।

इस महान् कार्य में विशेष सहयोगी प धर्मचन्दजी व प्रभाजी पाटनी रहे । इन्हें व प्रत्यक्ष परोक्ष में कार्यरत सभी कार्यकर्त्ताओं के लिए मेरा पूज्य गुरुदेव के पावन चरण कमलों में सिद्ध-श्रुत आचार्य भक्ति पूर्वक नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु

सोनागिर ११-७ ९ —आर्यिका स्याद्वादमती

आभार

सम्प्रत्यस्ति न केवली किल कलौ त्रैलोक्यचूडामणि ।
स्तद्वाचः परमासतेऽत्र भरतक्षेत्रे जगद्योतिका ॥
सद्रत्नत्रयधारिणो यतिवरांस्तेषा समालम्बनं ।
तत्पूजा जिनवाचिपूजनमतः साक्षाज्जिनः पूजित ॥ पद्मनन्दी प ॥

वर्तमान में इस कलिकाल में तीन लोक के पूज्य केवली भगवान इस भरतक्षेत्र में साक्षात् नहीं है तथापि समस्त भरतक्षेत्र में जगत्प्रकाशिनी केवली भगवान की वाणी मौजूद है तथा उस वाणी के आधारस्तम्भ श्रेष्ठ रत्नत्रयधारी मुनि भी हैं इसलिये उन मुनियों की पूजन तो सरस्वती की पूजन है तथा सरस्वती की पूजन साक्षात् केवली भगवान की पूजन है ।

आर्ष परम्परा की रक्षा करते हुए आगम पथ पर चलना भव्यात्माओं का कर्त्तव्य है । तीर्थंकर के द्वारा प्रत्यक्ष देखी गई दिव्यध्वनि में प्रस्फुटित तथा गणधर द्वारा गूंथित वह महान आचार्यों द्वारा प्रसारित जिनवाणी की रक्षा प्रचार प्रसार मार्ग प्रभावना नामक एक भावना तथा प्रभावना नामक सम्यग्दर्शन का अग है ।

युगप्रमुख आचार्य श्री के हीरक जयति वर्ष के उपलक्ष में हमें जिनवाणी के प्रसार के लिये एक अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ है । वर्तमान युग में आचार्य श्री ने समाज व देश के लिये अपना जो त्याग और दया का अनुदान दिया है वह भारत के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा । ग्रन्थ प्रकाशनार्थ हमारे सानिध्य या नेतृत्व प्रदाता पूज्य उपाध्याय श्री भरतसागरजी महाराज व निर्देशिका तथा जिन्होंने परिश्रम द्वारा ग्रन्थों की खोजकर विशेष सहयोग दिया ऐसी पूज्या आ स्याद्वादमतीमाताजी के लिये मैं शत शत नमोस्तु वन्दामि अर्पण करती हू । साथ ही त्यागीवर्ग जिन्होंने उचित निर्देशन दिया उनको शत शत नमन करती हू । तथा ग्रन्थ के सम्पादक महोदय श्रीमान् ब्र प धर्मचन्द जी शास्त्री प्रतिष्ठाचार्य ग्रन्थ के संशोधक तथा ग्रन्थ प्रकाशनार्थ अनुमति प्रदाता ग्रन्थमाला एव ग्रन्थ प्रकाशनार्थ अमूल्य निधि का सहयोग देने वाले द्रव्यदाता एव प्रकाशक श्री ताराचन्द जी अजमेरा की मैं आभारी हू तथा यथा समय शुद्ध ग्रन्थ प्रकाशित करने वाले आदि की भी मैं आभारी हू । अन्त में प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में सभी सहयोगियों के लिये कृतज्ञता व्यक्त करते हुए सत्य जिनशासन की व जिनागम की भविष्य में इसी प्रकार रक्षा करते रहें ऐसी भावना करती हू ।

कु. प्रभा पटनी संघस्थ

महामत्र णमोकार

णमो अरिहताणं
णमो सिद्धाण
णमो आइरियाण
णमो उवज्झायाण
णमो लोए सव्व साहूण

महामत्र एक दर्पण

श्री महामत्र का पाठ, करो नित प्रात, बात यह मानो ।
शिव मारग निधि पहिचानो ॥
यह महामत्र जिन शासन का, जिनवाणी के उद्घाटन का ।
इस महामत्र की शक्ति स्वय में जानो शिव मारग. ॥
शिव मार्ग स्वरूपी महामत्र, हर पद जिसका निज में स्वतन्त्र ।
हर पद की व्याख्या स्वय सिद्धमय ज्ञानो शिव मारग. ॥
है नमन् । प्रथम अरिहतों को, शिव मार्ग रूप भगवन्तों को ।
निज अनुशासन का भेद स्वय विज्ञानो शिव मारग ।
दूजा पद सिद्ध स्वरूपी है, अन्तर आतम अनुभूति है ।
अनुपम अनुभूति अन्तर मन में ध्यानो शिव मारग. ॥
तीजा पद है आचार्यों का, शिवमारग के शुभ कार्यों का ।
श्रावक से श्रमण बनाकर जग कल्याणो शिव मारग. ॥
है । णमो णमो उवज्झायाण, जिनवाणी का करते वाचन ।
जिन वचन स्वय में जान सबै समझानो शिव मारग. ॥
है नमन् स्वय के साधक को, आतम गुण क आराधक को ।
कर्मों से काटें कर्म, धार मुनि बानो शिव मारग.. ॥
है ऐसो पच णमोकारो, जग का पापों से उद्धारो ।
मगल हो सबका तारा भावना भानो शिव मारग. ... ॥

यह महामत्र एक दर्पण है, आतम साधक हित अर्पण है ।
आतम में परमातम मय रूप दिखानो शिव मारग.... ॥
नहिं वर्ण भेद, नहिं जाती है, यह महामंत्र एक थाती है ।
मन, वच, तन से करलो इसका श्रद्धानो शिव मारग. ॥
श्रद्धा से जो धारण करता, शिव मारग का राही बनता ।
निश्चय से होता मुक्त, सत्य यह मानो शिव मारग. ॥
श्री महामत्र का पाठ, करो नित प्रात, बात यह मानो ।
शिव मारग निधि पहिचानो ॥

श्री जिनायनम

दो शब्द

स्वाध्याय परमम् तप

स्वाध्याय ही सर्वोत्कृष्ट तप है । सद् शास्त्रों का पठन पाठन करने से ही सद्ज्ञान या सम्यग् ज्ञान की प्राप्ति होती है । ससार में सब वस्तुए उपलब्ध हो सकती है पर सम्यग्ज्ञान का प्राप्त होना बडा दुर्लभ है कवि ने भी लिखा है कि धन कन कचन राजसुख सबहि सूलभ कर जान । दुर्लभ है ससार में एक यथारथ ज्ञान ॥ यथारथ ज्ञान अर्थात सम्यग् ज्ञान का प्राप्त होना बडा दुर्लभ है और उस सम्यग ज्ञान की प्राप्ति आगमोक्त शास्त्रों के स्वाध्याय से ही हो सकती है इस हेतु से ही परम पूज्य घोर तपस्वी निमित्त ज्ञान शिरोमणी १ ८ आचार्य प्रवर श्री विमल सागर जी महाराज की ७५वीं पृ जयन्ती पर सघस्थ स्याद्वाद केशरी उपाध्याय श्री १ ८ भरत सागर जी महाराज ने एव १ ५ सघस्थ आर्यिका श्री स्याद्ववाद मती माता जी ने जन कल्याण हेतु तथा सम्यग्ज्ञान की उपलब्धी हेतु ७५ ग्रथों के प्रकाशन की योजना समाज के सामने रक्खी और उन की सद प्रेरणा और आशीर्वाद से अब तक कई ग्रथ प्रकाशित भी हो गये तथा हो रहे हैं उन्हीं में से एक ग्रन्थ है श्री पद्म पुराण (पद्म पुराण यह प्रथमानु योग का महान ग्रथ है) जिसमें मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान राम चन्द्र का जीवन चरित्र है यह एक ऐसा सर्वमान्य ग्रथ है जिसका जैनाजैन सभी सम्मान पूर्वक स्वाध्याय करते हैं वैदिक आम्नय की रामायण भी इसीका अश है सघ में इस विशाल महान ग्रथ के प्रकाशन की चर्चा चल रही थी कि निमित्त से स्वाध्याय प्रेमी श्री ताराचद जी अजमेरा दिल्ली वालों का परम पूज्य आचार्य श्री के दर्शनार्थ श्री दि जैन सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी जाने का सुअवसर आ गया सघ के दर्शन किये वहीं इस ग्रथ के प्रकाशन की चर्चा चली थी श्री ताराचद जी सा का ध्यान इस ओर गया और भावना हो गई कि यदि यह सौभाग्य मुझे प्राप्त हो जावे तो कितना अच्छा हो आपने ग्रंथ प्रकाशन का निश्चय कर आचार्य श्री से अपनी भावना व्यक्त की । पूज्य उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज और पूज्य आर्यिका स्यादद्वाद माताजी से भी श्री ताराचद जी ने स्वीकृति हेतु निवेदन किया आप की तीव्र अभिलाषा देखते हुये आप को ग्रथ प्रकाशन की स्वीकृति प्राप्त हो गई साथ ही आपने उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज से निवेदन किया कि मुझे सदैव ग्रंथ प्रकाशन में मेरे भ्राता पडित लाडली प्रसाद जी पापड़ी वाल सवाई माधोपुर वालों का सहयोग मिलता रहा है अत उन से भी चर्चा करलू । मेरे सामने श्री ताराचद जी ने इस ग्रथ के प्रकाशन की चर्चा की मुझे बडी प्रसन्नता हुई और मैंने कह दिया कि यह बहुत उत्तम कार्य है मेरे से जो सेवा बन सकेगी अवश्य सहयोग करूगा और पूज्य आचार्य श्री का आशिर्वाद लेकर श्री पदम पुराण की प्राचीन प्रति प्रकाशनार्थ ले आये तथा प्रयत्न और लगन पूर्वक छपवानें का कार्य प्रारभ कर दिया जो ग्रथ आप के कर कमलों में है

श्री ताराचद जी का सक्षिप्त जीवन परिचय

श्री तागचद जी स्व श्रीमान लाला फूलचद जी सा अजमेरा दिल्ली निवासी के सुपुत्र है आप की मातुश्री स्व कमलाबाई जी थी । दोनों ही गुरू भक्त धर्म परायण सरल स्वभावी श्रावक के षट कर्मो का पालन करने वाले थे दि जैन खडेलवाल ममाज में आप का बहुमान था श्रीमति कमलाबाई ने तीन पुत्र रत्नों को जन्म दिया । पदमचद जी ताराचद जा और माणक चद जी ।तीनो ही पुत्र पूर्ण धार्मिक वृत्ति के हुय ।श्री ताराचद जी का जन्म अगस्त १९२१ दिल्ली में हुआ । आप प्रारभ से ही चचल प्रकृति के परिश्रमी एव स्वाभिमानी रहे हैं धार्मिक विचार भी आप के प्रारभ से ही रहे हें आपका विवाह आगरा निवासी धर्म परायण लाला कुन्दनलाल जी लुहाडया की सुपुत्री सौ किरणबाई के साथ हुआ ये भी बहुत ही सग्ल स्वभावी गुरू भक्त धार्मिक वृत्ति की है । श्रावक के षट कर्मो का पालन दोनों तन मन धन से करते हैं । आपका सारा परिवार धार्मिक वृत्ति का है । श्री ताराचद जी के दो पुत्र ललित कुमार जी एव सुमत कुमार जी है जो कपडे के प्रसिद्ध व्यवसाई हैं । तीन पौत्र मनीष सन्केत और सौरभ है दोनों पुत्रवधु सौ शशी और सौ मधु आज्ञाकारिणी हैं । यद्यपि श्री ताराचद जी ने दिल खोलकर कपडे का व्यवसाय किया पर अब आपने व्यवसाय का सारा कार्य भार अपने दोनों पुत्रों को सभला दिया है और अब आपका अधिकाश समय धर्माराधन गुरूसेवा में व्यतीत होता है । तीर्थवदना साहित्य प्रकाशन में अपनी चचला लक्ष्मी का सदुपयोग करते रहते हैं ।मैं प्रभु से यही प्रार्थना करता हू कि इनका दाम्पत्य जीवन दीर्घायु हो सुखी हो और आप मदैव इसी प्रकार चचला लक्ष्मी का धार्मिक कार्यों में सदुपयोग करते रहें । परमपूज्य आचार्य श्री के चरणों में शतश नमन करते हुये श्री वीर प्रभु स प्रार्थना करता हू कि आचार्य श्री दीर्घायु हों आरोग्यपूर्वक रत्नत्रय का पालन करते हुए चिरकाल तक धर्म देशना देते रहें ।

प लाड़ली प्रसाद जैन पापडी वाल सवाई माधौपुर (राज)

प्रकाशकीय

तुभ्य नम परम धर्म प्रभाव काय ।
तुभ्य नम परम तीर्थ सुवृन्दकाय ।
स्याद्वाद सूक्ति सरणि प्रतिबोधकाय ।
तुभ्य नम विमल सिन्धु गुणार्णवाय ॥

महानुभाव धर्म बन्धुओ !

यह मेरा परम सौभाग्य है कि प्रात स्मरणीय सन्मार्ग दिवाकर करुणा निधि निमित्त ज्ञान शिरोमणि आचार्य श्री १ ८ पूज्य विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ती वर्ष के शुभ अवसर परम पूज्य उपाध्याय विद्यागुरु ज्ञान दिवाकर श्री १ ८ भरत सागरजी महाराज एव पूज्य आर्यिका १ ५ स्याद्वाद मती श्री माताजी के प्रेरणा एव निर्देशन में हीरक जयन्ती वर्ष पर आचार्य श्री जी के शुभाशीर्वाद से ७५ ग्रन्थों के प्रकाशन का निर्णय लिया गया । इस मुख्य योजना में एक ग्रन्थ मुझको भी सोपा गया तदनुसार उसी श्रृखला मे इस ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा रहा है सम्प्रति आचार्य वर्य पूज्य विमलसागरजी महाराज एवं उपाध्याय भरतसागरजी महाराज आर्यिका स्याद्वाद मती माताजी समस्त सघ के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करता हुआ उनके श्री चरण कमलों में शत शत नमोस्तु करता हू ।

आचार्य श्री १ ८ कल्याण सागर जी महाराज की भी मुझ सेवक पर असीम कृपा रही है जिन्होंने मुझसे श्रवणाचार (दश भक्ति सग्रह) का प्रकाशन करवाकर इस मार्ग पर प्रेरित किया और मेरे द्वारा श्रवणाचार (दस भक्ति सग्रह) का प्रकाशन हुआ मै उन्ही के अनुकम्पा पूर्ण मगलमय आशीर्वाद से यह भार उठाने में समर्थ हुआ हू । उनके पावन

चरणार विन्दों में भी मैं शत शत वन्दन करता हू ।

मैं उन सभी महानुभावों का भी आभारी हू जिन्होंने मुझे इस ग्रन्थ के प्रकाशन मे मेरा उत्साह वर्धन किया । मैंआदरणीय विद्वद्वर प्रतिष्ठाचार्य भाई सा प श्री लाडली प्रसाद जी पापडीवाला (सवाई माधोपुर) का भी अत्यन्त आभारी हू जो इस ग्रन्थ के प्रकाशन में समय समय पर मुझे सुझाव देते हुए मेरा मार्ग दर्शन करने रहे हैं ।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में एक सो इक्कीस रीम कागज का उपयोग हुआ है जिसमें भाई साहब श्री एस के जैन कटरा शाहन शाही वालोने ६ रीम कागज का भार उठा कर सहयोग प्रदान किया मैं भाई सुनील सुधीर सुबोध कुमार वडजात्या का भी आभारी हू जिन्होंने इस ग्रन्थ की वाइन्डिंग जिल्द का भार उठाकर अपना सहयोग प्रदान किया में अपनी धर्म पत्नि श्रीमती किरण देवी अपने सुपुत्र ललित कुमार एव सुमत कुमार पुत्र वधू शशी देवी मधु देवी का भी आभारी हू जिन्होंने मेरी अथक सेवा करके मुझे इस योग्य बनाया जिससे मै यह कार्य पूरा कर सका हू । मैं भाई श्री व्यास नन्दन शर्मा सचालक राधा प्रेस का भी आभारी हू जिन्होंने बडी तत्परता और ध्यान से इस ग्रन्थ के प्रकाशन का कार्य किया मै श्री धर्मचन्द जी शास्त्री जी का भी धन्यवाद ज्ञापित करता हू जिनके अथक प्रयत्न और सहयोग से यह ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है ।

अन्त मे मै पूज्य समस्त साधु समाज और पुन उन सभी सहयोगियों का आभारी हू जिन्होंने मुझे प्रत्यक्ष वा परोक्ष मे आशीर्वाद देकर सहयोग प्रदान किया ।

आज आपके कर कमलों मे यह परम पवित्र ग्रन्थ जैसा भी बन सका प्रस्तुत है इस ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु प्रेणास्रोत तो परम पूज्य आचार्य श्री एव उपाध्याय श्री तथा आर्यिका माताजी ही हैं जिनके मगलाशीर्वादों से यह ग्रन्थ छप सका मेरी सभी साधु वृन्दों के चरणो मे करवद्ध प्रार्थना है कि मैं किसी प्रकार से भी ऐसे ग्रन्थों को प्रकाशित कराने में समर्थ नही हू न ही मुझ में इतनी शक्ति ही है यह तो सब आप श्री गुरुओ का आशीर्वाद है । इस ग्रन्थ के छपने में अनेक प्रकार की त्रुटिया रह जाना स्वाभाविक है । अत उसके लिए क्षमायाचना करता हुआ आप सभी से आशीर्वाद की कामना करता हू ।

आपका विनम्र
ताराचन्द अजमेरा

जनवरी सन १९९१
निवास एच ५/५ कृष्णा नगर
दिल्ली ११ ५१

मेरी जो दिन चर्या है उसमे जो कार्य है

वह मेरे पाप पुण्य का समागम है

मेरा पुरुषार्थ कुछ भी नही

(पुरुषार्थ पुरुष अर्थ आत्मा अर्थ)

आत्मा को यथार्थ जानने का नाम पुरुषार्थ है

तारा

एक चिन्तन

क्रोध पी जाता है, जो मुस्कराता है,
मान अपमान से जो ऊपर उठ जाता है ।
जो वीतरागी है, जगत् की चाहों से ऊपर,
आदमी वह भगवान की श्रेणी में आता है ॥

कोई पनघट का उथला नीर होता है,
कोई मरघट का उजला तीर होता है ।
कहानी जग सुनाता है बहारो की मजारों की,
इन्ही काटो के पथ चल रहा महावीर होता है ॥

आदमी के हृदय मे अनुराग होना चाहिए,
आदमी क जिगर मे एक आग होनी चाहिये ।
इन सारी बातो को बनाये रखने के लिए,
आदमी के जीवन में कुछ त्याग होना चाहिये ॥

जिसने समय को पहचाना उसन सब कुछ पाया है,
जिसने समय को नहीं जाना उसने कुछ गवाया है ।
क्षण मात्र भी प्रमाद मत कर मानव,
समय ने ही इन्सान को भगवान बनाया है ॥

आर्चाय विमलसागरजी की हीरक जयन्ती पर सादर नमन

वीराष्टक

वद्यास्पद हित पद पद पदं, प्रत्यय सत्यग् पर पर पर ।
हेयेतरा कार बुध बुधं बुध वीरं स्तुवे विश्व हितं हित हितं ॥१ ॥
दिव्य वचोयस्य सभा सभा सभा, निपीय पीयूष पित पित पित ।
वभूव त्रप्ता सुरा सुरा सुरा, वीरं स्तुवे विश्व हित हित हित ॥२ ॥
शत्रु प्रमाण्यैर जिता जिता जिता, गुणाबली येन धृता धृता धृता ।
सवादन तीर्थम् कर करं करं, वीरं स्तुवे विश्व हित हितं हित ॥३ ॥
मयूषमालेय महा महा महा, लोकोपकार सविता विता विता ।
विभाति यो गध कुटी कुटी कुटी वीर स्तुवे विश्व हित हितं हित ॥४ ॥
सराग सस्तुत्य गुणा गुणा गुणा, सभाजयिष्णु स शिव शिव शिव ।
लक्ष्मीवता पूज्य तम तम तम, वीर विश्व हित हित हितं ॥५ ॥
सिद्धार्थाम् सत्रद नमा नमा नमा, नदा द्विवर्षेघ सदा सदा सदा ।
यस्यो परिष्टा कुसुम सुम सुमं, वीर स्तुवे विश्व हित हित हितं ॥६ ॥
प्रत्यक्षमध्वै दचित चितं, चित योमेयमार्थम् सकल कल कल ।
व्यपेत दोषा वरणं रण रण वीरं स्तुवे विश्व हित हित हित ॥७ ॥
युक्त्यागमावाधि गिर गिर गिर, वित्रीर्यतास्त्येय भर भर भर ।
सख्यावता चित्त हर हर हर, वीर स्तुवे विश्व हित हित हित ॥८ ॥
अध्यैष्टाममध्यपीष्ट परय, शब्द चक्रिविदंक्षक्रेय परिशील ।
नादिमति भेदैरागमालकृतिं, विद्यानद भवा मरादि सुयशान ॥९ ॥
तेन भुनानिर्मितवीरार्हत्परमेश्वरस्य यमकस्तोत्राष्टक मगलं ।
भट्टारकै कृत स्तोत्रोयपठेद्यमकाष्टकं सर्वदा, सभवेद्‌भव्यो भारती मुख दर्पणा. ॥१ ॥

॥इति भट्टारक अमर कीर्ति कृत यमकाष्ट स्तोत्रम ॥

श्री वर्धमान नमस्कारम्

जनन जलधि सकुर्दु ख विध्वसहेतु
निहितमकरकेतुर्मारितानक्र मेतु ।
जन जनन समस्तो नष्ट निशेष-धातु
र्जयतिजगति चन्द्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र. ॥१ ॥

शम दम यमकर्त्ता सार ससार हर्ता
सकल भुवन तर्त्ता भूरि कल्यान कर्त्ता ।
परम सुख समर्ता सर्व सदेह हर्ता
जयति जगति चन्द्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र ॥ २ ॥

कुगति पथ विनेता मोक्षमार्गस्य नेता
प्रकृति-गमन-हन्ता तत्व सन्तान सन्ता ।
गगन गमन गन्ता मोक्ष रामा रमन्ता
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र. ॥ ३ ॥

सजन जल-निनादो निर्जिताशेषवादो
नरपति-नुत पादो यस्तु तत्त्व जगाद ।
जयभुवकृतपादोऽनेक-क्रोधाग्नि-कदो
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र ॥ ४ ॥

प्रबल-बल-करालो मुक्ति-कान्ता रसालो
विमल गुण विशालो नीति कल्लोल-माल ।
समवशरण-नीलो धारितानन्त शीलो
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र ॥ ५ ॥

विषय विष-विनाशो भूरि भाषा निवासो
हत भव-भय-पाश कीर्ति-वल्ली निवास ।
शरण सुख निवासो वर्तसपूरिताशो
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र ॥ ६ ॥
मद मदन-विहारी चारू-चारित्र धारी
नरकगति निवारी मोक्षमार्ग प्रसारी ।
नृ सुर नयनहारी केवलज्ञान धारी
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र. ॥ ७ ॥
वचन रवन धीर. पाप धूली समीर.
कनक-निकर गौर. क्रूर कर्म्मारि शूर. ।
कलुष दहन नीर.पालितानन्त वीरो
जयति जगति चद्रो वर्द्धमानो जिनेन्द्र.

आचार्य श्री विमलसागरजी की हिरक जयन्ती पर सादर नमन

सुरेन्द्र कुमार जैन धर्मपत्नी सरला जैन
राजीव जैन धर्मपत्नी अन्जु जैन
पौत्र गौरव जैन
जी १४१८ चित्तरन्जन पार्क
कालकाजी
नई दिल्ली ११ १९

फर्म राजीव टेक्स्टाईल्स
कपडे के थोक व्यापारी
महावीर बजार कटरा शाहन शाही
चादनी चौक दिल्ली
दूरभाष ३२७६८१७
निवास ६४३९२८७

श्री अम्बिकाष्टकम्

व्यालोलालम्बमानप्रवणरणझणल्किङ्किणीक्वाणरम्य
ध्वस्तध्वान्त समन्तान्मणिकिरणगणाडम्बरोल्लासितेन ।
देवी दिव्याशुकाना ध्वजपटपटलै शोभमान विमान
लीलारूढा भ्रमन्ती भुवनकृतनति पातु मामम्बिका सा ॥१ ॥

या देवी दिव्यदामाञ्चितचिकुरभरामोदमुग्धालिमाला
भास्वन्माणिक्यमालामिलदमलमहोमण्डलीमण्डिताङ्गा ।
सन्मुक्तातारहारैर्गगनतलगतास्तारकास्तर्जयन्ती
वस्त्रालङ्कारभासा हसितरविकरा पातु मामम्बिका सा ॥२ ॥

या कौबेर विहाय स्वपतिपरिभवात् साधुदानप्ररूढात्
स्थान श्रान्तातिमार्गे श्रमशमनकृते सश्रिता चूतवृक्षम ।
क्षुत्क्षामौ वीक्ष्य पुत्रौ कृतसुकृतवशात् प्रार्थयन्ति फलानि
क्षिप्र सम्प्राप तानि स्वचरितमुदिता पातु मामम्बिका सा ॥३ ॥

देवी याऽत्रोपविष्टा सरणिगतपति वीक्ष्य कम्प दधाना
स्मृत्वा श्रीरैवताद्रिं व्यवसितमरणा साधुधर्म स्मरन्ती ।
आरूह्योत्तुङ्गश्रृङ्ग प्रपतनविधिना दिव्यदेवत्वमाप्ता
जैनेन्द्रे पादपीठे सततनतशिरा पतुमामम्बिका सा ॥४ ॥

या पश्चात्तापतप्त गतमदमदन दुष्कृत स्व स्मरन्ती
दष्ट्रास्य पिङ्गनेत्र खरनखरकर केसरालीकराल ।
पुच्छाच्छोटप्रकम्पावनिवलयतल दिव्यसिंह स्वकान्त
सरूढा याति नित्य जिनपतिनिलये पातु मामम्बिका सा ॥५ ॥

सान्द्राम्रालुम्बिहस्ता तरलहरिगता बालकाभ्यामुपेता
ध्यातासा सिद्धकामैर्विघटितडमरा साधकैर्भक्तियुक्तै ।
रक्ता रागानुरक्तै स्फटिकमणिनिभा क्लेशविध्वसधीभि
पीता वश्यानुभावैर्विहितजनहिता पातु मामम्बिका सा ॥६ ॥
देवी विद्याधरेन्द्रासुरसुरमनुजैर्वन्द्यपादारविन्दा
प्रत्यूहान्निक्षिपन्ती क्षपितकलिमला बिभ्रती विश्वरक्षाम् ।
जैनेन्द्र शासन या प्रकटयति महोत्साहशक्त्या स्वभक्त्या
नित्य नाम्ना नराणा विशदशिवफला पातु माम्बिका सा ॥७ ॥
एव वृत्ताष्टकेन स्तुतिमुखरमुख सस्तुति य करोति
ध्यानाधीनान्तरात्मा प्रशममुपगतो नित्यमेकाग्रचित्त ।
प्रातर्मध्ये निशाया शयनतलगतो यत्र कुत्रापि सस्थो
देवी तस्य प्रकाम प्रकटयति पटु प्रौढ़मम्बा प्रसादम् ॥८ ॥

श्री अम्बिकास्तुति

ॐ महातीर्थरैवतगिरिमण्डने । जैनमार्गस्थिते । विघ्नभीखण्डने । ।
नेमिनाथाङ्घ्रिजीवसेवापरे । त्व जयाम्बे । जगज्जन्तुरक्षाकरे ।
ह्रीं महामन्त्ररूपे । शिवे । शङ्करे । देवि । वाचालसत्किङ्किणीनूपुरे । ।
तारशङ्खेहारावलीराजितोर स्थले । कर्णताटङ्करूचिरम्यगण्डस्थले ।
अम्बिके । ह्रा स्फुरद्बीजविद्ये । स्वय ह्रीं समागच्छ मे देहि दु खक्षयम ।
ह्रा ह्रूँ त द्रावय द्रावयोपद्रवान् ह्रीं द्रहि क्षुद्रसर्पेभकण्ठीरवान्
क्लीं प्रचण्डे ? प्रसिद प्रसीद क्षण ब्लूँ सदा प्रसन्ने ! विधेहीक्षणम् ।
स सता दत्तकल्याणमालोदये । ह्स्कल्हीं नमस्तेऽम्बिकेऽङ्कस्थपुत्रद्वये

इत्थमद्भूतमाहात्म्यमन्त्रस्तुते । क्रो समालीढषट्कोणयन्त्रस्थिते ।
ह्रीयुतेऽम्बे । मरून्मण्डलालङ्कृते । देहि मे दर्शन ह्री त्रिरेखावृते ।
नाशिताशेषमिथ्यादृशा दुर्मदे । शान्तिकीर्तिद्युतिस्वस्तिसिद्धिप्रदे ।
दुष्टविद्याबलोच्छेदनप्रत्यन्ते । नन्द नन्दाम्बिके । निश्चले । निर्मले ।
देवि । कूष्माण्डि । दिव्याशुके । भैरवे । दु सहे दुर्जये । तप्तहेमच्छवे ।
नाममन्त्रेण निर्णाशितोपद्रवे । पाहि मामध्रिपीठस्थकण्ठीरवे ।
देवदेविगणै सेविताङ्घ्रिद्वये जागरूकप्रभावैकलक्ष्मीमये ।
पालिताशेषजैनेन्द्रचैत्यालये । रक्ष मा रक्ष मा देवि । अम्बालये ।

आचार्य श्री विमल सागरजी की हीरक जयन्ती पर सादर नमन

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

स्वर्गीय पंडित दौलतरामजी कृत

श्रीपद्मपुराणजी भाषा वचनिका

(मूलग्रन्थ—कर्ता श्रीमद्—रविषेणाचार्य)

भाषाकारका मंगलाचरण ।

दोहा ।

चिदानन्द चैतन्यके, गुण अनन्त उर धार । भाषा पद्मपुराणकी, भाषूं श्रुति अनुसार ॥१॥
पंच परमपद पद प्रणमि, प्रणमि जिनेश्वरवानि । नमि जिनप्रतिमा जिनभवन जिनमारग उर आनि ॥२॥
ऋषभ अजित संभव प्रणमि, नमि अभिनन्दन देव । सुमति जु पद्म सुपार्श्व नमि, करि चन्द्राप्रभ सेव ॥३॥
पुष्पदंत शीतल प्रणमि, श्री श्रेयासको ध्याय । वासुपूज्य विमलेश नमि, नमि अनंतके पाय ॥४॥
धर्म शांति जिन कुन्थु नमि और मल्लि यशगाय । मुनिसुव्रत नमि नेमि नमि, नमि पारसके पाय ॥५॥
वर्द्धमान वरवीर नमि, गुरुगौतम मुनि वंद । सकल जिनंद मुनिन्द नमि, जैनधर्म अभिनन्द ॥६॥
निर्वाणादि अतीत जिन, नमो नाथ चौबीस । महापद्म परमुख प्रभू, चौबीसों जगदीश ॥७॥

होंगे तिनको वदिकर, द्वादशांग उरलाय। सीमंधर आदिक नमूं, दश दूने जिनराय ॥ ८ ॥
विहरमान भगवान ये, क्षेत्र विदेहमझारि। पूजं जिनको सुरपती, नागपती निरधार ॥ ९ ॥
द्वीप अढाईकेविष, भये जिनेन्द्र अनंत। होंगे केवलज्ञानमय, नाथ अनंतानंत ॥१०॥
सबको वंदन कर सदा, गणधर मुनिवर ध्याय। केवलि श्रुतिकेवलि नमूं, आचारज उवझाय ॥११॥
वदूं शुद्ध स्वभावको, धर सिद्धनको ध्यान। सतनको परणाम कर, नमि दृग व्रत निज ज्ञान ॥१२॥
शिवपुरदायक सुगुरु नमि, सिद्धलोक यश गाय। केवल दर्शन ज्ञानको, पूजूं मन वच काय ॥१३॥
यथाख्यातचारित्र अरु, क्षपकश्रेणि गुण ध्याय। धर्म शुक्ल निज ध्यानको, वदूं भाव लगाय ॥१४॥
उपशम वेदक क्षायिका, सम्यग्दर्शन सार। कर वंदन समभावको, पूजूं पंचाचार ॥१५॥
मूलोत्तर गुण मुनिनके, पंच महाव्रत आदि। पंच समिति अरु गुप्तित्रय, ये शिवमूल अनादि ॥१६॥
अनित्य आदिक भावना, सेऊं चित्त लगाय। अध्यातम आगम नमूं, शांतिभाव उरलाय ॥१७॥
अनुप्रेक्षा द्वादश महा, चितवं श्रीजिनराय। तिनकी थुति करि भावसो, षोडशकारण ध्याय ॥१८॥
दशलक्षणमय धर्मकी, धर सरधा मनमांहि। जीवदया सत शील तप, जिनकर पाप नसांहि ॥१९॥
तीर्थंकर भगवानके, पूजूं पांच कल्याण। अवर केवलिनको नमूं, केवल अरु निर्वाण ॥२०॥
श्रीजिनतीरथक्षेत्र नमि, प्रणमि उभयविध धर्म। थुतिकर चउविध संघकी, तजकर मिथ्या भर्म ॥२१॥
वदूं गौतम स्वामिके, चरण कमल सुखदाय। वदूं धर्म मुनींद्रको, जबूं केवलि ध्याय ॥२२॥
भद्रबाहुको कर प्रणति, भद्र भाव उरलाय। वदि समाधि सुतंत्रको, ज्ञानतणे गुणगाय ॥२३॥
महाधवल अरु जयधवल, तथा धवल जिनग्रंथ। वदूं तन मन वचन कर, जे शिवपुरके पंथ ॥२४॥
षटपाहुड नाटक जु त्रय, तत्त्वारथसूत्रादि। तिनको वदूं भाव कर, हरैं दोष रागादि ॥२५॥

गोमटसार अगाध श्रुत, लब्धिसार जगसार। क्षपणसार भवताप है, योगसार रसधार ॥२६॥
ज्ञानार्णव है ज्ञानमय, नमूं ध्यानका मूल। पद्मनन्दिपच्चीसिका, करै कर्म उन्मूल ॥२७॥
यत्याचार विचार नमि, नमूं श्रावकाचार। द्रव्यसंग्रह नयचक्र फुनि, नमूं शांति रसधार ॥२८॥
आदिपुराणादिक सबै, जैनपुराण बखान। वंदूं मन वच काय कर, दायक पद निर्वान ॥२९॥
तत्त्वसार आराधना,—सार महारस धार। परमातमपरकाशको, पूजूं बारबार ॥३०॥
वंदूं विशाखाचार्यवर, अनुभवके गुणगाय। कुन्दकुन्दपद धोक दे, कहूं कथा सुखदाय ॥३१॥
कुमुदचंद्र अकलंक नमि, नेमिचंद्र गुण ध्याय। पात्रकेशरीको प्रणमि, समंतभद्र यशगाय ॥३२॥
अमृतचंद्र यतिचंद्रको, उमास्वामिको वंद। पूज्यपादको कर प्रणति, पूजादिक अभिनंद ॥३३॥
ब्रह्मचर्यव्रत वदिकर, दानादिक उरलाय। श्रीयोगीन्द्रमुनींद्रको, वंदूं मन वच काय ॥३४॥
वंदूं मुनि शुभचंद्रको, देवसेनको पूज। करि वंदन जिनसेनको, जिनके सम नहिं दूज ॥३५॥
पद्मपुराणनिधानको, हाथ जोडि सिरनाय। ताकी भाषा वचनिका, भाखूं सब सुखदाय ॥३६॥
पद्मनाम बलभद्रका, रामचंद्र बलभद्र। भये आठवें धार नर, धारक श्रीजिनमुद्र ॥३७॥
तापीछे मुनिसुव्रतके, प्रगटे अतिगुणधाम। सुरनरवंदित धर्ममय, दशरथके सुत राम ॥३८॥
शिवगामी नामी महा,—ज्ञानी करुणावंत। न्यायवंत बलवंत अति, कर्महरण जयवंत ॥३९॥
जिनके लक्ष्मण वीर हरि, महाबली गुणवंत। भ्रातृभक्त अनुरक्त अति, जैनधर्म यशवंत ॥४०॥
चंद्र सूर्यसे वीर ये, हरैं सदा परपीर। कथा तिनोंकी शुभमहा, भाषी गौतम धीर ॥४१॥
सुनी सब श्रेणिक नृपति, धर सरधा मनमांहि। सो भाषी रविषेणने, यामैं संशय नांहि ॥४२॥
महा सती सीता शुभा, रामचंद्र की नारि। भरत शत्रुघन अनुज हैं, यही बात उरधारि ॥४३॥

तवभव शिवगामी भरत, अरु, लवअंकुश पूत । मुक्त भये मुनिवरत धरि, नमै तिनै पुरहूत ॥४४॥
रामचद्र को करि प्रणति, नमि रविषेण ऋषीश । रामकथा भाखू यथा, नमि जिनश्रुति मुनिईश ॥४५॥

संस्कृत ग्रंथकारका मंगलाचरण ।

सिद्ध संपूर्णभव्यार्थं सिद्धे: कारणमुत्तमम् । प्रशस्तदर्शनज्ञानचारित्रप्रतिपादनम् ॥१॥
सुरेन्द्रमुकुटाश्लिष्टपादपद्मांशुकेसरम । प्रणमामि महावीर लोकत्रितयमंगलम् ॥२॥

अर्थ—सिद्ध कहिये कृतकृत्य है और सम्पूर्ण भए हैं सब सुन्दर अर्थ जिनके, अथवा भव्य जीवोंके सर्वअर्थ पूर्ण करै है, आप उत्तम अर्थात मुक्त है, औरोंको मुक्तिके कारण है । प्रशंसायोग्य दर्शन ज्ञान और चारित्रके प्रकाशनहारे है । बहुरि सुरेंद्रके मुकुटकर पूज्य हैं किरणरूप केसर ताकों धरें चरणकमल जिनके, ऐसे भगवान महावीर, तीन लोकके प्राणियोका मंगलरूप हैं, तिनको नमस्कार करू हू ।

भावार्थ—सिद्धि कहिए मुक्ति अर्थात सब बाधारहित, उपमारहित अनुपम अविनाशी जो सुख ताकी प्राप्तिके कारण श्रीमहावीर स्वामी जो काम, क्रोध, मान, मद, माया, मत्सर, लोभ, अहंकार, पाखंड, दुर्जनता, क्षुधा, त्रिषा, व्याधि, वेदना, जरा, भय, रोग, शोक, हर्ष, जन्म, मरणादि रहित है । शिव कहिये अविनश्वर हैं, द्रव्यार्थिकनयसे जिनकी आदि भी नाहीं और अंत भी नाहीं, अछेद्य अभेद्य क्लेशरहित, शोकरहित, सर्वव्यापी, सर्वसम्मुख, सर्व विद्याके ईश्वर हैं। यह उपमा औरोंको नाहीं बने हैं । जो मीमांसक, सांख्य, न्यायिक, वैशेषिक, बौद्धादिक मत हैं तिनके कर्त्ता जैमिनि, कपिल, काणभिक्ष, अक्षपाद, कणादबुद्ध हैं वे मुक्तिके कारण नाहीं । जटा मृगछाला वस्त्र

अस्त्र शस्त्र स्त्री रुद्राक्ष कपालमाला के धारक हैं और जीवोके दहन घातन छेदनविषै प्रवृत्त हैं। विरुद्ध अर्थ कथन करनेवाले है। मीमासो तो धर्म का अहिंसा लक्षण बताय हिंसाविषै प्रवृत्ते हैं और सांख्य जो है सो आत्माको अकर्ता और निगुण भोक्ता माने है और प्रकृतिहीको कर्त्ता माने हैं। और नैयायिक वैशेषिक आत्माको ज्ञान रहितजड माने हैं। और जगतकर्त्ता ईश्वर माने हैं। और बौद्ध क्षण-भगुर माने है। शून्यवादी शून्य माने है। और वेदान्तवादी एक ही आत्मा त्रलोक्यव्यापी नर नारक देव तिर्यंच मोक्ष सुख दुखादि अवस्था विष माने ह। तातै ये सव ही मुक्तिके कारण नाहीं। मोक्षका कारण एक जिनशासन ही ह जो सब जीवमात्रका मित्र है। और सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र का प्रकट करने वाला है। ऐसे जिनशासनको श्रीवीतराग देव प्रकट कर दिखावे है। कैसे है श्रीवर्द्धमान, वीतरागदेव ? वह सिद्ध कहिये जीवनमुक्त हैं और सब अर्थकरि पूर्ण है, मुक्तिके कारण है, सर्वोत्तम हैं और सम्यकदर्शन ज्ञान चारित्रके प्रकाशनहारे ह। बहुरि कसे ह ? इन्द्रनिके मुकुटनिकर स्पर्शे गये हैं चरणारविंद जिनके ऐसे श्रीमहावीर वर्द्धमान सन्मतिनाथ अंतिम तीर्थकर तिनकू नमस्कार करू हू। तीनलोकके सब प्राणियो को महामगलरूप हैं, महा योगीश्वर है, मोहमल्लके जीतनहारे हैं, अनत बलके धारक हैं, ससारसमुद्रविषै डूबरहे जे प्राणी तिनके उद्धार करनहारे हैं। शिव, विष्णु, दामोदर, त्र्यम्बक, चतुमु ख बुद्ध, ब्रह्मा, हरि, शकर, रुद्र, नारायण, हर, भास्कर, परममूर्ति इत्यादि जिनके अनेक नाम है तिनको शास्त्र की आदिविषै महा मगलके अर्थि सर्व विघ्नके विनाशके निमित्त मन वचन कायकर नमस्कार करू हू।

इस अवसर्पिणीकालमें प्रथम ही भगवान श्रीऋषभदेव भए, सर्व योगीश्वरनिके नाथ, सर्व विद्याके निधान स्वयम्भू तिनको हमारा नमस्कार होहु। जिनके प्रसाद कर अनेक भव्यजीव

भवसागरसे तिरे। बहुरि दूजा श्रीअजितनाथस्वामी, जीते हैं बाह्य अभ्यंतर शत्रु जिन्होंने, हमको रागादिक रहित करहु। अर तीजे संभवनाथ, जिनकरि जीवनको सुख होय और चौथे श्रीअभिनंदन स्वामी आनंदके करनहारे हैं, अर पांचवें सुमति के देनहारे सुमतिनाथ मिथ्यात्वके नाशक हैं और छठे श्रीपद्मप्रभ, ऊगते सूर्यकी किरणों कर प्रफुल्लित कमलके समान है प्रभा जिनकी, अर सातवें श्रीसुपार्श्वनाथस्वामी सबके वेत्ता सर्वज्ञ सबनिके निकटवर्ती ही हैं। बहुरि शरद की पूर्णमासीके चंद्रमा समान है प्रभा जिनकी ऐसे आठवें श्रीचंद्रप्रभ, ते हमारे भवताप हरो। बहुरि प्रफुल्लित कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल है दंत जिनके ऐसे नवमे श्रीपुष्पदंत जगतके कंत हैं और दशवें शीतलनाथ शुक्ल-ध्यानके दाता परमइष्ट, ते हमारे क्रोधादिक अनिष्ट हरो। अर जीवनिकू सकल कल्याण के कर्त्ता धर्मके उपदेशक ग्यारहवें श्रीश्रेयांसनाथ स्वामी ते हमको परम आनंद करो। अर देवनिकू पूज्य संतोंके ईश्वर कर्म शत्रुओं के जीतनेहारे बारहवें श्रीवासुपूज्य स्वामी ते हमको निज वास देवो, और संसारके मूल जो रागादि मल तिनसे अत्यंत दूर ऐसे तेरहवें श्रीविमलनाथ देव, ते हमारे कर्मकलंक हरो, अर अनंत ज्ञानके धरनहारे, सुन्दर है दर्शन जिनका ऐसे चौदहवें श्रीअनन्तनाथ देवाधिदेव हमको अनंतज्ञानकी प्राप्ति करो। और धर्म की धुराके धारक पंद्रहवें श्रीधर्मनाथ स्वामी हमारे अधर्मको हरकर परम धर्म की प्राप्ति करो। बहुरि जीते हैं ज्ञानावरणादिक शत्रु जिन्होंने ऐसे सोलहवें श्रीशांतिनाथ परमशांत हमको शांतभावकी प्राप्ति करो। अर कुंथु आदि सब जीवोंके हितकारी सतरहवें श्रीकुंथुनाथ स्वामी हमको भ्रमरहित करो। समस्त क्लेशसे रहित मोक्षके मूल अनन्त सुखके भण्डार अठारहवें श्रीअरनाथ स्वामी कर्मरजरहित करो। संसार के तारक मोहमल्लके जीतने हारे बाह्याभ्यन्तर मलरहित ऐसे उन्नीसवें श्रीमल्लिनाथ स्वामी ते अनन्तवीर्यकी प्राप्ति करो। अर भले

वृतोके उपदेशक समस्त दोषोके विदारक बीसवें श्रीमुनिसुवृतनाथ जिनके तीर्थविषै श्रीरामचन्द्रका शुभचरित्र प्रगट भया ते हमारे अवृत मेट महाव्रतकी प्राप्ति करो। और नमीभूत भये हैं सुर नर असुरोंके इन्द्र जिनको ऐसे इक्कीसवें श्रीनमिनाथ प्रभु ते हमको निर्वाणकी प्राप्ति करो। अर समस्त अशुभकर्म, तेई भये अरिष्ट तिनके काटिवेंकू चक्रकी धारा समान बाईसवें श्रीअरिष्टनेमि भगवान् हरिवंशके तिलक श्रीनेमिनाथ स्वामी ते हमको यम नियमादि अष्टांग योग सिद्धि करो और तेईसवें श्रीपार्श्वनाथ देवाधिदेव इन्द्र नागेन्द्र चन्द्र सूर्य्यादिक कर पूजित हमारे भव सन्ताप हरो। अर चौबीसवें श्रीमहावीर स्वामी जो चतुर्थकालके अन्तमें भये हैं ते हमारे महा मंगल करो। और भी जो गणधरादिक महामुनि तिनको मन, वचन, काय कर बारम्बार नमस्कार कर श्रीरामचन्द्रके चरित्र का व्याख्यान करूं हूं।

कैसे हैं श्रीराम? लक्ष्मीकर आलिंगित है हृदय जिनका और प्रफुल्लित है मुखरूपी कमल जिनका, महापुण्याधिकारी हैं, महाबुद्धिमान हैं, गुणनके मंदिर हैं, उदार है चरित्र जिनका, जिनका चरित्र केवलज्ञानके ही गम्य है ऐसे जो श्रीरामचन्द्र उनका चरित्र श्रीगणधरदेव ही किंचित् मात्र कहनेको समर्थ है। यह बड़ा आश्चर्य है कि—जो हम सारिखे अल्पबुद्धि पुरुष भी उनके चरित्र को कहे हैं। यद्यपि हम सारिखे इस चरित्र को कहने को समर्थ नाहीं तथापि परंपरासे महामुनि जिस प्रकार कहते आए हैं उनके कहे अनुसार कुछ इक संक्षेपता कर कहूं हूं जैसे जिस मार्ग विषैं मदमाते हाथी चालें, तिस मार्ग विषै मृग भी गमन करैं हैं और जैसे युद्धविषैं महा सुभट आगै होय कर शस्त्रपात करे हैं तिनके पीछे और भी पुरुष रणविषै जाय हैं, अर सूर्य करि प्रकाशित जे पदार्थ तिनकूं नेत्रवारे लोक सुखसूं देखे हैं अर जैसे वज्रसूचीके मुख कर भेदी जो मणि उस विषै सूत्र भी

प्रवेश करे ह तस ज्ञानीनकी पकति कर भाषा हुआ चला आया जो रामसम्बन्धी चरित्र ताके कहनेको भक्ति कर प्रेरी जो हमारी अल्प बुद्धि सो भी उद्यमवती भई ह। बडे पुरुषके चितवन कर उपजा जो पुण्य ताके प्रसाद कर हमारी शक्ति प्रकट भई हैं, महा पुरुषनके यशकीर्तनसे बुद्धिकी वृद्धि होय ह और यश अत्यन्त निमल होय ह और पाप दूर जाय ह।

यह प्राणीनका शरीर अनेक रोगोकर भरा ह। इसकी स्थिति अल्पकाल ह अर सत्पुरुषकी कथा कर उपज्या जो यश सो जब तक चाद सूर्य्य ह तब तक रहे ह। इसलिए जो आत्मवेदी पुरुष है वे सब यत्नकर महापुरुषनके यश कीतनसे अपना अपना यश स्थित करे हं। जिसने सज्जनोको आनदकी देनहारी जो सत्पुरुषनकी रमणीक कथा उसका आरम्भ किया उसने दोनों लोकका फल लिया। जो कान सत्पुरुषन की कथा श्रवण विष प्रवृत्ते है वे ही कान उत्तम हैं और जे कुकथाके सुननेहारे कान ह वे कान नहीं, वृथा आकारकू धर ह। और जे मस्तक सत्पुरुषनकी चेष्टाके वणन विषै घूमे है ते ही मस्तक धन्य है और जे शेष मस्तक ह वे थोथे नारियल समान जानने। अर सत्पुरुषनके यशकीतन रूप अमृत के आस्वाद विष जो रसना प्रवरती सोई धन्य है और रसना दुवचनकी बोलन हारी छुरी के अग्रभाग समान जाननी। अर सत्पुरुषनके यशकीतन विषै प्रवृत्ते जे होठ ते ही श्रेष्ठ है और जे शेष होठ है ते जोंककी पीठ समान विफल जानने। जे पुरुष सत्पुरुषन की कथाके प्रसग विषै अनुरागको प्राप्त भये उनहीका जन्म सफल ह। और मुख वे ही हैं जो मुख्य पुरुषनकी कथा के विष रत भये। शेष मुख मलका भरचा दातरूपी कीडनका बिल समान हैं। और जो सत्पुरुषनकी कथा के वक्ता हैं अथवा श्रोता है सो ही पुरुष प्रशसायोग्य है और शेष पुरुष चित्राम समान जानने। गुण और दोषन के सग्रहविषै जे उत्तम पुरुष हैं ते गुणन ही को ग्रहण

करै है, जैसे दुग्ध और पानी के मिलाप विष हंस दुग्ध ही को ग्रहण करै है। और गुण दोषनके मिलाप विषै जे नीच पुरुष है ते दोषनही को ग्रहण करै है। जैसे गजकै मस्तकविषै मोती मास दोऊ हैं तिन विषै काग मोती को तज मास ही को ग्रहण कर हैं। जो दुष्ट है ते निर्दोष रचनाको भी दोष रूप देखे हैं, जैसे उल्लू सूयके बिम्बको तमाल वृक्षके पत्र समान स्याम देखे ह। जे दुर्जन हैं ते सरोवरमें जल आनेका जाली समान है, जसे जाली जल को तज तृण पत्रादि कटकादिकका ग्रहण करै है तैसे दुर्जन गुणको तज दोषनही को धार है। इसलिये सज्जन और दुर्जनका ऐसा स्वभाव जानकर जो साधु पुरुष हैं ते अपने कल्याणनिमित्त सत्पुरुषनकी कथा के प्रबंध विषैही प्रवृत्त हैं। सत्पुरुषनकी कथाके श्रवणसे मनुष्योको परम सुख होय है। जे विवेकी पुरुष है उनको धर्मकथा पुण्यके उपजावनेका कारण है। सो जैसा कथन श्रीवर्द्धमान जिनेंद्रकी दिव्यध्वनिमें खिरा तिसका अर्थ गौतम गणधर धारते भये। अर गौतमसे सुधर्माचार्य धारते भये। ता पीछे जबूस्वामी प्रकाशते भये। जबूस्वामीके पीछे पाच श्रुतकेवली और भए वे भी उसी भाति कथन करते भये। इसी प्रकार महापुरुषनकी परम्पराकर कथन चला आया उसके अनुसार रविषेणाचाय व्याख्यान करते भये। यह सब रामचन्द्रका चरित्र सज्जन पुरुष सावधान होकर सुनो। यह चरित्र सिद्धपदरूप मदिरको प्राप्तिका कारण है और सर्वप्रकारके सुख का देनहारा हैं। और जे मनुष्य श्रीरामचन्द्रको आदि दे जे महापुरुष तिनको चितवन करे हैं वे अतिशयकर भावनके समूहकर नम्रीभूत होय प्रमोदको धरे हैं। तिनका अनेक जन्मोका सचित किया जो पाप सो नाशको प्राप्त होय है। और जे सम्पूर्ण पुराण का श्रवण करें तिनका पाप दूर अवश्य ही होय, यामें सदेह नाहीं। कैसा ह पुराण? चन्द्रमा समान उज्ज्वल ह। इसलिये जे विवेकी चतुर पुरुष हैं ते इस चरित्रका सेवन करें। यह चरित्र बड़े पुरुषनिकर सेवन योग्य है।

इस ग्रन्थ विषै ६ महा अधिकार हैं। तिन विषै अवांतर अधिकार बहुत हैं। मूल अधिकारनके नाम कहै है। प्रथम ही १ लोकस्थिति, बहुरि २ वंशनिकी उत्पत्ति, पीछे ३ वनविहार अर संग्राम तथा ४ लवणांकुशकी उत्पत्ति, बहुरि ५ भव निरूपण अर ६ रामचन्द्रका निर्वाण। ते श्रीवर्धमान देवाधिदेव सब कथनके वक्ता हैं, जिनको अति वीर कहिये वा महावीर कहिये है। रामचरित्रहूके कथनहारे हैं। जाते ताके कारण श्री महावीर स्वामी हैं, तातै प्रथम ही तिनका कथन कीजिये है।

विपुलाचल पर्वतके शिखर पर समोसरणविषै श्रीवर्धमान स्वामी विराजे। तहां श्रेणिकराजा गौतमस्वामीसो प्रश्न करते भये। कैसे हैं गौतमस्वामी? भगवानके मुख्य गणधर हैं, महा महंत हैं, जिनका इन्द्रभूति भी नाम है। आगे श्रीगौतम स्वामी कहै है तहां प्रश्न विषै प्रथम ही युगलिका कथन है। बहुरि कुलकरनिकी उत्पत्ति, अकस्मात् चन्द्र सूर्य के अवलोकनतै जुगलियानिकूं भयका उपजना, सो प्रथम कुलकर प्रतिश्रुतके उपदेशतै भयका दूर होना, बहुरि नाभिराजा अन्तके कुलकर तिनके घर श्रीऋषभदेव का जन्म, सुमेरु पर्वत विषै इन्द्रादिक देवनिकर जन्माभिषेक। बहुरि बाललीला अर राज्याभिषेक, कल्प वृक्षनिके वियोगकरि उपज्या प्रजानिकूं दुःख, सो कर्मभूमिकी विधिके बतावने करि दूर होना। बहुरि भगवानका वैराग्य, केवलोत्पत्ति, समोसरनकी रचना, जीवनिकूं धर्मोपदेश बहुरि भगवान का निर्वाणगमन, भरत चक्रवर्ती अर बाहुबलिके परस्पर युद्ध। बहुरि विप्रनकी उत्पत्ति, इक्ष्वाकु आदि वंशनिका कथन, विद्याधरनिका वर्णन, तिनके वंशविषै राजा विद्युद्दंष्ट्र का जन्म। संजयंत स्वामीकूं विद्युद्दंष्ट्रने उपसर्ग किया सो उपसर्ग सहि करि अंतकृत्केवली होइ करि निर्वाण भये। विद्युद्दंष्ट्रने उपसर्ग किया यह जानि धरणेंद्रने तासूं कोप किया, ताकी विद्या छेद करी। बहुरि श्री अजितनाथ स्वामीका जन्म, पूर्णमेघ विद्याधर भगवानके शरणें आया। राक्षस द्वीपका स्वामी व्यन्तर

देवताने प्रसन्न होइ पूर्णमेघकू राक्षसद्वीप दिया। बहुरि सगरचक्रवर्तीकी उत्पत्तिका कथन, पुत्रनिके दुःख करि दीक्षा ग्रहण, अर मोक्ष प्राप्ति, पूर्णमेघके वंशविषै महारक्षका जन्म, अर वानरवंशी विद्याधरनिकी उत्पत्तिका कथन, बहुरि विद्युत्केशी विद्याधरका चरित्र, बहुरि उदधिविक्रम अर अमरविक्रम विद्याधरका कथन, वानरवंशीनिका किष्किंधापुरका निवास, अर अंधक विद्याधरका कथन, श्रीमाला विद्याधरीका संगम, विजयसिंघके मरणतैं अशनिवेगके क्रोधका उपजना और सुकेशीके पुत्रनिका लंका आवनेका निरूपण, निर्घात विद्याधरके वधतैं माली नाम विद्याधर रावण के दादेका बडा भाई, ताके संपदा की प्राप्ति का कथन, अर विजयार्द्धकी दक्षिणकी श्रेणी विषै रथनूपुर नगरमें इंद्रनामा विद्याधरका जन्म, इंद्र सब विद्याधरनिका अधिपति है। इंद्रके अर मालीके युद्ध विषै मालीका मरण, अर लंकाविषै इंद्रका राज्य अर वैश्रवण नामा विद्याधर का थाणै रहना। अर सुमालीके पुत्र रत्नश्रवाका पुष्पांतक नामा नगर बसावना, अर केकसीका परणना और केकसीके शुभस्वप्नका अवलोकन, रावणका जन्म। अर विद्यानिका साधन, विद्यानिके साधन विषै अनावृत देव आय विघ्न किया तहां रावण का अचल रहना। बहुरि बहुत विद्यानि का सिद्ध होना अर अनावृत देवका वश होना, अपने नगर आय माता पितासूं मिलना, बहुरि अपने पिताका पिता जो राजा सुमाली, ताकूं बहुत आदरसूं बुलावना, बहुरी मंदोदरीका रावणसों विवाह और बहुत राजानिकी कन्याका व्याहना, कुंभकरणका चरित्र, वैश्रवणका कोप, यक्ष अर राक्षस कहावै ऐसे विद्याधर तिनका बडा संग्राम, वैश्रवणका भागना बहुरि तप धरना, अर रावणका लंकामैं कुटुम्ब सहित आवना अर सब राक्षसनिकूं धीरज बंधावना, अर ठौर ठौर जिनमंदिरनका निर्मापण करना, अर जिनधर्मका उद्योत करना और श्रीहरिषेण चक्रवर्ती का चरित्र राजा सुमालीने रावणकूं

कह्या सो भावसहित सुनना ।

कैसा है हरिषेण चक्रवर्तीका चरित्र ? पापनिका नाश करणहारा, बहुरि त्रिलोकमंडण हाथीका वश करना, अर राजा इन्द्रका लोकपाल यम नामा विद्याधर ताने वानरवंशीनिका राजा सूर्यरजकूं पकडकर बंदीखाने डारया, सो रावण सम्मेदशिखरकी यात्रा करि डेरा आये थे सो सूर्यरजके समाचार सुनि ताही सन्मुख गमन करना, अर जाय यमकूं जीतना । यमके थाने उठावना अर यमका भाजना, राजा सूर्यरजकूं बंदीखानेतैं छुडावना अर किष्कन्धापुरका राज्य देना । बहुरि रावणकी बहिन सूर्पनखा ताकूं खरदूषण हरि लेगया सो वाहीकूं परिणाय देना, अर ताहि पाताल लंकाका राज्य देना, सो खरदूषणका पाताललंका जाना अर चन्द्रोदरकौं युद्ध विषै हनना, अर चन्द्रोदरकी रानी अनुराधाकूं पतिके वियोगतैं महा दुःखका होना, अर चन्द्रोदरके पुत्र विराधितका राज्यभ्रष्ट होइ कहूं का कहूं रहना अर बालीका वैराग्य होना, सुग्रीवकूं राज्यकी प्राप्ति अर कैलाशपर्वतविषै बालीका विराजना, रावणका बालीसूं कोपकरि कैलाश उठावना, अर चैत्यालयनिकी भक्तिके निमित्त बाली पगका अंगूठा दाब्या तब रावणका बबिकर रोवना, अर रानीनिकी दीनतातैं बाली का अंगुष्ठका ढीला करना । अर बालीके भाई सुग्रीव का सुतारासूं विवाह अर साहसगति विद्याधर के सुताराकी अभिलाषा हुती सो अलाभतैं संतापका होना अर राजा अनारण्य अर सहस्ररश्मिका वैराग्य होना, अर रावणने यज्ञ नाश किया ताका वर्णन, अर राजा मधुके पूर्व भवका व्याख्यान, अर रावणकी पुत्री उपरम्भाका मधुसौं विवाह, अर रावणका इन्द्रपर जाना, इन्द्रपर विद्याधरकौं युद्धकरि जीतना, पकरिकरि लंकामें ल्यावना बहुरि छोडना, अर ताका वैराग्य लेय निर्वाण होना अर रावणका प्रताप अर सुमेरु पर्वत गमन बहुरि पाछा आवना, अर अनंतवीर्य मुनिकूं केवलज्ञानकी प्राप्ति, रावणका नेम ग्रहण—जो परस्त्री मोहि न अभिलाषै ताहि मैं न सेवूं बहुरि हनुमानकी उत्पत्ति

कैसे है ? हनुमान वानरवंशीनिविषै महात्मा है अर कैलाश पर्वतविषै अंजनीका पिता जो राजा महेन्द्र तानै पवनंजयका पिता जो राजा प्रह्लाद तासो सम्भाषण किया—जो हमारी पुत्रीका तुम्हारे पुत्रसू सम्बन्ध करहु। सो राजा प्रह्लादने प्रमाण किया। अंजनीका पवनंजयसू विवाह होना, बहुरि पवनंजयका अंजनीसो कोप, अर चकवा चकवीके वियोगका वृत्तांत देखि अंजनीसू प्रसन्न होना, अंजनीके गर्भका रहना। अर हनुमान के पूर्व जन्म वनमें अंजनीकू मुनि ने कहा। अर हनुमान का गिरिकी गुफाविषै जन्म, बहुरि अनुरुद्ध द्वीपमें वृद्धि, प्रतिसूर्य मामाने अंजनीकू बहुत आदरसों राखी, बहुरि पवनंजयका भूताटवीविषै प्रवेश अर पवनंजयके हाथी कू देखि सूर्यका तहां आवना, पवनंजयकू अंजनीके मिलाप का परम उत्साह होना, पुत्रका मिलाप होना अर पवनंजयका रावणके निकट आना। अर आज्ञातैं वरुणसू युद्धकरि ताहि जीतना। रावणके बडे राज्यका वर्णन, तीर्थंकरों की आयु काय अंतरालका वर्णन, बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण, चक्रवर्तीनिके सकल चरित्रका वर्णन। अर राजा दशरथकी उत्पत्ति, अर केकईकू वरदानका देना, राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न का जन्म, सीताकी उत्पत्ति, भामंडलका हरण, अर ताकी माताकू शोकका होना। अर नारदने सीताका चरित्र चित्रपट भामण्डलकू दिखाया सो देखकर मोहित होना। बहुरि जनकके स्वयंवर मंडपका वृत्तांत, अर धनुष रतनका स्वयंवर मंडपमें धरना, श्रीरामचन्द्रका आवना, धनुषका चढावना अर सीताकू विवाहना। अर सर्वभूतशरण्यमुनिके निकट दशरथका दीक्षा लेना। अर भामण्डलकों पूर्व जन्मका ज्ञान होना। अर सीताका दर्शन। बहुरि केकयीके वरतैं भरतका राज्य, अर राम लक्ष्मण सीताका दक्षिण दिशाकू गमन करना। वज्रकिरणका चरित्र, लक्ष्मणकू कल्याणमालाका लाभ, अर रुद्रभूतकों वश करना अर बालखिल्यका छुडावना, अर अरुणग्रामविषै श्रीराम आए तहां

वनमें देवतानिने नगर बसाये तहा चौमासे रहना । लक्ष्मणके वनमालाका सगम, प्रतिवीर्यका वैराग्य, बहुरि लक्ष्मणके जितपद्माको प्राप्ति, अर कुलभूषण देशभूषण मुनिका चरित्र अर श्रीराम ने वशस्थल पवतविषे भगवान के मदिर कराए तिनका वणन, अर जटायु पखीने नेमको प्राप्ति, पात्रदानके फलकी महिमा, सम्बुकका मरण, सूपनखाका मिलाप, खरदूषणसू लक्ष्मणका युद्ध, सीता, का हरण, सीताकू रामके वियोगका अत्यन्त शोक, अर रामकू सीताके वियोगका अत्यन्त शोक बहुरि विराधितविद्याधरका आगमन अर खरदूषणका मरण, अर रतनजटीकै रावणकरि विद्याका छेद, अर सुग्रीवका रामके निकट आवना, बहुरि सुग्रीवके कारण श्रीरामने साहसगतिको मारया, अर सीताका वृत्तात रतनजटीने श्रीरामसू कहया । श्रीरामका लका उपरि गमन । राम रावणके युद्ध । राम लक्ष्मणकू सिंहवाहिनी गरुडवाहिनी विद्याकी प्राप्ति । लक्ष्मणके रावणकी शक्तिका लगना, अर विशल्याके प्रसादतै शक्ति दूर होना, रावणका शातिनाथके मदिर विषै बहुरूपिणी विद्याका साधना अर रामके कटकके विद्याधर कुमारनिका लकाविषैं प्रवेश, अर रावणके चित्तके डिगावनेका उपाय, पूर्णभद्र मानभद्रके प्रभावतें विद्याधर कुमारनिका कटकमें पाछा आवना। रावणकू विद्याकी सिद्धि, बहुरि राम रावणके युद्ध, रावणका चक्र लक्ष्मण के हाथ आवना । अर रावणका परलोक गमन, रावणकी स्त्रीनिका विलाप । बहुरि केवलीका लकाके वनविषै आगमन । इद्रजीत कुभकर्णादिका दीक्षा ग्रहण । अर रावणकी स्त्रीनिका दीक्षा ग्रहण । अर श्रीरामका सीतासू मिलाप । विभीषण के भोजन, कइक दिन लकाविषे निवास, बहुरि नारद का रामके निकट आवना । रामका अयोध्यागमन भरतके अर त्रिलोकमडन हाथी के पूर्व भवका वर्णन । भरतका वैराग्य, राम लक्ष्मणका राज्य अर रणविषै मधुका अर लवणका मरण । मथुराविषै शत्रुघ्नका

राज्य, मथुराविषै अर सकलदेशविषै धरणींद्रके कोपतैं रोगानिकी उत्पत्ति, बहुरि सप्तऋषिनिके प्रभावतैं रोगनिकी निवृत्ति। अर लोकापवादतैं सीताका वनविषै त्यजन अर वज्रजंघ राजाका वनविषै आगमन, सीताकू बहुत आदरतै ले जाना। तहा लवणांकुशका जन्म। अर लवणांकुश बडे होई अनेक राजानिकू जीति वजजंघके राज्य का विस्तार किया। बहुरि अयोध्या आय श्रीरामसू युद्ध किया। अर सर्वभूषण मुनिकू केवलज्ञानकी प्राप्ति, देवनिका आगमन। सीताके शीलतैं अग्नि-कुण्डका शीतल होना। अर विभीषणके पूर्वभवका वर्णन। कृतांतवक्रका तप लेना। स्वयम्वर मण्डपविषै रामके पुत्रनितै लक्ष्मणके पुत्रनिका विरोध। बहुरि लक्ष्मणके पुत्रनिका वैराग्य। अर विद्युत्पाततै भामण्डलका मरण। हनुमान का वराग्य। लक्ष्मण की मृत्यु। रामके पुत्रनिका तप। श्रीरामकू लक्ष्मण के वियोगतैं अत्यन्त शोक अर देवतानिके प्रतिबोधतैं मुनिव्रतका अंगीकार, केवल ज्ञानकी प्राप्ति। निर्वाण गमन।

यह सब रामचन्द्रका चरित्र सज्जन पुरुष मनक समाधान करिके सुनहु। यह चरित्र सिद्धपदरूप मंदिरकी प्राप्तिका सिवाण है, अर सवप्रकार सुखनिका दायक है। श्रीरामचन्द्रको आदि दे जे महामुनि तिनका जे मनुष्य चिंतवन कर हैं, अर अतिशयपणेकरि भावनिके समूह करि नम्रीभूत होइ प्रमोदकू धरै है तिनका अनेक जन्मनिका संचित जो पाप सो नाश होइ है। सम्पूर्ण पुराणका जे श्रवण करैं तिनका पाप दूर होय ही होय, तामें संदेह कहा? कैसा है पुराण? चन्द्रमा समान उज्ज्वल है। तातै जो विवेकी चतुर पुरुष है ते या चरित्रका सेवन करहु। कैसा है चरित्र? बडे पुरुषनिकरि सेइवे योग्य है। जसे सूर्यकरि प्रकाश्या जो मार्ग ताविषै भले नेत्रनिके धारक पुरुष काहेकू डिगे?

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ की भाषावचनिकाविषै पीठबंध विधान नामा प्रथम पर्व पूर्ण भया ॥१॥

अथ लोकस्थिति महा अधिकार ।

मगधदेशके राजगृह नगरमें श्रीमहावीर स्वामीके समोसरणका आना और राजा श्रेणिकका श्रीरामचन्द्रजीकी कथा पूछना।

जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें मगधदेश अति सुन्दर है, जहा पुण्याधिकारी बसै है, इन्द्रके लोक समान सदा भोगोपभोग करै हैं, जहा योग्य व्यवहार से लोक पूण मर्यादारूप प्रवृत्ते ह और जहा सरोवर में कमल फूल रहे ह और भूमिमें अमतसमान मीठे साठेनके बाड़े शोभायमान ह और जहा नाना प्रकारके अन्नोके समूहके पवत समान ढेर होय रहे, अरहटकी घडीसे सींचे जीरानके धणाके खेत हरित होय रहे हैं, जहा भूमि अत्यन्त श्रेष्ठ ह, सब वस्तु निपजे है। चावलों के खेत शोभायमान और मूग मौठ ठौर२ फल रहे है। गेहू आदि सब अन्नकू काहू भाति विघ्न नाहीं और जहा भैसको पीठपर चढ़े ग्वाला गावें है, गऊओके समूह अनेक वणके हैं, जिनके गलेमें घटा बाजे हैं और दुग्ध झरती अत्यन्त शोभे है, जहा दूधमयी धरती होरही है, अत्यन्त स्वादु रसके भरे तृण तिनको चरकर गाय भैंस पुष्ट होय रही हैं और श्याम सुन्दर हिरण हजारों विचरे है, मानो इन्द्रके हजारों नेत्र ही है। जहा जीवनको कोई बाधा नहीं। जिनधर्मियोका राज्य है और बनके प्रदेश केतककी धूलिकरि धूसरित होय रहे है, फूलों से धवल होय रहे हैं, गगा के पुलिन समान उज्ज्वल बहुत शोभायमान हैं और जहा केसरकी क्यारी अति मनोहर है और जहा ठौर ठौर नारियलके वृक्ष है और अनेक प्रकार के शाक पत्रसे खेत हरित होरहे है और वनपाल नारेल आदि मेवानका आस्वाद करे हैं और जहा दाडम के बहुत वृक्ष ह। जहां सूवादि अनेक पक्षी बहुत प्रकार के फल भक्षण करे हैं, जहा बदर अनेक प्रकार किलोल करे है, बिजौराके वक्ष फल रहे हैं। बहुत स्वादरूप अनेक जाति के फल तिनका रस पीकर

पखी सुखसों सोय रहे हैं और दाखके मण्डप छाय रहे है। जहा वन विषैं देव विहार करे हैं, जहां खजूरको पथिक भक्षण करे है, केलाके वन फल रहे हैं। ऊचे ऊचे अरजुन वृक्षों के वन सोहे हैं और नदी के तट गोकुलनके शब्दसे रमणीक हैं। नदियोमें मच्छीनिके समूह किलोल करैं हैं, तरंगके समूह उठे हैं। मानो नदी नृत्य ही करे ह और हसोंके मधुर शब्दो कर मानों नदी गान ही करे है, जहां सरोवरके तीरपर सारस क्रीडा करे हैं और वस्त्र आभरण सुगन्धादि सहित मनुष्योंके समूह तिष्ठे हैं, कमलोंके समूह फूल रहे हैं, और अनेक जीव क्रीडा करे हैं। जहा हसो के समूह उत्तम मनुष्योंके गुणोंके समान उज्ज्वल सुन्दर शब्द, सुन्दर चालवाले तिनकर वन धवल होय रहा ह। जहा कोकिलानके रमणीक शब्द और भवरोका गु जार,मोरोके मनोहर शब्द,सगीतकी ध्वनि, बीन मदगोंका बाजना,इनकरि दशों दिशा रमणीक होय रही हैं और वह देश गुणवत पुरुषोसे भरा है, जहा दयावान क्षमावान शीलवान उदारचित्त तपस्वी त्यागी विवेकी आचारी लोग बसे हैं, मुनि विचरै है, आर्यिका विहार करे हैं, उत्तम श्रावक श्राविका बसे हैं। शरदकी पूणमासी के चन्द्रमाके समान है चित्तकी वृत्ति जिनकी, मुक्ताफल समान उज्ज्वल हैं। आनन्दके देनेहारे हैं, और वह देश बडे बडे गृहस्थीन कर मनोहर है। कैसे है गृहस्थी ? कल्पवृक्ष समान हैं, तृप्त किये है अनेक पथिक जिन्होने। जहा अनेक शुभ ग्राम हैं। जिनमें भलेभले किसान बसे हैं, और उस देश विषै कस्तूरी कपूरादि सुगन्ध द्रव्य बहुत हैं और भाति भातिके वस्त्र आभूषणों कर मण्डित नर नारी विचरे है, मानो देव देवी ही हैं। जहा जैन वचनरूपी अंजन [सुरमा] से मिथ्यात्वरूपी दृष्टिविकार दूर होवे है। और महा मुनियोंके तप रूपी अग्निसे पाप रूपी वन भस्म होय है। ऐसा धर्मरूपी महा मनोहर मगध देश बसै है ॥

मगधदेश में राजगृह नामा नगर महा मनोहर, पुष्पोकी वासकर महा सुगन्धित, अनेक सम्पदा कर

भरया है। मानो तीन भुवनका यौवन ही है और वह नगर इन्द्रके नगर समान मनका मोहने वाला है। इन्द्रके नगरमें तो इन्द्राणी कुंकुम कर लिप्त शरीर विचरै है, और इस नगरमें राजा की रानी सुगंध कर लिप्त शरीर विचरे है। महिषी ऐसा नाम रानीका है, और भैंसका भी है, सो जहां भैंस भी केसरकी क्यारीमें लोटकर केसरसो लिप्त भई फिरे है। और सुन्दर उज्ज्वल घरो की पंक्ति और टांकीनके घडे सफेद पाषाण तिनकी शिलानिकरि मंदिर बने हैं, मानो चन्द्रकांति मणिनका नगर बना है। मुनियोको तो वह नगर तपोवन भासै है (मालूम होताहै) वेश्याको काम मंदिर। नृत्यकारनीको नृत्यका मंदिर और वैरीको यमपुर है, सुभटको वीरनिका स्थान, याचकनिको चिंतामणि, विद्यार्थीको गुरुगृह, गीतशास्त्रके पाठीको गंधर्व नगर, चतुरनकूं सबकला (चतुराई) सीखनेका स्थान और ठगनिको धूर्तनिका मंदिर भासे है। संतनको साधुओंका संगम, व्यापारीको लाभभूमि, शरणागतको वज्रपिंजर, नीतिके वेत्ताको नीतिका मंदिर, कौतुकी (खिलारियो) को कौतुकका निवास, कामिनिको अप्सराओंका नगर, सुखियाको आनन्दका निवास भासे है। जहां गजगामिनी शीलवती व्रतवंती रूपवती अनेक स्त्री हैं। जिनके शरीरकी पद्मरागमणिकीसी प्रभा है और चन्द्रकांति मणि जैसा वदन है, सुकुमार अंग हैं, पतिव्रता है, व्यभिचारीको अगम्य हैं, महा सौन्दर्य हैं, मिष्ट वचनकी बोलनेहारी हैं, और सदा हर्षरूप मनोहर है मुख जिनके और प्रमाद रहित है चेष्टा जिनकी, सामायिक प्रोषध प्रतिक्रमणकी करनेहारी हैं, व्रत नेमादि विषैं सावधान हैं, अन्नका शोधन, जलका छानना, पात्रनिकूं भक्तिकरि दान देना और दुखित भुखित जीवको दयाकर दान देना इत्यादि शुभ क्रियामें सावधान हैं। जहां महा मनोहर जिनमंदिर हैं, जिनेश्वरकी भक्ति और सिद्धांतको चरचा ठौर ठौर है। ऐसा राजगृह नगर बसा है जिसकी उपमा कथनमें न आवे। स्वर्ग लोक तो केवल भोगहो का

विलास है, और यह नगर भोग और योग दोनो ही का निवास है। जहा पर्वत समान तो ऊंचा कोट है, और महागम्भीर खाई है, जिसमें वैरी प्रवेश नहीं कर सकते, ऐसा देवलोक समान शोभायमान राजगृह नगर बसे है।

राजगृह नगरमें राजाश्रेणिक राज्य करे है, जो इन्द्र समान विख्यात है। बडा योद्धा, कल्याण-रूप है प्रकृति जिसकी। कल्याण ऐसा नाम स्वर्णका भी है और मगलका भी है। सुमेरु तो सुवर्ण रूप है, और राजा कल्याणरूप है। वह राजा समुद्र समान गम्भीर है, मर्यादा उलघनका है भय जिसको, कलाके ग्रहणमें चन्द्रमाके समान है, प्रतापमें सूर्य समान है, धन सम्पदामें कुवेरके समान है, शूरवीरपनेमें प्रसिद्ध है, लोकका रक्षक है, महा न्यायवत है। लक्ष्मीकरि पूर्ण है, गर्वसे दूषित नहीं, सब शत्रुओंको विजय कर बैठा है तथापि शस्त्र (हथियार) का अभ्यास रखता है और जे आपसे नम्रीभूत भये है तिनके मानका बढावनहारा है। जे आपतें कठोर है तिनके मानका मोडनहारा है। और आपदा विषै उद्वेगचित्त नाहीं, सम्पदा विषै मदोन्मत्त नाहीं। जाकी निर्मल साधुनिविषै रतबुद्धि है, और रत्नके विषै पाषाणबुद्धि है, जो दानयुक्त क्रियामें बडा सावधान है, और ऐसा सामन्त है कि मदोन्मत्त हाथीको कीट समान जाने है और दीन पर दयालु है, जिसकी जिनशासनमें परम प्रीति है। धन और जीतव्यमें जीर्ण तृण समान बुद्धि है, दशो दिशा वश करी है, प्रजा के प्रतिपालनमें सावधान है, और स्त्रियोंको चर्मकी पुतली के समान देखे है, धनको रज समान गिने है, गुणनकर नम्रीभूत जो धनुष ताहीको अपना सहाई जाने है,चतुरग सेनाको केवल शोभारूप माने है। (भावार्थ) अपने बल पराक्रमसे राज करे है। जिसके राजमें पवन भी वस्त्रादिका हरण नहीं करे तो ठग चोरोंकी क्या बात ? जिसके राजमें क्रूर पशु भी हिंसा न करते भये तो मनुष्य हिंसा कैसे करे? यद्यपि

राजा श्रेणिकसे वासुदेव बडे होते ह, परन्तु उन्होने वृष कहिए वृषासुरका पराभव किया ह, और यह राजा श्रेणिक वृष कहिये धर्म ताका प्रतिपालक ह, इसलिए उनसे श्रेष्ठ ह। और पिनाकी कहिये शकर उसने राजा दक्षके वगकू आताप किया। अर यह दक्ष अर्थात चतुर पुरुषोंको आनन्दकारी है, इसलिए शकरसे भी अधिक ह। और इन्द्रके वश नाहीं, अर यह वश करि विस्तीर्ण है। और दक्षिण दिशाका दिग्पाल जो यम, सो कठोर ह, यह राजा कोमल चित्त ह। और पश्चिम दिशाका दिग्पाल जो वरुण सो दुष्ट जलचरोका अधिपति ह, इसके दुष्टोंका अधिकार ही नाहीं। और उत्तर दिशाका अधिपति जो कुवेर, वह धनका रक्षक है, यह धनका त्यागी है। और बौद्धके समान क्षणिकमती नाहीं, चन्द्रमाकी नाई कलकी नाहीं। यह राजा श्रेणिक सर्वोत्कृष्ट ह। जिसके त्यागका अर्थी पार न पावै, जिसकी बुद्धिका पार पण्डित न पावते भये। शूरवीर जिसके साहसका पार न पावते भये। जिसकी कीर्ति दशो दिशा में विस्तरी ह, जिनके गुणनकी सख्या नाहीं, सम्पदा का क्षय नाहीं। सेना अर बहुत बडे बडे सामत सेवा करै है। हाथी घोडे रथ पयादे सब ही राजा का ठाठ सबसे अधिक है। और पृथिवीविषै प्राणीका चित्त जिससे अति अनुरागी होता भया, जिसके प्रतापका शत्रु पार न पावते भए। सब कलाविषै प्रवीण है, इसलिए हम सरीखे पुरुष वाके गुण कैसैं गा सकैं? जिसके क्षायिक सम्यक्त्वकी महिमा इन्द्र अपनी सभा विषै सदा ही करै है, वह राजा मुनिराजके समूहमें वेतकी लताके समान नमीभूत है। अर उद्धत वैरीनिको वज्रदण्डसैं वश करनेवाला है। जिसने अपनी भुजाओंसे पृथिवीकी रक्षा करी। कोट खाई तो नगरकी शोभामात्र है। जिनचैत्यालयों का करानेवाला, जिनपूजाका करानेवाला है। जिसके चेलना नामा रानी महा पतिव्रता शीलवती गुणवती रूपवती कुलवती शुद्ध सम्यग्दर्शन की धरनहारी, श्राविकाके व्रत पालनेवाली, सब-कला-निपुण, उसका वर्णन

कहा लग करें ? ऐसा उपमा कर रहित राजा श्रेणिक गुणोका समूह राजगृह नगरमें राज करे है ।

आगें अन्तिम तीर्थंकरका समवसरणका आगमन जानि राजा श्रेणिक उत्साहसहित भए ताका वर्णन करिए हैं—

एक समय राजगृह नगरके समीप विपुलाचल पर्वतके ऊपर भगवान महावीर अन्तिम तीर्थंकर समोसरण सहित आय विराजे। तब भगवानके आगमनका वृत्तांत वनपालने आकर राजासे कहा और छहों ऋतुओंके फल फूल लाकर आगें धरे। तब राजाने सिंहासन से उठकर सात पैंड पर्वतके सम्मुख जाय भगवानको अष्टांग नमस्कार किया और वनपालको अपने सब आभरण उतारकर पारितोषिकमें देकर भगवानके दर्शनों की तयारी करता भया।

श्रीवर्धमान भगवानके चरण-कमल सुर नर असुरोसे नमस्कार करने योग्य है। गर्भकल्याणविषै छप्पन कुमारियोने शोधा जो माताका उदर, उसमें तीन ज्ञान संयुक्त अच्युत स्वर्गसे आय विराजे है। और इन्द्रके आदेशसे धनपतिने गर्भमें आवनेसे छहमास पहिले से रत्नवृष्टि करके जिनके पिताका घर पूरया ह। अर जन्मकल्याणकमें सुमेरपर्वतके मस्तक पर इन्द्रादि देवोने क्षीरसागर के जलकर जिनका जन्माभिषेक किया ह और धरा है महावीर नाम जिनका। और बाल अवस्थामें इन्द्रने जो देवकुमार रखे तिन सहित जिन्होंने क्रीडा करी है। और जिनके जन्ममें माता पितान कू तथा अन्य समस्त परिवारकू अर प्रजाकू और तीन लोकके जीवनिकू परम आनन्द हुआ। नारकियोंका भी त्रास एक मुहूरत के वास्ते मिट गया। जिनके प्रभावकरि पिताके बहुत दिनोंके विरोधी जो राजा थे, ते स्वयमेव ही आय नमीभूत भये और हाथी घोडे रथ रत्नादिक अनेक प्रकारके भेंट किये और छत्र चमर वाहनादिक तज, दीन होय हाथ जोड आय पायन पडे। और नाना देशों की प्रजा आयकर निवास करती भई। जिन भगवान का चित्त जोगविषैं सदारत, भोगनिविषैंरत न भया। जैसे सरोवर

में कमल जलसे निर्लेप रहैं तैसे भगवान जगतकी मायासे अलिप्त रहे। वह भगवान स्वयबुद्ध बिजली के चमत्कारवत जगतकी मायाको चचल जान वरागी भये। और किया ह लौकातिक देवोंने स्तवन जिनका, मुनिव्रतको धारण कर सम्यग्दशन ज्ञान चारित्रका आराधनकर घातिया कर्मों का नाशकर केवलज्ञानको प्राप्त भये। वह केवलज्ञान समस्त लोकालोकका प्रकाशक ह। ऐसे केवलज्ञानके धारक भगवानने जगतके भव्य जीवोके उपकारके निमित्त धमतीथ प्रगट किया। वह श्रीभगवान मलरहित पसेवसे रहित ह। जिनका रुधिर क्षीर (दूध) समान ह और सुगन्धित शरीर, शुभलक्षण, अतुलबल मिष्टवचन, महा सुन्दर स्वरूप, समचतुरससस्थान, वज्रवषभनाराच सहनन के धारक हैं। जिनके, विहारमें चारो ही दिशाओमें दुर्भिक्ष नाहीं। सकल ईति भीतिका अभाव रह ह,और सर्वविद्याके परमेश्वर ह। जिनका शरीर निमल स्फटिक समान ह, अर आखो की पलक नाहीं लागै। अर नख केश बढे नाहीं, समस्त जीवोमें मत्रीभाव रहता ह, और शीतल मन्द सुगन्ध पवन पीछे लगी आवै ह। छह ऋतुके फल फूल फलै ह, और धरती दपण समान निर्मल हो जाती ह, और पवनकुमार देव एक योजन पर्यंत भूमि तृण पाषाण कण्टकादि रहित करै है। और मेघकुमार देव पीछे गधोदककी सुवृष्टि महा उत्साहसे कर और प्रभुके विहारमें देव चरणकमलके तल स्वर्णमयी कमल रचै हैं। चरणों को भूमि का स्पश नाहीं, आकाशमें ही गमन करै ह। धरतीपर छह ऋतुके सव धान्य फलै हैं। शरद के सरोवरके समान आकाश निर्मल होय है। अर दशो दिशा धूमाविरहित निर्मल हो रही ह, सूर्यकी कातिको हरणेवाला सहस्र आरोंसे युक्त धर्मचक्र भगवान के आगे चलै ह। इस भाति आर्य खण्ड में विहार कर श्रीमहावीर स्वामी विपुलाचल पर्वत ऊपर आय विराजे हैं। उस पर्वत पर नाना प्रकारके जलके निरझरने झरै हैं, उनका शब्द मनका हरणहारा है। जहा वेलि और वृक्ष शोभायमान हैं। और

जहा जातिविरोधी जीवोने भी वर छोड दिया है । पक्षी बोल रहे है, उनके शब्दों से मानो पहाड़ गुञ्जार ही करै ह, और भ्रमरोके नादसे मानो पहाड गान ही करै है । सघन वृक्षों के तलैं हाथियों के समूह बैठे ह । गुफाओंके मध्य सिंह तिष्ठ ह । जसे कलाश पवतपर भगवान ऋषभदेव विराजे थे तैसे विपुलाचलपर श्रीवर्द्धमान स्वामी विराज है ॥

जब श्रीभगवान समोसरणमें केवलज्ञान सयुक्त विराजमान भये, तब इन्द्रका आसन कम्पायमान भया, तदि इन्द्र ज्ञानी कि भगवान केवलज्ञानसयुक्त विराजे हैं, मै जायकर वदना करू । सो इन्द्र ऐरावत हाथीपर चढकर आए । वह हाथी शरदके बादल समान उज्ज्वल है । मानो कैलाश पर्वत सुवणकी साकलनिकरि सयुक्त है । जिसका कुम्भस्थलभ्रमरोकी पक्तिकरि मडित है, जिसने दशों दिशा सुगन्ध से व्याप्त करी ह, महा मदोन्मत्त है, जिसके नख सचिक्कण है, जिसके रोम कठोर हैं जिसका मस्तक भले शिष्यके समान बहुत विनयवान और कोमल है, जिसका अग दृढ है, और, दीर्घ काय ह, जिसका स्कध छोटा ह, मद झर है, अर नारदसमान कलहप्रिय है । जैसे गरुड नागको जीतै तैसें यह नाग अर्थात् हाथियो को जीत है । जैसें रात्रि नक्षत्रों की माला कहिए पक्ति ताकरि शोभै ह । तसैं यह नक्षत्रमाला जो आभरण तासो शोभ ह । सिंदूर कर अरुण (लाल) ऊचा जो कुभस्थल उससे देव मनुष्यो के मनको हरै है । ऐसे ऐरावत गजपर चढ़कर सुरपति आए । और भी देव अपने अपने वाहनों पर चढकर इन्द्रके सग आए, जिनके मुख कमल जिनेंद्रके दर्शनके उत्साह से फूल रहे है । सोलह ही स्वर्गोंके समस्त देव और भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी सबही आए । कमलायुध आदि अखिल विद्याधर अपनी स्त्रियो सहित आए । वे विद्याधर रूप और विभवमें देवोंके समान हैं।

तहा समोसरणविषै इन्द्र भगवानकी ऐसे स्तुति करते भए । हे नाथ ! महामोहरूपी निद्रामें सोता

यह जगत तुमने ज्ञानरूप सूर्य के उदयसे जगाया। हे सर्वज्ञ वीतराग! तुमको नमस्कार होहु, तुम परमात्मा पुरुषोत्तम हो, संसार समुद्रके पार तिष्ठो हो। तुम बडे सार्थवाही हो। भव्य जीव चेतनरूपी धनके व्यापारी तुम्हारे संग निर्वाण द्वीपको जायेंगे तो मार्गमें दोषरूपी चोरोंसे नाहीं लुटेंगे। तुमने मोक्षाभिलाषियोंको निर्मल मोक्षका पंथ दिखाया और ध्यानरूपी अग्नि कर कर्म ई धनको भस्म किया है। जिनके कोई बांधव नाहीं, नाथ नाहीं, दुःखरूपी अग्निके ताप कर संतापित जगतके प्राणी तिनके तुम भाई हो और नाथ हो, परम प्रतापरूप प्रगट भए हो। हम तुम्हारे गुण कैसे वर्णन कर सकें। तुम्हारे गुण उपमारहित अनन्त हैं, सो केवलज्ञानगोचर है। इस भांति इन्द्र भगवानकी स्तुति कर अष्टांग नमस्कार करते भये। समोसरणकी विभूति देख बहुत आश्चर्यको प्राप्त भये सो संक्षेपकरि वर्णन करिये है—

वह समोसरण नाना वर्णके अनेक महारत्न और स्वर्णसे रचा हुवा। जिसमें प्रथमही रत्नकी धूलि का धूलिसाल कोट है। और उसके ऊपर तीन कोट हैं, एक एक कोट के चार चार द्वार हैं, द्वारे २ अष्ट मंगल द्रव्य है, और जहां रमणीक वापी है, सरोवर हैं। और ध्वजा अद्भुत शोभा धरै है। तहां स्फटिक मणिकी भीति (दिवार) करि बाहर कोठे प्रदक्षिणरूप बने है। एक कोठेमें मुनिराज है। दूसरेमें कल्पवासी देवोंकी देवांगना हैं। तीसरेमें आर्यिका हैं। चौथेमें ज्योतिषी देवोंकी देवी हैं। पांचवेंमें व्यन्तर देवी हैं, छठेमें भवनवासिनी देवी हैं। सातवेंमें ज्योतिषी देव है। आठवेंमें व्यंतर देव है। नववेंमें भवनवासी, दशवेंमें कल्पवासी, ग्यारवेंमें मनुष्य, बारहवेंमें तिर्यंच। सर्व जीव परस्पर वैर भाव रहित तिष्ठैं है। भगवान अशोक वृक्षके समीप सिंहासनपर विराजैं हैं। वह अशोकवृक्ष प्राणियों के शोकको दूर करै है। और सिंहासन नाना प्रकार के रत्नो के उद्योत से इन्द्रधनुषके समान अनेक

रगोंको धरै है, इन्द्रके मुकुटमें जो रत्न लगे ह, उनकी काति के समूहको जीतै हैं। तीन लोक की ईश्वरताके चिह्न जो तीन छत्र उनसे श्रीमग्वान शोभायमान है। और देव पुष्पोंकी वर्षा करै हैं। चौसठ चमर सिरपर ढुरै है। दु दु भी बाजै रज ह। उनकी अत्यन्त सुन्दर ध्वनि होय रही है।

राजगृह नगरसे राजा श्रेणिक आवते भये। अपना मन्त्री तथा परिवार और नगरवासियों सहित समवसरणके पास पहुच, समवसरणको देख दूरहीसे छत्र चमर वाहनादिक तज कर स्तुति पूर्वक नमस्कार करते भये। पीछे आयकर मनुष्योंके कोठे में बैठे, अर कु वर वारिषेण, अभयकुमार, विजय-बाहु इत्यादिक राजपुत्र भी नमस्कार कर आय बठे। जहा भगवान की दिव्यध्वनि खिरै है, देव मनुष्य तिर्यंच सबही अपनी अपनी भाषामें समझ ह। वह ध्वनि मेघके शब्दको जीतै है। देव और सूर्यकी कातिको जीतने वाला भामण्डल शोभै ह। सिंहासन पर जो कमल ह, उसपर आप अलिप्त विराजै है। गणधर प्रश्न करै हैं, और दिव्यध्वनि विषै सबका उत्तर होय है।

गणधर देवने प्रश्न किया कि हे प्रभो! तत्त्वके स्वरूपका व्याख्यान करो। तब भगवान् तत्त्वनिका निरूपण करते भये। तत्त्व दो प्रकार के हैं एक जीव दूसरा अजीव। जीवोंके दो भेद हैं—सिद्ध और ससारी। ससारी के दो भेद है—एक भव्य दूसरा अभव्य। मुक्त होने योग्य को भव्य कहिए और कोरडू (कुडकू) मू ग समान जो कभी भी न सीझै तिसको अभव्य कहिए। भगवान्के भाषे तत्त्वों का श्रद्धान भव्य जीवोंके ही होय अभव्यको न होय। और ससारी जीवोंके एकेंद्रिय आदि भेद और गति काय आदि चौदह मार्गणाका स्वरूप कहा और उपशमश्रेणी क्षपकश्रेणी दोनों का स्वरूप कहा और ससारी जीव दु खरूप कहे,सो मूढो को दु.खरूप अवस्था सुखरूप भासै है। चारो ही गति दु ख रूप हैं। नारकियोंको तो आखके पलकमात्र भी सुख नाहीं, मारण, ताडन, छेदन, भेदन शूलारोपणादिक अनेक प्रकारके दु ख निरन्तर है। अर तिर्यंचोको ताडन, मारण, लादन, शीत-उष्ण,भूख-प्यास आदिके अनेक दु ख हैं। और मनुष्योंको इष्टवियोग और अनिष्टसयोग आदि अनेक दु ख हैं। और देवोंको बडे देवोकी

विभूति देखकर संताप उपजै है और दूसरे देवोंका मरण देख बहुत दु ख उपजै है, तथा अपनी देवांगनाओं का मरण देख वियोग उपजै है और जब अपना मरण निकट आवै तब अत्यन्त विलाप कर झूरै है। इसी भांति महादु ख कर संयुक्त चतुर्गतिमें जीव भ्रमण करै है। कर्मभूमिमें जो मनुष्य जन्म पाकर सुकृत (पुण्य) नाहीं करै है, उनके हस्तमें प्राप्त हुआ अमृत जाता रहै है। संसारमें अनेक योनियोंमें भ्रमण करता हुआ यह जीव अनंत कालमें कभी ही मनुष्य जन्म पावै है। तब भीलादिक नीच कुलमें उपजा तो क्या हुआ? अर म्लेच्छ खंडों में उपजा तो क्या हुआ? और कदाचित् आर्यखण्ड में उत्तम कुलमें उपज्या, और अंगहीन हुआ तो क्या, और सुन्दररूप हुआ और रोग संयुक्त हुआ तो क्या? और सब ही सामग्री योग्य भी मिली परन्तु विषयाभिलाषी होकर धर्ममें अनुरागी न भया तो कुछ भी नहीं। इसलिए धर्मकी प्राप्ति अत्यन्त दुर्लभ है। कई एक तो पराये किंकर होकर अत्यन्त दु खसे पेट भरै है, कई एक संग्राममें प्रवेश करै है। संग्राम शस्त्रके पातसे भयानक है और रुधिर के कर्दम (कीचड) से महा ग्लानि रूप है। और कई एक किसाण वृत्तिकर क्लेश से कुटुम्बका भरण पोषण करै हैं, जिसमें अनेक जीवोंकी हिंसा करनी पडती है। इसभांति अनेक उद्यम प्राणी करै हैं। उनमें दु ख क्लेशही भोगै हैं। संसारी जीव विषयसुखके अत्यन्त अभिलाषी है। कई एक तो दरिद्रता से महादुखी हैं,कई एकधन पायकर चोर वा अग्नि वा जल वा राजादिके भयसे सदा आकुलतारूप रहैं हैं। और कई एक द्रव्यको भोगते हैं। परन्तु तृष्णारूप अग्निके बढनेसे जलैहै,कई एकको धर्मकी रुचि उपजी है,परन्तु उनको दुष्ट जीव संसार ही के मार्ग में डारैं हैं। परिग्रहधारियोंके चित्त की निर्मलता कहांसे होय,और चित्त की निर्मलता बिना धर्म का सेवन कैसे होय? जब तक परिग्रह की आसक्तता है तब तक जीव हिंसा-विषै प्रवृत्ते है और हिंसा से नरक निगोद आदि कुयोनिमें महा दु ख भोगै है संसारभ्रमण का मूल हिंसा ही है। अर जीवदया मोक्ष का मूल है। परिग्रह के संयोग से राग द्वेष उपजै है सो राग द्वेष ही संसार के दु ख के कारण है। कई एक जीव दर्शन मोह के अभाव से सम्यग्दर्शन को भी

पावैं हैं, परन्तु चारित्रमोह के उदय से चारित्र को नहीं धरि सकैं हैं, और कई एक चारित्र को भी धारकर बाईस परीषहों से पीडित होकर चारित्र से भ्रष्ट होय हैं। कई एक अणुव्रत ही धारैं हैं और कई एक अणुव्रत भी धार नहीं सके है, केवल अव्रत सम्यक्त्वी ही होय है। अर संसार के अनंत जीव सम्यक्त्व से रहित मिथ्यादृष्टि ही हैं। जो मिथ्यादृष्टि हैं वे बार बार जन्म मरण करै हैं, दु:खरूप अग्नि से तप्तायमान भवसंकटमैं पडे हैं। मिथ्यादृष्टि जीव जीभ के लोलुपी हैं और काम कलंक से मलीन हैं, क्रोध मान माया लोभ मैं प्रवृत्तै है। और जो पुण्याधिकारी जीव संसार शरीर भोगनितैं विरक्त होइ करि शीघ्र ही चारित्र को धारै हैं, और निबाहै है और संयम मैं प्रवृत्तै है। वे महाधीर परम समाधि से शरीर छोडकर स्वर्ग में बडे देव होकर अद्भुत सुख भोगै है। वहां से चयकर उत्तम मनुष्य होकर मोक्ष पावै है। कई एक मुनि तपकर अनुत्तर विमान मैं अहिमेन्द्र होय हैं, तहांते चय-कर तीर्थंकर पद पावै है, कई एक चक्रवर्ती बलदेव कामदेव पद पावै हैं। कई एक मुनि महातप कर निदान बाध स्वर्ग में जाय वहां से चयकर वासुदेव होय है। ये भोग को नाहीं तज सकैं हैं। इस प्रकार श्रीवर्द्ध मान स्वामी के मुख से धर्मोपदेश श्रवण कर देव मनुष्य तिर्यंच अनेक जीव ज्ञान को प्राप्त भये। कई एक उत्तम पुरुष मुनि भए, कई एक श्रावक भए, कई एक तिर्यंच भी श्रावक भए। देव व्रत नहीं धारण कर सकते हैं तातै अव्रत सम्यक्त्वको ही प्राप्त भए। अपनी अपनी शक्ति अनुसार अनेक जीव धर्ममें प्रवृत्त पापकर्मके उपार्जन से विरक्त भए। धर्म श्रवण कर भगवानको नमस्कार कर अपने अपने स्थान गए। श्रेणिक महाराज भी जिनवचन श्रवण कर हर्षित होय अपने नगरको गए।

अथानंतर सन्ध्या समय सूर्य अस्त होनेको सन्मुख भया, अस्ताचलके निकट आया, अत्यन्त आर-क्तता (सुरखी) को प्राप्त भया, किरण मन्द भई, सो यह बात उचितही है। जब सूर्यका अस्त होय तब किरण मंद होय ही होय, जैसे अपने स्वामीको आपदा परे तब किसके तेजकी वृद्धि रहे? चकवीनके अश्रुपात सहित जे नेत्र तिनको देख मानो दयाकर सूर्य अस्त भया। भगवानके समवसरणविषै तो सदा

प्रकाश ही रह है, रात्रि दिनका विचार नाहीं। अर सब पृथ्वीविषै रात्रि पडी, सन्ध्यासमय दिशा लाल भई सो मानो धर्म श्रवणकर प्राणियोके चित्तसे नष्ट भया जो राग, सो सन्ध्याके छलकर दशों दिशानमें प्रवेश करता भया। (भावार्थ) रागका स्वरूप भी लाल होय है, अर दिशाविषै भी ललाई भई। अर सूयके अस्त होने से लोगोके नेत्र देखनेसे रहित भए, क्योकि सूयके उदयसे जो देखने की शक्ति प्रकट भई थी सो अस्त होनेसे नष्ट भई, अर कमल सकुचित भए। जैसे बडे राजाओं के अस्त भए चौरादिक दुजन जगत विष परधन हरणादिक कुचेष्टा कर तस सूयके अस्त होनेसे पृथ्वी विषै अधकार फल गया। रात्रि समय घर घर चम्पेकी कली के समान जो दीपक तिनका प्रकाश भया। वह दीपक मानो रात्रिरूप स्त्री के आभूषण ही हैं। कमलके रससे तृप्त होकर राजहस शयन करते भए, अर रात्रिसम्बन्धी शीतल मद सुगध पवन चलती भई, मानो निशा (रात) का स्वास ही है। अर भ्रमरोके समूह कमलोमें विश्राम करते भए। अर जस भगवानके वचनोंकर तीन लोक के प्राणी धर्मका साधनकर शोभायमान होय ह, तसें मनोज्ञ तारोके समूहसे आकाश शोभायमान भया। अर जैसे जिनेन्द्रके उपदेशसे एकातवादियोका सशय विलाय जाय तसे चन्द्रमाकी किरणों से अन्धकार विलाय गया। लोगोके नेत्रोको आनदका करनहारा चद्रमा उद्योत समय कम्पायमान भया, मानो अन्धकारपर अत्यन्त कोप भया। [भावार्थ] क्रोध समय प्राणी कम्पायमान होय है। अन्धकार कर जे लोक खेदको प्राप्त भए थे वे चन्द्रमाके उद्योतकर हषको प्राप्त भए। अर चन्द्रमाकी किरणको स्पर्श कर कुमुद प्रफुल्लित भए। इस भाति रात्रिका समय लोगोको विश्रामका देनहारा प्रगट भया। राजा श्रेणिकको सन्ध्यासमय सामायिकपाठ करते, जिनेन्द्रकी कथा करते करते घनी रात्रि गई, सोने को उद्यमी भया। कैसा है रात्रिका समय, जिसमें स्त्री पुरुषोंके हितकी वृद्धि होय है। राजाके शयनका महल गगाके पुलिन [किनारों] समान उज्ज्वल है, अर रत्नोकी ज्योतिसे अति उद्योत रूप है। अर फूलोंकी सुगधि जहा झरोखोंके द्वारा आव है, अर महलके समीप सुन्दर स्त्री मनोहर गीत गाय रही

हैं। अर महलके चौगिरद सावधान सामतो की चौकी है, अर अति शोभा बन रही है। सेजपर अति कोमल बिछौने बिछ रहे है। वह राजा भगवानके पवित्र चरण अपने मस्तक पर धारै हैं, अर स्वप्न में भी बारम्बार भगवान हीका दर्शन करै है। अर स्वप्नमें गणधरदेवसे भी प्रश्न करै है। इस भांति सुखसे रात्रि पूर्ण भई, पीछे मेघकी ध्वनिके समान प्रभातके वादित्र बाजते भए। उनके नादसे राजा निद्रासे रहित भया।

प्रभात समय देहक्रिया करि राजा श्रेणिक अपने मनमें विचार करता भया कि भगवान की दिव्यध्वनिमें तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिकके जो चरित्र कहे गए वे मैंने सावधान होकर सुने। अब श्रीरामचन्द्रके चरित्र सुनने में मेरी अभिलाषा है। लौकिक ग्रन्थोमें रावणादिकको मासभक्षी राक्षस कहा है परन्तु वे विद्याधर महाकुलवत कैसै मद्य मास रुधिरादिकका भक्षण करैं? अर रावणके भाई कुम्भकरणको कहै है कि वह छै महीनेकी निद्रा लेता था। अर उसके ऊपर हाथी फेरते अर ताते तेलसे कान पूरते तो भी छह महीना से पहले नहीं जागता, तब ऐसी भूख प्यास लगती कि अनेक हस्ती महिषी (भैसा) आदि तिर्यंच, अर मनुष्यो को भक्षण कर जाता था। अर राधि रुधिरका पान करता तौ भी तृप्ति नहीं होती थी। अर सुग्रीव हनुमानादिकको बानर कहे है। परन्तु वे तो बडे राजा विद्याधर थे, बडे पुरुष को विपरीत कहने में महा पापका बध होय है। जैसे अग्नि के सयोग से शीतलता न होय, अर तुषार (बर्फ) के सयोग से उष्णता (गरमी) न होय, जलके मथन से घी की प्राप्ति न होय, अर बालू रेत के पेलने से तैल की प्राप्ति न होय, तैसैं महापुरुषों के चरित्र विरुद्ध सुनने से पुण्य न होय। अर लोक ऐसा कहै हैं कि देवो के स्वामी इन्द्र को रावण ने जीता, परन्तु यह बात न बनै। कहा वह देवो का इन्द्र? अर कहा यह मनुष्य—जो इन्द्र के कोपमात्र से ही भस्म हो जाय, जाके ऐरावत हस्ती, वज्रसा आयुध, जिसकी ऐसी सामर्थ कि सर्व पृथिवी को वशकर ले। सो ऐसे स्वर्ग के स्वामी इन्द्र को यह अल्प शक्ति का धनी मनुष्य विद्याधर कैसे लाकर बन्दी में डारै है, मृगसे

सिंह को कसे बाधा होय ? तिलसे शिला को पीसना, अर गिंडोले से साप का मारना, अर श्वान से गजेंद्र का हनना कस होय ? अर लोक कहे है कि रामचन्द्र मृगादिककी हिंसा करते थे सो यह बात न बन । वे वती विवेकी दयावान महापुरुष कैसें जीवों की हिंसा करैं, अर कसै अभक्ष्यका भक्षण करैं ? अर सुग्रीव का बडा भाई बाली को कहैं है कि उसने सुग्रीव की स्त्री अंगीकार करी । सो बडा भाई जो बाप समान ह कस छोटे भाई की स्त्री अंगीकार कर, सो यह सब बात संभव नाहीं । इसलिए गणधर देवको पूछकर श्रीरामचन्द्र की यथाथ कथा श्रवण करू । ऐसा विचार श्रेणिक महाराज ने किया । बहुरि मनमें विचार ह कि नित्य गुरुनिके दर्शन किए,धम के प्रश्न किए, तत्त्व निश्चय किएतै परम सुख होय है । ये आनन्द के कारण है । ऐसा विचार कर राजा सेज से उठे,अर रानी अपने स्थान गई । कसी ह रानी ? जिसकी कांति लक्ष्मी समान है,महा पतिवृता अर पतिकी बहुत विनयवान है । अर कसा ह राजा ? जिसका चित्त अत्यन्त धर्मानुराग में निष्कम्प है । दोनों प्रभात क्रिया का साधन करते भए । अर जैसें सूर्य शरद के बादलो से बाहिर आवै तैसै राजा सुफेद कमलके समान उज्ज्वल सुगंध महल से बाहिर आवतै भए । उस सुगंध महल में भंवर गुंजार करैं हैं ।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराणकी भाषा टीकाविषै श्रेणिकने रामचन्द्र रावण के चरित्र सुनने के अर्थ प्रश्न करने का विचार किया एसा द्वितीय अधिकार संपूर्ण भया ॥ २ ॥

आगैं राजा सभा मै आय सब आभरण सहित विराजे ताकी शोभा कहिये हैं । प्रभात ही बडे बडे सामन्त आये,उनको द्वारपालने राजाका दर्शन कराया । सामंतो के वस्त्र आभूषण सुन्दर हैं । उन समेत राजा हाथी पर चढकर नगर से समोसरण को चाले । आगै बन्दीजन विरद बखानते जाय है । राजा समोसरण के पास पहुँचे । कैसा है समोसरण—जहा अनंत महिमाके निवास महावीर स्वामी विराजै है । तिनके समीप गौतम गणधर तिष्ठ है । तत्त्वों के व्याख्यानमें तत्पर अर कांति में चन्द्रमा के तुल्य, प्रकाश में सूर्यके समान, जिनके चरण वा नेत्ररूपी कमल अशोक वृक्ष के पल्लव समान

लाल हैं, अर अपनी शांतिताकरि जगत को शांत करै है,मुनियो के समूह के स्वामी हैं। राजा दूर से ही समोसरण को देख करि हाथी से उतर समोसरण गए। हर्ष कर फूल रहे हैं मुखकमल जिनके सो भगवानकी तीन प्रदक्षिणा दे हाथ जोड नमस्कार कर मनुष्यों की सभा में बैठे ॥

प्रथम ही राजा श्रेणिक ने श्रीगणधरदेव को 'नमोऽस्तु' कहकर समाधान (कुशल) पूछकर प्रश्न किया—भगवन! मै रामचरित्र सुनने की इच्छा करू हू। यह कथा जगत में लोगों ने और भांति प्ररूपी है। इसलिए हे प्रभो! कृपाधार सदेहरूप कर्दमसे डूबते जीवनिको काढो।

राजा श्रेणिकका प्रश्न सुन श्रीगणधरदेव अपने दांतों की किरणसे जगतको उज्ज्वल करते गम्भीर मेघ ध्वनि समान भगवानकी दिव्यध्वनिके अनुसार व्याख्यान करते भए। हे राजा! तू सुन, मैं जिन आज्ञाप्रमाण कहू हू। जिनवचन तत्त्वके कथनमें तत्पर हैं। तू यह निश्चय कर कि रावण राक्षस नहीं, मनुष्य है, मासका आहारी नहीं, विद्याधरोंका अधिपति है, राजा विनमिके वंशमें उपज्या है। अर सुग्रीवादिक बन्दर नहीं, ये बडे राजा मनुष्य है, विद्याधर है। जैसे नींव बिना मन्दिरका मांडना न होय तैसें जिन-वचन-रूपी मूल विना कथाकी प्रमाणता न होय है। इसलिए प्रथम ही क्षेत्र कालादिकका वर्णन सुन, अर फिर महा पुरुषो का चरित्र जो पापका विनाशनहारा है सो सुन।

लोकालोक कालचक्र कुलकर नाभिराजा और श्रीऋषभदेव और भरतका वर्णन।

गौतम स्वामी कहै है कि हे राजा श्रेणिक! अनन्तप्रदेशी जो अलोकाकाश, ता मध्य तीन वातवलयनै वेष्टित तीनलोक तिष्ठै हैं। तीनलोकके मध्य यह मध्यलोक है। इसमें असंख्यातद्वीप और समुद्र हैं। तिनके बीच लवणसमुद्रकरि वेढ्या लक्षयोजनप्रमाण यह जंबूद्वीप है। उसके मध्य सुमेर पर्वतहै,वह मूलमें वज्रमणिमयी है, अर ऊपर समस्त सुवर्णमयी है, अनेक रत्नोंसे संयुक्त है। संध्या समय रक्तताको धरै है, मेघोंके समूहके समान स्वर्गपर्यंत ऊंचा शिखर है। शिखरके और सौधर्म्मस्वर्गके बीचमें एक बालकी अणीका अन्तर है। सुमेरु पर्वत निन्यानवें हजार योजन ऊंचा है। अर एक हजार योजन

स्कव ह । अर पृथ्वीविष तो वशहजार योजन चौडा है, अर शिखर पर एक हजार योजन चौडा है। मानो मध्य लोकके नापनेका वड ही है । जम्बूद्वीपमें एक देवकुरु एक उत्तरकुरु भोगभूमि है, अर भरत आदि सप्त क्षेत्र हैं, षट्कुलाचलोसे जिनका विभाग है । जम्बू अर शाल्मली यह दोय वृक्ष हैं। जम्बूद्वीपमें चौतीस विजयाध पवत है । एक एक विजयार्धमें एक सौ दश दश विद्याधरोंकी नगरी हैं। एक एक नगरीकू कोटि कोटि ग्राम लागै ह । अर जम्बूद्वीपमै बत्तीस विदेह, एक भरत, एक ऐरावत ऐसै चौतीस क्षेत्र ह । एक एक क्षेत्र मै एक एक राजधानी है । अर जम्बूद्वीपमै गगा आदिक १४ महानदी ह, अर छह भोगभूमि है । एक एक विजयाधपवतमै दोय दोय गुफा है । सो चौतीस विजयार्धके अडसठ गुफा है । षटकुलाचलो मैं अर विजयार्ध पवतों मैं तथा वक्षार पर्वतो म सवत्र भगवानके अकृत्रिम चत्यालय है, अर जम्बूद्वीप अर शाल्मली वृक्ष मैं भगवान के अकृत्रिम चैत्यालय हैं जो रत्नों की ज्योति से शोभायमान है । जबूद्वीपकी दक्षिण दिशाको ओर राक्षसद्वीप है,अर ऐरावत क्षेत्र की उत्तर दिशामै गन्धव नामा द्वीप है,अर पूव विदेहकी पूर्व दिशामैं वरुण द्वीप है,अर पश्चिम विदेहकी पश्चिम दिशामें किन्नर द्वीप ह । वे चारों ही द्वीप जिन मन्दिरो से मण्डित है ॥

जैसै एक मास में शुक्लपक्ष अर कृष्णपक्ष यह दोय पक्ष होय है तैसैं ही एक कल्पमें अवसर्पिणी अर उत्सर्पिणी दोनों काल प्रवर्त्तै हैं । अवसर्पिणी काल मै प्रथम ही सुखमासुखमा, काल की प्रवृत्ति होयहै, फिर दूसरा सुखमा, तीसरा सुखमादुखमा, चौथा दुखमासुखमा, पाचवा दुखमा अर छठा दुखमदुखमा प्रवर्त्तै है। तिसके पीछे उत्सर्पिणी काल प्रवर्त्तैहै । उसकी आदिमें प्रथम ही छठा काल दुखमादुखमा प्रवर्त्तै है, फिर पाचवा दुखमा, फिर चौथा दुखमासुखमा फिर तीसरा सुखमादुखमा, फिर दूसरा सुखमा,फिर पहला सुखमासुखमा । इसी प्रकार अरहटकी घडी समान अवसर्पिणी के पीछे उत्सर्पिणी अर उत्सर्पिणी पीछे अवसर्पिणी है । सदा यह कालचक्र इसी प्रकार फिरता रहता है,परन्तु इस काल का पलटना केवल भरत अर ऐरावत क्षेत्र में ही है । तातै इनमे ही आयु कायादिककी हानि वृद्धि होय है । अर महावि-

देह क्षेत्रादि में तथा स्वर्ग पाताल में, अर भोग भूमि आदिक में तथा सर्व द्वीप समुद्रादिक में कालचक्र नाहीं फिरता, इसलिये उनमें रीति पलट नाहीं, एक ही रीति रहै है। देवलोकविषैं तो सुखमासुखमा जो पहला काल है सदा उसकी ही रीति रहै है। अर उत्कृष्ट भोगभूमिमें भी सुखमासुखमा कालकी रीति रहै है, अर मध्य भोगभूमि में सुखमा अर्थात दूजे काल की रीति रहै है, अर जघन्य भोगभूमिमें सुखमा-दुखमा जो तीसरा काल है, उसकी रीति रहै है। अर महा विदेह क्षेत्रोंमें दुखमासुखमा जो चौथा काल है, उसकी रीति रहै है। अर अढ़ाई द्वीपके परे अन्तके आधे स्वयभूरमण द्वीप पर्यंत बीचके असख्यात द्वीपसमुद्रमें जघन्य भोगभूमिविषै सदा तीजे कालकी रीति है। अर अतके आधे द्वीपविषै तथा अतमें स्वयभूरमणसमुद्रविषै तथा चारो कोणमें दुखमा अर्थात पचम कालकी रीति सदा रहै है। अर नरकमें दुखमादुखमा जो छठा काल उसकी रीति रहै है। अर भरत ऐरावत क्षेत्रोंमें छहों काल प्रवर्त्तै है। जब पहला सुखमासुखमा काल ही प्रवर्त्तै है, तब यहा देवकुरु उत्तरकुरु भोगभूमिकी रचना होय है, कल्पवृक्षोंसे मडित भूमि सुखमयी शोभै है, अर मनुष्यनिके शरीर तीन कोष ऊचे अर तीन पल्यकी आयु सब ही मनुष्य तथा पचेंद्रिय तिर्यचनिकी होय है, अर ऊगते सूर्य समान मनुष्यकी कांति होय है। सब लक्षणपूर्ण लोक शोभै है। स्त्री पुरुष युगल ही उपजै है, अर साथ ही मरै है। स्त्री पुरुषों में अत्यन्त प्रीति होय है, मरकर देवगति पावै हैं। भूमि कालके प्रभावसे रत्न सुवर्णमयी है। अर कल्पवृक्ष दश जातिके सब ही मनवाछित पूर्ण करै हैं। जहा चार चार अगुलके महासुगध महामिष्ट अत्यन्त कोमल तृणोंसे भूमि आच्छादित है सर्व ऋतुकेफल फूलोंसे वृक्ष शोभैहैं। अर जहा हाथी घोड़े गाय भैंस आदि अनेक जातिके पशु सुखसे रहै हैं। अर कल्पवृक्षकरि उत्पन्न महा मनोहर आहार मनुष्य करै हैं। जहा सिंहादिक भी हिंसक नाहीं, मासका आहार नाहीं, योग्य आहार करै हैं। अर जहा वापी सुवर्ण अर रत्ननिकै सिवाण तिनकरि सयुक्त कमलनकर शोभित दुग्ध दही घी मिष्टान्नकी भरी अत्यन्त शोभाको धरै है। अर पहाड़ अत्यन्त ऊंचे नाना प्रकार रत्नकी किरणोंसे मनोज्ञ, सर्व प्राणियों

को सुखके देनहारे, पांच प्रकारके वर्णको धरै विराजै है। अर जहां नदी जलचरादि जन्तुरहित महारमणीक दुग्ध (दूध) घी मिष्टान्न जलकी भरी अत्यन्त स्वाद संयुक्त प्रवाहरूप बहै है, जिनके तट रत्ननिकी ज्योति से शोभायमान है। जहां बेइंद्री तेइंद्री चौइंद्री असैनी पंचेन्द्री तथा जलचरादि असैनी पंचेन्द्री जीव नाहीं, जहां थलचर, नभचर गर्भज, तिर्यंच हैं, सो तिर्यंच भी युगल उपजै हैं। वहां शीत उष्ण वर्षा नाहीं, तीव्र पवन नाहीं। शीतल मंद सुगंध पवनचलै है। अर काहू प्रकारका भय नाहीं, सदा अद्भुत उछाहही प्रवर्त्तै है। अर ज्योतिरांग जाति के कल्पवृक्षोंकी ज्योति कर चांद सूर्य नजर नाहीं आवै हैं। अर दशही जातिके कल्पवृक्ष सबही इन्द्रियनिके सुखास्वादके देनहारे शोभैहैं, जहां खाना, पीना, सोना, बैठना, वस्त्र, आभूषण, सुगंधादिक सबही कल्पवृक्षोंसे उपजै हैं। यह कल्पवक्ष वनस्पतिकाय नाहीं, अर देवाधिष्ठित भी नाहीं, केवल पृथ्वीकायरूप सार वस्तु है। तहां मनुष्योंके युगल ऐसे रमैं हैं जैसे स्वर्गलोकमें देव। या भांति गणधर देवने भोगभूमिका वर्णन किया।

आगै राजा श्रेणिक भोगभूमिमें उपजनैका कारण पूछते भये तो गणधर देव कहैं हैं—जो सरलचित्त साधुनकूं आहारादिक दानके देनहारे ते भोगभूमिविषै मनुष्य होय हं। जैसै भले खेतमें बोया बीज बहुतगुणा होकर फलै है, अर इक्ष (साठे) में प्राप्त हुआ जल मिष्ट होय है, अर गायने पिया जो जल सो दूध होय परिणमै है। तैसै व्रतनिकर मंडित परिग्रहरहित मुनिको दिया जो दान सो महाफल को फलै है। अर जैसै नीरस क्षेत्रमें बोया बीज अल्पफलको प्राप्त होय, अर नींबमें गया जल कटुक होय हैं तैसे ही भोगतृष्णासे जे कुदान करै हैं ते भोगभूमिमें पशुजन्म पावै हैं। भावार्थ—दान चार प्रकारका है—एक आहारदान, दूजा औषधदान, तीजा शास्त्रदान, चौथा अभयदान। तिनमें मुनि आर्यिका उत्कृष्ट श्रावकोंको भक्तिकर देना पात्रदान है। अर गुणोकर आप समान साधर्मीजनोंको देना समदान है। अर दुखित जीवको दया भावकर देना करुणादान है। सर्व त्याग करके मुनिव्रत लेना सकलदान है। ये दानके भेदकहे। आगे कालचक्रकी रीति कहै हैं। जैसै एक मास विषै शुक्लपक्ष

अर कृष्णपक्ष होय होय हैं तसैं एक कल्पविष अवसर्पिणी उत्सर्पिणी दो काल प्रवर्ते हैं। अवसर्पिणी काल विषैं प्रथम ही सुखमासुखमा,प्रवर्त्या बहुरि दूजा सूखमा,तीजे कालमें पल्यका आठवां भाग बाकी रहा तब कुलकर उपजे। प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति भये। तिनके वचन सुनकर लोक आनन्दको प्राप्त भये। यह कुलकर अपने तीन जन्मको जाने हैं। अर उनकी चेष्टा सुन्दर है, अर वह कर्मभूमि में व्यवहारका उपदेशक हैं। अर तिनके पीछे सहस्र कोटि असख्यात वर्षगये दूजा कुलकर सन्मति भया। तिनके पीछे तीसरा कुलकर क्षेमकर, चौथा क्षेमधर, पाचवा सीमकर, छठा सीमंधर, सातवा विमल-वाहन, आठवा चक्षुष्मान्, नवां यशस्वी, दशवा अभिचन्द्र, ग्यारहवा चन्द्राभ, बारहवा मरुदेव, तेरहवा प्रसेनजित, चौदहवा नाभिराज, यह चौदह कुलकर प्रजाके पिता समान शुभ कर्मसे उत्पन्न भये। जब ज्योतिराग जातिके कल्पवृक्षों की ज्योति मंद भई, अर चादसूर्य नजर आए, तिनको देखकर लोग भयभीत भये। कुलकरोंको पूछते भये—हे नाथ! यह आकाशमें क्या दीखै हैं? तब कुलकरने कहा कि अब भोगभूमि समाप्त हुई, कर्मभूमिका आगमन है। ज्योतिराग जातिके कल्पवृक्षोंकी ज्योति मंद भई है, इसलिए चादसूर्य नजर आए हैं। देव चार प्रकारके है—कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर, अर ज्योतिषी। तिनमें चांदसूर्य ज्योतिषियोंके इन्द्र प्रतींद्र है। चन्द्रमा तो शीत किरण है,अर सूर्य उष्णकि-रण है। जब सूर्य अस्त होय है तब चन्द्रमा कांतिकों धरै है। अर आकाश विषै नक्षत्रोंके समूह प्रगट होय हैं, सूर्यकी कांतिसे नक्षत्रादि नहीं भासै है। इसी प्रकार पहिले कल्पवृक्षों की ज्योति से चन्द्रमा सूर्यादिक नाहीं भासते थे, अब कल्पवृक्षोंकी ज्योति मंद भई, तातैं भासै हैं। यह कालका स्वभाव जानकर तुम भय तजो। यह कुलकरका वचन सुनिकर तिनका भय निवृत्त भया।

अथानन्तर चौदहवें कुलकर श्रीनाभिराजा जगतपूज्य तिनके समयमें सब ही कल्पवृक्षोंका अभाव भया। अर युगल उत्पत्ति मिटी। ते अकेले ही उत्पन्न भये, तिनके मरुदेवी राणी मनको हरणहारी, उत्तम पतिव्रता, जैसे चद्रमाके रोहिणी,समुद्रके गगा,राजहसके हसिनी तैसे यह नाभिराजाकेहोती भई।

कैसी है राणी ? सदा राजाके मन विषै बसै है, जाकी हंसिनीकीसी चाल अर कोयल कैसे वचन हैं। जैसे चकवीकी चकवेसो प्रीति होय है तैसे राणीकी राजासौं प्रीति होती भई। राणी कूं क्या उपमा दी जाय—वह पदार्थ राणीसें न्यून दीखै है। सर्व लोकपूज्य मरुदेवी—जैसे धर्मके दया होय तैसे त्रैलोक्यपूज्य जो नाभिराजा—उसके परमप्रिय होती भई। मानो यह राणी आतापकी हरणहारी चन्द्रकलानि ही कर निरमयी (बनाई) है आत्मस्वरूपकी जाननहारी—सिद्धपदका है ध्यान जिसको त्रैलोक्यकी माता पुण्याधिकारणी मानूं जिनवाणी ही है। अर अमृतका स्वरूप तृष्णाकी हरणहारी मानूं रत्नवृष्टि ही है। सखियोंको आनन्दकी उपजावनहारी महा रूपवती कामकी स्त्री जो रति उससे भी अति सुन्दरी है। महा आनन्दरूप माता जिसका शरीर ही सब आभूषण है, जिसके नेत्रो के समान नीलकमल नाहीं, अर जाके केश भ्रमरहुतै अधिक श्याम, सो केश ही ललाटके शृंगार हैं, यद्यपि इनको आभूषणोंकी अभिलाष नाहीं, तथापि पतिकी आज्ञा प्रमाण कर कर्णफूलादि आभूषण पहिरे हैं। जिनके मुखका हास्य ही सुगन्धित चूर्ण है—उन समान कपूरकी रज कहा ? अर जिनकी वाणी वीणाके स्वरको जीते है, उनके शरीरके रंगके आगे स्वर्ण कुंकुमादिक का रंग कहा ? जिनके चरणारविन्दनि पर भ्रमर गुंजार करैं हैं। नाभिराजा करि सहित मरुदेवी राणी के यशका वर्णन सैकड़ों ग्रन्थों में भी न हो सकै तो थोड़े से श्लोकोंमें कैसे होय ?

जब मरुदेवीके गर्भविषै भगवानके छह महीना बाकी रहे तब इन्द्रकी आज्ञासें छप्पन कुमारिका हर्षित भईथकी माताकी सेवा करती भई। अर १ श्री २ ह्री ३ धृति ४ कीर्ति ५ बुद्धि ६ लक्ष्मी यह षट् (६) कुमारिका स्तुति करती भई—हे मात ! तुम आनन्दरूप हो, हमको आज्ञा करहु, तुम्हारी आयु दीर्घ होऊ। या भांति मनोहर शब्द कहती भई। अर नाना प्रकारकी सेवा करती भई। कईएक वीणा बजाय महा सुन्दर गान कर माताको रिझावती भई। अर कई एक आसन बिछावती भई, अर कईएक कोमल हाथोंसे माताके पांव पलोटती भई। कईएक देवी माताको तांबूल (पान) देती

भई। कई एक खडग हाथमें धारणकर माता की चौकी देतीभई । कईएक बाहरले द्वारमें सुवर्ण आसे लिये खडी होती भई। अर कईएक चँवर ढोरती भई। कईएक आभूषण पहरावती भई, कईएक सेज बिछावती भई, कईएक स्नान करावती भई, कइएक आगन बहारती भइ, कईएक फूलोंके हार गूथती भई, कईएक सुगन्ध लगावती भइ, कइएक खाने पीनेकी विधिमें सावधान होती भई, कईएक जिसको बुलावै उसको बुलावती भइ। या भाति सब काय देवी करती भइ, माताकू काहु प्रकारकी भी चिन्ता न रहती भइ।

एक दिन माता कोमल सेज पर शयन करती हुती, उसने रात्रिके पिछले पहर अत्यन्त कल्याण-कारी सोलह स्वप्न देखे। १ पहले स्वप्नमें ऐसा चन्द्र समान उज्ज्वल मद झरता गाजता हाथी देखा जिसपर भ्रमर गु जार करै है। २ दूजे स्वप्नमें शरदके मेघ समान उज्ज्वल धवल दहाडता हुआ बैल देखा जिसके बडे-बडे कन्धे हैं। ३ तीसरे स्वप्नमें चन्द्रमाकी किरण समान सफेद केशावली विराज-मान सिह देखा। ४ चौथे स्वप्नमें लक्ष्मीको हाथी सुवणके कलशोंसे स्नान करावता देखा, वह लक्ष्मी प्रफुल्लित कमलपर निश्चल तिष्ठै ह। ५ पाचवें स्वप्नमें दो पुष्पोकीमाला आकाशमें लटकती हुई देखीं जिनपर भ्रमर गु जारकर रहे हैं। ६ छठे स्वप्नमें उदयाचल पवत के शिखर पर तिमिर के हरण हारे मेघपटलरहित सूयकू देख्या। ७सातवें स्वप्नमें कुमुदिनी को प्रफुल्लित करण हारा रात्रिका आभूषण-जिसने किरणोंसे दशोदिशा उज्ज्वल करी है, ऐसा तारोका पति चन्द्रमा देख्या। ८ आठवें स्वप्नमें निर्मलजलमें कलोल करते अत्यन्त प्रेमके भरे हुवे महामनोहर मीन युगल (दो मच्छ) देखे। ९ नवमें स्वप्नमें जिनके गलेमें मोतियोके हार अर पुष्पोंकी माला शोभायमान है ऐसे पच प्रकारके रत्नों कर पूर्ण स्वर्णके कलश देखे। अर १०दशवें स्वप्नमें नानाप्रकारके पक्षियोंसे सयुक्त, कमलोंकर मण्डित, सुन्दर सिवाण (पैडी) कर शोभित, निर्मल जलकर भरया महा सरोवर देख्या। ११ ग्यारहवें स्वप्न में आकाश तुल्य निर्मल समुद्र देख्या जिसमे अनेक प्रकार के जलचर केलि करै हैं, अर उतग लहरें

उठे है। १२ बारहवें स्वप्नमें अत्यन्त ऊंचा नाना प्रकारके रत्नोकर जडित स्वर्णका सिंहासन देख्या। १३तेरहवें स्वप्नमें देवताओंके विमान आवते देखे जो सुमेरुके शिखर समान, अर रत्ननिकरि मंडित चामरादिकरि शोभित देखे। अर१४ चौदहवें स्वप्नमें धरणेन्द्रका भवन देख्या। कैसा है भवन?जाके अनेक खण (मंजिल) है, अर मोतियों की मालाकरमंडित, रत्नोकी ज्योतिकर उद्योत मानो कल्पवृक्ष कर शोभित है। १५ पद्रहवें स्वप्नमे पंचवर्णके महारत्ननिकी राशि अत्यन्त ऊंची देखी,जहां परस्पर रत्नोकी किरणोके उद्योतसे इंद्रधनुष चढ रहा है' १६ सोलहवें स्वप्नमे, निर्धूम अग्नि ज्वाला के समूहकरि प्रज्वलित देखी। अथानन्तर सुन्दर है दर्शन जिनका ऐसे सोलह स्वप्न देखकर मंगल शब्दनिके श्रवणकरि माता प्रबोध कूं प्राप्त भई। जिन मंगल शब्दनिका कथन सुनहु।

सखी जन कहैं है—हे देवी! तेरे मुखरूप चंद्रमाकी कांतितैं लज्जावान हुआ जो यह निशाकर (चंद्रमा), सो मानो कांतिकररहित हुआ है। अर उदयाचलपर्वतके मस्तकपर सूर्य उदयहोनेको सन्मुख भया है, मानो मंगलके अर्थ सिंदूरसे लिप्त स्वर्णका कलश ही है। अर तुम्हारे मुखकी ज्योतिसे, अर शरीरकी प्रभासे तिमिरका क्षय होयगा।अपना उद्योत वृथा जान दीपक मंद ज्योति भये हैं। अर पक्षियों के समूह मनोहर शब्द करै हैं, सो मानो तिहारे अर्थ मंगल ही पढे है। अर जो यह मंदिरमें बाग है, ताके वृक्षोके पत्र प्रभातकी शीतल मंद सुगंध पवनतैं हालै हैं, अर मंदिरकी वापिकामें सूर्यके बिम्बके बिलोकनसे चकवी हर्षित भई, मिष्ट शब्द करती संती चकवेको बुलावै है। अर ये हंस तिहारी चाल देखकरि करी है—अति अभिलाषा जिन्होने—सो हर्षित होय महामनोहर शब्दकर है। अर सारसनिके समूहनि करि सुन्दर शब्द होय रहे हैं। तातैं हे देवी! अब रात्रि पूर्ण भई, तुम निद्राको तजो। यह शब्द सुनकर माता सेजसे उठी। कैसी है सेज? बिखर रहे हैं कल्पवृक्षनिके फूल अर मोती जाविषैं, मानो तारानिकरि संयुक्त आकाश ही है।

मरुदेवी माता सुगन्ध महलसें बाहिर आई,अर सकल प्रभात की क्रियाकर जैसे सूर्यकी प्रभा सूर्य

के समीप जाय तैसै नाभिराजाके समीप गई। राजा देखकर सिंहासनतै उठे,राणी बराबर आय बैठी, हाथ जोडकर स्वप्ननिके समाचार कहे। तब राजाने कहा—हे कल्याणरूपिणी ! तेरे त्रैलोक्यका नाथ श्रीआदीश्वर स्वामी प्रकट होयगा। यह शब्द सुनकर कमलनयनी चन्द्रवदनी परमहर्षको प्राप्त भई। अर इन्द्रकी आज्ञासे कुबेर पन्द्रह महिनोतक रत्नोकी वर्षा करते भए। जिनके गर्भमें आए छै मास पहिलेसे ही रत्नोंकी वरषा भई। इसलिए इन्द्रादिक देव इनका हिरण्यगर्भ ऐसा नाम कहि स्तुतिकरते भए। अर तीनज्ञानकर सयुक्तभगवान माताके गर्भमें आय विराजे। माताकू काहू प्रकारकी पीड़ा न भई।

जैसै निर्मल स्फटिककमहलसे बाहिर निकसिए तैसेनवमें महीने ऋषभदेव स्वामीगर्भसे बाहिरआए, तब नाभिराजाने पुत्रके जन्मका महान उत्सव किया। त्रैलोक्यके प्राणी प्रति हर्षितभए। इन्द्रके आसन कम्पायमान भए। अर भवनवासी देवनिके यहा बिना बजाये शख बाजे। अर व्यतरनि के स्वयमेवही ढोल बाजे,अर ज्योतिषीनिके ववोंके अकस्मात् सिंहनाद बाजे, अर कल्पवासीनके बिना बजाये घटा बाजे, या भातिशुभ चेष्टानि करि तीर्थंकर देवका जन्मजान इन्द्रादिक देवता नाभिराजा के घर आये। कैसे हैं इन्द्र ? ऐरावत हाथीपर चढे ह,अर नानाप्रकारके आभूषण पहरे है। अनेक प्रकारके देव नृत्य करते भए। देवनिके शब्दकरि दशोदिशा गु जार करती भई। अयोध्यापुरीकी तीन प्रदक्षिणा देयकरि राजाके आगनमें आए। कैसी ह अयोध्या ? धनपतिनेरची ह,पवत समान ऊचेकोटसे मडितहै,जिसकी गभीर खाई है, अर जहा नानाप्रकारके रत्नोंके उद्योतसे घर ज्योतिरूप होय रहेहैं। तब इन्द्रनेइन्द्राणी कू भगवानकेलावनेको माताके पास भेजी। इन्द्राणीजाय नमस्कार कर मायामयी बालकक माताके निकट राखि, भगवानको लाय इन्द्रके हाथमें दिया। कसे है भगवान? त्रलोक्यके रूपको जीते ऐसा है रूप जिनका। सो इन्द्र हजारनेत्रनिकरि भगवानकारूप देखता तृप्त न भया। बहुरि भगवानकू सौधर्म इन्द्र गोद में लेय हस्ती पर चढे ईसान इन्द्रनेछत्र धरे,अर सनत्कुमार—महेंद्र चमर ढोरते भये। अन्य सकल इन्द्र अर देव जय जयकार शब्द उच्चारते भए। फिर सुमेरु पवतके शिखरपर पाडुक शिलापर

सिंहासन ऊपर धराये, अर अनेक बाजोका शब्द होता भया,जसा समुद्र गरजै । अर यक्ष किन्नर गधर्व तु बरु नारद अपनी स्त्रियो सहित गान करते भये। कसा ह वह गान? मन अर श्रोत (कान)का हरण- हारा है । जहा बीन आदि अनेक वादित्र बाजते भए,अप्सरा हाव भावकर नृत्य करती भई, अर इन्द्र स्नानके अथ क्षीरसागरके जलतै स्वणकलश भर अभिषेक करनेको उद्यमीभए । क सेह कलश? जिनका मुख एक योजनका ह, अर चार योजनका उदर ह, आठ योजन ओडे, अर कमल तथा पल्लवनि करि ढके ह मुख जिनके । असे एक हजार आठ कलशोसे इन्द्रने अभिषेक कराया । विक्रिया ऋद्धिकी सम थतासे इन्द्रने अपने अनेक रूप किए । अर इन्द्रोके लोकपाल सोम वरुण यम कुवेर सवहीअभिषेक करावते भए । इन्द्राणी आदि देवी अपने हाथोसे भगवानके शरीर पर सुगधका लेपन करती भई । कैसी है इन्द्राणी ? पल्लव (पत्र) समान ह कर जाके । महागिरि समान जो भगवान तिनको मेघ समान कलशनित अभिषेक कराया, गहना पहरावनेका उद्यम किया । चाद सूय समान दोय कुडल कानोमें पहराये, अर पद्मरागमणिके आभूषण मस्तक विष पहराए, जिनकी काति दशो दिशाविषै प्रकट होती भई, अर अर्द्धचन्द्राकार ललाटविषै चदनका तिलक किया, अर दोनो भुजानविषै रत्नों के बाजूबद पहराए, अर श्रीवत्सलक्षणकरयुक्त जो हृदय उसपर नक्षत्रमाला समान मोतियो का सत्ताईस लडीका हार पहराया, अर अनेक लक्षणके धारक भगवान को महामणि मई कडे पहराए, अर रत्नमयी कटि- सूत्रसे नितब शोभायमान भया, जैसा पहाडका तट साझकी बिजली कर शोभ, अर सर्वअगुरियोविषै रत्नजडित मुद्रिका पहराई ।

इसभाति भक्तिकरि देवियोने सव आभूषण पहराये, सो त्रलोक्यके आभूषण जो श्री भगवान तिनके शरीरकी ज्योतितै आभूषण अत्यन्त ज्योतिको धारते भए । अर आभूषणोंकी आपके शरीरको कहा शोभा होय ? अर कल्पवृक्षके फूलोसे युक्त जो उत्तरासन सो भी दिया । जैसै तारानितै आकाश शोभै है तैस पुष्पन कर यह उत्तरासन शोभै ह । बहुरि पारिजातसन्तानकादिक जे कल्पवृक्ष तिनके

पुष्पनिकरि सेहरा रच्या, सिरपर पधराया जापर भ्रमर गुंजार करै हैं। या भांति त्रैलोक्यभूषणको आभूषण पहराए। इन्द्रादिक देव स्तुति करते भए, हे देव! कालके प्रभावकरि नष्ट हो गया है धर्म जाविषै ऐसा यह जगत् महा अज्ञान अन्धकारकरि भरया है। ताविषै भ्रमण करते भव्य जीव, तेई भए कमल, तिनको प्रफुल्लित करने को, अर मोहतिमिरके हरणको तुम सूर्य उगे हो। हे जिनचन्द्र! तुम्हारे वचनरूप किरणोंसे भव्य जीवरूपी कुमुदनीकी पंक्ति प्रफुल्लित होगी। भव्योंको तत्त्व दिखावनेके अर्थि इस जगत्रूप घरमें तुम केवलज्ञानमयी दीपक प्रकट भए हो। अर पापरूप शत्रुओं के नाशनेके अर्थि मानो तुम तीक्ष्ण बाण ही हो। अर तुम ध्यानाग्निकरि भवअटवीको भस्म करने वाले हो। अर दुष्ट इन्द्रियरूप जो सर्प तिनके वशिकरणेकें अर्थि तुम गरुडरूप ही हो। अर सन्देहरूप जो मेघ तिनके उडावनेको महा प्रबलपवन ही हो। हे नाथ! भव्यजीवरूपी पपैए तिहारे धर्मामृतरूप वचनके तिसाए तुमहीको महामेघ जानकरि सन्मुख भए देखै हैं। तुम्हारी अत्यन्त निर्मल कीर्ति तीन लोकमें गाई जाती है, तुम्हारे ताईं नमस्कार होहु। अर तुम कल्पवृक्ष हो, गुणरूपपुष्पनिकरि मण्डित मनवांछित फलके देनेहारे हो, कर्मरूप काष्ठके काटने को तीक्ष्ण धारके धरण हारे महा कुठाररूप हो, तातै हे भगवन्! तुम्हारे अर्थि हमारा बारम्बार नमस्कार होहु। अर मोहरूप पर्वतके भंजिबे को महा वज्ररूप ही हो, अर दुःखरूप अग्निके बुझावनेको तुम जलरूप ही हो, या अर्थि तुमको बारम्बार नमस्कार करू हूं। हे निर्मलस्वरूप! तुम कर्मरूपरजके समूहसे रहित केवल आकाशरूप ही हो। या भांति इन्द्रादिक देव भगवान्की स्तुति करि बारम्बार नमस्कार करि, ऐरावत गजपर चढाय, अयोध्यामैं लावनेको सन्मुख भए। अयोध्या आए। इन्द्र माताकी गोद विषै भगवानको पधराय कर परम आनन्दित हो ताडव नृत्य करते भए। या भांति जन्मोत्सव कर देव अपने अपने स्थान को गए। माता पिता भगवान को देखकर बहुत हर्षित भए। कैसे हैं श्रीभगवान्? अद्भुत आभूषणनितैं विभूषित है। बहुरि परम सुगन्धके लेपतै चरचित हैं, अर सुन्दर चारित्र हैं जिनके। अपने शरीर की कांतिसे

दसोंदिशा प्रकाशित हो रही हैं, महा कोमल शरीर है । माता भगवान को देख करि महा हर्षको प्राप्त भई । अर कहनेमें न आवै सुख जिसका,ऐसे परमानद सागरमैं मग्न भई । वह माता भगवानको गोदमें लिए ऐसी शोभती भई जस ऊगते सूयतै पूर्वदिशा शोभै । अर त्रैलोक्य के ईश्वर को देख नाभिराजा आपको कृतार्थ मानते भए, पुत्रके गात्रको स्पर्शकर नेत्र हर्षित भए,मन आनंदित भया । समस्तजगत-विषै मुख्य ऐसे जे जिनराज तिनका ऋषभ नाम धर माता पिता सेवा करते भए। हाथके अंगुष्ठमेंइन्द्रने अमृत रस मेल्या,उसको पान कर शरीर वृद्धिको प्राप्त भया । बहुरि प्रभुकी वय (उमर)प्रमाण इन्द्रने देवकुमार राखे, तिन सहित नि पाप क्रीडा (खेल) करते भए । कैसी है वह क्रीडा ? माता पिता को अतिसुख देनहारी ह ।

अथानन्तर भगवानके आसन शयन सवारी वस्त्र आभूषण अशन पान सुगंधादि-विलेपन गीत नृत्य वादित्रादि सब सामग्री देवोपनीत होती भई । थोडेही कालमै अनेक गुणनिकी वृद्धि होती भई । उनका रूप अत्यन्त सुन्दर जो वचनमें न आवै, मन अर नेत्रनिका तृप्त करनहारा,मेरुकी भीति समान महा उन्नत, महादृढ़ वृक्षस्थल शोभता भया । अर दिग्गजनिके थंभ समान बाहु होती भई । कैसीहै वह बाहु? जगतकेअर्थ पूण करनेको कल्पवृक्ष ही ह । बहुरि दोऊ जघा त्रैलोक्यरूपघरके थामवेको थमही हैं, अर मुख महासुन्दर मनोहर जिसने अपनी कातित चंद्रमाको जीता है, अर दीप्तिकरि जीता है सूर्य जिसने अर दोऊ हाथ कोमलहूते अति कोमल, अर लाल है हथेली जिनकी, अर केश महासुन्दर सघन दीर्घ वक्र पतले चीकने श्याम हैं । मानो सुमेरुके शिखरपर नीलाचल ही विराजै हैं । अर रूप महा अद्भुत अनुपम सबलोकके लोचनको प्रिय, जिसपर अनेक कामदेव वारि नाखिए । ऐसे सर्व उपमा को उलंघै, सबका मन अर नेत्र हरै । या भांति भगवान कुमार अवस्थामें भी जगतको सुखदायक होते भए । उस समय कल्पवृक्ष सर्वथा नष्ट भए, अर बिना वाहे धान आपतै आप ऊगे । तिनतै पृथ्वी शोभती भई । अर लोक निपट भोले, षट्कर्मतै अनजान, उन्होंने प्रथम इक्षुरसका आहार किया । वह आहार कांति

अर वीर्याविकके करनेको समय है। कईएक दिन पीछे लोगोको क्षुधा बढी जो इक्षु रसतें तृप्ति न भई। तब सब लोक नाभिराजाके निकट आए, अर नमस्कारकर विनती करते भए कि–हे नाथ ! कल्पवृक्ष समस्त क्षय हो गए, अर हम क्षुधा तृषाकर पीडित है, तुम्हारे शरण आए है, तुम रक्षा करो। यह कितनेक फलयुक्त वृक्ष पृथ्वीपर प्रकट भए ह इनकी विधि हम जानते नहीं है। इनमें कौन भक्ष्य है कौन अभक्ष्य है। अर गाय भैंसके थनोसे कुछ झरै ह,पर वह क्या ह? अर यह व्याघ्र सिंहाविक पहले सरल थे, अब वक्रतारूप दीखै है। अर ये महामनोहर स्थलपर अर जलमें पुष्प दीखै है सो कहा हैं ? हे प्रभु ! तुम्हारे प्रसाद कर आजीविकाका उपाय जान तो हम सुखसो जीव। यह वचन प्रजाके सुन करि नाभिराजाको दया उपजी। नाभिराजा महाधीर तिनसो कहते भए कि या ससारविषै ऋषभ-देव समान और कोऊ भी नाहीं। जिनकी उत्पत्तिमें रत्नोंकी वृष्टि, अर इन्द्राविक देवों का आगमन भया, लोकनिको हर्ष उपज्या, वह भगवान महा अतिशय सयुक्त ह। तिनके निकट जायकर हम तुम आजीवकाका उपाय पूछै, भगवानका ज्ञान मोहतिमिरसे अतीतिष्ठया ह। तिन प्रजासहित नाभिराजा भगवानके समीप गए अर समस्त प्रजा नमस्कार कर भगवानकी स्तुति करती भई–हे देव ! तुम्हारा शरीर सब लोकनिको उलघकर तेजमय भासै है। सब लक्षणसपूर्ण महा शोभायमान है, अर तुम्हारे अत्यन्त निर्मलगुण सब जगतमै व्याप रहे हं, वे गुण चन्द्रमाकी किरण समान उज्ज्वल महा आनदके करणहारे हैं। हे प्रभु ! हम या कार्यके अर्थ तुम्हारे पिताके पास आये थे सो ये तुम्हारे निकट लाए हैं। तुम महापुरुष महाविद्वान् महा अतिशयकरमंडित हो, जो ऐसे बडे पुरुष भी तुमको सेवैं हैं, इस-लिए तुम दयालु हो, हमारी रक्षा करो। क्षुधा–तृषा हरनेका उपाय कहो,अर बाकरि सिंहाविक क्रूर जीवनिका भी भय मिटै सो उपाय बताओ। तब भगवान कृपानिधि,कोमल है हृदय जिनका, प्रजाको कर्मभूमिकी रीति प्रकट करनेकी आज्ञा करते भए। प्रथम नगर ग्राम गृहाविक की रचना भई। अर जो मनुष्य शूरवीर जाने, तिनको क्षत्री वर्ण ठहराए, अर उनको यह आज्ञा भई कि–तुम दीन अनाथनिको

रक्षा करो। कईएकनको वाणिज्यादिक कर्म बताकर वश्य ठहराए। अर जो सेवादिक अनेक कर्मके करनहारें थे,उनको शूद्र ठहराए। या भांति भगवानने किया जो यह कर्मभूमिरूप युग उसको प्रजा कृत-युग (सत्ययुग) कहते भए अर परम हर्षको प्राप्त भए। श्रीऋषभदेवके सुनंदा अर नंदा यह दो राणी भई। बडी राणीके भरतादिक सौ पुत्र अर एक ब्राह्मी पुत्री भई। अर दूसरी राणीके बाहुबल एक पुत्र अर सुन्दरी एक पुत्री भई। ऐसे भगवान ने त्रेसठ लाखपूर्वकाल तक राज किया,अर पहले बीसलाख पूर्व कुमार रहे। या भांति तिरासीलाख पूर्व गृहमें रहे।

एक दिन नीलांजना अप्सरा भगवानके निकट नृत्य करती करती विलाय (मर) गई, ताको देखकर भगवानकी बुद्धि वैराग्यमें तत्पर भई। वह विचारने लगे कि ये संसारके प्राणी वृथाही इंद्रियों को रिझाकर उन्मत्त चारित्रनिकी विडंबना करै हैं, अपने शरीरको खेदका कारण जो जगतकी चेष्टा, तातैं जगतके जीव सुख मानै हैं। इस जगतके कईएक तो पराधीन चाकर होय रहे हैं। कईएक आपको स्वामी मान तिनपर आज्ञा करै हैं, जिनके वचन गर्वतैं भरे हैं। धिक्कार है या संसार को, जामैं जीव दु:ख ही भोगै हैं, अर दु:खहीको सुख मान रहे हैं। तातैं मैं जगतके विषय-सुखोंको तजकर तपसंयमादि शुभ चेष्टा कर मोक्षसुखकी प्राप्तिकेअर्थि यत्न करूं। यह विषयसुख क्षणभंगुर हैं,अर कर्मके उदय से उपजे हैं, इसलिए कृत्रिम (बनावटी) हैं। या भांति श्रीऋषभदेवका मन वैराग्यचिंतवन में प्रवरत्या। तब ही लौकांतिक देव आय स्तुति करते भए कि—हे नाथ! तुमने भली विचारी। त्रैलोक्य में कल्याण का कारण यह ही है। भरतक्षेत्रमें मोक्षका मार्ग विच्छेद भया था,सो आपके प्रसादतैं अब प्रवरतैगा। ये जीव तुम्हारे दिखाए मार्गसे लोकशिखर अर्थात् निर्वाणको प्राप्त होंगे। या भांति लौकांतिक देव स्तुतिकर अपने धाम गए। अर इन्द्रादिक देव आयकर तपकल्याणका समय साधते भए। रत्न जडित सुदर्शन नामा पालकीमें भगवानको चढाया। कैसी है वह पालकी? कल्पवृक्षनिके फूलों की मालातैं महा सुगंधित है, अर मोतिनके हारोसे शोभायमान है। भगवान ता पालकीपर चढकर घरतैं वनको

चले। नानाप्रकारके वादित्रोंके शब्द अर देवों क नृत्यसे दशोदिशा शब्दरूप भई। अर महा विभूति संयुक्त तिलकनामा उद्यानमें गए। माता पितादिक सब कुटुम्बतैं क्षमाभाव कराकर अर सिद्धों को नमस्कारकर मुनिपद अंगीकार किया। समस्त वस्त्र आभूषण तजे। अर केशोंका लोंच किया। वे केश इन्द्रने रत्नोंके पिटारेमें रखकर क्षीरसागरमें डारे। भगवान जब मुनिराज भए,तबि चार हजार राजा मुनिपदको न जानते हुवे केवल स्वामीकी भक्तिके कारण तिनके साथ नग्नरूप भए। भगवानने छः महिने पर्यंत निश्चल कायोत्सर्ग धरया। अर्थात सुमेरु पर्वत समान निश्चल होय तिष्ठे, अर इन्द्रियनिका निरोध किया।

अथानंतर कच्छ महाकच्छादिक राजा जो नग्नरूप धारण करि दीक्षित भए हुते ते सर्व ही क्षुधा तृषादि परीषहनिकरि चलायमान भए। कईएक तो परीषहरूप पवनके मारे भूमिपर गिर पडे। कई एक जो महा बलवान हुते, वे भूमिपर तो न पडे परन्तु बैठ गए। कई एक कायोत्सर्गको तज क्षुधा तृषातैं पीडित होय फलादिक आहार करते भए। अर कई एक गरमीतै तप्तायमान होयकर शीतल-जलमें प्रवेश करते भए। तिनकी यह चेष्टा देखकर आकाश में देववाणी भई कि 'मुनिरूप धारकर तुम ऐसा काम मत करो। यह रूप धार तुमको ऐसा कार्य करना नरकादि दु:खनिका कारण है। तबि वे नग्नमुद्रा तजकर बल्कल पत्र धारते भए, कई एक चरमादि धारते (पहनते) भए। कई एक दर्भ (कुशादिक) धारते भए अर फलादिकतं क्षुधाको, शीतल जलतैं तृषाको निवारते भए। या प्रकार ये लोग चरित्र--भ्रष्ट होयकर, अर स्वेच्छाचारी बनकर भगवानके मतसे पराङ्मुख होय शरीर का पोषण करते भए। किसीने पूछा कि तुम यह कार्य भगवानकी आज्ञातैं करो हो? तब उन्होंने कहया कि भगवान तो मौनरूप हैं, कुछ कहते नाहीं। हम क्षुधा तृषा शीत उष्णसे पीडित होइकर यह कार्य करैं हैं। बहुरि कईएक परस्पर (आपसमें) कहते भए, कि आवो गृहमैं आय कर पुत्र दारादिक का अवलोकन करैं। तबि उनमेंतै किसीने कहा--जो हम घरमैं जावैंगे तो भरत घरमें तैं निकास देइगे।

अर तीव्रदंड देंगे, इसलिए घर नहीं जाना। तदि बन ही में रहे। इन सबमें महामानी मारीच भरतका पुत्र, भगवानका पोता भगवे वस्त्र पहनकर परिव्राजिक (सन्यासीका) मार्ग प्रकट करता भया।

अथानन्तर कच्छ महाकच्छके पुत्र नमि विनमि आयकर भगवानके चरणो में पडे, अर कहने लगे कि हे प्रभु! तुमने सबको राज दिया, हमको भी दीजिये। या भांति याचना करते भए। तब धरणींद्र का आसन कम्पायमान भया। धरणींद्रने आयकर इनको विजयार्द्ध का राज दिया। कैसा है वह विजयार्द्ध पर्वत? भोगभूमिके समान है। पृथ्वी तलसे पच्चीस योजना ऊंचा है, अर सवा छै योजनका कन्द है, अर भूमिपर पचास योजन चौडा है, अर भूमितै दश योजन ऊंचे उठिए तहां दश दश योजनि की दोय श्रेणी हैं -एक दक्षिणश्रेणी, एक उत्तरश्रेणी। इन दोनो श्रेणियोमें विद्याधर बसैं हैं। दक्षिण श्रेणीकी नगरी पचास, अर उत्तर श्रेणीकी साठ। एक-एक नगरीको कोटि कोटि ग्राम लागे हैं। अर दश योजनमे बहुरि ऊपर दश योजन जाइये तहां गंधर्वकिन्नर देवोंके निवास हैं। अर पांच योजन ऊपर जाइये तहां नवशिखर हैं। उनमें प्रथम सिद्धकूट उसमें भगवान के अकृत्रिम चैत्यालय है, अर देवोंके स्थान हैं। सिद्धकूटपर चारणमुनि आयकर ध्यान धरै है। विद्याधरोंकी दक्षिणश्रेणी की जो पचास नगरी है उनमें रथनूपुर मुख्य है। अर उत्तरश्रेणी की जो साठ नगरी हैं उनमें अलकावती नगरी मुख्य है। कैसा है वह विद्याधरनिका लोक? स्वर्गलोकसमान है सुख जहां, सदा उत्साह ही प्रवर्त्तै है। नगरीके बडे बडे दरवाजे, अर कपाटयुगल, अर सुवर्णके कोट, गम्भीर खाई, अर वन उपवन वापी कूप सरोवरादिसे महाशोभायमान है। जहां सब ऋतुके धान अर सर्व ऋतुके फलफूल सदा पाइए है। जहां सब औषधि सदा पाइये हैं, जहां सब कामका साधन है, सरोवर कमलोंसे भरे जिनमें हंस क्रीडा करै हैं, अर जहां दधिदुग्धघृतमिष्टान्नोंके नीझरने बहे हैं। कैसी है वापी? जिनके मणिसुवर्ण के सिवान (पैडी) हैं और कमलके मकरंदोंसे शोभायमान है। जहां कामधेनुसमान गाय हैं, अर पर्वत समान अनाजके ढेर है, अर मार्ग धूलकंटकादिरहित हैं, मोटे वृक्षोंकी छाया है। अर महामनोहर जलके

निवाण हैं। चौमासेमें मेघ मनवांछित बरसै है, अर मेघोकी आनन्दकारी ध्वनि होय है। शीतकालमें शीतकी विशेष बाधा नाहीं। अर ग्रीष्मऋतुमें विशेष आताप नाहीं। जहा छहोंऋतुके विलास हैं,जहा स्त्री सर्वआभूषणमंडित कोमलअगवाली हैं अर सबकलानिमैं प्रवीण षटकुमारिका समान प्रभावाली हैं। कैसी हैं वे विद्याधरी? कई एक तो कमलके गर्भ समान प्रभाको धरै ह, कईएक श्यामसुन्दर नील कमलकी प्रभाको धारै है, कईएक सिहझनाके फूलसमान रगकू धरै हैं, कई एक विद्य ुत समान ज्योतिको धरै हैं। ये विद्याधरी, महासुगंधित शरीरवाली है मानों नवनवनकी पवनहीसे बनाई हैं। सुन्दर फूलों के गहने पहरे हैं सो मानो बसन्तकी पुत्री ही हैं। अर चन्द्रमा समान कांति है मानो अपनी ज्योतिरूप सरोवरमें तिरै ही हैं। अर श्याम श्वेत सुरग तीन वर्णके नेत्रनि की शोभा को धरणहारी, मृगसमान हैं नेत्र जिनके, हसनी समान ह चाल जिनकी, वे विद्याधरी देवागना समान शोभै हैं। अर पुरुष विद्याधर महासुन्दर शूरवीर सिंहसमान पराक्रमी हैं। महाबाहु, महापराक्रमी, आकाशगमनविषैं समर्थ, भले लक्षण—भली क्रियाके धरणहारे, न्यायमार्गी, देवोंके समान हैं प्रभा जिनकी, ऐसी अपनी स्त्रियो सहित विमानमें बैठे अढाई द्वीपमैं जहा इच्छा होय तहा ही गमन करै हैं। या भांति दोनों श्रेणियोंमें वे विद्याधर देवतुल्य इष्टभोगनिको भोगते महाविद्याओ को धरै है। कामदेवसमान है रूप जिनका, अर चन्द्रमाके समान है वदन जिनका, धर्मके प्रसाद से प्राणी सुख सम्पति पावै हैं। तातैं एक धर्म ही विषै यत्न करो, अर ज्ञान रूप सूर्य अज्ञानरूप तिमिरको हरो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषै विद्याधर लोकका कथन जाविषै है ऐसा तीसरा अधिकार सपूर्ण भया॥ ३॥

अथानन्तर वे भगवान ऋषभदेव महाध्यानी, सुवर्ण समान प्रभाके धरणहारे प्रभु, जगतके हित करने निमित्त छैमास पीछैं आहार लेनेको प्रवृत्ते। लोक मुनिके आहारकी विधि जानैं नाहीं। अनेक

नगर ग्रामविष विहार किया,मानो अद्भुत सूर्य ही विहार करै है। जिन्होने अपने देहकी कातिसे पृथ्वी-मडल पर प्रकाश कर दिया है, जिनके कांधे सुमेरुके शिखर समान देदीप्यमान हैं, अर परम समाधानरूप अधोदृष्टि देखते, जीव दया पालते, विहार करै है। पुर ग्रामादिमें लोक अज्ञानी नाना प्रकार के वस्त्र रत्न हाथी घोडे रथ कन्यादिक भेट करते सो प्रभुके कुछ भी प्रयोजन नाहीं। या कारण प्रभु फिर वनको चले जाय है। या भांति छ महीने तक विधिपूर्वक आहारकी प्राप्ति न भई अर्थात् दीक्षा समयसे एक वर्ष बिना आहार बीता। पीछे विहार करते हुए हस्तिनापुर आये। तबि सब ही लोक पुरुषोत्तम भगवानको देखकर आश्चर्यको प्राप्तभये। राजा सोमप्रभ अर तिनके लघुभ्राता श्रेयास ये दोनो ही भाई उठकर सन्मुख चाले। श्रेयासको भगवानके देखनतै ही पूर्वभवका स्मरण भया, अर मुनिके आहारकी विधि जानी। वह नृप भगवानको प्रदक्षिणा देते ऐसे शोभै है मानो सुमेरुकी प्रदक्षिणा सूर्य ही दे रहा है। अर बारम्बार नमस्कार कर रत्नपात्रतै अर्घ देय चरणारविन्द धोय,अर अपने शिर के केशनितै पोंछे। तबि आनन्दके अश्रुपात आये,अर गदगद वाणी भई। श्रेयासने—जिसका चित्तभगवान के गुणनिमै अनुरागी भया है, महा पवित्र रत्नन के कलशोमें रखे हुवे महा शीतल मिष्ट इक्षुरसका आहार दिया। परम श्रद्धा अर नवधा भक्तिसे दान दिया। वर्षोपवास पारणा भया ताके अतिशयतै देव हर्षित होय पाच आश्चर्य करते भए। प्रथम ही रत्ननिकी वर्षा भई। बहुरि कल्पवृक्षों के पच प्रकारके पुष्प बरसे। शीतल मद सुगन्ध पवन चाली। अर अनेक प्रकार दुन्दुभी बाजे बाजे। अर यह देव-वाणी भई कि धन्य यह पात्र, अर धन्य यह दान, अर दानका देनहारा श्रेयास! ऐसे शब्द देवताओं के आकाशमें भये। श्रेयासकी कीर्ति देखकर दानकी रीति प्रकट भई। देवतानिकर श्रेयास प्रशसा योग्य भए, अर भरतने अयोध्यातै आयकर श्रेयासकी बहुत स्तुति करी, अति प्रीति जनाई। भगवान आहार लेयकर वनमें गये।

अथानन्तर भगवानने एक हजार वर्षपर्यंत महातप किया। अर शुक्लध्यानतै मोहका नाशकर

केवलज्ञान उपजाया। कैसा है वह केवलज्ञान ? लोकालोकका अवलोकन है जाविषै। अब भगवान् केवलज्ञानको प्राप्त भए तबि अष्ट प्रातिहार्य प्रकटे, प्रथम तो आपके शरीरकी कांतिका ऐसा मंडल हुआ जातैं चंद्र सूर्यादिका प्रकाश मंद नजर आवै, रात्रि दिवसका भेद नजर न आवे। अर अशोकवृक्ष रत्नमई पुष्पोंसे शोभित, रक्त है पल्लव जाके। अर आकाशतैं देवोंने फूलों की वर्षा करी, जिनकी सुगंध से भ्रमर गुंजार कर है। महा दुंदुभी बाजोंकी ध्वनि होती भई, जो समुद्रके शब्दनितैं भी अधिक देवोंने बाजे बजाए। कसे हैं देव ? जिनका शरीर मायामई करि दीखता नाहिं। अर चन्द्रमाकी किरणतैं भी अधिक उज्ज्वल चमर इन्द्रादिक ढारते भए, अरु सुमेरुके शिखरतुल्य पृथ्वीका मुकुट सिंहासन आपके विराजनेको प्रकट भया। कसा ह सिंहासन ? अपनी ज्योतिकर जीती है सूर्यादिककी ज्योति जानै, अर तीन लोकको प्रभुताके चिह्न मोतियोंकी झालरसे शोभायमान तीन छत्र अति शोभै है, मानो भगवान के निर्मल यश ही है। अर समोसरणमैं भगवान सिंहासन पर विराजे सो समोसरणकी शोभा कहने केवली ही समर्थ है, और नाहीं। चतुरनिकायके देव सबही वंदना करनेको आए। भगवानके मुख्य गणधर वृषभसेन भये। आपके द्वितीय पुत्र अर अन्य भी बहुत जे मुनि भए थे वे महा वैराग्यके करणहारे मुनि आदि बारह सभाके प्राणी अपने अपने स्थानकविषै बैठे। तदनन्तर भगवानकी दिव्यध्वनि होती भई, जो अपने नादकर दुंदुभी बाजोंकी ध्वनिको जीत है। भगवान जीवोंके कल्याणनिमित्त तत्त्वार्थका कथन करते भये कि—तीनलोकमें जीवोंको धर्म ही परम शरण है। याहीतैं परम सुख होय है। सुखके अर्थि सभी चेष्टा करै हैं, अर सुख धर्मके निमित्तसे ही होय है। ऐसा जानकर धर्मका यत्न करहु। जैसे मेघ बिना वर्षा नाहीं, बीज बिना धान्य नाहीं, तैसैं जीवनिके धर्म बिना सुख नाहीं। अर जैसे कोई पंगु (लंगड़ा) पुरुष चलने की इच्छा करै, अर गूंगा बोलनेकी इच्छा करै, अर अंधा देखनेकी इच्छा करै, तैसैं मूढप्राणी धर्म बिना सुखकी इच्छा करै ह। जसै परमाणुतैं और कोई अल्प (सूक्ष्म) नाहीं, अर आकाशतैं कोई महान् (बड़ा) नाहीं, तैसैं धर्म समान जीवोंका अन्य कोई मित्र नाहीं, अर दया समान कोई धर्म नाहीं।

मनुष्यके भोग, अर स्वर्ग के भोग, अर सिद्धनके परमसुख धर्महीत होय हैं। तातैं धर्म बिना और उद्यमकर कहा? जे पंडित जीवदयाकर निर्मल धर्मको सेवै है, तिनहीका ऊर्ध्वगमन है,दूसरे अधोगति जाय हैं। यद्यपि द्रव्यलिंगी मुनि तपकी शक्तितै स्वर्गलोकमें जाय हैं, तथापि बडे देवोंके किंकर होयकर तिनकी सेवा करैं हैं। देवलोकमें नीच देव होना देव—दुर्गति है। सो देवदुर्गतिके दु खको भोगकर तिर्यंच गतिके दुखको भोगै है। अर जे सम्यग्दृष्टि जिनशासनके अभ्यासी, तपसंयमके धरणहारे, देवलोकमें जाय हैं, ते इन्द्रादिक बडे देव होयकर बहुत काल सुख भोग, देवलोकतै चय, मनुष्य होय मोक्ष पावै है। सो धर्म दोय प्रकारका है—एक यतिधर्म दूसरा श्रावक धर्म। तीजा धर्म जो मानै है वे मोहअग्निसे दग्ध है। पाच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत यह श्रावकका धर्म है। श्रावक मरण समय सब आरम्भ तज शरीरतै भी निर्ममत्व होय, समाधिमरण करि उत्तमगतिको जाय है। अर यतीनको धर्म पच महाव्रत, पच समिति,तीन गुप्ति यह तेरह प्रकारका चारित्र है। दशो दिशा ही यतिके वस्त्र है। जो पुरुष यतिका धर्मधार है, वे शुद्धोपयोगके प्रसाद करि निर्वाण पावै हैं। अर जिनके शुभोपयोगकी मुख्यता है ते स्वर्ग पावै है, परम्पराय मोक्ष जाय है। अर जे भावोंसे मुनियोंकी स्तुति करै है ते हू धर्मको प्राप्त होय है? कैसे है मुनि? परम ब्रह्मचर्यकेधारण हारे है। यह प्राणी धर्मके प्रभावतै सब पापोंसे छूटै है अर ज्ञानकू पावै है। इत्यादिक धर्मका कथन देवाधिदेवने किया सो सुनकर सब पापनितै निवृत्त भए। अर देव मनुष्य सर्व ही परम हर्षकू प्राप्त भए। कईएक तो सम्यक्त्वको धारण करते भए, कईएक सम्यक्त्व सहित श्रावकके व्रतकू धारते भए, कईएक मुनिव्रत धारते भए। बहुरि सुर असुर मनुष्य धर्मश्रवण कर अपने अपने धाम गए। भगवानने जिन जिन देशोंमें गमन किया उन उन देशोंमें धर्मका उद्योत भया। आप जहा जहा विराजे तहा तहा सौ सौ योजन तक दुर्भिक्षादिक सब बाधा मिटी। प्रभुके चौरासी गणधर भए, अर चौरासी हजार साधु भए। इनकरि मडित सर्व उत्तम देशनिविषै विहार किया।

अथानन्तर भरत चक्रवर्तीपदकू प्राप्त भए, अर भरतके भाई सब ही मुनिव्रत धार परमपदको

प्राप्त भए। भरतने कुछ काल छ खंडका राज्य किया, अयोध्या राजधानी, नवनिधि चौवह रत्न, प्रत्येक की हजार हजार देव सेवा करै, तीन कोटि गाय, एक कोटि हल, चौरासी लाख हाथी, इतने ही रथ, अठारा कोड घोडे, बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा अर इतने ही देश महासंपदाके भरे, छियानवे हजार रानी देवागना समान, इत्यादिक चक्रवर्तीके विभवका कहा तक वर्णन करिए। पोदनापुरमें दूसरी माताका पुत्र बाहुबली, सो भरतकी आज्ञा न मानते भए। कह्या कि—हम भी ऋषभदेव के पुत्र हैं, किसकी आज्ञा मानें? तब भरत बाहुबलिपर चढे, सेनाका युद्ध न ठहरा, दोऊ भाई परस्पर युद्ध करैं—ठहरा। तीन युद्ध थापे १ दृष्टियुद्ध, २ जलयुद्ध, अर ३ मल्लयुद्ध। तीनोंही युद्धोंमें बाहुबली जीते, अर भरत हारे। तब भरतने बाहुबलीपर चक्र चलाया, वह उनके चरम शरीरपर घात न कर सका, लौटकर भरतके हाथपर आया। भरत लज्जित भए, बाहुबली सर्व भोग त्याग कर वैरागी भए। एकवर्षपर्यंत कायोत्सर्ग धरि निश्चल तिष्ठे, शरीर बेलोंसे वेष्टित भया, सार्पोंने बिल किए। एक वर्ष पीछे केवलज्ञान उपज्या। भरतचक्रवर्तीने आय कर केवलीकी पूजा करी। बाहुबली केवली कुछ कालमैं निर्वाणको प्राप्त भए। अवसर्पिणीकालमैं प्रथम मोक्षको गमन किया। भरत चक्रवर्तीने निष्कंटक छै खंडका राज्य किया। जिसके राज्यमें विद्याधरोंके समान सब संपदाके भरे, अर देवलोक समान नगर, महा विभूति कर मंडित, जिनमें देवों समान मनुष्य नानाप्रकारके वस्त्राभरण करि शोभायमान अनेक प्रकारकी शुभ चेष्टा कर रमते हैं। लोक भोगभूमि समान सुखी, अर लोकपाल समान राजा। अर मदनके निवासकी भूमि, अप्सरा समान नारियां। जैसे स्वर्गविषैं इन्द्र राज करै तैसैं भरतने एक छत्र पृथिवीविषै राज किया। भरतके सुभद्रा राणी इन्द्रानी समान भई। जिसकी हजार देव सेवा करैं। चक्रीके अनेक पुत्र भए तिनको पृथ्वीका राज दिया। इस प्रकार गौतम स्वामीने भरतका चरित्र श्रेणिक राजा से कहा।

अथानन्तर श्रेणिकने पूछा—हे प्रभो! तीन वर्णकी उत्पत्ति तुमने कही सो मैंने सुनी, अब विप्रों

की उत्पत्ति सुना चाहू हू सो कृपाकर कहो। गणधर देव जिनका हृदय जीवदयाकर कोमल है, अर मदमत्सरकर रहित है, वे कहते भए कि एक दिन भरतने अयोध्याके समीप भगवान का आगमन जान, समोसरणमें जाय वंदना कर मुनिके आहारकी विधि पूछी। तब भगवानकी आज्ञा भई कि मुनि तृष्णाकर रहित, जितेंद्री, अनेकमासोपवास कर, पराए घर निर्दोष आहार लेय अंतराय पड़े तो भोजन न कर, प्राणरक्षानिमित्त निर्दोष आहार कर, अर धर्मके हेतु प्राणको राखै, अर मोक्षके हेतु उस धर्मको आचर, जिसमैं किसी भी प्राणीको बाधा नाहीं। यह मुनिका धर्म सुन कर चक्रवर्ती विचार है—'अहो! यह जैनका व्रत महा दुर्धर है। मुनि शरीरसे भी निःस्पृह (निर्ममत्व) तिष्ठे हैं तो अन्य वस्तुमैं तो उनकी वांछा कैसे होय? मुनि महा निर्ग्रंथ निर्लोभी सर्व जीवोंकी दयाविषै तत्पर हैं। मेरे विभूति बहुत है, मैं अणुव्रती श्रावकको भक्ति कर दू, अर दीन लोकनिको दया कर दू। ये श्रावक भी मुनिके लघु भ्राता हैं। ऐसा विचारकर लोकनिको भोजनके अर्थि बुलाए, अर व्रतियोंकी परीक्षा निमित्त—आंगणमें जो शालि धान उड़द मूंगनि बोए थे, तिनके अंकुर ऊगे। सो अविवेकी लोक तो हरितकायको खूंदते आए। अर जे विवेकी थे, वे अंकुर जान खडे होय रहे। तिनको भरत अंकुररहित जो मार्ग उसपर बुलाया, अर व्रती जान बहुत आदर किया। अर यज्ञोपवीत(जनेऊ) कंठमें डाला, आदरसे भोजन कराया, वस्त्राभरण दिये, अर मनवांछित दान दिये। अर अंकुरको दल मलते आए थे, तिनको अव्रती जान उनका आदर नहिं किया। अर व्रतियोको ब्राह्मण ठहराए, चक्रवर्तीके माननेसे कई एक तो गर्वको प्राप्त भए, अर कईएक लोभकी अधिकतातैं धनवान् लोकनिको देखकर याचनाको प्रवर्तें।

तब मतिसमुद्र मंत्रीने भरतसे कहा—समोसरणमें मैंने भगवानके मुखसे ऐसा सुना है कि जो तुमने विप्र धर्माधिकारी जानकर माने हैं, ते पंचमकालमैं महा मदोन्मत्त होयगे, अर हिंसामैं धर्म जानकर जीवोंको हनेंगे, अर महा कषायसंयुक्त सदा पाप क्रियामैं प्रवर्त्तेंगे, अर हिंसाके प्ररूपक ग्रंथों को अकृत्रिम मानकर समस्त प्रजाको लोभ उपजावेंगे। महा आरम्भविषैं आसक्त, परिग्रहमैं तत्पर, जिनभा-

चित जो मार्ग ताकी सदा निंदा करेंगे। निर्ग्रंथ मुनिको देख महा क्रोध करेंगे। ए वचन सुन भरत इन पर क्रोधायमान भए। तब यह भगवानके शरण गए। भगवानने भरतको कहा— हे भरत! जो कलि-कालविषै ऐसा ही होना है, तुम कषाय मत करो। इसभांति विप्रोंकी प्रवृत्ति भई, अर जो भगवानके साथ वैराग्यको निकले ते चारित्रभ्रष्ट भए। तिनमेंतैं कच्छादिक कईएक तो सुलटे। अर मारीचा-दिक नहीं सुलटे। तिनके शिष्य प्रतिशिष्यादिक सांख्य योगमें प्रवर्ते, कोपीन (लंगोटी) पहरी, वल्क-लादि धारे। यह विप्रनिकी अर परिव्राजक कहिए दंडीनिकी प्रवृत्ति कही।

अथानन्तर अनेक जीवनिको भवसागरसे तारकर भगवान ऋषभ कैलाशके शिखर से लोकशिखर जो निर्वाण उसको प्राप्त भए। अर भरत भी कुछकाल राज्य कर जीर्ण तृणवत् राज्यको छोड़कर वैराग्यको प्राप्त भए। अन्तर्मुहूर्तमें केवलज्ञान उपज्या। पीछै आयु पूर्णकर निर्वाणको प्राप्त भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषै श्रीऋषभका कथन जाविषै है ऐसा चौथा अधिकार सम्पूर्ण भया ॥४॥

अथ वंशोत्पत्ति नामा महाधिकार ॥२॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे वंशोंकी उत्पत्ति कहते भए कि—हे श्रेणिक इस जगत-विषै महावंश जो चार तिनके अनेक भेद है।

१ प्रथम इक्ष्वाकु वंश। यह लोकका आभूषण है, इसमैसे सूर्य वंश प्रवर्त्या है। २ दूसरा सोम (चन्द्र) वंश, चंद्रमाकी किरण समान निर्मल है। ३ तीसरा विद्याधरोंका वंश अत्यन्त मनोहर है। ४ चौथा हरिवंश जगत विषै प्रसिद्ध है। अब इनका भिन्न भिन्न विस्तार कहे है—

इक्ष्वाकुवंशमैं भगवान ऋषभदेव उपजे, तिनके पुत्र भरत भए, भरतके पुत्र अर्ककीर्ति भए। राजा अर्ककीर्ति महा तेजस्वी राजा हुए। इनके नामतै सूर्यवंश प्रवर्त्या है। अर्क नाम सूर्यका है, अर्ककीर्तिका वंश सूर्यवंश कहलाता है। इस सूर्यवंशमैं राजा अर्ककीर्तिके सितयश नामा पुत्र भए। इनके बलांक, तिनके सुबल, रवितेज, तिनके महाबल, महाबलके अतिबल, तिनके अमृत, अमृतके सुभद्र, तिनके

सागर, तिनके भद्र, तिनके रवितेज, तिनके शशी, तिनके प्रभूततेज, तिनके तेजस्वी, तिनके तपबल, महाप्रतापी, तिनके अतिवीर्य, तिनके सुवीर्य, तिनके उदितपराक्रम, तिनके सूर्य, तिनके इन्द्रद्युम्न मणि, तिनके महेन्द्रजित, तिनके प्रभूत, तिनके विभु, तिनके अविध्वंस, तिनके वीतभी, तिनके वृषभध्वज, तिनके करुणाक, तिनके मृगाक। इस भांति सूर्यवंशविषै अनेक राजा भए, ते संसारके भ्रमणतै भयभीत पुत्रोंको राज देय मुनिव्रतके धारक भए, महा निर्ग्रन्थ, शरीरसे भी निस्पृही। या सूर्यवंशकी उत्पत्ति तुझे कही। अब सोमवंशकी उत्पति तुझे कहिये है सो सुन।

ऋषभदेवकी दूसरी राणीके पुत्र बाहुबली, तिनके सोमयश, तिनके सौम्य, तिनके महाबल, तिनके सुबल, तिनके भुजबली, इत्यादि अनेक राजा भये, निर्मल है चेष्टा जिनकी मुनिव्रत धार परम धाम को प्राप्त भए। कईएक देव होय मनुष्य जन्म लेकर सिद्ध भए। यह सोमवंशकी उत्पत्ति कही। अब विद्याधरनके वंशकी उत्पत्ति सुनहु।

नमि, रत्नमाली, तिनके रत्नवज्र, तिनके रत्नरथ, तिनके रत्नचित्र, तिनके चन्द्ररथ, तिनके वज्रजंघ, तिनके वज्रसेन, तिनके वज्रदंष्ट्र, तिनके वज्रध्वज, तिनके वज्रायुध, तिनके वज्र, तिनके सुवज्र, तिनके वज्रभृत, तिनके वज्राभ, तिनके वज्रबाहु, तिनके वज्रांक, तिनके वज्रसुन्दर, तिनके वज्रास्य, तिनके वज्रपाणि, तिनके वज्रभानु, तिनके वज्रवान, तिनके विद्युन्मुख, तिनके सुवक्र, तिनके विद्युद्दंष्ट्र, अर उनके पुत्र विद्युत, अर विद्युदाभ, अर विद्युद्वेग, अर विद्युत इत्यादि विद्याधरोंके वंशमें अनेक राजा भए। अपने अपने पुत्रनिको राज देय जिनदीक्षा धर, रागद्वेषका नाशकर सिद्धपदको प्राप्त भए। कई एक देवलोक गये। जे मोहपाश से बंधे हुते ते राज्यविषै ही मरकर कुगतिको गए।

अब संजयतिमुनिके उपसर्गका कारण कहे है कि—विद्युद्दंष्ट्र नामा राजा दोऊ श्रेणीका अधिपति विद्याबलसे उद्धत विमानमें बैठा विदेहक्षेत्रमें गया। तहां संजयतिस्वामीको ध्यानारूढ देख्या, जिनका शरीर पर्वत समान निश्चल है। उस पापीने मुनिको देखकर पूर्वजन्मके विरोधसे उनको उठाकर पंचगिरि

पर्वतपर धरे, अर लोकोको कहा कि इसे मारो। पापी जीवोंने यष्टि मुष्टि पाषाणादि अनेक प्रकार से उनको मारया। मुनिको शम भावके प्रसादसे रंचमात्र भी क्लेश न उपज्या, दुस्सह उपसर्गको जीत लोकालोकका प्रकाशक केवलज्ञान उपार्ज्या, सबदेव वंदनाको आए। धरणींद्र भी आए। वह धरणींद्र पूर्वभवमें मुनिके भाई थे, इसलिए क्रोधकर सब विद्याधरनिको नागफाससे बांधे। तब सबनने विनती करी कि यह अपराध विद्युद्दंष्ट्रका है। तब और तो छोडे, अर विद्युद्दंष्ट्रको न छोडया, मारनेको उद्यमी भए। तबि देवोने प्रार्थना करके छुडाया सो छोडया, परन्तु विद्या हर ली, तब याने प्रार्थना करी कि हे प्रभो! मुझे विद्या कैसे सिद्ध होयगी। धरणींद्रने कहा कि संजयतिस्वामीकी प्रतिमाके समीप तप क्लेश करनेसे तुमको विद्या सिद्ध होयगी, परन्तु चैत्यालयके उल्लंघनसे तथा मुनियोके उल्लंघनसे विद्याका नाश होवैगा। इसलिए तुमको तिनकी वंदना करके आगे गमन करना योग्य है। तब धरणींद्र ने संजयतिस्वामीको पूछया कि—हे प्रभो! विद्युद्दंष्ट्रने आपको उपसर्ग क्यों किया? भगवान संजयति स्वामीने कहा—कि मैं चतुर्गतिविषै भ्रमण करता शकट नामा ग्राममें दयावान प्रियवादी हितकार नामा महाजन भया। निष्कपटस्वभाव साधुसेवामें तत्पर, सो समाधिमरण कर कुमुदावती नगरीमें न्यायमार्गी श्रीवर्धन नामा राजा हुआ। उस ग्राममें एक ब्राह्मण जो अज्ञान तपकर कुदेव हुआ था तहांसे चयकर राजा श्रीवर्धनसे वह्निशिख नामा पुरोहित भया। वह महादुष्ट अकार्यका करणहारा आपको सत्यघोष कहावै। एक नेमिदत्त सेठके रत्न हरे। राणी रामदत्ताने जूवामें पुरोहितकी अंगूठी जीती अर दासीके हाथ पुरोहितके घर भेजकर रत्न मगाये, अर सेठको दिए। राजाने पुरोहितको तीव्र दंड दिया। वह पुरोहित मरकर एकभवके पश्चात् यह विद्याधरोंका अधिपति भया, अर राजा मुनिव्रत धार कर देव भए। कईएक भवके पश्चात् यह हम संजयति भए, सो इसने पूर्वभवके प्रसंगसे हमको उपसर्ग किया। यह कथा सुन नागेन्द्र अपने स्थानको गए।

अथानन्तर उस विद्याधरके दृढरथ भए, ताके अश्वधर्मा पुत्र भए, उसके अश्वायु, उसके अश्वध्वज,

उसक पद्मनाभि, उसके पद्ममाली, उसके पद्मरथ, उसके सिंहजातिन, उसके मृगोधर्मा, उसके मेघास्त्र, उसके सिंहप्रभ, उसके सिंहकेतु, उसके शशांक, उसके चन्द्राह्ण,उसके चन्द्रशेखर,उसके इन्द्ररथ, ताके चन्द्ररथ ताके वज्रधर्मा, ताके वज्रायुध, उसके चक्रधर्मा, उसके चक्रायुध, उसके चक्रध्वज, उसके मणिग्रीव, उसके मण्यक, उसके मणिभासुर, उसके मणिरथ, उसके मण्यभास, उसके बिम्बोष्ठ, उसके लबिताधर, उसके रक्तोष्ठ, उसके हरिचन्द्र, उसके पूर्णचन्द्र, उसके बालेंद्र, उसके चन्द्रमा, उसके चूड, उसके व्योमचन्द्र, उसके उडपानन, उसके एकचूड, उसके द्विचूड, उसके त्रिचूड, उसके वज्रचूड, उसके भूरिचूड, उसके अर्कचूड, उसके वन्हिजटी, उसके वन्हितेज, याभांति अनेक राजा भए। तिनमें कई एक पुत्रनिको राज देय मुनि होय मोक्ष गए। कईएक स्वर्ग गये, कईएक भोगासक्त होय, वैरागी न भए, सो नरक तिर्यंच-गतिको प्राप्त भए। या भांति विद्याधरका वंश कह्या। आगे द्वितीय तीर्थंकर श्री अजितनाथ स्वामी उनकी उत्पत्ति कहे हैं।

जब ऋषभदेवको मुक्ति गए पचास लाख कोटिसागर भये, चतुर्थकाल आधा व्यतीत भया। जीवनिकी आयु, काय, पराक्रम घटते गए। जगतमें काम लोभादिककी प्रवृत्ति बढ़ती भई। अथानंतर इक्ष्वाकुकुलमें ऋषभदेव हीके वंशमें अयोध्या नगरमें राजा धरणीधर भए। तिनके पुत्र त्रिदशजय देवोंके जीतनेहारे, तिनके इन्द्ररेखा रानी, ताके जितशत्रु पुत्र भया। सो पोदनापुरके राजा भव्यानन्द, तिनके अम्भोदमाला राणी, ताकी पुत्री विजया जितशत्रुने परणी। जितशत्रुको राज देयकर राजा त्रिदश जय कैलाश पर्वतपर निर्वाणको प्राप्त भए। अथानन्तर—राजा जितशत्रुकी राणी विजयादेवीके अजितनाथ तीर्थंकर भए। तिनका जन्माभिषेकादिकका वर्णन ऋषभदेववत् जानना। जिनके जन्म होते ही राजा जितशत्रुने सब राजा जीते। तातैं भगवानका अजित नाम धरया। अजितनाथके सुनयना, नन्दा आदि अनेक राणी भई। जिनके रूपकी समानता इन्द्राणी भी न करसकें। एक दिन भगवान अजितनाथ राजलोक सहित प्रभातसमयमें ही वनक्रीडाको गए, सो कमलोंका वन फूल्या हुवा देख्या।

अर सूर्यास्त समय उसही वनको सँकुचा हुआ देख्या, सो लक्ष्मीकी अनित्यता मानकर परम वैराग्यको प्राप्त भए। माता पितादि सर्व कुटुम्बतै क्षमाभावकर ऋषभदेवकी भांति दीक्षा धरी। दशहजार राजा साथ निकसे। भगवानने बेला पारणा अंगीकार किया। ब्रह्मदत्त राजाके घर आहार लिया। चौदह वर्ष तप करके केवलज्ञान उपजाया। चौतीस अतिशय तथा आठ प्रातिहार्य प्रकट भए। भगवानके नब्बे गणधर भए, अर एक लाख मुनि भए।

अजितनाथके काका विजयसागर जिनकी ज्योति सूर्यसमान है, तिनकी राणी सुमंगला, तिनके पुत्र सगर द्वितीय चक्रवर्ती भए। सो नवनिधि चौदहरत्न आदि इनकी विभूति भरत चक्रवर्तीके समान जाननी। तिनके समयम एक वृत्तान्त भया सो हे—श्रेणिक! तुम सुनहु। भरतक्षेत्रके विजयार्धकी दक्षिणश्रेणीमें चक्रवाल नगर, तहां राजा पूर्णघन विद्याधरनिके अधिपति, महाप्रभाव-मंडित, विद्या-बलकरि अधिक, तिनने विहायतिलक नगरके राजा सुलोचनकी कन्या उत्पलमती जाची। राजा सुलोचनने निमित्तज्ञानीके कहनेतैं ताकूं न दीनी, अर सगर चक्रवर्तीकूं देनी विचारी। तब पूर्णघन सुलोचन पर चढ़ि आए। सुलोचनके पुत्र सहस्रनयन अपनी बहिनको लेकर भागे, सो बनमें छिप रहे। पूर्णघनने युद्धमें सुलोचनको मार नगरमें जाय कन्या ढूंढ़ी, परन्तु न पाई। तब अपने नगरको चले गये। सहस्रनयन निबल, सो बापका बध सुन पूर्णमेघ पर क्रोधायमान भए, परन्तु कछु कर नाहीं सकैं। छिद्र हेरै। गहरे बनमें घुसा रहे। कैसा है वह वन? सिंह व्याघ्र अष्टापदादिकनिकर भरया है। पश्चात् चक्रवर्तीको एक मायामई अश्व लेय उड्या, सो जिस बनमें सहस्रनयन हुते, तहां आये। उत्पलमतीने चक्रवर्तीको देखकर भाईको कह्या कि चक्रवर्ती आप ही यहां पधारे हैं। तब भाई प्रसन्न होयकर चक्रवर्तीको बहिन परणाई। सो यह उत्पलमती चक्रवर्तीकी पटराणी स्त्रीरत्न भई। अर चक्रवर्तीने कृपा करि सहस्रनयनको दोनो श्रेणीका अधिपति किया। सो सहस्रनयनने पूर्णघन पर चढ़कर युद्धमें पूर्णघनको मारया, अर बापका वैर लिया। चक्रवर्ती छहखंड पृथ्वीका राज करै।

अर सहस्रनयन चक्रवर्तीका साला विद्याधरनिकी दोऊ श्रेणीका राज करै। अर पूर्णमेघका बेटा मेघवाहन भयकर भाग्या। सहसनयनके योधा मारनेको लारें (पीछे) दौडे सो मेघवाहनने समोसरणमें श्रीअजितनाथकी शरण आया। इन्द्रने भयका कारण पूछ्या। तब मेघवाहनने कहा—'हमारे बापने सुलोचनको मारया था। सो सुलोचनके पुत्र सहस्रनयनने चक्रवर्तीका बल पाय, हमारे पिताको मारया, अर हमारे बधु क्षय किये, अर मेरे मारनेके उद्यमम है। सो मै मदिर त हसोंके साथ उडकर भगवानकी शरण आया हूं'। ऐसा कहिकर मनुष्यनिके कोठेमें बैठ्या। अर सहस्रनयनके योधा याके मारणे को आ.ये हुते इसको समोसरणमे आया जान, पाछे गए। अर सहस्रनयनको सकल वृत्तान्त कह्या। तब वह भी समोसरणमें आया। भगवानके चरणारविंदके प्रसादतैं दोनों निर्वैर होय तिष्ठे। तबि गणधरने भगवानकू इनके पिताका चरित्र पूछ्या। भगवान कहै हैं कि—जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषैं सद्गति नामा नगर, तहाँ भावन नामा बणिक, ताके आतकी नामा स्त्री, अर हरिदास नामा पुत्र, सो भावन चार कोटि द्रव्यका धनी हुता तो भी लोभ करि व्यापार निमित्त देशातरको चाल्या। सो चलते समय पुत्रको सब धन सौंप्या, अर द्यूतादिक कुव्यसन न सेवनेकी शिक्षा दीनी। हे पुत्र! यह द्यूतादि (जूवा) कुव्यसन सब दोषनिका कारण ह, इनको सवथा तजने, इत्यादि शिक्षा देकर आप धनतृष्णा के कारण जहाजके द्वारा द्वीपातरको गया। पिताके गए पीछे पुत्रने सब धन गेश्या, जूआ अर सुरापान इत्यादिक कुव्यसनकरि खोया। जब सर्व धन जाता रह्या, अर जुआरीनका देनदार होय गया तबि द्रव्यके अर्थि सुरग लगाय राजाके महलमें चोरी को गया। सो राजाके महलतैं द्रव्य लावै अर कुव्यसन सेवै। कईएक दिनोमें भावन परदेशतैं आया। घरमें पुत्रको न देख्या तबि स्त्रीको पूछ्या। स्त्री ने कही कि "इस सुरगमें होयकर राजाके महिलमें चोरीको गया है।" तब यह पिता, पुत्रके मरण की आशका करि ताके लावनेको सुरगमें पठ्या। सो वह तो जावै था, अर पुत्र आवै था सो पुत्रने जान्या यह कोई वैरी आवै है, सो उसने वैरी जानि खडगसे मारया। पीछे स्पर्शकर जान्या वह तो

मेरा बाप है, तब महादुखी होय, डरकर भाग्या। अर अनेक देश भ्रमणकरि मरया। सो पिता पुत्र दोन्यों कुत्ते भए। फिर गीदड, फिर मार्जार भए, फिर रींछ भये, फिर न्योला भये, फिर भैंसे भये, फिर बलध भये, सो इतने जन्मोंमे परस्पर घातकरि मरे। फिर विदेहक्षेत्रविषै पुष्कलावती देश में मनुष्य भये। उग्र तप करि एकादश स्वर्ग में उत्तर अनुत्तर नामा देव भए। तहातें आयकर जो भावन नामा पिता हुता वह तो पूणमेघ विद्याधर भया, अर हरिदास नामा पुत्र हुता सो सुलोचन नामा विद्याधर भया। या ही पूणमेघने सुलोचनको मारया।

तब गणधर देवने सहसनयनको अर मेघवाहनको कहया—तुम अपने पिताओंका या भांति चरित्र जान ससारका बैर तजकर समताभावकू धरो। अर सगरचक्रवर्तीने गणधरदेवको पूछाकि हे महाराज! मेघवाहन, अर सहस्रनयनका बैर क्यो भया? तदि भगवानकी दिव्यध्वनिमें आज्ञा भई कि जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्रविषै पद्मक नामा नगर है। तहा आरम्भ नामा गणितशास्त्रका पाठी महाधनवंत, ताके दोय शिष्य एक चन्द्र एक आवली भये। इन दोनोंमें मित्रता हुती, अर दोनों धनवान गुणवान विख्यात हुए। सो इनके गुरु आरम्भने जो अनेक नयचक्रमें अति विचक्षण हुता, मनमें विचारी कि कदाचित यह दोनो मेरा पदभग करें। ऐसा जानकर इन दोनोंके चित्त जुदे कर डारे। एक दिन चन्द्र गाय बेचनेकू गोपालके घर गया सो गाय बेचकर वह तो घर आवता हुआ, अर आवलीको उसी गायको गोपालतै खरीदकर लावता देख्या, इस कारण मागमें चन्द्रने आवलीको मारया। सो म्लेच्छ भया, अर चन्द्र मरकर बलध भया, सो म्लेच्छने बलधको भख्या। म्लेच्छ नरक तिर्यंच योनिमैं भ्रमणकरि मूसा भया, अर चन्द्रका जीव मार्जार भया। मार्जारने मूसा भख्या। फिर ये दोऊ पापकर्मके योगतैं अनेक योनिमें भ्रमणकरकाशीमे सम्भ्रमदेवकी दासीके पुत्र दोऊ भाई भए। एकका नाम कूट अर एकका नाम करवट, सो इन दोनोंको सम्भ्रम देवने चैत्यालयकी टहलकू राखे। सो मरकर पुण्यके योगतैं रूपानन्द अर स्वरूपानद नामा व्यतरदेव भए। रूपानद तो चद्रका जीव, अर स्वरूपानन्द आवलीका जीव। फिर

रूपानन्द तो चयकर कलू वीका पुत्र कुलधर भया। अर स्वरूपानन्द पुरोहितका पुत्र पुष्पभूत भया। ए दोनों परस्पर मित्र एक हालीके अर्थि बरको प्राप्त भये, अर कुलधर पुष्पभूतके मारवेको प्रवृत्या। एक वृक्षके तलै साधु विराजते हुते तिनसो धम श्रवणकर कुलधर शात भया। राजाने याको सामत जान बहुत बढाया। पुष्पभूत, कुलधरको जिनधमके प्रसादतै सपत्तिवाहन देखकरि जैनी भया। वृतधर तीसरे स्वर्ग गया, अर कुलधर भी तीसरे स्वग गया। स्वगतै चयकर दोनो धातकीखडके विदेहविषै अरिंजय पिता अर जयावती माताके पुत्र भये। एकका नाम अमरश्रुत दूजेका नाम धनश्रुत। ये दोनों भाई बडे योधा सहस्रशिरसके एतवारी चाकर जगतमे प्रसिद्ध हुवे। एक दिन राजा सहस्रशिरस हाथी पकडने को बनमे गया। ये दोनो भाई साथ गये। बनमें भगवान केवली बिराजे हुते, तिनके प्रतापतैं सिंह मृगादिक जातिविरोधी जीवोको एक ठौर बठे देख राजा आश्चर्यको प्राप्त भया, आगै जाकर केवली-का दर्शन किया। राजा तो मुनि होय निर्वाण गये, अर ये दोनो मुनि होय, ग्यारहवें स्वर्ग गए। तहांतै चयकर चन्द्रका जीव अमरश्रुत तो मेघवाहन भया, अर आवलीका जीव धनश्रुत सो सहस्र-नयन भया। यह इन दोनोंके बैरका वृत्तात है। फिर सगरचक्रवर्तीने भगवानकू पूछया कि हे प्रभो! सहसनयनसों मेरा जो अतिहित ह, सो इसमै क्या कारण है, तबि भगवानने कह्या कि वह आरम्भ नामा गणित शास्त्रका पाठी मुनिनको आहार दान देकर देवकुरुभोगभूमि गया। तहातैं प्रथम स्वर्ग का देव होय कर पीछे चन्द्रपुरमें राजा हरि राणी धरादेवीके प्यारा पुत्र व्रतकीर्तन भया। मुनिपद धार स्वर्ग गया, अर विदेहक्षेत्रमें रत्नसचयपुरमें महाघोष पिता चन्द्राणी माताके पयोबलनामा पुत्र होय, मुनिव्रत धार, चौदहवें स्वग गया। तहातै चयकर भरतक्षेत्रमें पृथ्वीपुर नगरमें यशोधर राजा, अर राणी जयाके घर जयकीर्तन नामा पुत्र भया। सो पिताके निकट जिनदीक्षा लेकर विजय विमान गया। तहातैं चयकर तू सगरचक्रवर्ती भया, अर आरम्भके भवमें आवली शिष्यके साथ तेरा स्नेह हुता सो अब आवलीका जीव सहस्रनयन, तासों तेरा अधिक स्नेह है। यह कथा सुन चक्रवर्तीके विशेष

धर्मरुचि हुई। अर मेघवाहन तथा सहस्रनयन दोनो अपने पिताके, अर अपने पूर्वभव श्रवणकर निर्वैर भए, परस्पर मित्र भए। अर इनको धर्मविषै अतिरुचि उपजी। पूर्वभव दोनोंको याद आये। महाश्रद्धावत होय भगवानकी स्तुति करते भए कि हे नाथ! आप अनाथके नाथ हैं। ये ससार के प्राणी महादुखी हैं, तिनको धर्मोपदेश देकर उपकार करो हो, तुम्हारा किसीसे भी कुछ प्रयोजन नाहीं। तुम नि·कारण जगतके बंधु हो, तुम्हारा रूप उपमा रहित है। अर अप्रमाण बलके धरणहारे हो, इस जगतम तुम समान और नाहीं। तुम पूण परमानन्द हो, कृतकृत्य हो, सदा सर्वदर्शी सबके वल्लभ हो, किसीके चिंतवनमें नहीं आते हो, जाने हैं सर्व पदाथ जिनने, सबके अतर्यामी, सवज्ञ, जगतके हितु हो, हे जिनेन्द्र! ससाररूप अंधकूपमें पडे ये प्राणी, तिनको धर्मोपदेशरूप हस्तावलबन ही हो। इत्यादिक बहुत स्तुति करी। अर यह दोनों मेघवाहन अर सहस्रनयन गद्गद वाणी होय, अश्रुपातकरि भीज गए हैं नेत्र जिनके, परम हर्षको प्राप्त भए। अर विधिपूवक नमस्कार कर तिष्ठे। सिंहवीर्यादिक मुनि, इन्द्रादिक देव, सगरादिक राजा परम आश्चर्यको प्राप्त भये ॥

अथानन्तर भगवानके समोसरणविषै राक्षसोंका इद्र भीम अर सुभीम मेघवाहनतै प्रसन्न भए अर कहते भए, कि—हे विद्याधरके बालक मेघवाहन, तू धन्य है—जो भगवान अजितनाथकी शरणमैं आया। हम तेरैपर अति प्रसन्न भए है। हम तेरी स्थिरताका कारण कहे है। तू सुन—इस लवणसमुद्र में अत्यन्त विषम महारमणीक हजारों अतरद्वीप है। लवणसमुद्रमें मगर मच्छादिकके समूह रमैं हैं। अर तिन अतर्द्वीपोंमें कहीं तो गधव क्रीडा करैं है, कहीं किन्नरोंके समूह रमै है, कहीं यक्षोंके समूह कोलाहल करै हैं, कहीं किंपुरुष जातिके देव केलि करै है। उनके मध्यमें एक राक्षसद्वीप है, जो सातसौ योजन चौड़ा, अर सातसौ योजन लम्बा है। उसके मध्यमें त्रिकूटाचल पर्वत है जो अत्यन्त दुष्प्रवेश है, शरणकी ठौर है, पवतके शिखर सुमेरुके शिखर समान मनोहर हैं। अर पवत नवयोजन ऊचा, पचास योजन चौडा है। नाना प्रकारकी रत्नोंकी ज्योतिके समूहकर जडित है। जाके सुवर्णमयी सुन्दर

तट है। नानाप्रकारकी बेलो कर मंडित कल्पवृक्षनिकर पूर्ण है। ताके तले तीसयोजन प्रमाण लंका नामा नगरी है। रत्न अर सुवर्णके महलनिकर अत्यन्त शोभे है। जहां मनोहर उद्यान है, कमलनिकर मंडित सरोवर हैं, बडे बडे चैत्यालय है, वह नगरी इन्द्रपुरी समान है। दक्षिण दिशाका मंडन (भूषण) है। हे विद्याधर! तू समस्त बांधववर्गकर सहित तहां बसिकर सुखसे रहो। ऐसा कहकर भीमा नामा राक्षसनिका इन्द्र ताकूं रत्नमई हार देता भया, वह हार अपनी किरणोंसे महाउद्योत करै है। तथा धरतीके बीचमें पाताललंका जिसमें अलंकारोदय नगर, छह योजन ओंडा, अर एकसौ साढ़े इकतीस योजन, अर डेढकला चौडा यह भी दिया। उस नगरमें वैरियोंका मन भी प्रवेश न कर सके, स्वर्ग समान महा मनोहर है। राक्षसोंके इन्द्रने कहा—कदाचित तुझकूं परचक्रका भय होतो इस पाताल-लंकामैं सकल वंशसहित सुखसों रहियो, लंका तो राजधानी, अर पाताललंका भय निवारणका स्थान है। याभांति भीम सुभीमने पूर्णघनके पुत्र मेघवाहनको कह्या।

तब मेघवाहन परमहर्षको प्राप्त भया, भगवानकूं नमस्कार करके उठ्या। तबि राक्षसोंके इन्द्रने राक्षसविद्या दीनी, सो आकाशमार्गसे विमानमें चढकर लंकाको चले, तबि सब भाइयोंने सुनी कि-मेघवाहनको राक्षसोंके इन्द्रने अति प्रसन्न होय, लंका दी है सो समस्त ही बंधुवर्गोंके मन प्रफुल्लित भए। जैसे सूर्यके उदयतें समस्त ही कमल प्रफुल्लित होय, तैसे सब ही विद्याधर मेघवाहनपै आए। तिनकरि मंडित मेघवाहन चालें। कईएक तो राजा आगे जाय हैं, कईएक पाछें, कईएक दाहिने, कई एक बायें, कईएक हाथियों पर चढे, कईएक तुरंगनि (घोडो) पर चढ़े, कईएक रथोपर चढ़े जाय हैं, कईएक पालकीपर चढे जाय है। अर अनेक पियादे ही जाय हैं। जय जय शब्द होय रहे हैं। दुंदुभी बाजे बाजैं हैं, राजा पर छत्र फिर हैं। अर चमर ढुरैं हैं, अनेक निशान (झंडे) चले जाय हैं। अनेक विद्याधर शीस निवावैं है। या भांति राजा चलते चलते लवणसमुद्र ऊपर आए। वह समुद्र आकाश समान विस्तीर्ण, अर पाताल समान ऊंडा, तमालवन समान श्याम है तरंगोंके समूहतैं भरया है। अनेक

मगरमच्छ जिसमें कलोल कर है। उस समुद्रको देख राजा हर्षित भए, पर्वतके अधोभागमें कोट, अर दरवाजे अर खाइयोंकर संयुक्त लंकानामा महापुरी है, तहां प्रवेश किया। लंकापुरीमें रत्नोंकी ज्योति करि आकाश संध्यासमान अरुण (लाल) होय रह्या है, कुंदके पुष्प समान उज्ज्वल ऊंचे भगवानके चैत्यालयनिकरि मंडित पुरी शोभ है। चैत्यालयोंपर ध्वजा फहरा रही हैं। चैत्यालयोंकी वन्दना कर राजाने महलमें प्रवेश किया, और भी यथायोग्य घरोंमैं तिष्ठे रत्नोंकी शोभासे उसके मन अर नेत्र हरे गए।

अथानन्तर किन्नरगीतनामा नगरविषै राजा रतिमयूख, अर राणी अनुमती तिनके सुप्रभा नामा कन्या, नेत्र अर मनकी चौरनहारी, कामका निवास, लक्ष्मीरूप, कुमुदनीके प्रफुल्लित करनेकूं चन्द्रमा की चांदनी, लावण्यरूप जलकी सरोवरी, आभूषणोंका आभूषण, इन्द्रियनको प्रमोदकी करणहारी, सो राजा मेघवाहनने ताकूं महा उत्साह करि परणी। ताके महारक्षनामा पुत्र भया। जैसे स्वर्गमैं इन्द्र इन्द्राणीसहित तिष्ठै तैसे राजा मेघवाहन राणी सुप्रभा सहित लंकाविषै बहुत काल राज किया।

अथानन्तर एक दिन राजा मेघवाहन अजितनाथके वंदनाके अर्थि समोसरणमें गए। तहां और कथा हो चुकी तबि सगरने भगवानकूं नमस्कारकरि पूछ्या कि हे–प्रभो! इस अवसर्पिणीकालविषैं धर्मचक्रके स्वामी तुम सारिखे जिनेश्वर कितने भए, अर कितने होवेंगे? तुम तीन लोकके देने वाले हो, तुम सारिखे पुरुषोंकी उत्पत्ति लोकविषै आश्चर्यकारिणी है। अर चक्ररत्नके स्वामी कितने होवेंगे तथा वासुदेव, प्रतिवासुदेव, बलभद्र कितने होवेंगे? या भांति सगरने प्रश्न किया। तब भगवान अपनी ध्वनि करि देवदुंदुभीनिकी ध्वनिको निराकरण करते हुए व्याख्यान करते भए। अर्धमागधीभाषाके भाषणहारे भगवान तिनके होंठ न हालें, यह बड़ा आश्चर्य है। कैसी है दिव्यध्वनि? उपजाया है, श्रोतानिके कानोंको उत्साह जाने। उत्सर्पिणी अवसर्पिणी प्रत्येक कालविषैं चौबीस तीर्थंकर होय हैं। मोहरूप अंधकारकरि समस्त जगत आच्छादित हुवा, जा समय धर्मका विचार नाहीं, और कोई भी राजा नाहीं,

ता समय भगवान ऋषभदेव उपजे, तिनने कर्मभूमिकी रचना करी। तबतै कृतयुग कहाया। भगवानने क्रियाके भेदसे तीन वर्ण थापे। अर उनके पुत्र भरतने विप्र वर्ण थापा। भरतका तेज भी ऋषभ समान है, भगवान ऋषभदेवने जिनदीक्षा धरी, अर भवतापकर पीडित भव्यजीवनिकों शमभावरूप जलकरि शांत किया। श्रावकके धर्म, अर यतीके धर्म दोऊ प्रकट किए। जिनके गुणनिकी उपमाकूं जगत-विषै कोऊ पदार्थ नाहीं, कैलाशके शिखरतै आप निर्वाण पधारे। ऋषभदेवकी शरण पाय अनेक साधु सिद्ध भए, अर कईएक स्वर्गके सुखको प्राप्त भए, कईएक भद्रपरिणामी मनुष्यभवको प्राप्त भए, अर कईएक मरीचादि मिथ्यात्वके रागकरि संयुक्त अत्यन्त उज्ज्वल जो भगवानका मार्ग ताहि न अवलोकन करते भए, जैसे घुग्गू (उल्लू) सूर्यके प्रकाशको न जानै तैसें कुधर्मकूं अंगीकारकरि कुदेव भए, बहुरि नरकतिर्यंचगतिकूं प्राप्त भये। भगवान ऋषभदेवको मुक्ति गये पचास लाख कोटि सागर गये, तब सर्वार्थसिद्धिसे चय करि द्वितीय तीर्थंकर हम अजित भए। जब धर्मकी ग्लानि होय, अर मिथ्यादृष्टीनिका अधिकार होय, आचारका अभाव होय, तब भगवान तीर्थंकर प्रकट होय धर्मका उद्योत करैं है। अर भव्यजीव धर्मको पाय सिद्धस्थानकों प्राप्त होय हैं। अब हमको मोक्ष भये पीछे बाईस तीर्थंकर और होंगे। तीनलोकविषै उद्योत करनेवाले ते सब मो सारिखे कांति वीर्य विभूतिके धनी त्रैलोक्यपूज्य ज्ञानदर्शनरूप होंगे। तिनमें तीन तीर्थंकर शांति, कुंथु, अर ए तीन चक्रवर्ती पदके भी धारक होवेंगे। तिनि चौबीसोंके नाम सुनहु—ऋषभ १, अजित २, संभव ३, अभिनन्दन ४, सुमति ५, पद्मप्रभ ६, सुपार्श्व ७, चन्द्रप्रभ ८, पुष्पदंत ९, शीतल १०, श्रेयांस ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनन्त १४, धर्म १५, शांति १६, कुंथु १७, अर १८, मल्लि १९, मुनिसुव्रत २०, नमि २१, नेमि २२, पार्श्वनाथ २३, महावीर २४, ये सबही देवाधिदेव जिनमार्गके धुरंधर होहिंगे। अर सबके गर्भावतारविषै रत्ननिकी वर्षा होयगी। सबके जन्मकल्याणक सुमेरुपर्वतपर क्षीरसागरके जल-करि होवेंगे। उपमारहित है तेजरूप सुख अर बल जिनके, ऐसे सब ही कर्मशत्रुनिके नाशनहारे

महावीर स्वामीरूपी सूर्यके अस्त भए पीछे पाखडरूप अज्ञानी चमत्कार करेंगे। ते पाखडी ससाररूपी कूपविषै आप पडगे अर औरनिकों पाडैंगे। चक्रवर्त्तिनिमें प्रथम तो भरत भए, दूसरा तू सगर भया, अर तीसरा मघवा, चौथा सनत्कुमार, अर पाचवा शाति, छठा कुथु, सातवा अर, आठवां सुभूम, नवमा महापद्म, दसवाँ हरिषेण, ग्यारहवा जयसेन, बारहवा ब्रह्मदत्त, ये बारह चक्रवर्ती, अर वासुदेव नव, अर प्रतिवासुदेव नव, बलभद्र नव होहिंगे। इनका धर्मविषै सावधान चित्त होगा। ये अवसर्पणीके महापुरुष कहे। याही भाति उत्सपणीविषै भरत ऐरावतमें जानने। या भाति महापुरुषोंकी विभूति अर कालकी प्रवृति अर कर्मनिके वशतै ससारका भ्रमण, अर कर्म रहितोंको मुक्तिका निरुपम-सुख—यह सवकथन मेघवाहनने सुना। यह विचक्षण चित्तविषै विचारता भया कि हाय! हाय!! जिन कर्मनिकर यह जीव आतापको प्राप्त होय है तिन्ही कर्मनिको मोहमदिराकरि उन्मत्त भया यह जीव बाधै है। यह विषय विषवत प्राणनिके हरणहारे कल्पनामात्र मनोज्ञ है। दु खके उपजावनहारे है। इनमें रति कहा? या जीवने धन स्त्री कुटुबादिविषै अनेकभव राग किया परन्तु ये पदार्थ याके नाहीं हुये। यह सदा अकेला ससारविषै परिभ्रमण कर है, अर सब कुटुम्बादिक तब तक ही स्नेह करै है जबतक दानकरि उनका सम्मान करै ह, जसे श्वानके बालकको जब लग टूक डारिए, तोलग अपना है। अतकालमें पुत्रकलत्रबाधवमित्रधनादिकके लार (साथ) कौन गया? अर ये कौन के साथ गये? ये भोग हैं, ये कालसर्पके फण समान भयानक हैं। नरकके कारण हैं, तिनविषै कौन बुद्धिमान सग करै, अहो यह बडा आश्चर्य है। लक्ष्मी ठगनी अपने आश्रितनिकों ठगै है या समान और दुष्टता कहा! जैसें स्वप्नविषै किसी वस्तु का समागम होय है, तैसें कुटुम्बका समागम जानना, अर जैसें इन्द्रधनुष क्षणभगुर है, तैसें परिवारका सुख क्षणभगुर जानना। यह शरीर जलके बुदबुदा समान असार है, अर यह जीवितव्य बिजलीके चमत्कारवत् असार चचल है। तातै इन सबनिको तजिकरि एक धर्म ही का सहाय अगीकार करू। धर्म कैसा है? सदा कल्याणकारी ही है, कदापि विघ्नकारी नाहीं। अर ससार

शरीर भोगादिक चतुरगतिके भ्रमणके कारण है, महा दुखरूप है। ऐसा जानकरि उस राजा मेघवाहनने जिसके बकतर महा वैराग्य ही है, महारक्ष नामा पुत्रको राज्य देकर भगवान श्रीअजितनाथके निकट दीक्षा धारी, राजाके साथ एकसौ दश राजा वैराग्य पाय घररूप बंदीखानेतें निकसे।

अथानन्तर मेघवाहनका पुत्र महारक्ष राजपर बैठ्या। सो चन्द्रमा समान दानरूपी किरणनिकरि कुटुम्बरूपी समुद्रको पूर्ण करता संता लंकारूपी आकाशविषै प्रकाश करता भया। बडे २ विद्याधरनिके राजा स्वप्नविषै भी ताकी आज्ञाको पायकर आदरतैं प्रतिबोध होय, हाथ जोड नमस्कार करते भए। उस महारक्षके विमलप्रभा राणी होती भई। कैसी है वह राणी? मानो छाया समान पतिकी अनुगामिनी है। ताके अमररक्ष, उदधिरक्ष, भानुरक्ष ये तीन पुत्र भए। कैसे हैं वे पुत्र? नानाप्रकारके शुभकर्म करि पूर्ण जिनका बडा विस्तार, अति ऊंचे, जगतविषै प्रसिद्ध मानो तीन लोक ही है।

अथानन्तर अजितनाथ स्वामी अनेक भव्यजीवनिका निस्तारकर सम्मेदशिखरतैं सिद्धपदको प्राप्त भए। सगरके छाणवें हजार राणी इन्द्राणी तुल्य, अर पुत्र साठ हजार ते कदाचित वंदनाकूं कैलाश पर्वतपर आए। भगवानके चैत्यालयनिकी वंदनाकर दंडरत्नतैं कैलाशके चौगिरद खाई खोदते भए। सो तिनको क्रोधकी दृष्टि करि नागेंद्रने देख्या, सो ये सब भस्म होगए! उनमेंतैं दोय आयुकर्मके योगतैं बचे, एक भीमरथ, अर दूसरा भगीरथ। तब सबनिने विचारी जो अचानक यह समाचार चक्रवर्तीको कहेंगे तो चक्रवर्ती तत्काल प्राण तजैंगे। ऐसा जान इनको मिलनेतैं, अर कहवेतैं पंडित लोकोंने मना किए। सर्व राजा अर मंत्री जा विधि आए थे, ताही विधि आए, विनयकरि चक्रवर्तीके पास अपने अपने स्थानपर बैठे। तासमय एक वृद्ध ब्राह्मण कहता भया कि 'हे सगर! देखहु या संसारकी अनित्यता जिसको देखकर भव्यजीवनिका मन संसारविषै न प्रवर्त्ते। तो आगैं तुम्हारे समान पराक्रमी राजा भरत भए, जिनने छै खंड पृथ्वी दासी समान वश करी, ताके अर्ककीर्ति पुत्र भयें—महापराक्रमी जिनके नामतैं सूर्यवंश प्रवर्त्या। या भांति जे अनेक राजा भये ते सर्व कालवश भये। सो राजानिकी

बात तो दूर ही रहो, जे स्वर्गलोकके इन्द्र महा विभव करि युक्त हैं तेहू क्षणमें विलाय जाय हैं। अर जे भगवान तीर्थंकर तीनों लोककू आनन्द करणहारे हैं, ते हू आयुके अंत होनेपर शरीरको तज निर्वाण पधारे हैं। जैसे पक्षी एक वृक्षपर रात्रिको आय बसैं हैं प्रभात अनेक दिशानिकू गमन करैं हैं। यह प्राणी कुटुम्बरूपी वृक्षविषै आय बसे हैं, स्थिति पूरीकर अपने कर्मकेवशतैं चतुर्गतिविषै गमन करैं हैं। सबनित बलवान महाबली यह काल है, जाने बडे २ बलवान निर्बल किये। अहो! बडा आश्चर्य है! बडे पुरुषनिका विनाश देखकर हमारा हृदय नाहीं फट जाय। इन जीवनिका शरीर संपदा अर इष्टका संयोग, सब इन्द्रधनुष, वा स्वप्न वा बिजली, वा झाग, वा बुदबुदा तिन समान जानना। इस जगतविषै ऐसा कोई नाहीं जो कालतैं बचै। एक सिद्ध ही अविनाशी हैं। अर जो पुरुष पहाडको हाथतैं चूर्णकर डारै, अर समुद्र शोष जाव तेहू कालके वदनमें प्राप्त होय है। यह मृत्यु अलंघ्य है। यह त्रैलोक्य मृत्युके वश है। केवल महामुनि ही जिनधर्मके प्रसादकरि मृत्युको जीते हैं। ऐसे अनेक राजा कालवश भए तैसैं हमहू कालवश होवेंगे। तीन लोकका यह मार्ग है। ऐसा जानकर ज्ञानी पुरुष शोक न करैं, शोक संसारका कारण है। या भांति वृद्ध पुरुषने कही, अर याही भांति सब सभाके लोगोंने कही। ताही समय चक्रवर्तीने दोऊ बालक देखे। तब ये मनमें विचारी कि सदा ये साठहजार भेले होय मेरे पास आवते हुते, नमस्कार करते, अर आज ये दोनो ही दीनवदन दीखैं है, तातैं जानिये है कि और सब कालवशि भए। अर ये राजा मुझे अन्योक्तिकर समझावै है। मेरा दुःख देखबेको असमर्थ हैं। ऐसा जानि राजा शोकरूप सर्पका डसा हुआ भी प्राणनिको न तजता भया। मन्त्रियोंके वचनतैं शोकको दबाय, संसारको कदलीके गर्भवत् असार जानि, इन्द्रियनिके सुख छोड, भगीरथको राज देय जिनदीक्षा आदरी। यह संपूर्ण छै खंड पृथ्वी जीर्ण तृण समान जान तजी। भीमरथ सहित श्रीअजित-नाथके निकट मुनि होय केवलज्ञान उपाय सिद्धपद को प्राप्त भए।

अथानन्तर एक समय सगरके पुत्र भगीरथ श्रुतसागर मुनिको पूछते भये कि हे प्रभो! जो हमारे

भाई एक ही साथ मरणको प्राप्त भये, तिनविषै म बचा, सो काहेत बचा ? तब मुनि बोले कि एक समय चतुर्विधसघ वदना निमित्त समेदशिखरको जाते हुते, सो चलते २ प्रतिकग्राममें आय निकसे। तिनको देखकर प्रतिकग्रामके लोक दुवचन बोलते भए, हसते भए। तहा एक कुम्हारने तिनको मन करी। अर मुनियोको स्तुति करता भया, तदनन्तर ता ग्रामके एक मनुष्यने चोरी करी। सो राजाने सव ग्राम जला दिया। उस दिन वह कुम्हार काहू ग्रामको गया हुता सो ही बचा। वह कुम्हार मरकर वणिक भया, अर अन्य जे ग्रामके मरे थे द्विइद्री, कौडी भये। कुम्हारके जीव महाजनने सव कौडी खरीदी। बहुरि वह महाजन मरकर राजा भया, अर कौडी मरकर गिजाई भई, सो हाथीके पगके तले चूरी गई। राजा मुनि होय कर देव भये, देवतै तू भगीरथ भया। ग्रामके लोक कईएक भव लेय सगरके पुत्र भये। सो मुनिके सघकी निंदा के पापतै जन्मजन्ममें कुगति पाई, अर तू स्तुति करनेतै ऐसा भया। यह पूवभव सुन अर भगीरथ प्रतिबोधको पाय मुनिराजका व्रत धर परमपदको प्राप्त भये।

बहुरि गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कहै हैं—हे श्रेणिक ! यह सगरका चरित्र तो तुझे कह्या। आगे लकाकी कथा कहिये है, सो सुनहु। महारिक्ष नामा विद्याधर बडी सम्पदाकरि पूण लकाविष निःकटक राज्य करै। सो एक दिन प्रमद नामा उद्यानविषै राजलोक सहित क्रीडाकू गये। कैसा है प्रमद नामा उद्यान ? ऊचे पवतोंसे महा रमणीक है, अर सुगधित पुष्पोंसे फूल रहे वृक्षोंके समूहसे मडित, अर मिष्ट शब्दोके बोलनहारे पक्षियोंके समूहसे अतिसुन्दर है, जहा रत्नोकी राशि है, अर अति सघन पत्र पल्लवन कर मडित लताओ (बेलो) के मडप तिनकरि छाय रह्या है। ऐसे वनमें राजा राजलोकनिसहित नानाप्रकारकी क्रीडा करि रतिसागरविष मग्न हुवा, जसे नन्दनवनविषै इन्द्र क्रीडा करै तैसै क्रीडा करी।

अथानन्तर सूयके अस्त भये पीछै कमल सकोचको प्राप्त भये। तिनविषै भ्रमरको दबकर मूवा देखि राजाके चिंता उपजी। कैसा ह राजा ? मोहकी मद है मदता जाके, अर भवसागरतै पार होने का इच्छा

उपजी है। राजा विचार है कि देखो मकरदके रसमे आसक्त यह मूढ भौंरा गधतै तृप्त न भया, तातैं मृत्युकूं प्राप्त भया। धिक्कार होहु या इच्छाकूं। जैसे यह कमलके रसका आसक्त मधुकर मूवा, तैसें मैं स्त्रियोंके मुखरूप कमलका भ्रमर हुआ मरकर कुगतिको प्राप्त होऊंगा। जो यह एक नासिका इन्द्रियका लोलुपी नाशको प्राप्त भया, तो मैं तो पंच इन्द्रियोंका लोभी हूं मेरी क्या बात? अथवा यह चोइन्द्री जीव अज्ञानी भूलै तो भूल, मैं ज्ञानसम्पन्न विषयनिके वशि क्यों भया? शहदकी लपेटी खडगकी धाराके चाटनेतें सुख कहां? जीभहीके खंड होय है, तैसे विषयसेवनमें सुख कहां? अनन्त दुःखोंका उपार्जन ही होय है। विषफल तुल्य ये विषय तिनतैं पराङ्मुख हैं, तिनको मैं मनवचकाय करि नमस्कार करूं हूं। हाय! हाय!! यह बडा कष्ट है जो मैं पापी घने दिनतक इन दुष्ट विषयनिकरि ठगाया गया। इन विषयनिका प्रसंग विषम है। विष तो एक भव प्राण हरै है, अर ये विषय अनन्तभव प्राण हरै है। यह विचार राजाने किया तासमय वनमें श्रुतसागरमुनि आये। वह मुनि अपने रूप करि चन्द्रमाकी चांदनीको जीते है, अर दीप्तिकरि सूर्यकूं जीते हैं, स्थिरताकरि सुमेरुतै अधिक है। जिनका मन एक धर्मध्यानविषैं ही आसक्त है, अर जीते हैं रागद्वेष दोय जिन्होंने, और तजे हैं मनवचकायके अपराध जिन्होंने, चार कषायोंके जीतनेहारे, पांच इन्द्रियनिके वश करणहारे, छह कायके जीवनिपर दयालु, अर सप्तभयवर्जित, आठमदरहित, नव नयके वेत्ता, शीलके नववाडिके धारक, दशलक्षणधर्मके स्वरूप परमतपके धरणहारे, साधुवोंके समूह सहित, स्वामी पधारे। सो जीव जंतुरहित पवित्रस्थान देख वनमें तिष्ठे। जिनके शरीरकी ज्योतिका दशों दिशामें उद्योत हो गया।

अथानन्तर वनपालके मुखतें स्वामीको आया सुन राजा महारक्ष विद्याधर वनमें आये! कैसे हैं राजा? भक्तिभाव करि विनयरूप है मन जिनका। वह राजा आयकरि मुनिके पांव पडे। कैसे हैं मुनि? अति प्रसन्न है मन जिनका, अर कल्याणके देनहारे है चरण कमल जिनके राजा समस्त संघको नमस्कार करि समाधान (कुशल) पूछ एक क्षण बैठिकरि भक्तिभावतैं मुनि धर्मका स्वरूप पूछते

भये। मुनिके हृदयमें शांतिभावरूपी चन्द्रमा प्रकाश कर रहा था सो वचनरूपी किरणनिकरि उद्योत करते संते व्याख्यान करते भये कि—हे राजा! धर्मका लक्षण जीवदया ही है। अर ये सत्य वचनादि सब धर्महीका परिवार है। यह जीव कर्मके प्रभावतैं जिस गतिमें जाय है ताही शरीरमें मोहित होय है। इसलिए तीनलोककी संपदा जो कोई देय तौहू प्राणी अपने प्राणको न तजै। सब जीवनिको प्राण समान और कुछ प्यारा नाहीं। सब ही जीवनको इच्छे है, मरनेको कोई भी न इच्छे। बहुत कहवेकरि कहा? जैसे आपको अपने प्राण प्यारे हैं तैसे ही सबनिको प्यारे हैं। तातैं जो मूरख परजीवनिके प्राण हरे हैं ते दुष्टकर्मी नरकमें पडे हैं। उन समान और कोऊ पापी नाहीं। यह जीव जीवनिके प्राण हरि अनेक जन्म कुगतिमें दुःख पावे है। जैसे लोहका पिंड पानीमें डूबि जाय है तैसे हिंसक जीव भव-सागरमें डूबे है। जे वचनकर मीठे बोल बोले हैं, अर हृदयमें विषके भरे हैं, इन्द्रियनिके वशि भए मलीन मन हैं, भले आचारतैं रहित, स्वेच्छाचारी, कामके सेवनहारे हैं ते नरक तिर्यंच गतिविषै भ्रमण करे हैं। प्रथम तो या संसारविषै जीवनिको मनुष्यदेह दुर्लभ है, बहुरि उत्तमकुल, आर्यक्षेत्र, सुन्दरता, धन-करपूर्णता, विद्याका समागम, तत्वका जानना, धर्मका आचरण ये सब अति दुर्लभ हैं। धर्मके प्रसाद तैं कईएक तो सिद्धपद पावै हैं, कईएक स्वर्गलोकविषै सुख पायकरि परम्पराय मोक्षको जाय हैं, अर कई एक मिथ्यादृष्टि अज्ञान तपकरि देव होय स्थावरयोनिमें आय पडे हैं। कईएक पशु होय हैं, कई एक मनुष्यजन्ममें आवैं हैं। कैसा है माताका गर्भ? मलमूत्रकर भरया है, अर कृमियोंके समूहकर पूर्ण है, महादुर्गंध अत्यन्त दुस्सह, ताविषै पित्त श्लेष्मके मध्य चर्मके जालतैं ढके ये प्राणी, जननी के आहार का जो रसांश ताहि चाटे है। जिनके सब अंग संकुचि रहे हैं। दुःखके भारकर पीडित नवमहीना उदरविषै बसिकरि योनिके द्वारतैं निकसै है। मनुष्यदेह पाय पापी धर्मको भूलै हैं। मनुष्यदेह सर्व-योनियोंमें उत्तम है। मिथ्यादृष्टि नेम धर्म आचारवर्जित पापी विषयनिको सेवे हैं। जे ज्ञानरहित कामके वशि बडे स्त्रीके वशी होय हैं, ते महादुःख भोगवते हुए संसारसमुद्रविषै डूबे हैं। तातैं विषयकषाय न

सेवने। हिंसाका वचन जामैं परजीवनिको पीडा होय सो न बोलना। हिंसा ही संसारका कारण है। चोरी न करनी, साच बोलना, स्त्रीकी संगति न करनी, धनकी वांछा न रखनी, सर्वपापारम्भ तजने, परोपकार करना, पर पीडा न करनी। यह मुनिकी आज्ञा सुनकर धर्मका स्वरूप जान राजा वैराग्यको प्राप्त भए। मुनिकों नमस्कार करि अपने पूर्वभव पूछे। चार ज्ञानके धारक मुनि श्रुतसागर संक्षेपताकरि पूर्वभव कहते भए कि हे राजन्! पोदनापुरविषै हित नामा एक मनुष्य, ताके माधवी नामा स्त्री, ताकै प्रीतम नामा तू पुत्र भया। अर ताही नगरविषै राजा उदयाचल, राणी उदयश्री, ताका पुत्र हेमरथ राज करै। सो एक दिन जिनमंदिरविषै महापूजा करवाई। वह पूजा आनन्दकी करणहारी है, सो ताके जयजयकार शब्द सुनकर तूने भी जयजयकार शब्द किया सो पुण्य उपार्ज्या। कालपाय मुवा, अर यक्षोंमें महायक्ष हुवा। एकदिन विदेहक्षेत्रविषै कांचनपुर नगरके वनमें मुनियोंको पूर्वभवके शत्रुने उपसर्ग किया सो यक्षने ताको डराकर भगा दिया अर मुनिनकी रक्षा करी, सो अति पुण्यकी राशि उपार्जी। कईएक दिन आयु पूरी करि यक्ष तडिद्वेग नामा विद्याधर, ताकी श्रीप्रभा स्त्रीके उदित नामा पुत्र भया। अमरविक्रम विद्याधरोंके ईश वंदनाके निमित्त मुनिके निकट आये थे। तिनको देखकरि निदान किया। महा तपकर दूसरे स्वर्ग जाय तहांतै चयकर तू मेघवाहनके पुत्र हुवा। हे राजा! तूने सूर्यके रथकी नाईं संसारमें भ्रमण किया। जिह्वाका लोलुपी स्त्रियोंके वशवर्ती होय, तैं अनन्तभव धरे। तेरे शरीर या संसारमें एते व्यतीत भए जो उनको एकत्र करिए तो तीनलोकमें न समावें। अर सागरोंकी आयु स्वर्गविषै तेरी भई। जब स्वर्गहीके भोगनितैं तू तृप्त न भया तो विद्याधरोंके अल्प भोगनितैं तू कहा तृप्त होइगा? अर तेरी आयु भी अब आठ दिन बाकी है, यातैं स्वप्न इन्द्रजाल समान जे भोग तिनतैं निवृत होहु। ऐसा सुन अपना मरण जान्या तोहू विषादको न प्राप्त भया। प्रथम तो जिन चैत्यालयविषै बडी पूजा कराई। पीछे अनन्त संसारके भ्रमणतै भयभीत होकर अपने बडे पुत्र अमररक्षको राज देय, अर लघु-पुत्र भानुरक्षको युवराजपद देय, आप परिग्रहको त्यागकरि तत्त्वज्ञानविषै मग्न होय, पाषाणके थंभ

तुल्य निश्चल होय ध्यानम तिष्ठे, अर लोभकर रहित भए । खानपानका त्यागकर शत्रुमित्रमें समान बुद्धि धार निश्चल होय कर मौनव्रतके धारक समाधिमरणकरि स्वर्गविष उत्तम देव भए ।

अथानन्तर किन्नरनाद नामा नगरविष श्रीधर नामा विद्यार राजा, ताके विद्या नामा राणी, ताक अरिजयानामा कन्या, सो अमररक्षने परणी । अर गंधर्वगीतनगरविष सुरसन्निभ राजा, ताके पुत्री गंधर्वा सो भानुरक्षने परणी । बडे भाई अमररक्षके दश पुत्र भए, अर देवांगना समान छह पुत्री भईं, जिनके गुण ही आभूषण ह । अर लघु भाई भानुरक्षके दश पुत्र अर छह पुत्री भईं । सो उन पुत्रोनें अपने अपने नामके नगर बसाए । कसे ह वे पुत्र ? शत्रुनिके जीतनेहारे, पृथ्वीके रक्षक हैं । हे श्रेणिक ! उन नगरोक नाम सुनो—सन्ध्याकार १, सुवेल २, मनोह्लाद ३, मनोहर ४, हंसद्वीप ५, हरि ६, जोध ७, समुद्र ८, कांचन ९, अर्धस्वर्ग १०, ए दश नगर तो अमररक्षके पुत्रनिने बसाए । अर आवर्तनगर १, विघट २, अम्भोद ३, उतकट ४, स्फुट ५, रतुग्रह ६, तट ७, तोय ८, आवली ९, रत्न-द्वीप १० ये दश नगर भानुरक्षके पुत्रोने बसाए । कसे हैं वे नगर ? जिनमें नानाप्रकारके रत्नोसे उद्योत होरहा ह, सुवर्णकी भांति तिनकरि देदीप्यमान वे नगर क्रीडाके अर्थी राक्षसोके निवास होते भए । बडे बडे विद्याधर देशान्तरोके वासी तहां आये, महा उत्साहकरि निवास करते भए ।

अथानन्तर पुत्रनिको राज देय अमररक्ष भानुरक्ष यह दोनो भाई मुनि होय महातपकर मोक्षपद को प्राप्त भए । या भांति राजा मेघवाहनके वंशमें बडे बडे राजा भए । ते न्यायवत प्रजापालन कर सकल वस्तुनित विरक्त होय मुनिके व्रत धार कईएक मोक्षको गए, कईएक स्वर्गविष देव भए । ता वंशविषै एक राजा महारक्ष भए, तिनकी राणी मनोवेगा, ताके पुत्र राक्षस नामा राजा भए । तिनके नामते राक्षसवंश कहाया । ये विद्याधर मनुष्य है, राक्षसयोनि नाहीं । राजा राक्षसके राणी सुप्रभा, ताके दोय पुत्र भए । आदित्यगति नामा बडा पुत्र अर छोटा बृहत्कीर्ति । ये दोऊ चन्द्र सूर्य समान अन्यायरूप अंधकारको दूर करते भए । तिन पुत्रनिको राज देय राजा राक्षस मुनि होय देवलोक गए।

राजा आदित्यगति राज्य करै, अर छोटा भाई युवराज हुवा। बडे भाईकी स्त्री सदनपद्मा अर छोटे भाईकी स्त्री पुष्पनखा भई। आदित्यगतिका पुत्र भीमप्रभ भया। ताकै हजार राणी देवांगना समान, अर एकसौ आठ पुत्र भए सो पृथ्वीके स्तम्भ होते भए। उनमें बडे पुत्रको राज्य देय राजा भीमप्रभ वैराग्यको प्राप्त होय परमपदको प्राप्त भए। पूर्व राक्षसनिके इन्द्र भीम सुभीमने कृपाकर मेघवाहनको राक्षसद्वीप दिया सो मेघवाहनके वशमें बडे बडे राजा राक्षसद्वीपके रक्षक भए। भीमप्रभका बडा पुत्र पूजार्ह सोहू अपने पुत्र जितभास्करकों राज्य देय मुनि भए। अर जितभास्कर सपरकीर्ति नामा पुत्र को राज्य देय मुनि भए। अर सपरकीर्ति सुग्रीव नामा पुत्रको राज्य देय मुनि भए। सुग्रीव हरिग्रीव को राज्य देय उग्रतपकरि देवलोक गया। अर हरिग्रीव श्रीग्रीवको राज्य देय वैराग्यको प्राप्त भए। अर श्रीग्रीव सुखमुख नामा पुत्रको राज्य देय मुनि भए। अपने बडो ही का माग अंगीकार किया अर सुखमुख भी सुव्यक्तको राज देय आप परम ऋषि भए। अर सुव्यक्त अमृतवेगको राज देय वैरागी भए। अर अमृतवेग भानुगतिको राज देय यति भए। अर देहू चिंतागतिको राज देय निश्चिन्त भए, मुनिव्रत आदरतैं भये, अर चिन्तागति भी इन्द्रको राजदेय मुनीन्द्र भए। या भांति राक्षसवंशमें अनेक राजा भये। तथा राजा इन्द्रके इन्द्रप्रभ, ताकै मेघ,ताकै मृगीदमन, ताकै इन्द्रजीत, ताकै भानुवर्मा, ताकै भानु सूर्यसमान तेजस्वी, ताकै मुरारी, ताकै त्रिजित्, ताकैभीम, ताकै मोहन,ताकै उद्धारक, ताकै रवि, ताकै चाकार, ताकै वज्रमध्य, ताकै प्रबोध, ताकै सिंहविक्रम, ताक चामु ड, ताकै मारण, ताक भीष्म, ताकै द्युपवाहन, ताकै अरिमदन, ताकै निर्वाणभक्ति, ताक उग्रश्री, ताकै अर्हद्भक्त, ताकै अनुत्तर, ताकै गतभ्रम, ताकै अनिल, ताकै लंक, ताकै चंड, ताकै मयूरवाहन, ताकै महाबाहु, ताक मनोरम्य, ताकै भास्करप्रभ, ताकै बृहद्गति, ताकै बृहत्कांत, अर ताकै अरिसंत्रास, ताकै चन्द्रावत, ताकै महारव, ताकै मेघध्वान, ताकै ग्रहक्षोभ, ताकै नक्षत्रदमन। या भांति कोटिक राजा भए। बडे विद्याधर महाबल करि मंडित, महाकांतिके धारी, पराक्रमी, परदाराके त्यागी, निजस्त्रीमें है संतोष जिनके, ऐसे लंकाकेस्वामी,महासुन्दर,

अस्त्रशस्त्रकलाके धारक, स्वर्गलोकके आए अनेक राजा भए। ते अपने पुत्रनिकों राज देय, जगततैं उदास होय, जिनदीक्षा धारि, कईएक तो कर्म काट निर्वाणको गए, जो तीन लोकका शिखर है। अर कईएक राजा पुण्यकें प्रभावतै प्रथमस्वर्गको आदि देय सर्वार्थसिद्धिपर्यन्त प्राप्त भए। या भांति अनेक राजा व्यतीत भए—जैसैं स्वर्गविषै इन्द्र राज्य करै। लंकाका अधिपति धनप्रभ ताकी राणी पद्माका पुत्र कीर्तिधवल प्रसिद्ध भया। अनेक विद्याधर जिसके आज्ञाकारी, जैसे स्वर्गमें इन्द्र राज करै तैसे लंकामें कीर्तिधवल राज करता भया। या भांति पूर्वभवविषैं किया जो तप, ताके बल करि यह जीव देवगतिके तथा मनुष्यगतिके सुख भोगवै है। अर सर्वत्यागकर महाव्रत धरि, आठ कर्म भस्म करि सिद्ध होय है। अर जे पापी जीव खोटे कर्मनिविषैं आसक्त हैं ते याही भवविषैं लोकनिंद्य होय मरकर कुयोनिमें जाय है। अर अनेक प्रकार दुःख भोगवै हैं। ऐसा जान पापरूप अंधकारके हरवेको सूर्य समान जो शुद्धोपयोग ताको भजो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषैं राक्षसका कथन आदि है एसा पांचवां अधिकार संपूर्ण भया ॥५॥

अथानन्तर गौतम स्वामी कहै हैं—हे राजा श्रेणिक! यह राक्षसवंश अर विद्याधरनिके वंशका वृत्तांत तो तुझसे कह्या। आगै वानर वंशनिका कथन सुन। स्वर्ग समान जो विजयार्धगिरि ताकी दक्षिणश्रेणी विषैं मेघपुर नामा नगर ऊंचे महलों से शोभित है। तहां विद्याधरनिका राजा अतींद्र पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध भोगसंपदामें इन्द्रतुल्य, ताकै श्रीमती नामा रानी लक्ष्मी समान हुई। ताके मुखकी चांदनीकरि सदा पूर्णमासी समान प्रकाश होय है। ताकै श्रीकंठ नामा पुत्र भया। शास्त्रमें प्रवीण, जिसके नामको सुनकरि विचक्षण पुरुष हर्षको प्राप्त होंय। अर ताकै छोटी बहिन महामनोहर देवी नामा हुई, जाके नेत्र कामके बाण ही है।

अथानन्तर रत्नपुर नामा नगर अति सुन्दर तहां पुष्पोत्तर नाम राजा विद्याधर महाबलवान, ताकै

पद्माभा नाम पुत्री देवांगना समान अर पद्मोत्तर नामा पुत्र महा गुणवान, जाकै देखनेतैं अति आनंद होय। सो राजा पुष्पोत्तर अपने पुत्रके निमित्त राजा अतीन्द्रकी पुत्री देवीको बहुत बार याचना करी, तोहू श्रीकंठ भाई ने अपनी बहिन लंका के धनी कीर्तिधवलकों दीनी, अर पद्मोत्तरको न दीनी। यह बात सुन राजा पुष्पोत्तरने अति कोप किया, अर कहा कि देखो हममें कुछ दोष नाहीं। दारिद्र दोष नाहीं, मेरा पुत्र कुरूप नाहीं, अर हमारे उनके कुछ वैर भी नाहीं, तथापि मेरे पुत्रको श्रीकंठने अपनी बहिन न परणाई, यह क्या युक्त किया ?

एक दिन श्रीकंठ चैत्यालयनिकी वंदनाके निमित्त सुमेरु पर्वत पर विमानमैं बैठकर गए। कैसा है विमान? पवन समान वेगवाला, अर अतिमनोहर है। सो वंदनाकर आवते हुते। मार्गमें पुष्पोत्तरकी पुत्री पद्माभाका राग सुण्या, अर वीनका बजाना सुण्या। कैसा है राग ? मन और श्रोत्रका हरनहारा, सो राग सुन मन मोहित भया। तब अवलोकन किया, सो गुरु समीप संगीत गृहविषै वीण बजावती पद्माभा देखी। ताके रूपसमुद्रविषै उसका मन मग्न होगया, मनकूं काढिवेको असमर्थ भया। वाँकी ओर देखता रह्या। अर यह भी अति रूपवान, सो याके देखवेकरि वह भी मोहित भई। ये दोनो परस्पर प्रेमसूतकर बंधे। सो ताका मन जान श्रीकंठ ताहि आकाशमैं लेयचल्या। तब परिवारके लोगोंने राजा पुष्पोत्तरपै पुकार करी कि तुम्हारी पुत्रीको राजा श्रीकंठ लेगया। सो राजा पुष्पोत्तरके पुत्रकी श्रीकंठ ने अपनी बहिन न परणाई, ताकरि वह क्रोधरूप था ही। अब अपनी पुत्रीके हरवेकरि अत्यन्त कुपित होय सब सेना लेय श्रीकंठके मारवेको पीछे लग्या। दांतनिकरि होंठनिको पीसता, क्रोधकरि जिसके नेत्र लाल हो रहे हैं, ऐसे महाबलीको आवते देख श्रीकंठ डरया। अर भाजकर अपने बहनेऊ लंकाके धनी कीर्तिधवलकी शरण आया। सो समय पाय बडोंके शरणै जाय यह न्यायही है। राजा कीर्तिधवल श्रीकंठको देखि अपना साला जान बहुत स्नेह करि साम्हा आय मिल्या, छातीसों लगाय बहुत सन्मान किया। इनमें आपसमें कुशलवार्ता हो रही थी कि पुष्पोत्तर सेना सहित आकाशमें आए। कीर्तिधवल

ने उनको दूरतै देख्या । राजा पुष्पोत्तरके संग अनेक विद्याधरोके समूह महा तेजवान हैं । खड्ग, सेल, धनुषबाण इत्यादि शस्त्रनिके समूहकरि आकाशमे तेज होय रह्या है । ऐसे मायामई तुरंग—वायुके समान है वेग जिनका, अर काली घटासमान मायामई गज—चलायमान है घटा अर सूंड जिनकी, मायामई सिंह, अर बड़े २ विमान तिनकरि मंडित आकाश देख्या । उत्तर दिशाकी ओर सेनाका समूह देख राजा कीर्तिधवल क्रोधसहित हँसकर मन्त्रियोको युद्ध करनेकी आज्ञा दीनीं । तदि श्रीकंठ लज्जात नीचे होय गए । अर श्रीकंठने कीर्तिधवलसे कह्या जो मेरी स्त्री अर मेरे कुटुम्बकी तो रक्षा आप करो अर मैं आपके प्रतापतै युद्धमें शत्रुनिको जीत आऊंगा । तब कीर्तिधवल कहते भए कि यह बात तुमको कहना अयुक्त है । तुम सुखसो तिष्ठो, युद्ध करनेको हम घने ही हैं । जो यह दुर्जन नरमीतैं शांत होय, तौ भला ही है, नहीं तो इनको मृत्युके मुखमैं देखोगे । ऐसा कहि अपने स्त्रीके भाईको सुखसे अपने महलमैं राखि पुष्पोत्तरके निकट बडी बुद्धिके धारक दूत भेजे । ते दूत जाय पुष्पोत्तरसो कहते भए । जो हमारे मुखतैं तुमको राजा कीर्तिधवल बहुत आदरत कहे है—कि तुम बड़े कुलमें उपजे हो, तुम्हारी चेष्टा निर्मल है । तुम सब शास्त्रके वेत्ता हो, जगतमें प्रसिद्ध हो, अर सबनिमैं वयकर बड़े हो । तुमने जो मर्यादाकी रीत देखी है सो काहूने काननिसे सुनी नाहीं । यह श्रीकंठ हू चन्द्रमाकी किरण समान निर्मल कुलविषै उपज्या है । अर धनवान है, विनयवान है, सुन्दर है, सबकलामैं निपुण है, यह कन्या ऐसे ही वरको देने योग्य है । कन्याके अर याके रूप अर कुल समान है । तातैं तुम्हारी सेनाका क्षय कौन अर्थ करावना ? यह तो कन्यानिका स्वभाव ही है कि जो पराए गृहका सेवन करै । दूत जबलग यह बात कह ही रहे थे कि पद्माभाकी भेजी सखी पुष्पोत्तरके निकट आई, अर कहती भई कि तुम्हारी पुत्रीने तुम्हारे चरणारविंदको नमस्कार कर वीनती करी है । जो मैं तो लज्जा करि तुम्हारे समीप नहीं आई, तातै सखीको पठाई है । 'हे पिता ! याँ श्रीकंठका रंचमात्रहू दूषन नाहीं, अल्पहू अपराध नाहीं । मैं कर्मानुभव करि याके संग आई हूं । जे बड़े कुलमें उपजी स्त्री हैं तिनके एक ही

वर होय है, तातैं यां टालि (इसके सिवाय) मेरे अन्य पुरुषका त्याग है। ऐसैं आय सखीने वीनती करी तब राजा सचिन्त होय रहे, मनमें विचारी कि मैं सब बातोंमे समर्थ हूं, युद्धमें लंकाके धनीको जीत श्रीकंठ को बांधकर ले जाऊं। परन्तु मेरी कन्याहीने इसको वरया, तो मैं याकूं कहा कहूं? ऐसा जान युद्ध न किया। अर जो कीर्तिधवलके दूत आये हुते तिनको सन्मान करि विदा किये। अर जो पुत्रीकी सखी आई थी ताको भी सन्मानकर विदा दीनी। ते हर्ष करि भरे लंका अर राजा पुष्पोत्तर सब अर्थ के वेत्ता पुत्रीकी वीनतीतें श्रीकंठ पर क्रोध तजि अपने स्थानको गए।

अथानन्तर मार्गशिर सुदी पडवाके दिन श्रीकंठ अर पद्माभा का विवाह भया। अर कीर्तिधवलने श्रीकंठसों कही जो 'तुम्हारे वैरी विजयार्धमें बहुत हैं, तातैं तुम इहां ही समुद्रके मध्यमें जो द्वीप है तहां तिष्ठो, तुम्हारे मनको जो स्थानक रुचे सो लेवो, मेरा मन तुमको छांडि नाहीं सकै है। अर तुमहू मेरी प्रीतिका बंधन तुडाय कैसैं जावोगे? ऐसे श्रीकंठसों कहिकर अपने आनन्दनामा मंत्रीसों कही—'जो तुम महाबुद्धिमान हो, अर हमारे दादेके मुंह आगिले हो, तुमतें सार असार किछू छाना नाहीं। या श्रीकंठके योग्य जो स्थानक होय सो बताओ। तदि आनन्द कहते भये कि—महाराज! आपके सब ही स्थानक मनोहर हैं। तथापि आपही देखकरि जो दृष्टिमें रुचै सो देहु। समुद्रके मध्यमें बहुत द्वीप हैं, कल्पवृक्षसमान वृक्षोंसे मंडित जहां नाना प्रकारके रत्ननिकरि शोभित बडे बडे पहाड हैं। जहां देव क्रीडा करै हैं। तिन द्वीपोंमें महारमणीक नगर हैं, जहां स्वर्ण रत्ननिके महल हैं, सो तिनके नाम सुनहु—सन्ध्याकार, सुवेल, कांचन, हरिपुर, जोधन, जलधिध्वान, हंसद्वीप, भरक्षमंठ अर्धस्वर्ग, कूटावर्त, विघट, रोधन, अमलकांत, स्फुटतट, रत्नद्वीप, तोयावली, सर अलंघन, नभोभान, क्षेम इत्यादि मनोज्ञ स्थानक हैं। जहां देव भी उपद्रव न कर सकैं। यहांतैं उत्तरभागविषैं तीनसौ योजन समुद्रके मध्य वानरद्वीप है, जो पृथ्वीमें प्रसिद्ध है, जहां अवांतरद्वीप बहुत ही रमणीक हैं। कईएक तो सूर्य-कांत मणिनकी ज्योतिसे देदीप्यमान हैं। अर कईएक हरितमणिनिकी कांतिकरि ऐसे शोभै हैं मानो

उगते हरे तणोसे भूमि व्याप्त होय रही ह । अर कईएक श्याम इन्द्रनीलमणिकी कातिके समूहसे ऐसे शोभ है मानो सूयके भयत अधकार वहा शरण आयकरि रह्या ह । अर कहू लाल जे पद्मरागमणिनके समूहकरि मानो रक्त कमलोका वन हो शोभ है । अर जहा ऐसी सुगध पवन चाल ह कि आकाशमे उडते पक्षी भी सुगधसे मग्न हो जाय ह, अर तहा वृक्षनिपर आय बठे ह । अर स्फटिकमणिनिके मध्य मिली जो पद्मरागमणि तिनकरि सरोवरमे कमल जाने जाय ह । उन मणिनिकी ज्योति करि कमलनिके रग न जाने जाय ह । जहा फूलनिकी बासत पक्षी उन्मत्त भए ऐस उन्मत्त सुन्दर शब्द करै है मानो समीपके द्वीपनिसो अनुराग भरी बात कर ह । जहा औषधिनिकी प्रभाके समूहकरि अधकार दूर होय ह, सो अधारे पक्षमे भी उद्योत ही रह ह । जहा फल पुष्पनिकरि मडित वृक्षोका आकार छत्र समान ह । जिनके बडे बडे डाले ह, उनपर पक्षी मिष्ट शब्द कर रहे ह । जहा बिना बाहे धान आपसे ही उगे ह । कसे ह वे धान ? वीय, अर कातिको विस्तीरणहारे सो मद पवनकरि हिलते हुए शोभ ह । तिनकरि पथ्वी मानो कचुकी (चोली) पहरे ह । अर जहा लालकमल फूल रहे ह । जिनपर भ्रमरोके समूह गु जार कर ह, सो मानो सरोवरी ही नेत्रनिकरि पथ्वीका विलास देख ह । नीलकमल तो सरोवरीनके नेत्र भए, अर भमर भोह भए । जहा पौढे अर साठानिकी विस्तीण बाड ह । सो पवनकरि हालनेत शब्द कर ह । ऐसा सुन्दर बानरद्वीप है । उसके मध्यविष किहकु दा नामा पवत ह । वह पवत रत्न अर स्वणकी शिलाके समूहकरि शोभायमान ह । जसा यह त्रिकुटाचल मनोज्ञ ह, तसा ही किहकु द पवत मनोज्ञ ह । अपने शिखरनिकरि दिशारूपी कांताको स्पश कर हैं । आनन्द मन्त्रीके ऐसे वचन सुनकर राजा कीर्तिधवल बहुत आनन्द रूप भए, अर बानरद्वीप श्रीकठको दिया । तब चतके प्रथम दिन श्रीकठ परिवारसहित वानरद्वीपमे गए । मागमे पृथ्वीको शोभा देखते चले जाय ह । वह पथ्वी नीलमणिनिकी ज्योतिकरि आकाश समान शोभ ह, अर महाग्रहोके समूहकरि सयुक्त समुद्रको देखि आश्चयको प्राप्त भए वानरद्वीप जाय पहुँचे । वानरद्वीप मानो दूसरा स्वग ही

है । अपने नीझरनोके शब्दसे मानो राजा श्रीकंठको बुलाव ही है । नीझरनेके छींटे आकाशको उछलै है, सो मानो राजाके आवेकरि अति हर्षको प्राप्त भए आनन्दकर हंसै है । नानाप्रकारकी मणिनिकी कांतिकरि उपज्या जो कांतिका सुन्दर समूह ताकरि मानो तोरणनिके समूह ही ऊंचे चढ रहे हैं । अब राजा वानरद्वीपमें उतरे, अर सब ओर चौगिरद अपनी नीलकमलसमान दृष्टि सर्वत्र विस्तारी । छुहारे, आंवले, कैथ, अगरचन्दन, लाख, पीपरली, अर्जुन कहिए सहीजणा अर कदम्ब, आमली, चारोली केला, दाडिम, सुपारी, इलायची, लवंग, मौलश्री अर सब जातिके मेवोंसे युक्त नानाप्रकारके वृक्षनिकरि द्वीप शोभायमान देख्या । ऐसी मनोहर भूमि देखी जिसके देखे और ठौर दृष्टि न जाय । जहां वृक्ष सरल अर विस्तीर्ण ऊपरि छत्रसे बन रहे हैं । सघन सुन्दर पल्लव अर शाखा फूलनिके समूहकरि शोभै है, अर महा रसीले स्वादिष्ट, मिष्ट फलनिकर नमीभूत होय रहे हैं । अर वृक्ष अति रसीले, अति ऊंचे हू नाहीं अति नीचे हू नाहीं, मानो कल्पवृक्ष ही शोभै हैं । अर जहां बेलनिपर फूलोंके गुच्छे लगरहे है, जिनपर भ्रमर गुंजार करै है सो मानो यह बेलि तो स्त्री है, उनके जो पल्लव है सो हाथोंकी हथेली हैं, अर फूलोंके गुच्छे कुच है, अर भ्रमर नेत्र है, वृक्षोंसे लग रहे है । अर ऐसे ही तो सुन्दर पक्षी बोलै है, अर ऐसे ही मनोहर भ्रमर गुंजार करै है, मानो परस्पर आलाप करै है । जहां कईएक देश तो स्वर्णसमान कांतिको धरै है, कईएक कमल समान, कईएक वैडूर्य मणि समान है । ते देश नानाप्रकार के वृक्षनिकरि मंडित है, जिनको देखकर स्वर्गभूमि हू नाहीं रुचै है । जहां देव क्रीडा करै है । जहां हंस सारिस, सूवा, मैना, कबूतर, कमेडी इत्यादि अनेक जातिके पक्षीनिके युगल क्रीडा करै है । जहां जीवनिको किसीप्रकारकी बाधा नाहीं । नानाप्रकारके वृक्षनिकी छायाके मंडप, रत्न स्वर्णके अनेक निवास, पुष्पनिकी अति सुगंधी, ऐसे उपवनमें सुन्दर शिलानिके ऊपर राजा जाय विराजे, अर सेना भी सकल वनमें उतरी । हंसो, सारिसो, मयूरोंके नाना प्रकारके शब्द सुने अर फल फूलोंकी शोभा देखी । सरोवरनिमें मीन केल करते देखे । वृक्षोंके फूल गिरै है, अर पक्षियोंके शब्द होय रहे हैं । सो मानों वह

बन राजाके आवनेत फूलनिकी वर्षा ही करै है, अर जयजयकार शब्द कर ह। नानाप्रकारके रत्ननि-करि मडित पथ्वीमडल की शोभा देखि विद्याधरनिका चित्त बहुत सुखी भया। बहुरि नन्दनवन सारिखा वह बन ताम राजा श्रीकठने क्रीडा करते सते बहुत बानर देखे। जिनकी अनेक प्रकारकी चेष्टा ह। राजा देखकरि मनमें चितवने लगा कि--तियच योनिके ये प्राणी मनुष्य समान लीला कर ह। जिनके हाथ पग मव आकार मनुष्यकासा ह, सो इनकी चेष्टा देखि राजा चकित होय रह। निकटवर्ती पुरुष निसो कही जो 'इनको मेरे समीप लाओ'। सो राजाकी आज्ञात कईएक बानरनिको पकरि लाए सो राजाने उनको बहुत प्रीतिसौं राखे। अर तिनिको नत्य करणा सिखाया, अर उनके सफेद दात दाडिमके फूलनिसो रगकर तमाशे देखे। अर उनके मुखमें सोनेके तार लगाय कौतूहल करावता भया। वे आपसमे परस्पर जूवा काढ तिनके तमाशे देखे, अर वे आपसम स्नेह कर, वा कलह कर तिनके तमाशे देखे। राजाने ते कपि पुरुषनिकू रक्षा निमित्त सोपे। अर मीठे मीठे भोजनकरि तिनको पोखे। तिन बानरोको साथ लेकर किहकु द पवत पर चढे। राजाका चित्त सु दर वक्ष बेलि पानीके नीझरणो से हरा गया। तहा पवतके ऊपर विषमतारहित विस्तीण भूमि देखी। तहा किहकु द नामा नगर बसाया। कसा है वह नगर? जहा बरियोका मन भी प्रवेश न कर सक। चौदह योजन लबा और चौवह योजन चौडा, अर जो परिक्रमा करिए तो वियालीस योजन कछुइक अधिक होय। जाके मणियोके कोट, रत्नोके दरवाजे वा रत्नोके महल। रत्नोका कोट इतना ऊचा ह कि अपने शिखरकरि मानो आकाशसो ही लग रह्या ह, अर दरवाजे ऊचे मणियो से ऐसे शोभ ह मानो यह अपनी ज्योतिसे थिरीभूत होय रहे है। घरनिकी देहली पद्मराग मणिनकी ह, सो अत्य त लाल ह, मानो यह नगरी नारी स्वरूप ह, सो ताबूलकरि अपने अधर (होंठ) लाल कर रही ह। अर दरवाजे मोतिनकी मालाकरि युक्त ह, सो मानो समस्त लोकको सपदाको हसै ह। अर महलनिके शिखरिन पर च द्रकाति मणि लगि रही ह, सो रात्रिम ऐसा भासै ह, मानो अधेरी रात्रिम च द्र उग रहा ह। अर नानाप्रकारके रत्नोकी प्रभाकी पक्ति करि मानो ऊचे तोरण चढ़ रहे

हैं। तहा घरनिकी पक्ति विद्याधरनिकी बनाई हुई बहुत शोभ है। घरनिके चौक मणिनके हैं, अर जहाँ नगरके राजमाग बाजार बहुत सीधे ह, तिनमें वक्रता नाहीं। अति विस्तीण हैं, मानो रत्ननिके सागर ही ह। सागर जलरूप ह, यह स्थलरूप ह। अर मन्दिरके ऊपर लोगोंने कबूतरनिके निवास निमित्त नीनमणिनिके स्थान कर राखे ह। सो कसे शोभ ह— मानो रत्ननिके तेजने अधकार नगरीत काढ दिया ह, सो शरण आयकर समीप पड्या ह। इत्यादि नगरका वणन कहा तक करिए। इन्द्र के नगरके समान वह नगर जिसमें राजा श्रीकठ पदमाभा राणीसहित जस स्वगविष शचीसहित सुरेश रमै ह, तस बहुतकाल रमते भए। जे वस्तु भद्रशालवनमें तथा सोमनसवनमें तथा नन्दनवनमें न पाइए ते राजाके वनमें पाई जावें।

एक दिन राजा महल ऊपर विराज रहे थे, सो अष्टाह्निकाके दिनोंमें इन्द्र चतुरनिकायके देवनि सहित नन्दीश्वर द्वीपको जाते देखे, अर देवनिके मुकुटनिकी प्रभाके समूहसे आकाशको अनेक रगरूप ज्योतिसहित देख्या। अर बाजा बजानेवालोके समूहकरि दशो दिशा शब्दरूप देखी। किसीको किसी का शब्द सुनाई न देव। कईएक देव मायामई हसनपर तथा तुरगनिपर तथा हसनि पर अनेकप्रकार के वाहननिपर चढे जाते देखे। सो देवोंके शरीरकी सुगधतासे दशोदिशा व्याप्त हो गई। तब राजा यह अद्भुत चरित्र देखि मनमें विचारी कि नदीश्वर द्वीपको देव जाय हैं। यह राजा हू अपने विद्याधरो सहित नदीश्वर द्वीपको जानेकी इच्छा करते भए। विना विवेक विमान पर चढकरि राणी सहित आकाशके पथसे चाले, परन्तु मानुषोत्तरके आगै इनका विमान न चल सक्या, देवता चले गए, यह अटक रहे। तब राजाने बहुत विलाप किया, मनका उत्साह भग होय गया। काति और ही होय गई। मनमें विचारैं हैं कि हाय! बडा कष्ट ह, हम हीनशक्तिके धनी विद्याधर मनुष्य अभिमानको धरें सो धिक्कार हैं हमको। मेरे मनमे यह हुती कि नन्दीश्वर द्वीपमें भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय हैं उनका मैं भावसहित दशन करूगा, अर महामनोहर नानाप्रकारके पुष्प, धूप, गध इत्यादि अष्ट

द्रव्यनिकरि पूजा करूंगा, बारबार धरतीपर मस्तक लगाय नमस्कार करूंगा, इत्यादि जो मनोरथ किये हुते ते पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मकरि मेरे मंदभागीके भाग्यमें न भए। अथवा मैंने आगै अनेक बार यह बात सुनी हुती कि मानुषोत्तर पर्वतको उल्लंघकर मनुष्य आगे न जाय है, तथापि अत्यन्त भक्ति रागकर यह बात भूल गया। अब ऐसे कर्म करूं जो अन्य जन्मविषै नन्दीश्वर द्वीप जाने की मेरी शक्ति हो। यह निश्चयकर वज्रकंठ नामा पुत्रको राजदेय सर्व परिग्रहको त्यागकर राजा श्रीकंठ मुनि भए। एक दिन वज्रकंठने अपने पिताके पूर्वभव पूछनेका अभिलाष किया। तब वृद्ध पुरुष वज्रकंठको कहते भए कि जो हमको मुनियोने उनके पूर्वभव ऐसे कहे हुते—जो पूर्वभवमें दो भाई वणिक हुते। तिनमें प्रीत बहुत हुती, सो स्त्रियोंने वे जुदे किए। तिनमें छोटा भाई दरिद्री अर बडा भाई धनवान। सो बडा भाई सेठकी संगतितैं श्रावक भया। अर छोटा भाई कुव्यसनी दुखसो दिन पूरे करै। बडे भाईने छोटे भाईकी यह दशा देखि बहुत धन दिया। अर भाईको उपदेश देय व्रत लिवाए, अर आप स्त्रीका त्यागकर मुनि होय समाधिमरण करि इन्द्र भए। अर छोटा भाई शांतपरिणामी होय, शरीर छोड देव हुवा। देवसे चयकरि श्रीकंठ भया। बडे भाईका जीव इन्द्र भया था, सो छोटे भाईके स्नेहतै अपना स्वरूप दिखावता संता नन्दीश्वर द्वीप गया सो इन्द्रको देखि राजा श्रीकंठको जातिस्मरण हुवा, सो वैरागी भए। यह अपने पिताका व्याख्यान सुन राजा वज्रकंठहू इन्द्रायुधप्रभ पुत्रको राज देय मुनि भए। अर इन्द्रायुधप्रभ भी इन्द्रभूत पुत्रको राज्य देय मुनि भए, तिनके मेरु, मेरुके मंदिर तिनके समीरणगति, तिनके रविप्रभ, तिनके अमरप्रभ पुत्र हुआ। सो लंकाके धनीकी बेटी गुणवती परणी, सो गुणवती राजा अमरप्रभके महलमें अनेक भांतिके चित्राम देखती भई। कहीं तो शुभ सरोवर देखे जिनमें कमल फूल रहे हैं, अर भ्रमर गुंजार कर हैं। कहीं नीलकमल फूल रहे हैं। हंसके युगल क्रीडा कर रहे हैं, जिनकी चूंचनिमें कमलनिके तंतु, ऐसे हंसनिके युगल क्रीडा कर हैं। अर क्रौंच, सारस इत्यादि अनेक पक्षियोंके चित्राम देखे सो प्रसन्न भई। अर एक ठौर पंच प्रकारके रत्नोंके चूर्णसे वानरोंके स्वरूप देखे।

वे विद्याधरोंने चितेरे ह, सो राणी वानरोके चित्राम देखि भयभीत होय कापने लगी। रोमाच होय आए। पसेवकी बूंदोसे माथेका तिलक बिगड गया, अर आखोके तारे फिरने लगे। राजा अमरप्रभ यह वृत्तात देखि घरके चाकरोसे बहुत खिझे कि मेरे विवाहमें ये चित्राम किसने कराए। मेरी प्यारी राणी इनको देखि डरी। तबि बडे लोगोने अरज करी कि महाराज! इसमें किसीका अपराध नहीं। आपन कही जो यह चित्राम कराणेहारे हमको विपरीत भाव दिखाया, सो ऐसा कौन है जो आपकी आज्ञा सिवाय काम कर? सबनिके जीवनमूल आप हो, आप प्रसन्न होयकर हमारी विनती सुनो।

आप तुम्हारे वशमें पृथ्वीपर प्रसिद्ध राजा श्रीकंठ भए। जिनने यह स्वर्ग समान नगर बसाया, अर नानाप्रकारके कौतूहलका धारणहारा जो यह देश ताके वे मूलकारण ऐसे होते भए जस कर्मोंका मूलकारण रागादिक प्रपच ह। वननिके मध्य लतागृहमे सुखसो तिष्ठी हुई किन्नरी जिनके गुण गाव ह, अर किन्नर हू गाव ह। इन्द्र समान जिनकी शक्ति थी ऐसे वे राजा, तिन्होने अपनी स्थिर प्रकृतितैं लक्ष्मीकी चचलता करि उपज्या जो अपयश सो दूर किया। सो राजा श्रीकंठ इन वानरो को देखकर आश्चर्य को प्राप्त भए अर इन सहित रमे, मीठे २ भोजन इनको दिये। अर इनके चित्राम कढाये। पीछे उनके वशमे जो राजा भए, तिनने मंगलीक कार्योंमें इनके चित्राम मँडाए, अर वानरनिसो बहुत प्रीत राखी? तात पूर्वरीत प्रमाण अब हू लिखे ह। ऐसा कह्या तबि राजा क्रोध तजि प्रसन्न होय आज्ञा करते भये—जो हमारे बडेनिने मंगलकार्यमें इनके चित्राम दिखाए तो अब भूमिमें मत डारो जहा मनुष्यनिके पाव लग, मैं इनको मुकुटविषै राखूंगा। अर ध्वजाओमें इनके चिन्ह कराओ, अर महलोके शिखर तथा छत्रोके शिखरपर इनके चिन्ह करावो। यह आज्ञा मन्त्रियोको करीसो मन्त्रियोने उस ही भाति किया। राजाने गुणवती राणीसहित परम सुख भोगते विजयार्धकी दोऊ श्रेणीके जीतने का मन किया। बडी चतुरग सेना लेकर विजयार्ध गये। राजाकी ध्वजाओमे अर मुकुटोमे कपिनिके चिन्ह ह। राजाने विजयार्ध जायकर दोऊ श्रेणी जीत करि सब राजा वश किए। सर्व देश अपनी

आज्ञामे किए। किसी का भी धन न लिया। जो बडे पुरुष ह तिनका वह व्रत है जो राजानिको नवाव, अपनी आज्ञामें कर, किसीका धन न हर। सो राजा विद्याधरनिको आज्ञामें कर पीछे किहकूपुर आए। विजयाधके बडे २ राजा साथ आए। सब विद्याधरोका अधिपति होय घने दिनतक राज्य किया। लक्ष्मी चचल हुती सो नीतिकी बेडी डालि निश्चल करी। तिनके पुत्र कपिकेतु भए, जिनके श्रीप्रभा राणी बहुत गुणकी धरणहारी। ते राजा कपिकेतु अपने पुत्र विक्रमसपन्नको राज्य देय वरागी भए। अर विक्रमसम्पन्न प्रतिबल पुत्रको राज्य देय वरागी भए। यह राज्यलक्ष्मी विषकी बेलके समान जानो। बडे पुरुषोके पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावकरि यह लक्ष्मी विना ही यत्न मिल ह। परन्तु उनके लक्ष्मीमें विशेष प्रीति नाहीं। लक्ष्मी को तजते खेद नाहीं होय ह। किसी पुण्यके प्रभावकरि राज्य-लक्ष्मी पाय देवोके सुख भोग फिर वराग्यको प्राप्त होयकर परमपदको प्राप्त होय ह। मोक्षका अवि-नाशी सुख उपकरणादि सामग्रीके आधीन नाहीं। निरन्तर आत्माधीन ह। वह महासुख अन्तरहित है, अविनश्वर ह। ऐसे सुखको कौन न वाछ ? राजा प्रतिबलके गगनानन्द पुत्र भए, तिनके खेचरा-नन्द, उसके गिरिनन्द, या भाति वानरवशियोके वशमें अनेक राजा भये। ते राज्य तजि वराग्य धर स्वग मोक्षको प्राप्त भए। इस वशके समस्त राजाओके नाम अर पराक्रम कौन कह सक ? जिसका जसा लक्षण होय सो तसा ही कहाव। सेवा कर तो सेवक कहाव, धनुष धार सो धनुषधारी कहाव, परकी पीडा टाल सो शरणगति प्रतिपाल होय क्षत्री कहाव, ब्रह्मचय पाल सो ब्राह्मण कहाव। जो राजा राज्य तजिकर मुनि होय सो मुनि कहाव। श्रम कहिये तप धार सो श्रमण कहावै। यह बात प्रकट ही ह—लाठी राख सो लाठीवाला कहाव, सेल राख सो सेलवाला कहाव। तसे यह विद्याधर छत्र ध्वजाओ पर वानरो के चिन्ह राखते भये तात वानरवशी कहाए। भगवान श्रीवासुपूज्यकेसमय राजा अमरप्रभ भए। तिनने वानरो के चिन्ह मुकुट छत्र ध्वजानिमें बनाए तबत इनके कुलमें यह रीति चली आई। या भाति सक्षेपतै वानर वशियोकी उत्पत्ति कही।

अथानन्तर या कुल विषै महोदधि नामा राजा भए, जिनके विद्युतप्रकाशा नामा राणी भई । वह राणी पतिव्रता स्त्रियोके गुण की निधान है, जिसने अपने विनय अंगकरि पतिका मन प्रसन्न किया है। राजाके सुन्दर सकडो रानी है, तिनकी यह राणी शिरोभाग्य है । महा सौभाग्यवती रूपवती ज्ञानवती है । उस राजाके महापराक्रमी एक सौ आठ पुत्र भये । तिनको राज्यका भार देय राजा महासुख भोगते भये । मुनिसुव्रतनाथके समयमें वानरवंशियनिमे यह राजा महोदधि भये । अर लंकामें विद्युतकेशके अर महोदधिके परम प्रीति भई । कैसे है ये दोऊ ? सकल प्राणियोके प्यारे, अर आपसमें एक चित्त, देह न्यारी भई तो कहा, सो विद्युतकेश मुनि भये । यह वृत्तांत सुन महोदधि भी वैरागी भए । यह कथा सुन राजा श्रेणिकने गौतम स्वामी सो पूछी–'हे स्वामी ! राजा विद्युतकेश किस कारणसे वैरागी भये ? तब गौतम स्वामीने कहा कि एक दिन विद्युतकेश प्रमदानामा उद्यानमें क्रीडा करनेको गये । कैसा है उद्यान ? जहा क्रीडाके निवास अति सुन्दर है, निर्मल जलके भरे सरोवर है, तिनमें कमल फूल रहे है । अर सरोवरनिमें नाव डार राखी है । वनमें ठौर ठौर हिंडोले है, सुन्दर बेल अर क्रीडा करने के सुवर्णके पर्वत, जिनके रत्नोके सिवाण, वृक्ष मनोज्ञ फल फूलनिकरि मंडित, जिनके पल्लवसौं हालती लता अति शोभै है, अर लताओसे लिपटि रहे है । ऐसे वनमें राजा विद्युतकेश राणियोके समूह विषै क्रीडा करते हुते । कैसी है राणी ? मनकी हारणहारी, पुष्पादिकके चूंटनेमे आसक्त है । जिनके पल्लव समान कोमल सुगंध हस्त अर मुख की सुगंध करि भ्रमर जिनपर भ्रमै है । क्रीडाके समय राणी श्रीचन्द्राके कुच एक वानरने नखनि तै विदार, तदि राणी खेदखिन्न भई । रुधिर आय गया । राजाने राणीको दिलासा देय करि अज्ञानभावतै वानरको बाणतै बींध्या सो वानर घायल होय एक गगन-चारण महामुनिके पास जाय पड्या । वे दयालु बानरको कांपता देखि दयाकरि पंचनमोकार मन्त्र देते भये । सो बानर मरकर उदधिकुमार जातिका भवनवासी देव उपज्या । यहा वनमे वानरके मरण पीछै राजाके लोक अन्य बानरोको मार रहे थे सो उदधिकुमारने अवधिसे विचारकर बानरो को

मारते जान, मायामई वानरो की सेना बनाई । वे वानर ऐसे बने, जिनकी दाढ विकराल, वदन विकराल, भोंह विकराल, सिंदूर सारिखा लाल मुखसो डरानेवारे शब्दको कहते हुवे आये । कईएक हाथमें पर्वत धरें, कईएक मूल से उपारे वृक्षोको धर, कईएक हाथनिसो धरती कूटते सते, कईएक आकाशमें उछलते सते, क्रोधके भारकर रौद्र है अंग जिनका, उन्होंने आय राजाको घेरया, अर कहते भये—अरे दुराचारी? सम्हार तेरी मृत्यु आई है । तू बानरोकूं मारकरि अब किसकी शरण जायगा ?

तब विद्युतकेश डरया अर जान्या कि यह वानरोका बल नाहीं, देवमाया है । तब देहकी आशा छोडि महामिष्ट बाणी करके विनती करता भया कि—"महाराज! आज्ञा करो, आप कौन हो, महा-देदीप्यमान प्रचंड शरीर जिनके, यह बानरनिकी शक्ति नाहीं । आप देव है ।" तदि राजाको अति विनयवान देखि महोदधि कुमार बोले "हे राजा! बानर पशु जाति जिनका स्वभाव ही अति चञ्चल है, उनको तैंने स्त्रीके अपराधसो हते, सो मैं साधुके प्रसादसे देव भया । मेरी विभूति तू देखि ।" राजा कांपने लग्या, हृदयविषै भय उपज्या, रोमांच होय आए । तब महोदधि कुमारने कही—"तू मत डर ।' तब इसने कह्या, कि "जो आप आज्ञा करो सो करूं ।" तब देव इसको गुरुके निकट लेय गया । वह देव अर राजा ये दोनो मुनिकी प्रदक्षिणा देय नमस्कार कर जाय बैठे । देवने मुनिसो कही कि—"मैं बानर हुता सो आपके प्रसादत देव भया, अर राजा विद्युतकेशने मुनिसो पूछ्या कि मुझे क्या कर्तव्य है । मेरा कल्याण किस तरह होय ? तदि मुनि चार ज्ञानके धारक हुते सो तपोधन कहते भए—कि हमारे गुरु निकट ही है, उनके समीप चालो । अनादिकालका यह धर्म है कि गुरुओंके निकट जाय धर्म सुनिये । आचार्यनिके होते सते जो उनके निकट न जाय अर शिष्य ही धर्मोपदेश देय तो वह शिष्य नहीं, कुमार्गी है, आचारसे भ्रष्ट है । ऐसा तपोधनने कह्या तब देव अर विद्याधर चित्तमें चिंतवते भये कि ऐसे महापुरुष हैं, तो भी गुरुकी आज्ञा बिना उपदेश नाहीं करै हैं । अहो! तपका माहात्म्य अति अधिक है । मुनिकी आज्ञासे वह अर देव विद्याधर मुनिके गुरुप गये । जहां जायकर तीन प्रदक्षिणा

देय नमस्कारकर गुरुक निकट न अति नीरे न घने दूरे बठे । महामुनिकी मूर्ति देखि देव अर विद्याधर आश्चयको प्राप्त भये । कसी ह महामुनिकी मूर्ति ? तपकी राशिकर उपजी जो दीप्ति ताकरि देदीप्यमान हे । देखकरि नेत्रकमल फूल गये । महा विनयवान होय देव अर विद्याधर धमका स्वरूप पूछते भये ।

कसे ह मुनि ? जिनका मन प्राणियोके हितमें सावधान ह, अर रागादिक जो ससारके कारण हैं तिनके प्रसगसे दूर ह । जस मेघ गम्भीर ध्वनिकरि गर्जे अर बरस, तस महागम्भीर ध्वनिकर जगतके कल्याणके मिमित्त परम धमरूप अमत बरसाते भए । जब मुनि ज्ञानका व्याख्यान करने लगे तबि मेघकासा नाद(शब्द)जान लताओके मडपमे जो मयूर तिष्ठे थे वो नत्य करते भए । मुनि कहते भए— अहो देव विद्याधरो ! तुम चित्त लगाय सुनो, तीन भवका आनन्द करणहारे श्रीजिनराजने जो धम का स्वरूप कह्या है सो म तुमको कहू हू । कईएक जो प्राणी नीचबुद्धि ह, विचार रहित जडचित्त ह, ते अधमहीको धम जानि सेव ह । जो मागको न जान सो घने कालमे भी मनवाछित स्थानको न पहुचे । मदमति मिथ्यादृष्टि विषयाभिलाषी जीव हिंसा कर उपज्या जो अधम ताको धर्म जान सेव है ते नरक निगोदके दुख भोगव ह । जे अज्ञानी खोटे दष्टातनिके समूहकरि भरे महापापनिके पु ज मिथ्या ग्रथोके अथ तिनकर धर्म जान प्राणिघात कर ह, ते अनन्तससार भ्रमण कर ह । जे अधर्मचर्चा करके वृथा बकवाद कर ह ते दडोसे आकाशको कूट हैं, सो कस कूटा जाय ? जो कदाचित मिथ्यादष्टियोंके कायक्लेशादि तप होय, अर शब्द ज्ञान भी होय, तो भी मुक्तिका कारण नाहीं । सम्यग्दशन बिना जो जानपना है, सो ज्ञान नाहीं । अर जो आचरण ह, सो कुचारित्र ह । मिथ्यादृष्टियनिका जो तप व्रत ह सो पाषाण बराबर ह, अर अज्ञानी पुरुषोके जो तप ह सो सूयमणि समान ह । धर्मका मूल जीवदया है, अर दयाका मूल कोमल परिणाम ह । सो कोमल परिणाम दुष्टोके कस होय ? अर परिग्रहधारी पुरुषनिको आरभ करि हिसा अवश्य होय ह । तात दयाके निमित्त परिग्रह आरम्भ तजना

चाहिए। तथा सत्यवचन धर्म है, परन्तु जिस सत्यसे परजीवोको पीडा होय, सो सत्य नाहीं, झूठ ही है। अर चोरीका त्याग करना, परनारी तजनी, परिग्रहका परिमाण करना, सतोष व्रत धरना, इन्द्रियोके विषय निवारने, कषाय क्षीण करने, देव गुरु धर्मका विनय करना, निरतर ज्ञानका उपयोग राखना, यह सम्यग्दृष्टि श्रावकोके व्रत तुझे कहे। अब घरके त्यागी मुनियोके धर्म सुनो। सब आरम्भका परित्याग, दशलक्षण धर्मका धारण, सम्यग्दर्शनकर युक्त महाज्ञान, वैराग्यरूप यतिका मार्ग है। महामुनि पच महाव्रतरूप हाथीके काधे चढे है, अर तीन गुप्तिरूप दृढ बकतर पहरे है। अर पाच समितिरूप पयादोसे सयुक्त है। नानाप्रकार तपरूप तीक्ष्ण शस्त्रोसे मडित है, अर चित्तके आनन्द करणहारे है। ऐसे दिगम्बर मुनिराज कालरूप वैरीको जीते है। वह कालरूप बैरी मोहरूप मस्त हाथीपर चढा है, अर कषायरूप सामतोसे मडित है। यतीका धर्म परमनिर्वाणका कारण है, महामगलरूप है। उत्तम पुरुषनिकरि सेवने योग्य है। अर श्रावक का धर्म तो साक्षात स्वर्गका कारण है, अर परम्पराय मोक्षका कारण है। स्वर्गमे देवोके समूहके मध्य तिष्ठता मनवाछित इन्द्रियोके सुखको भोग है। अर मुनिके धर्मसे कर्म काट मोक्षके अतींद्रिय सुखको पावे है, अतीन्द्रिय सुख सब बाधा रहित अनुपम है, जिसका अन्त नाहीं, अविनाशी है। अर श्रावकके व्रतकरि स्वर्ग जाय तहांते चय, मनुष्य होय मुनिराज के व्रत धर परमपदको पावे है। अर मिथ्यादृष्टि जीव कदाचित तपकर स्वर्ग जाय तो चयकर एकेंद्रियादिक योनिविषे आयकर प्राप्त होय है, अनन्त ससार भ्रमण करे है। तातें जैन ही परम धर्म है, अर जैन ही परम तप है, जैन ही उत्कृष्ट मत है। जिनराजके वचन ही सार है। जिनशासनके मार्गसे जो जीव मोक्ष प्राप्त होनेको उद्यमी हुआ, ताको जो भव धरने पडें तो देव विद्याधर राजानिके भव तो विना चाहे सहज ही होय है, जैसे खेतीके करणहारेका उद्यम धान्य उपजानेका है, घास कबाड पराल इत्यादि सहज ही होय है, अर जैसे कोऊ पुरुष नगरको चाल्या ताको मार्गमें वृक्षादिकका सगम खेदका निवारण है, तैसे ही शिवपुरीको उद्यमी भए। जे महामुनि है तिनको इन्द्रादिक पद शुभोपयोगके कारणसे

होय हैं, मुनिका मन तिनमे नाहीं। शुद्धोपयोगके प्रभावसे सिद्ध होनेका उपाय ह। अर श्रावक अर मुनिके धमसे जो विपरीत माग ह सो अधर्म जानना। जिससे यह जीव नानाप्रकार कुगतिमें दु ख भोगे ह। तिर्यंच योनिमें मारण, ताडन, छेदन, भेदन, शीत, उष्ण, भूख, प्यास इत्यादि नानाप्रकारके दु ख भोग है। अर सदा अधकारसु भरे जे नरक तिनविष अत्यन्त उष्ण शीत महा विकराल पवन जहा अग्निके कण बरसै है, नानाप्रकारके भयकर शब्द जहा नारकियोको घानीमें पेल ह, करोतेसे चीर ह। जहा भयकारी शाल्मली वक्षोके पत्र चक्र खडग सेलसमान है। तिन करि तिनके तन खड खड होय है। जहा ताबा शीशा गालकर मदिराके पीवनहारे पापियो को प्यावे हैं। अर मास भक्षियोको तिनहीके मास काट काट उनके मुखमे देव ह, अर लोहके तप्त गोले सिडासीसे मुख फाड फाड जोरावरी से मुखमें देवै ह। अर परदारासगम करनहारे पापियोको ताती लोहेकी पुतलियोसे चिपटाव ह। जहा मायामई सिह, व्याघ, स्याल इत्यादि अनेक प्रकार बाधा कर ह। अर जहा मायामयी दुष्ट पक्षी तीक्ष्णचोचसे चूट ह। नारकी सागरोकी आयुपयत नानाप्रकारके दुख, त्रास, मार भोग ह, मारते मर नाहीं, आयु पूण कर ही मर ह। परस्पर अनेक बाधा कर ह, अर जहा मायामयी मक्षिका अर मायामयी कृमि सूई समान तीक्ष्ण मुखत चूट ह। यह सव मायामयी जानने। अर पशु पक्षी तथा विकलत्रय तहा नाहीं, नारकी जीव ही ह। तथा पच प्रकारके स्थावर सवत्र ही ह। नरकमे जो दु ख जीव भोग ह, उसके कहनेको कौन समथ ह? तुम दोऊ कुगतिमें बहुत भ्रमे हो ऐसा मुनिने कह्या। तब यह दोऊ अपना पूवभव पूछते भए। सयमी मुनि कह ह कि तुम मन लगाकर सुनो—यह दु खदाई ससार याम तुम मोहसे उन्मत्त होकर परस्पर द्वेष धरते आपसमें मरण मारण करते अनेक योनिमें प्राप्त भए। तिनमें एक तो काशी नामा देशमें पारधी भया, दूजा श्रावस्तीनामा नगरीमें राजाका सूयदत्त नामा मत्री भया। सो गृह त्यागकर मुनि भया, महा तपकर युक्त अतिरूपवान पृथ्वीमें विहार कर। सो एक दिन काशीके वन मे जीव जतुरहित पवित्र स्थानकमे मुनि विराजे हुते। अर श्रावक श्राविका अनेक दर्शनको आए हुत,

सो वह पापी पारधी मुनिको देख तीक्ष्ण वचनरूप शस्त्रत मुनिको बींधता भया। यह विचारकर कि यह निलज्ज मागभष्ट स्नानरहित मलीन मुझको शिकारमें जानेको अमगलरूप भया ह। ये वचन पारधीने कहे तब मुनिको ध्यानका विघ्न करणहारा सक्लेशभाव उपज्या। फिर मनमें विचारी कि म मुनि भया, सो मोकू क्लेशरूप भाव कर्तव्य नाहीं। ऐसा क्रोध उपज ह जो एक मुष्टि प्रहारकर इस पापी पारधीको चूण कर डारू। मुनिके अष्टम स्वग जायवेको पुण्य उपज्या था सो कषायके योगत क्षीण पुण्य होय मरकर ज्योतिषीदेव भया, तहात चयकर तू विद्युतकेश विद्याधर भया। अर वह पारधी बहुत ससार भमणकर लकाके प्रमदनामा उद्यानमें वानर भया, सो तुमने स्त्रीके अर्थि बाण कर मारघा सो बहुत अयोग्य किया। पशुका अपराध साम तोको लेना योग्य नाहीं। वह वानर नवकार मत्रके प्रभावत उदधिकुमार देव भया।

ऐसा जानकर हे विद्याधरो! तुम वरका त्याग करो जिससे इस ससारमें तुम्हारा भमण होय रहघा ह, जो तुम सिद्धोके सुख चाहो हो तो रागद्वेष मत करो। सिद्धोके सुखोका मनुष्य अर देवोसे वरणन न होय सके, अनन्त अपार सुख ह। जो तुम मोक्षाभिलाषी हो अर भले आचारकर युक्त हो तो श्रीमुनि सुवतनाथकी शरण लेहु। परम भक्तिसे युक्त इद्रादिक देव भी तिनको नमस्कार कर ह। इद्र, अहमिद्र, लोकपाल सव उनके दासोके दास ह। वे त्रिलोकीनाथ, तिनकी तुम शरण लेयकर परम कल्याणको प्राप्त होवोगे। वे भगवान ईश्वर कहिए समथ है, जिनके सव अथपूण ह, कतकत्य ह। ये जो मुनिके वचन, तेई भयी सूयकी किरण, तिनकरि विद्युतकेश विद्याधरका मन कमलवत फूल्या, सुकेशनामा पुत्रको राज्य देय मुनिके शिष्य भए। राजा महाधीर ह, सम्यग्दशनज्ञानचारित्रका आराधन कर उत्तम देव भए। किहकुपुरके स्वामी राजा महोदधि विद्याधर वानरवशीनके अधिपति चद्रकातमणियो के महल ऊपर विराजे हुते अम तरूप सुदर चर्चाकर इद्रसमान सुख भोगते भए। तिनतै एक विद्याधर श्वेतवस्त्र पहरे शीघ जाय नमस्कार कर कहता भया कि प्रभो! राजा विद्युतकेश मुनि होय स्वग

सिधारे । यह सुनकर राजा महोदधिने भोगभावत विरक्त होय जैनदीक्षाविषे बुद्धि धरी, अर ए वचन कहे कि म भी तपोवनको जाऊगा । ये वचन सुनि राजलोक मदिरमें विलाप करते भए, सो विलाप कर महल गू जि उठ्या । कसा ह राजलोक ? वीणा बासुरी मृदगकी ध्वनि समान हैं शब्द जिनके । अर युवराज भी आयकर राजासो विनती करता भया कि–राजा विद्युतकेशका अर अपना एक व्यवहार ह । राजाने बालक पुत्र सुकेशको राज दिया ह, सो तिहारे भरोसे दिया ह । सो सुकेशके राज्यकी दृढता तुमको राखनी । जसा उनका पुत्र तसा तिहारा–तात कईएक दिन आप वराग्य न धारें । आप नव यौवन हो । इन्द्रकेसे भोगनिकरि यह नि कटक राज्य भोगो । या भाति युवराजने वीनती करी । अर अश्रुपातनिकी वर्षा करी तौ भी राजाके मनमें न आई । अर मत्री महानयके वेत्ताने भी अति दीन होय वीनती करी कि हे नाथ ! हम अनाथ ह । जस बेल वृक्षनिसो लगि रही हैं, तैस तुम्हारे चरणसे लगि रहे ह, तुम्हारे मनम हमारा मन तिष्ठ ह, सो हमको छाँडिकर जावो योग्य नाहीं । या भाति बहुत विनती करी तो हू राजा न मानी । अर राणीने बहुत विनती करी, चरणोमें लौट गई । बहुत अश्रुपात डारे । कसी ह राणी ? गुणनिके समूहकरि राजाकी प्यारी हुती, सो विरक्तभावकरि राजाने नीरस देखी । तब राणी कह ह कि–हे नाथ ! हम तिहारे गुणनिकर बहुत दिननिकी बधी, अर तुम हमको बहुत लडाई, (लाड प्यार किया) महालक्ष्मी समान हमको मायाकरि राखी, अब स्नेहपाश तोडि कहा जावो हो? इत्यादि अनेक बात करी, सो राजा चित्तमें न धरी । अर राजाके बडे २ सामतोने भी वीनती करी कि–हे देव ! इस नवयौवनमें राज छाडि कहा जावो हो ? सबनित मोह क्यो तज्यो ? इत्यादि अनेक स्नेहके वचन कहे परन्तु राजाने किसीकी न सुनी । स्नेहपाश छेदि, सवपरिग्रहका त्यागकरि, प्रतिचद्र पुत्रको राज्य देय आप अपने शरीर हुत भी उदास होय दिगम्बरीदीक्षा आदरी । कसे है राजा ? पूण बुद्धिवान, महाधीर–वीर, पृथ्वी पर चद्रमा समान उज्ज्वल ह कीर्ति जाकी, सो ध्यानरूप गजपर चढकरि तपरूपी तीक्ष्णशस्त्रसो कमरूपशत्रुको काट सिद्धपदको प्राप्त भए । प्रतिचद्र भी कईएक दिन

राजकर अपने पुत्र किहकधको राज्य देय अर छोटे पुत्र अधकरूढको युवराजपद देय आप दिगम्बर होय शुक्लध्यानके प्रभावकरि सिद्धस्थानको प्राप्त भए ।

अथानन्तर राजा किहकध, अर अधकरूढ दोऊ भाई चाद सूयसमान औरोके तेजको दाबिकरि पृथ्वीपर प्रकाश करते भए। तासमय विजयाधपवतकी दक्षिणश्रेणीविष रथनूपुरनामा नगर सुरपुर समान, तहा राजा अशनिवेग महापराक्रमी, दोऊ श्रेणीके स्वामी जिनकी कीर्ति शत्रुनिका मानको हरनहारी, तिनके पुत्र विजयसिह महारूपवान, ते आदित्यपुरके राजा विद्यामदिर विद्याधर, ताकी राणी वेगवती, ताकी पुत्री श्रीमाला, ताके विवाहनिमित्त जो स्वयवर मडप रचा हुता, अर अनेक विद्याधर आए हुते, तहा अश.निवेगके पुत्र विजयसिह भी पधारे। कसी ह श्रीमाला ? जाकी कातिकरि आकाशविष प्रकाश होय रहया है। सकल विद्याधर सिहासनपर बठे हैं। बडे २ राजाओके कु वर थोडे २ साथ सो तिष्ठ ह, सबनिकी दृष्टि—सोई भई नीलकमलनिकी पाँति, सो श्रीमालाके ऊपर पडी। श्रीमालाको किसीसे भी रागद्वेष नाहीं, मध्यस्थ परिणाम ह। अर ते विद्याधरकुमार मदनकरि तप्त ह चित्त जिनका, ते अनेक सविकार चेष्टा करते भए। कईएक तो माथेका मुकुट निकप था तो भी उसको सुन्दर हाथनिकरि ठीक करत भए। कईएक खजर पास धरचा था तो भी करके अग्रभागसो हिलावते भए, कटाक्षकरि करी ह दष्टि जिन्होने, अर कईएक के किनारे मनुष्य चमर ढोरते हुते, अर वीजना करते हुते तौभी लीलासहित महासु दर रूमालसे अपने मुखको वयार करते भए। अर कईएक वाम चरणपर दाहिना पाव मेलते भए। कसे ह राजानिके पुत्र ? सुन्दर रूपवान ह, नवयौवन ह, कामकलामें निपुण हैं। दष्टि तो कन्याकी ओर अर पगके अगुष्ठसो सिंहासनपर किछू लिखते भए। अर कईएक महा मणियोके समूहकरि युक्त जो सूत्र, कटिमें गाढा बध्या हुता तौभी उसे सवार गाढा बाधते भए। अर कईएक चचल ह नेत्र जिनके, निकटवर्तीनितैं केलिकथा करते भये। कईएक अपने सुन्दर कुटिल केशनिको सभारते भए। कईएक जापर भ्रमर गु जार कर ह, ऐसे कमलको दाहिने हाथसों फिरावते

भए, मकरध्वजको रज विस्तारते भए । इत्यादि अनेक चेष्टा राजानिके पुत्र स्वयवरमडपमें करते भए । कैसा है स्वयवरमडप ? जाविषै बीन बासुरी मृदग नगारे इत्यादि अनेक बाजे बाज रहे हैं । अर अनेक मगलाचरण होय रहे है । अर बदीजनोके समूह सत्पुरुषनिके अनेक शुभ चरित्र वर्णन करै हैं । उस स्वयवरमडपमें सुमगला नामा धाय जाके एक हाथमें स्वर्णकी छडी, एक हाथमें बेंतकी छडी, कन्याको हाथ जोड महा विनय कर कहती भई । कन्या नानाप्रकारके मणि भूषणनिकरि साक्षात कल्पवेल समान है । हे पुत्री ! यह मातडकुडल नामा कुवर नभस्तिलकके राजा चद्रकुडल, राणी विमला तिनका पुत्र है, अपनी कातिकरि सूर्यको भी जीतनहारा अति रमणीक है, अर गुणनिका मडन है । या सहित रमवेकी इच्छा है तो याकू वर, यह शस्त्रशास्त्र विद्यामें निपुण है । तब यह कन्या याको देख यौवनसो कछुइक विरग्या जानि आगे चाली । बहुरि धाय बोली हे कन्या ! यह रत्नपुरका राजा विद्याग राणी लक्ष्मी, तिनका पुत्र विद्यासमुद्रघात नामा बहुत विद्याधरोका अधिपति, याका नाम सुन बरी ऐसा काप जैसे पीपलका पत्र पवनसो कापै । महामनोहर हारोसे युक्त याका सुन्दर वक्षस्थल विषै लक्ष्मी निवास करै है, तेरी इच्छा होय तो याको वर । तदि याको भी सरलदृष्टिकरि देख आगे चाली । बहुरि धाय बोली कैसी है धाय ? जो कन्याके अभिप्रायको जाननहारी है । हे सुते ! यह इन्द्र-सारिखा राजा बज्रशीलका कुवर खेचरभानु बज्रपजर नगरका अधिपति है, याकी दोऊ भुजानिमैं राज्यलक्ष्मी—चचल है तो हू निश्चल तिष्ठै, याकू देखकरि अन्य विद्याधर आगिया समान भासै हैं । यह सूर्य समान भासै है । एक तो मानकरि याका माथा ऊचा है ही, अर रत्ननिके मुकुटकरि अति ही शोभै है, तेरी इच्छा है तो याके कठविषै माला डारि । तदि यह कन्या कुमुदनी समान खेचरभानुको देख सकुच गई आगे चाली । तदि धाय बोली हे कुमारी ! यह राजा चद्रानन—चद्रपुरका धनी राजा चित्रागद राणी पद्मश्रीका पुत्र । याका वक्षस्थल महा सुन्दर चदनकरि चर्चित जैसे कैलाशका तट चद्रकिरणकरि शोभै तैसे शोभै है । उछले हैं किरणोंके समूह जाविषै ऐसा मोतियोंका हार याके उर-

बिषै शोभ ह, जस कलाशपवत उछलते हुए नीझरनोके समूह करि शोभ ह । याके नामके अक्षरकरि बैरीनिकाहू मन परम आनन्दको प्राप्त होय ह, अर दुख आताप करि रहित होय ह । धाय श्रीमाला सो कह ह—हे सौम्यदशने ! कहिए, सुखकारी ह, दशन जाका ऐसो जो तू, तेरा चित्त या विष प्रसन्न होय तो जस रात्रि चद्रमात सयुक्त होय प्रकाश कर ह, तस याके सगमकरि आल्हादको प्राप्त हो । तदि याविष भी याका मन प्रीतिको प्राप्त न भया । जस चन्द्रमा नेत्रनिको आनन्दकारी ह, तथापि कमलनिकी याविष प्रसन्नता नाहीं । बहुरि धाय बोली—हे कन्ये ! मदरकुज नगरका स्वामी राजा मेरुकात राणी श्रीरभाका पत्र पुरदर, मानो पथ्वीपर इन्द्र ही अवतरया ह । मेघ समान ह ध्वनि जाकी अर सग्रामविष जाकी दष्टि शत्रु सहारवे समथ नाहीं, तो ताके बाणनिकी चोट कौन सहार ? देव भी यासो युद्ध करवेको समथ नाहीं, तो मनुष्यनिकी तो कहा बात ? अति उन्नत याका सिर सो तू या परि माला डारि, ऐसा कहया तौ भी याके मनमें न आया, क्योकि चित्तकी प्रवृत्ति विचित्र ह । बहुरि धाय कहती भई—हे पुत्री ! नाकाधपुरका रक्षक राजा मनोजव राणी वेगिनी, तिनका पुत्र महाबल, सभारूप सरोवरविष कमल समान फूल रहया ह । अर याके गुण बहुत ह, गिननेमें आवें नाहीं, यह ऐसा बलवान ह, जो अपनी भौंह टेढी करवे करिही पथ्वी मडलको वश कर ह । अर विद्याबल करि आकाशविष नगर बसाव ह, अर सव ग्रहनक्षत्रादिकको पथ्वीतलपर दिखाव ह । चाह तो एक लोक नया और बसाव, इच्छा कर तो सूयको चन्द्रमा समान शीतल कर, पवत चूर डारै, पवनको थाभ, जलका स्थलकरि डार, स्थलका जल कर डार । इत्यादि याके विद्याबल वणन किये तथापि याका मन वाविष अनुरागी न भया । और भी अनेक विद्याधर धायने दिखाए सो कन्याने दृष्टिमें न धरे तिनको उलघि आगे चाली । जस चन्द्रमाकी किरण पवतनिको उलघ, ते पवत श्याम होय जाय तस जिन विद्याधरनिको उलघि यह आगे गई तिनका मुख श्याम होय गया । सब विद्याधरनिको उलघकरि याकी दष्टि किहकधकुमारपर गई । ताके कठमें वरमाला डारी । तदि विजयसिंह विद्याधर

की दृष्टि क्रोधकी भरी, किहकध अर अधक दोऊ भाईनि पर गई। कसा ह विजयसिंह ? विद्याबल करि गर्वित ह, सो किहकध अर अधकको कहता भया कि यह विद्याधरोका समाज, तहा तुम वानर कौन अथ आए ? विरूप ह दशन तुम्हारा। क्षुद्र कहिये तुच्छ हो ? कसे हो तुम ? विनयरहित हो, या स्थानविष फलोसे नमीभूत जे वक्ष तिनकरि सयुक्त कोई रमणीक वन नाहीं। अर गिरनिको सुन्दर गुफा नीझरणोकी धरणहारी—जहा बानरोके समूह क्रीडा कर, सो नाहीं। लालमुखके बानरो! तुमको इहा कौनने बुलाया ? जो नीच दूत तुम्हार बुलवानेको गया होय ताका निपात करू, अपने चाकरनिको कही—इनको इहात निकाल देवो। ये वृथाही विद्याधर कहाव ह।

ये शब्द सुनकरि किहकध अधक दोनो भाई बानरध्वज महाक्रोधको प्राप्त भए, जसै हाथिनि पर सिह कोप कर। अर तिनकी समस्त सेनाके लोक अपने स्वामियोका अपवाद सुन विशेष क्रोधको प्राप्त भए। कईएक सामत अपने दाहिने हाथकरि बावीं भुजाका स्पश करि शब्द करते भए। अर कईएक क्रोधके आवेशकरि लाल भए ह नेत्र जिनके, सो मानो प्रलयकालके उलकापात ही हैं, महाकोपको प्राप्त भए। कईएक पथ्वीविष दढ बाधी ह जड जिनकी ऐसे वक्षनिको उखाडते भए। कसे ह वृक्ष ? फल अर पल्लवनिको धार ह। कईएक थम्भ उखाडते भए, अर कईएक सामतोके अगले घाव भी क्रोधसो फट गए। तिनमेंसे रुधिरकी धारा निकसती भई, सो मानो उत्पातके मेघ ही बरस ह। कईएक गाजते भए, सो दशोदिशा शब्दकर पूरित भई। अर कईएक योधा सिरके केश विकरालते भए, मानो रात्रि ही होय गई। इत्यादि अपूव चेष्टाओसे वानरवशी विद्याधरनिकी सेना समस्त विद्याधरनिकी सेना सुभटनिको मारनेको उद्यमी भई। हाथियोसे हाथी, घोडोसे घोडे, रथोसे रथ युद्ध करते भए। दोनो सेनाओमें महायुद्ध प्रवरत्या। आकाशमें देव कौतुक देखते भए। यह युद्धकी वार्ता सुनकर राक्षसवशी विद्याधरोंके अधिपति राजा सुकेश, लकाके धनी वानरवशियोकी सहायताको आए। राजा सुकेश किहकध अर अधकके परम मित्र हैं, मानो इनके मनोरथ पूण करनेको ही आये ह। जसै भरत चक्रवर्तीके

समय राजा अकंपनकी पुत्री सुलोचनाके निमित्त अककीर्ति जयकुमारका युद्ध भया हुता तसा यह युद्ध भया। यह स्त्री ही युद्धका मूलकारण है। विजयसिंहके अर अंधकके राक्षसवंशी वानरवंशिनिके महायुद्ध भया, तासमय किहकंध कन्याको ले गया। अर छोटे भाई अंधकने खडगकरि विजयसिंहका सिर काटया। एक विजयसिंहके विना ताकी सब सेना बिखर गई, जैसे एक आत्मा विना सब इंद्रियों के समूह विघटि जाहि। तबि राजा अशनिवेग विजयसिंहका पिता अपने पुत्रका मरण सुनकरि शोक मूर्छाको प्राप्त भया। अपनी स्त्रियोंके नेत्रके जलकरि सींचा है वक्षस्थल जाका, सो घनी बेरमें मूर्छा से प्रबोधको प्राप्त भया। पुत्रके वैरकरि शत्रुनिपर भयानक आकार किया, तासमय ताका आकार लोक देख न सके, मानो प्रलयकालके उत्पातका सूर्य ताके आकारको धर है। सब विद्याधरनिको लार लेजाकर किहकंधको घेरया। सो नगरको घेरया जानि भाई वानरध्वज सुकेश सहित अशनिवेगसो युद्ध करवेको निकस्या। सो परस्पर महायुद्ध भया। गदाओसे, शक्तियोसे, बाणोसे, पासोसे, शेलोसे, खडगोसे महायुद्ध भया। तहां पुत्रके बधसो उपजी जो क्रोधरूप अग्निकी ज्वाला, उससे प्रज्वलित जो अशनिवेग सो अंधकके सन्मुख भया। तब बडे भाई किहकंधने विचारी कि मेरा भाई अंधक तो नव यौवन है, अर यह पापी अशनिवेग महा बलवान है, सो मैं भाईकी मदद करूं। तब किहकंध आया अर अशनिवेग का पुत्र विद्युद्वाहन किहकंधके सन्मुख आया। सो किहकंधके अर विद्युद्वाहनके महायुद्ध प्रवरत्या ता समय अशनिवेगने अंधकको मारया। सो अंधक पृथ्वीपर पडया, जैसा प्रभातका चन्द्रमा कांतिरहित होय, तसा अंधकका शरीर कांतिरहित होय गया। अर किहकंधने विद्युद्वाहनके वक्षस्थल पर शिला चलाई सो वह मूर्छित होय गिरया। बहुरि सचेत होय, तान वही शिला किहकंध पर चलाई सो किहकंध मूर्छा खाय घूमने लग्या। सो लंकाके धनीने सचेत किया। अर किहकंधको किहकुम्पुर ले आए। तब किहकंधने दृष्टि उघाड देख्या तो भाई नाहीं। तब निकटवर्तीनिको पूछने लग्या—मेरा भाई कहां है? तब लोक नीचे होय रहे, अर राजलोकमें अंधकके मरवेका विलाप हुवा, सो

विलाप सुन किहकंध भी विलाप करने लग्या । शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान भया है चित्त जाका, बहुत बेरतक भाईके गुणनिका चिंतवन करता संता शोकरूप समुद्रमें मग्न भया । हाय भाई ! मेरे होते संते तू मरणको प्राप्त भया, मेरी दक्षिण भुजा भंग भई । जो मैं एकक्षण तुझे न देखता तो महा व्याकुल होता सो अब तुम्हारे बिना प्राणनिको कैसे राखूंगा । अथवा मेरा चित्त वज्रका है, जो तेरा मरण सुनकर भी शरीरको नाहीं तजै है । हे बाल ! तेरा वह मुलकना अर छोटी अवस्थामें महा वीरचेष्टा चितार चितार मुझको महादुःख उपजै है । इत्यादि महाविलापकरि भाईके स्नेहसो किहकंध खेदखिन्न भया । तब लंकाके धनी सुकेशने तथा और बडे बडे पुरुषोंने किहकंधको बहुत समझाया—जो धीर पुरुषनिको यह रंक चेष्टा योग्य नाहीं । यह क्षत्रीयनिका वीरकुल है, सो महा साहसरूप है । अर या शोकको पंडितोंने बडा पिशाच कह्या है । कर्मोंके उदयकरि भाईयनिका वियोग होय है, यह शोक निरर्थक है । यदि शोक किए फिर आगमन होय तो शोक करिये । यह शोक शरीरको शोखै है, अर पापोंका बंध करै है । महामोहका मूल है । तात या बैरी शोकको तजकरि प्रसन्न होय कार्यमें बुद्धि धारो । यह अशनिवेग विद्याधर अति प्रबल बैरी है । अपना पीछा छोडेगा नाहीं । नाशका उपाय चितवै है, तात अब जो कर्तव्य होय सो विचारो । बैरी बलवान होय तदि प्रच्छन्न (गुप्त) स्थानविषै कालक्षेप करिये तो शत्रुसे अपमानको न पाइए । फिर कईएक दिनमें वैरीका बल घटै तब वैरीको दबाइए । विभूति सदा एक ठौर नाहीं रहै है । तात अपनी पाताललंका जो बडोंस आसरेकी ठौर है, सो कुछ काल तहां रहिये । जो अपने कुलमें बडे हैं ते वा स्थानककी बहुत प्रशंसा करैं हैं—जाको देखे स्वर्गलोकमें भी मन न लागै । तात उठो, वह जायगां वैरियोंसे अगम्य है । या भांति राजा किहकंधको राजा सुकेशीने बहुत समझाया तो भी शोक न छाडै । तदि राणी श्रीमालाको दिखाई सो ताके देखनेतैं शोकनिवृत्ति भया । तब राजा सुकेशी अर किहकिंध समस्त परिवारसहित पाताललंकाको चाले, अर अशनिवेगका पुत्र विद्युद्वाहन तिनके पीछें लग्या । अपने भाई विजयसिंहके वैरतैं महा क्रोधवंत शत्रु-

निके समूल नाश करनेको उद्यमी भया। तदि नीतिशास्त्रके पाठियोने जो शुद्धबुद्धिके पुरुष हैं, समझाया जो भवी भाग तो ताके पीछें न लाग। अर राजा अशनिवेगने भी विद्युद्वाहनसो कही जो अधकने तुम्हारा भाई हत्या, सो तो म अधकको रणमें मारया। तात हे पुत्र! इस हठसो निवृत होवो। दु खीपर दया ही करनी। जिस कायरने अपनी पीठ दिखाई सो जीवित ही मतक ह। ताका पीछा क्या करना? या भाति अशनिवेगने विद्युद्वाहनको समझाया। इतनेमें राक्षसवशी अर वानरवशी पाताललका जाय पहुँचे। कसा ह नगर? रत्नोक प्रकाशकरि शोभायमान ह। तहा शोक अर हर्ष धरते दोए निभय रहैं। एक समय अशनिवेग शरदमें मेघपटल देखे, अर उनको विलय होत देखे, विषयोसे विरक्त भए। चित्त विष विचारी 'यह राज सपदा क्षणभगुर ह, मनुष्यजन्म अति दुलभ ह, सो म मुनिव्रत धरि आत्मकल्याण करू।' ऐसा विचारि सहसारि पुत्रको राजदेय आप विद्युद्वाहन सहित मुनि भए। अर लकाविष पहिले अशनिवेगने निर्घातनामा विद्याधर थानै राख्या हुता सो अब सहसारकी आज्ञाप्रमाण लकाविष थान रह। एक समय निर्घात दिग्विजयको निकस्या सो सम्पूण राक्षस द्वीपविष राक्षसनिका सचार न देख्या। सब ही घुस रहे ह, सो निर्घात निभय लकामें रह ह। एक समय राजा किहकध राणी श्रीमालासहित सुमेरु पवतसो दशन कर आव था, मागमें दक्षिणसमुद्रके तटपर देवकुरुभोगभूमि समान पृथ्वीमें करनतटनामा बन देख्या, देखकरि प्रसन्न भए, अर श्रीमाला राणीसो कहते भए। राणीके सुन्दर वचन वीणाके स्वर समान ह। हे देवी! तुम यह रमणीक वन देखो। जहा वक्ष फूलोकरि सयुक्त ह। निमल नदी बह ह, अर मेघके आकार समान धरणीमाली नामा पवत शोभै ह। पवतके शिखर ऊचे ह, अर कुदपुष्प समान उज्ज्वल जलके नीझरने झरे ह। सो मानो यह पवत हस ही ह। अर वृक्षोको शाखासे पुष्प पड ह। सो मानो हमको पुष्पाजलि ही देवे ह। अर पुष्पनिकी सुगध करि पूण पवनतै हालते जो वक्ष तिनकरि मानो यह वन हमको देखि उठिकरि ताजिम ही कर ह। अर वक्ष फलनिकरि नम्रीभूत होय रहे ह, सो मानो हमको नमस्कार ही कर। जसै गमन करतें पुरुषोंको स्त्री अपने गुणनितै

मोहितकर आगे जाने न दे है, खडा कर है, तैसे यह वन अर पर्वतकी शोभा हमको मोहितकर राखे है, आगे जाने न देहै। अर मैं भी इस पर्वतको उलंघ आगे नहीं जाय सकू, तातै यहा ही नगर बसाऊंगा। जहा भूमिगोचरियोका गमन नहीं। पाताललंकाकी जगह ऊंडी है, और तहा मेरा मन खेदखिन्न भया है। सो अब यहा रहनतै मन प्रसन्न होगया। या भांति राणी श्रीमालासो कहिकर आप पहाडसो उतरे। तहा पहाड ऊपर स्वर्गसमान नगर बसाया। नगरका किहकधपुर नाम धरया। तहा आप सब कुटुम्ब सहित निवास किया। कैसा है राजा किहकध? सम्यग्दर्शन करि संयुक्त है, अर भगवानकी पूजाविषै सावधान है। सो राजा किहकधकी राणी श्रीमालाके योगतै सूर्यरज अर रक्षरज दोय पुत्र भए, अर सूर्यकमला पुत्री भई, जाकी शोभकरि सब विद्याधर मोहित हुए।

अथानन्तर मेघपुरका राजा मेरु ताकी राणी मघा, पुत्र मृगारिदमन तान, किहकधकी पुत्री सूर्य कमला देखी। सो ऐसा आसक्त भया कि रातदिवस चैन जाकै नाहीं पडै। तब वाकै अर्थि वाके कुटुम्ब के लोगोने सूर्यकमला जाची। सो राजा किहकधने राणी श्रीमालासे मंत्रकर अपनी पुत्री सूर्यकमला मृगारिदमनको परणाई सो परणकर जावै था। मार्गमें कर्णपर्वत विषै कर्णकुण्डल नगर बसाया।

अर लंकापुर कहिये पाताललंका, उसमें सुकेश राजा, इन्द्राणी नामा राणी, ताके तीन पुत्र भये। माली, सुमाली अर माल्यवान। बडे ज्ञानी, गुण ही है आभूषण जिनके। अपनी क्रीडाओसे माता पिताका मन हरते भए। देवो समान है क्रीडा जिनकी। सो तीनो पुत्र बडे भए। महा बलवान, सिद्ध भई है, सब विद्या जिनको। एक दिन माता पिताने इनको कहया कि जो तुम क्रीडा करनेको किहकधपुरकी तरफ जाओ तो दक्षिणके समुद्रकी ओर मत जाओ। तदि ये नमस्कारकर माता पिताको कारण पूछते भए। तब पिताने कही हे पुत्रो! यह बात कहिवेकी नाहीं। तब पुत्रोंने बहुत हठि करि पूछी तब पिताने कही कि लंकापुरी अपने कुलक्रमतै चली आवै है। श्री अजितनाथ स्वामी दूसरे तीर्थंकरके समयसो लगायकर अपना इस खडमे राज है। आगै अशनिवेगके अर अपने युद्ध भया। सो परस्पर

बहुत मरे, लका अपनेत छूटी। अशनिवेगने निर्घात विद्याधरकू थापि राख्या। सो महाबलवान ह, अर क्रूर ह, तान देश देशमें हलकारे राखे ह। अर हमारा छिद्र हेर ह। यह पिताके दुखकी वार्ता सुनकर माली निश्वास नाखता भया, अर आखनित आसू निकसे। क्रोधसे भर गया ह चित्त जिसका, अपना भुजाओंका बल देखकरि पितासो कहता भया कि हे तात! एते दिनोतक यह बात हमसो क्यो न कही, तुमने स्नेहकरि हमको ठग। जे शक्तिवत होयकरि विना काम किए निरथक गाज है, ते लोकविष लघुताको पाव ह। सो अब हमको निर्घातपर चढनेकी आज्ञा देओ, हमारे यह प्रतिज्ञा ह—लकाको लेकरि ही और काम कर। तबि माता पिताने महा धीर वीर जान इनको स्नेहदृष्टिसे आज्ञा दी। तब ये पाताललकासो ऐसे निकसे मानो पाताललोकस भवनवासी देव निकस ह। बरी ऊपर अतिउत्साहत चाले। कसे ह तीनो भाई! शस्त्रकलामें महाप्रवीण ह। समस्त राक्षसोकी सेना इनके लार चाली। त्रिकूटाचल पवत दूरसो देख्या। देखकरि जान लिया कि लका याके नीचे बसे ह। सो मानो लका लेहीली। माग विष निर्घातके कुटुम्बी जो दत्यादि कहाव, ऐस विद्याधर मिले सो युद्ध करके बहुत मरे। कईएक पायन परे, कईएक स्थान छोड भाग गये, कईएक बरीके कटकमें शरण आये। पृथ्वीमें इनकी बडी कीर्ति विस्तरी। निर्घात इनका आगमन सुन लकासो बाहिर निकस्या। कैसा ह निर्घात? जो युद्धमें महाशूर वीर है, छत्रकी छायाकरि आच्छादित किया ह सूय जान। तब दोऊ सेनामें महायुद्ध भया। मायामई हाथिनिकरि, घोडनिकरि, विमाननिकरि, रथनिकरि परस्पर युद्ध प्रवरत्या। हाथिनिके मद झरवेत आकाश जलरूप होय गया। अर हाथनिके कान, ते ही भए ताडके बीजने, उनकी पवनसे आकाश मानो पवन रूप हो गया। परस्पर शस्त्रोके घातकरि प्रकटी जो अग्नि, ताकरि मानो आकाश अग्निरूप हीहो गया। या भाति बहुत युद्ध भया। तब मालीने विचारी कि दीननिके मारवेकरि कहा होय? निर्घातहीको मारिये, यह विचारि निर्घातपर आए। ऐसे शब्द कहते भये—कहा वह पापी निर्घात ह? सो निर्घातको देखकरि प्रथम तो तीक्ष्ण बाणोकरि रथत नीचे डारचा, फेर वह उठचा, महायुद्ध किया। तब मालीने खड्ग-

करि निर्घात को मारचा । सो ताकू मरचा जानकर ताके वशके भागकरि विजयार्धविषै अपने अपने स्थानक गये, अर कईएक कायर होय मालीहीकी शरण आये । माली आदि तीनो भाइयनिने लंकामें प्रवेश किया । कसी है लंका ? महा मंगलरूप है । माता पिता आदि समस्त परिवारनिको लंकामें बुलाया । बहुरि हेमपुरका राजा मेघ विद्याधर, रानी भोगवती, तिनकी पुत्री चन्द्रमती सो मालीने परणी। कसी है चन्द्रमती ? मनको आनन्दकरणहारी है । अर प्रीतिकूट नगरका राजा प्रीतिकांत, राणी प्रीतिमती, तिनकी पुत्री प्रीतिसंज्ञका सो सुमाली परणी । अर कनककांत नगरका राजा कनक, राणी कनकश्री, तिनकी पुत्री कनकावली सो माल्यवानने परणी । इनके कईएक पहिली राणी हुती, तिनमें यह प्रथम राणी भई । अर प्रत्येक के हजार २ राणी कछुइक अधिक होती भई । मालीने अपने पराक्रम सें विजयार्धकी दोऊ श्रेणी वश करी । सब विद्याधर इनकी आज्ञा आशीर्वादकी नांई माथ चढावते भए । कइएक दिनोमें इनके पिता राजा सुकेश मालीको राज देय महा मुनि भए । अर राजा किहकंध अपने पुत्र सूर्यरजको राज देय वैरागी भए । ए दोऊ परम मित्र राजा सुकेश अर किहकंध समस्त इन्द्रियनिके सुखका त्यागकर अनेक भवके पापोंका हरणहारा जो जिनधर्म ताको पायकर सिद्ध स्थान के निवासी भये । हे श्रेणिक ! या भांति अनेक राजा प्रथम राज्य अवस्थामें अनेक विलास कर फिर राज तजकर आत्मध्यानके योगसे समस्त पापनिको भस्म कर अविनाशी धामको प्राप्त भए । ऐसा जानकरि हे राजा ! मोहको नाशकर शांतिदशाको प्राप्त होउ ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै बानरवंशीनिका निरूपण है जाविषै ऐसा छठा पर्व पूर्ण भया ।। ६ ।

अथानन्तर रथनूपुर नगरमें राजा सहसार राज्य करै । ताके राणी मानसुन्दरी, रूप अर गुणो में अति सुन्दर, सो गर्भिणी भई । अत्यन्त कृश भया है शरीर जाका, शिथिल होय गए हैं सब आभूषण जाके । तब भरतार बहुत आदरसो पूछी—हे प्रिए ! तेरे अंग काहेतै क्षीण भए है, तेरे कहा अभिलाषा

है। जो अभिलाषा होय सो मैं अवार ही समस्त पूर्ण करूं, हे देवी! तू मेरे प्राणोंसे अधिक प्यारी है या भांति राजाने कही। तब राणी बहुत विनयकर पतिसों वीनती करती भई कि हे देव! जा दिनतैं बालक मेरे गर्भमें आया है, ता दिनते यह मेरी वांछा है कि इन्द्रकीसी सम्पदा भोगूं। सो मनै लाज तज आपके अनुग्रहसे आपसों अपना मनोरथ कह्या है, नातर स्त्रीको लज्जा प्रधान है, सो मनकी बात कहिवेमें न आवै। तदि राजा सहसारने जो महा विद्याबलकरि पूर्ण हुता, सो तिनने क्षणमात्रमें याके मनोरथ पूर्ण किए। तब यह राणी महा आनन्दरूप भई, सर्व अभिलाषा पूर्ण भई, अत्यन्त प्रताप अर कांतिको धरती भई। सूर्य ऊपर होय निसरै, सो वाहूका तेज न सहार सकै। सर्वदिशानिके राजा निपर आज्ञा चलाया चाहै। नव महीने पूर्ण भए तदि पुत्रका जन्म भया। कैसा है पुत्र? समस्त बांधवनिको परम सम्पदाका कारण है! तब राजा सहसारने हर्षित होय पुत्रके जन्मका महान उत्सव किया। अनेक बाजानिके शब्द करि दशो दिशा शब्दरूप भईं। अर अनेक स्त्री नृत्य करती भई। राजाने याचकजनको इच्छापूर्ण दान दिया। ऐसा विचार न किया जो यह देना न देना, सब ही दिया। अर हाथी गरजते हुते ऊंची सूंडकरि नृत्य करते भए। राजा सहसारने पुत्रका इन्द्र नाम धरया, जादिन इन्द्रका जन्म भया तादिन समस्त बैरीनिके घरमें अनेक उत्पात भए, अपशकुन भए। अर भाइयनिके तथा मित्रनिके घरमें महा कल्याणके करणहारे शुभ शकुन भए। अर इन्द्र कुंवरकी बाल क्रीडा तरुण पुरुषोंकी शक्तिको जीतनेहारी, सुन्दर कर्मकी करणहारी बैरियोंका गर्व छेदती भई। अनुक्रमकरि कुंवर यौवनको प्राप्त भया। कैसा है कुंवर? अपने तेजकरि जीत्या है सूर्यका तेज जिसने, अर कांतिसे जीत्या है चन्द्रमा, अर स्थिरतासे जीत्या है पर्वत, अर विस्तीर्ण है वक्षस्थल जाका, दिग्गजनिके कुंभस्थल समान ऊंचे हैं कांधे जाके, अर अति दृढ सुन्दर हैं भुजा—दश दिशानि-की दाबनहारी। अर दोऊ जंघा जिसकी महा सुन्दर यौवनरूप महलके थांभने को थंभे समान होती भई। विजयार्ध पर्वतविषै सब विद्याधर जाने सेवक किये। जो यह आज्ञा करै सो सब करै। यह महा

विद्याधर बलकर मंडित, यान अपने यहां सब इन्द्रकीसी रचना करी। अपना महल इन्द्रके महल समान बनाया, अडतालीस हजार विवाह किये। पटरानीका नाम शची धरया, छब्बीस हजार नटवा नृत्य करैं, सदा इन्द्रकसा अखाडा रहै। महामनोहर अनेक इन्द्रकसे हाथी, घोडे, अर चन्द्रमा समान महा उज्ज्वल ऊंचा आकाशके आंगनमें गमन करनेवाला, किसीसे निवारया न जाय, महा बलवान, अष्टदंत करि शोभित गजराज, जिसका महा सुन्दर सूंड सो पाट हाथी उसका नाम ऐरावत धरया। चतुरनिकायके देव थापे, अर परम शक्तियुक्त चार लोकपाल थापे—सोम १, वरुण २, कुबेर ३, यम ४। अर सभा का नाम सुधर्मा, बज्र, आयुध तीन सभा, अर उर्वशी मेनका रंभा इत्यादि हजारां नृत्यकारिणी तिनकी अप्सरा संज्ञा ठहराई। सेनापतिका नाम हिरण्यकेशी, अर आठ बसु थापे, अर अपने लोकनिको सामानिक त्रायस्त्रिंशतादि दश भेद देवसंज्ञा धरी। गानेवालोंका नाम नारद १, तुम्बुरु २, विश्वासु ३, यह संज्ञा धरी। मंत्रीका नाम बृहस्पति, इत्यादि सब रीति इन्द्र समान थापी। सो यह राजा इन्द्र समान सब विद्याधरनिका स्वामी पुण्यके उदयकरि इन्द्रकसी सम्पदाका धरनहारा होता भया। ता समय लंका में माली राज करै, सो महामानी जैसे आगे सब विद्याधरनिपर अमल करै था तैसा ही अबहू करै, इन्द्रकी शंका न राखै, विजयार्धके समस्त पुरोंमें अपनी आज्ञा राखै। सब विद्याधर राजानिके राजमें महारत्न हाथी, घोडे, मनोहर कन्या, मनोहर वस्त्राभरण, दोनो श्रेणियोंमें जो सार वस्तु होयसो, मगाय लेय। ठौर २ हलकारे फिरवे करै। अपने भाइयनिके गर्वतैं महा गर्ववान पृथ्वीपर एक आपहीको बल वान जानै।

अब इन्द्रके बलतैं विद्याधर लोक मालीकी आज्ञा भंग करने लगे। सो यह समाचार मालीने सुना तब अपने सब भाई, अर पुत्र, अर कुटुम्ब समस्त राक्षसवंशी अर किहकंधके पुत्रादि समस्त वानरवंशी तिनको लार लेय विजयार्ध पर्वतके विद्याधरनि पर गमन किया। कईएक विद्याधर अति ऊंचे विमानो पर चढे हैं। कईएक चालते महल समान सुवर्णके रथोंपर चढे हैं, कईएक काली घटा समान हाथियो

पर चढे है, कईएक मनसमान शीघगामी घोडोपर चढे, कईएक सिह शादू लोपर चढे, कईएक चीतोपर चढे, कईएक ऊटोपर, कईएक खच्चरोपर, कईएक भसोपर, कईएक हसोपर, कईएक स्यालोपर इत्यादि अनेक मायामई वाहनोपर चढे, आकाशका आगन आछादते हुवे, महा ददीप्यमान शरीर धरकर मालीकी लार चढे। प्रथम प्रयाणमें ही अपशकुन भए। तदि मालीत छोगा भाई सुमाली कहता भया। कसा ह वह?बडे भाईमे ह अनुराग जाका। हे देव! यहा ही मुकाम करिये, आग गमन न करिये, अथवा लाकामें उलटा चलिय, आज अपशकुन बहुत भए ह। सूखे वक्षकी डालीपर एक पगको सकोचे कागतिष्ठया ह। अत्यन्त आकुलित ह चित्त जाका, बारबार पख हलाव ह, सूखा काठ चोचमें लिए सूयकी ओर देख ह, अर क्रूरशब्द बोल ह। सो हमारा गमन मन कर ह, अर दाहिनी ओर रौद्र ह मुख जाका, ऐसी स्यालिनी रोमाच धरती हुई भयानक शब्द कर ह। अर सूयके बिबके मध्य प्रविष्ट हुई जलरीमे रुधिर झरता देखिये ह। अर मस्तकरहित धड नजर आव ह। अर महा भयानक वजपात होय ह। कसा ह वजपात? कम्पाया ह समस्त पवत जाने। अर आकाशमे बिखरि रहे ह केश जिसके ऐसी मायामई स्त्री नजर आव ह। अर गदभ आकाशकी तरफ ऊचा मुखकर खुरके अग्रभागकरि धरतीको खोदता हुवा कठोर शब्द कर ह। इत्यादि अपशकुन होय ह। तदि राजा माली सुमालीत हसकर कहते भए। कसा ह राजा माली? अपनी भुजानिके बलकरि शत्रुनिको गिनते नाहीं। अहो वीर! वरिनको जीतना मनमें विचार, विजय हस्तीपर चढे महा पुरुष धीरताको धरते कस पीछे बाहुड? जे शूरवीर--दातनिकरि डस ह अधर जिन्होने, अर टेढी करी ह भौंह जिन्होने, अर विकराल ह मुख जिनका, अर बरीनिको डरानेवाली ह आख जिन्होकी, तीक्ष्ण बाणनिकरि पूण, अर बाजे ह अनेक बाजे जिनके, अर मदझरते हाथिनिपर चढे ह, अथवा तुरगनपर चढे ह, महावीररसके स्वरूप आश्चय की दृष्टि करि देवोने देखे जो सामत वे कस पाछ बाहुड? अर मैने या जन्ममे अनेक लीलाविलास किये, सुमेरुपवतकी गुफा तहा नन्दनवन आदि मनोहरवन तिनमे देवागना समान अनेकराणीसहित

नानाप्रकारकी क्रीडा करी, अर आकाशमें लगरहे है शिखर जिनके, ऐसे रत्नमयी चैत्यालय जिनेंद्रदेवके कराए, विधिपूर्वक भाव सहित जिनेंद्रदेवकी पूजा करी, अर अर्थी जो जाचे सो दिया। ऐसें किमिच्छिक दान दिये। इस मनुष्यलोकमें देवोकेसे भोग भोगे। अर अपने यशकरि पृथ्वीपर वश उत्पन्न किया। तात या जन्ममें तो हम सब बातोमें इच्छा पूर्ण है। अब जो महा सग्राममें प्राणोंको तजै तो यह शूरवीरनिकी रीति ही है। परन्तु क्या हम लोकोसे यह कहावें कि माली कायर होय, पाछे हट गया, अथवा तहां ही मुकाम किया। यह निदाके लोकनिके शब्द धीरवीर कसे सुनें ? धीर वीरोका चित्त क्षत्रियव्रतमें सावधान है। भाईको या भांति कहि आप वताडके ऊपर सेना सहित क्षणमात्रमें गये। सब विद्याधरो पर आज्ञा पत्र भेजे। सो कईएक विद्याधरनने न माने, तिनके पुर ग्राम उजाडे, अर उद्याननिके वृक्ष उपार डारे, जसें कमलके वनको मस्त हाथी उखाड तैसे राक्षसजातिके विद्याधर महाक्रोधको प्राप्त भए है। तबि प्रजाके लोग मालीके कटकत डरकर कांपते सते रथनूपुर नगरमें राजा सहसारके शरण गये। चरणनिको नमस्कारकर दीनवचन कहते भए कि—हे प्रभो ! सुकेशका पुत्र माली राक्षसकुली समस्त विद्याधरनिपर आज्ञा चलाव, सब विजयार्धमें हमको पीडा कर है। आप हमारी रक्षा करो, तब सहसारने आज्ञा करी कि हे विद्याधरो ! मेरा पुत्र इद्र है, ताके शरण जाय सब बीनती करो। वह तुम्हारी रक्षा करनेको समर्थ है। जसे इन्द्र स्वर्गलोककी रक्षा कर है तसे यह इन्द्र समस्त विद्याधरोका रक्षक है।

तब समस्त विद्याधर इन्द्रप गए, हाथ जोडि नमस्कार करि सब वृत्तांत कहे। तब इद्र माली ऊपर क्रोधायमान होय गर्वकरि मुलकते सते सर्वलोकनिको कहते भए। कसे है इन्द्र ? पास धरया जो वज्रायुध ताकी ओर देख्या, लाल भए है नेत्र जिनके। मै लोकपाल लोकनिकी रक्षा करू, जो लोकका कटक होय ताहि हेरकर मारू, अर वह आप ही लडनेको आया तो या समान और कहा ? रणके नगारे बजाए। कसे है वे वादित्र ? जिनके श्रवणकरि माते हाथी गजके बंधनको उखाड है। समस्त

विद्याधर युद्धका साजकरि इन्द्रपै आए, बकतर पहरे। हाथमें अनेकप्रकारके आयुध लिए, परम हर्ष धरतेसते कईएक रथनिपर, कईएक घोडनिपर चढे तथा हस्ती ऊंट सिंह व्याघ्र स्याली तथा मृग हंस छेला, बलद, मींडा इत्यादि मायामई अनेक वाहनोपर बैठि आए। कईएक विमानमें बैठे, कईएक मयूरोपर चढे, कईएक खच्चरनिकरि चढकर आए। इन्द्रने जो लोकपाल थापे हैं, ते अपने अपने वर्गसहित नानाप्रकारके हथियारनिकरयुक्त भोंह टेढी किये आए। भयानक है मुख जिनके। पाट हस्तीका नाम ऐरावत तापर इन्द्र चढे बकतर पहिरे शिरपर छत्र फिरते हुए, रथनूपुरतै बाहिर निकसे। सेनाके विद्याधर जो देव कहावै, सो इन देवनिके अर लंकाके राक्षसनिके साथ महायुद्ध प्रवरत्या।

हे श्रेणिक! ये देव अर राक्षस समस्त विद्याधर मनुष्य हैं। नमि विनमिके वंशके हैं। ऐसा युद्ध प्रवरत्या जो कायरनितैं देख्या न जाय। हाथियनितैं हाथी, घोडनितैं घोडे, पयादनितैं पयादे लडे। सेल मुग्दर, सामान्य चक्र, खड्ग, गौफण, मूसल, गदा, कनक पाश इत्यादि अनेक आयुधनिकरि युद्ध भया। सो देवोकी सेनाने कछुइक राक्षसोका बल घटाया, तब वानरवंशी राजा सूर्यरज रक्षरज राक्षसवंशियोके परममित्र राक्षसोकी सेनाको दव्या देख युद्धको उद्यमी भए। सो इनके युद्धतैं समस्त इन्द्रकी सेनाके लोक देवजातिके विद्याधर पाछे हटे। इनका बल पाय राक्षसकुली विद्याधर लंकाके लोक देवनितैं महायुद्ध करते भए। शस्त्रोंके समूहसे आकाशमें अन्धेरा कर डारया। राक्षस अर वानरवंशियोंसे देवोका बल हरया देख इन्द्र आप युद्ध करनेको उद्यमी भए। सो समस्त राक्षसवंशी अर वानरवंशी मेघरूप होकर इन्द्ररूप पर्वतपर गाजते हुये शस्त्रकी वर्षा करते भये। सो इन्द्र महायोधा कुछ भी विषाद न करता भया। किसी का वाण आपको न लगने दिया। सबनिके बाण काट डारे, अर अपने बाणनिकरि कपि अर राक्षसोको दबाये। तब राजा माली लंकाके धनी अपनी सेनाको इन्द्रके बलकरि व्याकुल देख इन्द्रतैं युद्ध करणेको आप उद्यमी भये। कैसे है राजा माली? क्रोधकरि उपज्या जो तेज ताकरि समस्त आकाशमैं किया है उद्योत जिन्होने! इन्द्रके अर मालीके परस्पर महायुद्ध प्रवरत्या।

मालीके ललाट पर इद्रने वाण लगाया सो मालीने उस वाणकी वेदना न गिनी, अर इन्द्रके ललाट पर शक्ति लगाई, सो इन्द्रके रुधिर झरने लगा। अर माली उछलकर इन्द्रप आया, तब इन्द्रने महा क्रोधसे सूयके बिब समान चक्रसे मालीका शिर काटया, माली भूमिपर पडया, तब सुमाली मालीको मुवा जानि अर इन्द्रको महा बलवान जानि सब परिवार सहित भाग्या। मालीको भाईका अत्यन्त दुःख हुवा। जब यह राक्षसवशी अर वानरवशी भागे तब इन्द्र इनके पीछे लाग्या। तब सौमनामा लोकपालने जो स्वामीकी भक्तिमें तत्पर है—इन्द्रसे विनती करी कि हे प्रभो! जब मो सारिखा सेवक शत्रुनिके मारवेको समथ है तब आप इनपर क्यो गमन कर, सो मुझे आज्ञा देवो! शत्रुनिको निमूल करू। तब इन्द्रने आज्ञा करी, यह आज्ञा प्रमाण इनके पीछे लाग्या। अर वाणनिके पुंज शत्रुओपर चलाये, सो कपि अर राक्षसनिकी सेना वाणनिकरि वेधीगई। जस मेघकी धाराकरि गायनिके समूह व्याकुल होय तस तिनकी सव सेना व्याकुल भई।

अथानन्तर अपनी सेनाको व्याकुल देखि सुमालीका छोटाभाई माल्यवान बाहुडकर सौमपर आये अर सौमकी छातीमें भिण्डिपाल नामा हथियार मारा, सो मूर्छित होया। सो जबलग वह सावधान होय तब लग राक्षसवशी अर वानरवशी पाताललका जाय पहुचे। मानो नया जन्म भया, सिहके मुखसे निकले। सौमने सावधान होकर सव दिशा शत्रुओसे शून्य देखी। तब लोकनिकरि गाइये जस जाके, बहुत प्रसन्न होय इन्द्रके निकट गया। अर इन्द्र विजय पाय ऐरावत हस्तीपर चढया लोकपालनिकरि मडित शिरपर छत्र फिरते चँवर ढुरते, आग अप्सरा नत्य करती बडे उत्साहस महाविभूति सहित रथनूपुरविष आये। कसा है रथनूपुर ? रत्नमयी वस्त्रोकी ध्वजाओसे शोभ है, ठौर ठौर तोरणनिकरि शोभायमान है। जहा फूलनिके ढेर होय रहे है, अनेक प्रकार सुगधसे देवलोक समान है। सुन्दर नारियाँ झरोखोमे बठी इन्द्रकी शोभा देख है। इन्द्र राजमहलमै आए, अति विनयथकी मातापिताके पायन पडे। तदि मातापिताने माथे हाथ धरया, अर गात्र स्पर्शे, आशीष दई। इद्र वरीनिकू

जीति अति आनन्दको प्राप्त भया । प्रजापालनविष तत्पर इन्द्रके समान भोग भोगे । विजयार्ध पवत तो स्वग समान अर यह राजा इन्द्र सव लोकविष प्रसिद्ध भया ।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कह ह—कि हे श्रेणिक ! अब लोकपालकी उत्पत्ति सुनो । ये लोकपाल स्वगलोकतै चयकर विद्याधर भए ह । राजा मकरध्वज राणी अदिति, तिनका पुत्र सोम नामा लोकपाल महा कातिधारी, सो इन्द्रन ज्योतिपुर नगरमें थापा अर पूव दिशाका लोकपाल किया । अर राजा मेघरथ, राणी वरुणा, उनका पुत्र वरुण, उसको इन्द्रने मेघपुर नगरमें थापा अर पश्चिम दिशाका लोकपाल किया, जाक पास पाश नामा आयुध—जिसका नाम सुनकर शत्रु अति डरै । अर राजा किहकधसूय, राणी कनकावली, उसका पुत्र कुबेर महा विभूतिवान, उसको इन्द्रने काचनपुरमें थापा,अर उत्तरदिशाका लोकपाल किया । अर राजा बालाग्नि विद्याधर, राणी श्रीप्रभा,उसका पुत्र यम नामा तेजस्वी उसको किहकधपुरमें थापा,अर दक्षिणदिशाका लोकपाल किया । अर असुर नामा नगर ताके निवासी विद्याधर,वे असुर ठहराये। अर यक्षकीर्ति नामा नगरके विद्याधर यक्ष ठहराए। अर किन्नर नगरके किन्नर, गधव नगरके गधव, इत्यादिक विद्याधरोकी देव सज्ञा धरी । इन्द्रकी प्रजा देव जैसी क्रीडा करै । यह राजा इन्द्र मनुष्य योनिमे लक्ष्मीका विस्तार पाय, लोगोसे प्रशसा पाय, आपको इन्द्र ही मानता भया, अर कोई स्वगलोक है, इन्द्र ह, देव ह—यह सव बात भूल गया । अर आप ही को इन्द्र जान, विजयाधगिरिको स्वर्ग जाना, अपने थाप लोकपाल जाने, अर विद्याधरोको देव जाने । या भाति गवको प्राप्त भया कि मौतै अधिक पथ्वीपर और कोऊ नाहीं, म ही सवकी रक्षा करू, यह दोनो श्रेणिका अधिपति होय ऐसा गर्वा कि म ही इन्द्र हू ।

अथानन्तर कौतुकमगल नगरका राजा व्योमबिंदु पृथ्वीपर प्रसिद्ध, उसके राणी मदवती, उसके दो पुत्री भई, बडी कौशिकी छोटी केकसी । सो कौशिकी राजा विश्रवको परणाई । जे यज्ञपुर नगरके धनी, वैश्रवण पुत्र भया । अति शुभ लक्षणका धारणहारा, कमल सारिखे नेत्र जाके, उसको इन्द्रने बुलाकर

तिसका बहुत सन्मान किया, अर लंकाके थाने राखा। अर कहा मेरे आगे चार लोकपाल हैं,तैसे तू पांचवा महा बलवान है। तब वैश्रवणने विनती करी कि—"प्रभो जो आज्ञा करो, सो ही मै करू" ऐसा कह इन्द्रको प्रणाम कर लंकाको चल्या। वो इन्द्रकी आज्ञा प्रमाण लंकाके थाने रहे। जाको राक्षसोकी शंका नाहीं, जिसकी आज्ञा विद्याधरोके समूह अपने सिर पर धरै है।

पाताललंकाविषै सुमालीके रत्नश्रवा नामा पुत्र भया। महा शूरवीर, दातार, जगत का प्यारा, उदारचित्त मित्रनिके उपकार निमित्त है जीवन जाका, अर सेवकोके उपकार निमित्त है प्रभुत्व जाके, पंडितोके उपकार निमित्त है प्रवीणपणा जाका, भाइयोके उपकार निमित्त है लक्ष्मीका पालन जाके, दरिद्रियोके उपकार निमित्त है ऐश्वर्य जाका, साधुओकी सेवा निमित्त है शरीर जाका, जीवन के कल्याण निमित्त है वचन जाका, सुकृतके स्मरण निमित्त है मन जाका, धर्मके अर्थि है आयु जाकी, शूरवीरताका मूल है स्वभाव जाका, सो पिता समान सब जीवोंको दयालु, जाके परस्त्री माता समान, परद्रव्य तृण समान, पराया शरीर अपने शरीर समान, महा गुणवान, जो गुणवंतोकी गिनती करै तहां याको प्रथम गिणे, अर दोषवन्तोकी गिणतीविषै नहीं आवै, उसका शरीर अद्भुत परमाणुओं कर रचा है, जैसी शोभा इसमें पाइये तैसी और ठोर दुर्लभ है, संभाषणमे मानो अमृत ही सींचे है, अर्थियोको महादान देता भया। धर्म अर्थ काममें बुद्धिमान, धर्मका अत्यंत प्रिय, निरंतर धर्महीका यत्न कर, जन्मान्तरसे धर्मको लिये आया है, जिसके बडा आभूषण यश ही है, अर गुण ही कुटुम्ब है, सो धीर वीर बैरियोका भय तजकर विद्या साधनके अर्थ पुष्पक नामा वनमे गया। कैसा है वह वन ? भूत पिशाचादिकके शब्दसे महा भयानक है। यह तो वहां विद्या साधे है, अर राजा व्योमबिंदुने अपनी पुत्री केकसी इसकी सेवा करणेको इसके ढिग भेजी, सो सेवा करे, हाथ जोडे रहे, आज्ञाकी है अभिलाषा जाके। कईएक दिनोमें रत्नश्रवाका नियम समाप्त भया। सिद्धोको नमस्कार कर मौन छोडा। केकसीको अकेली देखी। कैसी है केकसी ? सरल हैं नेत्र जाके, नीलकमल समान सुन्दर, अर

लालकमल समान है मुख जाका, कुंदके पुष्प समान हैं दन्त, अर पुष्पोकी माला समान हैं कोमल सुन्दर भुजा, अर मूंगा समान है कोमल मनोहर अधर, मौलश्रीके पुष्पोकी सुगंध समान है निश्वास जाके, चंपेकी कली समान है रंग जाका, अथवा उस समान चंपक कहा अर स्वर्ण कहा ? मानो लक्ष्मी रत्नश्रवाके रूपमें वश हुई, कमलोके निवासको तज, सेवा करनेको आई है। चरणारविंदकी ओर हैं नेत्र जाके, लज्जासे नमीभूत है शरीर जाका, अपने रूप वा लावण्यसे कूंपलोकी शोभाको उलंघती हुई, स्वासनकी सुगंधतासे जाके मुखपर भ्रमर गुंजार करै हैं। अति सुकुमार है तनु जाका, अर यौवन आवतासा है, मानो इसकी अति सुकुमारताके भयसे यौवन भी स्पर्शता शंकै है। मानो समस्त स्त्रियोका रूप एकत्रकर बनाई है। अद्भुत है सुन्दरता जाकी, मानो साक्षात विद्या ही शरीर धारकर रत्नश्रवाके तपसे वशी होकर महा कांतिकी धरणहारी आई है। तब रत्नश्रवा जिनका स्वभाव ही दयावान है केकसीको पूछते भए कि तू कौनकी पुत्री है, अर कौन अर्थ अकेली यूथसे बिछुरी मृगीसमान महा वनमें रहै है, अर तेरा क्या नाम है ? तब यह अत्यंत माधुर्यतारूप गद्गद वाणीसे कहती भई—'हे देव ! राजा व्योमबिंदु राणी नन्दवती, तिनकी मैं केकसी नामा पुत्री आपकी सेवा करणेको पिताने राखी है। ताही समय रत्नश्रवाको मानस्तम्भिनी विद्या सिद्ध भई। सो विद्याके प्रभावसे उसी वनमें पुष्पांतकनामा नगर बसाया। अर केकसीको विधिपूर्वक परणा। अर उसी नगरमें रह कर मनवांछित भोग भोगते भए। प्रिया प्रीतममें अद्भुत प्रीति होती भई। एक क्षण भी आपसमें वियोग सहार न सकें। यह केकसी रत्नश्रवाके चित्तका बंधन होती भई। दोनो अत्यंत रूपवान नवयौवन महा धनवान इनके धर्मके प्रभावसे किसी भी वस्तुकी कमी नाहीं। यह राणी पतिव्रता पतिकी छाया समान अनुगामिनी होती भई।

एक समय यह राणी रत्नके महलमे सुंदर सेजपर पडी हुती। कैसी है सेज ? क्षीरसमुद्रकी तरंग समान उज्ज्वल हैं वस्त्र जहां, अर महा कोमल है, अनेक सुगंधकरि मंडित है, रत्नोका उद्योत होय

रहा है। राणीके शरीरकी सुगंधसे भ्रमर गुंजार कर है। अपने मनका मोहनहारा जो अपना पति उसके गुणोको चितवती हुई। अर पुत्रकी उत्पत्तिको वांछती हुई पडी हुती। सो रात्रिके पीछले पहर महा आश्चर्यके करणहारे शुभ स्वप्ने देखे। बहुरि प्रभातविषे अनेक बाजे बाजे, शंखोंका शब्द भया, मागध बंदीजन विरद बखानते भए। तब राणी सेजसे उठकर प्रभातक्रिया कर महामंगलरूप आभूषण पहरे सखियोकर मंडित पति ढिग आई। राजा राणीको देख उठे, बहुत आदर किया। दोऊ एक सिंहासनपर विराजे, राणी हाथ जोड राजासे विनती करती भई—"हे नाथ! आज रात्रिके चतुर्थ-पहरमे तीन शुभ स्वप्न देखे हैं। एक महाबली सिंह गाजता, अनेक गजेंद्रोके कुंभस्थल विदारता हुआ परम तेजस्वी आकाशसे पृथ्वीपर आय मेरे मुखमें होकर कुक्षिमें आया, अर सूर्य अपनी किरणोसे तिमिरका निवारण करता मेरी गोदमें आय तिष्ठ्या, अर चन्द्रमा अखंड है मंडल जाका, सो कुमुदन को प्रफुल्लित करता अर तिमिरको हरता हुआ, मैंने अपने आगे देख्या। यह अद्भुत स्वप्न मैंने देखे सो इनके फल क्या है ? तुम सब जानने योग्य हो। स्त्रियोको पतिकी आज्ञा ही प्रमाण है। तब यह बात सुन राजा स्वप्नके फलका व्याख्यान करते भए। राजा अष्टांग निमित्तके जाननहारे जिनमार्ग मे प्रवीण है। हे प्रिये ! तेरे तीन पुत्र होंगे जिनकी कीर्ति तीन जगतमें विस्तरेगी। बडे पराक्रमी, कुलके वृद्धि करणहारे, पूर्वोपार्जित पुण्यसे महासम्पदाके भोगनहारे, देवोसमान अपनी कांतिसे जीत्या है चंद्रमा, अपनी दीप्तिसे जीता है सूर्य, अपनी गम्भीरताकरि जीत्या है समुद्र, अर अपनी स्थिरतासे जीत्या है पर्वत जिन्होने, स्वर्गके अत्यन्त सुख भोग मनुष्यदेह धरेंगे। महाबलवान, जिनको देव भी न जीत सकैं, मनवांछित दानके देनहारे, कल्पवृक्ष समान अर चक्रवर्ती समान है ऋद्धि जिनके, अपने रूपकरि सुन्दर स्त्रियोके मन हरणहारे, अनेक शुभ लक्षणोकर मंडित उतंग है वक्षस्थल जिनका, जिनका नाम ही श्रवणमात्र से महा बलवान वैरी भय मानेंगे। तिनमें प्रथम पुत्र आठवां प्रतिवासुदेव होयगा। महासाहसी शत्रुओके मुखरूप कमल मुद्रित करनेको चंद्रमासमान। तीनो भाई ऐसे योद्धा होंगे कि युद्धका नाम सुन

कर जिनके हर्षके रोमांच होयगे । अर बडा भाई कछुइक भयकर होयगा, जिस वस्तुकी हठ पकडेगा सो न छोडेगा, जिसको इन्द्र भी समझानेको समर्थ नाहीं । ऐसा पतिका वचन सुनकर राणी परम हर्षको प्राप्त होय विनयथकी भरतारको कहती भई —हे नाथ ! हम दोऊ जिनमार्गरूप अमृतके स्वादी कोमलचित्त, अपने पुत्र क्रूरकर्मा कैसे होय ? अपने तो जिनवचनमें तत्पर कोमल परिणामी होना चाहिए । अमृतकी बेलपर विषपुष्प कैसे लागे ? तब राजा कहते भए कि—हे वरानने ! सुन्दर है मुख जाका ऐसी तू हमारे वचन सुन । यह प्राणी अपने कर्मके अनुसार शरीर धरे है, तातें कर्म ही मूल कारण है, हम मूलकारण नाहीं, हम निमित्त कारण हैं । तेरा बडा पुत्र जिनधर्मी तो होयगा परन्तु कछुइक क्रूरपरिणामी होयगा, अर ताके दोऊ लघु वीर महाधीर जिनमार्गविषैं प्रवीण, गुणग्रामकरि पूर्ण भली चेष्टाके धरणहारे, शीलके सागर होवेंगे । संसार भ्रमणका है भय जिनको, धर्मविषैं अति दृढ, महा दयावान, सत्य वचनके अनुरागी होवेंगे । तिन दोऊनिके ऐसा ही सौम्यकर्मका उदय है । हे कोमलभाषिणी ! हे दयावती ! प्राणी जैसा कर्म करे है तैसा ही शरीर धरे है । ऐसा कहकर वे दोऊ राजा राणी जिनेंद्रकी महापूजाविषै प्रवरते । कैसे हैं ते ? रात दिवस नियम धर्मविषै सावधान हैं ।

अथानन्तर प्रथम ही गर्भविषै रावण आए, तब माताकी चेष्टा कछुइक क्रूर होती भई । यह वांछा भई कि बैरियोंके सिरपर पांव धरूं । राजा इन्द्रके ऊपर आज्ञा चलाऊं, विनकारण भौंहें टेढी करनी, कठोर वाणी बोलना यह चेष्टा होती भई । शरीरमें खेद नाहीं । दर्पण विद्यमान है तौ भी खड्गमें मुख देखना, सखीजनसूं खिझ उठना, काहूकी शंका न राखनी ऐसी उद्धत चेष्टा होती भई । नवमें महीने रावण का जन्म भया । जा समय पुत्र जन्म्या तासमय बैरियोंके आसन कम्पायमान भए । सूर्यसमान है ज्योति जाकी ऐसा बालक ताकूं देखकर परिवारके लोकनिके नेत्र थकित होय रहे हैं । देव दुंदुभी बाजे बजाने लगे, बैरीनिके घरविषै अनेक उत्पात होने लगे । माता पिताने पुत्रके जन्मका अति हर्ष किया । प्रजाके सब भय मिटे, पृथ्वीका पालक उत्पन्न भया, सेजपर सूते पडे अपनी लीला करें देवनिसमान हैं दर्शन

जिनका। राजा रत्नश्रवाने बहुत दान दिया। आगे इनके बडे जो राजा मेघवाहन भए उनको राक्षसनिके इन्द्र भीमने हार दिया हुता, जाकी हजार नागकुमारदेव रक्षा करें, सो हार पास धरा था। सो प्रथम दिवस ही के बालकने खैंच लिया। बालकको मुट्ठीमें हार देख माता आश्चयको प्राप्त भई। अर महा-स्नेहतै बालकको छातीसे लगाय लिया। अर सिर चूम्बा, अर पिताने भी हारसहित बालकको देख मनमें विचारी कि यह कोई महापुरुष ह। हजार नागकुमार जाकी सेवा करैं ऐसे हारतै होता ही बालक क्रीडा करता भया। यह सामान्य पुरुष नाहीं, याकी शक्ति ऐसी होयगी जो सब मनुष्योको उलघ। आगे चारणमुनिने मुझे कह्या हुता कि तेरे पदवीधर पुत्र उत्पन्न होवेंगे। सो अपने प्रति-वासुदेव शलाका पुरुष प्रकट भए ह। हारके योगसे दशवदन पिताको नजर आए, तब उसका दशानन नाम धरचा। बहुरि कुछ कालमें कुम्भकण भए, सो सूय समान ह तेज जिनका। बहुरि कुछएक कालमें पूणमासीके चन्द्रमा समान ह वदन जाका ऐसी चन्द्रनखा बहिन भई। बहुरि विभीषण भए। महा सौम्य, धर्मात्मा, पापकमत रहित, मानो साक्षात धम ही देहधारी अवतरा ह। यद्यपि जिनके गुणनिकी कीर्ति जगतविषे गाइए ह ऐसे दशाननकी बालक्रीडा दुष्टनि भयरूप होती भई। अर दोऊ भाइनकी क्रीडा सौम्यरूप होती भई। कुम्भकण अर विभीषण दोनोके मध्य चन्द्रनखा चाद सूयके मध्य सन्ध्या समान शोभती भई। रावण बाल अवस्थाको उलघ कर कुमार अवस्थामें आया। एकदिन रावण अपनी माताकी गोदमें तिष्ठे था, अपने दातनिकी कातिसे दशो दिशामें उद्योत करता सता जिनके सिरपर चूडामणि रत्न धरा ह ता समय वश्रवण आकाशमागसे जाय था। सो रावणके ऊपर होय निकस्या। अपनी काति करि प्रकाश करता सता विद्याधरोके समूहकरि युक्त, महा बलवान विभूतिका धनी, मेघसमान अनेक हाथियोकी घटा मदकी धारा बरसाते,जिनके बिजली समान साकल चमक, महा शब्द करते आकाश मागसे निकसे। सो दशों दिशा शब्दायमान होय गई। आकाश सेना करि व्याप्त होयगया। सो रावणने ऊचो दृष्टिकर देख्या तो बडा आडम्बर देखकर माताकू पूछो यह कौन ह ?

अर अपने मानसे जगतको तण समान गिनता महा सेनासहित कहा जाय है ? तब माता कहती भई "तेरी मौसीका बेटा ह, सब विद्या थाकू सिद्ध ह, महालक्ष्मीवान ह, शत्रुओको भय उपजावता सता पथ्वीविष विचर ह । महा तेजवान ह, मानो दूसरा सूय ही ह । राजा इन्द्रका लोकपाल ह । इन्द्रन तिहारे दादाका भाई माली युद्धमें हराया, अर तुम्हारे कुलमे चली आइ जो लकापुरी वहासे तुम्हारे दादेको निकासकर ये राख्या । सो लकामें थाण रह ह । यह लकाके लिए तेरा पिता निरतर अनेक मनोरथ कर ह, रात दिन चन नाहीं पड ह, अर म भी इस चितामें सूख गई हू । हे पुत्र ! स्थानभष्ट होनेत मरण भला ? ऐसा दिन कब होय जो तू अपनो कुलकी भूमिको प्राप्त होय, अर तेरी लक्ष्मी हम देखें, तेरी विभूति देखकर तेरे पिताका अर मेरा मन आनन्दको प्राप्त होय । ऐसा दिन कब होयगा जब तेरे यह दोनो भाईयोको विभूति सहित तेरी लार इस पथ्वीपर प्रतापयुक्त हम देखेंगे । तिहारे कटक न रहेगा ।" यह माताके दीनवचन सुन अर अश्रुपात डारती देखकर विभीषण बोले । कसे है विभीषण ? प्रकट भया ह क्रोधरूप विषका अकुर जिनके, हे माता ! कहा यह रक वश्रवण विद्याधर, जो देव होय तो भी हमारी दष्टि मे न आवे । तुमने इसका इतना प्रभाव वरणन किया सो कहा ? तू वीरप्रसवनी अर्थात योधाओकी माता ह, महाधीर ह, अर जिनमागमे प्रवीण ह, यह ससारकी क्षणभगुर माया तोत छानी नाहीं । काहेको ऐसे दीन वचन कायर स्त्रियोके समान तू कह ह ? क्या तोकू रावण की खबर नाहीं ह । यह श्रीवत्सलक्षणकर मडित अदभुत पराक्रमका धरणहारा महाबली, अपार है चेष्टा जाकी, भस्म करि जसे अग्नि दबी रह तसे मौन गह रह्या । यह समस्त शत्रुवगनिके भस्म करणेको समथ ह, तेरे मनविष अबतक नहीं आया ह । यह रावण अपनी चालसे चित्तको भी जीते ह । अर हाथ की चपेटसे पवतोको चूर कर डारे ह । याकी दोऊभुजा त्रिभुवनरूप मन्दिरके स्तम्भ है अर प्रतापको राजमाग ह, क्षत्रवतीरूप वक्षके अकुर ह, सो तने क्या नहीं जाने ? या भाति विभीषण ने रावणके गुण वणन किये । तब रावण मातासो कहता भया, हे माता ! गवके वचन कहने योग्य

नाहीं, परन्तु तेरे सन्देहके निवारन अर्थि म सत्य वचन कहूहू, सो तू सुन। जो यह सकल विद्याधर अनेक प्रकार विद्याकरि गर्वित दोऊ श्रेणियनिके एकत्र होयकर मेरेसे युद्ध करै तौ भी मै सबनिकू एक भुजासे जीतू ।

तथापि हमारे विद्याधरनिके कुलविष विद्याका साधन उचित ह। सो करते लाज नाहीं। जैसे मुनिराज तपका आराधन कर तस विद्याधर विद्याका आराधन कर, सो हमको करणा योग्य है। ऐसा कहकर दोऊ भाईनिसहित माता पिताको नमस्कारकर नवकार मन्त्रका उच्चारणकर रावण विद्या साधनेको चाले। माता पिताने मस्तक चूमा अर असीस दोनी। पाया है मगलसस्कार जिन्होने, स्थिरभूत ह चित्त जिनका, घरत निकसिकर हषरूप होय भीम नामा महावनमें प्रवेश किया। कसा ह वन ? जहा सिंहादि क्रूर जीव नाद कर रह ह, विकराल ह दाढ अर वदन जिनके, अर सूते जे अजगर तिनके निश्वाससे कम्पायमान ह बडे बडे वक्ष जहा, अर नीच ह व्यतरोके समूह जहा, जिनके पायनसे कम्पायमान ह पृथ्वीतल जहा, अर महा गभीर गुफाओमें अधकारका समूह फल रहा ह, मनुष्योकी तो कहा बात ? जहा देव भी गमन न कर सक ह। जाकी भयकरता पथ्वीमें प्रसिद्ध ह। ज्हा पवत दुगम महा अधकारको धर, गुफा अर कटकरूप वक्ष ह, मनुष्योका सचार नाहीं। तहा ये तीनो भाई उज्ज्वल धोती दुपटटा धारे शातिभावको ग्रहणकर, सव आशा निवत्तकर विद्याके अथ तप करवेको उद्यमी भए। कसे ह ते भाई ? निशक ह चित्त जिनका, पूण चद्रमा समान ह वदन जिनका, विद्याधर-निके शिरोमणि, जुदे जुदे वनमे विराजे ह। डेढ दिनमें अष्टाक्षर मत्रके लक्ष जाप किये, सो सवकाम-प्रदा विद्या तीनो भाईयनिको सिद्ध भई। सो मनवाछित अन्न इनको विद्या पहुंचावे। क्षुधाकी वाछा इनको न होती भई। बहुरि ये स्थिरचित्त होय सहसकोटि षोडशाक्षरमन्त्र जपतें भए। उससमय जम्बू-द्वीपका अधिपति अनावत्ति नामा यक्ष, स्त्रीनि सहित क्रीडा करता आय प्राप्त हुवा। सो ताकी देवा-गना इन तीनो भाईनिकू महा रूपवान, अर नवयौवन, तपविष सावधान ह मन जिनका, ऐसे देख

कौतुक कर इनके समीप आई। कमल समान है मुख जिनके, भमर समान हैं श्याम सुन्दर केश जिनके। कईएक आपसमें बोली—"अहो! यह राजकुमार अतिकोमलशरीर कांतिधारी वस्त्राभरणरहित कौन अर्थ तप कर है? ऐसे इनके शरीरकी कांति भोगनि विना न सोहै। कहां इनकी नवयौवन वय अर कहां यह भयानक वनविषै तप करना?" बहुरि इनके तपके डिगावनेके अर्थ कहती भई—"अहो अल्प बुद्धि! तुम्हारा सुंदर रूपवान शरीर भोगका साधन है, योगका साधन नाहीं। तात काहेको तपका खेद करो हो, उठो घर चलो, अब भी कुछ गया नाहीं।" इत्यादि अनेक वचन कहे, परन्तु इनके मन में एकहू न आई। जैसे जलकी बूंद कमलके पत्र पर न ठहरै। तब वे आपसमें कहती भई। हे सखी! ये काष्टमई है, सब अंग इनके निश्चल दीखै है। ऐसा कहकर क्रोधायमान होय तत्काल समीप आई। इनके विस्तीर्ण हृदय पर कुंडलकी दीनी तौ भी ये चलायमान न भए। स्थिरीभूत है चित्त जिनका, कायर पुरुष होय सोई प्रतिज्ञासे डिगै, देविनिके कहते अनावृत यक्षने हंसकर कहा—भो सत्पुरुषो! काहेको दुर्धर तप करो, अर किस देवको आराधो हो—ऐसे कह्या, तौहू ये बोले नाहीं, चित्रामके होय रहे। तब अनावृतयक्षने क्रोध किया कि जम्बूद्वीपका देव तो मैं हूं, मुझको छाडकर कौनकूं ध्यावै है। ये मंदबुद्धि है, इनको उपद्रव करनेकेअर्थ अपने किंकरनिको आज्ञा दई। सो किंकर स्वभावहीसे क्रूर हुते अर स्वामीके कहेसे उन्होंने और भी अधिक अनेक उपद्रव किये। कईएक तो पर्वत उठाय उठाय लाए अर इनके समीप पटके, तिनके भयंकर शब्द भए। कईएक सर्प होय सब शरीरसे लिपट गए। कईएक नाहर होय मुख फाडकर आए, अर कईएक शब्द काननिमें ऐसे करते भए जिनको सुनकर लोक बहिरे होजाय, तथा मायामई डंस बहुत किये, सो इनके शरीरतैं आय लगे। अर मायामई हस्ती दिखाये, असराल पवन चलाई, मायामई दावानल लगाई। या भांति अनेक उपद्रव किए, तो भी यह ध्यानसे न डिगे। निश्चल है अंतःकरण जिनका। तब देवोंने मायामई भीलनिकी सेना बनाई। अंधकार समान काल विकराल आयुधोंको धर इनको ऐसी माया दिखाई कि पुष्पांतक नगर मारचा।

अर महायुद्धमें रत्नश्रवाको कुटुम्ब सहित बधा हुवा दिखाया। अर यह दिखाया कि माता केकसी विलाप कर ह, कि हे पुत्रो! इन चाडाल भीलनिने तिहारे पिताकू महाउपद्रव किया। अर ये चाडाल मोकू मार ह, पावोमें बडी डारी ह, माथेके केश खींचे ह। हे पुत्रो! तुम्हारे आगे मोकू ये म्लेच्छ भील पल्लीमें लिए जाय ह। तुम कहते हुते जो समस्त विद्याधर एकत्र होय मुझसे लडै, तौ भी न जीता जाऊ, सो यह वार्ता तुम मिथ्या ही कहते। अब तुम्हारे आग म्लेच्छ चाडाल मोकू केश पकड खींचे लिये जाय ह। तुम तीनो ही भाई इन म्लेच्छनित युद्ध करवे समथ नाहीं। मद पराक्रमी हो। हे दशग्रीव! तेरा स्तोत्र विभाषण वथा ही कर था, तू तो एक ग्रीवा भी नाहीं जो माताकी रक्षा न कर। अर यह कु भकरण हू हमारी पुकार काननित सुन नाहीं। अर ये विभीषण कहाव ह, सो वृथा ह। एक भी रत लडने समथ भी नाहीं। अर यह म्लेच्छ तिहारी बहिन चन्द्रनखाको लिये जाय ह। सो तुमको लज्जा नाहीं। अर विद्या जो साधिए, सो माता पिताकी सेवा अथ, सो विद्या किस काम आवेगी? इत्यादि मायामई देवनिन चेष्टा दिखाई तोहू ये ध्यानसे नाहीं डिगे। तदि देवोने एक भयानक माया दिखाई अर्थात रावणके निकट रत्नश्रवाका सिर कटया दिखाया। रावणके निकट भाईनिके भी सिर कटे दिखाए अर भाइयोके निकट रावणका भी सिर कटया दिखाया सो रावण तो सुमेरुपवत समान अति निश्चल ही रहे। जो ऐसा ध्यान महामुनि कर तो अष्टकमनिकू छेद, परन्तु कु भकण विभीषण के कछुएक व्याकुलता भई, परन्तु कुछ विशेष नाहीं, सो रावणको तो अनेक सहस विद्या सिद्धि भई। जेते मत्र जपनेके नेम किये थे ते पूण होनेसे पहिले ही विद्या सिद्ध भइ। धमके निश्चयत कहा न होय? ऐसा दढ निश्चय भी पूर्वोपार्जित उज्ज्वल कमत होय ह, कम ही ससारका मूलकारण है, कर्मानुसार यह जीव सुखदुख भोगव ह। समयविष उत्तम पात्रोको विधिसे दान देना अर दयाभाव करि सदा ही सबको देना, अर अन्त समयमें समाधिमरण करना, अर सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति किसी उत्तम जीवहीके होय ह। कईएकके तो विद्या दश वषमें सिद्ध होय ह, कईएकके क्षणमात्रमें। यह सब

कमनिका प्रभाव जानो । रात दिन धरतीविषै भ्रमण करो, अथवा जलविषै प्रवेश करो तथा पर्वतके मस्तक परो । अनेक शरीरके कष्ट करो तथापि पुण्यके उदय विना कार्यसिद्धि नाहीं । जे उत्तम कर्म नाहीं करै है ते वृथा ही शरीर खोवै है । तातैं आचार्यनिकी सेवा कार्य सब आदरतैं करनी, पुरुषनिको सदा पुण्य ही करना योग्य है । पुण्य विना कहातैं सिद्धि होय ? हे श्रेणिक ! पुण्यका प्रभाव देखि जो थोडे ही दिनोमें विद्या अर मन्त्रविधि पूर्ण भये पहिले ही रावणको महाविद्या सिद्ध भई । जे जे विद्या सिद्धि भई जिनके संक्षेपतासे नाम सुनहु । नभ संचारिणी, कामदायिनी,कामगामिनी, दुर्निवारा, जगतकंपा, प्रगुप्ति, भानुमालिनी, अणिमा, लघिमा, क्षोभ्या, मनस्तंभनकारिणी, संवाहिनी, सुरध्वंसी, कौमारी, वद्धकारिणी, सुविधाना, तमोरूपा, दहना, विपुलोदरी, शुभप्रदा, रजोरूपा, दिनरात्रिविधायिनी, वजोदरी, समाकर्षिट, अदर्शिनी, अजरा, अमरा, अनवस्तंभिनी, तोयस्तंभिनी, गिरिदारिणी, अवलोकिनी, ध्वंशी, धीरा, घोरा, भुजंगिनी, वीरिनी, एकभुवना,अवध्या, दारुणा, मदनासिनी, भास्करी, भयसंभूति, ऐशानी, विजया, जया, बंधिनी, मोचनी, बाराही, कुटिलाकृत्ति, चित्तोद्भवकरी, शांति, कौवेरी, वशकारिणी, योगेश्वरी, बलोत्साही, चंडा, प्रीतिप्रवर्षिणी, इत्यादि अनेक महा विद्या रावणको थोडे ही दिननिमें सिद्ध भई । तथा कुम्भकरणको पांच विद्या सिद्ध भई । उनके नाम संवहारिणी, अतिसर्वाधिनी, जंभिनी, व्योमगामिनी, निद्रानी तथा विभीषणको चार विद्या सिद्ध भई—सिद्धार्था, शत्रुदमनी, व्याघाता, आकाशगामिनी यह तीनो ही भाई विद्याके ईश्वर होते भए, अर देवनिके उपद्रवत मानो नवे जन्ममें आए । तब यक्षोका पति अनावृत जंबूद्वीपका स्वामी इनको विद्यायुक्त देखकर बहुत स्तुति करी अर दिव्य आभूषण पहराए । रावणने विद्याके प्रभावकरि स्वयंप्रभ नगर बसाया । वह नगर पर्वतके शिखर समान ऊंचे महलोंकी पंक्तिसे शोभायमान है, अर रत्नमई चैत्यालयोंसे अति प्रभावको धरै है । जहां मोतीनिकी झालरीकरि ऊंचे झरोखे शोभैं हैं, पद्मराग मणियोके स्तंभ हैं । नानाप्रकारके रत्ननिके रंगके समूहकरि जहां इंद्रधनुष होय रहा है । रावण भाईनि सहित ता नगरमें

विराजे। कसे ह राजमहल ? आकाशमें लग रहे ह शिखर जाके, विद्यावलकरि पडित रावण सुखसू तिष्ठै।

जम्बूद्वीपका अधिपति अनावत देव रावणसो कहता भया—"हे महामते ! तेरे धयकरि म बहुत प्रसन्न भया, अर म सव जम्बूद्वीपका अधिपति हू, तू यथेष्ट वरियोको जीतता सता सवत्र विहार कर। हे पुत्र ! म बहुत प्रसन्न भया, अर स्मरणमात्रत तेरे निकट आऊगा। तब तुझे कोई भी न जीत सकेगा। अर बहुत काल भाइयोसहित सुखसो राज कर, तेरे विभूति बहुत होहु" या भाति आशीर्वाद देय बारम्बार याकी स्तुतिकर यक्ष परिवारसहित अपने स्थानको गया। समस्त राक्षसवशी विद्याधरो ने सुनी जो रत्नश्रवाका पुत्र रावण महाविद्यासयुक्त भया सो सबको आनन्द भया। सब ही राक्षस बडे उत्साह सहित रावणके पास आए। कईएक राक्षस नत्य कर ह, कईएक गान कर ह, कईएक शत्रुपक्षको भयकारी गाज ह, कईएक ऐसे आनन्दकरि भर गए ह कि आनन्द अगमें न समाव ह। कईएक हस ह, कईएक केलि कर रहे ह, सुमाली रावणका दादा अर छोटा भाई माल्यवान तथा सूयरज रक्षरज राजा वानरवशी सब ही सुजन आनन्दसहित रावणप चाले। अनेक वाहनोपर चढे, हषसो आव ह। रत्नश्रवा रावणके पिता पुत्रके स्नेहकरि भर गया ह मन जाका, ध्वजाओसे आकाश को शोभित करता सता परम विभूतिसहित महामन्दिरसमान रत्ननिके रथपर चढि आया। बदीजन विरद बखान ह। सव इकटठे होयकर पचसगम नामा पवतपर आए। रावण सन्मुख गया। दादा पिता अर सूयरज रक्षरज बडे ह, सो इनको प्रणामकर पायन लाग्या, अर भाईनिको बगलगीरिकर मिला, अर सेवक लोगोको स्नेहकी नजरसे देख्या अर अपने दादा पिता अर सूयरज रक्षरजसो बहुत विनयकर कुशलक्षेम पूछी। अर बहुरि उन्होने रावणसे पूछी। रावणको देख गुरुजन ऐसे खुशी भये जो कहनेमे न आव। बारम्बार रावणको सुखवार्ता पूछ, अर स्वयप्रभ नगरको देखिकरि आश्चयको प्राप्त भए। देवलोक समान यह नगर ताकू देखकर राक्षसवशी अर वानरवशी सब ही अति प्रसन्न भए, अर पिता रत्नश्रवा अर माता केकसी, पुत्रके गातको स्पशते सते अर इसको बारबार प्रणाम करता हुता देख

कर बहुत आनन्दको प्राप्त भए। दुपहरके समय रावणने बडोको स्नान करावनेका उद्यम किया। तदि सुमाली आदि रत्नोकें सिंहासनपर स्नानके अर्थ विराजे। सिंहासनपर इनके चरण पल्लवसारिखे कोमल अर लाल कसे शोभते भए जसे उदयाचल पर्वतपर सूर्य शोभ। बहुरि स्वर्णरत्नोके कलशादि से स्नान कराया। कलश कमलके पत्रनिकरि आच्छादित हु मुख जिनके, अर मोतियोकी मालाकरि शोभ हु, अर महा कांतिको धर हु, अर सुगंधजलकरि भरे हु, जिनकी सुगंधिकरि दशो दिशा सुगंधमयी रोय रही हु, अर जिनपर भ्रमर गुंजार कर रहे हु। स्नान करावते जब कलशोका जल डारिए हु तदि मेघ सारिखे गाज हु। पहले सुगंध द्रव्यनिका उबटना लगाया पीछे स्नान कराया। स्नानके समय अनेक प्रकारके वादित्र बाजे। स्नान कराकर दिव्य वस्त्राभूषण पहराए, अर कुलवतिनी राणियो ने अनेक मंगलाचरण किए। रावणादि तीनो भाई देवकुमार सारिखे गुरुनिका अति विनयकर चरणो की वंदना करते भए। तदि बडोने बहुत आशीर्वाद दिये—'हे पुत्रो! तुम बहुत काल जीवो और महासंपदा भोगो, तुम्हारीसी विद्या औरमें नाहीं'। सुमाली, माल्यवान, सूर्यरज, रक्षरज अर रत्नश्रवा इन्होने स्नेहकरि रावण, कुंभकरण, विभीषणको उरसो लगाया। बहुरि समस्त भाई अर समस्त सेवकलोग भलीविधिसो भोजन करते भए। रावणने बडेनिकी बहुत सेवा करी अर सेवक लोगोका बहुत सन्मान किया। सबनिको वस्त्राभूषण दिये। सुमाली आदि सब ही गुरुजन फूलगए हु नेत्र जिनके, रावणसे अति प्रसन्न होय कहते भए। हे पुत्रो! तुम बहुत सुखसे रहो। तब नमस्कार कर कहते भये—हे प्रभो हम आपके प्रसादकरि सदा कुशलरूप हु। बहुरि मालीकी बात चाली, सो सुमाली शोकके भारकरि मूर्छा खाय गिरा, तदि रावणने शीतोपचारकरि सचेत किया, अर समस्त शत्रुओके समूहके घातरूप सामंतता के वचन कहकर दादाको बहुत आनन्दरूप किया। सुमाली कमलनेत्र रावणको देखकरि अति आनन्दरूप भए। सुमाली रावणको कहते भए—अहो पुत्र! तेरा उदार पराक्रम जाहि देख देवता प्रसन्न होय। अहो कांति तेरी सूर्यको जीतनहारी, गंभीरता तेरी समुद्रसे अधिक हु, पराक्रम तेरा सब सामंतनिकू

उलंघ, अहो वत्स ! हमारे राक्षस कुलका तू तिलक प्रकट भया है। जैसे जम्बूद्वीपका आभूषण सुमेरु है, अर आकाशके आभूषण चांद सूर्य हैं ! तैसे हे पुत्र रावण ! अब हमारे कुलका तू मंडन है। महा आश्चर्यकी करणहारी चेष्टा तेरी सकल मित्रोंको आनन्द उपजावै है। जब तू प्रकट भया तब हमको क्या चिंता है। आगे अपने वंशमें राजा मेघवाहन आदि बडे २ राजा भए, वे लंकापुरीका राज करके पुत्रोंको राज देय मुनि होय मोक्ष गए, अब हमारे पुण्यकरि तू भया। सब राक्षसोंके कष्टका हरण-हारा, शत्रुवर्गका जीतनहारा तू महा साहसी, हम एक मुखतैं तेरी प्रशंसा कहांलौं करैं। तेरे गुण देव भी न कहि सकैं। ये राक्षसवंशी विद्याधर जीवनकी आशा छोड बैठे हुते, सो अब सबकी आशा बंधी। तू महाधीर प्रकट भया है। एक दिन हम कैलाश पर्वत गए हुते, तहां अवधिज्ञानीमुनिको हमने पूछी कि–'हे प्रभो ! लंकामें हमारा प्रवेश होयगा कि नाहीं ?' तब मुनिने कही कि–'तुम्हारे पुत्रका पुत्र होयगा। ताके प्रभावकरि तुम्हारा लंकामें प्रवेश होयगा। वह पुरुषोंमें उत्तम होयगा। तुम्हारा पुत्र रत्नश्रवा राजा व्योमबिंदुकी पुत्री केकसीको परणैगा। ताकी कुक्षिमें वह पुरुषोत्तम प्रकट होयगा। सो भरतक्षेत्रके तीन खंडका भोक्ता होगा। महा बलवान, विनयवान, जाकी कीर्ति दशोंदिशामें विस्तरैगी। वह बैरियोंसे अपना बास छुडावेगा, अर बैरियोंके बास दाबैगा। सो यामें आश्चर्य नाहीं। सो तू महा उत्सवरूप कुलका मंडन प्रकट्या है। तेरासा रूप जगतमें और काहूका नाहीं, तू अपने अनुपमरूपकरि सबके नेत्र अर मनको हरै है। इत्यादिक शुभ वचनोंसे सुमालीने रावणकी स्तुति करी। तब रावण हाथ जोड नमस्कारकर सुमाली सौं कहता भया कि हे प्रभो ! तुम्हारे प्रसादकरि ऐसा ही होहु। ऐसा कहिकर णमोकार मंत्र जप पंचपरमेष्ठीनिको नमस्कार किया, सिद्धोंका स्मरण किया जिससे सब सिद्ध होय।

आगे गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसों कहै है–हे श्रेणिक ! उस बालकके प्रभावसे बंधुवर्ग, सब राक्षसवंशी अर बानरवंशी अपने अपने स्थानक आय बसे। बैरियोंका भय न किया। या भांति पूर्व

भवके पुण्यसे पुरुष लक्ष्मीको प्राप्त होय है। अपनी कीर्तिसे व्याप्त करी है दशो दिशा जिसने, इस पृथ्वीमें बडी उमरका बूढा होना तेजस्विताका कारण नाहीं है जैसे अग्निका कण छोटा ही बडे वन को भस्म करै है, अर सिंहका बालक छोटा ही माते हाथियोंके कुंभस्थल विदारै हैं, अर चन्द्रमा उगता ही कुमुदोंको प्रफल्लित करै है अर जगतका संताप दूर करै है, अर सूर्य ऊगता ही कालीघटा समान अंधकारको दूर करै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषा वचनिकाविषै रावणका जन्म और विद्यासाधन कहनेवाला सातवां पर्व पूर्ण भया ॥ ६ ॥

अथानन्तर दक्षिण श्रेणीमें असुरसंगीत नामा नगर, तहां राजा मय विद्याधर, बडे योधा विद्याधरोंमें दैत्य कहावै। जैसे रावणके बडे राक्षस कहावै, इन्द्रके कुलके देव कहावै। ये सब विद्याधर मनुष्य हैं। राजा मयकी रानी हेमवती, पुत्री मंदोदरी, जिसके सब अंगोपांग सुन्दर, विशाल नेत्र, रूप अर लावण्यता रूपी जलकी सरोवरी, ताको नवयौवनपूर्ण देख पिताको परणावनेकी चिंता भई। तदि अपनी राणी हेमवतीसो पूछ्या—'हे प्रिये! अपनी पुत्री मंदोदरी तरुण अवस्थाको प्राप्त भई, सो हमको बडी चिंता है। पुत्रियोंके यौवनके आरम्भसे जो संतापरूप अग्नि उपजै तामें माता पिता कुटुम्बसहित इंधनके भावको प्राप्त होय है। तातै तुम कहो, यह कन्या किसको परणावैं? गुण कुलमें कांतिमें इसके समान होय ताको देनी। तब राणी कहती भई—हे देव! हम पुत्रीके जनने अर पालनेमें हैं, परणावना तुम्हारे आश्रय है। जहां तुम्हारा चित्त प्रसन्न होय तहां देहु। जो उत्तम कुल की बालिका है ते भरतारके अनुसार चालै है। जब राणीने यह कह्या तदि राजानें मंत्रीनितैं पूछ्या। तब किसीने कोई बताया, किसीने इन्द्र बताया कि वह सब विद्याधरोंका पति है ताकी आज्ञा लोपतै सब विद्याधर डरै है। तब राजा मयने कही मेरी तो रुचि यह है—जो यह कन्या रावणको देनी, क्योंकि उसको थोडे ही दिनामें सर्व विद्या सिद्ध भई है, तातैं यह कोई बडा पुरुष है, जगतको आश्चर्य का

कारण है। तब राजाके वचन मारीच आदि सब मन्त्रियोंने प्रमाण किये। मन्त्री राजाके साथ कार्यमें प्रवीण हैं। तब भले ग्रह लग्न देख, क्रूर ग्रह टार, मारीचको साथ लेय राजा मय कन्याके परणावने को कन्या रावणपै ले चाले। रावण भीम नामा वनमें चन्द्रहास खडग साधनेको आए हुते, अर चन्द्र-हासकी सिद्धिकर सुमेरुपर्वतके चैत्यालयोंकी वंदनाको गए हुते। सो राजा मय हलकारोंके कहनेसें भीम नामा वनमें आए। कैसा है वह वन ? मानो काली घटाका समूह ही है, जहां अति सघन अर ऊंचे वृक्ष हैं। वनके मध्य एक ऊंचा महल देख्या, मानो अपने शिखरनिकरि स्वर्गको स्पर्शे है। रावण ने जो स्वयंप्रभ नामा नया नगर बसाया है ताके समीप ही यह महल है। सो राजा मय विमानतैं उतरि करि महलके समीप डेरा किया, अर वादित्रादि सब आडम्बर छोडि कैयक निकटवर्ती लोकनि सहित मन्दोदरीको लेय महलपर चढे। सातवें खण गए तहां रावणकी बहिन चन्द्रनखा बैठी हुती। कैसी है चन्द्रनखा ? मानो साक्षात वनदेवी ही है। या चन्द्रनखाने राजा मयको अर ताकी पुत्री मंदो-दरीको देखकर बहुत आदर किया, सो बडे कुलके बालकनिके यह लक्षण ही हैं। बहुरि विनयसंयुक्त इनके निकट बैठी। तब राजा मय चन्द्रनखाको पूछते भए—'हे पुत्री ! तू कौन है ? कौन कारण या वनमें अकेली बसै है ?' तब चन्द्रनखा बहुत विनयसो बोली—'मेरा बडा भाई रावण सो बेलाकरि चन्द्रहास खडगको सिद्धकरि अब मोहि खडगकी रक्षा सौंपि सुमेरुपर्वतके चैत्यालनिकी वंदनाको गए हैं। मैं भगवान श्रीचंद्रप्रभुके चैत्यालयविषै तिष्ठूं हूं। तुम बडे हितू सम्बन्धी हो, जो तुम रावणसूं मिलवे आये हो तो क्षणइक यहां विराजो।" या भांति इनके बात होय है। अर रावण आकाशके मार्ग होय आए ही, सो तेजका समूह नजर आया। तब चन्द्रनखाने कही 'अपने तेजसे सूर्यके तेजको हरता थका यह रावण आया है।" तब राजा मय मेघनिके समूह समान श्याम सुन्दर अर बिजुरी समान चमकते हुये आभूषण पहिरे रावणकूं देखि बहुत आदरतैं उठ खडे रहे, अर रावणसे मिले, अर सिंहासनपर विराजे। तब राजा मयके मन्त्री मारीच तथा वज्रमध्य अर वज्रोत्र अर नभस्तडित, उग्रनक्र, मरुध्वज,

मेधावी, सारण, शुक्र ये सब ही रावणको देखि बहुत प्रसन्न भए अर राजा मयसो कहते भए। हे देव! आपकी बुद्धि अति प्रवीण है, जो मनुष्यनिमें महा पदार्थ था सो तुम्हारे मनमें बस्या।' या भांति मयसे कहकर ये मयके मन्त्री रावणसो कहते भए—'हे रावण! हे महाभाग्य! आपका अद्भुतरूप अर महा पराक्रम है, अर आप अति विनयवान अतिशयके धारी अनुपम वस्तु हो। यह राजा मय दैत्योंका अधिपति दक्षिण श्रेणीमें असुरसंगीत नामा नगरका राजा है, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है। हे कुमार! तुम्हारे निर्मल गुणनिविषै अनुरागी हुआ आया है।'

तब रावणने इनका बहुत श्रेष्ठाचार किया अर पाहुणगति करी, अर बहुत मिष्ट वचन कहे। सो यह बड़े पुरुषनिके घरकी रीति ही है कि जो अपने द्वार आवै तिनका आदर कर ही करै। रावण मयके मन्त्रीनिसो कहा कि ये दैत्यनाथ बड़े हैं, मोहि अपना जान अनुग्रह किया। तब मयने कहा कि हे कुमार! तुमको यही योग्य है, जे तुम सारिखे साधु पुरुष हैं तिनके सज्जनता ही मुख्य है। बहुरि रावण श्रीजिनेश्वरदेवकी पूजा करनेको जिनमंदिरविषै गए। राजा मयको अर याके मन्त्रीनिहूकूं ले गए। रावणने बहुत भावसे पूजा करी, भगवानके आगे स्तोत्र पढ़े, बारबार हाथ जोडि नमस्कार किये, रोमाच होय आए, अष्टांग दंडवतकर जिनमंदिरतैं बाहिर आए। कैसे हैं रावण? अधिक है उदय जिनका, अर महा सुन्दर है चेष्टा जिनकी, चूडामणि करि शोभै है शिर जिनका। चैत्यालयतैं बाहिर आय राजा मय सहित आप सिंहासनपर विराजे। राजासे वैताड़ पर्वतके विद्याधरोंकी बात पूछी, अर मंदोदरीकी ओर दृष्टि गई तो देखकर मन मोहित भया। कैसी है मंदोदरी? सौभाग्यरूप रत्ननिकी भूमिका, सुन्दर हैं नख जाके, कमल समान हैं चरण जाके, स्निग्ध है तनु जाका, अर केलाके थम्भ समान मनोहर हैं जंघा जाकी, लावण्यतारूप जलका प्रवाह ही है, महा लज्जाके योगतै नीची है दृष्टि जाकी, सुवर्णके कुंभसमान हैं स्तन जाके, पुष्पोंसे अधिक है सुगंधता अर सुकुमारता जाकी, अर कोमल हैं दोऊ भुजलता जाकी, अर शंखके कंठ समान है ग्रीवा (गरदन) जाकी, पूर्णिमाके

चन्द्रमा समान है मुख जाका, शुकहूत अधिक सुन्दर है नासिका जाकी, मानो दोऊ नेत्रनिकी कांति-रूपी नदीका यह सेतुबंध ही है। मूंगा अर पल्लवसे अधिक लाल हैं अधर (होठ) जाके, अर महाज्योति को धरे अति मनोहर हैं कपोल जाके, अर वीणाका नाद, भ्रमरका गुंजार, अर उन्मत्त कोयलके शब्दसे भी अति सुन्दर है शब्द जाके, अर कामकी दूती समान सुन्दर है दृष्टि जाकी, नीलकमल अर रक्त-कमल अर कुमुद भी जीते ऐसी श्यामता आरक्तता शुक्लताको धरे, मानो दशोदिशामें तीन रंगके कम-लोंके समूह ही विस्तार राखे हैं। अर अष्टमीके चन्द्रमा समान मनोहर है ललाट जाका, अर लंबे बांके काले सुगंध सघन सचिक्कण हैं केश जाके, कमल समान हैं हाथ अर पांव जाके, अर हंसनीकूं अर हस्तिनीकूं जीतै ऐसी है चाल जाकी, अर सिंहहूत अति क्षीण है कटि जाकी, मानो साक्षात लक्ष्मी ही कमलके निवासको तजकर रावणके निकट ईर्षाको धरती हुई आई है। क्योंकि मेरे होते संते रावण के शरीरको विद्या क्यों स्पर्शे? ऐसे अद्भुत रूपको धरणहारी मंदोदरी रावणके मन अर नयननिकूं हरती भई। सकल रूपवती स्त्रीनिके रूप लावण्य एकत्रकरि इसका शरीर शुभ कर्मनिके उदयकरि बना है। अंग अंगमें अद्भुत आभूषण पहरे, महा मनोज्ञ मंदोदरीको अवलोकनकर रावणका हृदय काम बाणकरि बींध्या गया। महा मधुरताकरि युक्त जो वह, ताविषै रावणकी दृष्टि गयी संती नीठ नीठ पाछी आई। परन्तु मत्त मधुकर की नाईं घूमने लग गई। रावण चित्तमें चिंतवै है कि यह उत्तम नारी कौन है? श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी सरस्वती इनमेंसो यह कौन है? परणी है वा कुमारी? समस्त श्रेष्ठ स्त्रियोंकी यह शिरोभाग्य है। यह मन इन्द्रियनिको हरणहारी जो मैं परणूं तो मेरा नवयौवन सफल है, नाहीं तो तणवत वृथा है। ऐसा चिंतवन रावणने किया तबि राजा मय, मंदोदरी के पिता बडे प्रवीण, याका अभिप्राय जानि मन्दोदरीको निकट बुलाय रावणसों कही—"याके तुम ही पति हो।" यह वचन सुन रावण अति प्रसन्न भया, मानो अमृतकरि सींच्या है गात जाका, हर्षके अंकुर समान रोमांच होय आए। सब वस्तुनिकी इनके सामग्री हुती ही, ताही दिन मन्दोदरीका

विवाह भया। रावण मन्दोदरीको परणकरि अति प्रसन्न होय स्वयप्रभ नगरमें गए। राजा मय भी पुत्रीको परणाय निश्चित भए। पुत्रीके बिछोहत शोक सहित अपने देशको गए। रावणने हजारो राणी परणीं, उन सबकी शिरोमणी मन्दोदरी होती भई। मन्दोदरी भरतारके गुणोमें हरा गया है मन जाका, पतिकी अति आज्ञाकारिणी होती भई। रावण तासहित जस इन्द्र इन्द्राणी सहित रम तस सुमेरुके नदन वनादि रमणीक स्थाननिमैं रमते भये। कसी ह मन्दोदरी ? सब चेष्टा मनोज्ञ हैं जाकी। अनेक विद्या जो रावणने सिद्ध करी है तिनकी अनेक चेष्टा रावण दिखावते भए। एक रावण अनेक रूप धर अनेक स्त्रियोके महलोमें कोतूहल कर। कभी सूयकी नाईं तप, कभी चन्द्रमाकी नाइ चादनी विस्तर, अमत बरस, कभी अग्निकी नाईं ज्वाला विसतार, कभी मेघकी नाई जलधारा सूब कभी पवनकी नाइ पहाडोको चलाव, कभी इन्द्रकोसी लीला कर, कभी वह समुद्रकोसी तरग धरै, कभी वह पवत समान अचल वशा ग्रह। कभी माते हाथी समान चेष्टा कर, कभी पवनत अधिक बेगवाला अश्व बन जाय। क्षणमें नजीक, क्षणमे अदश्य, क्षणमें सूक्ष्म, क्षणमें स्थूल, क्षणमें भयानक, क्षणमें मनोहर या भाति रमता भया।

एक दिवस रावण मेघवर पवतपर गया तहा एक वापिका देखी। निमल ह जल जाका, अनेक जातिके कमलनिसे रमणीक ह, अर क्रौंच, हस, चकवा, सारस इत्यादि अनेक पक्षीनिके शब्द होय रहे हैं। अर मनोहर ह तट जाके, सुन्दर सिवाणोकरि शोभित ह। जिसके समीप अजुन आदि जातिके बडे बडे वक्षोकी छाया होय रही ह। जहा चचल मीनकी कलोल करि जलके छींटे उछल रहे ह। तहा रावण अति सुन्दर छ हजार राजकन्या क्रीडा करती देखी। कईएक तो जलकेलिमें छींटे उछाल है, कईएक कमलनिके वनमे घुसी हुई कमलवदनी कमलनिकी शोभाको जीत ह। भमर कमलोकी शोभाको छोडकर इनके मुखपर गुजार कर ह। कईएक मदग बजाव ह, कईएक बीण बजाव ह। ये समस्त कन्या रावणको देखकरि जलक्रीडाको तज खडी होय रहीं। रावण भी उनके बीच जाय जलक्रीडा करने लगे। तब

वे भी जलक्रीडा करने लागई। वे सब रावणका रूप देख कामबाणकरि बींधी गईं। सबकी दृष्टि यासौं ऐसी लगी जो अन्यत्र न जाय। याके अर उनके रागभाव भया। प्रथममिलापकी लज्जा अर मदनका प्रकट होना सो तिनका मन हिंडौलेमें झूलता भया। तिन कन्याओंमें जो मुख्य है उनका नाम सुनो। राजा सुरसुन्दर राणी सवश्रीकी पुत्री पद्मावती, नीलकमल सारिखे है नेत्र जाके। बहुरि राजा बुध राणी मनोवेगा, ताकी कन्या अशोकलता, मानो साक्षात अशोककी लता ही है। अर राजा कनक राणी सध्याकी पुत्री विद्युत्प्रभा, जो अपनी प्रभाकर बिजुलीकी प्रभाको लज्जावत करै है, सुन्दर है दशन जाका, बडे कुलनिकी बेटी, सब ही अनेक कलाकरि प्रवीण, उनमें ये मुख्य है। मानो तीन लोककी सुन्दरता ही मूर्त्ति धरकर विभूति सहित आई है। सो रावणने छ हजार कन्या गधर्व विवाह कर परणी। ते भी रावणसहित नानाप्रकारकी क्रीडा करती भईं।

तदि इनकी लार जे खोजे वा सहेली हुतीं ते इनके माता पिताओंसे सकल वृत्तात जाकर कहती भई। तब उन राजाओंने रावणके मारिवेको क्रूर सामन्त भेजे। ते भृकुटी चढाए होठ डसते आए, नानाप्रकारके शस्त्रोंकी वर्षा करते भए। ते सकल अकेले रावणने क्षणमात्रमें जीत लिये। तदि भाग कर कापते हुये राजा सुरसुन्दरप गए। जायकर हथियार डार दिये अर वीनती करते भए—'हे नाथ! हमारी आजीवकाको दूर करो, अथवा घर लूट लेवो, अथवा हाथ पाव छेवो तथा प्राण हरो, हम रत्नश्रवाका पुत्र जो रावण तासू लडवेको समर्थ नाहीं। ते समस्त छ हजार राजकन्या उसने परणीं अर उनके मध्य क्रीडा कर है। इन्द्र सारिखा सुन्दर, चद्रमा समान कातिधारी, जाकी क्रूर दृष्टि देव भी न सहार सकें, ताके सामने हम रककौन? हमने घने ही शूरवीर देखे, रथनूपुरका धनी राजा इन्द्र आदि याकी तुल्य कोऊ नाहीं। यह परम सुन्दर महा शूरवीर है। ऐसे वचन सुन राजा सुरसुन्दर महा क्रोधायमान होय राजा बुध अर कनक सहित बडी सेना लेय निकसे। और भी अनेक राजा इनके सग भए, सो आकाशसे शस्त्रनिकी कातिसे उद्योत करते आए। इन सब राजाओंको देखकरि ये

समस्त कन्या भयकर व्याकुल भइ, अर हाथ जोड रावणसो कहती भइ कि हे नाथ ! हमारे कारण तुम अत्यन्त सशयको प्राप्त भए, हम पुण्यहीन ह, अब आप उठकर कहीं शरण लेवो, क्योंकि ये प्राण दुलभ ह तिनकी रक्षा करो। यह निकट ही श्रीभगवानका मदिर ह तहा छिप रहो, यह क्रूर बैरी तुमको न देख आप ही उठ जावेंगे। ऐसे दीन वचन स्त्रीनिके सुन अर शत्रुनिका कटक निकट आया देख रावणने लाल नेत्र किये अर इनसो कहते भए—'तुम मेरा पराक्रम नाहीं जानो हो, काक अनेक भेले भए तो कहा गरुडको जीतेंगे ? एक सिहका बालक अनेक मदोन्मत्त हाथियोके मदकू दूर करै ह। ऐसे रावणके वचन सुन स्त्री हर्षित भइ, अर वीनती करी। 'हे प्रभो ! हमारे पिता अर भाई अर कुटुम्बनिकी रक्षा करहु'' तब रावण कहते भये—'हे प्यारी हो ! ऐसे ही होयगा, तुम भय मत करो, धीरता गहो।' यह बात परस्पर होय ह। इतनेमें राजाओंके कटक आए, तबि रावण विद्याके रचे विमानम बठ क्रोधकरि उनके सन्मुख भया। ते सकल राजा उनके योधाओंके समूह जसै पवतपर मोटी धारा मेघकी बरस तस बाणोकी वर्षा करते भए। वह रावण विद्याओंके सागर, ताने शिलानिपरि सव शस्त्र निवारे, अर कईएकनिको शिलानकरि ही भयको प्राप्त किए। बहुरि मनमें विचारा कि इन रकोके मारवेकरि कहा ? इनमें जो मुख्य राजा है तिनहीको पकड लेवो। तब इन राजानिको तामस शस्त्रोसे मूर्छितकर नागपाससे बाधलिया। तब इन छ हजार स्त्रियोने विनती कर छुडाये। तबि रावणने तिन राजानिकी बहुत सुश्रुषा करी। तुम हमारे परम हितू सबधी हो। तब वे रावणका शूरत्वगुण देख, महा विनयवान रूपवान देख बहुत प्रसन्न भए। अपनी अपनी पुत्रीनिका विधिपूवक पाणिग्रहण कराया। तीन दिन तक महा उत्सव प्रवरत्या। ते राजा रावणकी आज्ञा लेय अपने अपने स्थानको गए। रावण मदोदरीके गुणोकर मोहित ह चित्त जाका सो स्वयप्रभ नगरमें आए। तब याको स्त्रीनसहित आया सुन कुम्भकरण, विभीषण भी सन्मुख गए। रावण बहुत उत्साहसे स्वयप्रभनगरमें आए अर सुरराजवत् रमते भए।

अथानन्तर कुंभपुरका राजा मदोदर ताके राणी स्वरूपा, ताकी पुत्री तडिन्माला सो, कुंभकर्ण जाका प्रथम नाम भानुकर्ण था, तानें परणी। कसे है कुंभकर्ण? धर्मविषै आसक्त है बुद्धि जिनकी, अर महा योधा है, अनेक कलागुणमें प्रवीण है। हे श्रेणिक! अन्यमती लोक जो इनकी कीर्ति और भांति कहै हैं कि मांस अर लोहूका भक्षण करतें हुते, छह महीनाकी निद्रा लेते सो नाहीं। इनका आहार बहुत पवित्र स्वादरूप सुगंधमय था। प्रथम मुनीनिको आहार देय अर आर्यावृतिको आहार देय दुखित भुखित जीवनिको आहार देय, कुटुम्ब सहित योग्य आहार करत हुते मांसादिककी प्रवृत्ति नहीं थी। अर निद्रा इनको अर्धरात्रि पीछे अल्प थी। सदाकाल धर्मविषै लवलीन था चित्त जिनका, चरमशरीरी। जो लोग बडे पुरुषनिको झूठा कलंक लगावै हैं ते महा पापका बंध करै हैं। ऐसा करना योग्य नाहीं।

अथानन्तर दक्षिण श्रेणीमें ज्योतिप्रभनामा नगर, तहां राजा विशुद्धकमल राजा मयका बडा मित्र, ताके राणी नन्दनमाला, पुत्री राजीवसरसी, सो विभीषणने परणी। अति सुन्दर उस राणी सहित विभीषण अति कौतूहल करते भए। अनेक चेष्टा करते, जिनको रतिकेल करते तृप्ति नहीं। कसे है विभीषण? देवनि समान परम सुन्दर है आकार जिनका। अर कसी है राणी? लक्ष्मीसे भी अधिक सुन्दर है। लक्ष्मी तो पद्म कहिए कमल ताकी निवासिनी है अर यह राणी पद्मरागमणिके महल की निवासिनी है।

अथानन्तर रावणकी राणी मंदोदरी गर्भवती भई, सो याको माता पिताके घर लेगए। तहां इन्द्रजीत का जन्म भया। इन्द्रजीतका नाम समस्त पृथ्वीविषै प्रसिद्ध हुआ। अपने नानाके घर वृद्धिको प्राप्त भया, सिंहके बालककी नाईं साहसरूप उन्मत्त क्रीडा करता भया। रावणने पुत्रसहित मंदोदरी अपने निकट बुलाई। सो आज्ञा प्रमाण आई। मंदोदरीके माता पिताको इनके विछोहका अति दुःख भया। रावण पुत्रका मुख देखकरि परम आनन्दको प्राप्त भया, सुपुत्र समान और प्रीतिका स्थान नाहीं। फिर मंदोदरीको गर्भ रह्या तबि माता पिताके घर फिर लेगए। तहां मेघनादका जन्म भया। फिर

भरतारके पास आई, भोगके सागरमें मग्न भई। मवोदरीने अपने गुणोसे पतिका चित्त वश किया। अब ये दानो बालक इन्द्रजीत अर मेघनाद सज्जनोको आनन्दके करणहारे, सुन्दर चारित्रके धारक, तरुण अवस्थाको प्राप्त भए। विस्तीण है नेत्र जिनके, सो वषभ समान पथ्वीका भार चलावनहारे है।

अथानन्तर वश्रवण जिन जिन पुरोमे राज कर, उन हजारो पुरोमें कुभकरण धावे करते भये। जहा इन्द्रका, वश्रवणका माल होय सो छीनकर अपने स्वयप्रभ नगरीमे ले आवे। या बातसो वश्रवण, इन्द्रके जोरकरि अति गर्वित है, सो वश्रवणका दूत द्वारपालसो मिल सभामें आया अर सुमालीसो कहता भया। हे महाराज! वश्रवण नरेद्रने जो कह्या है सो तुम चित्त देय सुनो। वश्रवणने यह कहा है कि—तुम पडित हो, कुलीन हो, लोकरीतिके ज्ञायक हो, बडे हो, अकायत भयभीत हो, औरोको भले मागके उपदेशक हो, ऐसे जो तुम सो तुम्हारे आगे ये बालक चपलता कर तो क्या तुम अपने पोतानिको मन न करो? तियच अर मनुष्यमे यही भेद है कि मनुष्य तो योग्य अयोग्यको जाने है अर तियच न जाने है। यही विवेककी रीति है। करने योग्य काय करिए, न करने योग्य काय न करिए। जो दढ चित्त है वे पूव वत्तातको नाही भूले है। अर बिजुलीसमान क्षणभगुर विभूतिके होते सते भी गवको नाहीं धरे है। आगे क्या राजा मालीके मरवेकरि तुम्हारे कुलकी कुशल भई है? अब यह क्या स्यानपन है जो कुलके मूलनाशका उपाय करते हो। ऐसा जगतमे कोऊ नाहीं जो अपने कुलके मूलनाशको आदरे। तुम कहा इन्द्रका प्रताप भूल गए जो ऐसे अनुचित काम करो हो। कसे है इन्द्र? विध्वस किये है समस्त बरी जाने, समुद्र समान अथाह है। सो तुम मींडकके समान सपके मुखमें क्रीडा करो हो? कसा है सपका मुख? दाढरूपी कटकनिकरि भरया है, अर विषरूपी अग्निके कण जामते निकसे है। ये तुम्हारे पोते चौर है। अपने पोते पडोतोको जो तुम शिक्षा देनेको समथ नाहीं हो तो मुझ सौंपो, मे इनको तुरन्त सीधे करू। अर ऐसा न करोगे तो समस्त पुत्र पौत्रादि कुटुम्बसहित

बेडियोसे बधे मलिन स्थानमें रुके देखोगे, तामें अनेक भातिकी पीडा इनको होगी। पाताल लकतैं नीठि २ (मुश्किलसे) बाहिर निकसे हो। अब फिर तहा ही प्रवेश किया चाहो हो? या प्रकार दूतके कठोर वचनरूपी पवनकरि स्पर्श्या है मनरूपीजल जिसका, ऐसा रावणरूपी समुद्र अति क्षोभको प्राप्त भया। क्रोधकरि शरीरमें पसेव आयगया अर आखोकी आरक्ततासो समस्त आकाश लाल होय गया। अर क्रोधरूपी स्वरके उच्चारणत सब दिशा बधिर करते हुवे अर हाथियोका मद निवारते हुवे गाज कर ऐसा बोल्या "कौन है वैश्रवण अर कौन है इन्द्र? जो हमारे गोत्रकी परिपाटी करि चली आई जो लका, ताको दाब रहे है। जसे काग अपने मनमे सियाना होय रहै अर स्याल आपको अष्टापद मान, तसे वह रक आपको इन्द्र मान रह्या है। सो वे निलज्ज है, अधम पुरुष है, अपने सेवकनिपैं इन्द्र कहाया तो क्या इन्द्र होयगया? हे कुदूत! हमारे निकट तू ऐसे कठोर वचन कहता हुआ कुछ भय नाहीं करता?" ऐसा कहकर म्यानतै खड्ग काढ्या सो आकाश खड्गके तेज करि ऐसा व्याप्त होगया जसै नीलकमलोके वनकरि महा सरोवर व्याप्त होय।

तब विभीषणने बहुत विनयकरि रावणसो विनती करी अर दूतको मारने न दिया, अर यह कहा "हे महाराज! यह पराया चाकर है, इसका अपराध क्या? जो वह कहाव सो यह कहै। यामे पुरुषार्थ नाहीं। अपनी देह आजीविकानिमित्त पालने को बेची है। यह सूआ समान है, ज्यो दूसरा बुलाव त्यो बोल। यह दूत लोग है। इनके हिरदेमें इनका स्वामी पिशाचरूप प्रवेश कर रह्या है, उसके अनुसार वचन प्रवर्तें है। जसें बाजित्री जा भाति बादित्रको वजाव ताही भाति बाज, तसै इनका देह पराधीन है स्वतंत्र नाहीं। तातें हे कृपानिधे! प्रसन्न होवो अर दुखी जीवो पर दया ही करो। हे निष्कपट महाधीर! रंकनिके मारवेतें लोकमें बडी अपकीर्ति होय है। यह खड्ग तुम्हारा शत्रु लोगोके शिरपर पडैगा, दीननिके बधकरनेयोग्य नाहीं। जसे गरुड गेडुओको न मार तसे आप अनाथनिको न मारो।" या भाति विभीषणने उत्तम वचन रूपी जलकरि रावणकी क्रोधाग्नि बुझाई। कसे है विभीषण?

महा सत्पुरुष हं, न्यायके वेत्ता है। रावणके पायनि पडि दूतको बचाया अर सभाके लोकोने दूतको बाहिर निकाला। धिक्कार ह सेवकका जन्म जो पराधीन दु ख सहै है।

दूतने जायकरि सब समाचार वश्रवणको कहे। रावण—मुखकी अत्यन्त कठोरवाणीरूप इंधनसो वश्रवणके क्रोध रूपी अग्नि उठी सो चित्तविष न समाव, वह मानो सब सेवकोके चित्तको बाट दीनी। भावाथ—सब क्रोधरूप भए। रण सग्रामके बाजे बजाए, वश्रवण सब सेना लेय युद्धके अर्थि बाहिर निकसे, या वश्रवणके वशके विद्याधर यक्ष कहाव, सो समस्त यक्षोको साथ लेय राक्षसनिपर चाले। अति झलझलाट करते खडग सेल चक्र बाणादि अनेक आयुधोको धर ह। अजनगिरि समान माते हाथीनिके मद झरे ह, मानो नीझरने ही ह। तथा बडे रथ अनेक रत्नोकरि जडे सध्याके बादलके रग समान मनोहर, महा तेजवत, अपने वेगकरि पवनको जीत ह, तसे ही तुरग अर पयादनिके समूह समुद्र समान गाजते, युद्धके अर्थि चाले। देवोके विमान समान सुन्दर विमानो पर चढे विद्याधर राजा वश्रवण के लार चले। अर रावण इनके पहिले ही कु भकरणादि भाईनि सहित बाहर निकसे। युद्धकी अभिलाषा रखती हुई दोनो सेनाओका सग्राम गु ज नामा पवतके ऊपर भया। शस्त्रोके सपातसे अग्नि दिखाई देने लगी। खडगोके घातसे, घोडोके हींसनेसे, पयादोके नादसे, हाथियोंके गरजनेसे, रथोंके परस्पर शब्दसे, वादित्रोके बाजनेसे तथा बाणोके उग्र शब्दसे इत्यादि अनेक भयानक शब्दोसे रणभूमि गाज रही ह। धरती आकाश शब्दायमान होय रहे ह, वीर रसका राग होय ह, योधाओंके मद चढ रह्या ह, यमके वदन समान चक्र तीक्ष्ण ह धारा जिनकी, अर यमराजकी जीभ समान खडग रुधिर धारा वर्षावनहारी, अर यमके रोम समान सेज, यमकी आगुली समान शर (बाण), अर यमकी भुजा समान परिघ (कुल्हाडा), अर यमकी मुष्टि समान मुदगर इत्यादि अनेक शस्त्रकरि परस्पर महायुद्ध प्रवरत्या। कायरोको त्रास अर योधाओको हर्ष उपज्या। सामत सिरके बदले यशरूप धनको लेवे हैं। अनेक राक्षस अर कपि जातिके विद्याधर, अर यक्ष जातिके विद्याधर परस्पर युद्ध कर परलोकको

प्राप्त भए। कछुइक यक्षोंके आगे राक्षस पीछे हटे। तदि रावण अपनी सेनाको दबी देख आप रण-संग्रामको उद्यमी भए। कैसे है रावण? महामनोज्ञ सफेद छत्र सिरपर फिर है जाके। कालमेघसमान चंद्रमंडलकी कांतिका जीतनहारा रावण धनुष बाण धारे, इन्द्रधनुषसमान अनेक रंगका बकतर पहिरे, शिरपर मुकुट धरे, नानाप्रकारके रत्नोंके आभूषण संयुक्त, अपनी दीप्ति करि आकाशमें उद्योत करता आया। रावणको देखकर यक्ष जातिके विद्याधर क्षणमात्र विलखे, तेज दूर हो गया, रणकी अभिलाषा छोड पराङमुख भए, त्रासकरि आकुलित भया है चित्त जिनका, भ्रमरकी नाईं भ्रमते भए। तब यक्षोके अधिपति बडे बडे योधा इकट्ठे होयकरि रावणके सम्मुख आए। रावण सबके छेदनेको प्रवरत्या, जैसे सिंह उछलकर माते हाथियोंके कुंभस्थल विदारै तैसे रावण कोपरूपी वचनके प्रेरे अग्नि स्वरूप होयकर शत्रुसेनारूपी वनको दाह उपजावते भए। सो पुरुष नाहीं, सो रथ नाहीं, सो अश्व नाहीं, सो विमान नाहीं, जो रावणके बाणोंसे न बींध्या गया। तब रावणको रणमें देख वैश्रवण भाईपनेका स्नेह जनावता भया, अर अपने मनमें पछताया। जैसे बाहुबलि भरतसों लडाई करि पछताए हुते तैसे वैश्रवण रावणसों विरोध कर पछताया। हाय! मैं मूर्ख ऐश्वर्यसे गर्वित होयकर भाईके विध्वंस करनेमें प्रवरत्या। यह विचार करि वैश्रवण रावणसों कहता भया—'हे दशानन! यह राजलक्ष्मी क्षणभंगुर है, याके निमित्त तू कहा पाप करै। मैं तेरी बडी मौसीका पुत्र हूं, तातैं भाइयोंसे अयोग्य व्यवहार करना योग्य नाहीं। अर यह जीव प्राणियोंकी हिंसा करके महा भयानक नरकको प्राप्त होय है। नरक महा दुखसों भरया है। कैसे हैं जगतके जीव? विषयोंकी अभिलाषामें फंसे हैं। आंखोंकी पलक मात्र क्षण मात्र जीवना क्या तू न जानै है? भोगोंके कारण पापकर्म काहेको करै है? तब रावणने कह्या—'हे वैश्रवण! यह धर्मश्रवणका समय नाहीं, जो माते हाथियोंपर चढ अर खड्ग हाथमें धरै सो शत्रुवोंको मारे तथा आप मरै। बहुत कहनेसे क्या? तू तलवारके मार्गविषै तिष्ठ अथवा मेरे पांव-परि पड। यदि तू धनपाल है तो हमारा भंडारी हो, अपना कर्म करते पुरुष लज्जा न करै। तब

वश्रवण बोले—'हे रावण ! तेरी आयु अल्प है, तातै ऐसे क्रूर वचन कहे है। शक्ति प्रमाण हमारे ऊपर शस्त्रका प्रहार कर। तब रावण कही—तुम बडे हो, प्रथम बार तुम करो। तबि रावण ऊपर वश्रवण बाण चलाये, जैसे पहाडके ऊपर सूर्य किरण डारे। सो वैश्रवणके बाण रावणने अपने बाणनिकरि काट डारे अर अपने बाणनिकरि शर मण्डप करि डारे। बहुरि वैश्रवण अर्धचन्द्र बाणकरि रावणका धनुष छेद्या अर रथतै रहित किया। तबि रावणने मेघनादनामा रथपर चढकर वश्रवणसूं युद्ध किया, उल्कापात समान वज्रदडोसे वश्रवणका बकतर चूर डार्या। अर वश्रवणके सुकोमल हृदयविषै भिण्डिमाल मारी, सो मूर्छा प्राप्त भया। तब ताकी सेनाविषै अत्यन्त शोक भया, अर राक्षसोके कटकविषै बहुत हर्ष भया। अर वश्रवणके लोक वश्रवणकूं खेतते उठायकरि यक्षपुर लेगए। अर रावण शत्रुवोको जीतकर रणसे निवर्त्ते। सुभटनिके शत्रुनिके जीतवेहीका प्रयोजन है, धनादिकका प्रयोजन नाहीं।

अथानन्तर वैश्रवणका वद्योने यतन किया सो अच्छा हुवा। तब अपने चित्तमें विचारे है—जैसे पुष्प रहित वृक्ष तथा सींग टूटा बैल, कमल विना सरोवर न सोहै, तैसे मै शूरवीरता बिना न सोहूं। जे सामंत है अर क्षत्रीवृत्तिका विरद धारै है तिनका जीतव्य सुभटताही करि शोभै है। अर तिनकूं संसारविषै पराक्रमहीते सुख है। सो मेरे अब नाहीं रहा। तातै अब संसारका त्यागकर मुक्तिका यत्न करूं। यह संसार असार है क्षणभंगुर है, याहीते सत्पुरुष विषय सुखको नाहीं चाहैं। अंतराय सहित है, अर अल्प है, दुखो है। ये प्राणी पूर्वभवविषै जो अपराध करै है ताका फल इस भवविषै पराभव होय है। सुख दुःखका मूलकारण कर्म ही है, अर प्राणी निमित्तमात्र है। तातै ज्ञानी तिनसे कोप न करै। कैसा है ज्ञानी ? संसारके स्वरूपको भली भांति जानै है। यह केकसीका पुत्र रावण मेरे कल्याणका निमित्त हुवा है जान मोकूं गृहवासरूप महा फांसीसे छुडाया। अर कुम्भकरण मेरा परम बांधव, जान यह संग्रामका कारण मेरे ज्ञानका निमित्त बनाया। ऐसा विचार कर वैश्रवणने दिगम्बरी दीक्षा आदरी। परम तपकूं आराधकर परमधाम पधारे, संसार भ्रमणसे रहित भए।

अथानन्तर रावण अपने कुलका अपमानरूप मल धोकर सुख अवस्थाको प्राप्त भया। समस्त भाइयोने उसको राक्षसोका शिखर जाना। वैश्रवणकी असवारीका पुष्पकनामा विमान महा मनोग्य है, रत्नोकी ज्योतिके अंकुर छुट रहे है, झरोखे ही है नेत्र जाका, निर्मल कांतिके धारणहारे, महा मुक्ताफलकी झालरोसे मानो अपने स्वामीके वियोगसे अश्रुपात ही डार है, अर पद्मरागमणियोंकी प्रभासे आरक्तताको धारे है, मानो यह वैश्रवणका हृदय ही रावणके किये घावसे लाल हो रहा है। अर इन्द्रनील मणियोकी प्रभा कर्से अतिश्याम सुन्दरताको धर है मानो स्वामीके शोकसे सांवला होय रहा है, चैत्यालय वन वापी सरोवर अनेक मन्दिरोसे मंडित मानो नगरका आकार ही है। रावणके हाथके नाना प्रकारके घावसे मानो घायल हो रहा है। रावणके मन्दिरसमान ऊंचा जो वह विमान उसको रावणके सेवक रावणके समीप लाए। वह विमान आकाशका मंडन है। इस विमानको बैरी के भंगका चिह्न जान रावणने आदरा, अर किसीका कुछ भी न लिया। रावणके किसी वस्तुकी कमी नाहीं। विद्यामई अनेक विमान है तथापि पुष्पक विमानमें विशेष अनुरागसे चढे। रत्नश्रवा तथा केकसी माता अर समस्त प्रधान सेनापति तथा भाई बेटो सहित आप पुष्पक विमानमें आरूढ भया। अर पुरजन नाना प्रकारके वाहनो पर आरूढ भए। पुष्पकके मध्य महा कमलवन है तहा आप मंदोदरी आदि समस्त राजलोको सहित विराजे। कैसे है रावण? अखंड है गति जिनकी, अपनी इच्छासे आश्चर्यकारी आभूषण पहरे है, अर श्रेष्ठ विद्याधरी चमर ढोरे है, मलयागिरिके चन्दनादि अनेक सुगन्ध अंगपर लगी है, चन्द्रमाकी कीर्ति समान उज्ज्वल छत्र फिर है, मानो शत्रुओके भंगसे जो यश विस्तारा है उस यशसे शोभायमान है। धनुष त्रिशूल खड्ग सेल पाश इत्यादि अनेक हथियार जिनके हाथमें ऐसे जो सेवक, तिनकरि संयुक्त है। महा भक्तियुक्त है, अर अद्भुत कर्मनिके करणहारे, है। तथा बडे बडे विद्याधर राजा सामन्त शत्रुनिके समूहके क्षय करणहारे, अपने गुणनिकरि स्वामीके मनके मोहन हारे, महा विभवकरि शोभित, तिनकरि दशमुख मंडित है। परम उदार, सूर्यकासा तेज धारता,

पूर्वोपार्जित पुण्यका फल भोगतासता दक्षिण समुद्रको तरफ जहा लका ह ता ओर इन्द्रकोसी विभूति-करि युक्त चाल्या। कुम्भकरण भाई हस्तीपर चढे, विभीषण रथपर चढे, अपने लोगो सहित महा विभूतिकरि मडित रावणके पीछे चाले। राजा मय मदोदरीके पिता दत्य जातिके विद्याधरोके अधिपति भाइयो सहित अनेक सामतनिकरि युक्त तथा मारीच अवर विद्युतवज वजोदर बुधवजाक्षक्रूर क्रूरनक्र सारन सुनय शुक इत्यादि मत्रियो सहित महा विभूतिकर मडित अनक विद्याधरोके राजा रावणके सग चाले। कईएक सिहोके रथ चढे, कईएक अष्टापदोके रथपर चढकर वन पवत समुद्रको शोभा देखते पथ्वीपर विहार किया अर समस्त दक्षिण दिशा वश करी।

अथान तर एक दिन रावणने अपने दादा सुमालीसे पूछ्या—'हे प्रभो! हे पूज्य! या पवतके मस्तक पर सरोवर नाही सो कमलनिका दन कसे फूल रहा ह? यह आश्चय ह, अर कमलोका वन चचल होय यह निश्चल ह।' या भाति सुमालीसू पूछ्या। कसा ह रावण? विनयकर नमीभूत ह शरीर जाका। तब सुमाली 'नम सिद्धेभ्य' ये मत्र पढकर कहते भए—हे पुत्र! यह कमलनिके वन नाहीं, या पवतके शिखरविष पद्मरागमणिमयी हरिषेण चक्रवर्तीके कराए चत्यालय है। जिनपर निर्मल ध्वजा फरहरे ह। अर नाना प्रकारके तोरणोसे शोभ ह। कसे ह हरिषेण? महा सज्जन पुरुषोतम थे जिनके गुण कहनेमे न आव। हे पुत्र! तू उतरकर पवित्र मन होकर नमस्कार कर। तब रावण बहुत विनय-करि जिनमदिरनिकू नमस्कार किया अर बहुत आश्चयको प्राप्त भया अर सुमालीसू हरिषेण चक्रवर्तीकी कथा पूछी। हे देव! आपने जिसके गुण वणन किए ताकी कथा कहो।' यह विनती करी। कसा ह रावण? वश्रवणका जीतनहारा, बडेनिविष ह अति विनय जाकी। तब सुमाली कहै ह—हे रावण! त भली पूछी। पापका नाश करणहारा हरिषेणका चरित्र सो सुन। कपिल्यानगरविष राजा सिहध्वज तिनके राणी वप्रा महा गुणवती सौभाग्यवती। राजाके अनेक राणी थी, परन्तु राणी वप्रा उनमें तिलक थी, ताक हरिषेण चक्रवर्ती पुत्र भए। चौसठ शुभ लक्षणकरि युक्त, पापकमके

नाश करनहारे। सो इनकी माता वप्रा महा धर्मवती सदा अष्टाह्निकाके उत्सवमें रथयात्रा किया कर। सो याकी सौकन राणी महालक्ष्मी सौभाग्यके मदसे कहती भई कि पहिले हमारा ब्रह्मरथ नगरमें भ्रमण हुआ करेगा, पीछे तिहारा निकसेगा। यह बात सुन राणी वप्रा हृदयविष खेदभिन्न भई, मानो वज्रपातकरि पीडी गई। उसने ऐसी प्रतिज्ञा करी कि हमारे वीतरागका रथ अठाइयोमें पहिले निकसे तो हमको आहार करना अन्यथा नाहीं। ऐसा कहकर सब काज छोड दिया। शोककरि मुरझाय गया है मुखकमल जाका, अर अश्रुपातकी बूंद आंखनिसो डालती हुई। माताको देखकर हरिषेण कही—'हे मात! अब तक तुमने स्वप्नमात्रमें भी रुदन न किया, अब यह अमंगलकाय क्यों करो हो?' तबि माता सब वृत्तात कह्या। सुनकर हरिषेण मनमें सोची कि क्या करू? एक ओर पिता अर एक और माता। मै संकटमें पड्या, माताके अश्रुपात सहित देखवे समर्थ नाहीं। अर एक ओर पिता जिनसू कछु कहा न जाय। तबि उदास होय घरत निकसि वनकू गए। तहा मिष्ट फलनिका भक्षण करते अर सरोवरनिका निर्मल जल पीवते निर्भय विहार किया। इनका सुन्दर रूप देखकर ता वनके निर्दयी पशु भी शांत हो गये। ऐसे भव्य जीव किसको प्यारे न हो? तहा वनविषै जब माताका रुदन याद आवै तब इनकू ऐसी बाधा उपजै जो वनकी रमणीकताका सुख भूल जावै। सो हरिषेण चक्रवर्ती वनविषै वनदेवता समान भ्रमण करते, जिनको मृगी नेत्रनिकरि देखे है। सो वनविषै विहार करते शतमन्यु नामा तापसके आश्रममें गये। कैसा है आश्रम? वनके जीवनिका है आश्रय जहाँ।

अथानन्तर कालकल्प नामा राजा अति प्रबल, जाका बडा तेज अर बडी फौजसू आनकर चंपा नगरी घेरी। सो तहा राजा जनमेजय। सो जनमेजय अर कालकल्पमें युद्ध भया। आगे जनमेजयने महलमें सुरंग बना राखी हुती सो ता मार्ग होयकर जनमेजयकी माता नागमती अपनी पुत्री मदनावली सहित निकसी, अर शतमन्यु तापसके आश्रममें आई। सो नागमतीकी पुत्री हरिषेण चक्रवर्तिका रूप देखकर कामके बाण करि बींधी गई। कैसे है कामके बाण? शरीरमें विकलताके करणहारे है।

तब वाकू और भाति देख नागमती कहती भई—हे पुत्री ! तू विनयवान होयकर सुन कि मुनिने पहिले ही कहा हुता कि यह कन्या चक्रवर्तीको स्त्रीरत्न होयगी। सो यह चक्रवर्ती तेरे वर ह। यह सुनकर अति आसक्त भई। तब तापसीने हरिषेणको निकास दिया, क्योंकि उसने विचारी कि कदाचित इनके ससग होय तो इस बातसे हमारी अपकीर्ति होयगी। सो चक्रवर्ती इनके आश्रमसे और ठौर गये, अर तापसीको दीन जान युद्ध न किया। परन्तु चित्तमें वह कन्या बसी रही। सो इनको भोजनविष अर शयनविष काहू प्रकार स्थिरता नाहीं। जसे भामरी विद्याकरि कोऊ भम तसे ये पथ्वीमें भमते भए। ग्राम नगर वन उपवन लताओंके मडपमें इनको कहीं भी चन नाहीं। कमलकोंके वन दावानल समान दीख। अर चन्द्रमाकी किरण वजकी सूई समान दीख। अर केतकी बरछीकी अणी समान दीख। पुष्पोकी सुगध मनको न हर। चित्तमें ऐसा चितवते भए जो म यह स्त्रीरत्न वरू तो म जायकर माताका भी शोक सताप दूर करू। नदियोके तटपर अर वनमे, ग्राममे, नगरमे, पवतपर भगवानके चत्यालय कराऊ। यह चितवन करते सते अनेक देश भमते सिन्धुनदन नगरके समीप आए। कसे हैं हरिषेण ? महा बलवान अति तेजस्वी ह। वहा नगरके बाहिर अनेक स्त्री क्रीडाको आई हुतीं। एक अजनगिरि समान हाथी मद झरता स्त्रियोके समीप आया। महावतने हेला मारकर स्त्रियोसे कही 'जो यह हाथी मेरे वश नाहीं, तुम शीघ्र ही भागो। तब वे स्त्रियाँ हरिषेणके शरणे आईं। हरिषेण परमदयालु ह महायोधा ह। वह स्त्रियोको पीछे करके आप हाथीके सन्मुख भए, अर मनमें विचारी जो वहा तो वे तापस दीन थे तात उनसे मैंने युद्ध न किया, वे मग समान थे, परन्तु यहा यह दुष्ट हस्ती मेरे देखते स्त्री बालादिकको हने, अर म सहाय न करू। सो यह क्षत्रीवत्ति नाहीं। यह हस्ती इन बालादिक दीन जनको पीडा देनेको समथ ह। जसे बल सींगोसे बमई को खोदे परन्तु पवतके खोदने को समथ नाहीं। अर कोई बाणसे केलेके वक्षको छेदे परन्तु शिलाको न छेद सक, तसे ही यह हाथी योधावोको उडायवे समथ नाहीं। तदि आप महावतको कठोर वचनकरि कही कि हस्ती को यहासे

दूर कर । तब महावतने कही तू भी बडा ढीठ है, हाथीको मनुष्य जाने है । हाथी आप ही मस्त होय रहा है । तेरी मौत आई है अथवा दुष्ट ग्रह लग्या है, तू यहासे बेग भाग । तब आप हँसे अर स्त्रियो को तो पीछ कर दिया अर आप ऊपरको उछल हाथीके दातनिपर पग देय कुम्भस्थलपर चढे, अर हाथीसे बहुत क्रीडा करी । कसे है हरिषेण ? कमल सारिखे है नेत्र जिनके, अर उदार है वक्षस्थल जिनका, अर दिग्गजो के कुम्भस्थल समान है काधे जिनके, अर स्तम्भ समान है जाघ जिनकी । तब ये वृत्तात सुन सब नगरके लोग देखनेको आए । राजा महल ऊपर चढ्या देख था सो आश्चर्यको प्राप्त भया । अपने परिवारके लोग भेज इनको बुलाया । यह हाथीपर चढ नगरमें आए । नगरके नर-नारी समस्त इनको देख मोहित होय रहे । क्षणमात्रमें हाथीको निमद किया । यह अपने रूपसे समस्तका मन हरते नगरविष आए । राजाकी सौ कन्या परणी । सव लोकनिमे हरिषेणकी कथा भई । राजासे अधिकार सम्मान पाय सर्व बातोसे सुखी है तो भी तपसियोके वन में जो स्त्री देखी थी उस विना एक रात्रि वर्ष समान बीते । मनमें चितवते भये जो मुझ बिना वह मृगनयनी उस विषम वनमें मृगी समान परम आकुलताको प्राप्त होयगी । तातै मैं उसके निकट शीघ्र ही जाऊं । यह विचारते रात्रिविषै निद्रा न आती जो कदाचित अल्प निद्रा आई तौ भी स्वप्नमें उसहीको देखा । कसी है वह ? कमल सारिखे है नेत्र जाके, मानो इनके मनहीमें बस रही है ।

अथानन्तर विद्याधर राजा शक्रधनु ताकी पुत्री जयचंद्रा, उसकी सखी बेगवती, वह हरिषेणको रात्रिविषै उठायकर आकाशमें ले चाली । निद्राके क्षय होनेपर आपको आकाशमें जाता देख कोपकर उससे कहते भए—हे पापिनी ! हमको कहाँ ले जाय है । यद्यपि यह विद्याबलकर पूर्ण है तौ भी इनको क्रोध रूप मुष्टि बाधे, होठ डसते देखकर डरी, अर इनसे कहती भई हे प्रभु ! जसे कोई मनुष्य जा वृक्षकी शाखापर बैठा होय ताहीको काटै तो क्या यह सयानपना है ? तसे मैं तिहारी हितकारिणी, अर तुम मोहि हतो, यह उचित नाहीं । मैं तुमको जाके पास ले जाऊं हूं जो निरतर तुम्हारे मिलापकी अभि-

लाषिनी ह । तब यह मनमें विचारते भए कि यह मिष्टभाषिणी परपीडाकारिणी नाहीं ह । इसकी आकृति मनोहर दीख ह अर आज मेरी दाहिनी आख भी फडक ह । इसलिये यह हमारी प्रियाकी सगमकारिणी ह । फिर इसको पूछा—'हे भद्रे ! तू अपनी आवनेका कारण कह ।' तब वह कहै ह कि—सूर्योदय नगरमें राजा शक्रधनु, राणी धारा, अर पुत्री जयचन्द्रा, वह गुण रूपके मद से महा उन्मत्त ह । कोई पुरुष उसकी दृष्टिमें न आव । पिता जहा परणाया चाहे सो यह धार नाहीं । मैंने जिन जिन राजपुत्रोंक रूप चित्रपटपर लिखे दिखाए उनमें कोऊ भी उसके चित्तमें न रुच । तदि मैंने तुम्हारे रूपका चित्रपट दिखाया । तब वह मोहित भई, अर मोकू ऐसे कहती भई कि मेरा इस नरसे सयोग न होय तो म मत्युकू प्राप्त होऊगी, अर अधम नरसे सबध न करू गी । तब मैंने उसको धीय बधाया, अर मैं ऐसी प्रतिज्ञा करी—जहा तेरी रुचि ह म उसे न लाऊ तो अग्निमे प्रवेश करू गी । अति शोकवत देख मैंने यह प्रतिज्ञा करी । ताके गुणकरि मेरा चित्त हरचा गया ह, सो पुण्यके प्रभावसे आप मिले, मेरी प्रतिज्ञा पूण भई । ऐसा कह सूर्योदय नगरमे लेगई । राजा शक्रधनुसे ब्योरा कहा । सो राजाने अपनी पुत्रीका इनसे पाणिग्रहण कराया, अर वेगवतीका बहुत यश माना । इनका विवाह देख परिजन अर पुरजन हर्षित भए । कसे ह ये वरकन्या ? अद्भुतरूपक निधान ह । इनके विवाहकी वार्ता सुन कन्याके मामाके पुत्र गगाधर महीधर क्रोधायमान भए । जो या कन्याने हमको तजकर भूमिगोचरी वरचा । यह विचारकर युद्धको उद्यमी भए । तब राजा शक्रधनु हरिषेणसू कहता भया कि मैं युद्ध मे जाऊ हू, आप नगरमें तिष्ठो । वे दुराचारी विद्याधर युद्ध करनेको आए ह । तब हरिषेण ससुरसे कहते भए कि जो पराए कायको उद्यमी होय सो अपने कायको कसें उद्यम न करें ? तात हे पूज्य ! मोहि आज्ञा करो । म युद्ध करू गा । तब ससुरने अनेक प्रकार निवारण किया, पर यह न रहे । नाना प्रकार हथियारनिकरि पूण ऐसे रथपर चढ जिसमे पवनगामी अश्व जुरे, अर सूयवीय सारथी हाके, इनके पीछे बडे २ विद्याधर चाले । कई हाथियोपर चढे, कई अश्वो पर चढे, कई रथोपर चढे । परस्पर

महा युद्ध भया। कछुइक शक्रधनुकी फौज हटी तब आप हरिषेण युद्ध करनेको उद्यमी भए, सो जिस ओर रथ चलाया उस ओर घोडा हस्ती मनुष्य रथ कोऊ टिक नाहीं। सब बाणनिकरि बींधे गए। सब कापते युद्धसे भागे। महा भयभीत होय कहते भए 'गगाधर महीधरने बुरा किया जो ऐसे पुरुषोत्तमत युद्ध किया। यह साक्षात सूय समान है, जसे सूय अपनी किरण पसार, तसे यह बाणकी वर्षा कर ह।' अपनी फौज हटी देख गगाधर महीधर भाजे, तब इनके क्षणमात्रमें रत्न भी उत्पन्न भए। दशवा चक्रवर्ती महा प्रतापको धर पृथ्वीविष प्रकट भया। यद्यपि चक्रवर्तीकी विभूति पाई परन्तु अपनी स्त्री रत्न जो मदनावली उसके परणवेकी इच्छास द्वादश योजन परिमाण कटक साथ ले राजाओंको निवारते तपस्वियोके बनके समीप आए। तपस्वी बनफल लेकर आय मिले। पहिले इनका निरादर किया था, ताकरि शकावान हुते, सो इनको अति विवेकी पुण्याधिकारी देख हर्षित भए। शतमन्युका पुत्र जो जनमेजय अर मदनावलीकी माता नागमती उन्होने मदनावली, चक्रवर्तीको विधिपूवक परणाई। तब आप चक्रवर्तीकी विभूतिसहित कम्पिल्यानगर आए, बत्तीस हजार मुकुटबध राजाओंने सग आकर माताके चरणारविंदको हाथ जोडकर नमस्कार किया। माता वप्रा ऐसे पुत्रको देखि ऐसी हर्षित भई जो गातमें न समाव। हषके अश्रुपात करि व्याप्त भए है लोचन जाक। तब चक्रवर्तीने जब अष्टाह्निका आई तो भगवान का रथ सूयसे भी महा मनोज्ञ काढा, अष्टाह्निकाकी यात्रा करी। मुनि श्रावकनिकू परम आनद भया, बहुत जोव जिनधम अगीकार करते भए। सो यह कथा रावण को सुमाली ने कही। हे पुत्र! ता चक्रवर्तीने भगवानके मदिर पथ्वीविष, सवत्र पुर ग्रामादिविष, पवतनिपर तथा नदीनके तटपर अनेक चत्यालय रत्नस्वणमयी कराये। वे महापुरुष बहुतकाल चक्रवर्तीकी सपदा भोगि मुनि होय महा तपकर लोकशिखर सिधारे। यह हरिषेणका, चरित्र रावण सुनकर हर्षित भया। सुमालीकी बारबार स्तुति करी, अर जिन मदिरनिका दशनकर रावण डेरा आये। डेरा सम्मेदशिखरके समीप भया।

अथानन्तर रावणको दिग्विजयमें उद्यमी देख मानो सूय भी भयकरि दृष्टिगोचरसू रहित भया,

ताको अरुणता प्रकटी, मानो रावणके अनुराग ही करि जगत हर्षित भया। बहुरि सध्या मिन्कर रात्रिका अंधकार फल्या, मानो अंधकार प्रकाशके भयसे दशमुखके शरण आया। बहुरि रात्रि व्यतीत भई अर प्रभात भया। अर रावण प्रभातकी क्रियाकर सिंहासन विराजे। अकस्मात एक ध्वनि सुनी, मानो वर्षाकालका मेघही गरज्या। जाकरि सकल सेना भयभीत हुई। अर कटकके हाथी जिन वृक्षोंसे बंधे थे तिनको भंग करते भये। कनसेरे ऊंचेकर तुरंग हींसते भये। तब रावण बोले—'यह क्या है? यह मरणेको हमारे ऊपर कौन आया? यह वैश्रवण आया अथवा इन्द्रका प्रेरा सोम आया अथवा हमको निश्चल तिष्ठे देख कोई और शत्रु आया।' तब रावणकी आज्ञा पाय प्रहस्त सेनापति उस ओर देखनेको गया सो पर्वतके आकार मदोन्मत्त अनेक लीला करता हाथी देख्या।

तब आय रावणसौं वीनती करी कि हे प्रभो! मेघकी घटा समान हाथी है। इसको इन्द्र भी पकडनेको समर्थ न भया। तब रावण हंसकर बोले—हे प्रहस्त! अपनी प्रशंसा करणी योग्य नाहीं, मैं इस हाथीको क्षणमात्रमें वश करूंगा। यह कहकर पुष्पक विमानमें चढि, जाय हाथी देख्या। भले २ लक्षणनिकरि इन्द्रनीलमणि समान अति सुन्दर है श्याम शरीर जाका, कमल समान आरक्त है तालुवा जाका, अर महामनोहर उज्ज्वल दीर्घगोल हैं नेत्र जाके, दांत सात हाथ ऊंचा, नौ हाथ लांबा, दश हाथ चौडा कछुइक पीत है, सुन्दर है पीठ जाकी, अगला अंग उतंग है, अर लम्बी पूंछ है, अर बडी सूंड है, अत्यन्त स्निग्ध सुन्दर नख है, गोल कठोर सुन्दर कुम्भस्थल है, प्रबल चरण है, माधुर्यताको लिये महावीर गंभीर है गर्जना जाकी, अर क्षरते हुवे मदकी सुगंधतासे गुंजार करे हैं भ्रमर जापर, दुंदुभी बाजनिकी ध्वनि समान गंभीर है नाद जाका, अर ताडवृक्षके पत्र समान जो कान तिनकूं हलावता, मन अर नेत्रनिकी हरनहारी सुन्दर लीलाको करता, रावण हस्तीकूं देख्या। देखकर बहुत प्रसन्न भया। हर्ष कर रोमांच होय आए। तब पुष्पक नामा विमानसे उतर, गाढी कमर बांधकर उसके आगे जाय शंख पूरया। ताके शब्दकरि दशोदिशा शब्दायमान भई। तब शंखका शब्द सुन

चित्तमें क्षोभको पाय हाथी गरज्या, अर दशमुखके सम्मुख आया। बलकर गर्भित तब रावण अपने उत्तरासनका गेंद बनाय शीघ ही हाथीकी ओर फेंका। रावण गजकेलिमें प्रवीण है, सो हाथी तो गेंदके सूंघनेको लगा। अर रावण आकाशविषै उछलकर भंगोकी ध्वनिसे शोभित गजके कुम्भस्थल पर हस्ततल मारया, हाथी सूंडसे पकडनेको उद्यम किया। तदि रावण अति शीघ्रता कर दोऊ दातके बीच होय निकस गए। हाथीसूं अनेक क्रीडा करी। दशमुख हाथीकी पीठ पर चढ बैठे। हाथी विनयवान शिष्यकी न्याई खडा होय रहा। तब आकाशसे रावण पर पुष्पोकी वर्षा भई। अर देवोने जयजयकार शब्द किए। अर रावणकी सेना बहुत हर्षित भई। रावणने हाथीका त्रैलोक्यमंडन नाम धरया, याको पाय रावण बहुत हर्षित भया। रावणने हाथीके लाभका बहुत उत्सव किया। अर सम्मेदशिखर पर्वतपर जाय यात्रा करी। विद्याधरोने नृत्य किया। वह रात्रि वहां ही रह्या। प्रभात हुवा, सूर्य उगा, मानो दिवसने मंगलका कलश रावणको दिखाया। कैसा है दिवस? सेवाकी विधिमें प्रवीण है, तब रावण डेरामें आय सिंहासनपर विराज्या, हाथीकी कथा सभामें कहते भये।

ता समय एक विद्याधर आकाशत रावणके निकट आया। सो अत्यन्त कम्पायमान, जाके पसेवकी बूंद झरे है, बहुत खेदखिन्न घायल हुआ, अश्रुपात डारता, जर्जरा है तनु जाका, हाथ जोड नमस्कार कर विनती करता भया। हे देव! आज दशवां दिन है, राजा सूर्यरज रक्षरज बानरवंशी विद्याधर तिहारे बलकरि है बल जिनमें, सो आपका प्रताप जानि अपने किहकंद नगर लेनेके अर्थ अलंकारोदय जो पाताललंका तातें अति उछाहसे चाले। कैसे है दोऊ भाई? तिहारे बलकरि महा अभिमान युक्त जगतको तृण समान मानं, ते किहकंधपुर जाय घेरया। तहां इन्द्रका यमनामा दिग्पाल, ताके योधा युद्ध करनेको निकसे, हाथमें है आयुध जिनके। बानरवंशिनिके अर यमके लोकोमें महायुद्ध भया। परस्पर बहुत मारे गए। तब युद्धका कलकलाट सुन यम आप निकसा। कैसा है यम? महाक्रोधकरि पूर्ण, अति भयंकर, न सहा जाय है तेज जाका। सो यमके आवते ही बानरवंशियोका बल भागा। अनेक आयुधनि-

कर घायल भए। यह कथा कहता कहता वह विद्याधर मूर्छाको प्राप्त भया। तब रावणने शीतोपचारकरि सावधान किया। अर पूछा—'आगे क्या भया? तब वह विश्राम पाय हाथ जोड फिर कहता भया—'हे नाथ! सूयरजका छोटा भाई रक्षरज अपने बलको व्याकुल देख आप युद्ध करने लगे। सो यमके साथ बहुत बेरतक युद्ध किया। यम अतिवली, उसने रक्षरजको पकड लिया। तब सूयरज युद्ध करने लगे, बहुत युद्ध भया। यमने आयुधका प्रहार किया, सो राजा घायल होय मूर्छित भए। तब अपने पक्षके सामतोने राजाको उठाय मेघला वनमें ले जाय शीतोपचार कर सावधान किया। बहुरि यम अपना यमपना सत्य करता सता एक बदीगह बनाया। उसका नरक नाम धरचा। तहा वतरनी आदि सब विधि बनाई। जे जे वाने जीते, अर पकडे वे सब नरकमें दिये। सो उस नरकमें कईएक तो मर गए, कईएक दुख भोग ह। वहा उस नरकमें सूयरज अर रक्षरज ये भी दोनो भाई ह। यह वत्तात म देखकर बहुत व्याकुल होय आपके निकट आया हू। आप उनके रक्षक हो, अर जीवनमूल हो। उनके आपका ही विश्वास ह, अर मेरा नाम शाखावली ह, मेरा पिता रणदक्ष, माता सुश्रोणी। म रक्ष रजका प्यारा चाकर, सो आपको यह वत्तात कहनेको आया हू। म तो आपको जतावा देय निश्चिन्त भया। अपने पक्षको दुख—अवस्थामें जान आपको जो कतव्य होय सो करो।

तब रावणने उसे दिलासा कर, याहि सतोष दे, याके घावका यत्न कराया, अर तत्काल सूयरज रक्षरजके छुडावनेको महाक्रोधकर यमपर चाले। अर मुसकरायकर कहते भए—कहा यम रक हमसे युद्ध कर सक? जो मनुष्य उसने वतरणी आदि क्लेशके सागरमें डार राखे हैं, म आज ही उनको छुडाऊगा। अर उस पापीने जो नरक बना राख्या ह, ताहि विध्वस करू गा। देखो दुजनकी दुष्टता! जीवोको ऐसे सताप देह। यह विचारकर आपही चाले। प्रहस्त सेनापति आदि अनेक राजा बडी सेनासे आगे दौडे। नानाप्रकारके वाहनोपर चढे शस्त्रोके तेज से आकाशमें उद्योत करते अनेक वादित्रोके नाद होते महा उत्साहसे चाले, विद्याधरोके अधिपति किहकू पुरके समीप गए। सो दूरसे नगरके घरोंकी

शोभा देखकर आश्चर्य को प्राप्त भए । किहकू पुरकी दक्षिण दिशाके समीप यम विद्याधरका बनाया हुवा अकीतम नरक देख्या । जहा एक ऊचा खाडा खोद राखा ह । अर नरकको नकल बनाय राखी है । अनेक नरनिके समूह नरकमें राखे ह । तब रावणने उस नरकके रखवारे, जे यमके किकर हुते, कूट कर काढ दिये, अर सव प्राणी सूयरज रक्षरज आदि दुख सागरसे निकासे । कसे ह रावण ? दीननके बधु, दुष्टोको दड देनहारे ह । वह सव नरक स्थान ही दूर किया । यह वत्तात परचक्रके आवनेका सुन यम बडे आडबरसे सव सेनासहित युद्ध करवेकू आया । मानो समुद्र ही क्षोभको प्राप्त भया । पवत सारिखे अनेक गज मदधारा झरते, भयानक शब्द करते, अनेक आभूषणयुक्त, उनपर महा योधा चढे, अर तुरग पवन सारिखे चचल जिनकी पूछ चमर समान हालती, अनेक आभूषण पहिरे, उनकी पीठ पर महाबाहु सुभट चढे, अर सूयके रथ समान अनेक ध्वजाओकी पक्तिसे शोभायमान, जिनमें बडे बडे सामत बकतर पहरे, शस्त्रोके समूह धार बठे, इत्यादि महा सेना सहित यम आया । तब विभीषणने यमकी सव सेना अपने बाणोसे हटाई । कसे ह विभीषण ? रणविष प्रवीण, रथविषै आरूढ ह । विभीषणके बाणोसे यम किकर पुकारते हुये भागे । यम, किकरोके भागने अर नारकियो के छुडानेसे महा क्रूर होकर विभीषणपर रथ चढ्या धनुषको धारे आया । ऊची ह ध्वजा जाकी, काले सप समान कुटिल ह केश जाके, भकुटी चढाए लाल ह नेत्र जाके, जगत रूप ई धनके भस्म करणे को अग्नि समान आप तुल्य जो बडे बडे सामत उन कर मडित, युद्ध करणे को अपने तेजसे आकाश विष उद्योत करता सता आया । तब रावण यमको देख विभीषणको निवार आप रणसग्राममें उद्यमी भए । यमके प्रतापसे सव राक्षस सेना भयभीत होय रावणके पीछे आय गई । कसा ह यम ? अनेक आडम्बर धर ह, भयानक ह मुख जाका । रावण भी रथपर आरूढ होकर यमके सन्मुख भए । अपने बाणनके समूह यमपर चलाए । इन दोनोके बाणनिकरि आकाश आच्छादित भया । कसे हैं बाण ? भयानक ह शब्द जिनका । जसे मेघोके समूहसे आकाश व्याप्त होय तसे बाणोसे आच्छादित होगया ।

रावणने यमके सारथीको प्रहार किया, सो सारथी भूमिमें पडा, अर एक बाण यमके लगाया सो यम भी रथसे गिरता भया। तब यम रावणको महा बलवान देखि दक्षिण दिशाका दिग्पालपणा छोड भाग्या। सारे कुटुम्बको लेकर परिजन पुरजन सहित रथनूपुर गया। इन्द्रसू नमस्कार कर विनती करता भया। "हे देव! आप कपा करो, अथवा कोप करो, आजीविका राखहु अथवा हरो, तिहारी जो बाछा होय सो करो। यह यमपणा मुझसे न होय। मालीके भाई सुमालीका पोता दशानन महा योधा, जिसने पहिले तो वैश्रवण जीता वह तो मुनि होगया। अर मुझे भी उसने जीता सो म भाग कर तुम्हारे निकट आया हू। उसका शरीर वीररसस बना ह। वह महात्मा ह, वह जेष्ठके मध्याह्नका सूय समान कभी भी न देखा जाय ह।" यह वार्ता सुन कर रथनूपुरका राजा इन्द्र सग्रामको उद्यमी भया, तब मन्त्रियोके समूहने मने किया। कसे ह मन्त्री? वस्तुका यथाथ स्वरूप जाननहारे ह। तब इन्द्र समझकर बठ रहा। इन्द्र यमका जमाई ह, उसने यमको दिलासा दिया कि तुम बडे योधा हो, तुम्हारे योधापनेमें कमी नाहीं। परन्तु रावण प्रचड पराक्रमी ह याते तुम चिता न करो, यहा ही सुखसे तिष्ठो। ऐसा कहकर इनका बहुत सन्मान कर राजा इन्द्र राजलोकमे गए अर कामभोगके समुद्रमें मग्न भए। कसा ह इन्द्र? बडा ह विभूतिका मद जाक। रावणके चरित्रके जो जो वत्तात यमने कहे हुते, वैश्रवणका वराग्य लेना, अर अपना भागना वह इन्द्र ऐश्वयके मदमें भल गए, जसे अभ्यास विना विद्या भूल जाय। अर यम भी इन्द्रका सत्कार पाय, अर असुर सगीत नगरका राज पाय मान भगका दुख भूल गया। मनमें मानता भया कि—जो मेरी पुत्री महा रूपवन्ती सो तो इन्द्रके प्राणो से भी प्यारी ह, अर मेरा अर इन्द्रका बडा सम्बन्ध ह। ताते मेरे कहा कमी ह?

अथानन्तर रावणने किहकधपुर तो सूयरजको दिया अर किहकूपुर रक्षरजको दिया। दोउनको सदाके हितू जान बहुत आदर किया। रावणके प्रसादसे बानरवशी सुखसे तिष्ठे। रावण सब राजों का राजा महा लक्ष्मी अर कीर्तिको धर दिग्विजय कर। बडे २ राजा दिनप्रति आय आय मिलै।

सो रावणका कटकरूप समुद्र अनेक राजावोकी सेनारूपी नदीसे पूरित होता भया। अर दिन दिन विभव अधिक होता भया। जसे शुक्लपक्षका चन्द्रमा दिन दिन कलाकर बढता जाय तैसे रावण दिन दिन बढता जाय। पुष्पक नामा विमानविषे आरूढ होय त्रिकूटाचलके शिखरपर आय तिष्ठा। कैसा ह विमान ? रत्ननकी मालासे मडित ह, अर ऊचे शिखरोकी पक्तिकर विराजित ह, शीघ्र जहाँ चाहै वहाँ जाय। ऐसे विमानका स्वामी रावण, महा धीयताकरि मण्डित, पुण्यके फलका ह उदय जाके। जब रावण त्रिकूटाचलके शिखर सिधारे सब बातोमें प्रवीण तब राक्षसोके समूह नाना प्रकारके वस्त्राभूषण कर मण्डित परमहषकू प्राप्त भए। सब राक्षस रावणको ऐसे मगल वचन गम्भीर शब्द कहते भये "हे देव ! तुम जयवत होवो, आनन्दको प्राप्त होवो, चिरकाल जीवो, वृद्धिको प्राप्त होवो, उदयको प्राप्त होवो"। निरन्तर ऐसे मगल वचन गम्भीर शब्द कर कहते भए। कई एक सिह शारदूलोपर चढे, कई एक हाथी घोडोपर चढे, कईएक हसो पर चढे, प्रमोदकर फूल रहे ह नेत्र जिनके, देवो जसा आकार धर, जिनका तेज आकाश विष फल रहा ह, वन पवत अन्तरद्वीपके विद्याधर राक्षस आए समुद्रको देखकर विस्मय को प्राप्त भए। कसा ह समुद्र ? नही दीख ह पार जिनका, अति गम्भीर ह, महामत्स्यादि जलचरो कर भरा ह, तमाल वन समान श्याम ह, पवत समान ऊचो ऊचो उठे ह लहर के समूह जाविष, पाताल समान ओडा, अनेक नाग नागनिकरि भयानक, नानाप्रकारके रत्नोंके समूह करि शोभायमान, नानाप्रकारकी अदभुत चेष्टाको धार। अर लकापुरी अति सुन्दर हुती ही अर रावणके आनेसे अधिक समारी गई ह। कसी ह लका ? अति देदीप्यमान रत्नो का कोट ह जाके, अर गम्भीर खाईकर मण्डित ह, कुन्दके पुष्प समान अति उज्ज्वल स्फटिक मणिके महल है जिनमे। इन्द्र नीलमणियोकी जाली शोभ ह, अर कहू इक पदमराग मणियोके अरुण महिल ह, कहू एक पुष्पराग मणिनके महल, कहू एक मरकन्दमणिनके महल ह इत्यादि अनेक मणियोके मन्दिरोसे लका स्वगपुरी समान है। नगरी तो सदा ही रमणीक ह परन्तु धनीके आयवेकरि अधिक बनी ह। रावणने अतिहषसे

लकामें प्रवेश किया। कसा ह रावण ? जाको काहूकी शका नाहीं, पहाड समान हाथी, तिनकी अधिक शोभा बनी ह, अर मन्दिर समान रत्नमई रथ बहुत सवारे ह, अश्वोके समूह हींसते, चलायमान चमर समान ह पूछ जिनकी, अर विमान अनेक प्रभाको धर इत्यादि महा विभूति कर रावण आया। चद्रमा के समान उज्ज्वल सिरपर छत्र फिरते, अनेक ध्वजा पताका फहराती, बदीजनके समूह विरद बखानते, महामगल शब्द होते, बीण वासुरी शख इत्यादि अनेक वादित्र बाजते, दशोदिशा अर आकाश शब्दायमान होरहा ह। इस विधि लकामें पधारे। तब लकाके लोग अपने स्वामी का आगमन देख दशनक लालसी हाथमे अघ लिए, पत्र फल पुष्प रत्न लिए, अनेक सुन्दर वस्त्र आभूषण पहरे, राग रग सहित रावणके समीप आए। वद्धनकू आगे धर तिनके पीछे आय नमस्कार कर कहते भये 'हे नाथ! लकाके लोग अजितनाथके समयसे आपके घरके शुभचितक ह। सो स्वामीको अति प्रबल देख अति प्रसन्न भए ह भाति भातिकी आशीस दीनी। तब रावणने बहुत दिलासा देकर सीख दीनी। तब रावणके गुग गावते अपने अपने घरको गये।

अथानतर रावणके महलमे कौतुकयुक्त नगरकी नरनारी अनेक आभूषण पहिर, रावणके देखने की ह इच्छा जिनको, सव घरके काय छोड २ पथ्वीनाथके देखनेको आई। कसे ह रावण ? वश्रवण के जीतनहारे तथा यम विद्याधरके जीतनहारे अपने महलविष राजलोकसहित सुखसू तिष्ठे। कसा है महल ? चूडामणि समान मनोहर ह। और भी विद्याधरोके अधिपति यथायोग्य स्थानकेविष आनन्वसो तिष्ठे, देवन समान ह चरित्र जिनके।

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह–हे श्रेणिक! जो उज्ज्वल कमके करणहारे ह तिनका निमल यश पथ्वीविष होय ह, नाना प्रकारके रत्नादिक सम्पदाका समागम होय है, अर प्रबल शत्रुओका निमूल पथ्वी विष होय ह, सकल त्रलोक्यविष गुण विस्तर ह। या जीवके प्रचण्ड बरी पाच इद्रियोके विषय ह, जो जीवकी बुद्धि हर, अर पापोको बध करै ह। यह इन्द्रियोके विषय

धमके प्रसावसे वशीभूत होय ह अर राजाओके बाहिरले बरी प्रजाके बाधक ते भी प्राय पावोविष पडे है। ऐसा मानकर जो धमके विरोधी विषयरूप बरी ह वे विवेकियोको वश करने योग्य ह। तिनका सेवन सवथा न करना। जसे सूयकी किरणोसे उद्योत होते सते भली दष्टिवाले पुरुष अन्धकारकरि व्याप्त ओडे खधकविष नहीं पडे ह, तसे जे भगवानके मागविष प्रवत्तैं ह तिनके पापबुद्धिकी प्रवृत्ति नहीं होय ह।

इति श्री विषणाचायविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिकाविष दशग्रीवका निरूपण करनेवाला आठवा पर्व पूण भया ॥ ८ ॥

अथानन्तर आगे अपने इष्टदेवकू विधिपूवक नमस्कार करि, उनके गुण स्तवनकरि किहकधपुर विष राजा सूयरज वानरवशो, तिनकी राणी चन्द्रमालिनी अनेक गुणसम्पन्न, ताके बाली नामा पुत्र भए। सो वणन करिए ह। सो हे भव्य! तू सुन। कसे ह बाली? सदा उपकारी शीलवान पडित प्रवीण धीर—लक्ष्मीवान शूरवीर ज्ञानी अनेक—कला सयुक्त सम्यकदष्टि महाबली राजनीतिविष प्रवीण धीयवान दयाकर भीगा ह चित्त जिनका, विद्याके समूह गर्वित मडित कातिवान तेजवत है।

ऐसे पुरुष ससारमे विरले ही ह जो समस्त अढाई द्वीपोके जिनमदिरोके दशनमें उद्यमी है। कसे है वे जिनमदिर? अति उत्कष्ट प्रभावकर मडित ह। बाली तीनो काल अति श्रेष्ठ भक्तियुक्त सशय रहित श्रद्धावत जम्बूद्वीपके सव चत्यालयनिके दशन कर आव। महा पराक्रमी, शत्रुपक्षका जीतनहारा, नगरके लोगोके नेत्ररूपी कुमुदके प्रफुल्लित करनेको चन्द्रमा समान, जिसको किसीकी शका नाहीं। किहकधपुरमें देवनकी न्याई रम। कसा ह किहकधपुर? महारमणीक नाना प्रकारके रत्नमयी मदिरो से मडित, गज तुरग रथादिसे पूण, नाना प्रकारका व्यापार ह जहा, अर अनेक सुन्दर हाटनकी पक्तिन कर युक्त ह, जहा जसे स्वगविष इन्द्र रम तसे रम ह। अनुक्रमत जाके छोटा भाई सुग्रीव भया। सो महाधीर वीर मनोज्ञरूप कर युक्त, महा नीतिवान विनयवान ह। ये दोनो ही वीर कुलके आभूषण होते भए जिनका, आभूषण बडोका विनय ह। सुग्रीवके पीछे श्रीप्रभा बहिन भई जो साक्षात लक्ष्मी,

रूपकर अतुल्य है। अर किहकधपुरविषै सूर्यरजका छोटा भाई रक्षरज, ताकी राणी हरिकांता, ताके पुत्र नल, अर नील होते भए। सुजनोंके आनन्दके उपजावनहारे महासामंत रिपुकी शकारहित मानो किहकधपुरके मंडन ही हैं। इन दोनो भाइयोंके दो दो पुत्र महागुणवंत भए। राजा सूर्यरज अपने पुत्रोंको यौवनवंत देख मर्यादाके पालक जान, आप विषयोंको विष मिश्रित अन्न समान जान, संसारसे विरक्त भए। कैसे हैं राजा सूर्यरज? महाज्ञानवान हैं। बालीको पृथ्वीके पालने निमित्त राज दिया, अर सुग्रीवको युवराजपद दिया, अपने स्वजन परजन समान जाने, अर यह चतुरगतिरूप जगत महादुःख करि पीडित देख विहतमोह नामा मुनिके शिष्य भए। जैसा भगवानने भाष्या तैसा चारित्र धारया। कैसे हैं मुनि सूर्यरज? शरीरविषै भी नहीं है ममत्व जिनके, आकाश सारिखा निर्मल है अंतःकरण जिनका, समस्त परिग्रहरहित, पवनकी नाईं पृथ्वीविषै विहार किया। विषयकषायरहित मुक्तिके अभिलाषी भए।

अथानन्तर बालीके ध्रुवा नामा स्त्री महा पतिव्रता, गुणोंके उदयसे सैकडों राणियोंमें मुख्य उस सहित ऐश्वर्यको धरै राजा बाली बानरवंशियोंके मुकुट, विद्याधरनि करि मानिये है आज्ञा जाकी, सुन्दर है चरित्र जाके, सो देवनके ऐसे सुख भोगते भए, किहकधपुरमें राज करै।

रावणकी बहिन चन्द्रनखा, जिसके सर्व गात मनोहर, राजा मेघप्रभका पुत्र खरदूषणने जिस दिनसे इसको देखा उस दिनसे कामबाणकरि पीडित भया, याको हरा चाहै। सो एक दिन रावण, राजा प्रवर राणी आवली, उनकी पुत्री तनूदरी उसके अर्थ एक दिन रावण गए, सो खरदूषणने लंका रावण विना खाली देख चिन्तारहित होय चन्द्रनखा हरी। कैसा है खरदूषण? अनेक विद्याका धारक, मायाचारमें प्रवीण है बुद्धि जाकी। दोऊ भाई कुम्भकरण अर विभीषण बडे शूरवीर हैं, परन्तु छिद्र पायकरि मायाचारकरि कन्याकूं हर ले गया। तब वे क्या करैं, ता पीछे सेना दौडने लगी। तब कुम्भकरण विभीषणने यह जानकर मनै करी कि खरदूषण पकड्या तो जावै नाहीं, अर मारणा

योग्य नाहीं। बहुरि रावण आए, तदि ए वार्ता सुनि अति क्रोध किया। यद्यपि मागके खेदसे शरीर-विष पसेव आया हुता, तथापि तत्काल खरदूषणपर जानेको उद्यमी भए। कसा ह रावण ? महामानी ह। एक खडगहीका सहाय लिया, अर सेना भी लार न लीनी, यह विचारा कि जो महावीयवान पराक्रमी ह, तिनके एक खडगहीका सहारा ह। तब मदोदरीने हाथ जोड विनती करी–'हे प्रभो ! आप प्रकट लौकिक स्थितिके ज्ञाता हो, अपनी घरकी कन्या औरको देनी, अर औरोकी आप लेनी। इन कन्याओकी उत्पत्ति एसी ही ह। अर खरदूषण चौदह हजार विद्याधरोका स्वामी ह, जो विद्याधर युद्धसे कद ही पीछे न हटैं, बडे बलवान ह, अर इस खरदूषणको अनेक सहस विद्या सिद्ध ह, महागर्ववत ह, आप समान शूरवीर ह, यह वार्ता लोकनिसे क्या आपने नाहीं सुनी ह। आपके अर उसके भयानक युद्ध प्रवरते तब भी हारजीतका सदेह ही ह। अर वह कन्या हर ले गया ह, सो वह हरणकरि दूषित भई ह, औरनकू जो न देने आव सो खरदूषणके मारनेसे वह विधवा होय ह। अर सूयरजको मुक्ति गए पीछे चद्रोदर विद्याधर पाताललकामे थाने हुता। ताहि काढकर यह खरदूषण तुम्हारी बहिन-सहित पाताललकाविष तिष्ठ ह, तिहारा सम्बधी ह।' तब रावण बोले हे प्रिये ! म युद्धसे कभी नहीं डरू। परन्तु तिहारे वचन नहीं उलघने, अर बहिन विधवा नहीं करणी, सो हमने क्षमा करी। तब मदोदरी प्रसन्न भई।

अथानन्तर कमनिके नियोगसे चद्रोदर विद्याधर कालकू प्राप्त भया। तब ताकी स्त्री अनुराधा गर्भिणी, विचारी भयानक वनमे हिरणीकी नाई भम, सो मणिकात पवतपर सुन्दर पुत्र जना। शिला ऊपर पुत्रका जन्म भया, कसी ह शिला ? कोमल पल्लव अर पुष्पोके समूहसे सयुक्त ह। अनुक्रमसे बालक वद्धिको भया। यह बनवासिनी माता उदास चित्त पुत्रकी आशासे पुत्रको पाल। जब यह पुत्र गभमें आया तब हीसे इनके माता पिताको वरियोसे विराधना उपजी, तातै याका नाम विराधित, राजसम्पदावर्जित जहा २ राजनिप जाय तहाँ तहाँ याका आदर न होय। सो जैसे सिरका केश स्थानक

से छूटा आदर न पावै तैसे जो निज स्थानकसे रहित होय उसका सन्मान कहांते होय ? सो यह राजा का पुत्र खरदूषणको जीतिवे समर्थ नाहीं सो चित्तविषै खरदूषणका उपाय चितवता हुआ सावधान रहै। अर अनेक देशोंमें भ्रमण कर, षट कुलाचलनिविषै अर सुमेरु आदि पर्वतनिविषै तथा रमणीक वनोंमें जो अतिशय स्थानक है, जहाँ देवनिका आगमन है, तहाँ यह विहार कर, अर संग्रामविषै योद्धा लडैं तिनके चरित्र आकाशमें देवोंके साथ देखै, संग्राम गज अश्व रथादिकर पूर्ण है। अर ध्वजा छत्रादिककर शोभित है। या भांति विराधित कालक्षेप करै अर लंकाविषै रावण इंद्रकी नाईं सुखसूं तिष्ठै।

अथानन्तर सूर्यरजका पुत्र बाली, रावणकी आज्ञातैं विमुख भया। कैसा है बाली ? अद्भुत कर्मोंकी करणहारी जो महाविद्या तिनकरि मण्डित है, अर महाबली है। तब रावणने बालीपै दूत भेजा। सो दूत महा बुद्धिमान किहकंधपुर जायकर बालीसे कहता भया—'हे बानराधीश ! दशमुख तुमकूं आज्ञा करी है सो सुनो। कैसे है दशमुख ? महाबली महातेजस्वी महालक्ष्मीवान महानीतिवान महा-सेनाकरियुक्त, प्रचंडनकूं दंड देनहारे, महा उदयवान, जिस समान भरतक्षेत्रमें दूजा नाहीं। पृथ्वीके देव अर शत्रुवोंका मान मर्दन करनहारा है, यह आज्ञा करी है, जो तिहारे पिता सूर्यरजको मैंने राजा यम बैरीको काढकर किहकंधपुरमें थाप्या अर तुम सदाके हमारे मित्र हो, परन्तु आप अब उपकार भूलकर हमसों पराङ्मुख हो गए हो, यह योग्य नाहीं है। मैं तुम्हारे पितासे भी अधिक प्रीति तुमसे करूंगा। अब तुम शीघ्र ही हमारे निकट आवो, प्रणाम करो, अर अपनी बहिन श्रीप्रभा हमको परणावो, हमारे सम्बंधसे तुमको सब सुख होयगा। दूतने कही—ऐसी रावणकी आज्ञा प्रमाण करो। सो बालीके मनमें और बात तो आई, परन्तु एक प्रणाम की न आई, काहेतें ? जो याकै देव गुरु शास्त्र विना औरको नमस्कार नाहीं करै, यह प्रतिज्ञा है। तब दूतने फिर कही हे कपिध्वज ! अधिक कहनेसे कहा ? मेरे वचन तुम निश्चय करो, अल्प लक्ष्मी पाकर गर्व मत करो, या तो दोनो हाथ जोड प्रणाम करो या आयुध पकडो।

या तो सेवक होयकर स्वामीपर चवर ढौरो या भागकर दशो दिशाविषै विचरो, या सिर नवावो या खैंचिके धनुष निवावो, या रावणकी आज्ञाको कणका आभूषण करहु, या धनुषकी प्रत्यचा खैंचकर कानोतक लावो। रावण आज्ञा करी है कि या तो मेरे चरणारविंदकी रज माथे चढावहु या रणसग्राम-विषै सिरपर टोप धरो, या तो बाण छोडो या धरती छोडो, या तो हाथमें वेत्र दड लेकर सेवा करो या बरछी हाथमें पकडो, या तो अजली जोडहु या सेना जोडहु। या तो मेरे चरणोके नखविषै मुख देखहु या खड्गरूप दर्पणमें मुख देखहु। ये कठोर वचन रावणके दूतने बालीसें कहे। तदि बालीका व्याघ्रविलबी नामा सुभट कहता भया। रे कुदूत! नीचपुरुष! तू ऐसे अविवेक वचन कहै है सो तू खोटे ग्रहकर ग्रह्या है। समस्त पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है पराक्रम अर गुण जाका, ऐसा बाली देव तेरे कुराक्षसने अबतक कर्णगोचर नहीं किया। ऐसा कहकर सुभटने महा क्रोधायमान होकर दूतके मारणेकू खडगपर हाथ धर्‍या, तदि बालीने मने किया, जो इस रकके मारणेसे कहा? यह तो अपने नाथके कहे प्रमाण वचन बोलै है। अर रावण ऐसे वचन कहावै है। सो उसीकी आयु अल्प है, तदि दूत डर कर सिताब रावणपै गया। रावणको सकल वृत्तात कह्या, सो रावण महाक्रोधकू प्राप्त भया। दुस्सह तेजवान रावणने बडी सेनाकरि मडित बखतर पहन शीघ्र ही कूच किया। रावणका शरीर तेजोमय परमाणुवोसे रचा गया है। रावण किहकधपुर पहुचे। तदि बाली सग्रामविषै प्रवीण महा भयानक शब्द सुनकर युद्धके अर्थ बाहिर निकसनेका उद्यम किया। तब महाबुद्धिमान नीतिवान जे सागर वृद्धादिक मत्री, तिनने वचनरूप जलकर शात किया कि—हे देव! निष्कारण युद्ध करनेसे कहा? क्षमा करो, आगे अनेक योधा मान करके क्षय गए। कसे है वे योधा? रण ही है प्रिय जिनकू, अष्टचन्द्र विद्याधर अर्ककीर्तिके भुजके आधार, जिनके देव सहाई तौ भी मेघेश्वर जयकुमारके बाणों कर क्षय भए। रावणकी बडी सेना है जिसकी ओर कोई देख सकै नाहीं, खड्ग गदा सेल बाण इत्यादि अनेक आयुधोंकर भरी है, अतुल्य है। तातै आप सदेहकी तुला जो सग्राम उसके अर्थ न चढो। तब

बालीने कही अहो मंत्री हो ! अपनी प्रशंसा करनी योग्य नाहीं तथापि मैं तुमको यथार्थ कहूं हूं कि इस रावणको सेनासहित एक क्षणमात्रमें बावें हाथकी हथेलीसे चूर डालनेको समर्थ हूं, परन्तु यह भोग क्षणविनश्वर है, इनके अर्थ निर्दय कर्म कौन करै ? जब क्रोधरूपी अग्निसे मन प्रज्ज्वलित होय तब निर्दय कर्म होय है। यह जगतके भोग केलेके थंभ समान असार हैं। तिनको पाकर मोहवंत जीव नरकमें पड़ें हैं। नरक महा दुखोंसे भरया है। सब जीवोंको जीतव्य वल्लभ है। सो जीवोंके समूह को हत कर इन्द्रियोंके भोग सुख पाइए है तिनकरि गुण कहां ? इन्द्रियसुख साक्षात् दुःख ही हैं। ये प्राणी संसाररूपी महाकूपमें अरहटकी घड़ीके यंत्र समान रीती भरी करते रहते हैं। कैसे हैं ये जीव ? विकल्प जालसे अत्यन्त दुःखी हैं। श्रीजिनेंद्र देवके चरणयुगल संसारके तारणेके कारण हैं, तिनकूं नमस्कारकरि औरकूं कैसे नमस्कार करूं ? मैंने पहिलेसे ऐसी प्रतिज्ञा करी है कि देव गुरु शास्त्रके सिवाय औरको प्रणाम न करूं ? तातैं मैं अपनी प्रतिज्ञा भंग भी न करूं अर युद्धविषै अनेक प्राणियोंका प्रलय भी न करूं। बल्कि मुक्तिकी देनहारी सर्व संगरहित दिगम्बरी दीक्षा धरूं। मेरे जो हाथ श्रीजिनराजकी पूजा में प्रवरतें, दानविषै प्रवरतें, अर पृथ्वीकी रक्षाविषै प्रवरतें, वे मेरे हाथ कैसे किसीको प्रणाम करें ? अर जो हस्तकमल जोड़कर पराया किंकर होवे, उसका कहां ऐश्वर्य ? अर कहा जीतव्य ? वह तो दीन है। ऐसा कहकर सुग्रीवको बुलाय आज्ञा करते भये कि 'हे बालक ! सुनो, तुम रावणको नमस्कार करो वा न करो, अपनी बहिन उसे देवो अथवा मत देवो, मेरे कछु प्रयोजन नाहीं। मैं संसारके मार्ग से निवृत्त भया, तुमको रुचै सो करो। ऐसा कहकर सुग्रीवको राज्य देय आप गुणनकर गरिष्ठ श्रीगगनचन्द्र मुनिपै परमेश्वरी दीक्षा आदरी। परमार्थमें लगाया है चित्त जिनने, अर पाया है परम उदय जिनने, वे बाली योधा परम ऋषि होय एक चिद्रूप भावमें रत भए। सम्यग्दर्शन है निर्मल जिनके, सम्यक्ज्ञान कर युक्त है आत्मा जिनका, सम्यक्चारित्रविषै तत्पर, बारह अनुप्रेक्षाओंका निरंतर विचार करते भए। आत्मानुभवमें मग्न मोह जालरहित स्वगुणरूपी भूमिपर विहार करते भये। कैसे हैं

गुण भूमि ? निर्मल आचारी जे मुनि तिनकरि सेवनीक है। बाली मुनि पिताकी नाईं सब जीवोंपर दयालु बाह्याभ्यंतर तपसे कर्मकी निर्जरा करते भए। वे शांतबुद्धि तपोनिधि महाऋद्धिके निवास होते भए, सुन्दर है दर्शन जिनका, ऊंचे ऊंचे गुणस्थानरूपी जे सिवाण तिनके चढनेमें उद्यमी भए। भेदी है अंतरंग मिथ्याभावरूपी ग्रंथि (गांठ) जिनने, बाह्याभ्यंतर परिग्रहरहित, जिन सूत्रके द्वारा कृत्य अकृत्य सब जानते भये। महा गुणवान, महासंवरकर मंडित कर्मोंके समूहको खिपावते भए। प्राणोंकी रक्षा-मात्र सूत्रप्रमाण आहार लेय है। अर प्राणनिकूं धर्मके निमित्त धारै है, अर धर्मकूं मोक्षके अर्थ उपारजे है, भव्यलोकनिकूं आनंदके करनहारे उत्तम है आचरण जिनके, ऐसे बाली मुनि और मुनियोंको उपमा योग्य होते भये। अर सुग्रीव रावणको अपनी बहिन परणायकर रावणकी आज्ञा प्रमाण किहकंधपुरका राज्य करता भया।

पृथ्वीविषै जो जो विद्याधरोंकी कन्या रूपवती थीं रावणने वे समस्त अपने पराक्रमसे परणी। नित्यालोक नगरमें राजा नित्यालोक राणी श्रीदेवी, तिनकी रत्नावली नामा पुत्री, उसको परणकर रावणलंकाको आवते हुते, सो कैलाश पर्वत ऊपर आय निकसे। सो पुष्पक विमान तहांके जिनमंदिरनिके प्रभाव करि अर बाली मुनिके प्रभाव करि आगे न चल सका। कैसा है विमान ? मनके वेग समान चंचल है। जैसे सुमेरुके तटकूं पायकरि वायुमंडल थंभै तैसे विमान थम्भा। तदि घंटाविककका शब्द होता रह गया। मानो विलखा होय मौनको प्राप्त भया। तदि रावण विमानको अटका देख मारीच मंत्रीसे पूछते भए कि यह विमान कौन कारणसे अटक्या। तदि मारीच सब वृत्तांत विषै प्रवीण, कहता भया। हे देव ! सुनो यह कैलाश पर्वत है। यहां कोई मुनि कायोत्सर्गकरि तिष्ठै है, शिला के ऊपर रत्नके थंभ समान सूर्यके सम्मुख ग्रीष्ममें आतापनयोग धर तिष्ठै है। अपनी कांति से सूर्य की कांतिको जीतता हुआ विराजै है। यह महामुनि धीरवीर है, महाघोर वीर-तपको धरै हैं, शीघ्र ही मुक्तिको प्राप्त हुआ चाहे हैं। इसलिए उतरकर दर्शन करि आगे चालो तथा विमान पीछे फेर कैलाशको छोडकर और

मार्ग होय चलो । जो कदाचित हठकर कलाशके ऊपर होय चालोगे, तो विमान खड खड होजायगा । यह मारीचके वचन सुनकर राजा यमका जीतनहारा रावण अपने पराक्रमसे गर्वित होकर कलाश पवतको देखता भया । कसा ह पवत ? मानो व्याकरण ही ह, क्योकि नानाप्रकारके धातुनि करि भरया ह । अर सहस गुण युक्त नाना प्रकारके सुवणकी रचनासे रमणीक पद पक्तियुक्त नानाप्रकार के स्वरो कर पूण ह । बहुरि कसा ह पवत ? ऊचे तीखे शिखरोके समूहकरि शोभायमान ह । आकाश से लग्या ह, निसरते उछलते जे जलके नीझरने तिनकरि प्रकट हँसे ही ह । कमल आदि अनेक पुष्प, तिनकी सुगध, सोई भई सुरा, ताकरि मत्त जे भमर, तिनकी गु जारसे अति सुन्दर ह । नानाप्रकारके वक्षोकर भरया ह, बडे २ शालके जे वक्ष तिनकर मडित जहा छहो ऋतुओके फल फूल शोभ ह । अनेक जातिके जीव विचर ह । जहा ऐसी ऐसी औषध ह जिनके त्रासत सर्पोके समूह दूर रह ह । महा मनोहर सुगधसे मानो वह पवत सदा नवयौवनहीको धर ह । अर मानो वह पवत पूवपुरुष समान ही ह । विस्तीण जे शिला वे ही ह हृदय जाके, अर शाल वक्ष वे ही महा भुजा, अर गभीर गुफा सो ही वदन, अर वह पवत शरद ऋतुके मेघ समान निमल तट तिनकरि सु दर, मानो दुग्ध समान अपनी काति से दशो दिशाको स्नान ही कराव ह । कईएक गुफानिविष सूते जे सिह तिनकर भयानक ह, कहू एक सूते जे अजगर तिनके स्वासकरि हाल ह वक्ष जहा । कहू एक भमत क्रीडा करते जे हिरणोके समूह तिनकर शोभ ह कहूएक मात हाथियोके समूहसे मडित ह वन जहा, कहूएक फूलनिके समूह करि मानो रोमाच होय रहा ह । अर कहूएक वनकी सघनता करि भयानक ह, कहूएक कमलोके वनसे शोभित ह सरोवर जहा, कहूएक वानरनिके समूह वक्षनिकी शाखानिपर केलि कर रहे ह । अर कहूएक गडान के घगकर छेदे गए ह जो चदनादि सुगध वक्ष–तिनकरि सुगध होय रहा ह । कहूएक बिजलोके उद्योत करि मेल्या जो मेघमण्डल उस समान शोभाको धर ह, कहूइक दिवाकर समान जो ज्योतिरूप शिखर तिनकरि उद्योतरूप किया ह आकाश जान । ऐसा कलाशपवत दखि रावण विमानत उतरया । तहाँ

ध्यानरूपी समुद्रविषै मग्न, अपने शरीरके तेजसे प्रकाश की है दशो दिशा जिनने, ऐसे बाली महामुनि देखे। दिग्गजनकी सूण्ड समान दोऊ भुजा लम्बाए, कायोत्सर्ग धर खडे, लिपटि रहे हैं शरीरसे सर्प जिनके, मानो चंदनके वृक्ष ही हैं। आतापनि शिलापर निश्चल खडे प्राणियोको ऐसा दीखै मानो पाषाणका थंभ ही है। रावण बाली मुनिको देखकरि पूर्व बैर चितारि पापी क्रोधरूपी अग्निसे प्रज्वलित भया। भृकुटि चढाय होठ डसता कठोर शब्द मुनि को कहता भया—'अहो यह कहा तप तेरा, जो अब भी अभिमान न छूटचा। मेरा विमान चलता थांभ्या। कहा उत्तम क्षमारूप वीतरागका धर्म अर कहा पापरूप क्रोध ? तू वृथा खेद करै है। अमृत अर विषको एक किया चाहै है। तातैं तेरा गर्व दूर करूंगा, तुझ सहित कैलाशपर्वतको उखाड समुद्र में डार दूंगा।" ऐसे कठोर वचन कहकर रावणने विकराल रूप किया। सर्व विद्या जे साधी हैं तिनकी अधिष्ठाता देवी चितवनमात्रसे आय ठाढी भई, सो विद्याबलकरि रावणने महारूप किया, धरतीको भेद पातालमें पैठा। महा पापविषै उद्यमी है, प्रचंड क्रोधकरि लाल हैं नेत्र जाके, अर हूंकार शब्दकरि वाचाल है मुख जाका, भुजावोकर कैलाशपर्वतके उखाडनेका उद्यम किया। तदि सिंह हस्ती सर्प हिरण इत्यादि अनेक जीव अर अनेक जातिके पक्षी भयकरि कोलाहल शब्द करते भए। जलके नीझरने टूट गए, जल गिरने लगा, वृक्षोके समूह फट गए, पर्वतकी शिला अर पाषाण पडते भए, तिनके विकराल शब्दकरि दशूं दिशात कैलाश पर्वत चलायमान भया। जो देव क्रीडा करते हुते ते आश्चर्यको प्राप्त भए, दशो दिशाकी ओर देखते भए। अर जो अप्सरा लतावोके मण्डपमें केलि करती हुतीं सो लतावोको छोड आकाशमें गमन करतीं भईं। भगवान बालीने रावणका कर्तव्य जान आप धीरवीर क्रोध रहित कछु भी खेद न मान्या, जैसे निश्चल विराजे हुते तैसे ही रहे। चित्तमें ऐसा विचार किया—जो पर्वतपर भगवानके चैत्यालय अति उत्तम महासुन्दरताकरि शोभित, सर्व रत्नमयी, भरत चक्रवर्तीके कराए हैं, जहां निरंतर भक्तिसंयुक्त सुर असुर विद्याधर पूजाको आवै है, मति या पर्वतके कम्पायमान होनेकरि चैत्यालयोका भंग होय,

अर यहा अनेक जीव विचर ह तिनकू बाधा न होय, ऐसा विचारकरि अपने चरणका अगुष्ठ ढीला दाब्या। सो रावण महाभाराक्रात होय दब्या। बहुरूप बनाया था सो भग भया, महादु ख कर व्याकुल नेत्रोसे रक्त झरने लगा, मुकुट टूट गया अर माथा भीग गया, पवत बठ गया, रावणके गोडे छिल गए, जघा भी छिल गई तत्काल पसेवमे भीग गया, अर धरती पसेव करि गीली भई। रावणके गात्र सकुच गए, कछुवे समान हो गया, तब रोणे लगा, ताही कारणसे पथ्वीमे रावण कहाया। अब तक दशानन कहाव था। इसके अत्यन्त दीन शब्द सुनकरि इसकी राणी अत्यन्त विलाप करती भई। अर मत्री सेना पति लारके सव सुभट पहिले तो भमकर वथा युद्ध करनेको उद्यमी भए थे, पीछे मुनिका अतिशय जान सव आयुध डार दिये। मुनिके कायबल ऋद्धिके प्रभावत देव दुन्दुभी बजाने लगे, अर कल्पवक्षोके फूलो की वर्षा भई, तापर भमर गुजार करते भए, आकाशमे देव देवी नत्य करते भए, गीतकी ध्वनि होती भई। तब महामुनि परमदयालु अगुष्ठ ढीला किया।

रावणने पवतके तलेस निकसि बाली मुनिके समीप आय नमस्कार कर क्षमा कराई। अर जान्या ह तपका बल जान, योगीश्वरकी बारम्बार स्तुति करते भये। हे नाथ! तुमने घरहीतें यह प्रतिज्ञा करी हुती जो म जिनेंद्र मुनींद्र जिनशासन सिवाय काहूकू भी प्रणाम न करू, सो यह सब सामथ्य का फल ह। अहो धन्य ह निश्चय तिहारा, धन्य यह तपका बल! हे भगवान! तुम योग शक्तिसे त्रैलोक्य को अन्यथा करनेको समथ हो, परन्तु उत्तमक्षमा धमके योगसे सबप दयालु हो, किसीपर क्रोध नाहीं। हे प्रभो! जसा तपकरपूण मुनिको बिना ही यत्न परमसामथ होय ह तसी इन्द्रादिकके नाहीं। धन्य गुण तिहारे, धन्य रूप तिहारा, धन्य काति तिहारी, धन्य आश्चयकारी बल तिहारा, अदभुत दीप्ति तिहारी, अदभुत शील, अदभुत तप, त्रलोक्यमें जे अदभुत परमाणु ह तिनकरि सुकतका आधार तिहारा शरीर बना ह, जन्महीत महाबली, सव सामथके धरणहारे, तुम नव यौवनमें जगतकी मायाको तजकरि परम शातभावरूप जो अरहतकी दीक्षा ताहि प्राप्त भए हो, सो यह अदभुत काय

तुम सारिखे सत्पुरुषोकर ही बने ह । मुझ पापीने तुम सारिखे सत्पुरुषोसे अविनय किया सो महा पाप का बध किया ! धिक्कार मेरे मन वचन कायको । म पापी मुनिद्रोहमें प्रवरत्या, जिनमदिरनिका अविनय भया । आप सारिखे पुरुषरत्न अर मुझ सारिखे दुबुद्धि सो सुमेरु अर सरसोकासा अतर ह । मोकू मरतेकू आज आप प्राण दिए । आप दयालु हम सारिखे दुष्ट दुजन तिन ऊपर भी क्षमा करो इस समान और कहा । म जिनशासनको श्रवण करू हू, जानू हू देखू हू, जो यह ससार असार है, अस्थिर ह, दु खभाव ह । तथापि म पापी विषयनिसे वराग्यको नाहीं प्राप्त भया । धन्य ह वे पुण्यवान महापुरुष, अल्प ससारी, मोक्षके पात्र, जे तरुण अवस्थाहीमें विषयोको तजि, मोक्षका माग मुनिवत आचर ह । या भाति मुनिकी स्तुतिकर तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कारकरि अपनी निदा करि बहुत लज्जावान होय मुनिके समीप जे जिनमदिर हुते तहा वदनाको प्रवेश किया । चद्रहास खडगको पथ्वी विषे मेलि अपनी राणीनिकरि मडित जिनवरका अचन करता भया । भुजामेसे नस रूप तात काढ कर बीण समान बजाता भया । भक्तिमे पूण ह भाव जाका, स्तुतिकर जिनेंद्रके गुणानुवाद गावता भया । हे देवाधिदेव ! लोकालोक देखनहारे, नमस्कार हो तुमकू । कसे हो ? लोकको उलघे ऐसा है तेज तिहारा । हे कताथ महात्मा ! नमस्कार हो । कसे हो ? तीन लोककरि करी ह पूजा जिनकी, नष्ट किया ह मोहका वेग जिन्होने, वचनसे अगोचर गुणोके समूहके धरनहारे, महा ऐश्वयकरि मडित, मोक्ष मागके उपदेशक, सुखकी उत्कष्टतामे पूण, समस्त कुमागसे दूर, जीवनको भुक्ति अर मुक्तिके कारण, महाकल्याणके मूल, सब कर्मके साक्षी, ध्यानकर भस्म किए ह पाप जिन्होने, जन्म मरणके दूर करनहारे, समस्तके गुरु, आपके कोई गुरु नाहीं, आप किसीको नव नाहीं, अर सबकरि नमस्कार करने योग्य, आदि अन्तरहित, समस्त परमाथके जाननहारे, आपको केवली बिना अन्य न जान सक, सब रागादिक उपाधिसे शून्य, सबके उपदेशक, द्रव्यार्थिक नयसे सब नित्य ह अर पर्यायार्थिक नयसे सब अनित्य ह—ऐसा कथन करनहारे, किसी एक नयसे द्रव्य गुणका भेद, किसी एक नयसे द्रव्य गुण

का अभेद—ऐसा अनेकात दिखावन हारे, जिनेश्वर, सवरूप, एकरूप चिद्रूप, अरूप, जीवनको मुक्ति के देनहारे, ऐसे जो तुम, तिनको हमारा बारम्बार नमस्कार होहु।

श्री ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पदमप्रभ, सुपाश्व, च द्रप्रभ पुष्पदत, शीतल, श्रेयास, वासुपूज्यके ताई बारम्बार नमस्कार हो। पाया ह आत्मप्रकाश जि होने विमल अनन्त धम शातिके ताई नमस्कार हो। निरतर सुखोके मूल सबको शातिके करता कु थु जिनेन्द्रके ताई नमस्कार हो। अरनाथके ताई नमस्कार हो। मल्लिमहेश्वरके ताई नमस्कार हो। मुनिसुवतनाथके ताई जे महाव्रतोके देनहारे, अर अब जो होवेंगे नमि नेम पाश्व वद्धमान तिनके ताई नमस्कार हो। अर जो पदमनाभादिक अनागत होवेंगे तिनको नमस्कार हो। अर जो निर्वाणादिक अतीत जिन भए तिनको नमस्कार हो। सदा सवदा साधुओको नमस्कार हो, अर सव सिद्धोको निरतर नमस्कार हो। कसे ह सिद्ध ? केवलज्ञानरूप, केवलदशनरूप, क्षायक सम्यक्त्वरूप इत्यादि अनत गुणरूप ह।" यह पवित्र अक्षर लकाके स्वामी ने गाए।

रावण द्वारा जि े द्रदेवकी महा स्तुति कर ेसे धरणे द्रका आसन कम्पायमान भया। तब अवधि ज्ञानसे रावणका वत्तात जान हषसे फूले ह नेत्र जिनके, सुन्दर ह मुख जिनका, देदीप्यमान मणियो के ऊपर जो मणि उनकी कातिसे दूर किया ह अधकारका समूह जिन े, पातालसे शीघ्र ही नागोके राजा कलाश पर आए। जि े द्रको नमस्कारकरि विधिपूवक समस्त मनोज्ञ द्रव्योसे भगवानकी पूजा करि रावणसे कहते भए—'हे भव्य ! तने भगवानकी स्तुति बहुत करी, अर जिनभक्तिके बहुत सुन्दर गीत गाए। सो हमको बहुत हष उपज्या, हष करि हमारा शरीर आनन्दरूप भया। हे राक्षसेश्वर ! धन्य ह तू जो जिनराजकी स्तुति कर। तेरे भावकरि अबार हमारा आगमन भया ह। म तेरेसे सतुष्ट भया, तू वर माग। जो मनवाछित वस्तु तू मागे सो दू। जो वस्तु मनुष्योको दुलभ ह सो तुम्हें दू। तब रावण कहते भए हे नागराज ! जिनवदनातुल्य और कहा शुभ वस्तु ह, सो म आपसे मागू। आप सव

बात समथ मनवांछित देने लायक ह। तब नागपति बोले—हे रावण! जिनेन्द्रकी वदनाके तुल्य और कल्याण नाहीं। यह जिनभक्ति आराधी हुई मुक्तिके सुख देव ह। तात या तुल्य और कोई पदाथ न हुआ न होयगा।' तब रावणने कही—हे महामते! जो इससे अधिक और वस्तु नाहीं तो मैं कहा याचू ?' तब नागपति बोले—'तात जो कहा सो सव सत्य ह। जिनभक्तिसे सब कुछ सिद्ध होय ह, याको कुछ दुलभ नाहीं। तुम सारिखे, मुझ सारिखे, अर इन्द्र सारिखे अनेक पद सब जिनभक्तिसे ही होय ह। अर यह ससारके सुख अल्प ह, विनाशीक ह, इनकी क्या बात ? मोक्षके अविनाशी जो अतींद्रीसुख वे भी जिनभक्तिकरि प्राप्त होय ह। हे रावण! तुम यद्यपि अत्यन्त त्यागी हो, महा विनयवान बलवान हो, महाऐश्वयवान हो, गुणकरि शोभित हो तथापि मेरा दशन तुमको वथा मत होय। तेरेसे प्राथना करू हू कि तू कुछ माग। यह म जानू हू तू जाचक नाहीं, परन्तु म अमोघ विजयानामा शक्ति विद्या तुझ दू ह सो हे लकेश! तू ले। हमारा स्नेह खण्डन मत कर। हे रावण! किसीकी दशा एकसी कभी नहीं रहती, सपत्तिके अनन्तर विपत्ति अर विपत्तिके अनन्तर सम्पत्ति होती ह। जो कदाचित मनुष्य शरीर ह अर तुझपर विपत्ति पडे तो यह शक्ति तेरे शत्रुकी नाशनहारी अर तेरी रक्षाकी करनहारी होयगी। मनुष्योकी क्या बात, इससे देव भी डरे ह। यह शक्ति अग्नि ज्वालाकरि मडित विस्तीण शक्तिकी धारनेहारी ह। तब रावण धरणेन्द्रकी आज्ञा लोपनको असमर्थ होता हुआ शक्ति को ग्रहण करता भया, क्योकि किसीसे कुछ लेना अत्यन्त लघुता ह। सो इस बातसे रावण प्रसन्न नहीं भया। रावण अति उदारचित्त ह। तब धरणेन्द्रसे रावणने हाथ जोड नमस्कार किया। धरणेद्र आप अपने स्थानको गए। कसे ह धरणेद्र ? प्रकटा ह हष जिनके। रावण एक मास कलाश पर रहकर भगवानके चत्यालयोकी महाभक्तिसे पूजाकरि अर बालीमुनिकी स्तुतिकरि अपने स्थानक गए। बालीमुनिने जो कछुएक मनके क्षोभसे पापकर्म उपार्ज्या हुता सो गुरुवोके निकट जाय प्रायश्चित्त लिया, शल्य दूरकर परम सुखी भए। जस विष्णुकुमार मुनिने मुनियोकी रक्षानिमित्त बालीका परा

भव किया हुता अर गुरुसे प्रायश्चित्त लेय परम सुखी भए थे तस बाली मुनिने चैत्यालयोकी अर अनेक जीवोकी रक्षा निमित्त रावणका पराभव किया, कलाश थाम्भा, फिर गुरुप प्रायश्चित्त लेय शल्य मेट परम सुखी भए। चारित्रसे, गुप्तिसे, धर्मसे, अनुप्रेक्षासे, समितिसे, परीषहोके सहनेसे महासवरको पाय कर्मोंकी निर्जराकरि बाली मुनि केवलज्ञानको प्राप्त भए। अष्टकर्मसे रहित होय तीन लोकके शिखर अविनाशी स्थानमे अविनाशी अनुपम सुखको प्राप्त भए। अर रावणने मनमें विचारा कि जो इद्रियो को जीते तिनको मे जीतिवे समर्थ नाही, तातै राजाओको साधुओकी सेवा ही करना योग्य है। ऐसा जान साधुओकी सेवामे तत्पर होता भया। सम्यग्दर्शनसे मडित जिनेश्वरमें दृढ है भक्ति जिसको, काम भोगमे अतृप्त, यथेष्ट सुखसे तिष्ठता भया।

यह बालीका चरित्र पुण्याधिकारी जीव, भावविषै तत्पर है बुद्धि जाकी भलीभाँति सुन सो कबहू अपमानकू प्राप्त न होइ। अर सूर्य समान प्रतापकू प्राप्त होय।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिकाविषै बाली मुनिका निरूपण करनेवाला नववा पर्व पूर्ण भया ॥ ९ ॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतै कहै है—हे श्रेणिक! यह बालीका वृत्तान्त तोकू कह्या, अब सुग्रीव अर सुतारा राणीका वृत्तान्त सुन। ज्योतिपुर नामा नगर, तहा राजा अग्निशिख, राणी ह्री, उनकी पुत्री सुतारा, जो सम्पूर्ण स्त्रीगुणोसे पूर्ण, सर्व पृथ्वीमे रूप गुणकी शोभासे प्रसिद्ध, मानो कमलोका निवास तज साक्षात लक्ष्मी ही आई है। अर राजा चक्राक, उसकी राणी अनुमति, तिनका पुत्र साहसगति, महादुष्ट। एक दिन अपनी इच्छासे भ्रमण करै था, सो तानै सुतारा देखी, देखकर काम शल्यसे अत्यन्त दुखीहोकर निरन्तर सुताराको मनमें धरता भया। दशा जाकी उन्मत्त है ऐसा, दूत भेज सुताराको याचता भया, अर सुग्रीव भी बारम्बार याचता भया। कैसी है वह सुतारा? महामनोहर है। तब राजा अग्निशिख सुताराका पिता दुविधामे पड भया कि कन्या किसको देनी। तब महाज्ञानी

मुनिको पूछी । मुनीन्द्रने कहा कि साहसगतिकी अल्प आयु है, अर सुग्रीवकी दीर्घ आयु है । तब अमृत समान मुनिके वचन सुनकर राजा अग्निशिख, सुग्रीवको दीर्घ आयुवाला जानकर अपनी पुत्रीका पाणिग्रहण कराया । सुग्रीवका पुण्य विशेष है जो सुताराकी प्राप्ति भई । तदनन्तर सुग्रीव अर सुतारा के अंग अर अंगद दोय पुत्र भए, अर वह पापी साहसगति निलज्ज सुताराकी आशा छोड नाहीं । धिक्कार है कामचेष्टाको । वह कामाग्निकर दग्ध चित्तविषै ऐसा चितवै कि वह सुखदायिनी कैसे पाऊं? कब उसका मुख चन्द्रमासे अधिक मैं निरखूं ? कब उस सहित नंदनवनविषै क्रीडा करूं ? ऐसा मिथ्या चितवन करता संता रूपपरवर्तिनी शेमुषी नामा विद्याके आराधनेको हिमवंत नामा पर्वतपर जायकरि अत्यन्त विषम गुफाविषै तिष्ठकर विद्याके आराधवेको आरम्भ करतो भया । जैसे दुखी जीव प्यारे मित्रको चितारै तैसे विद्याको चितारता भया ।

अथानन्तर रावण दिग्विजय करनेको निकस्या । वन पर्वतादिकरि शोभित पृथ्वी देखता अर समस्त विद्याधरोंके अधिपति अंतरद्वीपोंके वासियोंको अपने वश करता भया । अर तिनको आज्ञाकारी कर तिनहीके देशोंमें थापता भया । कैसा है रावण? अखण्ड है आज्ञा जाकी, अर विद्याधरोंमें सिंहसमान बडे बडे राजा महापराक्रमी रावणने वश किये । तिनको पुत्र समान जान बहुत प्रीति कर भया । महन्त पुरुषोंका यही धर्म है कि नमतामात्रसे ही प्रसन्न होवें । राक्षसोंके वंशमें अथवा कपिवंशमें जे प्रचंड राजा हुते वे सब वश किए । बडी सेनाकरि संयुक्त आकाशके मार्ग गमन करता जो दशमुख, पवन समान है वेग जाका, उसका तेज विद्याधर सहिबेको असमर्थ भए । संध्याकार, सुवेल, हेमा, पूर्ण, सुयोधन, हंसद्वीप, बारिहल्लादि इत्यादि द्वीपोंके राजा विद्याधर नमस्कार कर भेंट ले आय मिले । सो रावणने मधुर वचन कह बहुत संतोषे, अर बहुत संपदाके स्वामी किए । जे विद्याधर बडे २ गढ़ोंके निवासी हुते वे रावणके चरणारविंदको नम्रीभूत होय आय मिले, जो सार वस्तु थी सो भेंट करी । हे श्रेणिक ! समस्त बलोंविषै पूर्वोपार्जित पुण्यका बल प्रबल है, ताके उदयकरि कौन वश न होय ? सब

ही वश होय है ।

अथानन्तर रथनूपुरका राजा जो इंद्र उसके जीतिवेको रावण गमनको प्रवरत्या । सो जहा पाताललंकाविषै खरदूषण बहणेऊ है, वहा जाय डेरा किया । पाताललंकाके समीप डेरा भया । रात्रिका समय था, खरदूषण शयन कर था सो चंद्रनखा रावणकी बहिनने जगाया । पाताललंकासे निकसकरि रावणके निकट आया, रत्नोके अर्घ देय महा भक्तिसे परम उत्साहकरि रावणकी पूजा करी । रावण ने भी बहणेऊपना।के स्नेहकरि खरदूषणका बहुत सत्कार किया । जगतविषै बहिन बहणेऊ समान और कोई स्नेहका पात्र नाही । खरदूषणने चौदह हजार विद्याधर मनवांछित नाना रूपके धारनहारे रावण को दिखाए । रावण खरदूषणकी सेना देख बहुत प्रसन्न भए । आप समान सेनापति किया । कैसा है खरदूषण ? महा शूरवीर है । उसने अपने गुणोसे सब सामंतोका चित्त वश किया है । हिडंब, हैहिडिंब, विकट, त्रिजट, हयमाकोट, सुजट, टंक, किहकधाधिपति, सुग्रीव, तथा त्रिपुर, मलय, हेमपाल कोल, वसुंदर इत्यादिक अनेक राजा नानाप्रकारके वाहननिपर चढे, नानाप्रकार शस्त्र विद्याविषै प्रवीण, अनेक शस्त्रनके अभ्यासी तिनकरि युक्त, पाताललंकात खरदूषण रावणके कटकविषै आया ? जैसे पाताललोकसे असुरकुमारोके समूह करि युक्त चमरेंद्र आवे । या भाति अनेक विद्याधर राजाओके समूहकरि रावणका कटक पूर्ण होता भया । जैसे बिजली अर इंद्रधनुषकर युक्त मेघमालानिके समूह तिनकर श्रावणमास पूर्ण होय । ऐसे एकहजार ऊपर अधिक अक्षोहिणी बल रावणके होय चुका । दिन दिन बढता जाय है । अर हजार हजार देवनिकरि सेवायोग्य रत्न, नानाप्रकार गुणनिके समूहके धारण-हारे उनकर युक्त, अर चंद्रकिरण समान उज्ज्वल चमर जापर ढुरै है, उज्ज्वल छत्र सिरपर फिरै है, जाका रूप सुंदर है, महाबाहु महाबली पुष्पक नामा विमानपर चढा, सुमेरु समान स्थिर, सूर्यसमान ज्योति, अपने विमानादि बाहन सम्पदाकरि सूर्यमण्डलको आच्छादित करता हुवा इंद्रका विध्वंस मनमें विचारकर रावणने प्रयाण किया । कैसा है रावण ? प्रबल है पराक्रम जाका, मानो आकाशको समुद्र

समान करता भया, देदीप्यमान जे शस्त्र, सोई भई कलोल, अर हाथी घोडे प्यादे ये ही भए जलचर जीव, अर छत्र भवर भए, अर चमर तुरग भए, नानाप्रकारके रत्नोकी ज्योति फल रही ह, अर चमरो के दण्ड मीन भए–'हे श्रेणिक! रावणकी विस्तीण सेनाका वणन कहाँलग करिये, जिसको देखकर देव डरें तो मनुष्यनिकी बात कहा? इद्रजीत मेघनाद कुम्भकण विभीषण खरदूषण निकुम्भ कुभ इत्यादि बहुत सुजन रणमें प्रवीण, सिद्ध ह विद्या जिनको, महाप्रकाशवन्त, शस्त्र शास्त्र विद्यामें प्रवीण ह, जिनकी कीर्ति बडी ह, महासेनाकरि युक्त, देवताओकी शोभा को जीतते हुए रावणके सग चाले। विंध्याचल पवतके समीप सूय अस्त भया। मानो रावणके तेजकरि विलखा होय तेज रहित भया। वहा सेनाका निवास भया, मानो विध्याचलने सेना सिरपर धारी ह। विद्याके बलसे नाना प्रकारके आश्रय लिये। फिर अपनी किरणनिकरि अधकार के समूहकू दूर करता सता चद्रमा उदय भया, मानो रावणके भयकरि रात्रि रत्नका दीपक लाई ह। अर मानो निशा स्त्री भई, चादनीकरि निमल जो आकाश सोई वस्त्र, उसको धर तारानिके जे समूह तेई सिरविष फूल गूथे ह, चद्रमा ही है वदन जाका, नाना प्रकारकी कथाकर तथा निद्राकर सेनाके लोकनिने रात्रि पूण करी। फिर प्रभात के वादित्र बाजे, मगल पाठ कर रावण जागे। प्रभात क्रिया करी, सूयका उदय भया, मानो सूय भुवन-विष भ्रमणकर किसी ठौर शरण न पाया तब रावणहीके शरण आया। पुन रावण नमदाके तट आए। कसी ह नमदा? शुद्ध स्फटिक मणि समान ह जल जाका, अर उसके तीर अनेक वनके हाथी रह ह सो जलमें केलि कर ह, उसकर शोभायमान ह। अर नानाप्रकारके पक्षियोके समूह मधुर गान करे ह सो मानो परस्पर सभाषण ही कर ह। फेन कहिए झागके पटल इन कर मडित ह तरगरूप जे भोह उनके विलास करि पूण ह। भवर ही ह नाभि जाके, अर चचल जे मीन तेई ह नेत्र जाके, अर सुदर जे पुलिन तेई ह कटि जाके, नानाप्रकारके पुष्पनिकरि सयुक्त निमल जल ही ह वस्त्र जाका, मानो साक्षात सुन्दर स्त्री ही है। ताहि देखकर रावण बहुत प्रसन्न भए। प्रबल जे जलचर उनके

समूहकरि मण्डित है, गंभीर है, कहूंएक वेगरूप बहै है, कहूं एक मंदरूप बहै है, कहूं एक कुण्डलाकार बहै है, नानाचेष्टानिकरि पूर्ण ऐसी नर्मदाको देखकर कौतुकरूप भया है मन जाका सो रावण नदीके तीर उतरा। नदी भयानक भी है अर सुन्दर भी है।

अथानन्तर माहिष्मती नगरीका राजा सहस्ररश्मि पृथ्वीविषैं महा बलवान मानो सहस्ररश्मि कहिये सूर्य ही है। उसके हजारों स्त्री, सो नर्मदाविषै रावणके कटकके ऊपर सहस्ररश्मिने जलयंत्रकरि नदी का जल थाम्या अर नदीके पुलिनविषै नानाप्रकारकी क्रीडा करी। कोई स्त्री मान कर रही थी ताको बहुत शुश्रूषाकरि प्रसन्न करा, दर्शन स्पर्शन मान फिर मानमोचन प्रणाम परस्पर जलकेलि हास्य, नानाप्रकार पुष्पोंके भूषणनिके शृंगार इत्यादि अनेक स्वरूप क्रीडा करी। मनोहर है रूप जाका, जैसे देवियोंसहित इन्द्र क्रीडा करै तैसे राजा सहस्ररश्मिने क्रीडा करी। जे पुलिनके बालू रेतविषै रत्नके मोतियोंके आभूषण टूटकर पडे सो न उठाये, जैसे मुरझाई पुष्पोंकी मालाको कोई न उठावै। कईएक राणी चंदनके लेपकरि संयुक्त जलविषै केलि करती भई सो जल धवल होगया। कईएक केसरिके कीचकरि जलको गाले हुए सुवर्णके समान पीत करती भई, कईएक ताम्बूलके रंगकरि लाल जे अधर तिनके प्रक्षालनिकरि नीरको अरुण करती भई, कईएक आंखोंके अंजन धोवनेकरि श्याम करती भई, सो क्रीडा करती जे स्त्री उनके आभूषणनिके सुन्दर शब्द, अर तीर विषै जे पक्षी, उनके सुन्दर शब्द राजाके मनको मोहित करते भये। अर नदीके निवासकी ओर रावणका कटक था सो रावण स्नानकरि पवित्र वस्त्र पहरि, नानाप्रकारके आभूषणनिकरि युक्त नदीके रमणीक पुलिनमें बालूका चौंतरा बंधाय उसके ऊपर वैडूर्यमणियोंके है दंड जिसके, ऐसा मोतियोंकी झालरी संयुक्त चंदोवा ताण, श्रीभगवान अरहंतदेवकी नाना प्रकार पूजा करै था, बहुत भक्तिसे पवित्रस्तोत्रोंकरि स्तुति करै था, सो उपरासका जलका प्रवाह आया, सो पूजामें विघ्न भया। नाना प्रकार की कलुषिता सहित प्रवाह वेग से आया, तब रावण प्रतिमाजी को लेय खडे भये, अर क्रोधकरि कहते भए—जो यह

क्या ह सो सेवकने खबर दीनी कि हे नाथ! यह कोई महाक्रीडावत पुरुष सुन्दर स्त्रीनिके बीच परम उदयको धर नाना प्रकारकी लीला कर ह, अर सामत लोक शस्त्रनिकू धरे दूर २ खडे हैं, नानाप्रकार जलके यत्र बाधे उनसे यह चेष्टा भई ह, अन्य राजाओके सेना चाहिए तात उसके सेना तो शोभामात्र ह अर उसके पुरुषार्थ ऐसा ह जो और ठौर दुलभ ह, बडे २ सामतोसे उसका तेज न सहा जाय, अर स्वगविष इन्द्र ह परन्तु यह तो प्रत्यक्ष ही इन्द्र देखा। यह वार्ता सुनकर रावण क्रोधको प्राप्त भए, भोह चढ गई, आख लाल हो गई, ढोल बाजने लगे, वीररसका राग होने लगा, नानाप्रकारके शब्द होय ह घोडे हीसैं हैं, गज गाजे ह, रावणने अनेक राजाओको आज्ञा करी कि यह सहस्ररश्मि दुष्टात्मा ह इसे पकड लावो। ऐसी आज्ञाकरि आप नदीके तटपर पूजा करने लगे। रत्न सुवणके जे पुष्प उनको आदि देय अनेक सुन्दर जे द्रव्य उनसे पूजा करी। अर अनेक विद्याधरोके राजा रावणकी आज्ञा आशिषकी नाई माथे चढाय युद्धकू चाले। राजा सहसरश्मिने परबलको आवता देखि स्त्रियोको कहा कि तुम डरो मत, धीय बधाय आप जलसे निकसे। कलकलाट शब्द सुन, परबल आया जान, माहिष्मती नगरीके योधा सजकर हाथी, घोडे, रथोपर चढे। नानाप्रकारके आयुध धरे स्वामी धर्मके अत्यन्त अनुरागसे राजाके ढिग आए। जसे सम्मेदशिखर पवतका एक ही काल छहो ऋतु आश्रय कर तसे समस्त योधा तत्काल राजाप आए। विद्याधरोकी फौज आवती देखकर सहसरश्मिके सामत जीतव्यकी आशा छोडकर धनव्यूह रचकर धनीकी आज्ञा विना ही लडनको उद्यमी भए। जब रावण के योद्धा युद्ध करने लगे तब आकाशमें देवनिकी बाणी भई कि अहो (यह बडी अनीति है ये भूमि गौचरी अल्प बली विद्याबलकरि रहित माया युद्धकू कहाँ जान? इनसे विद्याधर मायायुद्ध कर यह कहा योग्य ह) अर विद्याधर घने यह थोडे। ऐसे आकाशविष देवनिके शब्द सुनकर जे विद्याधर सत्पुरुष थे, लज्जबान होय भमिमे उतरे, दोनो सेनाओमें परस्पर युद्ध भया। रथोके, हाथियोके, घोडोके, असवार तथा पियादे तलवार बाण गदा सेल इत्यादि आयुधोकरि परस्पर युद्ध करने लगे, सो बहुत

युद्ध भया। परस्पर अनेक मारे गये, याय युद्ध भया, शस्त्रोके प्रहारकरि अग्नि उठी, सहसरश्मिकी सेना रावणकी सेना करि कछुइक हटी तदि सहसरश्मि रथपर चढकर युद्धको उद्यमी भए। माथ मुकुट धरे बखतर पहरे धनुष को धार, अर अति तेजको धर विद्याधरोके बलको देखकरि तुच्छमात्र भी भय न किया, तब स्वामीको तेजवत देखि सेनाके लोग जे हते हुते थे ते आग आय करि युद्ध करने लगे। ददीप्यमान ह शस्त्र जिनके, अर जे भूल गए है घावोकी वेदना, ये रणधीर भूमिगोचरी राक्षसो की सेना में ऐसैं पडे जसैं माते हाथी समुद्रमें प्रवेश करें। अर सहसरश्मि अति क्रोधको करते हुए बाणोके समूहकरि जसै पवन मेघको हटाव तसैं शत्रुओको हटावते भए। तदि द्वारपाल रावणसे कही हे देव! देखो इसने तुम्हारी सेना हटाई ह, यह धनुषका धारी रथपर चढा जगतको तणवत देख ह, इसके बाणनिकरि तुम्हारी सेना एक योजन पीछे हटी ह। तब रावण सहसरश्मिको देखि आप त्रलो क्यमडन हाथीपर सवार भया। रावणको देखकरि शत्रु भी डरे। रावण बाणोकी वर्षा करता भया। सहसरश्मिको रथसे रहित किया। तब सहसरश्मि हाथीपर चढकरि रावणके सन्मुख आया अर बाण छोडे सो रावणके बक्तरको भेदि अगविष चुभ। तब रावणने बाण देहसे काढि डारे। सहसरश्मिने हसकर रावणसो कहा—अहो रावण! तू बडा धनुषधारी कहाव ह, ऐसी विद्या कहातें सीखी, तुझ कौन गरु मिल्या, पहिले धनुषविद्या सीख, फिर हमसे युद्ध करि। ऐसे कठोर शब्द श्रवणत रावण क्रोधको प्राप्त भया। सहसरश्मिके केशनिम सेलकी दीनी, तब सहसरश्मिके रुधिरकी धारा चली, जाकरि नेत्र घूमने लगे। पहले अचेत होय गया पीछे सचेत होय आयुध पकडने लग्या तदि रावण उछलकरि सहसरश्मिपर आय पडे। अर जीवता पकड लिया, बाधकर अपने स्थान ले आए। ताहि देखि सब विद्याधर आश्चयको प्राप्त भए कि सहसरश्मि जसे योधाको रावणने पकड्या। कसे है रावण? धनपति यक्षके जीतनहारे, यमके मान मदन करनहारे, कलाशके कम्पावनहारे। सहसरश्मि का यह वत्तात देखि सहसरश्मि जो सूय सो भी मानो भय करि अस्ताचलको प्राप्त भया, अधकार

फल गया। भावार्थ—रात्रिका समय भया। भला बुरा दृष्टिमें न आवे। तब चन्द्रमाका बिंब उदय भया। सो अंधकार के हरणेको प्रवीण, मानो रावणका निर्मल यश ही प्रकट्या है। युद्धविषै जे योधा घायल भये थे तिनका वद्योकरि यत्न कराया, अर जो मूवे थे तिनको अपने बंधुवर्ग रणखेतसो ले आये तिनकी क्रिया करी। रात्रि व्यतीत भई, प्रभातके वादित्र बाजने लगे, फिर सूर्य रावणकी वार्ता जानने के अर्थि राग कहिए ललाईको धारता हुआ कम्पायमान उदय भया। सहस्ररश्मिका पिता राजा शत-बाहु जो मुनिराज भए थे, जिनको जंघाचारण ऋद्धि थी, वे महातपस्वी चंद्रमाके समान कांत, सूर्य समान दीप्तिमान, मेरुसमान स्थिर, समुद्र सारिखे गंभीर, सहस्ररश्मिको पकड्या सुनकर जीवनकी दयाके करणहारे परम दयालु शांतचित्त जिनधर्मी जान रावणपै आये। रावण मुनिको आवते देख उठ सामने जाय पायन पड़े, भूमिमें लग गया है मस्तक तिनका, मुनिको काष्ठके सिंहासनपर विराज-मान करि रावण हाथ जोड़ नमीभूत होय भूमिविषै बैठे। अति विनयवान होय मुनिसो कहते भए—हे भगवन! कृपानिधान! तुम कृतकृत्य, तुम्हारा दर्शन इन्द्रादिक देवोंको दुर्लभ है, तुम्हारा आगमन मेरे पवित्र होनेके अर्थि है। तब मुनि इसको शलाका पुरुष जानि प्रशंसाकरि कहते भए। हे दशमुख! तू बड़ा कुलवान बलवान विभूतिवान देवगुरुधर्मविषै भक्तिभावयुक्त है। हे दीर्घायु शूरवीर क्षत्रियो की यही रीति है जो आपसे लड़ै उसका पराभव करै उसे वश करै। सो तुम महाबाहु परम क्षत्री हो, तुमतै लड़वेको कौन समर्थ है? अब दयाकर सहस्ररश्मिको छोड़ो। तब रावण मंत्रियो सहित मुनि को नमस्कार करि कहते भये। हे नाथ! मैं विद्याधर राजानिको वश करनेको उद्यमी भया हूं। लक्ष्मी कर उन्मत्त रथनूपुरका राजा इन्द्र तानै मेरे दादेका बड़ा भाई राजा माली युद्धमें मारया है, तासूं हमारा द्वेष है। सो मैं इन्द्र ऊपर जाय था। मार्गमें रेवा कहिये नर्मदा उसपर डेरा भया सो पुलिन पर बालूके चौतरे पर पूजा कर था सोई इसने उपरासको, अर जलयंत्रोकी केलि करी, सो जलका बेग निवासको आया। सो मेरी पूजामें विघ्न भया, तातै यह कार्य किया है। विना अपराध मैं द्वेष न

करू, अर मै इनके ऊपर गया तब भी इनने क्षमा न कराई कि प्रभावकरि विना जाने मैने यह कार्य किया ह, तुम क्षमा करो। उलटा मानके उदयकरि मेरेसे युद्ध करने लग्या। अर कुवचन कहे। कारण ऐसा भया, जो म भूमिगोचरी मनुष्योको जीतने समथ न भया तो विद्याधरोको कसे जीतू गा। कसे है विद्याधर ? नानाप्रकारकी विद्याकरि महापराक्रमवत ह। तात जो भूमिगोचरी मानी ह, तिनको प्रथम वश करू, पीछ विद्याधरोको वश करू। अनुक्रमम जसे सिवान चढे मदिरम जाइए हैं तातै इनको वश किया, अब छोडना न्याय ही ह। फिर आपकी आज्ञा समान और क्या ? कैसे हो आप ? महापुण्यके उदयत होय ह दशन जाका। ऐसे वचन रावणके सुन इन्द्रजीतने कही हे —नाथ! आपने बहुत योग्य वचन कहे। ऐसे वचन आप बिना कौन कह। तदि रावणने मारीच मन्त्रीको आज्ञा करी कि सहसरश्मिको छुडाय महाराजके निकट ल्यावो। तदि मारीचने अधिकारीको आज्ञा करी। सो आज्ञा प्रमाण जो नागी तलवारनिके हवाले था सो ले आये। सहसरश्मि अपने पिता जो मुनि तिनको नमस्कार करि आय बठ्या। रावणने सहसरश्मिका बहुत सत्कार करि बहुत प्रसन्न होय कह्या हे महाबल! जसैं हम तीनो भाई तस चौथा तू। तेरे सहायकरि रथनूपुरका राजा इन्द्र भमतें कहाव ह, ताहि जीतू गा। अर मेरी राणी मदोदरी ताकी लहुरी बहिन स्वयप्रभा सो तुझ परणाऊगा। तब सहसरश्मि बोले धिक्कार ह इस राज्यको। यह इद्रधनुषसमान क्षणभगुर ह। अर विषयनिको धिक्कार है। ये देखने मात्र मनोज्ञ ह, महा दुखरूप ह। अर स्वगको धिक्कार, जो अवत असयमरूप ह। अर मरणके भाजन इस देहको भी धिक्कार, अर मोको धिक्कार, जो एते काल विषयासक्त होय इतने काल कामादिक बरीनि करि ठगाया। अब म ऐसा करू जाकरि बहुत ससार वनविष भमण न करू। अत्यन्त दु खरूप जो चारगति तिनम भमण करता बहुत थक्या। अब भवसागरम जासो पतन न होय सो करू गा। तब रावण कहते भए—यह मुनिका वत वद्धनिकू शोभ ह। हे भव्य! तू तो नवयौवन है। तब सहसरश्मिने कहा—'कालके यह विवचन नाहीं जो वद्धहीको ग्रसै, तरुणको न ग्रसै। काल सब-

भक्षी है, बाल वृद्ध युवा सबहीको ग्रसै है। जैसे शरदका मेघ क्षणमात्रमें विलायजाय तैसें यह देह तत्काल विनसै है। हे रावण! जो इन भोगनिहीके विषय सार होय तौ महापुरुष काहेको तजैं? उत्तम है बुद्धि जिनकी ऐसे मेरे यह पिता इन्होंने भोग छोड योग आदरचा। सो योग ही सार है'। यह कह कर अपने पुत्र को राजदेय रावणसों क्षमा कराय पिता निकट जिनदीक्षा आदरी। अर राजा अरण्य, अयोध्याका धनी सहस्ररश्मिका परममित्र है सो उनसे पूर्ववचन था—जो हम पहिले दीक्षा धरेंगे तो तुम्हें खबर करेंगे। अर उनने कही हुती—हम दीक्षा धरेंगे तो तुम्हें खबर करेंगे, सो उनपै वैराग्यके समाचार भेजे। भले मनुष्योंने राजा सहस्ररश्मिका वैराग्य होनेका वृत्तांत राजा अरण्यसे कह्या, सो सुनकर पहिले तो सहस्ररश्मिका गुण स्मरणकरि आंसू भरि विलाप किया, फिर विषादको तजिकर अपने समीपवर्ती लोगनिकूं महा बुद्धिमान कहते भए जो रावण वैरीका वेषकरि उनका परम मित्र भया, जो ऐश्वर्यके पींजरे विषैं राजा रुक रहे थे, विषयोंकर मोहित था चित्त जिनका, सो पींजरे तैं छुडाया। यह मनुष्यरूपी पक्षी, मायाजालरूप पींजरमें पड्या है, सो परम हितू ही छुडावै है। माहिष्मती नगरीका धनी राजा सहस्ररश्मि धन्य है जो रावण रूप जहाजको पायकरि संसार रूप समुद्रको तिरेगा। कृतार्थ भया—अत्यंत दुखका देनहारा जो राजकाज महापाप, ताहि तजकर जिनराजका व्रत लेनेको उद्यमी भया। या भांति मित्रकी प्रशंसाकरि आप भी लघु पुत्रको राजदेय बडे पुत्र सहित राजा अरण्य मुनि भए। हे श्रेणिक! कोई एक उत्कृष्ट पुण्यका उदय आवै तब शत्रुका अथवा मित्रका कारण पाय जीवको कल्याणकी बुद्धि उपजै, अर पापकर्मके उदयकरि दुर्बुद्धि उपजै। जो कोई प्राणीको धर्मके मार्ग में लगावै सोई परम मित्र है अर जो भोग सामग्रीमें प्रेरै सो परम वैरी है, अस्पर्श्य है। हे श्रेणिक! जो भव्य जीव यह राजा सहस्ररश्मिकी कथा भाव धर सुनै सो मुनिव्रतरूप संपदाको प्राप्त होयकरि परम निर्मल होय। जैसें सूर्यके प्रकाशकरि तिमिर जाय तैसें जिनवाणीके प्रकाशकरि मोहतिमिर जाय।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिकाविषै सहस्ररश्मि अर अरण्यके वैराग्य निरूपण करने वाला दसवां पर्व पूर्ण भया॥१०॥

अथानन्तर रावणने जे जे पृथ्वीविषै मानी राजा सुने ते ते सब नवाए, अपने वश किये, अर जो अपने आप आयकरि मिले तिनपर बहुत कृपाकरी। अनेक राजानिकरि मंडित सुभूम चक्रवर्तीकी नाइं पृथ्वी विषै विहार किया। नाना देशनिके उपजे, नानाभेषके धारणहारे, नानाप्रकार आभूषणनिके पहरन हारे, नानाप्रकारकी भाषाके बोलनहारे, नानाप्रकारके वाहनोपर चढे, नानाप्रकारके मनुष्यनि करि मंडित अनेक राजा तिन सहित दिग्विजय करता भया। ठौर २ रत्नमयी सुवर्णमयी अनेक जिन मंदिर कराए, अर जीर्ण चैत्यालयनिका जीर्णोद्धार कराया, देवाधिदेव जिनेंद्रदेवकी भावसहित पूजाकरी, ठौर २ पूजा कराई। जो जैनधर्मके द्वेषी दुष्टमनुष्य हिंसक थे तिनको शिक्षा दीनी, अर दरिद्रीनिको दयाकरि धनकरि पूर्ण किया, अर सम्यग्दृष्टि श्रावकनिका बहुत आदर किया। साधर्मीनिपर है वात्सल्य भाव जाका, अर जहां मुनि सुने तहां जाय भक्तिकरि प्रणाम करै, जे सम्यक्त्व रहित द्रव्यलिंगी मुनि अर श्रावक हुते तिनकी भी सुश्रुषा करी, जैनीमात्रका अनुरागी उत्तर दिशाको दुस्सह प्रताप प्रकट करता संता विहार करता भया। जैसे उत्तरायणके सूर्यका अधिक प्रताप होय तैसैं पुण्यकर्मके प्रभाव करि रावणका दिन दिन अधिक तेज होता भया।

अथानंतर रावणने सुनी कि राजपुरका राजा बहुत बलवान है, अतिअभिमानको धरता थका किसी को प्रणाम नाहीं करै है, अर जन्महीतै ही दुष्टचित्त है, मिथ्यामार्गकरमोहित है, अर जीवहिंसारूप यज्ञ-मार्गविषै प्रवर्त्या है। तदि यज्ञका कथन सुन राजा श्रेणिकने गौतमस्वामीसे कह्या हे प्रभो! रावणका कथन तो पीछे कहिये, पहिले यज्ञ की उत्पत्ति कहो। यह कौन वृत्तांत है जामें प्राणी जीवघातरूप घोर कर्ममें प्रवरते है। तदि गणधरने कही—'हे श्रेणिक! अयोध्याविषै इक्ष्वाकुवंशी राजा ययाति ताकी राणी सुरकांता अर पुत्र वसु था, सो जब पढवेयोग्य भया तब क्षीरकदंब ब्राह्मणपै पढनेको सौंप्या। क्षीरकदंब की स्त्री स्वस्तिमती थी। अर एक नारद ब्राह्मण देशांतरी धर्मात्मा, सो क्षीर कदंबपै पढै, अर क्षीर कदंबका पुत्र पर्वत महापापी सोहू पढै। क्षीरकदंब अति धर्मात्मा, सर्वशास्त्रनिमें प्रवीण, शिष्यनिकूं

सिद्धात तथा क्रियारूप ग्रथ तथा मन्त्रशास्त्र काव्य व्याकरणादि अनेक ग्रथ पढाव । एक दिन नारद, वसु अर पवत–इन तीनो सहित क्षीरकदब वनविष गए । तहा चारणमुनि शिष्यनि सहित बिराजे हुते । सो एक मुनिने कह्या ये चार जीव ह–एक गुरु, तीन शिष्य । तिनमत एक गुरु एक शिष्य ये दोयतो सुबुद्धि ह, अर दो शिष्य कुबुद्धि ह । ऐसे शब्द सुन्किरि क्षीरकदब ससारत अत्यन्त भयभीत भए, शिष्यनिको तो सीख दीनी सो अपने २ घर गए, मानो गायके बछडे बधनसे छूटे, अर क्षीरकदबने मुनिप दीक्षा धरी । जब शिष्य घर आए तदि क्षीरकदबकी स्त्री स्वस्तिमती पवतको पूछती भई-तेरा पिता कहा ह ? तू अकेला ही घर क्यो आया ? तदि पवतने कही हमको तो पिताजीने सीख दीनी । अर कह्या—हम पीछेसे आव ह । यह वचन सुन स्वस्तिमती महाशोकवती होय पथ्वीपर पडी । अर रात्रिविष चकवीकी नाई दुख करि पीडित विलाप करती भई–हाय हाय ! म मदभागिनी प्राणनाथ बिना हती गई । किसी पापीने उनको मारया अथवा किसी कारणकरि देशातरको उठ गए, अथवा सवशास्त्रविष प्रवीण हुते सो सवपरिग्रहको त्यागकरि वराग्य पाय मुनि होयगए । या भाति विलाप करते रात्रि पूण भई । जब प्रभात भया तब पवत पिताको ढूढने गया । उद्यानमे नदीके तटपर मुनियोके सघसहित श्रीगुरु विराजे हुते तिनके समीप विनयसहित पिता बठया देख्या । तदि पाछा जायकर मातासो कही कि–हे माता ! हमारा पिता तो मुनियोने मोह्या ह । सो नग्न होयगया ह । तब स्वस्तिमती निश्चय जानकरि पति के वियोगते अति दुखी भई । हाथनिकरि उरस्थलको कूटती भई, अर पुकारकर रोवती भई । सो नारद महाधर्मात्मा यह वत्तात सुनकरि स्वस्तिमतीप शोकका भरया आया । ताके देखकरि अत्यन्त रोवने लगी, अर सिर कूटती भई । शोकविष अपनेको देखकरि शोक अतीव बढ ह । तदि नारदने कही–हे माता काहेको वृथा शोक करो हो । वे धर्मात्मा जीव पुण्याधिकारी, सुन्दर ह चेष्टा जिनकी, जीतव्यको अस्थिर जानि तप करनेको उद्यमी भए ह सो निर्मल ह बुद्धि जिनकी, अब शोक किएतै पीछे घर न आव । या भाति नारदने सबोधी तदि किंचित शोक मद भया, घरविष तिष्ठी । महा दु खित भरतारकी स्तुति

भी कर अर निन्दा भी कर । यह क्षीरकदबके वराग्यका वृत्तान्त सुन राजा ययाति तत्त्वके वेत्ता ह वसु पुत्रको राज देय महामुनि भए। वसुका राज्य पृथ्वीविष प्रसिद्ध भया। आकाशतुल्य स्फटिक मणि ताके सिंहासनके पाये बनाए। ता सिंहासन पर तिष्ठ, सो लोक जाने कि राजा सत्यके प्रतापकरि आकाश विष निराधार तिष्ठ ह।

अथानन्तर हे श्रेणिक! एक दिन नारदके अर पर्वतके शास्त्र चर्चा भई। तदि नारदने कही कि भगवान वीतरागदेवने धर्म दोयप्रकार प्ररूप्या ह —एक मुनिका, दूसरा गृहस्थीका। मुनिका महाव्रत रूप ह, गृहस्थीका अणुव्रतरूप ह। जीवहिंसा, असत्य, चोरी, कुशील, परिग्रह इनका सर्वथा त्याग सो तो पंच महाव्रत, तिनकी पच्चीस भावना, यह मुनिका धर्म ह। अर इन हिंसादिक पापोंका किंचित त्याग सो श्रावकके व्रत ह। श्रावकके व्रतनिमें पूजा दान शास्त्रविष मुख्य कह्या ह। पूजाका नाम यज्ञ ह (अजयष्टव्य)। या शब्दका अर्थ मुनिने याभांति कह्या ह जो बोंसे न ऊगें, जिनमें अंकुरशक्ति नाहीं, ऐसे शालिधान यव, तिनका विवाहादिक क्रियानिविष होम करिए। यह भी आरंभी श्रावककी रीति ह। ऐसें नारदके वचन सुन पापी पर्वत बोला —अज कहिये छेला (बकरा), तिनका आलंबन कहिये हिंसन, ताका नाम यज्ञ ह। तदि नारद कोपकरि दुष्ट पर्वतसों कहते भये —हे पर्वत! ऐसे मत कह, महा भयंकरवेदना ह जाविष, ऐसे नरकमें तू पडेगा। दया ही धर्म ह, हिंसा पाप ह। तब पर्वत कहने लाग्या मेरा तेरा न्याय राजा वसुप होयगा। जो झूठा होयगा ताकी जिह्वा छेदी जायगी। या भांति कहकर पर्वत माताप गया। नारदके अर याके जो विवाद भया सो सब वृत्तांत मातासों कह्या। तदि माताने कह्या कि तू झूठा ह। तेरा पितासों हमने व्याख्यान करते अनेकबार सुन्या ह जो अज—बोई हुई न उगे, ऐसी पुरानी शालि तथा पुराना यव तिनका नाम ह, छेलेका नाहीं। जीवनिका भी कभी होम किया जाय ह? तू देशांतर जाय मांसभक्षणका लोलुपी भया ह। तातें मानके उदयकरि झूठ कह्या, सो तुझ दुःखका कारण होयगा। हे पुत्र! निश्चय सेती तेरी जिह्वा छेदी जायगी। म पुण्यहीन अभा

गिनी पति अर पुत्ररहित भई क्या करू गी ? याभाति पुत्रसो कहकरि वह पापिनी विचारती भई कि राजा वसुक गुरुदक्षिणा हमारी धरोहर ह। असा जानि अति व्याकुल भई वसुके समीप गई। राजा ने स्वस्तिमतीको देखि बहुत विनय किया, सुखासन बठाई। हाथ जोडि पूछता भया हे माता! तुम आज दुखित दीखो हो, जो तुम आज्ञा करो सोही करू ? तदि स्वस्तिमती कहती भई—हे पुत्र! मै महा दुखिनी हू। जो स्त्री अपने पतिकरि रहित होय ताको काहेका सुख ? ससार में पुत्र दोय भातिके ह। एक पेटका जाया एक शास्त्रका पढाया। सो इनमें पढाया पुत्र विशेष है। एक समल ह दूसरा निमल ह। मेरे धनीके तुम शिष्य हो, तुम पुत्रते हू अधिक हो। तुम्हारी लक्ष्मी देखकरि मैं धीर्य धरू हू। तुम कही थी—माता दक्षिणा लेवो। म कही समय पाय लू गी। यह वचन याद करो। जे राजा पथ्वीके पालनमे उद्यमी ह ते सत्य ही कह ह। अर जे ऋषि जीवदयाके पालनमें तिष्ठ है ते भी सत्य ही कह ह। तू सत्यकर प्रसिद्ध ह। मोको दक्षिणा देवो। या भाति स्वस्तिमतीने कह्या। तदि राजा विनयकरि नमीभूत होय कहते भये—हे माता! तिहारी आज्ञात जो नाहीं करने योग्य काम ह सो भी म करू। जो तिहारे चित्तमे होय सो कहो। तब पापिनी ब्राह्मणीने नारद अर पवतके विवादका वत्तात कह्या, अर कह्या—मेरा पुत्र सवथा झूठा ह, परतु याके झूठको तुम सत्य करो। कारण ताका मानभग न होय। तदि राजाने यह अयोग्य जानते हुए भी ताकी बात दुगतिकाकारण, प्रमाण करी। तदि वह राजाको आशीर्वाद देय घर आई। बहुत हर्षित भई। दूजे दिन प्रभात ही नारद अर पवत राजाके समीप आए। अनेक लोक कौतूहल देखनेको आए। सामत मत्री, देशके लोग बहुत आय भेले भए। तदि सभाके मध्य नारद पवत दोऊनिमे बहुत विवाद भया। नारद तो कह अज शब्दका अथ अकुर-शक्तिरहित शालि ह। अर पवत कह पशु ह। तदि राजा वसुको पूछया। तुम सत्यवादीनिमे प्रसिद्ध हो जो क्षीरकदब अध्यापक कहते हुते सो कहो। तदि राजा, कुगतिको जानहारा, कहता भया जो पवत कहै ह सोई क्षीरकदब कहते हुते। याभाति कहते ही सिंहासनके स्फटिकके पाए टूट गये, सिंहासन भूमिमें

गिर पड्या। तदि नारदने कह्या, हे वसु! असत्यके प्रभावतें तेरा सिंहासन डिगा। अबहू तुमकू सांच कहना योग्य है। तदि मोहके मदकरि उन्मत्त भया यह ही कहता भया—जो पर्वत कहै सो सत्य है। तदि महापापके भारकरि हिंसामार्गके प्रवर्तनतें तत्काल ही सिंहासनसमेत धरतीमें गडि गया। राजा मरकरि सातवें नरक गया। कैसा है नरक? अत्यंत भयानक है वेदना जहां। तदि राजा वसुको मूवा देखि सभाके लोग वसु अर पर्वतको धिक्कार धिक्कार कर कहते भए। अर महा कलकलाट शब्द भया। दयाधर्म उपदेशकरि नारदकी बहुत प्रशंसा भई, अर सब कहते भये (यतो धर्मस्ततो जय) पापी पर्वत हिंसाके उपदेशकरि धिक्कारदंडको प्राप्त भया। पापी पर्वत देशांतरोंमें भ्रमण करता संता हिंसामई शास्त्रकी प्रवृत्ति करता भया, आप पढै औरनिको पढावै। जैसे पतंग दीपकमें पडै तैसे कई एक बहिरमुख जीव कुमार्गमें पडे। अभक्ष्यका भक्षण, अर न करनेयोग्य काम करना, असा लोकनिको उपदेश दिया, अर कहता भया कि यज्ञहीके अर्थ ये पशु बनाये है, यज्ञ स्वर्गका कारण है। तातैं जो यज्ञमें हिंसा होय सो हिंसा नाहीं। अर सौत्रामणिनाम यज्ञके विधानकरि सुरापानका हू दूषण नाहीं। अर गोयज्ञ नाम यज्ञ विषै अगम्यागम्यहू (परस्त्रीसेवन भी) करै है। असा पर्वतने लोकनिको हिंसादिमार्गका उपदेश दिया। आसुरी मायाकरि जीव स्वर्ग जाते दिखाये। कएक क्रूर जीव कुकर्ममें प्रवर्तकरि कुगतिके अधिकारी भये। हे श्रेणिक! यह हिंसायज्ञकी उत्पत्तिका कारण कह्या। अब रावणका वृत्तांत सुनो।

रावण राजपुर गए, तहां राजा मरुत हिंसाकर्ममें प्रवीण यज्ञशालाविषै तिष्ठै था। संवर्तनामा ब्राह्मण यज्ञ करावै था, तहां पुत्रदारादिसहित अनेक विप्र धनके अर्थी आए हुते और अनेक पशु होम निमित्त लाए। ता समय अष्टम नारद पदवीधर बडे पुरुष आकाशमार्गतें आय निकसे। बहुत लोकनिका समूह देख आश्चर्य पाय चित्तमें चितवते भए कि यह नगर कौनका है और यह दूरपर सेना कौनकी पडी है। अर नगरके समीप एते लोग किस कारण एकत्र भए है। ऐसा मनमें विचार आकाशतें भूमिपर उतरे।

अथानन्तर यह बात सुन राजा श्रेणिक गोतमस्वामीको पूछते भए हे भगवन! यह नारद कौन है? यामें कैसे कैसे गुण अर याकी उत्पत्ति किह भांति है? तब गणधरदेव कहते भए। हे श्रेणिक! एक ब्रह्मरुचि नामक ब्राह्मण था, ताके कुरमी नामा स्त्री, सो ब्राह्मण तापसके व्रत धरि वनमें जाय कंदमूल फल भक्षण करै। ब्राह्मणी भी संग रहै। ताको गर्भ रह्या। तहां एकदिन मार्गके वशतैं कुछ संयमी महामुनि आए। क्षणएक विराजे। ब्राह्मणी अर ब्राह्मण समीप आय बैठे। ब्राह्मणी गर्भिणी, पांडुर है शरीर जाका, गर्भके भारकरि दुखित सांस लेती मानो सर्पणी ही है, ताको देखि-करि मुनिको दया उपजी। तिनमैं सू बडे मुनि बोले —देखो यह प्राणी कर्मके वशकरि जगतविषै भ्रमै है। धर्मकी बुद्धिकरि कुटुम्बको तजिकरि संसारसागरतैं तरणेके अर्थि तो वनविषै आया। सो हे तापस! तैने क्या दुष्टकर्म किया? स्त्री गर्भवती करी। तेरेमें अर गृहस्थीमें कहा भेद है? जैसे वमन किया जो आहार ताकूं मनुष्य न भखै तैसे विवेकी पुरुष तजे हुए कामादिकनिको फिर नाहीं आदरै। जो कोई भेष धरै अर स्त्रीका सेवन करै सो भयानक वनमें स्यालिनी होय अनेक कुजन्म पावै। नरकनिगोदमें पडै है। जो कोई कुशील सेवता संता आरम्भनिमें प्रवर्त्या मदोन्मत्त आपको तापसी मानै है सो महा अज्ञानी है। यह कामसेवन ताकरि दग्ध दुष्टचित्त जो दुरात्मा, आरम्भविषै प्रवर्तै ताकै तप काहेका? कुदृष्टि-कर गर्वित भेषधारी विषयाभिलाषी जो कहै मैं तपसी हूं, सो मिथ्यावादी है। काहेका व्रती! सुखसों बैठना, सुखसूं सोवना, सुखसूं आहार विहार करना, ओढना बिछावना आदि सब काज करै, अर आपको साधु मानै सो मूर्ख आपको ठगै है। बलता जो घर तहांतैं निकसै फिर ताहीमैं कैसे प्रवेश करै? अर जैसे छिद्र पाय पिंजरेसे निकस्या पक्षी भी फिर आपको पिंजरेविषै नाहीं डारै, तैसे विरक्त होय फिर कौन इन्द्रीनिके वश परै? जो इन्द्रीनिके वश होय सो लोकविषै निंदा योग्य है। आत्मकल्याण कों न पावै है। सर्व परिग्रहके त्यागी मुनिनिको एकाग्रचित्त कर एक आत्मा ही ध्यावने योग्य है। सो तुम सारिखे आरंभी तिन करि आत्मा कैसे ध्याया जाय? प्राणीनिके परिग्रहके प्रसंगकरि राग

द्वेष उपज है, रागकरि काम उपजे है, द्वेषकरि जीवहिंसा होय है, कामक्रोध करि पीडित जो जीव ताके मनको मोह पीडे है। मूर्खके कृत्य अकृत्यविषै विवेकरूप बुद्धि न होय। जो अविवेकतें अशुभ कर्म उपारजे है सो घोरसंसारसागरमें भ्रमै है। यह संसगके दोष जानकरि जे पंडित हैं ते शीघ्र ही वैरागी होय है। आपकरि आपको जानि विषयवासनातें निवृत्त होय परमधामको पावै है। या भांति परमार्थरूप उपदेशनिके वचननिकरि महामुनिने संबोध्या। तदि ब्राह्मण ब्रह्मरुचि निरमोही होय मुनि भया। कुरमी नामा स्त्रीका त्यागकरि गुरुके संग ही विहार किया। गुरुमें है धर्मराग जाके अर वह ब्राह्मणी कुरमी शुद्ध है बुद्धि जाकी सो पापकर्मतें निवृत होय श्रावकके व्रत आदरे। जान्या है रागादिकके वशतें संसारका परिभ्रमण जानं, सो कुमार्गका संग छोड्या। जिनराजकी भक्तिविषै तत्पर होय भरताररहित अकेली महासती सिंहनीकी नाईं महावनविषै भ्रमै। दसवें महीने पुत्रका जन्म भया। तदि वाको देखकरि वह महासती ज्ञानक्रियाकी धरणहारी चित्तविषै चितवती भई जो यह पुत्र परिवारका संबंध महा अनर्थका मूल मुनिराजने कहा हुता सो सत्य है। तातें मैं या पुत्रका प्रसंगका परित्यागकरि आत्मकल्याण करूं। अर यह पुत्र महा भाग्यवान है याके रक्षक देव हैं याने जे कर्म उपारजे हैं तिनका फल अवश्य भोगेगा। वनमैं तथा समुद्रविषै अथवा वैरियोंके वशविषै पड्या जो प्राणी ताकी पूर्वोपार्जित कर्म ही रक्षा करै है, और कोऊ नाहीं। अर जाकी आयु क्षीण होय है सो माताकी गोदविषै बैठा हू मृत्युके वश होय है। ये सब संसारी जीव कर्मोंके आधीन हैं। भगवान सिद्ध परमात्मा कर्मकलंकरहित हैं, ऐसा जान्या है तत्त्वज्ञान जानें, सो महानिर्मल बुद्धिकरि बालकको वनविषै तजकरि यह ब्राह्मणी विकल्परूप जो जडता ताकरि रहित अलोकनगरविषै आई। जहाँ इन्द्रमालिनी नामा आर्या अनेक आर्यानिकी गुरुनी हुती तिनके समीप आर्या भई, सुन्दर है चेष्टा जाकी।

अथान्तर आकाशके मार्ग जंभ नामा देव जाता हुता, सो पुण्याधिकारी रुदनादिरहित जो बालक ताहि देख्या। दयावान होय उठाय लिया, बहुत आदरतें पाल्या, अनेक आगम अध्यात्मशास्त्र पढाए, तातैं

सिद्धातका रहस्य जानने लग्या, महा पडित भया, आकाशगामिनी विद्या हू सिद्ध भई, यौवनको प्राप्त भया, श्रावकके व्रत धारे, शीलवत विष अत्यत दढ अपने माता पिता जे आर्यिका मुनि भये हुते, तिनकी वदना कर। कसा ह नारद ? सम्यग्दशनविष तत्पर, ग्यारमी प्रतिमाके छुल्लक श्रावकके व्रत लेय विहार किया, परन्तु कमके उदयत तीव वराग्य नाहीं। न गहस्थी न सयमी। धमप्रिय ह, अर कलह भी प्रिय है। वाचालपनेमें प्रीति ह, गायन विद्यामें प्रवीण अर राग सुनन विष विशेष अनुरागवाला ह मन जाका, महाप्रभावकरि युक्त, राजानिकरि पूजित, जाकी आज्ञा कोई लोप न सक। पुरुष स्त्रीनिविष सदा जिसका अति सन्मान ह। अढाई द्वीपविष मुनि जिन चत्यालयनिका दशन कर। सदा धरती आकाश विषै भमता ही रह। कौतूहलमें लगी ह दष्टि जाकी, देवनिकरि वद्धि पाई, अर देवनके समान ह महिमा जाकी, पथ्वीविष देवऋषि कहाव, सदा सवत्र प्रसिद्ध, विद्याके भावकरि किया ह अदभुत उद्योत जाने।

सो नारद विहार करते सते कदाचित मरुतके यज्ञकी भूमिपर जाय निकसे। सो बहुत लोकनिकी भीड देखी अर पशु बधे देखे। तब दयाभावकरि सयुक्त होय यज्ञभूमिमें उतरे। तहा जायकरि मरुतसे कहने लगे—'हे राजा ! जीवनकी हिंसा दुगतिका ही द्वार ह, तने यह महापापका काय क्यो रच्या ह ?" तब मरुत कहता भया— यह सवत ब्राह्मण सब शास्त्रनिके अथविष प्रवीण यज्ञका अधिकारी ह। यह सब जाने ह, याहोत धमचर्चा करो। यज्ञकर उत्तम फल पाइये ह।' तबि नारद यज्ञ करावनहारे से कहते भए—'अहो मानव ! त यह क्या कम आरम्भ्या ह ? यह कर्म—सवज्ञ जो वीतराग है तिनने दु:खका कारण कह्या ह। तबि सवत ब्राह्मण कोपकरि कहता भया—अहो अत्यन्त मूढता तेरी। तू सवथा अमिलती बात कह है। तने कोई सवज्ञ रागवर्जित वीतराग कह्या, सो जो सवज्ञ वीतराग होय सो वक्ता नाहीं, अर जो वक्ता ह, सो सवज्ञवीतरागी नाहीं। अर अशुद्ध मलिन जे जीव तिनका कह्या वचन प्रमाण नाहीं, अर जो अनुपम सवज्ञ ह सो कोई देखनेमे आवे नाहीं। तातै वेद अकृत्रिम ह, वेदोक्तमाग प्रमाण ह। वेदविष शूद्र विना तीन वर्णनिको यज्ञ करावना कह्या ह। यह यज्ञ अपूव

धर्म है, स्वर्गके अनुपम सुख देवै है। वेदीके मध्य पशूनिका वध पापका कारण नाहीं, शास्त्रनिमें कह्या जो मार्ग सो कल्याण हीका कारण है। अर यह पशूनिकी सृष्टि विधाताने यज्ञहीके अर्थि रची है तातैं यज्ञमें पशुके वधका दोष नाहीं! ऐसे सवर्त ब्राह्मणके विपरीत वचन सुन नारद कहते भए—हे विप्र! तैंने यह सर्व अयोग्य रूप ही कह्या है—कैसा है तू? हिंसामार्गकर दूषित है आत्मा जाका। अब तू ग्रंथार्थका यथार्थ भेद सुन। तू कहै है सर्वज्ञ नाहीं, सो यदि सर्वथा सर्वज्ञ न होय तो शब्दसर्वज्ञ, अर्थसर्वज्ञ, बुद्धिसर्वज्ञ यह तीन भेद काहेकूं कहे। जो सर्वज्ञ पदार्थ है तदि ही कहनेंमें आवै है। जैसे सिंह है तो चित्राममें लिखिए है। तातैं सर्वका देखनहारा सबका जाननेहारा सर्वज्ञ है। सर्वज्ञ न होय तो अमूर्तीक अतींद्रिय पदार्थको कौन जानै? तातैं सर्वज्ञका वचन प्रमाण है। अर तैंने कह्या जो यज्ञमें पशुका वध दोषकारी नाहीं, सो पशुको वध करते समय दुःख होय है कि नाहीं? जो दुःख होय है तो पापहू होय है। जैसे पारधी हिंसा करै है सो जीवनको दुःख होय है, अर उसको पापहू होय है। अर तैंने कही विधाता सर्वलोकका कर्त्ता है, अर यह पशु यज्ञके अर्थि बनाए हैं। सो यह कथन प्रमाण नाहीं, भगवान कृतार्थ है। तिनको सृष्टि बनानेतें क्या प्रयोजन? अर कहोगे ऐसी क्रीडा है सो क्रीडा तो कृतार्थका काज नाहीं। क्रीडा करै ताकूं बालक समान जानिए। अर जो सृष्टि रचै तो आप सारिखी रचै। वह सुखपिंड अर यह सृष्टि दुःखरूप है। जो कृतार्थ होय सो कर्ता नाहीं, अर कर्ता है सो कृतार्थ नाहीं। जाकै कछु इच्छा है सो ही करै। जाके इच्छा है ते ईश्वर नाहीं, अर ईश्वर विना करवे समर्थ नाहीं। तातैं यह निश्चय भया—जाकै इच्छा है सो करनें समर्थ नाही। अर जो करवेमें समर्थ है ताके इच्छा नाहीं। तातैं जाको तुम विधाता कर्ता मानो हो, सो कर्मकर पराधीन तुम सारखा ही है। अर ईश्वर है, सो अमूर्तीक है, जाकै शरीर नाहीं। सो शरीर विना सृष्टि कैसे रचै? अर यज्ञके निमित्त पशु बनाए सो वाहनादिकर्मविषै क्यों प्रवर्त्ते? तातैं यह निश्चय भया कि इस भवसागरविषै अनादिकालतैं इन जीवोंने, रागादिभावकरि कर्म उपार्जे हैं तिनकरि नानायोनिविषै भ्रमण करै हैं। यह जगत अनादिनिधन है काहूका किया नाहीं, संसारीजीव कर्माधीन हैं।

अर जो तुम यह कहोगे कि—कम पहिले ह या शरीर पहिले ह ? सो जस बीज अर वृक्ष तस कम अर शरीर जानने । बीज त वक्ष ह अर वक्षत बीज ह । जिनके कमरूप बीज दग्ध भया तिनके शरीररूप वक्ष नाहीं । अर शरीरवक्ष विना सुख दुखादि फल नाहीं । तात यह आत्मा मोक्ष अवस्थामें कमरहित मनइद्रियनित अगोचर अदभुत परम आनन्दको भोग ह । निराकारस्वरूप अविनाशी ह, सो अविनाशी पद दयाधमत ही पाईए ह । तू कोई पुण्यके उदय कर मनुष्य भया, ब्राह्मणका कुल पाया, ताते पारधियोके कमत निवत्त हो । अर जो जीवहिसातैं यह मानव स्वग पाव ह तो हिंसाके अनुमोदनतैं राजा वसु नरकमें क्यो पडे ? जो कोई चूनका पशु बनायकरि घात कर ह सो भी नरकका अधिकारी होय ह, तो साक्षात पशुघातकी कहा बात ? अबहू यज्ञक करणहारे ऐसा शब्द कह—ह—'हो वसु ! उठ स्वग विष जावो ।' यह कहकर अग्निविष आहुति डार ह । तातैं सिद्ध भया कि वसु नरकमें गया, अर स्वग न गया । तातैं 'हे सवर्त ! यह यज्ञ कल्याणका कारण नाहीं । अर जो तू यज्ञ ही कर तो जस हम कहें सो कर । यह चिदानन्द आत्मा सो तो जजमान नाम कहिए यज्ञका करणहारा, अर शरीर ह सो विनय कुण्ड कहिए होमकुड अर सतोष ह सो पुरोडास कहिए यज्ञकी सामग्री, अर जो सव परिग्रह ह सो हवि कहिए होमनेयोग्य वस्तु, अर माधुय कहिए केश तेई दभ कहिए—डाभ, तिनका उपारना, लोच करना, अर जो सर्व जीवनिकी दया सोई दक्षिणा, अर जाका फल सिद्धपद ऐसा जो शुक्लध्यान सोई प्राणायाम, अर जो सत्यमहाव्रत सोई यूप कहिए यज्ञविष काष्ठका स्थम्भ—जातै पशुको बाध ह, अर यह चचल मन सोई पशु । अर तपरूप अग्नि अर पाच इद्रिय तेई समाधि कहिए इधन । यह यज्ञ धमयज्ञ कहिए ह । अर तुम कहोहो कि यज्ञकरि देवोकी तप्ति कीजिये ह सो देवनक तो मनसा आहार ह, तिनका शरीर सुगधमय ह ! अन्नादिकहीका आहार नाहीं तो मासादिकको कहा बात ? कसा ह मास ? महा दुर्गंध जो देख्या न जाय, पिताका वीय माताका लहू ताकरि उपज्या, कमोनिकी ह उत्पत्ति जिसविष, महा अभक्ष सो मास देव कसे भख ? अर तीन अग्नि या शरीरविष ह, एक ज्ञानाग्नि, दूसरी दशनाग्नि, तीसरी

उदराग्नि । सो इन्हीं को आचार्य दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य, आहवनीय कहे हैं । अर स्वर्गलोकके निवासी देव हाडमांसका भक्षण करें तो देव काहेके ? जैसे स्वान स्याल काक तैसे वे भी भए । ये वचन नारदने कहे ।

कैसे हैं नारद ? देवऋषि हैं, अनेकांतरूप जिनमार्गके प्रकाशिवेको सूर्य समान महा तेजस्वी, देदीप्यमान है शरीर जिसका शास्त्रार्थज्ञानके निधान तिनको मंदबुद्धि सर्वत कहां जीतें ! सो पराभवको प्राप्त भया । तदि निर्दई क्रोधके भारकर कम्पायमान आशीविष सर्पसमान लाल हैं नेत्र जाके महा कलकलाट करि अनेक विप्र भेले होय लडनेको काछकछे हस्तपादादिकर नारदके मारनेको उद्यमी भए । जैसे दिनमें काक घूघू पर आवें सो नारद भी कयकनिको मुक्कीनते, कयकनिको मुगदरसे, कईएकनिको कोहनीसे मारते हुए भ्रमण करते हुए, अपने शरीररूप शस्त्रकरि अनेकनिको हत्या, बहुत युद्ध भया । निदान यह बहुत अर नारद अकेले, सो सर्वगात्रमें अत्यन्त आकुलताको प्राप्त भये । पक्षी की नाई, बधकोने घेरचा । आकाशविषै उडवेको असमर्थ भए, प्राण संदेहको प्राप्त भए, ताही समय रावणका दूत राजा मरुतपै आयाहुता सो नारदको घेरचा देखि पाछा जाय रावणतैं कही—हे महाराज जाके निकट मोहि भेज्या हुता सो महा दुर्जन है, ताके देखते थके द्विजोंने अकेले नारदको घेरचा है । अर मारे है जैसे कीडी दल सर्पको घेरै । सो मैं यह बात देख न सक्या । सो आपको कहिने को आया हूं । तदि रावण यह वृत्तान्त सुन क्रोधको प्राप्त भया, पवनसे भी शीघ्रगामी जे वाहन तिनपर चढि चलनेको उद्यमी भया, अर नंगी तलवारनिके धारक जे सामन्त ते अगाऊ दौडाए । ते एक पलकमें यज्ञशाला जाय पहुंचे । तत्काल ही नारदको शत्रुओंके घेरतैं छुडाया अर निरदई मनुष्य जो पशुनिको घेरि रहे हुते सो सकल पशु तत्काल छुडाए । यज्ञके यूप कहिए स्तंभ ते तोड डारे, अर यज्ञके करावनहारे विप्र बहुत कूटे, यज्ञशाला बखेर डारी । राजाको भी पकड लिया, रावणने द्विजनि पर बहुत कोप किया । जो मेरे राज्यविषै जीवघाति करें यह क्या बात ? सो ऐसे कूटे जो अचेत होय धरतीपर गिर पडे । तब सुभटलोक इनको कहते भये—अहो जैसा दुख तुमको बुरा लागै है, अर सुख भला लागै है, तैसा पशुनि

के भी जानो। अर जसा जीतव्य तुमको बल्लभ है, तसा सकल जीवनिको जानो। तुमको कूटते कष्ट होय है तो पशुवोको विनाशनेते क्यो न होय? तुम पापका फल सहो, आग नरकनिमें दुख भोगोगे। सो घोडो आदिके सवार तथा खेचर भूचर सब ही पुरुष हिसकनिको मारने लगे। तब वे विलाप करने लगे, हमको छोडो फिर ऐसा काम न करेंगे—ऐसे दीन वचन कहे, विलाप करते भए। अर रावणका तिन पर अत्यत क्रोध सो छोडे नाही, तदि नारद महा दयावान रावणसो कहने लगे हे राजन! तेरा कल्याण होव, तने इन दुष्टोसे मुझे छुडाया। अब इनकी भी दयाकर, जिनशासनमें काहूको पीडा देनी लिखी नाहीं। सब जीवनिको जीतव्य प्रिय है। ते सिद्धातमें क्या यह बात न सुनी है कि जो हुडाव सर्पिणी कालविष पाखडिनिकी प्रवर्त्ति होय है। जबके चौथेकालके आदिमें भगवान ऋषभ प्रकटे तीन जगतमें उच्च जिनको जन्मते ही देव सुमेरु पवत पर ले गये। क्षीरसागरके जलकरि स्नान कराया। वे महाकातिके धारी ऋषभ, जिनका दिव्य चरित्र पापोका नाश करनहारा तीनलोकमें प्रसिद्ध है, सो तने क्या न सुन्या? वे भगवान जीवोके दयालु जिनके गुण इन्द्र भी कहनेको समथ नाहीं। त वीत राग निर्वाणके अधिकारी इस पथ्वीरूप स्त्रीको तजकरि जगतके कल्याण निमित्त मुनिपदको आदरतै भये। कसे है प्रभु! निमल है आत्मा जिनका, कसी है पथ्वीरूप स्त्री? जो विध्याचल पवत अर हिमालय पवत तेई है उतग कुच जाके, अर आयक्षेत्र है मुख जाका, सुन्दर नगर तेई चूडे तिनकरि युक्त है। अर समुद्र है कटिमेखला जाकी, अर जे नीलवन, तेई है सिरके केश जाके, नानाप्रकारके जे रत्न तेई आभूषण है। ऋषभदेवने मुनि होयकरि हजार वष तक महातप किया, अचल है योग जिनका लम्बायमान है बाहु जिनकी। स्वामीके अनुरागकरि कच्छादि चार हजार राजावोने मुनिके धम जाने विनाही दीक्षा धरी। सो परीषह सह न सके, तदि फलादिकका भक्षण, वक्कलादिको धारणकरि तापसी भए। ऋषभदेवने हजार वष तपकर वटवक्षके तले केवलज्ञान उपजाया। तदि इन्द्रादिक देवोने केवलज्ञानकल्याण किया, समोसरणकी रचना भई। भगवानकी दिव्यध्वनिकर अनेक जीव कताथ

भए। जे कच्छादिक राजा चारित्र भ्रष्ट भये हुते ते धर्ममें दृढ होय गए, मारीचके दीर्घ संसारके योगते मिथ्याभाव न छूटचा। अर जिस स्थानपर भगवानको केवलज्ञान उपज्या ता स्थानकमें देवोंकरि चैत्यालयनिकी स्थापना भई। ऋषभदेवकी प्रतिमा पधराई, अर भरत चक्रवर्तीने विप्रवर्ण थाप्या हुता ते जलविषै तेलकी बूंदवत विस्तारको प्राप्त भया। उन्होंने यह जगत मिथ्याचार करि मोहित किया, लोक अति कुकर्मविषै प्रवर्ते, सुकृतका प्रकाश नष्ट होयगया। जीव साधूनिके अनादरमें तत्पर भए। आगै सुभूम चक्रवर्तीने नाशको प्राप्त किए थे तौ भी इनका अभाव न भया, हे दशानन! तो करि कैसे अभावको प्राप्त होंहिगे? तातैं तू प्राणीनिकी हिंसातैं निवृत्त होहु। काहूको कभी भी हिंसा कर्तव्य नाहीं। अर जब भगवानके उपदेशकरि जगत मिथ्यामार्गकरि रहित न होय, कोई एक जीव सुलटे तो हम सारिखे तुम सारिखो कर सकल जगतका मिथ्यात्व कैसे जाय? कैसे हैं भगवान? सबके देखनहारे, सबके जाननेहारे। या भांति देवर्षि जे नारद तिनके वचन सुनकर केकसी माताकी कुक्षमें उपज्या जो रावण सो पुराण कथा सुनकर अति प्रसिद्ध भया, अर बारम्बार जिनेश्वरदेवको नमस्कार किया। नारद अर रावण महापुरुषनिकी मनोज्ञ जे कथा तिनके कथनकरि क्षणएक सुखसों तिष्ठे, महापुरुषोंकी कथामें नानाप्रकारका रस भरया है जिनमें ऐसी है।

अथानन्तर राजा मरुत हाथ जोडि धरतीसों मस्तक लगाय रावणको नमस्कारकर विनती करता भया—हे देव, हे लंकेश! मैं आपका सेवक हूं, आप प्रसन्न होहु, मैं अज्ञानीनिके उपदेशकरि हिंसामार्ग रूप खोटी चेष्टा करी। सो आप क्षमा करो। जीवोंके अज्ञानकरि खोटी चेष्टा होय है। अब मुझे धर्मके मार्गमें लेवो, अर मेरी पुत्री कनकप्रभा आप परणो। जे संसारमें उत्तम पदार्थ हैं तिनके आपही पात्र हो। तदि रावण प्रसन्न भए। कैसे हैं रावण? जो नमीभूत होय ताविषै दयावान हैं। तब रावणने पुत्री परणी, अर ताहि अपनो कियो। सो रावणके अति वल्लभा भई। मरुतने रावणके सामंतलोक बहुत पूजे, नानाप्रकारके वस्त्राभूषण हाथी घोडे रथ दिए। कनकप्रभा सहित रावण रमता भया। ताके एक

वर्ष बाद कतचित्रनामा पुत्री भई, सो देखनहारे लोकनिको रूपकरि आश्चयकी उपजावनहारी मानों मूर्तिवत शोभा ही ह । रावणके सामत महाशूरवीर तेजस्वी जीतकरि उपज्या ह उत्साह जिनने, सपूर्ण पृथ्वीतलम भमते भए । तीन खडमें जो राजा प्रसिद्ध हुता अर बलवान हुता, सो रावणके योधानि-के आग दीनताको प्राप्त भया । सबही राजा वश भए। कसे ह राजा ? राज्य के भगका है भय जिनको, विद्याधरलोक भरतक्षेत्रका मध्यभाग देखि आश्चयको प्राप्त भए । मनोज्ञ नदी, मनोज्ञ पहाड, मनोज्ञ वन तिनको देख लोक कहते भए —अहो स्वग भी यात अधिक रमणीक नाहीं । चित्तविषै ऐसे उपजै ह जो यहा ही वास करिए । समुद्रसमान विस्तीण सेना जाकी, ऐसा रावण, जा समान और नाहीं । अहो अदभुत वीय, अदभुत उदारता या रावणकी, यह सब विद्याधरनिम श्रेष्ठ नजर आव ह। या भाति समस्त लोक प्रशसा कर ह । जा जा देशविष रावण गया तहा तहा लोक प्रशसा कर । फिर जहा जहा रावण गया, तहा तहा लोक सनमुख आय मिलते भए । जे जे पथ्वीविष राजानिकी सुन्दर पुत्री हुती ते रावणने परणी । जा नगरके समीप रावण जाय निकस ताहीं नगरके नर नारी देखकरि आश्चय प्राप्त होवें । स्त्री सकल काम छोडि देखवेको दौडी, कईएक झरोखोमें बठि ऊपरसे असीस देय फूल डार । कसा ह रावण ? मेघसमान श्यामसुन्दर, पाकी किंदूरीसमान लाल ह अधर जाके । अर मुकुट विष नानाप्रकारकी जे मणि तिनकरि शोभ ह सीस जाका, मुक्ताफलनिकी ज्योति सोई भया जल, ताकरि पखारचा ह चद्रमासमान बदन जाका, इन्द्रनीलमणि समान श्याम सघन जे केश, अर सहस्र पत्र कमलसमान नेत्र, तत्काल खच्या नमीभूत हुआ जो धनुष, ताक समान वक्र श्याम चिकने, भौंह युगल, ताकरि शोभित शखसमान ग्रीवा (गरदन) जाकी, अर वृषभसमान काधे जाके, पुष्ट विस्तीण वक्षस्थल जाके, दिग्गजकी सूडसमान भुजा जाके, केहरी समान कटि जाकी, कदलीके समान सुन्दर जघा जाकी, कमल समान चरण, समचतुरससस्थानको धर महामनोहर शरीर जाका, न अधिक लबा न अधिक ओछा, न कश न स्थूल, श्रीवत्सलक्षणको आदि देय बत्तीस लक्षणनिकरि

युक्त, अर अनेकप्रकार रत्ननिकी किरणोकरि दवीप्यमान ह मुकुट जाका, अर नानाप्रकारकी मणिनि करि मडित नानाप्रकारके मनोहर ह कुण्डल जाके, बाजूबदकी दीप्तिकरि ददीप्यमान ह भुजा जाकी, अर मोतिनके हारकरि शोभ ह उर जाका, अधचक्रवर्तीकी विभूतिका भोगनहारा, ताहि देख प्रजा के लोक बहुत प्रसन्न भए। परस्पर बात कर ह कि यह दशमुख महाबलवान, जीत्या ह मौसीका बेटा वश्रवण जान, अर जीत्या ह राजा यम जिसने, कलाशके उठानेको उद्यमी भया, अर प्राप्त किया है राजा सहसरश्मिका वराग्य जाने, मरुतके यज्ञका विध्वस करणहारा, महा शूरवीर, साहसका धारी, हमारे सुकतके उदयकरि या दिशाको आया। यह केकसी माताका पुत्र, याके रूपका अर गुणनिका कौन वणन कर सक ? याका दशन लोकनिको परम उत्सवका कारण ह। वह स्त्री पुण्यवती धन्य ह जाके गभत यह उत्पन्न भया, अर वह पिता धन्य ह जात याने जन्म पाया, अर वे बधु लोक धन्य ह जिनके कुलविष यह प्रकटचा। अर जे स्त्री इनकी राणी भइ तिनक भाग्यकी कौन कह ? या भाति स्त्री झरोखानिम बठी बात कर ह, अर रावणकी असवारी चली जाय ह। जब रावण आय निकस तदि एक महूत गावकी नारी चित्रामकीसी होय रह, ताके रूप सौभाग्यकरि हरचा गया ह चित्त जिनका। स्त्रीनिको अर पुरुषनिको रावणकी कथाके टारि और कथा न रही। देशनिविष तथा नगर ग्राम तथा गावनिके बाडे तिनविष जे प्रधानपुरुष ह ते नानाप्रकारकी भेंट लेयकरि आय मिले, अर हाथ जोडि नमस्कारकरि विनती करते भए—हे देव! महाविभवके पात्र तुम, तिहारे घरविष सकल वस्तु विद्यमान ह, हे राजानिके राजा! नन्दनादि वनम जे मनोज्ञ वस्तु पाइए ह ते भी सकल वस्तु चितवनमात्रत ही तुमको सुलभ ह। ऐसी अपूव वस्तु क्या ह जो तुम्हारी भेंट करें ? तथापि यह न्याय ह कि रीते हाथनि राजानिसो न मिलिए। तात कछू हम अपनी माफिक भेंट कर ह। जैसे भगवान जिनेंद्रदेवकी देव सुवणके कमलोकर पूजा कर ह, तिनको क्या मनुष्य आप योग्य सामग्रीकर नाहीं पूजै है ? या भाति नानाप्रकारके देश देशनिके सामत बडी ऋद्धिके धारी रावणको पूजते भए। रावण तिनका मिष्टवच

ननि करि बहुत सन्मान करता भया। रावण पृथ्वीको बहुत सुखी देख प्रसन्न भया, जैसे कोई अपनी स्त्रीको नानाप्रकारके रत्नआभूषणनिकर मंडित देख सुखी होय। जहा रावण मार्गके वशतै जाय निकसे ता देशविषै विना बाहे धान स्वयमेव उत्पन्न भए। पृथ्वी अति शोभायमान भई, प्रजाके लोक परम आनंदको धरते संते अनुरागरूपी जलकरि याकी कीर्तिरूपी बेलिको सींचते भए। कैसी है कीर्त्ति? निर्मल है स्वरूप जाका। किसान लोग ऐसे कहते भए कि बडे भाग्य हमारे, जो हमारे देशमें रत्नश्रवा का पुत्र रावण आया। हम रंक लोग कृषिकर्ममें आसक्त, रूखे अंग, खोटे वस्त्र, हाथ पग करकश, क्लेशते हमारे सुख स्वाद रहित एता काल गया, अब इसके प्रभावते हम संपदादिकरि पूर्ण भए। पुण्य का उदय आया, सब दुखनिका दूर करणहारा रावण आया। जिन जिन देशनिमैं यह कल्याणका भरचा विचरै ते देश सब संपदा करि पूर्ण होय। दशमुख दरिद्रीनिका दरिद्र-देख न सकै। जिनको दु ख मेटवेकी शक्ति नाही तिन भाईनिकरि कहा सिद्ध होय है? यह तो सब प्राणियोका बडा भाई होता भया। यह रावण अपनें गुणनिकरि लोगनिको आनन्द उपजावता भया। जाके राजमें शीत अर उष्ण भी प्रजाको बाधा न करसकै तो चोर चुगल बटमार तथा सिंह गजादिकनिकी बाधा कहा से होय? जाके राज्यविषै पवन पानी अग्निकी भी प्रजाको बाधा न होय, सबबात सुखदाई ही होती भई।

अथानन्तर रावणकी दिग्विजयविषै वर्षाऋतु आई, मानो रावणसो साम्ही आय मिली, मानो इन्द्रने श्यामघटा रूपी गजकी भेंट भेजी। कैसे है काले मेघ? महा नीलाचल समान बिजुरीरूप स्वर्ण की सांकल धरै, अर बुगुलनिकी पंक्ति भई ध्वजा, तिनकरि शोभित है शरीर जिनके, इन्द्रधनुष रूप आभूषण पहरे जब वर्षाऋतु आई तदि दशोदिशानमें अंधकार होगया। रात्रि दिवसका भेद जान्या न पडै। सो यह युक्त ही है, श्याम होय सो श्यामता ही प्रकट करै, मेघ भी श्याम अर अंधकार भी श्याम। पृथ्वीविषै मेघ की मोटी धारा अखंड बरसती भई। जो माननी नायिकानिके मनविषै मानका भार हुता, सो मेघके गर्जनकरि क्षणमात्रविषै विलाय गया। अर मेघकी ध्वनिकरि भयको पाई जे

मानिनी भामिनी ते स्वयमेव ही भरतारसो स्नेह करती भई। जे शीतल कोमल मेघकी धारा, ते पथीनिको बाणके भावको प्राप्त करती भई। ममकी विदारणहारी धारानिके समूहकरि भेदा गया है हृदय जिनका, ऐसे पथी, ते महा व्याकुल भए हैं। मानो तीक्ष्णचक्रकरि विदारे गए हैं। नवीन जो वर्षाका जल ताकरि जडताको प्राप्त भए पथी, क्षणमात्रमें चित्रामकेसे होय गए। अर जानिए कि क्षीरसागरके भरे जो मेघ सो गायनिके उदर विषै बैठे है। तातै निरन्तर ही दुग्धकी धारा वर्षे है। वर्षा के समय किसान कृषिकमको प्रवर्त्तै हैं। रावणके प्रभावकरि महाधनके धनी होते भए। रावण सब ही प्राणियोको महा उत्साहका कारण होता भया।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिक सो कहे है कि हे श्रेणिक! जे पूर्ण पुण्याधिकारी हैं तिनके सौभाग्य का वर्णन कहाँ तक करिए। इन्दीवर कमल सारिखा श्याम रावण स्त्रियो के चित्तको अभिलाषी करता सता मानो साक्षात वर्षाकालका स्वरूप ही है, गम्भीर है ध्वनि जाकी, जैसा मेघ गाजै तैसा रावण गाजै। सो रावणकी आज्ञात सब नरेंद्र आय मिले, हाथ जोड नमस्कार करते भए। जो राजानिकी कन्या महा मनोहर ते रावणको स्वयमेव वरती भई। ते रावणको वरकर अत्यन्त क्रीडा करती भई। जैसे वर्षा पहाडको पायकरि अति वरषै। कैसी है वर्षा? पयोधर जे मेघ तिनके समूहकरि संयुक्त है। अर कैसी है स्त्री पयोधर जे कुच तिनकरि मंडित है। कैसा है रावण? पृथ्वीके पालनेको समर्थ है। वैश्रवण यज्ञका मानमर्दन करनहारा दिग्विजयको चढ्या। समस्त पृथ्वीको जीतै सो ताहि देखकरि मानो सूर्य लज्जा अर भयकरि व्याकुल होय दबि गया। भावार्थ—वर्षाकालविषै सूर्य मेघपटलनिकरि आच्छादित होय है। अर रावणके मुखसमान चंद्रमा भी नाहीं, सो मानो लज्जा करि भी दब गया, क्योंकि वर्षाकालमें चन्द्रमा भी मेघमालाकरि आच्छादित होय है, अर तारे भी नजर नहीं आवे है। सो मानो अपना पति जो चन्द्रमा ताहि रावणके मुखकरि जीत्या जानि भाज गए। अर रावणकी हथेली, पगतली अत्यन्त लाल अर रावणकी स्त्रियोकी अत्यन्तलाल जानकर

लज्जावान होय, कमलोंके समूह भी छिप गए, मानो यह वर्षाऋतु स्त्री समान ह । बिजुरी तेई कटि-मेखला, जो इन्द्रधनुष वह वस्त्राभूषण, पयोधर जे मेघ ते ही पयोधर कहिए कुच, अर रावण महामनोहर केतकीकी वास तथा पद्मनी स्त्रियोके शरीरकी सुगन्ध इत्यादि सबसुगन्ध अपने शरीरकी सुगन्धताकरि जीतता भया । जाके सुगन्ध श्वासरूप पवनके खचे भ्रमरनिके समूह गुंजार करते भए । गंगाका तट जो अति मनोहर ह तहां डेराकरि वर्षाऋतुपूर्ण करी । कैसा ह गंगाका तट ? जाके तीर सुन्दर हरित-तृण शोभै ह, नानाप्रकारके पुष्पोकी सुगन्धता फल रही ह । बडे बडे वृक्ष शोभै हैं । कैसा है रावण ? जगतका बन्धु कहिए हितु ह । अति सुखसो चातुर्मास्यपूर्ण किया । हे श्रेणिक! जे पुण्याधिकारी मनुष्य ह तिनका नाम श्रवणकर सबलोक नमस्कार कर ह, अर सुन्दर स्त्रियोके समूह स्वयमेव आय वर ह, अर ऐश्वर्यके निवास परम विभव प्रकट होय ह । उनके तेजकरि सूर्य भी शीतल होय ह । ऐसा जानकरि आज्ञा मान संशय छोड पुण्यके प्रबन्धका यत्न करो ।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै मरुतके यज्ञका विध्वंस अर रावणके दिग्विजयका वर्णन करनेवाला ग्यारहवां पर्व पूर्ण भया ।। ११ ।।

अथानन्तर रावण मन्त्रियोंसे विचार करता भया एकान्तविषै । अहो मन्त्रियो ! यह अपनी कन्या कृतचित्रा कौनको परनाव । इन्द्रसो संग्रामविषै जीतनेका निश्चय नाहीं । तातैं पुत्रीका पाणिग्रहण मंगलकार्य प्रथम करना योग्य ह । तदि रावणको पुत्रीके विवाहकी चिंताविषै तत्पर देखि राजा हरि-वाहनने अपना पुत्र निकट बुलाया । सो हरिवाहनके पुत्रको अति सुन्दराकार विनयवान देखिकर पुत्रीके परणायवेका मनोरथ किया । रावण अपने मनमें चितवता भया कि सब नीतिशास्त्रविषै प्रवीण अहो मथुरा नगरीका नाथ राजा हरिवाहन निरंतर हमारे गुणनिकी कीर्तिविषै आसक्त है मन जाका, याका प्राणोहूतैं प्यारा मधु नामा पुत्र प्रशंसा योग्य ह । महाविनयवान प्रीतिपात्र महारूपवान

अति गुणवान मेरे निकट आया। तब मन्त्री रावणसो कहते भए—'हे देव! यह मधुकुमार महापराक्रमी याके गुण वर्णनमें न आवे तथापि कछुइक कहे है। याके शरीरविषै अत्यन्त सुगन्धता है, जो सबलोकनिके मनको हरे ऐसा है रूप जाका। याका मधु नाम यथार्थ है। मधुनाम मिष्टान्नका है, सो यह मिष्टवादी है। अर मधुनाम मकरंदका है सो यह मकरंदते भी अतिसुगन्ध है। अर याके एते ही गुण आप मत जानो, असुरनका इन्द्र जो चमरेंद्र ताने याको महागुणरूप त्रिशूलरत्न दिया है। सो त्रिशूलरत्न वैरिनपर डारचा वृथा न जाय, अत्यन्त देदीप्यमान है, सो आप याकी करतूत करि, याके गुण जानोगे। वचनोंकरि कहांलग कहें तातें—'हे देव! यासो संबंध करनेकी बुद्धि करो। यह आपसे सम्बन्धकरि कृतार्थ होयगा। ऐसा जब मंत्रियोंने कह्या तब रावणने याको अपना जमाई निश्चय किया। अर जमाई योग्य जो सामग्री, सो याको दीनी। बडी विभूतिसो रावणने अपनी पुत्री परणाई। सबलोक हर्षित भए। यह रावणकी पुत्री साक्षात पुण्य लक्ष्मी, महा सुन्दर शरीर, पतिके मन अर नेत्रनिकी हरनहारी, जगतमें ऐसा सुगन्ध नाहीं—ऐसे सुगन्धशरीरको धारनहारी, ताको पायकर मधु अति प्रसन्न भया।

अथानन्तर राजा श्रेणिक जिनको कौतूहल उपज्या है सो गौतमस्वामीसो पूछते भए—हे नाथ! असुरेन्द्रने मधुको कौन कारण त्रिशूल रत्न दिया, दुर्लभ है संगम जाका। तब गौतमस्वामी जिनधर्मीनित है वात्सल्य जिनके, त्रिशूल रत्नकी प्राप्तिका कारण कहते भए। हे श्रेणिक! धातकीखंड नामा द्वीप, तहां ऐरावत क्षेत्र, शतद्वारा नगर, तहां दोय मित्र होते भए। महा प्रेमका है बंधन जिनके, एकका नाम सुमित्र, दूसरेका नाम प्रभव। सो ये दोनों एक चटशालामें पढ़कर पंडित भए। कईएक दिनोंमें सुमित्र राजा भया। सब सामंतनिकरि सेवित पूर्वोपार्जित पुण्यकर्मके प्रभावतैं परम उदयको प्राप्त भया। अर दूजा मित्र प्रभव सो दरिद्रकुलमें उपज्या, महादरिद्री। सो सुमित्रने महास्नेहतें अपनी बराबर कर लिया। एक दिन राजा सुमित्रको दुष्ट घोडा हरकर वनमें लेगया। तहां द्विरदंष्ट्रनाम भीलनिका राजा सो याको अपने घर ले गया। ताको वनमाला पुत्री परणाई। सो वह वनमाला

साक्षात वनलक्ष्मी, ताको पाय राजा सुमित्र अति प्रसन्न भया। एक मास तहा रह्या। बहुरि भीलो की सेना लेकर स्त्री सहित शतद्वार नगरमे आव था, अर प्रभव ढूढनेको निकस्या। सो मार्गमें स्त्री सहित मित्रको देखा। कसी ह वह स्त्री मानो कामकी पताका ही ह। सो देखकरि यह पापी प्रभव मित्रको भार्याविष मोहित भया, अशुभकर्मके उदयसे नष्ट भई ह कृत्य-अकृत्यकी बुद्धि जाकी, प्रबल कामके वाणनिकरि बींध्या सता, अति आकुलताको प्राप्त भया। आहार निद्राविक सब विस्मरण भया। ससारमें जेती व्याधी ह तिनमे मदन व्याधी ह जाकरि परम दु ख पाइए ह। जसे सब देवनमे सूय प्रधान ह, तसे समस्त रोगनिके मध्य मदन प्रधान ह। तब सुमित्र प्रभवको खेद खिन्न देखि पूछते भए-हे मित्र! तू खेदखिन्न क्यो ह? तदि यह मित्रको कहने लगा--जो तुम वनमाला परणी ताको देखकरि चित्त व्याकुल भया ह। यह बात सुन करि राजा सुमित्र मित्रमे ह अति स्नेह जाका, अपने प्राण समान मित्रको अपनी स्त्रीके निमित्त दुखी जानि स्त्रीको मित्रके घर पठावता भया। अर आप आपा छिपाय मित्रके झरोखेमे जाय बठा। अर देखें कि यह क्या कर, जो मेरी स्त्री याकी आज्ञा प्रमाण न कर, तो म स्त्रीका निग्रह करू। अर जो याकी आज्ञा प्रमाण कर, तो सहस ग्राम दू। वनमाला रात्रिके समय प्रभवके समीप जाय बठी। तदि प्रभव पूछता भया-हे भद्रे! तू कौन ह। तब इसने विवाह पय त सब वत्तान्त कह्या। सुनकरि प्रभव प्रभारहित होय गया। चित्तविष अति उदास भया। विचार ह-हाय! हाय! म यह क्या अशुभ भावना करी, मित्रकी स्त्री माता समान कौन बांछ है। मेरी बुद्धि भष्ट भई, या पापत म कब छूटू? बन तो अपना सिर काट डारू, कलकयुक्त जीवन करि कहा? ऐसा विचार मस्तक काटनेके अथ म्यानत खडग काढ्या, खडगकी काति करि दशो दिशाविष प्रकाश होय गया। तब तलवारको कठके समीप ल्याया, अर सुमित्र झरोखेमें बठता हुता, सो कूदकर आय हाथ पकड लिया, मरतेको बचाय लिया। छातीसो लगाय करि कहने लगा-हे मित्र! आत्म घातका दोष तू न जाने ह। जे अपने शरीरका अविधिसे निपाता कर ह, ते शूद्र मरकरि नरकविष जाय

पड़े है। अनेक भव अल्प आयुके धारक होय है। यह आत्मघात निगोदका कारण है। या भांति कह करि मित्रके हाथसो खड्ग छीन लिया, अर मनोहर वचनकरि बहुत संतोष्या। अर कहने लगा कि हे मित्र! अब आपसमें परस्पर परम मित्रता है, सो यह मित्रता परभवमें रहे कि न रहे। यह संसार असार है। यह जीव अपने कर्मके उदयकरि भिन्न भिन्न गतिको प्राप्त होय है। या संसारमें कौन किसका शत्रु है, सदा एक दशा न रहे है। यह कहिकर दूसरे दिन राजा सुमित्र महामुनि भए। पर्याय पूर्ण करि दूजे स्वर्गमें ईशान इन्द्र भये। तहांतै चयकरि मथुरापुरीमें राजा हरिवाहन, जाके राणी माधवी तिनकै मधु नामा पुत्र भए। हरिवंशरूप आकाशविषै चन्द्रमा समान भए। अर प्रभव सम्यक्त्व विना अनेक योनियोमें भ्रमणकरि विश्ववसुकी ज्योतिषमती जो स्त्री, ताकै शिखी नाम पुत्र भया। सो द्रव्यलिंगी मुनि होय, महातपकरि निदानके योगतै असुरोके अधिपति चमरेंद्र भए। तदि अवधिज्ञान करि अपने पूर्व भव विचार सुमित्र नामा मित्रके गुण अति निर्मल अपने मनविषै धार, सुमित्र राजा का अतिमनोज्ञ चरित्र चितारकरि असुरेंद्रका हृदय प्रीतिकरि मोहित भया। मनविषै विचारया कि राजा सुमित्र महागुणवान मेरा परम मित्र हुता, सब कार्योंमे सहाई था। ता सहित मैं चटशालाविषै विद्या पढा, मैं दरिद्री हुता ताने आप समान विभूतिवान किया। अर मैं पापी दुष्टचित्तने ताकी स्त्रीविषै खोटे भाव किए तो हू तानै द्वेष न किया। स्त्री मेरे घर पठाई। मैं मित्रकी स्त्रीको माता समान जान अति उदास होय, अपना सिर खड्गतै काटने लाग्या, तदि ताहीने थाम्भ लिया। अर मैंने जिनशासन की श्रद्धा विन मरकर अनेक दुख भोगे। अर जे मोक्षमार्गके प्रवरतनहारे साधु पुरुष तिनकी निंदा करी, सो कुयोनिविषै दुःख भोगे, अर वह मित्र मुनिव्रत अंगीकारकरि दूजे स्वर्ग इन्द्र भया। तहांतै चयकरि मथुरापुरीविषै राजा हरिवाहनका पुत्र मधुवाहन भया है। अर मैं विश्ववसुका पुत्र शिखीनाम द्रव्य-लिंगी मुनि होय असुरेन्द्र भया। यह विचार उपकारका खच्या, परम प्रेमकरि भीजा है मन जाका, अपने भवनसे निकसकरि मध्यलोकविषै आय मधुवाहन मित्रसो मिल्या। महारत्नोकरि मित्रका

पूजन किया। सहसात नामा त्रिशूल रत्न दिया, मधुवाहन चमरेन्द्रको देखि बहुत प्रसन्न भया। फिर चमरेन्द्र अपने स्थानको गया। हे श्रेणिक! शस्त्र विद्याका अधिपति, सिंहोका है वाहन जाके, ऐसा मधु कुंवर हरिवंशका तिलक, रावण है श्वसर जाका, सुखसो तिष्ठै है। यह मधुका चरित्र जो पुरुष पढ़ै सुनै सो कांतिको प्राप्त होय, अर ताके सब अर्थ सिद्ध होय।

अथानन्तर मरुतके यज्ञका नाश करणहारे जो रावण सो लोकविषै अपना प्रभाव विस्तारता हुवा, शत्रुनिको वश करता सता अठारह वर्ष विहार करि, जैसे स्वर्गमें इन्द्र हर्ष उपजावै तैसे उपजावता भया। पृथ्वीका पति कैलाश पर्वतके समीप आय प्राप्त भया। तहां निर्मल है जल जाका, ऐसी मंदाकिनी कहिए गंगा समुद्रकी पटराणी, कमलनिके मकरंदकरि पीत है जल जाका, ऐसी गंगाके तीर कटकके डेरे कराए और आप कैलाशके कुक्षविषै डेरा करि क्रीडा करता भया। गंगाका स्फटिक समान जल निर्मल तामें खेचर, भूचर, जलचर क्रीडा करते भए। जे घोड़े रजविषै लौटकरि मलिन शरीर भए हुते, ते गंगामें निहलाय जलपान कराय फिर ठिकाने लाय बांधे। हाथी सपराए! रावण बालीका वृत्तान्त चितार चैत्यालयनिको नमस्कारकरि धर्मरूप चेष्टा करता तिष्ठ्या।

अथानन्तर इन्द्रने दुर्लंघिपुर नामा नगरविषै नलकूवर नामा लोकपाल थाप्या हुता। सो रावणको हलकारोंके मुखतें नजीक आया जानि इन्द्रके निकट शीघ्रगामी सेवक भेजे और सब वृत्तान्त लिख्या। जो रावण जगतको जीतता समुद्ररूप सेनाको लिए हमारी जगह जीतनेके अर्थि निकट आया पड्या है, या ओरके सबलोक कंपायमान भए हैं। सो यह समाचार लेकर नलकूवरके इतबारी मनुष्य इन्द्र निकट आये। इन्द्र भगवानके चैत्यालयनिकी वंदनाको जाते हुते, सो मार्गविषै इन्द्रको पत्र दिया। इन्द्रने बांचकर सब रहस्य जानकरि पाछा जवाब लिख्या। जो मैं पांडुवनके चैत्यालयनिकी वंदनाकरि आऊं हूं। इतने तुम बहुत यत्नसों रहना, अमोघशस्त्र कहिए खाली न पड़ै—ऐसा जो शस्त्र ताके धारक हो, अर मैं भी शीघ्रही आऊं हूं। ऐसी लिखकर वंदनाविषै आसक्त है मन जाका, वैरीकी सेनाको न गिनता

सता पाडुकवन गया । अर नलकूवर लोकपालने अपने निज वगसो मत्रकरि नगरकी रक्षामें तत्पर विद्यामय सौ यौजन ऊचा, वजशाल नामा कोट बनाया, प्रदक्षिणाकरि तिगुणा । रावणने नलकूवर का नगर जाननेके अर्थि प्रहस्त नामा सेनापति भेज्या । सो जायकरि पाछा आय रावणसो कहता भया-हे देव ! मायामई कोटकरि मडित वह नगर ह सो लिया न जाय । देखो प्रत्यक्ष दीख ह । सब दिशाओ में भयानक विकराल दाढको धरे सप समान शिखर जाके, अर बलता जो सघन बासन का वन ता समान देखी न जाय ऐसी ज्वालाके समूहकरि सयुक्त उठ ह स्फुलिगोकी राशि जामें, अर याके यत्र वतालका रूप धर विकराल ह दाढ जिनकी, एक योजनके मध्य जो मनुष्य आव ताको निगल है, तिन यत्रनिविष प्राप्त भए जे प्राणियोके समह तिनका यह शरीर न रह, जन्मातरमे और शरीर धर । ऐसा जानकर आप दीघदर्शी हो, सो या नगरके लेनेका उपाय विचारो । तदि रावण मत्रियो से उपाय पूछने लाग्या । सो मत्री मायामई कोटके दूर करवेका उपाय चितवते भए । कसे ह मत्री ? नीति शास्त्रविष अति प्रवीण ह ।

अथानन्तर नलकूवरकी स्त्री उपरभा इन्द्रकी अप्सरा जो रभा ता समान ह गुण, अर रूप जाका पथ्वीविष प्रसिद्ध, सो रावणको निकट आया सुन अति अभिलाषा करती भई । आग रावणके रूप गुण श्रवणकर अनुरागवती थी ही रात्रिविष अपनी सखी विचित्रमालाको एकातमें ऐस कहती भई- हे सुन्दरी ! मेरे तू प्राण समान सखी ह, तो समान और नाहीं । अपना अर जाका, एक मन होय ताको सखी कहिए, मेरेमें अर तेरेमे भेद नाहीं । तात हे चतुरे ! निश्चयत मेरे कायका साधन तू कर तो तुझ अपनी चित्तकी बात कहूँ । जे सखी ह ते निश्चयसेती जीतव्यका अवलबन होय ह । जब ऐसे रानी उपरभाने कह्या तदि सखी विचित्रमाला कहती भई-हे दवी ! एती बात कहा कहो हो ? हम तो तिहारे आज्ञाकारी जो मनवाछित काय कहो सोही कर । म अपने मुखसो अपनी स्तुति कहा करू, अपनी स्तुति करना लोकविष निद्य ह, बहुत क्या कहूँ । मोहि तुम मूर्तिवती साक्षात कायकी

सिद्धि जानो। मेरा विश्वासकरि तिहारे मनविष जो होय सो कहो। हे स्वामिनी! हमारे होते तोहि खेद कहा? तब उपरभा निश्वास लेकर कपोलविष कर धर मुखमेत न निकसते जो बचन ते बारम्बार प्रेरणा करि बाहिर निकासती भई। हे सखी! बालपनेहीसो लेकर मेरा मन रावणविष अनुरागी ह। म लोक-विष प्रसिद्ध महासुन्दर ताके गुण अनेक बार सुन ह। सो म अतरायके उदयकरि अबतक रावणके सगमको प्राप्त न भई। चित्तविष परम प्रीति धरू हूँ। अर अप्राप्तिका मेरे निरतर पछतावा रहह। हे रूपिणी! म जानू हूँ यह काय प्रशसा योग्य नाहीं। नारी दूजे नरके सयोगकरि नरकविष पडे ह। तथापि म मरणको सहिबे समथ नाहीं, तात हे मिष्टभाषिणी! मेरा उपाय शीघ कर। अब वह मेरे मन का हरणहारा निकट आया ह! काहू भाति प्रसन्न होय मेरा तासो सयोग कर दे। म तेरे पायन पडू हू। ऐसा कहकरि वह भामिनी पाय पडने लागी, तदि सखीने सिर थाभ लिया, अर यह कही कि ह स्वामिनी! तिहारा कार्य क्षणमात्रविष सिद्धि करू। यह कहि कर दूती घरस निकसी। जान है इन सकल बातनकी रीति। अति सूक्ष्म श्याम वस्त्र पहनकर आकाशके माग रावणके डरेविष आई। राज लोकमें गई। द्वारपालत अपने आगमनका वत्तात कहकर रावणके निकट जाय प्रणाम किया। आज्ञा पाय बठकर विनती करती भई—हे देव! दोष क प्रसगत रहित तिहारे सकल गुणनिकरि यह सकल लोक व्याप्त हो रहया ह, तुमको यही योग्य ह। अति उदार ह विभव तिहारा, या पथ्वीविष सबही को तृप्त करो हो। तुम सबके आनन्द निमित्त प्रकट भए हो। तिहारा आकार देखकर यह मनविष जानिए ह कि तुम काहूकी प्रार्थना भग न करो, तुम बडे दातार, सबके अथ पूण करो हो, तुम सारिखे महत पुरुषनिको जो विभूति ह सो परोपकारहीके अर्थि ह। सो आप सबनिको सीख देयकरि एक क्षण एकात विराजकर चित्त लगाय मेरी बात सुनो तो म कहू। तदि रावणने ऐसा ही किया। तदि याने उपरभाका सकल वृत्तात कानविष कहया।

तदि रावण दोनो हाथ काननपर धरि, सिर धुनि, नेत्र सकोच, कैकसी माताके पुत्र पुरुषनिविष

उत्तम, सदा आचार परायण कहते भए—हे भद्रे ! कहा कही ? यह काम पापके बंधका कारण कैसे करनेमें आवे ? मैं परनारियोंको अंगदान करनेविषै दरिद्री हूं । ऐसे कर्मोंको धिक्कार होउ । तब अभिमान तजकर यह बात कही, परन्तु जिनशासनकी यह आज्ञा है कि विधवा अथवा धनीकी राणी अथवा कुवारी अथवा वेश्या सब ही परनारी सदाकाल सर्वथा तजनी । परनारी रूपवती है तो कहा ? यह कार्य लोक अर परलोकका विरोधी विवेकी न करें । जो दोनों लोक भ्रष्ट करें सो काहेका मनुष्य—? हे भद्रे परपुरुषकरि जाका अंग मर्दित भया ऐसी जो परदारा, सो उच्छिष्ट भोजन समान है, ताहि कौन नर अंगीकार करे ? यह बात सुन विभीषण महामंत्री सकल नयके जाननहारे, राजविद्याविषै श्रेष्ठ है बुद्धि जिनकी, रावणको एकांतविषै कहते भए— हे देव ! राजानिके अनेक चरित्र हैं । काहू समय काहू प्रयोजनके अर्थ किंचितमात्र अलीक भी प्रतिपादन करें । तातें आप यासूं अत्यन्त रूखी बात मत कहो । वह उपरंभा वशभई संती कछु गढके लेनेका उपाय कहेगी । ऐसे वचन विभीषणके सुनकर रावण राजविद्यामें निपुण मायाचारी विचित्रमाला सखीसों कहते भए हे—भद्रे ! वह मेरेमें मन राखे है, अर मेरे बिना अत्यंत दुखी है, तातें वाके प्राणनिकी रक्षा मोकूं करनी योग्य है । सो प्राणोंसे न छूटे या प्रकार पहले उसको ले आवो । जीवोंके प्राणोंकी रक्षा यही धर्म है । ऐसा कहकर सखीको सीख दीनी, सो जायकर उपरंभाको तत्काल ले आई । रावणने याका बहुत सन्मान किया । तदि वह मदन सेवनकी प्रार्थना करती भई । रावण ने कही—हे देवी ! दुर्लंघ नगर विषै मेरी रमणेकी इच्छा है । यहां उद्यानविषै कहा सुख ? ऐसा करो जो नगरविषै तुम सहित रमूं । तदि वह कामातुर ताकी कुटिलता को न जानकरि, स्त्रियोंका मूढ स्वभाव होय है, तातें नगरके मायामई कोटभंजनका उपाय आसालका नाम विद्या दीनी, अर बहुत आदरतें नानाप्रकारके दिव्य शस्त्र दिये, देवनिकरि करिए है रक्षा जिनकी । तदि विद्याके लाभतैं तत्काल मायामई कोट जाता रह्या । जो सदाका कोट था सोई रह गया । तदि रावण बडी सेनाकर नगरके निकट गया । अर नगरके कोलाहल शब्द सुनकर राजा नलकूवर क्षोभको

प्राप्त भया। मायामई कोटको न देखकरि विषादमन भया, अर जानी कि रावणने नगर लिया, तथापि महा पुरुषार्थ धरता संता युद्ध करवेको बाहरि निकस्या। अनेक सामंतनि सहित परस्पर शस्त्रनके समूहकरि महासंग्राम प्रवरत्या। जहां सूर्यकी किरण भी नजर न आवे, क्रूर है शब्द जहां। विभीषण ने शीघ्र ही लातकी दे नलकूवरका रथ तोड डारया, अर नलकूवरको पकड लिया। जैसे रावणने सहस्रकिरणको पकडा हुता तैसे विभीषणने नलकूवरको पकडया। रावणकी आयुधशालाविषै सुदर्शन चक्ररत्न उपज्या। उपरंभाको रावणने एकांतविषै कही,—जो तुम विद्यादानसे मेरी गुरु हो, अर तुमको यह योग्य नाहीं जो अपने पतिको छोड दूजा पुरुष सेवो। अर मुझे भी अन्यायमार्ग सेवना योग्य नाहीं? या भांति याको दिलासा करी अर नलकूवरको याके अर्थि छोडया। कैसा है नलकूवर? शस्त्रनिकरि विदारया गया है बख्तर जाका, नहीं लगा है शरीरके घाव जाके। रावणने उपरंभासे कही या भरतारसहित मनवांछित भोगकर। कामसेवनविषै पुरुषोमें कहा भेद है। अर अयोग्यकार्य करनेतै मेरी अकीर्ति होय, अर मैं ऐसे करूं तो लोग भी या मार्ग विषै प्रवर्त्तै। पृथ्वीविषै अन्याय की प्रवृत्ति होय। अर तू राजा आकाशध्वजकी बेटी, तेरी माता मंदुकांता, सो तू विमलकुलविषै उपजी शीलको राखने योग्य है। या भांति रावणने कही तदि उपरंभा लज्जायमान भई, अपने भरतारविषै संतोष किया, अर नलकूवर भी स्त्रीका व्यभिचार न जान स्त्रीसहित रमता भया, अर रावण सो बहुत सन्मान पाया। रावणकी यही रीति है कि जो आज्ञा न मानै ताका पराभव करै, अर जो आज्ञा मानै ताका सन्मान करै। अर युद्ध विषै मारयाजाय सो मारया जावो, अर पकडया आवै ताको छोड दे। रावणने संग्रामविषै शत्रुनिको जीतनेतैं बडा यश पाया, बडी है लक्ष्मी जाके महासेनाकरि संयुक्त वैताड पर्वतके समीप जाय पडया।

तब राजा इन्द्र रावणको समीप आया सुनकर अपने उमराव जे विद्याधर देव कहावैं तिन समस्त ही सो कहता भया—हो विश्वसी आदि देव हो! युद्धकी तयारी करो। कहा विश्राम कर रहे हो?

राक्षसनिका अधिपति आया। यह कर करि इन्द्र अपने पिता जो सहसार तिनके समीप सलाह करवेको गया। नमस्कारकरि बहुत विनयसयुक्त पथ्वीपर बठ बापसो पूछी—हे देव! बरी प्रबल अनेक शत्रुनि को जीतनहारा निकट आया ह सो क्या कतव्य ह? हे तात! मने काम बहुत विरुद्ध किया जो यह बरी होता ही प्रलयको न प्राप्त किया, काटा उगता ही होठनत टूटे, अर कठोर परे पीछ चुभ, रोग होता ही मिट तो सुख उपज अर रोगकी जड बध तो कटना कठिन ह, तस क्षत्री शत्रुकी वद्धि होने न दे, म याके निपातका अनेक बेर उद्यम किया परन्तु आपने वथा मने किया, तब म क्षमा करी। हे प्रभो! म राजनीतिके मागकरि विनती करू हू। याके मारवेम असमथ नाहीं हू। ऐसे गव अर क्रोधके भरे पुत्रके वचन सुनकर सहसारने कही—हे पुत्र! तू शीघ्रता मत करि, अपने श्रेष्ठ मत्री ह तिनसो मत्र विचारि। जे विना विचारे काय करे ह, तिनके काय विफल होय ह। अथकी सिद्धिका निमित्त केवल पुरुषाथ नाहीं ह। जस कषिकमका ह प्रयोजन जाक, ऐसा जो किसान ताकू मेघकी वष्टि विना कहा काय होय? अर जस चटशालाविषे शिष्य पढ ह, सब ही विद्याको चाह ह परन्तु कमके वशत काहूको विद्यासिद्धि होय ह, काहूको सिद्धि न होय। तात केवल पुरुषाथसो ही सिद्धि न होय। अब रावणसो मिलापकरि। जब वह अपना भया, तब तू पथ्वीका निकटक राज्य करगा। अर अपनी पुत्री रूपवती नामा महारूपवती रावणको परणाय दे। याम दोष नाहीं। यह राजानिकी रीति ही ह। पवित्र ह बुद्धि जिनकी ऐसे पिताने इन्द्रको न्यायरूप वार्त्ता कही, परतु इन्द्रके मनमें न आई। क्षण मात्रमें रोसकरि लाल नेत्र होय गए, क्रोधकरि पसेव आय गये। महाक्रोधरूप वाणी कहता भया—हे तात! मारने योग्य वह शत्रु ताहि कन्या कसे दीजिये। ज्यो ज्यो उमर अधिक होय, त्यो त्यो बुद्धि क्षय होय ह। तात तुम यह बात योग्य न कही। कहो म कौनसो घाट हू, मेरे कौन वस्तुकी कमी ह। जात तुम ऐसे कायर वचन कहे। जा सुमेरुके पायनि चाव सूय लागि रहे सो उतग सुमेरु कैस और निकू नव। जो वह रावण पुरुषाथ करि अधिक ह, तो म भी तात अत्यत अधिक हू। अर देव उसके

अनुकूल है यह बात निश्चय तुम कैसे जानी ? अर जो कहोगे, तात बहुत वैरी जीते है तो अनेक मृगनिको हतनहारा जो सिंह ताहि कहा अष्टपाद न हने ? हे पिता ! शस्त्रनके संपातकरि उपज्या है अग्निका समूह जहाँ ऐसे संग्रामविषै प्राण त्यागना भला है। परन्तु काहूसों नमीभूत होना बड़े पुरुषनिको योग्य नाहीं। पृथ्वीपर मेरी हास्य होय कि यह इन्द्र रावणसों नमीभूत हुवा। पुत्री देकर मिल्या, सो तुमने यह तो विचारा ही नाहीं ! अर विद्याधरपनेकरि हम अर वह बराबर हैं, परन्तु बुद्धि पराक्रममें वह मेरी बराबर नाहीं। जैसे सिंह अर स्याल दोऊ वनके निवासी हैं परन्तु पराक्रममें सिंह तुल्य स्याल नाहीं। ऐसे पितासों गर्वके वचन कहे। पिताकी बात मानी नाहीं। पितातैं विदा होयकरि आयुधशालामें गए। क्षत्रीनिको हथियार बांटे अर बक्तर बांटे अर सिंधूराग होने लगे, अनेक प्रकारके वादित्र बजने लगे। अर सेनामें यह शब्द भया कि हाथियोंको सजावो, घोडोंके पलान कसो, रथोंके घोडे जोडो, खडग बांधो, बक्तर पहरो, धनुष बाण लो, सिरपर टोप धरो, शीघ्र ही खंजर लावो इत्यादि शब्द देव जातिके विद्याधरोंके होते भए।

अथानन्तर योधा कोपको प्राप्त भए, ढोल बाजने लगे, हाथी गाजने लगे, घोडे हींसने लगे और धनुषके टंकार होने लगे, योधाओंके गुंजार शब्द होने लगे और बंदीजन विरद बखानने लगे। जगत शब्दमई होय गया, सब दिशा तरवार तथा तोमर जातिके शस्त्र तथा पासिन करि, ध्वजानिकरि, शस्त्रनिकरि और धनुषनिकरि आच्छादित भई। और सूर्य भी आच्छादित होय गया। राजा इन्द्रकी सेनाके जे विद्याधर देव कहावैं ते समस्त रथनूपुरतें निकसे। सब सामग्री धर युद्धके अनुरागी दरवाजे आय भेले भए। परस्पर कहै है रथ आगे करि, माता हाथी आया है। हे महावत! हाथी इस स्थानतें परै करि। हो घोडेके सवार ! कहा खडा हो रह्या है, घोडेको आगे ले, या भांतिके वचनालाप होते संते शीघ्रही देव बाहिर निकसे, गाजते आए। सेनाविषै शामिल भए, और राक्षसोंके सन्मुख आए। रावणके अर इन्द्रके युद्ध होने लगा। देवोंने राक्षसोंकी सेना कछु हटाई। शस्त्रनिके जे समूह तिनके

प्रहारकरि आकाश आच्छादित होय गया। तदि रावणके योधा बजवेग, हस्त, प्रहस्त, मारीच, उद्भव, बज, वक्र, शुक्र, घोन, सारन, गगनोज्वल, महाजठर, मध्याभक्रूर इत्यादि अनेक विद्याधर बडे योधा राक्षसवशी नानाप्रकारके बाहनोपर चढे अनेक आयुधोके धारक देवोसे लडने लगे। तिनके प्रभावकरि क्षणमात्रमें देवनिकी सेना हटी। तब इन्द्रके बडे योधा कोपकरि भरे, युद्धको सनमुख भए, तिनके नाम मेघमाली, तडसग, ज्वलिताक्ष, अरि सचर, पाचकसिदन इत्यादि बडे बडे देवोने शस्त्रोके समूह चलावते सते राक्षसनिको दबाया, सो कछुएक शिथिल होय गए। तब और बडे २ राक्षस इनको धीय बधावते भये। महासामन्त राक्षसवशी विद्याधर प्राण तजते भये। परन्तु शस्त्र न डारत भए। राजा महेन्द्रसेन बानरवशी राक्षसनिके बडे मित्र तिनका पुत्र प्रसन्नकीर्त्ति ताने बाणोके प्रहारकरि देवनिकी सेना हटाई, राक्षसनिके बलकू बडा धीर्य बधाया, तब प्रसन्नकीर्त्तिके बाणनिके प्रभावकरि देव हटे। तदि अनेक देव प्रसन्नकीर्तिपर आये, सो प्रसन्नकीर्तिने अपने बाणनिकरि विदारे। जसे खोटे तपस्वियोका मन मन्मथ (काम) विदार। तब और बडे २ देव आए, कपि राक्षस अर देवोके खड्ग कनक गदा शक्ति धनुष मुदगर इनकरि अति युद्ध भया। तब माल्यवानका बेटा श्रीमाली रावणका काका, महा प्रसिद्धपुरुष अपनी सेनाकी मददके अर्थि देवनिपरि आया। सूर्य समान ह काति जाकी, सो ताके बाणनिकी वर्षात दवोकी सेना हट गई। जस महाग्राह समुद्रको भकोल तस देवनकी सेना श्रीमालीने भकोली। तब इन्द्रके योधा अपन बलकी रक्षानिमित्त महाक्रोधके भरे अनेक आयुधोके धारक शिखि केशर बडाग्र कनक प्रवर इत्यादि इन्द्रके भानजे बाण वर्षाकरि आकाशको आच्छादते सते श्रीमाली पर आए। सो श्रीमाली अर्धचन्द्र बाणत उनके शिररूप कमलोकरि पथ्वी आच्छादित करी। तब इन्द्रने विचारया कि यह श्रीमाली मनुष्योविष महायोधा, राक्षसवशियोका अधिपति माल्यवानका पुत्र ह। याने मेर बड २ देव मार ह। अर ये मेरे भानजे मार या राक्षसके सन्मुख मेर दवोमें कौन आव ? यह अतिवीर्यवान महा तेजस्वी दख्या न जाय। तातें म युद्धकरि याहि मारू। नातर यह मेरै अनेक दवनिको हतगा। ऐसाविचारि

अपने जे देवजाति के विद्याधर श्रीमालीत कम्पायमान भये हुते तिनको धीय बधाय, आप युद्ध करवेको उद्यमी भया। तब इन्द्रका पुत्र जयंत बापके पायनपरि विनती करता भया–हे देवेंद्र! मेरे होते सते आप युद्ध करो, तवि हमारे जन्म निरथक ह। हमको आपने बाल अवस्थाविष अति लडाए, अब तिहारे ढिग शत्रुनिको युद्धकरि हटाऊ। यह पुत्रका धम है। आप निराकुल विराजिये जो अंकुर नखत छेद्या जाय तापर फरसी उठावना कहा? ऐसा कहकरि पिताकी आज्ञा लेय मानो अपने शरीरकरि आकाशको ग्रसगा–ऐसा क्रोधायमान होय युद्धके अर्थि श्रीमालीपर आया। श्रीमाली याको युद्धयोग्य जान खुशी भया–याके सन्मुख गए। ये दोनो ही कुमार परस्पर युद्ध करने लगे। धनुष खच बाण चलावते भये। इन दोनो कुमारनिका बडा युद्ध भया। दोनो ही सेनाके लोक इनका युद्ध देखते भए। सो इनका युद्ध देखि आश्चयको प्राप्त भये। श्रीमालीने कनक नामा हथियारकरि जयन्तका रथ तोड्या। अर ताको घायल किया, सो मूर्छा खाय पड्या। फिर सचेत होय लडने लग्या। श्रीमालीके भिंडमालकी दीनी, रथ तोड्या, अर मूर्छित किया, तवि देवनिकी सेनाविष अति हृष भया–अर राक्षसनिको सोच भया। फिर श्रीमाली सचेत भया–तदि जयतके सन्मुख भया, दोनोमें महायुद्ध भया। दोनो सुभट राजकुमार युद्ध करते शोभते भए। मानो सिंहके बालक ही ह। बडी देरमें इन्द्रके पुत्र जयतने माल्यवान का पुत्र जो श्रीमाली ताक गदाकी छाती विष दीनी सो पथ्वी पर पड्या, बदन कर रुधिर पडने लग्या। तत्काल सूय अस्त होजाय तसें प्राणात होय गया। श्रीमालीको मार करि इन्द्रका पुत्र जयत शखनाद करता भया। तवि राक्षसनिकी सेना भयभीत भई अर पाछी हटी। माल्यवानके पुत्र श्रीमालीको प्राणरहित देख, अर जयत को उद्यम देखि रावणके पुत्र इन्द्रजीतने अपनी सेनाको धीय बधाया अर कोपकरि जयतके सन्मुख आया। सो इन्द्रजीतने जयतका बखतर तोड डाल्या, अर अपने बाणनि करि जयतको जजरा किया। तवि इन्द्र जयतको घायल देखि छेद्या गया है बखतर जाका, रुधिरकरि लाल होयगया है शरीर जाका, ऐसा देखकरि आप युद्धको उद्यमी भया। आकाशको अपने आयुधनिकरि आच्छादित

करता सता अपने पुत्रकी मददके अर्थि रावणके पुत्रपर आया, तब रावणको सुमति नामा सारथीने कहा–हे देव! ऐरावत हाथीपर चढ्या लोकपालनिकरि मंडित, हाथविषै धरे मुकुटके रत्ननिकी प्रभाकरि उद्योत करता सता, उज्ज्वल छत्रकरि सूर्यको आच्छादित करता सता, क्षोभको प्राप्त भया ऐसा जो समुद्र ता समान सेनाकरि संयुक्त जो यह इन्द्र महाबलवान है। इन्द्रजीतकुमार यासूं युद्ध करने समर्थ नाहीं। तात आप उद्यमी होयकरि अहंकारयुक्त जो यह शत्रु ताहि निराकरण करो। तब रावण इन्द्रको सन्मुख आया देखि आगे मालीका मरण यादकरि अर हाल श्रीमालीका बधकरि महाक्रोधरूप भया। अर शत्रुनिकरि अपनें पुत्रको बेढ्या देख आप दौड्या। पवन समान है वेग जाका, ऐसे रथविषै चढ्या दोनो सेनाके योधानिविषै परस्पर विषम युद्ध होना भया, सुभटनिके रोमांच होय आए। परस्पर शस्त्रनिके निपात करि अंधकार होय गया, रुधिरकी नदी बहने लगी, योधा परस्पर पिछानें न परें, केवल ऊंचे शब्दकरि पिछाने परें, अपने अपने स्वामीके प्रेरे योधा अति युद्ध करते भए। गदा शक्ति बरछी मूसल खडग वाण, परिघजातिके शस्त्र, कनकजातिके शस्त्र, शक्र कहिये सामान्यचक्र, बरछी तथा त्रिशूल पाश भुखंडी जातिके शस्त्र, कुहाडा मुदगर वज्र पाषाण हलवंड कोणजातिके शस्त्र अर नाना प्रकारके शस्त्र तिनकरि परस्पर अति युद्ध भया। परस्पर उनके शस्त्र उनने काटे, उनके उन्होंने काटे। अति विकराल युद्ध होते परस्पर शस्त्रनिके घातकरि अग्नि प्रज्ज्वलित भई। रणविषै नानाप्रकारके शब्द होय रहे हैं, कहीं मारलो मारलो ये शब्द होय हैं। कहीं एक रण २ कहीं किण २, त्रम २, दम दम, छमछम, पटपट, छसछस, दृढदृढ तथा ततटत, चटचट, घघघघ इत्यादि शत्रुनिकरि उपजे अनेक प्रकारके शब्दनिकर रणमंडल शब्दरूप होयगया। हाथीनिकरि हाथी मारे गए, घोडनिकर घोडे मारे गये, रथोंपर रथ तोडे गये, पियादनिकर पियादें हते। हाथियोंकी सूंडकर उछले जे जलके छींटे तिनकरि शस्त्र संपातकर उपजी थी जो अग्नि सो शांत भई। परस्पर गज युद्धकर हाथीनके दांत टूट पड्या, गजमोती बिखर गये। योधानिमें परस्पर यह आलाप भए–हो शूरवीर! अस्त्र चलाय, कहा

कायर होय रह्या है ? हे भटसिंह ! हमारे खडगका प्रहार सम्भार, हमारेते युद्धकरि । यह मूवा तू अब कहा जाय है । अर कोईसूं कहै है—तू यह युद्धकला कहा सीख्या, तरवारका भी सम्हारना न जानै है । अर कोई कहै है तू इस रणतै जा, अपनी रक्षाकर, तू कहा युद्ध करना जानै ? तेरा शस्त्र मेरे लाग्या सो मेरी खाज भी न मिटी, तै वथा ही धनकी आजीविका अब तक खाई, अबतक तै युद्ध कहीं देख्या नाहीं । कोई ऐसे कहै है—तू कहा कांपै है, तू थिरता भज, मुष्टि दृढ राख, तेरे हाथतै खडग गिरैगा । इत्यादि योधानिमैं परस्पर आलाप होते भये । कैसे हैं योद्धा ? महा उत्साहरूप हैं, जिनको मरनेका भय नाहीं । अपने अपने स्वामीनिके आगे सुभट भले दिखाये । किसीकी एक भुजा शत्रुकी गदाके प्रहारकरि टूट गई है, तो भी एक ही हाथतै युद्ध करता रह्या । काहूका सिर टूट पड्या, तो धड ही लडै है । योधानिके बाणनिकरि वक्षस्थल विदारे गये, परन्तु मन न चिगे । सामंतनिके सिर पडे, परन्तु मान न छोड्या । शूरवीरनिकै युद्धमें मरण प्रिय है, टरकर जीवना प्रिय नाहीं । ते चतुर महा धीरवीर महापराक्रमी महासुभट यशकी रक्षा करते संते शस्त्रनिके धारक प्राण त्याग करते भये, परन्तु कायर होयकरि अपयश न लिया । कोई एक सुभट मरता थका भी वैरीके मारणे की अभिलाषा करि क्रोधका भरचा, वैरीके ऊपर जाय पड्या, ताको मार आप मरचा । काहूके हाथनितैं शस्त्र शत्रुके शस्त्र घातकरि निपात भए ? तदि वह सामंत मुष्टिरूप जो मुदगर ताके घातकरि शत्रुको प्राणरहित करता भया । कोई एक महासुभट शत्रुनिको भुजानितैं मित्रवत आलिंगनकरि मसल डारता भया । कोई एक सामंत परचक्रके योधानिकी पंक्तिको हणता संता अपने पक्षके योधानिका माग शुद्ध करता भया । कोई एक योधा रणभूमिविषै परते संते भी वैरीनिको पीठ न दिखावते भए, सूधे पडे । रावण अर इन्द्रके युद्धमें हाथी घोडे रथ योधा हजारो पडे । पहिले जो रज उठी हुती सो मदोन्मत्त हाथियोंके मदझरनेकरि तथा सामंतनिके रुधिरका प्रवाहकरि दबगई । सामंतोके आभूषणनिकरि रत्नो की ज्योति-करि आकाशविषै इन्द्रधनुष होयगया । कोईएक योधा बायें हाथकरि अपनी आंतां थांभकरि महा

भयाकर खड्ग काढि वरी ऊपर गया। कोईएक योधा अपनी आंतही करि गाढी कमर बाधे होट डसता शत्रु ऊपर गया। कोईएक आयुधरहित होय गया तो भी रुधिरका रग्या रोषविष तत्पर वरीके माथे पर हस्तका प्रहार करता भया। कोईएक रणधीर महा शूरवीर युद्धका अभिलाषी पाशकरि बरीको बाधकरि छोड देता भया, रणकर उपज्या ह हर्ष जाक ऐसा। कईएक न्यायसग्रामविष तत्पर बरीको आयुध रहित देखकरि आप भी आयुध डारि खडे होय रहे, कईएक अन्त समय सन्यास धार नमोकार मन्त्रका उच्चारणकरि स्वर्ग प्राप्त भये। कईएक योधा आशीविष सर्पसमान भयाकर पडता २ भी प्रतिपक्षीको मारकरि मरच्या। कईएक अर्धसिर छेद्या गया ताहि बाये हाथविष दाबि महापराक्रमी दौडकर शत्रुका सिर फाडच्या। कईएक सुभट पृथ्वीकी आगल समान जो अपनी भुजा तिनहीकरि युद्ध करते भए। कईएक परम क्षत्रिय धर्मज्ञ शत्रुको मूर्छित भया देखि आप पवन झोल सचेत करते भए। या भाति कायरनिको भयका उपजावनहारा अर योधानिको आनदका उपजावनहारा महा सग्राम प्रवर्त्या। अनेक गज, अनेक तुरग, अनेक योधा शस्त्रनिकरि हते गए। अनेक रथ चूर्ण होयगए, अनेक हाथियोकी सूड कट गई, घोडानिके पाव टूट गए, पूछ कट गई, पियादे काम आय गए। रुधिर के प्रवाहकरि सब दिशा आरक्त होयगई। एता रण भया सो रावण किंचितमात्र भी न गिन्या। रणविष ह कौतूहल जाके ऐसे सुभटभावका धारक रावण सुमति नामा सारथीको कहता भया—हे सारथी! इस इन्द्रक सन्मुख रथ चलाय, अर सामान्य मनुष्योके मारवेकरि कहा? ये तण समान सामान्य मनुष्य तिनपर मेरा शस्त्र न चाल। मेरा मन महायोधावोके ग्रहणविष तत्पर ह, यह क्षुद्र मनुष्य अभिमानत इन्द्र कहाव ह। याहि आज मारू अथवा पकडू। यह विडम्बनाका करणहारा पाखड करि रहघा है, सो तत्काल दूर करू। देखो याकी ढीठता, आपको इन्द्र कहाव ह अर कल्पनाकर लोक पाल थापे ह, अर इन मनुष्योने विद्याधरोकी देव सज्ञा धरी ह। देखो अल्पसी विभूति पाय मूढमती भया है, लोकहास्यका भय नाहीं। जस नट साग धरच्या ह, दुबुद्धि आपको भूल गया। पिताके वीर्य माताके

रुधिर करि मास हाडमई शरीर माताके उदरत उपज्या तोहू वथा आपको वेदेंद्र मानै ह । विद्याके बलकरि या ने यह कल्पना करी ह । जस काग आपको गरुड कहाव तसैं यह इन्द्र कहावै हैं । या भांति जब रावणने कह्या तब समति सारथीने रावणका रथ इन्द्रके सन्मुख किया । रावणको देख इन्द्रके सब सुभट भागे । रावणसो युद्ध करवेको कोई समथ नाहीं । रावण सवको दयालु दृष्टिकर कीट समान देख, रावणके सन्मुख ए इन्द्र ही टिका अर सव कत्रिमदेव याका छत्र देख भाज गए । जस चद्रमाके उवयतैं अधकार जाता रह । कसा ह रावण ? बरियोकर झेल्या न जाय । जसैं जलका प्रवाह ढाहेनिकरि थाम्भ्या न जाय अर जस क्रोधसहित चित्तका वेग मिथ्यादष्टि तापसीनिकर थाम्भ्या न जाय तस सामतोकरि रावण थाम्भ्या न जाय । इन्द्र भी कलाश पवतसमान हाथीपर चढ्या, धनुषनिको धरे तरकशतै तीर काढता रावणके सन्मुख आया । कानतक धनुषको खीच रावणपर बाण चलाया । जसें पहाडपर मेघ मोटी धारा बर्षाव तैसे रावणपर इन्द्रने बाणनिकी वर्षा करी । रावणने इन्द्रके बाण आवते आवते काट डारे अर अपने बाणनिकरि शरमडप किया । सूर्यकी किरण बाणनिकी दृष्टिकरि न आव, ऐसा युद्ध देख नारद आकाशविष नत्य करता भया ।कलह देख उपज ह हष जाको । जब इद्र ने जान्या कि यह रावण सामान्य शस्त्रकर असाध्य ह, तवि इद्रने अग्निबाण रावणपर चलाया । ताकरि रावणकी सेनाविष आकुषलता उपजी । जस बासनिका वन प्रजल, अर ताकी तडतडात ध्वनि होय, अग्निकी ज्वाला उठ, तेस अग्निबाण प्रज्वलता सता आया । तब रावणने अपनी सेनाको व्याकुल देख तत्कालही जलबाण चलाया । सो मेघमाला उठी, पवत समान जलकी मोटी धारा बरसने लगी, क्षणमात्रमैं अग्निबाण बुझ गया । तब इद्रने रावणपर तामस बाण चलाया । ताकरि दशो दिशानिमे अधकार होयगया । रावणके कटकविष काहूको कुछ भी न सूझे । तब रावणने प्रभास्त्र कहिए प्रकाश बाण चलाया, ताकरि क्षणमात्रमें सकल अधकार विलय होयगया, जस जिनशासनके प्रभावकरि मिथ्यात्वका माग विलय जाय । फिर रावणन कोपकरि इद्रप नागबाण चलाया, सो मानो महाकाले

नाग ही चलाए। भयंकर है जिह्वा जिनकी, ते सर्प इन्द्रके अर सकल सेनाके लिपट गए। सर्पनिकरि बेढ्या इन्द्र अति व्याकुल भया, जैसे भवसागरविषै जीव कर्मजालकर बेढ्या व्याकुल होय है। तब इन्द्रने गरुडबाण चितारया सो सुवर्णसमान पीत पंखनिके समूहकरि आकाश पीत होय गया, अर पांखीनिकी पवनकरि रावणका कटक हालने लग्या, मानो हिंडोलेमें भूलै है। गरुडके प्रभावकर नाग ऐसे विलाय गए जैसे शुक्लध्यानके प्रभावकरि कर्मनिके बंध विलय होय जाय। जब इन्द्र नागबंधनितैं छूटकर जेठके सूर्यसमान अति दारुण तपता भया तदि रावणने त्रैलोक्यमंडन हाथीको इन्द्रके ऐरावत हाथीपर प्रेरया। कैसा है त्रैलोक्यमंडन? सदा मद झरै है और बैरियोंको जीतनहारा है। इन्द्रने भी ऐरावतको त्रैलोक्यमंडन पर धकाया। दोनों गज महा गर्वके भरे लडने लगे। झरै है मद जिनके, क्रूर हैं नेत्र जिनके, हालै हैं कर्ण जिनके, देदीप्यमान है बिजुरी समान स्वर्णकी सांकल जिनके, दोऊ हाथी शरदके मेघसमान अति गाजते, परस्पर अति भयंकर जो दांत तिनके घातनिकरि पृथ्वीको शब्दायमान करते, चपल है शरीर जिनका, परस्पर सूंडोंसे अद्भुत संग्राम करते भए।

तब रावणने उछलकरि इन्द्रके हाथीके मस्तकपर पग धरि अति शीघ्रताकरि गजके सारथीको पाद प्रहारतैं नीचें डारया अर इन्द्रको वस्त्रतैं बांध्या, अर बहुत दिलासा देयकरि पकडि अपने गज पर लेय आया। अर रावणके पुत्र इन्द्रजीतने इन्द्रका पुत्र जयंत पकड्या, अपने सुभटोंको सौंप्या, आप इन्द्रके सुभटोंपर दौड्या। तदि रावणने मने किया—हे पुत्र! अब रणतैं निवृत्त होवो, क्योंकि समस्त विजयार्धके जे निवासी विद्याधर तिनका चूडामणि पकड लिया है। अब समस्त अपने अपने स्थानक जावो, सुखसों जीवो। शालितैं चावल लिया, तब परालका कहा काम? जब रावणने ऐसा कह्या तब इन्द्रजीत पिताकी आज्ञातैं पाछा बाहुड्या, अर सब देवनिकी सेना शरदके मेघसमान भाग गई। जैसैं पवनकरि शरदके मेघ विलाय जाय। रावणकी सेनामें जीतके वादित्र बाजे, ढोल नगारे शंख झांझ इत्यादि अनेक वादित्रनिका शब्द भया। इन्द्रको पकड्या देख रावणकी सेना अति हर्षित भई। रावण

लकामे चलवेको उद्यमी भया, सूयके समान रथ ध्वजानिकरि शोभित, अर चचल तुरग नृत्य करते भए । अर मद झरते हुए नाद करते हाथी तिनपरि भमर गु जार कर ह, इत्यादि महासेनाकरि मडित राक्षसनिका अधिपति रावण लकाके समीप आया । तब समस्त बधुजन अर नगरके रक्षक तथा पुरजन सब ही दशनके अभिलाषी भेंट लेय लेय स‍मुख आए, अर रावणकी पूजा करते भए । जे बडे है तिनकी रावणने पूजा करी । रावणको सकल नमस्कार करते भए अर बडोको रावण नमस्कार करता भया । कईएकनिको कपादष्टिकरि, कईएकनिको मदहास्य करि, कईएकनिको वचननिकरि रावण प्रसन्न करता भया । बुद्धिके बलत जान्या ह सबका अभिप्राय जान । लका तो सदा ही मनोहर ह, परन्तु रावण बडो विजयकरि आया तात अधिक समागी ह । ऊचे रत्ननिके तोरण निरमापे, मदमद पवनकरि अनेक वणकी ध्वजा फरहर ह । कु कुमादि सुगध मनोज्ञ जलकरि सींच्या ह समस्त पथ्वीतल जहा और सब ऋतुके फूलनिकरि पूरित ह राजमाग जहा, अर पच वण रत्ननिके चूण करि रचे है मगलीक माडने जहा, अर दरवाजोपर थाभे ह पूण कलश, कमलोके पत्र पर पल्लवनित ढके । सम्पूण नगरी वस्त्राभरणकरि शोभित ह । जस देवोसे मडित इन्द्र अमरावतीमें आव, तस विद्याधरनिकरि बेढ्या रावण लकामें आया । पुष्पक विमानमे बठ्या, ददीप्यमान ह मुकट जाका, महारत्नोके बाजूबद पहरि, निमल प्रभाकरयुक्त, मोतियोका हार वक्षस्थल पर धार, अनेक पुष्पोके समूह करि विराजित, मानो वसतहीका रूप ह । सो ताको हष्त पूण नगरके नर नारी देखते देखते तप्त न भए । ऐसी मनोहर मूरत ह । आसीस देय ह । नानाप्रकारके वादित्रोके शब्द होय रहे ह । जय जयकार शब्द होय ह । आनन्दत नत्यकारिणी नत्य कर ह । इत्यादि हषसयुक्त रावणने लकामें प्रवेश किया । महा उत्साहकी भरी लका ताहि दखि रावण प्रसन्न भए । बधुजन सेवकजन सब ही आनदको प्राप्त भए । रावण राजमहलमें आये । देखो भव्यजीव हो ! रथनूपुरके धनी राजा इन्द्रने पूवपुण्यके उदयत समस्त वरियोके समूह जीतकर सव सामग्रीपूण तिनको तणवत जानि सबको जीतकर दोन्यो श्रेणिका राज बहुत वष किया । अर इन्द्रके

तुल्य विभूतिको प्राप्त भया। अर जब पुण्य क्षीण भया, तबि सकल विभूति विलय होयगई, रावण ताको पकड करि लकामें ले आया। तात मनुष्यके चपल सुखको धिक्कार होहु। यद्यपि स्वर्गलोकके देवनिका विनाशीक सुख ह तथापि आयुपयत और रूप न होय अर जब दूसरी पर्याय पाव तब औररूप होय। अर मनुष्य तो एक ही पर्यायमें अनेक दशा भोग। तात मनुष्य होय जे मायाका गव कर हैं ते मूख हैं। अर यह रावण पूवपुण्यत प्रबल वरीनिको जीतिकरि अति वद्धिको प्राप्त भया। यह जानकरि भव्य जीव सकल पापकमका त्याग कर शुभकमही को अगीकार करो।

इतिश्री रविषेणाचायविरचित मह पद्मपुराणसंस्कृतग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष इन्द्रका पराभवनाम बारहवा पव पूण भया॥ १२॥

अथानन्तर इन्द्रके सामत धनीके दु खत व्याकुल भए। तबि इन्द्रका पिता सहसार जो उदासीन श्रावक ह, तासो बीनती करि इन्द्रके छुडावनेके अर्थि सहसारको लेयकरि लकामें रावणके समीप गये। द्वारपालनिसो बीनती करि इन्द्रके सकल वत्तात कहकरि रावणके ढिग गये। रावणने सहसारको उदासीनश्रावक जानकरि बहुत विनय किया। इनको सिंहासन दिया, आप सिंहासनत उतरि बठे, सहसार रावणको विवेकी जानि कहता भया। हे दशानन! तुम जगजीत हो सो इन्द्रको भी जीत्या। तिहारि भुजानिकी सामथ्य सबनने देखी। ज बड राजा ह ते गववतनिके गव दूरकरि फिर कृपा कर, तात अब इन्द्रको छोडो! यह सहसारने कही अर जे चारो लोकपाल हुते तिनके मु हत भी यही शब्द निकस्या। मानो सहसारका प्रतिशब्द ही कहते भए। तब रावण सहसारको तो हाथ जोडि यही कही जो आप कहो सोई होगा, अर लोकपालनितैं हसकरि क्रीडारूप कही जो तुम चारो लोकपाल नगरविष बुहारी देवो, कमलनिका मकरद अर तृण कटकरहित पुरी करो, सुगन्ध करि पृथ्वीको सींचो अर पाच वणके सुगध मनोहर जो पुष्प तिनत नगरीको शोभित करो। यह बात जब रावणने

कही तब लोकपाल तो लज्जावान होय नीचे होय गये। अर सहसार अमतरूप वचन बोले, हे धीर तुम ज्ञाको जो आज्ञा करो सोही वह कर, तुम्हारी आज्ञा सर्वोपरि ह। यदि तुम सारिखे गुरुजन पृथ्वीके शिक्षादायक न होय तो पथ्वीके लोक अन्यायमागविष प्रवरत। यह वचन सुनकर रावण अति प्रसन्न भए, अर कही, हे पूज्य! तुम हमारे ताततुल्य हो, अर इन्द्र मेरा चौथा भाई, याको पायकर मैं सकल पथ्वी कटकरहित करूगा। याको इन्द्रपद वसा ही ह। अर यह लोकपाल ज्योंके त्यो ही हैं। अर दोन्यो श्रेणीके राज्यत और अधिक चाहो सो लेहू। मोम अर याम कछु भेद नाहीं। अर आप बडे हो, गुरुजन हो, जस इन्द्रको शिक्षा देवो तस मोहि देवो, तिहारी शिक्षा अलकाररूप ह। अर आप रथनूपुरविष विराजो अथवा यहा विराजो, दोऊ आपहीकी भूमि है। ऐस प्रिय वचनकरि सहस्रार का मन बहुत सतोष्या। तब सहसार कहने लाग्या, हे भव्य! तुम सारिखे सज्जन पुरुषनिकी उत्पत्ति सव लोकनिको आनन्दकारणी ह। हे चिरजीव! तिहारे शूरवीरपनेका आभूषण यह उत्तम विनय समस्त पथ्वीविष प्रशसाको प्राप्त भया ह। तिहारे देखनेकरि हमारे नेत्र सुफल भए। धन्य तिहारे माता पिता, जिनत तिहारी उत्पत्ति भई। कुन्दके पुष्पसमान उज्ज्वल तिहारी कीर्ति, तुम समथ अर क्षमावान, दातार अर निगर्व, ज्ञानी अर गुणप्रिय, तुम जिनशासनके अधिकारी हो। तुमने हमको जो कही यह तिहारा घर ह, अर जस इन्द्र पुत्र तस मै, सो तुम इन बातोके लायक हो, तिहारे मुखत ऐसे ही वचन झर। तुम महाबाहु, दिग्गजकी सूड समान भुजा तिहारी, तुम सारिखे पुरुष या ससारविष बिरले ह। परन्तु जन्मभूमि माता समान ह, सो छाडी न जाय। जन्मभूमिका वियोग चित्तको आकुल कर ह, तुम सव पथ्वीके पति हो, परन्तु तुमको भी लका प्रिय ह। मित्र बाधव अर समस्त प्रजा हमारे देखनेके अभिलाषी आवनेका माग देख हैं। तात हम रथनूपुर ही जायेंगे। अर चित्त सदा तुम्हारे समीप ही ह। हे देवनके प्यारे! तुम बहुतकाल पथ्वीकी निर्विघ्न रक्षा करो। तब रावणने ताही समय इन्द्रको बुलाया और सहसारके लार किया। अर आप रावण कितनीक दूर तक सहस्रार

को पहुँचाने गए। और बहुत विनयकरि सीख दीनी। सहस्रार इन्द्रको लेयकरि लोकपालनि सहित विजयार्धगिरिपर आए, सवराज ज्योका त्यो ही है। लोकपाल आयकरि अपने अपने स्थानकबठे परतु मान भगसे असाताको प्राप्त भए। ज्यो २ विजयार्धके लोक इन्द्रके लोकपालनिको और देवनिको देखै त्यो २ यह लज्जा कर नीचे होय जाय। अर इन्द्र क भी न तो रथनूपुर से प्रीति, न राणियोमें प्रीति, न उपवनादिमेंप्रीति न लोकपालोमें प्रीति, न कमलोके मकरदसो पीत होय रह्या है जल जिनका, ऐसे मनोहर सरोवर तिनम प्रीति, और न किसी क्रीडाविष प्रीति, यहातक कि अपने शरीरसो भी प्रीति नाहीं। लज्जाकर पूण है चित्त जाका। सो ताको उदास जानि अनेक विधिकर प्रसन्न किया चाहै और कथाके प्रसगत वह बात भुलाया चाहै परतु यह भूले नाहीं। सव लीला विलास तजे, अपने राजमहलके मध्य गधमादन पवतके शिखर समान ऊचा जो जिनमदिर ताक एक थभके माथेविष रह। कातिरहित होय गया है शरीर जाका। पडितनिकरि मडित यह विचार कर है कि धिक्कार है या विद्याधर पदके ऐश्वर्यको जो एक क्षणमात्रविष विलाय गया। जस शरद ऋतुके मेघनिके समूह अत्यन्त ऊचे होवें परतु क्षण मात्रविष विलय जाय। तस ते शस्त्र, ते हाथी, ते योधा, ते तुरग पूर्वे अनेक बार अदभुत कार्यक करणहारे समस्त तणसमान होयगए। अथवा कर्मोंकी यह विचित्रता है, कौन पुरुष अन्यथा करनेको समथ है ? तात जगतमें कम प्रबल है। म पूव नानाविधि भोग सामग्रियोक निपजावनवारे कम उपार्जे हुते सो अपना फल देयकरि खिरि गए जात यह दशा वरत है। रणसग्रामविष शूरवीर सामतनिका मरण होय तो भला, जाकरि पृथ्वीविष अपयश न होय। म जन्मत लेकर शत्रुओके सिरपर चरण देकर जिया। सो म इन्द्र शत्रुका अनुचर होयकर कसे राज्यलक्ष्मी भोगू ? तात अब ससारके इन्द्रियजनित सुखोकी अभिलाषा तजकर मोक्षपदकी प्राप्तिके कारण जे मुनिव्रत तिनको अगीकार करू। रावण शत्रुका भेष धरि मेरा महामित्र आया। तान मोहि प्रतिबोध दिया। म असार सुखके आस्वादविष आसक्त हुता। ऐसा विचार इन्द्रन किया। ताही समय निर्वाणसगम नामा चारण मुनि विहार करते

हुए आकाश मार्गत जाते हुते सो चैत्यालयनिके प्रभावकरि उनका आगे गमन न होय सक्या। तब वे चैत्यालय जानि नीचे उतरे, भगवानके प्रतिबिंबका दर्शन किया। मुनि चारज्ञानके धारक थे। सो उनको राजा इन्द्र ने उठकरि नमस्कार किया। मुनिके समीप जाय बैठ्या, बहुत देर तक अपनी निंदा करी। सर्वसंसारका वृत्तांत जाननहारे मुनिने परम अमृतरूप वचनकरि इन्द्रको समाधान किया कि—हे इन्द्र! जैसे अरहटकी घडी भरी रीति होय है अर रीती भरी होय है, तैसे यह संसारकी माया क्षणभंगुर है। याके और प्रकार होनेका आश्चर्य नाहीं। मुनिके मुखसो धर्मोपदेश सुन इन्द्रने अपने पूर्वभव पूछे। तब मुनि कहै है। कैसे है मुनि? अनेक गुणनिके समूहते शोभयमान हैं। हे राजन्! अनादिकालका यह जीव चतुरगतिविषै भ्रमण करै है, जो अनन्तभव धरै सो केवलज्ञानगम्य हैं। कई एक भव कहिए है सो सुन।

शिखापद नामा नगरविषै एक मानुषी महा दलिद्रनी जाका नाम कुलवती। सो चीपडी, अमनोज्ञ नेत्र, नाक चिपटी, अनेक व्याधिकी भरी, पापकर्मके उदयकरि लोगनिकी जूठ खायकर जीवै। खोटे वस्त्र, अभागिनी, फाट्या अंग महा रुक्ष खोटे केश, जहां जाय तहां लोक अनादर है, जाको कहीं सुख नाहीं। अंतकालविषै शुभमति होय एक मुहूर्तका अनशन लिया। प्राण त्यागकरि किंपुरुष देवकै शीलधरा नामा किन्नरी भई। तहांसो चय करि रत्ननगरविषै गोमुखनामा कलुंबी, ताके धरनी नामा स्त्री, ताके सहस्रभाग नामा पुत्र भया। सो परम सम्यक्त्वको पायकरि श्रावकके व्रत आदरे, शुक्रनामा नवमा स्वर्ग तहां जाय उत्तम देव भया। तहांसे चयकर महा विदेहक्षेत्रके रत्नसंचय नगरविषै मणि नामा मंत्री, ताके गुणावली नामा स्त्री, ताके सामंतवर्धन नामा पुत्र भया। सो पिताके साथ वैराग्य अंगीकार किया। अति तीव्र तप किए। तत्त्वार्थविषै लग्या है चित्त जाका, निर्मल सम्यक्त्वका धारी, कषायरहित, बाईस परीषह सहकरि शरीर त्याग नवग्रैवेयक गया। अहमिंद्रके बहुत काल सुख भोगकरि राजा सहस्रार विद्याधरके रानी हृदयसुन्दरी तिनकै तू इन्द्र नामा पुत्र भया। या रथनूपुर नगर

विषै जन्म लिया। पूर्वके अभ्यासकरि इन्द्रके सुखमें मन आसक्त भया। सो तू विद्याधरोंका अधिपति इन्द्र कहाया। अब तू वृथा मनविषै खेद करै है, जो मैं विद्याविषै अधिक हुता सो शत्रुनिकरि जीत्या गया है। सो हे इन्द्र! कोई निर्बुद्धि कोदो बोयकरि वृथा शालिकी प्रार्थना करै है। ये प्राणी जैसा कर्म करै हैं तैसा फल भोगै हैं। तैनें भोगका साधन शुभकर्म पूर्व किया हुता, सो क्षीण भया। कारण विना कार्यकी उत्पत्ति ना होय है। या बातका आश्चर्य कहा? तूने याही जन्मविषै अशुभ कर्म किए, तिनकरि यह अपमानरूप फल पाया। अर रावण तो निमित्तमात्र है। तैनें जो अज्ञान चेष्टा करी सो कहा नाहीं जानै है? तू ऐश्वर्य मदकरि भ्रष्ट भया बहुत दिन भए, तातैं तोहि याद नाहीं आवै है। एकाग्रचित्तकरि सुन! अरिंजयपुर में वह्निवेग नामा विद्याधर राजा, ताकी रानी वेगवती, पुत्री अहिल्या, ताका स्वयंबरमंडप रच्या हुता। तहां दोनों श्रेणिके विद्याधर अति अभिलाषी होय विभवकरि शोभायमान गये। अर तू भी बडी सम्पदासहित गया। अर एक चन्द्रावर्त नामा नगरका धनी राजा आनंदमाल सो भी तहां आया। अहिल्याने सबको तजकरि ताके कंठविषै वरमाला डाली। कैसी है अहिल्या? सुन्दर है सर्व अंग जाका। सो आनंदमाल अहिल्याको परणकरि जैसे इन्द्र इन्द्राणीसहित स्वर्गलोकमें सुख भोगै, तैसे मनवांछित भोग भोगता भया। सो जा दिनतैं अहिल्या परणी ता दिनतैं तेरे यासों ईर्षा बढी। तैनें वाको अपना बडा बैरी जान्या। कईएक दिन वह घर विषै रह्या। फिर वाको ऐसी बुद्धि उपजी कि यह देह विनशीक है, यासों मुझे कछु प्रयोजन नाहीं, अब मैं तप करूं जाकरि संसारका दुःख दूर होय। ये इन्द्रियनिके भोग महाठग, तिनविषै सुखकी आशा कहां? ऐसा मनमें विचार करि वह ज्ञानी अंतर आत्मा सर्व परिग्रहको तजकरि परम तप आचरता भया। एक दिन हंसावली नदी के तीर कायोत्सर्ग धरै तिष्ठै था सो तैनें देख्या। ताके देखनेमात्र रूप ईंधनकरि बढ़ी है क्रोधरूप अग्नि जाके, सो तैं मूर्खनें गर्वकर हासी करी। अहो आनन्दमाल! तू काम भोगविषै अति आसक्त हुता, अहिल्या का रमण अब कहा? विरक्त होय पहाड सारिखा निश्चल तिष्ठ्या है। तत्वार्थके चिंतवन

विष लग्या ह अत्यत स्थिर मन जाका। या भाति परम मुनिको तने अवज्ञा करी। सो वह तो आत्म सुखविष मग्न, तेरी बात कुछ हृदयविष न धरी। उनके निकट उनका भाई कल्याण नामा मुनि तिष्ठ था तान तोहि कही—यह महामुनि निरपराध, तन इनकी हासी करी। सो तेरा भी पराभव होगा। तब तेरी स्त्री सवर्श्री सम्यग्दृष्टि साधूनिकी पूजा करनहारी, तान नमस्कारकरि कल्याणस्वामीको उपशात किया। जो वह शात न करती तो तू तत्काल साधूनिकी कोपाग्नित भस्म हो जाता। तीनलोकमें तप समान कोई बलवान नाहीं। जसी साधुओंकी शक्ति ह, तसी इन्द्रादिक देवोकी शक्ति भी नाहीं। जो पुरुष साधु लोगोंका निरादर कर ह ते इस भवमें अत्यत दुख पाय नरक निगोदविष पडे हं। मनकर भी साधुओ का अपमान न करिए। जे मुनिजनका अपमान कर ह सो इसभव अर परभवविषै दुखी होय ह। क्रूरचित्त, मुनियोको मार अथवा पीडा कर ह, सो अनतकाल दु ख भोगव है। मुनिकी अवज्ञा समान और पाप नाहीं, मनवचनकायकरि यह प्राणी जसे कम कर ह तसे ही फल पावै ह। या भाति पुण्य पाप कर्मोंके फल भले बुरे जीव भोग ह। ऐसा जानकरि धमविष बुद्धिकरि, अपने आत्माकों ससारके दु खनित निवत्ति करो। महा मुनिके मुखसो राजा इन्द्र पूवभव सुन आश्चयको प्राप्त भया। नमस्कारकरि मुनिसो कहता भया—हे भगवान! तिहारे प्रसादत मने उत्तम ज्ञान पाया अब सकल पाप क्षणमात्रविष विलय गए, साधुनिके सगत जगतविष कुछ दुलभ नाहीं। तिनके प्रसादकर अनन्त जन्मविष न पाया जो आत्मज्ञान सो पाइए ह। यह कहकरि मुनिको बारम्बार वदना करी। मुनि आकाशमाग विहार कर गए। इन्द्र गहस्थाश्रमत परम वराग्यको प्राप्त भया। जलके बुदबुदा समान शरारको असार जानि धमविष निश्चल बुद्धिकर अपनी अज्ञान चेष्टाको निदता सता वह महापुरुष अपनी राजविभूति पुत्रका देयकरि अपने बहुत पुत्रनिसहित अर लोकपालनिसहित तथा अनेक राजानि सहित सवकमनिकी नाशकरनहारी जिनेश्वरी दीक्षा आदरी, सव परिग्रहका त्याग किया। निमल ह चित्त जाका, प्रथम अवस्थाविष जसा शरीर भोगम लगाया हुता तसा ही तपके समूहमें लगाया।

ऐसा तप औरनित न बन पडे । पुरुषोकी बडी शक्ति ह जसी भोगो में प्रवर्तें तस विशुद्धभावविष प्रवर्तें ह । राजा इन्द्र बहुत काल तपकरि शुक्लध्यानके प्रतापत कर्मनिका क्षयकरि निर्वाण पधारे । गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसो कह ह–देखो ! बडे पुरुषोके चरित्र आश्चयकारी ह, प्रबल पराक्रमके धारक बहुत काल भोगकरि वराग्य लेय अविनाशीसुखको भोगव ह । याम कुछ आश्चय नाहीं । समस्त परिग्रहका त्यागकर क्षणमात्रविष ध्यानके बलत मोटे पापनिका क्षय कर ह । जस बहुत कालत इधनकी राशि सचय करी सो क्षणमात्रमें अग्निके सयोगकरि भस्म होय ह । ऐसा जानकर हे प्राणी ! आत्म कल्याणका यत्न करो । अत करण विशुद्ध करो, मृत्युके दिनका कुछ निश्चय नाहीं । ज्ञानरूप सूयके प्रतापकरि अज्ञान तिमिरको हरो ।

इतिश्री रविषेणाचायविरचित मह पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष इन्द्रका निर्वाणगमन नामा तेरहवा पव पूण भया ॥ १३ ॥

अथानन्तर रावण विभव और देवेंद्रसमान भोगनिकरि मूढ ह मन जाका, सो मनवाछित अनेक लीला विलास करता भया । यह राजा इन्द्रका पकडनहारा एकदिन सुमेरुपवतके चत्यालयनिकी बदना करि पीछे आवताहुता । सप्त क्षेत्र, षट कुलाचल तिनकी शोभा देखता नानाप्रकारके वक्ष नदी सरोवर स्फटिकमणिहू ते निमल महा मनोहर अवलोकन करता थका, सूयके भवन समान विमानमें विराजमान, महा विभूतिकरि सयुक्त, लकाविष आवनेका ह मन जाका, सो तत्काल महा मनोहर उतगनाद सुनता भया । तब महा हषवान होय, मारीच मत्रीको पूछता भया–हे मारीच ! यह सुन्दर महानाद काहेका ह और दशोदिशा काहेत लाल होय रही ह । तब मारीचने कहा–हे देव ! यह केवलीकी गधकुटी ह और अनेक देव दशनको आव ह । तिनक मनोहर शब्द होय रहे ह । अर देवनि के मुकुटआदि की किरणनिकरि यह दशोदिशा रगरूप होयरही ह । इस स्वणपवतविष अनतवीय मुनि तिनको

केवलज्ञान उपज्या है। ये वचन सुनकरि रावण बहुत आनन्दको प्राप्त भया। सम्यकदर्शनकरि संयुक्त है, अर इन्द्रका वश करणहारा है, महाकांतिका धारी आकाशतै केवलीकी वंदनाके अर्थि पृथ्वीपर उतरचा, वंदनाकर स्तुति करी। इन्द्रादिक अनेक देव केवलीके समीप बैठे हुते, रावण भी हाथ जोड नमस्कारकरि अनेक विद्याधरनि सहित उचित स्थानमें तिष्ठचा।

चतुरनिकायके देव तथा तिर्यच अर अनेक मनुष्य केवलीके समीप तिष्ठे हुते। तासमय किसी शिष्यने पूछ्या। हे देव, हे प्रभो! अनेक प्राणी धर्म अर अधर्मके स्वरूप जाननेकी तथा तिनके फल जाननेकी अभिलाषा राखै हैं, अर मुक्तिके कारण जानना चाहै है, सो तुम ही कहने योग्य हो। तब भगवान केवलज्ञानी अनंतवीर्य मर्यादारूप अक्षर जिनमें विस्तीर्णअर्थ, अति निपुण शुद्ध संदेहरहित सबके हितकारी प्रियवचन कहते भए। अहो भव्य जीव हो! यह जीव चेतनालक्षण अनादिकालका निरन्तर अष्टकर्मनिकरि बंध्या, आच्छादित है आत्मशक्ति जाकी, सो चतुरगतिमें भ्रमण करै है, चौरासीलाख योनियोमें नानाप्रकार इंद्रियोकरि उपजी जो वेदना ताहि भोगता संता सदाकाल दुखी होय रागी द्वेषी मोही हुआ, कर्मनिके तीव्र मंद मध्य विपाकतै कुम्हारके चक्रवत पाया है चतुरगतिका भ्रमण जान, ज्ञानावरणी कर्मकरि आच्छादित है ज्ञान जाका, सो अतिदुर्लभ मनुष्यदेही पाई। तो भी आत्म हितको नाहीं जानै है। रसनाका लोलुपी, स्पर्श इन्द्रीका विषयी, पांच हूँ इन्द्रियोके वश भया। अति निंद्य पापकर्मकरि नरकविषै पडे है। जैसे पाषाण पानीमें डूबै है। कैसा है नरक? अनेक प्रकारकरि उपजे जे महादुख तिनका सागर है। महा दुखकारी है। जे पापी क्रूरकर्मा धनके लोभी, माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, मित्र इत्यादि सुजन तिनको हनै है, जगतमें निंद्य है चित्त जिनका, ते नरकमें पडे है। तथा जे गर्भपात करै है तथा बालक हत्या करै है, वृद्धको हनै है, अबला (स्त्रियो) की हत्या करै है, मनुष्योको पकडे है, रोकै है बांधै है, मारै है, पक्षी तथा मृगनिको हनै है, जे कुबुद्धि स्थलचर जलचर जीवो की हिंसा करै है, धर्मरहित है परिणाम जिनका ते महावेदनारूप जो नरक ता विषै पडे है। अर

जे पापी शहदके अर्थि मधुमाखियोका छाता तोडे है तथा मास आहारी मद्यपायी शहदके भक्षण करन हारे, वनके भस्म करनहारे, तथा ग्रामनिके बालनहारे, बदीके करणहारे गायनके घेरनहारे, पशुघाती महा हिसक, भील, अहेडी, बागरा, पारधी इत्यादि पापी महानरकमैं पडे है। अर जे मिथ्यावादी परदोषके भाषणहारे, अभक्ष्यके भक्षण करनहारे, परधनके हरणहारे, परदाराके रमनहारे, वेश्यानिके मित्र है ते घोर नरकमे पडे है जहा काहू की शरण नाहीं। जे पापी मासका भक्षण करे है ते नरक में प्राप्त होय है तहा तिनहीका शरीर काट काट तिनके मुखविष दीजिए है, अर ताते लोहेके गोले तिनके मुखमें दीजिए है। अर मद्यपान करनेवालोके मुखमें सीसा गाल गाल डारिये है। अर परदारा लपटियोका ताती लोहेकी पुतलियोसे आलिगन करावे है। जे महापरिग्रहके धारी महा आरभी, क्रूर है चित्त जिनका, प्रचड कमके करनहारे है ते सागरापयत नरकमें बसे है। साधुओके द्वेषी, पापी मिथ्या दृष्टि, कुटिल कुबुद्धी रौद्रध्यानी मरकर नरकमे प्राप्त होय है। जहा विक्रियामई कुहाडे तथा खडग, चक्र, करोत, अर नानाप्रकारके विक्रियामई शस्त्र तिनकरि खड खड कीजिए है, फिर शरीर मिल जाय है, आयु पर्यंत दुख भोगवे है। तीक्ष्ण है चौंच जिनकी, ऐसे मायामई पक्षी ते तन विदारे है, तथा मायामई सिह व्याघ स्वान सप अष्टापद स्याली बीछू तथा और प्राणियोसे नानाप्रकारके दुख पावे है। नरकके दुखनिको कहा लग वरणन करिए। अर जे मायाचारी प्रपची विषयाभिलाषी है ते प्राणी तिर्यचगतिको प्राप्त होय है, तहा परस्पर बध अर नानाप्रकारके शस्त्रनकी घातते महादुख पावे है। तथा वाहन तथा अति भारका लादना शीत उष्ण क्षुधा तृषादिकरि अनेक दुख भोगवे है। यह जीव भवसकटविषे भ्रमता स्थलविषे जलविषे गिरिविषे तरुविषे और गहनवनविषे अनेक ठौर सूता। एकेंद्री वेइद्री, तेइद्री, चौइद्री, पचेंद्री अनेक पर्यायनिमें अनेक जन्म मरण किए। जीव अनादिनिधन है, याका आदि अत नाहीं। तिलमात्र भी लोकाकाशविषे प्रदेश नाहीं जहा ससारभ्रमणविषे इस जीवने जन्म मरण न किए हो। अर जे प्राणी निगर्व है, कपटरहित, स्वभाव ही कर सतोषी है, ते मनुष्यदेहको पावै

ह । सो यह नर देह परम निर्वाण सुखका कारण ताहि पायकरि भी जे मोहमदकरि उन्मत्त कल्याण-मार्गको तजकरि क्षणमात्रमें सुखकेअर्थि पाप कर ह, ते मूख ह । मनुष्य भी पूवकमके उदयकरि कोई आर्यखडविष उपज ह, कोई म्लेच्छखडविष उपज ह तथा कोई धनाढ्य, कोई अत्यन्त दरिद्री होय है, कोई कमके प्रेरे अनेक मनोरथ पूण कर ह, कोई कष्टसो पराए घरोमें प्राणपोषण कर ह, केई कुरूप केई रूपवान, केई दीघआयु, कई अल्पआयु, केई लोकनिको वल्लभ, केई अभावने, केई सभाग, केई अभागे, केई औरोको आज्ञा देवे, केई औरनके आज्ञाकारी, केई यशस्वी, केई अपयशी, केई शूर, केई कायर, कई जलविष प्रवेश कर, कई रणमें प्रवेश कर, कई देशातरमें गमन कर, कई कषिकर्म करै, कई व्यापार कर, कई सेवा कर । या भाति मनुष्यगतिविष भी सुखदुखकी विचित्रता ह । निश्चय विचारिए तो सवगतिमें दुख ही ह, दुखहीको कल्पनाकर सुख मान ह । अर मुनिव्रत तथा श्रावकके व्रतनिकरि तथा अव्रत सम्यक्त्वकरि तथा अकामनिजरातैं तथा अज्ञानतपतैं देवगति पाव ह । तिनमें कई बडी ऋद्धिके धारी, कई अल्पऋद्धिके धारी, आयु काति प्रभाव बुद्धि सुख लेश्याकरि ऊपरले देव चढते, अर शरीर अभिमान अर परिग्रहसे घटते, देवगतिमें भी हष विषादकर कमका सग्रह कर है । चतुरगतिमें यह जीव सदा अरहटकी घडीके यत्र समान भ्रमण कर ह । अशुभ सकल्पनितैं दुख को पाव ह, अर दानके प्रभावतैं भोगभूमिष भोगनिको पाव ह । जे सव परिग्रह रहित मुनिव्रतके धारक ह सो उत्तमपात्र कहिये, अर जे अणुव्रतके धारक श्रावक ह तथा आर्यिका सो मध्यमपात्र कहिए ह । अर व्रतरहित सम्यग्दष्टि ह सो जघन्यपात्र कहिए ह । इन पात्रनिको विनयभक्तिकरि आहार देना पात्रका दान कहिये । अर बाल वद्ध अध पगु रोगी दुबल दुखित भुखित इनको करुणाकर अन्न जल औषधि वस्त्रादिक दीजिए सो करुणादान कहिये । पात्रक दानकरि उत्कष्ट भोगभूमि, अर मध्यपात्रके दानकरि मध्य भोगभूमि, अर जघन्यपात्रके दानकरि जघन्य भोगभूमि होय ह । जो नरक निगोदादि दुखनितैं रक्षा कर सो पात्र कहिये । सो सम्यग्दृष्टि मुनिराज है, ते जीवनकी रक्षा कर है । जे सम्यक

दर्शन, ज्ञान, चारित्रकर निर्मल है ते परमपात्र कहिए। जिनके मान अपमान, सुख दुख, तृण कांचन दोनों बराबर है, तिनको उत्तमपात्र कहिए। जिनके रागद्वेष नाहीं। जे सर्वपरिग्रहरहित महा तपस्वी, आत्मध्यानविषै तत्पर ते मुनि उत्तम पात्र कहिए, तिनको भावकरि अपनी शक्तिप्रमाण अन्न जल औषध देनी तथा वनमें तिनके रहनेके निमित्त वस्तिका करावनी तथा आर्यानिको अन्न जल वस्त्र औषधी देनी। श्रावक श्राविका सम्यग्दृष्टियोको अन्न जल वस्त्र औषधि इत्यादि सब सामग्री देनी। बहुत विनयकरि सो पात्रदानकी विधि है, दीन अंधादि दुःखित जीवोको अन्न वस्त्रादि देना। बंदीत छुडावना। यह करुणादानकी रीति है।

यद्यपि यह पात्रदान तुल्य नाहीं। तथापि योग्य है, पुण्यका कारण है। अर पर उपकार सो ही पुण्य है। अर जैसे भले क्षेत्रमें बोया बीज बहुत गुणा होय फलै है तैसे शुद्धचित्तकरि पात्रनिको दिया दान अधिक फलको फलै है, अर जे पापी मिथ्यादृष्टि रागद्वेषादियुक्त व्रतक्रिया रहित महामानी ते पात्र नाहीं, अर दीन हू नाहीं। तिनको देना निष्फल है। नरकादिका कारण है। जैसे ऊसर (कल्लर) खेतविषै बोया बीज वृथा जाय है और जैसे एक कूपका जल ईखविषै प्राप्त भया मधुरताको लहै है, अर नींब विषै गया कटुकताको भजै है तथा एक सरोवरका जल गायने पिया सो दूधरूप होय परणवै है, अर सपने पिया विषहोय परणवै है, तैसे सम्यकदृष्टि पात्रनिको भक्तिकर दिया जो दान सो शुभफलको फलै है। अर पापी पाखंडी मिथ्यादृष्टि अभिमानी परिग्रही तिनको भक्तिकरि दिया दान अशुभफलको फलै है। जे मांसआहारी मद्यपायी कुशीली आपको पूज्य मानैं, तिनका सत्यकार न करना, जिनधर्मियोकी सेवा करनी, दुःखियोको देख दया करनी, अर विपरीतियोसे मध्यस्थ रहना, दया सब जीवोपर राखनी, किसीको क्लेश न उपजावना। अर जे जिनधर्मतै पराङ्मुख है, परवादी है ते भी धर्मको करना ऐसा कहै है, परन्तु धर्मका स्वरूप जानै नाहीं। तातै जे विवेकी हैं ते परखकरि अंगीकार करै है। कैसे हैं विवेकी ? शुभोपयोगरूप है चित्त जिनका, ते विचार करे है—जे गृहस्थ स्त्रीसंयुक्त आरम्भी, परिग्रही, हिंसक

कामक्रोधादिकर सयुक्त, गर्भवत, धनाढ्य अर आपको पूज्य मान तिनको भक्तिकरि बहुत धन देना ताविष कहा फल ह ? अर तिनकरि आप कहा पाव ? अहो यह बडा अज्ञान ह, कुमारगत ठगे जीव ताहि पात्रदान कह ह और दु खी जीवोको करुणादान न कर ह। दुष्ट धनाढ्यनिको सव अवस्थामें धन देय ह। सो वथा धनका नाश कर ह, धनवतनिको देनेतैं कहा प्रयोजन, ? दुखियोको देना काय कारी ह। धिक्कार ह तिन दुष्टनिको जे लोभके उदयकरि खोटे ग्रथ बनाय मूढ जीवनिको ठगैं ह, जे मषावादके प्रभावत मासहूका भक्षण ठहराव ह। पापी पाखडी मासका भी त्याग न कर तो और कहा करेंगे ? जे क्रूर मासका भक्षण कर ह तथा जो मासका दान कर ह ते घोरवेदनायुक्त जो नरक ताविष पडे ह और जे हिसाके उपकरण शस्त्रादिक तथा जे बधनके उपाय पासी इत्यादि तिनका दान कर ह तथा पचेंद्रिय पशुओका दान कर ह, और जे इन दोनोको निरूपण कर ह ते सवथा निद्य ह। जो कोई पशुका दान कर और वह पशु बाधनेकरि मारबेकरि ताडवेकरि दुखी होय तो देनहारे को दोष लाग और भूमिदान भी हिसाका कारण ह। जहा हिसा तहा धम नाहीं। चत्यालयके निमित्त भूमिका दना युक्त ह, और प्रकार नाहीं। जो जीव घातकरि पुण्य चाह ह, ते जीव पाषाणत दुग्ध चाह ह। तातैं एकेंद्री आदि पचेंद्री पयत सब जीवनिको अभयदान देना और विवकियोको ज्ञानदान देना, पुस्तकादि देना और औषध अन्न जल वस्त्रादि सबको देना, पशुओको सूखे तण देना। और जससमुद्र विष सीप मेघका जल पिया सो मोती होय परणव ह, तैस ससारविष द्रव्यके योगत सुपात्रनिको यव आदि अन्न भी दिये तो महा फलको फल ह, अर जो धनवान होय सुपात्रोको श्रेष्ठ वस्तुका दान नाहीं कर ह सो निद्य ह। दान बडा धम ह, सो विधिपूवक करना। पुण्य पापविषैं भाव ही प्रधान ह। जो विना भाव दान कर हैं सो गिरिके सिर पर बरसे जल समान ह, सो कायकारी नाहीं। क्षेत्रविष बरसे ह सो कायकारी ह। जो कोई सवज्ञ वीतरागदेवको ध्याव ह और सदा विधिपूवक दान कर ह ताके फलको कौन कह सक ? तातै भगवानके प्रतिबिब तथा जिनमन्दिर, जिनपूजा, जिनप्रतिष्ठा, सिद्धक्षेत्रोकी

यात्रा, चतुरविध सघकी भक्ति, शास्त्रोका सव देशोविषं प्रचार करना। यह धन खचनेके सप्त महाक्षेत्र ह। तिनविषं जो धन लगावै सौ सफल ह। तथा करुणादान परोपकारविषं लाग सो सफल ह।

अर जे आयुधका ग्रहण कर ह ते द्वेषसयुक्त जानने। जिनके रागद्वेष ह तिनके मोह भी ह। अर जे कामिनीके सगतैं आभूषणोको धारण कर ह ते रागी जानने। अर मोह विना रागद्वेष होय नाहीं। सकल दोषो का मोह कारण ह। जिनके रागादि कलक ह ते ससारी जीव ह। जिनके ये नाहीं ते भगवान ह। जे देशकालकामादिके सेवनहारे ह ते मनुष्यतुल्य ह तिनमें देवत्व नाहीं। तिनकी सेवा शिवपुरका कारण नाही। अर काहूके पूवपुण्यके उदयकरि शुभ मनोहर फल होय ह, सो कुदेवसेवाका फल नाहीं। कुदेवनकी सेवातैं सासारिक सुख भी न होय तो शिवसुख कहातैं होय? तातैं कुदेवनिको सेवना बालूको पेल तेलका कढना ह। अर अग्निके सेवनतैं तषाका बुझावना ह। जैसैं कोई पगुको पगु देशातर न ले जाय सक तसै कुदेवोके आराधनतैं परमपदकी प्राप्ति कदाचित न होय। भगवान विना और देवो के सेवनका क्लेश कर सो वथा ह। कुदेवनमें देवत्व नाहीं। अर जे कुदेवोके भक्त ह ते पात्र नाहीं। लोभकरि प्रेर प्राणी हिसाकमविषं प्रवरत ह, हिसाका भय नाहीं। अनेक उपायकर लोकनिसैं धन लेय ह। ससारी लोक भी लोभी, सो लोभियोप ठगाव ह। तातैं सवदोषरहित जिनआज्ञा प्रमाण जो महा दान कर, सो महाफल पाव। वाणिज्य समान धम ह, कभी किसी वाणिज्यविषं अधिक नफा होय, कभी अल्प होय, कभी टोटा होय, कदे मूल ही जाता रह। अल्पत बहुत होय जाय, बहुततैं अल्प होय जाय। अर जैसैं विषका कण सरोवरीमें प्राप्त भया सरोवरीको विषरूप न कर तैसैं चत्यालयादि निमित्त अल्प हिसा सो धमका विघ्न न कर, तातैं गहस्थी भगवानके मदिर कराव। कसो ह गृहस्थी? जिनेंद्रकी भक्तिविषै तत्पर ह, अर व्रत क्रियामैं प्रवीण ह। अपनी विभूतिप्रमाण जिनमदिर कराय जल चदन धूप दीपादिकर पूजा करनी। जे जिनमदिरादिमें धन खरचैं, ते स्वगलोकमें तथा मनुष्य लोकविषै अत्यन्त ऊचे भोग भोग परमपद पाव ह। अर जे चतुरविधसघको भक्तिपूवक दान कर ह,

ते गुणनिके भाजन हैं, इन्द्रादिपदके भोगोको पावै है। तातैं जे अपनी शक्ति प्रमाण सम्यग्दृष्टि पात्रनिको भक्तिकरि दान करै है तथा दुखियोको दयाभावकरि दान करै है सो धन सफल है। अर कुमारगत लाग्या जो धन सो चोरनिकरि लूट्या जानो। अर आत्मध्यानके योगतैं केवलज्ञानकी प्राप्ति होय है। जिनको केवलज्ञान उपज्या तिनको निर्वाणपद है। सिद्ध सब लोकके शिखर तिष्ठै हैं। सब बाधा रहित, अष्टकमरहित, अनतज्ञान, अनतदशन, अनतसुख, अनतवीयकरि सयुक्त, शरीरतै रहित, अमूर्तिक पुरुषाकार जन्ममरणतै रहित अविचल विराजै है। जिनका ससारविषै आगमन नाहीं। मन इन्द्रीनतैं अगोचर है। यह सिद्धपद धर्मातमा जीव पावै है। अर पापी जीव लोभरूप पवनसे वृद्धिको प्राप्त भई जो दुखरूप अग्नि, तामैं बलतै, सुकतरूप जल विना सदा क्लेशको पावै है, पापरूप अधकारके मध्य तिष्ठे मिथ्यादशनके वशीभूत है। कोई एक भव्यजीव धमरूप यकी किरणनिकरि पाप तिमिरको हर, केवलज्ञानको पावै है। अर ये जीव अशुभरूप लोहके पिंजरेमें पडे आशारूप पाशकरि बेढे धमरूप बाधव करि छूटै है। व्याकरणहूतैं धमशब्दका यही अथ होय है—जो धम आचरतासता दुर्गतिविषै पडते प्राणियोको थाभै सो धम कहिए। ता धमका जो लाभ सो लाभ कहिए। जिनशासनविषै जो धमका स्वरूप कह्या है सो सक्षेपसे तुमको कहै हैं। धमके भेद अर धमके फलके भेद एकाग्र मनकर सुनो। हिंसातैं, असत्यतैं, चोरीतैं, कुशीलतैं धन अर परिग्रहके सग्रहतैं विरक्त होना, इन पापोका त्याग करना सो महाव्रत कहिए। विवेकियोको उसका धारण करना, अर भूमि निरख कर चलना, हितमित सदेहरहित वचन बोलना, निर्दोष आहार लेना, यत्नतैं पुस्तकादि उठावना मेलना, निर्जंतुभूमिविषै शरीरका मल डारना, ये पाचसमिति कहिए, तिनका पालना यत्नकरि। अर मनवचनकायकी जो वृत्ति ताका अभाव, ताका नाम तीन गुप्ति कहिए। सो परम आदरतैं साधुनिको अंगीकार करनी। क्रोध मान माया लोभ ये कषाय जीवके महाशत्रु है। सो क्षमातैं क्रोधको जीतना, अर मादव कहिए निगव परिणाम तिनकरि मानको जीतना। अर आजव कहिए—सरल परिणाम—निकपट भाव ताकरि

मायाचारको जीतना। अर संतोषतैं लोभको जीतना। शास्त्रोक्त धर्मके करनहारे जे मुनि तिनको कषायोंका निग्रह करना योग्य है। ये पांच महाव्रत, पंचसमिति, तीन गुप्ति कषायनिग्रह मुनिराजका धर्म है। अर मुनिका मुख्यधर्म त्याग है। जो सर्वत्यागी होय सो ही मुनि है। अर स्पर्शन रसना घ्राण चक्षु श्रोत्र ये प्रसिद्ध पांच इन्द्री तिनका वश करना ही सो धर्म है। अर अनशन कहिए उपवास, अवमौदर्य कहिए अल्प आहार, व्रतपरिसंख्या कहिए विषम प्रतिज्ञाका धारणा, अटपटी बात विचारनी या विधि आहार मिलेगा तो लेवेंगे नातर नाहीं। अर रसपरित्याग कहिए रसनिका त्याग, विविक्त शय्यासन कहिए एकांत वनविषै रहना, स्त्री तथा बालक तथा नपुंसक तथा ग्राम्यपशु इनकी संगति साधुवोंको न करनी। तथा और भी संसारी जीवोंकी संगति न करनी। मुनिको मुनिहीकी संगति करनी। अर कायक्लेश कहिए ग्रीष्ममें गिरिशिखर, शीतविषै नदीके तीर, वर्षामें वृक्षके तले, तीनोंकालके तप करने तथा विषमभूमिविषै रहना। मासोपवासादि अनेक तप करना, ये षट् बाह्य तप कहे। अर आभ्यंतर षट तप सुनो—प्रायश्चित्त कहिए जो कोई मनतैं तथा वचनतैं तथा कायतैं दोष लाग्या सो सरल परिणामकरि श्रीगुरुके निकट प्रकाशकरि तपादि दंड लेना। बहुरि विनय कहिये देवगुरु शास्त्र साधर्मियोंका विनय करना तथा दर्शन ज्ञान चारित्रका आचरण सोही इनका विनय, अर इनके जे धारक तिनका आदर करना, आपतैं जो गुणाधिक होय ताहि देखकरि उठ खडा होना, सन्मुख जाना। आप नीचे बैठना उनको ऊंचे बिठाना। मिष्ट वचन बोलना, दुख पीडा मेटनी, अर वैयावृत कहिए जे तपकरि तप्तायमान हैं रोगकरि युक्त हैं गात्र जिनका, वृद्ध हैं अथवा नववयके जे बालक हैं तिनका नानाप्रकार यत्न करना, औषध पथ्य देना, उपसर्ग मेटना, अर स्वाध्याय कहिए जिनशासनका वाचना पूछना। आम्नाय कहिये परिपाटी, अनुप्रेक्षा कहिए बारम्बार चितारना, धर्मोपदेश कहिए धर्मका उपदेश देना। अर व्युत्सर्ग कहिये शरीरका ममत्व तजना तथा एकदिवस आदि वर्ष पर्यंत कायोत्सर्ग धरना। अर ध्यान कहिये आर्तरौद्र ध्यानका त्यागकर धर्मध्यान शुक्लध्यानका ध्यावना, ये छह प्रकार

के आभ्यतर तप कहे। ये बाह्याभ्यतर द्वादश तप सब ही धम है। या धमके प्रभावसे भव्यजीव कम निका नाश कर ह, अर तपके प्रभावकरि अदभुत शक्ति होय ह। सब मनुष्य अर देवोको जीतनेकू समथ होय ह। विक्रियाशक्तिकरि जो चाह सो कर। विक्रियाके अष्ट भेद है। अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व, वशित्व। सो महामुनि तपोनिधि परम शात हैं, सकल इच्छात रहित ह, अर एसी सामथ्य ह—चाह तो सूयका आताप निवार, चाहें तो जल वृष्टि करि क्षण-मात्रविष जगतको पूण कर, चाह तो भस्म कर, क्रूरदृष्टिकर देख तो प्राण हर, कृपादष्टिकर देख तो रगसे राजा कर, चाह तो रत्न स्वणकी वर्षा कर, चाह तो पाषाणकी वर्षा कर, इत्यादि सामथ्य ह, परन्तु कर नाहीं। कर तोचारित्रका नाश होय। तिन मुनियोके चरणरजकर सब रोग जाय। मनुष्यो को अदभुत विभवके कारण तिनके चरण कमल ह। जीव धमकर अनतशक्तिको प्राप्त होय ह, धम करि कमनिको हर ह। अर कदाचित कोउ जन्म लेय तो सौधर्म स्वग आदि सर्वार्थसिद्धिपर्यंत जाय स्वगविष इन्द्रपद पाव। तथा इन्द्र समान विभूतिके धारक देव होय। जिनके अनेक खणके मदिर स्वणके स्फटिक मणिके, वडूयमणिके थभ, अर रत्नमई भीति, देदीप्यमान अर सुन्दर झरोखनिकरि शोभायमान, पदमरागमणि आदि नानाप्रकारकी मणिके शिखर ह जिनके, अर मोतियोकी झालरोसे शोभित अर जिनमहलो में अनेक चित्राम सिहोके, गजोके, हसोके स्वानोके, हिरणोके, मयूर कोकिलादिकोके दोनो भींतिविष रत्नमई चित्राम शोभायमान ह। चन्द्रशालादिकरि युक्त, ध्वजोकी पक्तिकर शोभित, अत्यन्त मनके हरणहारे, मदिर सजे ह। आसनादिकरि सयुक्त जहा नानाप्रकारके वादित्र बाजे ह, आज्ञाकारी सेवक देव अर महामनोहर देवागना, अदभुत देवलोकके सुख, महा सुन्दर सरोवर, कमलादिक रसयुक्त कल्पवक्षोके वन, विमान आदि विभूतियें, यह सभी जीव धमके प्रभावकरि पाव ह। अर कसे ह स्वग निवासी देव ? अपनी कातिकरि अर दीप्तिकरि चाद सूयको जीत ह। स्वगलोकविष रात्रि अर दिवस नाहीं। निद्रा नाहीं। अर देवोका शरीर माता पितासे उत्पन्न नहीं होता। जब अगला देव खिर जाय

तब नया देव उत्पादिक शय्याविष उपज ह। जस कोई सूता मनुष्य सेजतैं जाग उठ तस क्षणमात्रमें देव उत्पादिक शय्याविष नवयौवनको प्राप्त भया प्रकट होय ह। कसा ह तिनका शरीर ? सात उप धातु रहित, निमल, रज पसेव अर रोगनित रहित, सुगध पवित्र कोमल, परम शोभायुक्त, नेत्रोको प्यारा, ऐसा उत्पादिक शुभ वक्रियक देवोका शरीर होय, सो ये प्राणी धमकरि पाव ह। जिनके आभूषण महा ददीप्यमान तिनकी कातिके समूह करि दशोदिशामें उद्योत होयरहा ह। अर तिनके देवनके देवागना महासु दर ह, कमनोके पत्र समान स दर ह चरण जिनके, अर कलेके थभ समान ह जघा जिनकी, काचीदाम(तागडी)करि शोभित ह सु दर कटि अर नितब जिनके। जस गजनिके घटोका शब्द होय तसैं काचोदामकी क्षुद्र घटिकनिका शब्द होय है। उगते च द्रमासैं अधिक काति धर ह। मनोहर ह स्तनमडल जिनका, रत्नोके समूहकरि ज्योतिको जीत अर चादनीको जीत, ऐसी ह प्रभा जिनकी, मालतीकी जो माला ताहूतैं अति कोमल ह भुजलता जिनकी, महा अमौलिक बाचाल मणिमई चूडेनिकरि शोभित ह हाथ जिनके, अर अशोकवक्षकी कोपल समान कोमल अरुण ह हथेली जिनकी, अति सुन्दर करकी आगुली, शख समान ग्रीवा, कोकिलहूतैं अति मनोहर ह कठ जिनके, अति लाल, अति सु दर रसके भरे अधर, तिनकरि आच्छादित कु दके पुष्प समान दत, अर निमल दपणसमान सु दर ह कपोल जिनके, लावण्यताकरि लिप्त भई ह सवदिशा, अर अति सु दर तीक्ष्ण कामके बाण समान नेत्र, सो नेत्रोको कटाक्ष कणपयत प्राप्त भई ह सोई मानो कर्णाभरण भए। अर पद्मरागमणि आदि अनेक मणिनिके आभूषण अर मोतियोके हार तिनकरि मडित, अर भमर समान श्याम, अति सूक्ष्म, अति निमल अति चीकने, अति सघन, वक्रता धर लबे केश, अति कोमल शरीर, अति मधुर स्वर, अत्य त चतुर सव उपचारकी जाननहारी, महा सौभाग्यवती, रूपवती, गुणवती, मनोहर क्रीडाकी करणहारी, नदनादि वनोत उपजी जो सुगध ताहूत अति सुगध ह श्वास जिनके, पराए मनका अभिप्राय चेष्टामें जान जाय ऐसी प्रवीण, पचेंद्रियोके सुखकी उपजावनहारी, मनवाछित रूपकी धारण-

हारी ऐसी स्वगमें जो अप्सरा सो धमके फलत पाइए ह। अर जो इच्छा कर सो चितवतमात्र सव सिद्धि होय। इच्छा कर, सो ही उपकरण प्राप्त होय, जो चाह सो सदा सग ही ह। देवागनानिकर देव मनवाछित सुख भोग ह। जो देवलोकमें सुख ह तथा मनुष्यलोकविष चक्रवर्त्यादिकनिके सुख ह, सो सव धमका फल जिनेश्वर देवने कह्या ह। अर तीनलोकमें जो सुख ऐसा नाम धराव ह, सो सर्व धमकरि ही उत्पन्न होय ह। जे तीथकर तथा चक्रवर्ती, बलभद्र, कामदेवादि, दाता भोक्ता मर्यादाके कर्त्ता, निरतर हजारो राजनिकरि तथा देवनिकरि सेइए ह, सो सव धमका फल ह। अर जो इन्द्र स्वग लोकका राज्य, हजारो जे देव मनोहर आभूषणके धरणहारे तिनका प्रभुत्व धर ह सो सव धर्मका फल ह। यह तो सकल शुभोपयोगरूप व्यवहार धमके फल कहे। अर जे महामुनि निश्चल रत्नत्रयके धरणहारे मोहरिपुका नाशकरि सिद्धिपद पाव ह सो शुद्धोपयोगरूप आत्मीक धमका फल ह। सो मुनिका धम मनुष्यज म विना नहीं पाइए ह। तात मनुष्य देह सवज मविष श्रेष्ठ ह। जस मग कहिए उनके जीव तिनमें सिह अर पक्षियोविष गरुड अर मनुष्योविष राजा, देवोविष इन्द्र, तणनिविष शालि, वक्षनिविष चदन, अर पाषाणविष रत्न श्रेष्ठ ह, तस सकल योनिविष मनुष्यजन्म श्रेष्ठ ह। तीन लोकविष धम सार ह, अर धमविष मुनिका धर्म सार ह। सो मुनिका धर्म मनुष्य देहत ही होय ह। तात मनुष्य ज म समान और नाही। अनत काल यह जीव परिभमण कर ह। तामें मनुष्यज म कबहू ही पाव ह। यह मनुष्य देह महादुलभ ह। ऐसे दुलभ मनुष्यदेहको पाय जो मूढ प्राणी, समस्त क्लेशनिकरि रहित करणहारा जो मुनिका धर्म अथवा श्रावकका धर्म नाहीं कर ह सो बारम्बार दुगतिविष भमण कर ह। जस समुद्रविष गिरचा महागुणनिका धरणहारा रत्न बहुरि हाथ आवना दुलभ ह, तस भवसमुद्रविष नष्ट भया नरदेह बहुरि पावना दुलभ ह। या मनुष्यदेहविष शास्त्रोक्त धर्मका साधनकरि कोई मुनिव्रत धर सिद्ध होय ह, अर कोई स्वगनिवासी देव तथा अहमिन्द्रपद्र पावै, परम्परा मोक्ष पद पाव ह। या भाति धर्म अधर्मके फल केवलीके मुखत सुनकरि सब ही सुखको प्राप्त

भए। ता समय कमल सारिखे हैं नेत्र जाके, ऐसा कुंभकरण, सो हाथ जोड नमस्कारकरि पूछता भया, उपज्या है अति आनन्द जाके, हे नाथ! मेरे अब भी तृप्ति न भई, तातें विस्तारकरि धर्मका व्याख्यान विधिपूर्वक मोहि कहो। तब भगवान अनन्तवीर्य कहते भए—'हे भव्य! धर्मका विशेष वर्णन सुनो—जाकरि यह प्राणी संसारके बंधननितें छूटै सो धर्म दोय प्रकार है—एक महाव्रतरूप, दूजा अणुव्रतरूप। सो महाव्रतरूप यतिका धर्म है, अणुव्रतरूप श्रावकका धर्म है। यति घरके त्यागी है, श्रावक गृहवासी हैं। तुम प्रथम ही सर्व पापनिका नाश करणहारा सर्व परिग्रहके त्यागी जे महामुनि तिनका धर्म सुनो।

या अवसर्पणी कालविषै अबतक ऋषभदेवतें लगाय मुनिसुव्रतपर्यंत बीस तीर्थंकर हो चुके हैं, अब चार और होयेंगे। या भांति अनन्त भए, अर अनन्त होवेंगे, सो सबनिका एक मत है। यह श्रीमुनिसुव्रतनाथका समय है। सो अनेक महापुरुष जन्ममरणके दुःखकरि महा भयभीत भए या शरीरको एरंडकी लकडी समान असार जानि सर्वपरिग्रहका त्याग करि मुनिव्रत को प्राप्त भए। ते साधु अहिंसा, असत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रहत्यागरूप पंचमहाव्रत तिनविषै रत, तत्वज्ञानविषै तत्पर, पंचसमितिके पालनहारे, तीन गुप्तिके धरनहारे, निर्मलचित्त, महापुरुष, परमदयालु, निजदेहविषै भी निर्ममत्व रागभावरहित, जहां सूर्य अस्त होय तहां ही बैठ रहैं कोई आश्रय नाहीं, तिनके कहां परिग्रह होय? पापका उपजावनहारा जो परिग्रह सो तिनके बालके अग्रभाग मात्र हू नाहीं। ते महाधीर महामुनि, सिंहसमान साहसी, समस्त प्रबंध रहित, पवन सारिखे असंगी, तिनके रंचमात्र भी संग नाहीं। पृथ्वी समान क्षमा, जल सारिखे विमल, अग्नि सारिखे कर्मको भस्म करनहारे, आकाश सारिखे अलिप्त, अर सर्व सम्बन्ध रहित, प्रशंसा योग्य है चेष्टा जिनकी, चन्द्र सारिखे सौम्य, सूर्य सारिखे तिमिरके हरता, समुद्र सारिखे गम्भीर, पर्वत सारिखे अचल, काछिवा समान इन्द्रियोंके संकोचनहारे, कषायनिकी तीव्रतारहित, अठाईस मूलगुण, चौरासीलाख उत्तरगुणोंके धरणहारे, अठारह हजार शीलके

भेद तिनके धारक, तपोनिधि मोक्षमार्गी, जिनधर्ममें लवलीन, जनशास्त्रोंके पारगामी, अर सांख्य-पातञ्जल, बौद्ध, मीमांसक, नैयायिक, वैशेषिक, वेदांती इत्यादि पर शास्त्रोंके भी वेत्ता, महाबुद्धिमान सम्यग्दृष्टि, यावज्जीव पापनिके त्यागी, यम नियमके धरनहारे, परमसंयमी, परम शांत, परम त्यागी, निगर्व, अनेक ऋद्धिसंयुक्त, महामंगलमूर्ति जगतके मंडन, महागुणवान। केई एक तो ताही भवमें कर्मकाट सिद्ध होय, कईएक उत्तमदेव होय दोय तीन भवमें ध्यानाग्निकरि समस्त कर्मकाष्ठ बाल, अविनाशी सुखको प्राप्त होय हैं। यह यतीका धर्म कह्या। अब स्नेहरूपी पींजरेमें पडे जे गृहस्थी तिनका द्वादश व्रतरूप जो धर्म सो सुनो। पांच अणुव्रत, तीनगुणव्रत, चार शिक्षाव्रत, अर अपनी शक्तिप्रमाण हजारों नियम, त्रसघातका त्याग, अर मृषावादका परिहार, परधनका त्याग, परदारा परित्याग, अर परिग्रहका परिमाण, तृष्णाका त्याग ये पांच अणुव्रत, अर हिंसादिका प्रमाण, देशोंका प्रमाण, जहां जिन धर्मका उद्योत नाहीं तिन देशनिका त्याग, अनर्थदंडका त्याग ये तीन गुणव्रत हैं। अर सामायिक, प्रोषधोपवास, अतिथि संविभाग, भोगोपभोगपरिमाण, ये चार शिक्षाव्रत, ये बारहव्रत हैं। अब इन व्रतोंके भेद सुनो। जैसे अपना शरीर आपको प्यारा है तैसा सबनिको प्यारा है। ऐसा जान सर्वजीवनिकी दया करनी। उत्कृष्ट धर्म जीव दया ही भगवानने कह्या है। जे निर्दई जीव हनै हैं तिनके रंच मात्र भी धर्म नाहीं। अर जामें परजीवनिको पीडा होय सो वचन न कहना। परबाधाकारी वचन सोई मिथ्या, अर पर उपकाररूप वचन सोई सत्य। अर जे पापी चोरी करै, पराया धन हरै हैं ते इस भवमें बधबंधनादि दुख पावै हैं, कुमरणतै मरै हैं, अर परभवमें नरकमें पडे हैं, नानाप्रकारके दुख पावै हैं। चोरी दुःखका मूल है। तातैं बुद्धिमान सर्वथा पराया धन न हरै हैं। सो जाकरि दोनों लोक बिगडें ताहि कैसे करैं? अर सर्पिणी समान परनारीको जानिकरि दूरहीतै तजो। यह पापिनी परनारी कामलोभके वशीभूत पुरुषको नाश करनहारी है। सर्पिणी तो एकभव ही प्राण हरै है अर परनारी अनंत भव प्राण हरै हैं। कुशीलके पापतै निगोदमें जाय है सो अनन्त जन्म मरण करै है। अर याही भवविषै मारना ताडना

आदि अनेक दु ख पाव ह । यह परदारासगम नरकनिगोदके दुस्सह दुखनिका देनहारा ह । जस कोई परपुरुष अपनी स्त्रीका पराभव कर तो आपको बहुत बुरा लाग, अति दु ख उपज, तस ही सकलकी व्यवस्था जाननी ? अर परिग्रहका परिमाण करना, बहुत तष्णा न करनी । जो यह जीव इच्छाको न रोक तो महा दुखी होय । यह तष्णा ही दु खका मूल ह, तष्णा समान और व्याधि नाहीं । या ऊपर एक कथा ह सो सुनो--एक भद्र दूजा काचन, ये दोष पुरुष हूते । तिनम भद्र फलादिकका बेचनहारा सो एक दीनारमात्र परिग्रहका परिमाण करता भया । एक दिवस मागमें दीनारोका बटवा पडया देख्या तामसो एक दीनार कोतूहलकरि लीनी । अर दूजा काचन ह नाम जिसका, तान सव बटवा ही उठाय लिया । सो दीनारनिकास्वामी राजा, तान बटवा उठावता देखि काचनको पिटाया, अर गामत काढया । अर भद्रने एक दीनार लीनी हुती सो राजाको विना मागे स्वयमेव सौंप दीनी । राजाने भद्र का बहुत सन्मान किया ऐसा जानकरि बहुत तष्णा न करनी । सतोष धरना ये पाच अणुव्रत कहे ।

बहुरि चार दिशा, चार विदिशा, एक अध , एक ऊध्व, इन दश दिशानिका परिमाण करना कि इस दिशाको एती दूर जाऊगा, आग न जाऊगा । बहुरि अपध्यान कहिए खोटा चितवन, पापोपदेश कहिए अशुभकायका उपदेश, हिसादान कहिए विष फासी लोहा सीसा खडगादि शस्त्र तथा चाबुक इत्यादि जीवनके मारवेके उपकरण माग्या देना तथा जे जाल रस्सा इत्यादि बधनके उपाय तिनका व्यापार, अर श्वान मार्जार चीतादिकका पालना, अर कुश्रुति श्रवण कहिए कुशास्त्रका श्रवण, प्रमाद-चर्या कहिए प्रमादकरि वथा छ कायके जीवोकी विराधना करनी, ये पाचप्रकारके अनथदड तजने । अर भोग कहिए आहारादिक, उपभोग कहिए स्त्रीवस्त्राभूषणादिक, तिनका परिमाण करना । अर्थात ये विचार जे अभक्ष्य भक्षणादि, परदारा सेवनादि अयोग्य विषय ह तिनका तो सवथा त्याग, अर जे योग्याहार तथा स्वदारसेवनादि तिनका नियमरूप परिमाण । यह भोगोपभोग परिसख्यावत कहिए । ये तीन गुणवत कहे । अर सामायिक कहिए समताभाव, पचपरमेष्ठी अर जिनधम, जिनवचन, जिन

प्रतिमा, जिनमंदिर तिनका स्तवन, अर सब जीवोसो क्षमाभाव, सौ प्रभात मध्याह्न सायकाल छ छ घडी तथा चार २ घडी तथा दोय दोय घडी अवश्य करना। अर प्रोषधोपवास कहिए दोय आठें, दोय चोदस एक मासमें चार उपवास, षोडश पहरके पोसे संयुक्त अवश्य करने। सोलह पहरतक संसारके कायका त्याग करना, आत्मचिंतवन तथा जिनभजन करना। अर अतिथिसंविभाग कहिए अतिथि जे परिग्रहरहित मुनि, जिनके तिथि वारका विचार नाहीं सो आहारके निमित्त आवं, महागुणोके धारक तिनको विधिपूर्वक अपने वत्तानुसार बहुत आदरतें योग्य आहार देना, अर आयुके अंत विषे अनशन व्रतधर समाधिमरण करना सो सलेखनाव्रत कहिए। ये चार शिक्षाव्रत कहे। या प्रकार पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत ये बारहव्रत जानने। जे जिनधर्मी हैं तिनके मद्य मांस मधु, माखण, उदंबरादि अयोग्य फल, रात्रिभोजन, बीध्या अन्न, अनछाना जल, परदारा तथा दासी वेश्यासंगम इत्यादि अयोग्य क्रियाका सर्वथा त्याग होय है। यह श्रावकके धर्म पालकर समाधिमरण कर उत्तम देव होय, फिर उत्तम मनुष्य होय सिद्धपद पावे है। अर जे शास्त्रोक्त आचरण करनेको असमर्थ हैं, न श्रावकके व्रत पालें, न यतिके परंतु जिनभाषितकी दृढ श्रद्धा है ते भी निकट संसारी हैं, सम्यक्तके प्रसादसे व्रतको धारण करि शिवपुरको प्राप्त होय है। सब लाभमें श्रेष्ठ जो सम्यग्दर्शनका लाभ ताकरि ये जीव दुर्गतिके त्रासतें छूटे है। जो प्राणी भावतें श्रीजिनेंद्रदेवको नमस्कार करे है सो पुण्याधिकारी पापोके क्लेशतें निवृत्त होय है। अर जो प्राणी भावकरि सर्वज्ञदेवको हे सुमरे ता भव्यजीवके अशुभ कर्म कोटि भवके उपारजे तत्काल क्षय होय है। अर जो महाभाग्य त्रैलोक्यविषे सार जो अरहंतदेव तिनको हृदयविषे धारे है सो भवकूपविषे नाहीं परे है। ताके निरंतर सर्व भाव प्रशस्त है। अर ताको अशुभ स्वप्न न आवें, अर शुभ स्वप्न ही आवें, अर शुभ शकुन ही होय है। अर जो उत्तम जन "अर्हते नम" यह वचन भावतें कहे है ताके शीघ्र ही मलिन कर्मका नाश होय है, याविषे संदेह नाहीं।

१। इस जगह देशावकाशिकव्रतका उल्लेख नहीं किया उसकी जगह सल्लेखनाव्रत लिखकर चार शिक्षाव्रत पूरे किये गये हैं।

मुक्तियोग्य प्राणीका चित्तरूप कुमुद, परम निर्मल वीतराग जिनचंद्रकी कथारूप जो किरण तिनके प्रसंगत प्रफुल्लित होय है। अर जो विवेकी अरहंतसिद्धसाधुवो ताईं नमस्कार करे है सो सब जिन धर्मीनिका प्यारा है। ताहि अल्प संसारी जानना। अर जो उदारचित्त श्री भगवानके चैत्यालय करावे, जिनबिंब पधरावे है, जिनपूजा करे है, जिनस्तुति करे है तिनके या जगतविषै कछु दुर्लभ नाहीं। नर नाथ कहिए राजा होहु अथवा कुटुंबी होहु, किसान होहु, धनाढ्य होहु तथा दलिद्री होहु, जो मनुष्य धर्मकरि युक्त है सो सब त्रैलोक्यविषै पूज्य है। जे नर महाविनयवान है, अर कृत्य अकृत्यके विचार विषै प्रवीण है, जो यह कार्य करना यह न करना ऐसा विवेक धरे है, ते विवेकी धर्मके संयोगत गृह-स्थिविषै मुख्य है। जे जन मधु मांस मद्य आदि अभक्ष्यका संसर्ग नाहीं करे है तिनहीका जीवन सफल है। अर शंका कहिए जिन वचनोमें संदेह, कांक्षा कहिये या भवविषै अर परभवविषै भोगनिकी बांछा, विचिकित्सा कहिए रोगी वा दुखीको देख घृणा करणी, आदर नाहीं करना, अर आत्मज्ञानत दूर जे परदृष्टि कहिए जिनधर्मत पराङमुख मिथ्यामार्गी तिनकी प्रशंसा करनी, अर अन्यशासन कहिए हिंसा मार्ग ताके सेवनहारे जे निर्दयी मिथ्यादृष्टि तिनके निकट जाय स्तुति करनी, ये पांच सम्यकदर्शनके अतीचार है। तिनके त्यागी जे जंतु कहिए प्राणी ते गृहस्थनिविषै मुख्य है। अर जो प्रियदर्शन कहिए प्यारा है दर्शन जाका, सुंदर वस्त्राभरण पहिरे, सुगंध शरीर, मार्ग चालते, धरतीको देखता, निर्विकार जिनमन्दिरमें जाय है, शुभकार्योंविषै उद्यमी ताके पुण्यका पार नाहीं। अर जो पराए द्रव्यको तृणसमान देखे है, अर परजीवको आप समान देखे है, अर परनारीको माता समान देखे है सो धन्य है। अर जाके ये भाव है—ऐसा दिन कब होयगा जो मैं जिनेंद्रीदीक्षा लेयकरि महामुनि होय पृथ्वीविषै निर्द्वंद्व विहार करूंगा, ये कर्मशत्रु अनादिके लगे है तिनका क्षयकरि कब सिद्धपद प्राप्त करूं, या भांति निरंतर ध्यान करे निर्मल भया है चित्त जाका ताके कर्म कैसे रहे है? भयकरि भाग जाय। कईएक विवेकी सात आठ भवमें मुक्ति जाय है, कईएक दोय तीन भवविषै संसारसमुद्रके पार होय है, कईएक चरमशरीरी उग्र

तपकरि शुद्धोपयोगके प्रसादतें तद्भव मोक्ष होय है । जैसे कोई मार्गका जाननहारा पुरुष शीघ्र चलै तो शीघ्र ही स्थानको जाय पहुँचे, अर कोई धीरे २ चलै तो घने दिनमें जाय पहुँचे, परन्तु मार्ग चालै सो पहुँचे ही, अर जो मार्ग ही न जानै अर सौ-सौ योजन चालै तो भी भ्रमता ही रहै, इष्ट स्थानको न पहुँचे । तैसे मिथ्यादृष्टि उग्र तप करै तो भी जन्ममरणवर्जित जो अविनाशीपद ताहि न प्राप्त होय । संसार वनहीविषै भ्रमै, नहीं पाया है मुक्तिका मार्ग तिननें । कैसा है संसारवन ? मोहरूप अंधकारकरि आच्छादित है, अर कषायरूप सर्पनिकरि भरया है । जिस जीवके शील नाहीं, व्रत नाहीं, सम्यक्त नाहीं, त्याग नाहीं, वैराग्य नाही, सो संसारसमुद्रको कैसे तिरै ? जैसे विंध्याचल पर्वततें चल्या जो नदीका प्रवाह ताकरि पर्वत समान ऊंचे हाथी बहे जाय तहां एक शसा क्यों न बहै ? तैसे जन्मजरा मरणरूप भ्रमणको धरै संसाररूप जो प्रवाह ताविषै जे कुतीर्थी कहिए मिथ्यामार्गी अज्ञान तापस हैं तेई डूबे हैं, फिर तिनके भक्तोंका कहा कहना ? जैसे शिला जलविषै तिरवे समर्थ नाहीं तैसे परिग्रहके धारी कुदृष्टि शरणागतनिको तारवे समर्थ नाहीं । अर जे तत्त्वज्ञानी तपकरि पापनिकेंभस्म करणहारे हलके होय गए हैं कर्म जिनके, ते उपदेशथकी प्राणियोंको तारनें समर्थ हैं । यह संसारसागर महाभयानक है । यामें यह मनुष्यक्षेत्र रत्नद्वीप समान है सो महा कष्टतें पाइए है । तातें बुद्धिवंतनिको या रत्न-द्वीपविषै नेमरूप रत्न ग्रहण करने अवश्य योग्य है । यह प्राणी या देहको तजकरि परभवविषै जायगा । अर जैसे कोई मूर्ख तागाकें अर्थि महामणिके हारका तागा निकालनेंको महामणियोंका चूर्ण करै तैसे यह जडबुद्धि विषयके अर्थ धर्मरत्नको चूर्ण करै है अर ज्ञानी जीवोंको सदा द्वादश अनुप्रेक्षाका चिंतवन करना । ये शरीरादि सब अनित्य हैं, आत्मा नित्य है, या संसारविषै कोई शरण नाहीं, आपको आप ही शरण है तथा पंच परमेष्ठीका शरण है । अर संसार महा दुखरूप है, चतुर्गतिविषै काहू ठौर सुख नाहीं, एक सुखका धाम सिद्धपद है । यह जीव सदा अकेला है, याका कोई संगी नाहीं, अर सब द्रव्य जुदे जुदे हैं, कोई काहूसों मिलै नाहीं । अर शरीर महा अशुचि है, मलमूत्रका भरया भाजन है ।

आत्मा निर्मल है । अर मिथ्यात्व अव्रत कषाय योग प्रमादनिकरि कर्मका आस्रव होय है । अर व्रत, समिति, गुप्ति, दशलक्षण धर्म, अनुप्रेक्षानिकाचितवन, परीषहजय चारित्रकरिसंवर होय है । आस्रवका रोकना सो संवर अर तपकर पूर्वोपार्जित कर्मकी निर्जरा होय है । अर यह लोक षट्द्रव्यात्मक अनादि अकृत्रिम शाश्वत है । लोकके शिखर सिद्धलोक है । लोकालोकका ज्ञायक आत्मा है, अर जो आत्म स्वभाव जो ही धर्म है, जीवदया धर्म है । अर जगतविषै शुद्धोपयोग दुर्लभ है, सोई निवारणका कारण है । या प्रकार द्वादश अनुप्रेक्षा विवेकी सदा चितवै । या भांति मुनि अर श्रावकके धर्म कहे । अपनी शक्ति प्रमाण जो धर्म सेवै उत्कृष्ट मध्यम तथा जघन्य सो सुरलोकादिविषै तैसा ही फल पावै । या भांति केवली कही तब भानुकर्ण कहिए कुंभकर्णने केवलीसो पूछी—हे नाथ! भेदसहित नियमका स्वरूप जानना चाहूं हूं । तब भगवानने कही— हे कुंभकर्ण! नियममें अर तपमे भेद नाहीं, नियमकरि युक्त जो प्राणी सो तपस्वी कहिए । तातै बुद्धिमान नियमविषै सर्वथा यत्न करै । जेता अधिक नियम करै सो ही भला । अर जो बहुत न बनै तो अल्प ही नियम करना, परन्तु नियम विना न रहना । जैसे बनै सुकृतका उपार्जन करना । जैसे मेघकी बूंद परै है तिन बूंदनिकर महानदीका प्रवाह होय जाय है, सो समुद्रविषै जाय मिलै है तैसे जो पुरुष दिनविषै एक महूर्तमात्र भी आहारका त्याग करै सो एक मासमे एक उपवासके फलको प्राप्त होय । ताकरि स्वर्गविषै बहुत काल सुख भोगै, मनबांछित भोग प्राप्त होय । जो कोई जिनमार्गकी श्रद्धा करता संता यथाशक्ति तप नियम करै ता महात्माके दीर्घ काल स्वर्गविषै सुख होय बहुरि स्वर्गतै चयकर मनुष्यभवविषै उत्तम भोग पावै है ।

एक अज्ञान तापसीकी पुत्री वनविषै रहै सो महादुखवती बदरीफल (बेर) आदि कर आजीविका पूर्ण करै । ताने सत्संगतै एक मुहूर्तमात्र भोजनका नियम लिया । ताके प्रभावतै एक दिन राजाने देखी, आदरतै परणी, बहुत सम्पदा पाई अर धर्मविषै बहुत सावधान भई, अनेक नियम आदरे । सो जो प्राणी कपटरहित होय जिनवचनको धारण करै सो निरंतर सुखी होय, परलोकमें उत्तमगति पावै ।

अर जो दो मुहूर्त प्रति दिवस भोजनका त्याग कर ताके एकमास विषै दोय उपवासका फल होय। तीस मुहूर्तका एक अहोरात्र गिनो। अर तीनमुहूर्त प्रति दिन अन्नजलका त्याग करै तो एक मास विषै तीन उपवासका फल होय। या भांति जेता अधिक नियम तेता ही अधिक फल। नियमके प्रसादकरि ये प्राणी स्वर्गविषै अद्भुत सुख भोग हैं, अर स्वर्गतै चयकर अद्भुत चेष्टाके धरणहारे मनुष्य होय हैं। महा-कुलवती, महारूपवती, महागुणवती, महालावण्यकरलिप्त, मोतियोंके हार पहरै, अर मनके हरनहारे जे हाव भाव विलास विभ्रम तिनको धरैं जे शीलवती स्त्री, तिनके पति होय हैं। अर स्त्री स्वर्गतै चयकर बडे कुलविषै उपजै बडे राजानिकी रानी होय हैं, लक्ष्मी समान है, स्वरूप जिनका। अर जो प्राणी रात्रि भोजनका त्याग करै हैं अर जलमात्र नाहीं ग्रहै हैं ताके अति पुण्य उपजै है। पुण्यकरि अधिक प्रताप होय है। अर जो सम्यग्दृष्टि व्रत धारै ताके फलका कहा कहना? विशेष फल पावै, स्वर्गविषै रत्नमई विमान तहां अप्सरावोंके समूहके मध्यमें बहुतकाल धर्मके प्रभावकरि तिष्ठै है। बहुरि दुर्लभ मनुष्य देही पावै। तातैं सदा धर्मरूप रहना अर सदा जिनराजकी उपासना करनी। जे धर्मपरायण हैं तिनको जिनेंद्रका आराधन ही परमश्रेष्ठ है। कैसे हैं जिनेंद्रदेव? जिनके समोसरणकी भूमि रत्नकंचनकर निरमापित, देव मनुष्य तिर्यंचनिकर वंदनीक है। जिनेंद्रदेव आठ प्रातिहार्य, चौंतीस अतिशय, महा अद्भुत हजारों सूर्यसमान तेज, महा सुंदर रूप, नेत्रोंको सुखदाता है। जो भव्यजीव भगवानको भावकर प्रणाम करै सो विचक्षण थोडे ही कालविषै संसार समुद्रको तिरै।

श्रीवीतरागदेवके सिवाय कोई दूसरा जीवनिको कल्याणकी प्राप्तिका उपाय और नाहीं। तातैं जिनेंद्रचंद्रहीका सेवन योग्य है। अर हजारों मिथ्यामार्ग तिनविषै प्रमादीजीव भूल रहे हैं। तिन कुतीर्थीनिके सम्यक्त्व नाहीं। अर मद्य मांसादिकके सेवनतै दया नाहीं। अर जैनविषै परमदया है, रंच-मात्र भी दोषकी प्ररूपणा नाहीं। अर अज्ञानी जीवोंके यह बडी जडता है जो दिवसमें आहारका त्याग करै अर रात्रिमें भोजनकर पाप उपार्जै। चार पहर दिन अनशन व्रत किया ताका फल रात्रिभोजनतै

जाता रहे, महापापका बंध होय। रात्रिका भोजन महा अधर्म, जिन पापियोने धर्म कर कलप्या, कठोर है चित्त जिनका तिनको प्रतिबोधना बहुत कठिन है। जब सूर्य अस्त होय, जीवजन्तु दृष्टि न आवे तब जो पापी विषयनिका लालची भोजन करे है सो दुर्गतिके दुखको प्राप्त होय है। योग्य अयोग्यको नहीं जाने है। जो अविवेकी पापबुद्धि अंधकारके पटल कर आच्छादित भए हैं नेत्र जाके, रात्रिको भोजन करे है सो मक्षिका कीट केशादिकका भक्षण करे है। जो रात्रिभोजन करे है सो डाकिन राक्षस स्वान मार्जार मूसा आदिक मलिन प्राणियोका उच्छिष्ट आहार करे है। अथवा बहुत प्रपंचकर कहा? सर्वथा यह व्याख्यान है कि जो रात्रिको भोजन करे है सो सब अशुचिका भोजन करे है। सूर्यके अस्त भये पीछे कछु दृष्टि न आवे। तातैं दोय मुहूर्त दिवस बाकी रहे तबतें लेकर दोय महूर्त दिन चढ़े तक विवेकियोको चौविधि आहार न करना। अशन पान खाद स्वाद ये चार प्रकारके आहार तजने। जो रात्रि भोजन करे हैं ते मनुष्य नहीं पशु है। जो जिनशासनते विमुख व्रत नियमसेरहित रात्रिदिवस भखवे ही करे हैं सो परलोकविषै कैसे सुखी होय? जो दयारहित जीव जिनेंद्रदेवकी, जिनधर्मकी अर धर्मात्माओकी निंदा करे है सो परभवमेंमहा नरकमें जाय है। अर नरकतै निकसकर तिर्यंच तथा मनुष्य होय सो दुर्गंधमुख होय है। मांस मद्य मधु,निशि भोजन, चोरी अर परनारी जो सेवे है सो दोनो जन्म खोवें है। जो रात्रिभोजन करे हैं सो अल्पआयु, हीन, व्याधिपीडित सुख रहित, महादुखी होय है। रात्रिभोजनके पापतै बहुतकाल जन्म मरणके दुख पावे है, गर्भवासविषै बसे है। रात्रिभोजी अनाचारी शूकर, कूकर, गरदभ,मार्जार, काग, वन, नरकनिगोद स्थावर त्रस अनेक योनियोमें बहुत काल भ्रमण करे है, हजारो अवसर्पणीकाल अर हजारो उत्सर्पणी काल योनिनविषै दुःख भोगे है। जो कुबुद्धि निशिभोजन करे है सो निशाचर कहिए राक्षस समान है। अर जो भव्यजीव जिनधर्मको पायकर नियमविषै तिष्ठे, है सो समस्त पापोको भस्मकर मोक्षपदको पावे है। जो व्रत लयकरि भंग करे सो दुःखी ही है। जे अणुव्रतोमे परायण रत्नत्रयके धारक श्रावक है ते दिवसविषै ही भोजन करे, दोषरहित योग्य आहार करे। जे दयावान रात्रिभोजन न करे ते स्वर्गविषै सुख भोग-

कर तहाते चयकर चक्रवर्त्यादिकके सुख भोग हे । शुभ हे चेष्टा जिनकी, उत्तमव्रतनियम चेष्टाके धरन-हारे सौधर्मादि स्वर्गविषै ऐसे भोग पावे जो मनुष्योंको दुर्लभ है, अर देवोंते मनुष्य होय सिद्धपद पावै है । कैसे मनुष्य होय ? चक्रवर्ति, कामदेव, बलदेव, महामंडलीक, मंडलीक, महाराजा, राजाधिराज महा विभूतिके धनी, महागुणवान, उदारचित्त, दीर्घायु, सुन्दररूप, जिनधर्मके मर्मी, जगतके हितु, अनेक नगर ग्रामादिकोंके अधिपति, नानाप्रकारके वाहनोंकरमंडित, सबलोकके वल्लभ, अनेक सामंतोंके स्वामी दुस्सह तेजके धारनहारे ऐसे राजा होय हे । अथवा राजावोंके मंत्री पुरोहित सेनापति राजश्रेष्ठी तथा श्रेष्ठी, बडे उमराव महा सामंत, मनुष्योंमें यह पद रात्रिभोजनके त्यागी पावे हे । देवनिके इन्द्र, भवन वासियोंके इन्द्र चक्रके धनी, मनुष्योंके इन्द्र महालक्षणोंकर सम्पूर्ण दिनभोजनते होय हैं । सूर्य सारिखे प्रतापी, चन्द्रमा सारिखे सौम्यदर्शन, अस्तको प्राप्त न होय प्रताप जिनका, देवनि समान हे भोग जिनके ऐसे, तेई होइ जे सूर्य अस्त भए पीछे भोजन न करे । अर स्त्री रात्रिभोजनके पापते माता, पिता,भाई, कुटुम्बरहित, अनाथ कहिए पतिरहित, अभागिनी, शोक दलिद्रकर पूर्ण, रूक्ष फटे अधर हस्तपावादि, सूखा शरीर, चिपटी नासिका, जो देखे सो ग्लानि करे, दुष्टलक्षण बुरी, मांजरी, आंधी, लूली, गूंगी, बहरी, बावरी, कानी, चीपडी, दुर्गंधयुक्त, स्थूलअधर, खोटे कर्ण, भूरे ऊंचे बुरे सिरके केश, तूंबडीके बीज समान दांत, कुवरण, कुलक्षण, कांतिरहित, कठोरअंग, अनेकरोगोंकी भरी, मलिन फटे वस्त्र, उच्छिष्ट की भक्षणहारी, पराई मजूरी करणहारी नारी होय हे । रात्रिभोजनकी करणहारी नारी जो पति पावे तो कुरूप कुशील कोढी, बुरे कान, बुरी नाक, बुरी आंख, चिंतावान, धन कुटुम्बरहित ऐसा पावे। रात्रि भोजनते विधवा, बालविधवा, महादुखवती, जल काष्ठादिक भारके बहनहारी, दुखकर भरे हे उदर जाका, सब लोग करे हे अपमान जाका, वचनरूप वसूलोंकर छीला हे चित्त जाका, अनेक फोडा फुन्सी की धरणहारी, ऐसी नारी होय हे ।

अर जे नारी शीलवती, शांत है चित्त जिनका, दयावती रात्रि भोजनका त्याग करै हैं, ते स्वर्गविषै

मनवाछित भोग पावै है। तिनकी आज्ञा अनेक देव देवी सिरपर धारै है, हाथजोड सिरनिवाय सेवा करै है। स्वर्गमें मनवाछित भोग कर और महा लक्ष्मीवान ऊचकुलमें जन्म पावै। शुभलक्षण, सम्पूर्ण सर्व गुणमडित, सर्वकलाप्रवीण, देखनहारोके मन और नेत्रोको हरणहारी, अमृतसमान वचन बोलै, आनन्दकी उपजावनहारी, जिनके परिणवेकी अभिलाषा चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव तथा विद्याधरोके अधिपति राखें, बिजुरी समान है काति जिनकी, कमल समान है वदन जिनका, सुन्दर कुण्डल आदि आभूषणनिकी धरणहारी, सुन्दरवस्त्रोकी पहरनहारी, नरेन्द्रकी राणी दिन भोजनतै होय है। जिनके मनवाछित अन्न धन होय है और अनेक सेवक नानाप्रकारकी सेवा करै। जे दयावती रात्रिविषै भोजन न करै श्रीकाता, सुभद्रा, लक्ष्मी तुल्य होवै। तातै नर अथवा नारी नियमविषै है चित्त जिनका ते निशि भोजनका त्याग करै। यह रात्रिभोजन अनेक कष्टका देनहारा है, रात्रिभोजनके त्यागविषै अति अल्प कष्ट है, परन्तु याके फलकरि अति उत्कष्ट होय है। तातै विवेकी यह व्रत आदरै। अपने कल्याणको कौन न वाछे ? धर्म तो सुखकी उत्पत्तिका मूल है और अधर्म दुखका मूल है। ऐसा जानकर धर्मको भजो अधर्मको तजो। यह वार्ता लोकविषै समस्त बालगोपाल जानै है—जो धर्मतै सुख होय है अर अधर्मकरि दुख होय है। धर्मका माहात्म्य देखो जाकरि देवलोकतै चये उत्तम मनुष्य होय है, जलस्थलके उपजे जे रत्न तिनके स्वामी, अर जगतकी मायातै उदास, परन्तु कईएक दिनतक महाविभूतिके धनी होय गृहवास भोगै है, जिनके स्वर्ण रत्न वस्त्र धान्यनिके अनेक भण्डार है, जिनके विभवकी बडे २ सामत, नानाप्रकारके आयुधोके धारक रक्षा करै, तिनकै बहुत हाथी, घोडे, रथ पयादे, बहुत गाय भैंस, अनेक देश ग्राम नगर, मनके हरनहारे पाच इन्द्रियोके विषय, अर हसनीकोसी चाल चलें, अति सुन्दर शुभ लक्षण, मधुर शब्द, नेत्रोको प्रिय, मनोहर चेष्टाकी धरणहारी, नानाप्रकार आभूषणकी धरणहारी स्त्री होय हैं। सकल सुखका मूल जो धर्म है ताहि कईएक मूर्ख जानै ही नाहीं, तातै तिनकै धर्मका यत्न नाहीं। अर कईएक मनुष्य सुनकर जानै है—जो धर्म भला है परन्तु पापकर्मके वशतै

अकायविषै प्रवरतै है, सुखका उपाय जो धर्म ताहि नाहीं सेवै है। अर कईएक अशुभकर्मके उपशांत होते उत्तम चेष्टाके धरणहारे श्रीगुरुके निकट जाय धर्मका स्वरूप उद्यमी होय पूछै है। ते श्रीगुरुके वचन प्रभावतैं वस्तुका रहस्य जानकर श्रेष्ठ आचरणको आचरै है। ये नियम धर्मात्मा बुद्धिमान पापक्रियातैं रहित होयकर करै है ते महा गुणवंत स्वर्गविषै अद्भुत सुख भोगै हैं। परम्पराय मोक्ष पावै है। जे मुनिराजोंको निरंतर आहार देय है, अर जिनके ऐसा नियम है कि मुनिके आहारका समय टार भोजन करै, पहिले न करै, ते धन्य है। तिनके दर्शनकी अभिलाषा देव राखै है। दानके प्रभावकरि मनुष्य इन्द्रका पद पावै अथवा मनवांछित सुखका भोक्ता इन्द्रके बराबरके देव होय है। जैसे वटका बीज अल्प है सो बडा वृक्ष होय परणवै है, तैसे दानतप अल्प भी महाफलके दाता हैं। सहस्रभट सुभटने यह व्रत लिया हुता कि मुनिके आहारकी बेला उलंघकर भोजन करूंगा। सो एक दिन ऋद्धिके धारी मुनि आहार को आए, सो निरंतराय आहार भया। तब रत्नवृष्टि आदि पंचाश्चर्य सुभटके घर भए। वह सहस्रभट धर्मके प्रसादतैं कुवेरकांत सेठ भया। सबके नेत्रोंको प्रिय, धर्मविषै जाकी बुद्धि सदा आसक्त है, पृथ्वीविषै विख्यात है नाम जाका, उदार, पराक्रमी, महा धनवान, जाके अनेक सेवक, जैसे पूर्णमासीका चन्द्रमा तैसा कांतिधारी, परमभोगोंका भोक्ता, सर्वशास्त्र प्रवीण, पूर्वधर्मके प्रभावकरि ऐसा भया। बहुरि संसारतैं विरक्त होय जिनदीक्षा आदरी। संसारको पार भया। तातैं जो साधुके आहारके समयतैं पहिले आहार न करनेका नियम धारै ते हरिषेण चक्रवर्तीकी नाईं महा उत्सवको प्राप्त होय है। हरिषेण चक्रवर्ती याही व्रतके प्रभाव करि महा पुण्यको उपार्जन कर अत्यन्त लक्ष्मीका नाथ भया। ऐसे ही जे सम्यग्दृष्टि समाधानके धारी भव्य जीव मुनिके निकट जायकर एकवार भोजनका नियम करै है, ते एकभुक्तिके प्रभावकर स्वर्ग विमानविषै उपजैं हैं। जहां सदा प्रकाश है अर रात्रि दिवस नाहीं, निद्रा नाहीं, तहां सागरापर्यंत अप्सरावोंके मध्य रमैं है। मोतिनके हार, रत्नोंके कडे, कटिसूत्र, मुकुट, बाजूबंद इत्यादि आभूषण पहरें, जिनपर छत्र फिरें

चमर ढुरें, ऐसे देवलोकके सुखभोग चक्रवर्त्यादि पद पाव ह । उत्तम व्रतोविष आसक्त जे अणुव्रतके धारक श्रावक, शरीरको विनाशीक जानकर शात भया ह हृदय जिनका, अष्टमी चतुर्दशीका उपवास मनशुद्ध होय प्रोषध सयुक्त धारे ह, ते सौधर्मादि सोलहव स्वर्गविष उपज ह, बहुरि मनुष्य होय भव वनको तज ह, मुनिव्रतके प्रभावकरि अहमिन्द्रपद तथा मुक्तिपद पाव हैं । जे व्रत गणशील तपकर मडित ह ते साधु जिनशासनके प्रसादकरि सवकर्मरहित होय सिद्धनिका पद पाव ह । जे तीनो काल विष जिनेंद्रदेवकी स्तुति कर मन वचन काय कर नमस्कार कर ह, अर सुमेरु पवत सारिखे अचल मिथ्यास्वरूप पवनकर नाहीं चल ह, गुणरूप गहने पहरें, शीलरूप सुगध लगाव ह, सो कईएक भव उत्तम देव उत्तम मनुष्यके सुख भोगकर परम स्थानको प्राप्त होय ह । ये इन्द्रियनिके विषय जीवने जगतविष अनतकाल भोगे, तिन विषयोसे मोहित भया विरक्त भावको नाहीं भज ह, यह बडा आश्चय ह ? जो इन विषयोको विषमिश्रित अन्नसमान जानकर पुरुषोत्तम कहिए चक्रवर्ती आदि उत्तम पुरुष भी सेव ह । ससारमें भ्रमत हुवे इस जीवके जो सम्यकत्व उपजै और एक भी नियम व्रत साध तो यह मुक्तिका बीज है । और जिन प्राणधारियोके एक भी नियम नाहीं ते पशु ह, अथवा फूटे कलश ह गुणरहित ह । अर जो भव्य जीव ससारसमुद्रको तिरा चाह ह, ते प्रमादरहित होय गुण अर व्रतनिकरि पूण सदा नियमरूप रह । जो मनुष्य कुबुद्धि खोटे कम नाहीं तजै ह अर व्रत नियम को नाहीं भजै ह ते जन्मके अधेकी नाइ अनतकाल भववनविष भटक ह । या भाति जो श्री अनन्तवीय केवली, तेई भए तीनलोकक चन्द्रमा, तिनके वचनरूप किरणके प्रभावत देव, विद्याधर, भूमिगोचरी, मनुष्य तथा तियच सव ही आनन्दको प्राप्त भए । कईएक उत्तम मानव मुनि भए तथा श्रावक भए । सम्यक्त्वको प्राप्त भए और कोई एक उत्तम तियच भी सम्यकदृष्टि श्रावक अणुव्रत धारी भए, अर चतुरनिकायके देवोमें कई एक सम्यकदृष्टि भए, क्योकि देवनिके व्रत नाहीं ।

अथानन्तर एक धमरथ नामा मुनि रावणको कहते भए—हे भद्र कहिये भव्यजीव ! तू भी अपनी

शक्ति प्रमाण कछु नियम धारण कर । यह धमरत्नका द्वीप ह, अर भगवान कवली महा महश्वर ह । या रत्नद्वीपत कछु नियमरूप रत्न ग्रहण कर । काहूको चिताके भारके वशि होय रह्या ह ?महापुरुषनिके त्याग खेदका कारण नाहीं । जस कोई रत्नद्वीपमें प्रवेश कर अर वाका मन भम–जो म कसा रत्न लू ? तस याका मन आकुलित भया ज्‍ो म कसा व्रत लू । यह रावण भोगासक्त, सो याके चित्तमें यह चिता उपजी जो मेरे खान पान तो सहज ही पवित्र ह । सुगध मनोहर पौष्टिक शुभ स्वाद, मासादि मलिन वस्तुके प्रसगत रहित आहार ह, अर हिसा व्रत आदि श्रावकका एकहू व्रत करिवे समथ नाहीं । म अणुव्रत हू धारवे समथ नाही तो महाव्रत कस धारू ? माते हाथी समान चित्त मेरा सव वस्तु विष भ्रमता फिर ह । म आतमभावरूप अकुशत याको वशकरवे समथ नाहीं । जे निर्ग्रंथका व्रत धरै ह, ते अग्निकी ज्वाला पीव ह, अर पवनको वस्त्रम बाध ह, अर पहाडको उठाव ह । म महाशूरवीर भी तप व्रत धरने समथ नाहीं । अहो धन्य ह वे नरोत्तम ! जो मुनिव्रत धार ह । म एक यह नियम धरू जो परस्त्री अत्यन्त रूपवती भी होय तो ताहि बलात्कार करि न इच्छू, अथवा सवलोकमे ऐसी कौन रूपवती नारी ह जो मोहि देखकर मनमथकी पीडी बिकल न होय ? अथवा ऐसी कौन परस्त्री ह जो विवेकी जीवनिके मनको वश कर ? कसी ह परस्त्री, परपुरुषके सयोगकरि दूषित ह अग जाका, स्वभावहीकरि दुगध, बिष्टाकी राशि, ताविष कहा राग उपज ? ऐसा मनमें विचार भावसहित अनत वीय केवलीको प्रणाम करि देव मनुष्य असुरोकी साक्षितामें प्रकट ऐसा वचन कहता भया –हे भगवान ! इच्छारहित जो परनारी ताहि म न सेवू । यह मेरे नियम ह । अर कुभकरण अर्हंत सिद्ध साधु केवलीभाषित धमका कारण अगीकार करि, सुमेरु पवत सारिखा ह अचल चित्त जाका, सो यह नियम करता भया–जो मैं प्रात ही उठकर प्रति दिन जिनेन्द्रकी अभिषेक पूजा स्तुति कर, मुनिको विधिपूवक आहार देयकरि आहार करू गा, अन्यथा नाहीं । मुनिके आहारकी बेला पहिले सवथा भोजन न करू गा । अर सव पुरुष, साधुनिको नमस्कार कर और भी घने नियम लिए । अर देव कहिये कल्पवासी, असुर

कहिये भवनत्रिक, अर विद्याधर मनुष्य हर्षत प्रफुल्लित ह नेत्र जिनके, सब केवलीको नमस्कार कर अपने अपने स्थान गए। रावण भी इन्द्रकोसी लीला धर प्रबल पराक्रमी लकाकी ओर पयान करता भया, अर आकाशके माग शीघ्र ही लकाविष प्रवेश किया। कसा ह रावण ? समस्त नरनारियोके समूहने किया ह गुण वरणन जाका। अर कसी ह लका ? वस्त्रादिकरि बहुत समारी ह। राजमहल में प्रवेश कर सुखसे तिष्ठते भए। राजमन्दिर सब सुखका भरया ह। पुण्याधिकारी जीवनिके जब शुभकमका उदय होय ह, तब नानाप्रकारकी सामग्री विस्तार होय ह। गुरुके मुखत धमका उपदेश पाय परमपदके अधिकारी होय है। ऐसा जानकरि जिनश्रुतमें उद्यमी ह मन जिनका ते बारम्बार निजपरका विचारकर धमका सेवन कर। विनयकर जिन शास्त्र सुननेवालोके जो ज्ञान ह सो रवि समान प्रकाशको धर ह मोहतिमिरका नाश कर ह।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष अन तवीयकेवलीके धर्मोपदेशका वणन करने वाला चौदहवा पव पूण भया॥ १४॥

अथान तर ताही केवलीके निकट हनुमानने श्रावक के व्रत लिए अर विभीषणने भी व्रत लिए, भाव शुद्ध होय व्रत नियम आदरे। जसा सुमेरु पवतका स्थिरपना होय ताहूत अधिक हनुमानका शील अर सम्यक्त परम निश्चल प्रशसा योग्य ह। जब गौतम स्वामीने हनुमानका अत्यन्त सौभाग्य आदि वणन किया तब मगध देशके राजा श्रेणिक हर्षित होय गौतमस्वामीसो पूछते भए। हे भगवन गणाधीश! हनुमान कसे लक्षणोका धरणहारा, कौनका पुत्र, कहा उपज्या ? म निश्चय कर ताका चरित्र सुन्या चाहू हू। तदि सत्पुरुषनिकी कथाकरि उपज्या ह प्रमोद जाको ऐसे, इन्द्रभूत कहिए गौतमस्वामी आह्लादकारी वचन कहते भए—'हे नप! विजयाध पवतकी दक्षिण श्रेणी पृथ्वीसो दश योजन ऊची, तहा आदित्यपुर नामा मनोहर नगर, तहा राजा प्रह्लाद, रानी केतुमती, तिनके पुत्र वायुकुमार, ताका विस्तीण वक्षस्थल लक्ष्मीका निवास। सो वायुकुमारको सम्पूण यौवन धरे देखकरि पिताके मनविष

इनके विवाहकी चिंता उपजी । कसा ह पिता ? परम्पराय सतानके बढावनेकी ह वाछा जाके । अब जहाँ यह वायुकुमार परणेगा सो कहिए ह । भरतक्षेत्रमें समुद्रत पूव दक्षिण दिशाके मध्य दतीनामा पवत, जाके ऊचे शिखर आकाश लगि रहे ह । नानाप्रकार वक्ष औषधि तिनकरि सयुक्त, अर जलके नीझरने झर ह, जहाँ इद्र तुल्य राजा महेंद्र विद्याधर, तान महेन्द्रपुर नगर बसाया । राजाके हृदयवेगा रानी, ताके अरिदमादि सौ पुत्र, महागुणवान, अर अजनी सुन्दरी पुत्री, सो मानो त्रलोक्यकी सुन्दरी जे स्त्री तिनके रूप एकत्रकरि बनाई ह । नील कमल सारिखे ह नेत्र जाके, कामके बाण समान तीक्ष्ण दूरदर्शी कर्णा तक कटाक्ष, अर प्रशसायोग्य करपल्लव, रक्तकमल समान चरण, हस्तीके कुभस्थल समान कुच, अर केहरी समान कटि, सुन्दर नितम्ब, कदलीस्तभ समान कोमल जघा, शुभलक्षण, प्रफुलित मालती समान मदु बाहुयुगल, गधर्वादि सव कलाकी जाननहारी, मानो साक्षात सरस्वती ही ह । अर रूपकरि लक्ष्मीसमान सवगुणमडित । एक दिवस नवयौवनमें कदुक क्रीडा करती भ्रमण करती सखियो सहित रमती पिताने देखी, सो जस सुलोचनाको देखकर राजा अकम्पनको चिंता उपजी हुती, तस अजनीको देख राजा महेन्द्रको चिंता उपजी । तब याके वर ढूढनेविष उद्यमी भए । ससारविष माता पिताको कन्या दुखका कारण ह । जे बडे कुलके पुरुष ह तिनको कन्याकी ऐसी चिंता रह ह । यह मेरी कन्या प्रशसायोग्य पतिको प्राप्त होय, अर बहुत काल याका सौभाग्य रह, अर कन्या निर्दोष सुखी रह । राजा महेन्द्रने अपने मत्रीनिसो कही—जो तुम सव वस्तुविष प्रवीण हो, कन्यायोग्य श्रेष्ठ वर मोहि बतावो । तदि अमरसागर मत्रीने कही—यह कन्या राक्षसोका अधीश जो रावण ताहि देवो । सव विद्याधरनिका अधिपति ताका सम्बन्ध पाय तुम्हारा प्रभाव समुद्रात पथ्वीविष होयगा, अथवा इन्द्रजीत अथवा मेघनादको देवो । अर यह भी तुम्हारे मनविषै न आव तो कन्याका स्वयबर रचो । ऐसा कहकरि अमरसागर मत्री चुप रह्या । तब सुमतिनामा मत्री महापडित बोल्या—रावणके तो स्त्री अनेक ह, अर महा अहकारी, ताको परणाव तो भी आपसमें अधिक प्रीति न होय । अर कन्या

की वय छोटी अर रावणकी वय अधिक सो बन नाहीं। इन्द्रजीत तथा मेघनादको परण तो उन दोनोमें परस्पर विरोध होय। आगे राजा श्रीषेणके पुत्रों विषै विरोध भया, तातै यह न करना। तब ताराधन्य मन्त्री कहता भया—दक्षिण श्रेणीविषै कनपुर नामा नगर है तहां राजा हिरण्यप्रभ ताके रानी सुमना, पुत्र सौदामिनीप्रभ, सो महा यशवंत कीर्तिधारी, नवयौवन, नववय, अति सुन्दर रूप, सब विद्या कलाका पारगामी, लोकनिके नेत्रनिकों आनन्दकारी, अनुपम गुण, अपनी चेष्टातै हर्षित किया है सकल मंडल जानै, अर ऐसा पराक्रमी है जो सब विद्याधर एकत्र होय तासो लडै तो भी ताहि न जीतै। मानो शक्तिके समूहकरि निरमाप्या है। सो यह कन्या वाहि देहु। जैसी कन्या तैसा वर, योग्य संबंध है। यह वार्ता सुनकर संदेहपराग नामा मन्त्री माथा धुनि, आंख मींचकर कहता भया। वह सौदामिनीप्रभ महा भव्य है ताकै निरन्तर यह विचार है कि यह संसार अनित्य है। सो संसारका स्वरूप जान बरस अठारहमें वैराग्य धारैगा, विषयाभिलाषी नाहीं, भोग रूपगजबंधन तुडाय गृहस्थीका त्याग करेगा, बाह्याभ्यंतर परिग्रह परिहारकरि केवलज्ञानको पाय मोक्ष जायगा, सो याहि परणावै तो कन्या पति विना शोभा न पावै, जैसे चन्द्रमा विना रात्रि नीकी न दीखै। कैसा है चन्द्रमा? जगतमें प्रकाश करणहारा है, तातैं तुम इन्द्रके नगर समान आदित्यपुर नगर है, रत्ननिकर सूर्य समान देदीप्यमान है। तहाँ राजा प्रह्लाद महाभोगी पुरुष, चन्द्रमासमान कांतिका धारी, ताके राणी केतुमती कामकी ध्वजा, तिनके वायुकुमार कहिए पवनंजय नामा पुत्र, पराक्रमका समूह, रूपवान, शीलवान, गुण-निधान, सब कलाका पारगामी, शुभ शरीर, महावीर, खोटी चेष्टासो रहित, ताके समस्त गुण सब लोकनिके चित्तविषै व्याप रहे है, हम सौ वर्षमें हू न कह सकें, तातै आप ही वाहि देख लेहु। पवनंजयके ऐसे गुण सुन सबही हर्षको प्राप्त भए। कैसा है पवनंजय? देवनिके समान है द्युति जाकी। जैसे निशाकरकी किरणोंकर कुमुदनी प्रफुल्लित होय तैसे कन्या भी यह वार्ता सुनकरि प्रफुल्लित भई।

अथानन्तर बसंत ऋतु आई, स्त्रियोंके मुख कमलकी लावण्यताकी हरणहारी शीतऋतु गई।

कमलिनी प्रफुल्लित भई, नवीन कमलोके समूहकी सुगधताकरि दशो दिशा सुगध भई, कमलोपर भ्रमर गु जार करत भये। कैसे है भ्रमर ? मकरद कहिये पुष्पनिकी सुगधरज ताके अभिलाषी है। वृक्षनिके पल्लव पत्र पुष्पादि नवीन प्रकट भए। मानो बसतक लक्ष्मीके विलाससो हर्षके अकुर ही उपजे हैं, अर आम मौल आए, तिनपर भ्रमर भ्रमे है, लोकनिके मनको कामबाण बींधते भए, कोकिलनके शब्द मानिनी नायिकानिके मानका मोचन करते भए। बसतसमय परस्पर नर नारियनिके स्नेह बढता भया। हिरण जो है सो दूबके अकुर उखाड हिरणीके मुखमें देता भया। सो ताको अमृत समान लागे, अधिक प्रीत होती भई। अर बेल वृक्षनित लिपटी, कैसी है बेल ? भ्रमर ही है नेत्र जिनके। दक्षिण दिशाकी पवन चाली सो सब ही को सुहावनी लागी। पवनके प्रसगकरि केसरके समूह पडे सो मानो बसतरूपी सिहके केशोके समूह ही है। महा सघन कौरव जातिके जे वृक्ष तिनपर भ्रमरो के समूह शब्द कर है, मानो वियोगिनी नायिकानिके मनको खेद उपजायवेको बसतने प्रेरे है। अर अशोक जातिके वृक्षनिकी नवीन कोपल लहलहाट कर है सो मानो सौभाग्यवती स्त्रियोके रागकी राशि ही भासै है। अर वनोमें केसूला (टेसू) अत्यन्त फूल रहे है, सो मानो वियोगिनी नायिकानिके मनको दाह उपजावनेको अग्नि समान है। दशो दिशाविषै पुष्पनिके समूहकी सुगन्ध रज ताहि मक-रद कहिये, सो परागकरि ऐसी फैल रही है मानो बसत जो है पटवास कहिए सुगध चूर्ण अबीर, ताकरि महोत्सव करै है। ताकरि एक दिन भी स्त्री पुरुष परस्पर वियोगको नहीं सहा सके हैं। ता ऋतुविषै विदेश गमन कैसे रुचै ? ऐसी रागरूप बसत ऋतु प्रकट भई। तासमय फागुण सुदि अष्टमीसो लेकर पूर्णमासी तक अष्टाह्निकाके दिन महामगलरूप है। सो इन्द्रादिक देव शची आदि पूजाके अर्थि नन्दीश्वर द्वीप गए, अर विद्याधर पूजाकी सामग्री लेयकर कैलाश गये। श्रीऋषभदेवके निर्वाणकल्याणक करि वह पर्वत पूजनीक है। सो समस्त परिवार सहित अजनीके पिता राजा महेन्द्र हू गए। तहा भगवान की पूजाकरि स्तुतिकरि अर भावसहित नमस्कारकर सुवर्णकी शिलापर सुखसों विराजे। अर राजा

प्रह्लाद पवनजयके पिता तेहू भरत चक्रवर्तीके कराये जे जिनमन्दिर तिनकी बंदनाकेअर्थि कलाश पवत पर गए। सो वदनाकरि पवतपर विहार करते राजा महेन्द्रकी दष्टिविष आए। सो महेन्द्रको देखकर प्रीतिरूप ह चित्त जिनका, प्रफुल्लित भए ह नेत्र जिनके, ऐसे जो प्रह्लाद ते निकट आए। तब महेन्द्र उठकरि सन्मुख आयकर मिले। एक मनोज्ञ शिलापर दोनो हितसो तिष्ठे, परस्पर शरीरादि कुशल पूछते भए। तब राजा महेंद्रने कही हे मित्र! मेरे कुशल काहेकी? कन्या वरयोग्य भई सो ताके परणावनेकी चिताकरि चित्त व्याकुल रह ह। जसी कन्या ह तसा वर चाहिए, अर बडा घर चाहिए, कौनको दें, यह मन भ्रम ह। रावणको परणाइए तो ताके स्त्री बहुत ह अर आयु अधिक ह। अर जो ताके पुत्रोविष देइ तो तिनमे परस्पर विरोध होय। अर हेमपुरका राजा कनकद्युति ताका पुत्र सौदामिनीप्रभ कहिए विद्युत्प्रभ सो थोडे ही दिन विष मुक्तिको प्राप्त होयगा, यह वार्ता सब पथ्वीपर प्रसिद्ध ह, ज्ञानीमुनिने कही ह। हमने भी अपने मन्त्रियोके मखत सुनी ह। अब हमारे यह निश्चय भया ह कि आपका पुत्र पवनजय कन्याके बरिवे योग्य ह, यही मनोरथ करि हम आए ह। सो आपके दशनकर अति आनन्द भया जाकरि कछु विकल्प मिटचा। तब प्रह्लाद बोले मेरे भी चिता पुत्रके परणावनेकी ह तातमैं भी आपका दशनकरि अर वचन सुन वचनत अगोचर सुखको प्राप्त भया, जो आप आज्ञा करो सो ही प्रमाण। मेरे पुत्रका बडा भाग्य जो आपने कपा करी। वर कन्याका विवाह मानसरोवरकेतट पर करना ठहरचा। दोनो सेनामे आनन्दके शब्द भए। ज्योतिषयोने तीन दिनका लग्न थाप्या।

अथानन्तर पवनजयकुमार अजनीके रूपकी अदभुतता सुनकरि तत्काल देखनेको उद्यमी भया। तीन दिन रह न सक्या सगमकी अभिलाषाकरि यह कुमार कामके वश हुआ, कामके दश वेगोकर पूरित भया। प्रथम विषयकी चिताकरि व्याकुल भया, अर दूजे वेग देखनेकी अभिलाषा उपजी, तीजे वग दीघ उच्छवास नाखने लग्या, चौथे वग कामज्वर उपज्या मानो चन्दनके अग्नि लागी, पाचवें वेग अग खेदरूप भया, सुगन्ध पुष्पादित अरुचि उपजी, छठे वेग भोजन विषसमान बुरा लाग्या, सातवें वेग

ताकी कथाकी आसक्तताकर विलाप उपज्या, आठवें वेग उन्मत्त भया विभ्रमरूप सपकर डस्या गीत नत्यादि अनेक चेष्टा करने लग्या, नवमे वग महामूर्छा उपजी, दशवें वेग दु खके भारसो पीडित भया। यद्यपि यह पवनजय विवेकी था, तथापि कामके प्रभावकरि विह्वलन भया। सो कामको धिक्कार हो, कसा ह काम ? मोक्षमागका विरोधी ह, कामके वेगकरि पवनजय धीरजरहित भया, कपोलनिके कर लगाय शोकवान होय बठ्या। पसेवसे टपके ह कपोलनित जाके, उष्ण निश्वासकर मुरझाए है होठ जाके, अर शरीर कम्पायमान भय, बरम्बार जभाई लेने लग्या, अर अत्यन्त अभिलाषारूप शल्यतै चितावान भया, स्त्रीके ध्यानत इन्द्रिय व्याकुल भई। मनोज्ञ स्थान भी याको अरुचिकारी भास, चित्तकी शून्यता धारता सता तजी ह समस्त शृगारादि क्रिया जान। क्षणमात्रविष तो आभूषण पहिर, क्षणमात्रविष खोलडार, लज्जारहित भया। क्षीण होयगया ह समस्त अग जाका, ऐसी चिता धारता भया कि वह समय कब होय जो म वा सुन्दरीको अपने पास बठी देखू अर वाके कमलतुल्य गात्रको स्पश करू, वा कामिनीसे रसकी वार्ता करू। वाकी बात ही सुन करि मेरी यह दशा भई ह, न जानिए और कहा होय। वह कल्याणरूपिणी जाके हृदयमे बस ह ता हृदयमे दु खरूप अग्निका दाह क्यो होइ ? स्त्री तो निश्चयसेती स्वभावत ही कोमलचित्त होय ह, मोहि दुख देवे अर्थि चित्त कठोर क्यो भया ? यह काम पथ्वीविष अनग कहाव ह। जाके अग नाहीं सो अगविना ही मोहि अगरहित कर ह, मार डार ह! जो याके अग होय तो न जाने कहा कर ? मरो देहविष घाव नाहीं परन्तु वेदना बहुत ह। म एक जगह बठ्या हू अर मन अनेक जगहमें भ्रम ह। ये तीन दिन वाहि देख विना मोहि कुशलसो न जाय, तात ताके देखनका उपाय करू जाकरि शाति होय। अथवा सव कार्योंमें मित्र समान जगतविषै और आनदका कारण कोई नाहीं, मित्रत सव काय सिद्ध होय ह। ऐसा विचार अपना जो प्रहस्त नामा मित्र, सर्व विश्वासका भाजन तासो पवनजय गदगद बाणी करि कहता भया। कसा ह मित्र ? किनारे ही बठ्या ह, छायाकी मूर्ति ही ह, अपना ही शरीर मानो विक्रियाकरि दूजा शरीर होय रह्या

ह, ताहि या भाति कही–हे मित्र ! तू मेरा सर्व अभिप्राय जान ह, तोहि कहा कहू ? परन्तु यह मेरी दु ख अवस्था मोहि बाचाल कर ह । हे सखे ! तुम बिना यह बात कौनसो कही जाय ? तू समस्त जगत की रीति जान ह । जस किसान अपना दु ख राजासो कह, अर शिष्य गुरुसो कह, अर स्त्री पतिसो कह, अर रोगी वैद्यसो कह, बालक मातासो कह तो दुख छूट, तस बुद्धिमान अपने मित्रसो कह, तात म तोहि कहू हू । वह राजा महेन्द्रकी पुत्री, ताक श्रवण ही कर कामबाणकरि मेरी विकलदशा भई ह, जो ताके दखे विना म तीन दिन निबाहिवे समथ नाहीं। तात कोई ऐसा यत्न कर जो म वाहि देखू , ताहि देखे विना मेरे स्थिरता न आवै, अर मेरी स्थिरतासो तोहि प्रसन्नता होय । प्राणियोको सव कायस जीतव्य वल्लभ ह, क्योकि जीतव्यके होते सते आत्मलाभ होय ह । या भाति पवनजयने कही तदि प्रहस्त मित्र हसे, मानो मित्रके मनका अभिप्राय पायकरि काय सिद्धिका उपाय करते भए । हे मित्र ! बहुत कहनेकरि कहा ? अपने माहीं भेद नाहीं, जो करना होय ताकरि ढील न करना । या भाति तिन दोनोके बचनलाप होय ह, एते ही सूय मानो इनके उपकार निमित्त अस्त भया । तब सूय के वियोगसो दिशा काली पड गई, अधकार फल गया, क्षणमात्रमें नीलावस्त्र पहिरे निशा प्रकट भई । तब रात्रिके समय उत्साह सहित मित्रको पवनजय कहत भए । हे मित्र ! उठो, आवो तहा चल, जहा वह मनकी हरणहारी प्राणवल्लभा तिष्ठ ह । तदि ये दोनो मित्र विमानमें बठि आकाशके माग चाले, मानो आकाशरूप समुद्रके मच्छ ही ह । क्षणमात्रविष जाय अजनीके सतखणे महलपर चढि झरोखो में मोतिनकी झालरोके आश्रय छिप बठे । अजनी सुन्दरी को पवनजय कुमारने देख्या कि पूणमासी के चन्द्रमाके समान ह मुख जाका, मुखकी ज्योतिसो दीपक मद ज्योति होय रह ह, अर श्याम–श्वेत–अरुण त्रिविध रगको लिए नेत्र महा सुन्दर ह, मानो कामके बाण ही ह, अर कुच ऊचे महा मनोहर श्रृगाररसके भरे कलश ही ह नवीन कोपलसमान लाल सुन्दर सुलक्षण ह हस्त अर पाव जाके, अर नखकी कातिकरि मानो लावण्यताको प्रकट करती शोभ ह, अर शरीर महासुन्दर ह, अति नाजुक

क्षीणकटि कुचोके भारनित मति कदाचित भग्न हो जाय–ऐसी शकाकरि मानो त्रिवलीरूप डोरीत प्रतिबद्ध ह। अर जाकी जघा लावण्यताको धर ह, सो केलेहूत अति कोमल, मानो कामके मदिरके स्तम्भ ही ह सो मानो वह कन्या चादनी गत ही ह। मुक्ताफलरूप नक्षत्रनिकरि इन्दीवर–कमल समान ह रूप जाका। सो पवनजय कुमार एकाग्र लगे ह नेत्र जाके, अजनीको भले प्रकार देख सुखकी भूमिको प्राप्त भया। ताही समय बसततिलका नामा सखी महाबुद्धिवती अजना सन्दरीत कहती भई– हे सुरूपे! तू धन्य ह जो तरे पिताने तुझ वायुकुमारको दीनी। ते वायुकुमार महा प्रतापी ह, तिनके गुण चन्द्रमाकी किरण समान उज्ज्वल ह, तिनकरि समस्त जगत व्याप्त होय रह्या ह। तिनके गुण सुन अन्य पुरुषोक गुण मद भास ह। जस समुद्रमे लहर तिष्ठ तस तू वा योधाके अगविष तिष्ठगी। कैसी है तू? महा मिष्टभाषिणी, चन्द्रकाति रत्ननिकी प्रभाको जीते ऐसी काति तेरी, तू रत्नकी धरा रत्नाचल पवतके तटविष पडी, तुम्हारा सम्बन्ध प्रशसाके योग्य भया, याकरि सवही कुटुबके जन प्रसन्न भए। या भाति जब पतिके गुण सखीने गाए तदि वह लाज्की भरी चरणनिके नखकी ओर नीचे देखती भई। आनन्दरूप जलकरि हृदय भर गया। अर पवनजयकुमारहू हषत फूल गए ह नेत्रकमल जाके, हर्षित भया ह वदन जाका।

ता समय एक मिश्रकेशी नामा दूजी सखी होठ दाबिकर चोटी हिलायकर बोली अहो परम अज्ञान तेरा, यह कहा पवनजयका सम्बन्ध सराह्या? जो विद्युतप्रभ कुवरसो सम्बन्ध होता तो अतिश्रेष्ठ था। जो पुण्यके योगत कन्या का विद्युतप्रभ पति होता तो याका जन्म सफल होता। हे बसतमाला! विद्युतप्रभ और पवनजयमें इतना भेद ह जितना समुद्र अर गोष्पदमें भेद ह। विद्युतप्रभकी कथा बडे बडे पुरुषोके मुखत सुनी ह। जस मेघके बूदकी सख्या नाहीं तस ताके गुणनिका पार नाहीं। वह नवयौवन ह। महा सौम्य, विनयवान, ददीप्यमान, प्रतापवान, रूपवान, गुणवान, विद्यावान, बुद्धिमान, बलवान सव जगत चाह ह दशन जाका। सब यही कह ह कि यह कन्या वाहि देनी थी। सो कन्याके बाप

ने सुनी– वह थोडे ही वर्षमें मुनि होयगा तातें सम्बन्ध न किया सो भला न किया, विद्युत्प्रभका संयोग एक क्षणमात्र ही भला अर क्षुद्र पुरुषका संयोग बहुतकाल भी किस अर्थ ? यह वार्ता सुनकर पवनंजय क्रोधरूप अग्निकर प्रज्वलित भए, क्षणमात्रमें और ही छाया होयगई, रसतें विरस आयगया, लाल आंख होय गई, होंठ डसकर तलवार म्यानसों काढी अर प्रहस्त मित्रसों कहते भए–ताही हमारी निंदा सुहावे है अर यह दासी ऐसे निंद्यवचन कहे अर यह सुने सो इन दोनोंका शिर काट डारूं । विद्युतप्रभ इनके हृदयका प्यारा है, सो कैसे सहाय करेगा ? यह वचन पवनंजयके सुन प्रहस्तमित्र रोष कर कहता भया–हे सखे हे मित्र ! ऐसे अयोग्य वचन कहनेकरि कहा ? तिहारी तलवार बडे सामंतनिके सीसपर पडे, स्त्री अबला अबध्य है तापर कैसे पडे ? यह दुष्ट दासी इनके अभिप्राय विना ऐसे कहे है । तुम आज्ञा करो तो या दासीको एकदंडकी चोटसों मार डालूं, परन्तु स्त्रीहत्या, बालहत्या, पशुहत्या, दुर्बल मनुष्यकी हत्या इत्यादि शास्त्रमें वर्जनीय कही है । ये वचन मित्रके सुनकर पवनंजय क्रोधको भूल गए अर मित्रको दासी पर क्रूर देखिकर कहते भए । हे मित्र ! तुम अनेक संग्रामके जीतनहारे, यशके अधिकारी, माते हाथियोंके कुंभस्थल विदारनहारे तुमको दीनपर दया ही करनी योग्य है । अर सामान्य पुरुष भी स्त्रीहत्या न करें तो तुम कैसे करो ? जे बडे कुलमें उपजे पुरुष हैं अर गुणोंकरि प्रसिद्ध हैं, शूरवीर हैं तिनका यश अयोग्य क्रियातें मलिन होय है । तातें उठो जा मार्ग आए ताही मार्ग चालो । जैसे छाने आए हुते तैसे ही चाले । पवनंजयके मनमें भ्रांति पडी कि या कन्याको विद्युतप्रभ ही प्रिय है, तातें वाकी प्रशंसा सुने है, हमारी निंदा सुने है । जो याहि न भावे तो दासी काहेको कहे । यह रोष धर अपने कहे स्थानक पहुंचे । पवनंजयकुमार अंजनीसों अति फीके पड गए । चित्तमें ऐसे चितवते भए कि दूजे पुरुष का है अनुराग जाको ऐसी जो अंजना सो विकराल नदीकी नाईं दूर हीतें तजनी । कैसी है वह अंजनारूप नदी ? संदेहरूप जे विषम भमर तिनको धरे है, अर खोटे भावरूप जे ग्राह तिनसों भरी है । अर वह नारी वनी समान है, अज्ञानरूप अंधकारसों भरी इंद्रियरूप जे सर्प तिनको धरे है, पंडितनि

को कदाचित न सेवना। खोटे राजाकी सेवा और शत्रुके आश्रय जाना और शिथिलमित्र और अनासक्त स्त्री तिनते सुख कहा ? देखो जे विवेकी हैं ते इष्टबन्धु तथा सुपुत्र अर पतिव्रता नारी इनको भी त्यागकर महाव्रत धारै हैं और शूद्र पुरुष कुसंग भी नहीं तजे हैं। मद्यपायी वैद्य और शिक्षारहित हाथी, अर निःकारण वैरी, क्रूरजन, अर हिंसारूपधर्म, अर मूर्खनित चर्चा, अर मर्यादाका उलंघना, निर्दयी देश, बालक राजा, स्त्री परपुरुष अनुरागनी इनको विवेकी तजैं। या भांति चिंतवन करता पवनंजयकुमार ताके जैसे दुलहिनि सो प्रीति गई तैसे रात्रि हू गई, अर पूर्व दिशाविषै सन्ध्या प्रकट भई, मानो पवनंजयने अंजनीका राग छोड्या सो भ्रमता फिरै है। (भावार्थ) रागका स्वरूप लाल है अर इनते जो राग मिट्या सो तानै सन्ध्याके मिसकरि पूर्व दिशामें प्रवेश किया है। अर सूर्य ऐसा आरक्त उग्या। जैसे स्त्रीके कोपते पवनंजयकुमार कोप्या। कैसा है सूर्य ? तरुणबिंबको धरे है। बहुरि जगतकी चेष्टाका कारण है। तब पवनंजयकुमार प्रहस्त मित्रको कहते भए, अत्यन्त अरुचिको धरे अंजनीसो विमुख है मन जाका, हे मित्र ! यहां अपने डेरे हैं सो यहांते वाका स्थानक समीप है। सो यहां सर्वथा न रहना। ताको स्पर्शकर पवन आवै सो मोहि न सुहावै। तातैं उठो, अपने नगर चालैं, ढील करनी उचित नाहीं। तब मित्र कुमारकी आज्ञा प्रमाण सेनाके लोगोंको पयानेकी आज्ञा करता भया। समुद्रसमान सेना रथ घोड़े, हाथी पयादे इनका बहुत शब्द भया। कन्याका निवास नजीक ही है सो सेनाके पयानके शब्द कन्याके कानमें पड़े तब कुमारका कूच जानकर कन्या अति दुखित भई। वे शब्द कानको ऐसे बुरे लागे जैसे वज्रकीशिला कानमें प्रवेश करै अर ऊपरसों मुद्गरनिकी घात पड़े। मनमें विचारती भई—हाय हाय ! मोहि पूर्वोपार्जित कर्मने महानिधान दिया था सो छिनाय लिया, कहा करूं ? अब कहा होय। मेरे मनोरथ हुता जो इस नरेन्द्रके साथ क्रीड़ा करूंगी सो और ही भांति दृष्टि आवै हैं, तो अपराध कछु न जान पड़े है, परन्तु यह मेरी बैरिन मिश्रकेशी ताने निंद्य वचन कहे हुते सो कदाचित कुमारको यह खबर पहुंची होय अर मोविषै कुमाया करी होय। यह विवेकरहित पापिनी कटुभाषिणी

धिक्कार, याहि जान मेरा प्राणवल्लभ मोत कपारहित किया । अब जो मेरे भाग्य होय अर मेरा पिता मुझपर कपाकरि प्राणनाथको पाछा बहोडे अर उनकी सुदृष्टि होय तो मेरा जीतव्य ह । अर जो नाथ मेरा परित्याग कर तो म आहारको त्यागकरि शरीरको तजू गी । एसा चितवन करती वह सती मूर्छा खाय धरतीपर पडी । जसे बेलिको जड उपाडी जाय अर वह आश्रयत रहित होय कुमलाय जाय, तसैं कुमलाय गई । तब सब सखीजन—यह कहा भया ऐसे कहकर अति सभ्रमको प्राप्त भई । शीतल क्रिया सो याहि सचेत किया । तब यासू मूर्छाका कारण पूछ्या सो यह लज्जाकरि कहि न सक, निश्चल लोचन होय रही ।

अथानन्तर पवनजयकी सेनाके लोक मनविष आकुल भए अर विचार करते भए जो नि कारण कूच काहेका ? यह कुमार विवाह करने आया हुता सो दुल्हिनको परण करि क्यो न चल, याके कोप काहेत भया ? याँको कौनने कह्या ? सव वस्तुकी सामग्री ह, काहू वस्तुकी कमी नाहीं । याका सुसर बडा राजा कन्या अति सुन्दरी, यह पराङमुख क्यो भया ? तब कईएक हँसि करि कहते भए याका नाम पवनजय ह सो अपनी चचलतात पवनकू को जीत ह । अर कईएक कहते भए अभी स्त्रीका सुख नाहीं जान ह तात ऐसी क याको छोडकरि जायवेको उद्यमी भया ह । जो याक रतिकालका राग होय तो जस वनहस्ती प्रेमक बधनकरि बध ह तसे यह बध जाय । या भाति सेनाके सामत कह हं, अर पवनजय शीघगामी वाहन पर चढ चलनेको उद्यमी भए । तब कन्याका पिता राजा महेन्द्रकुमार कूच सुनकर अति आकुल भया, समस्त भाईनि सहित राजा प्रह्लादप आया । प्रह्लाव अर महेंद्र दोनो आय, कुमारको कहते भए—हे कल्याणरूप ! हमको शोकका करणहारा यह कूच काहेको करिए ह । अहो कौनने आपको कह्या ह, शोभायमान तुम कौनको अप्रिय हो, जो तुमको न रुचे सो सबहीको न रुच । तिहारे पिताका अर हमारा वचन जो सदोष होय तो भी तुमको मानना योग्य ह । सो तो हम समस्त दोषरहित कह ह तुमको अवश्य धारना योग्य ह । हे शूरवीर ! कूचत पाछे फिरो, हमारे

बोउनिके मनवाछित सिद्ध करो । हम तुम्हारे गुरुजन है, सो तुम सारिखे सतपुरुषो को गुरुजनोकी आज्ञा आनन्दका कारण ह । ऐसा जब राजा महेद्रने अर प्रह्लादने कह्या तब ये कुमार धीर वीर विनयकरि नमीभूत भया ह मस्तक जाका, तब तातन अर ससुरने बहुत आदरसो हाथ पकडे तब यह कुमार गुरुजनोकी जो गुरुता सो उलघनको असमथ भया । तिनकी आज्ञात पाछा बाहुड्या अर मनमे विचारी कि याहि परणकरि तजदू गा ताकि दु खसो जन्म पूरा कर, अर परका भी याहि सयोग न होय सक ।

अथानन्तर क या प्राणबल्लभको पाछा आया सुनकर हर्षित भई । रोमाच होय आए । लग्नके समय इनका विवाहमगल भया । जब दुलहिनका करग्रहण कराया सो अशोकके पल्लव समान आरक्त अति कोमल कन्याके कर सो या विरक्तचित्तके अग्निकी ज्वाला समान लाग । विना इच्छा कुमारकी दृष्टि कन्याके तनपर काहू भाति गई सो क्षणमात्र भी न सह सक्या, जसे कोई विद्युतपातको न सह सक । क याके प्रीति, वरके अप्रीति, यह याके भावको न जान, ऐसा जान मानो अग्नि हसती भई और शब्द करती भई, बडे विधानसो इनको विवाहकरि सवबधुजन आनदको प्राप्त भए । मानसरोवरके तट विवाह भया । नानाप्रकार वृक्षलता फल पुष्प विराजित जो सुन्दर वन तहा परम उत्सवकरि एक मास रहे । परस्पर दोनो समधियोने अति हितके वचन आलाप कहे । परस्पर स्तुति महिमा करी, सन्मान किए, पुत्रीके पिताने बहुत दान दिया । अपने अपने स्थानको गए ।

हे श्रेणिक ! जे वस्तुका स्वरूप नाहीं जान है अर विना समझे पराये दोष ग्रह, ते मूख है । अर पराए दोष कर आप ऊपर दोष आय पडे ह सो सब पापकमका फल ह । पाप आतापकारी ह ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्र थ ताकी भाषा वचनिकाविष अजनापवनजयका विवाह वणन करने वाला पन्द्रहवा पव पूण भया ॥१५॥

अथानन्तर पवनजयकुमारने अजनी सुन्दरीको परण कर ऐसी तजी जो कबहू बात न बूझ । सो वह सुन्दरी पतिके असभाषणत अर कपादष्टि कर न देखवेत परम दु ख करती भई । रात्रिमें भी निद्रा न लेय । निरतर अश्रुपात ही झरा कर, शरीर मलिन होय गया, पतिसो अति स्नेह, धनीका नाम अति सुहाव, पवन जाव सो भी अति प्रिय लाग, पतिका रूप तो विवाह वेदीमें अवलोकन कीना हुता ताका मनमें ध्यान करवो करे अर निश्चल लोचन सव चेष्टारहित बठी रह । अ तरग ध्यानमें पतिका रूप निरूपणकरि बाह्य भी दशन किया चाह सो न होय । तादि शोककरि बठी रह, चित्रपटविष पतिका चित्राम लिखनेका उद्यम कर, तदि हाथ काप करि कलम गिर पडे । दुरबल होय गया ह समस्त अग जाका ढीले होय कर गिर पडे ह सव आभूषण जाके, दीघ उष्ण जे उच्छवास तिनकरि मुरझाय गए ह कपोल जाक अगम वस्त्रके भी भारकरि खदको धरती सती अपने अशुभ कर्मोंको निदती, माता पितानिको बारम्बार याद करती सती, शू य भया ह हृदयजाका, दु खकर क्षीण शरीर, मूर्छा आयजाय, चेष्टा रहित होय जाय, अश्रुपातकरि रुक गया ह कठ जाका, दु खकर निकस ह वचन जाके, विह्वल भई सती, देव कहिए पूर्वोपार्जित कम ताहि उलाहना देय च द्रमाकी किरण हू करि जाका अतिदाह उपज, अर मदिरविष गमन करती मूर्छा खाय गिर पडे, अर विकलपकी मारी ऐसे विचार करि अपने मनहीमें पतिसो बतलाव । हे नाथ ! तिहार मनोज्ञ अ ग मेरे हृदयमे निर तर तिष्ठ ह मोहि आताप क्यो कर ह, अर म आपका कछु अपराध नाहीं किया, नि कारण मेरेपर कोप क्यो करो ? अब प्रसन्न होवो, म तिहारी भक्त हू, मेरे चित्तके विषादको हगे । जस अ तरग दशन देवो हो, तस बहिरग देवो । यह म हाथ जोड बीनती करू हू । जस सूय विना दिनकी शोभा नाहीं और च द्रमा विना रात्रिकी शोभा नाहीं और दया क्षमा शील सतोषादि गुण विना विद्या शोभ नाही, तस तिहारी कपा विना मेरी शोभा नाहीं । या भाति चित्तविष बस जो पति ताहि उलाहना देय अर बडे मोतियो समान नेत्रनित आसुवनिकी बू द झरै, महा कोमल सेज अर अनेक सामग्री सखीजन कर पर तु याहि कछु न सुहाव, चक्रारूढ समान मनमें

उपज्या है वियोगसे भ्रम जाको, स्नानादि संस्कार रहित कभी भी केश समारे गूथे नाहीं, केश भी रूखे पड गए, सव क्रियामें जड, मानो पृथ्वीहीका रूप होय रही है। अर निरन्तर आसवनिके प्रवाहत मानो जलरूप ही होय रही है। हृदयके दाहके योगत मानो अग्निरूप ही होय रही है। अर निश्चल चित्तके योगत मानो वायुरूप ही होय रही है। अर शून्यताके योगत मानो गगनरूप ही होय रही है। मोहके योगत आच्छादित होय रह्या है ज्ञान जाका, भूमिपर डार दिए हैं सव अंग जानै, बैठ न सकै अर तिष्ठै तो उठ न सकै, अर उठै तो देहीको थाभ न सकै, सो सखीजनका हाथ पकडि विहार करै सो पग डिग जाय। अर चतुर जे सखीजन तिनसो बोलनेकी इच्छा करै परन्तु बोल न सकै। अर हंसनी कबूतरी आदि गृहपक्षी तिनसो क्रीडा किया चाहै पर कर न सकै। यह विचारी सबोसे न्यारी बैठी रहै। पतिमें लग रहा है मन अर नेत्र जाका, निःकारण पतित अपमान पाया सो एक दिन वरस बराबर जाय। यह याकी अवस्था देखि सकल परिवार व्याकुल भया, सब ही चितवते भए कि—एता दुख याहि विना कारण क्यो भया है? यह कोई पूर्वोपार्जित पापकर्मका उदय है। पिछले जन्ममें यान काहूके सुखविषै अंतराय किया है, सो याकै भी सुखका अंतराय भया। वायुकुमार तो निमित्तमात्र है। यह बारी भोरी निर्दोष याहि परणकरि क्यो तजी? ऐसी दुलहिन सहित देवनिसमान भोग क्यो न करै? याने पिताके घर कभी रंचमात्र हू दुख न देख्या सो यह कर्मानुभव कर दुखके भारको प्राप्त भई। याकी सखीजन विचारै है कि कहा उपाय करै, हम भाग्यरहित हमारे यत्नसाध्य यह कार्य नाहीं। कोई अशुभकर्मकी चाल है। अब ऐसा दिन कब होयगा, वह शुभ मुहूर्त शुभ बेला कब होयगी जो वह प्रीतम या प्रियाको समीप लेय बैठेगा अर कृपादृष्टिकर देखैगा, मिष्टवचन बोलैगा। यह सबके अभिलाषा लाग रही है।

अथानन्तर राजा वरुण ताके रावणसो विरोध पड्या, वरुण महा गर्ववान रावणकी सेवा न करै, सो रावणने दूत भेज्या। दूत जाय वरुणसो कहता भया। दूत धनीकी शक्तिकर महाकांतिको धरै

है। अहो विद्याधराधिपते वरुण! सबका स्वामी जो रावण तानैं यह आज्ञा करी है जो आप मोहि प्रणाम करो, अथवा युद्धकी तयारी करो। तब वरुणने हसकर कही, हो दूत! कौन है रावण, कहा रह है जो मोहि दबाव है, सो मैं इन्द्र नाहीं हूं, वह वृथा गर्वित लोकनिंद्य हुता, मैं वैश्रवण नाहीं, मैं यम नाहीं, मैं सहस्ररश्मि नाहीं, मैं मरुत नाहीं। रावणके देवाधिष्ठित रत्नोंकरि महा गर्व उपज्या है। वाकी सामर्थ्य है तो आवो, मैं वाहि गर्वरहित करूंगा। अर तेरी मृत्यु नजीक है जो हमसो ऐसी बात कहे है। तब दूत जायकर रावणसो सब वृत्तांत कहता भया। रावणनें कोपकर समुद्र तुल्य सेनासहित जाय वरुणका नगर घेरचा अर यह प्रतिज्ञा करी जो मैं याहि देवाधिष्ठित रत्न बिना ही वश करूंगा। मारूं अथवा बाधूं। तब वरुणके पुत्र राजीव पुंडरीकादिक क्रोधायमान होय रावणके कटकपर आए। रावणकी सेनाके अर इनके बडा युद्ध भया। परस्पर शस्त्रनिके समूह छेद डारे। हाथी हाथियोसें, घोडे घोडोसें, रथ रथोसे, भट भटोसे महायुद्ध करते भए। बडे २ सामंत होंठ डसि डसि करि लाल नेत्र हैं जिनके वे महा भयानक शब्द करते भए। बडी बेरतक संग्राम भया। सो वरुणकी सेना रावणकी सेनासो कछुइक पीछे हटी। तब अपनी सेनाको हटी देख वरुण राक्षसनिकी सेनापर आप चलायकरि आया, कालाग्निसमान भयानक तब रावण वरुणको दुर्निवारण भूमिविषै सन्मुख आवता देखकर आप युद्ध करनेको उद्यमी भया। वरुणके रावणके आपसविषै युद्ध होणे लगा, अर वरुणके पुत्र खरदूषणसो युद्ध करते भए। कैसे हैं वरुणके पुत्र? महाभटोके प्रलय करनहारे, अर अनेक माते हाथियोके कुम्भस्थल विदारनहारे। सो रावण क्रोधकरि दीप्त है मन जाका, महाक्रूर जो भृकुटि तिनकरि भयानक है मुख जाका, कुटिल हैं केश जाके, जबलगि धनुषके बाण तान वरुणपर चलावै तब लग वरुणके पुत्रोनें रावणके बहनेऊ खरदूषणको पकड लिया, तब रावणनें मनमें विचारी जो हम वरुणसो युद्ध करें अर खरदूषणका मरण होय तो उचित नाहीं, तातें संग्राम मने किया। जे बुद्धिमान हैं ते मंत्रविषै चूकै नाहीं। तब मंत्रियोने मंत्रकर सब देशोके राजा बुलाए, शीघ्रगामी पुरुष भेजे, सबनको लिखा बडी-सेना

सहित शीघ्र ही आवो। अर राजा प्रह्लादपर भी पत्र लेय मनुष्य आया सो राजा प्रह्लादने स्वामीकी भक्तिकरि रावणके सेवकनिका बहुत सन्मान किया, अर उठकर बहुत आदरसो पत्र माथैं चढाया अर बाच्या। सो पत्रविषै या भांति लिखा था कि पातालपुरके समीप कल्याण रूप स्थानकमैं तिष्ठता महा-क्षेमरूप विद्याधरोके अधिपतियोका पति सुमालीका पुत्र जो रत्नश्रवका ताका पुत्र राक्षसवंशरूप आकाशविषै चन्द्रमा ऐसा जो रावण सो आदित्य नगरके राजा प्रह्लादको आज्ञा करै है। कैसा है प्रह्लाद? कल्याणरूप है, न्यायका वेत्ता है, देशकालविधानका ज्ञायक है। हमारा बहुत वल्लभ है। प्रथम तो तिहारे शरीरकी कुशल पूछै है, बहुरि यह समाचार है कि—हमको सब खेचर भूचर प्रणाम करै हैं, हाथोकी अंगुली तिनके नखकी ज्योतिकर ज्योतिरूप किए है निज शिरके केश जिनने, अर एक अति बुद्धि वरुण पाताल नगरमें निवास करै है, सो आज्ञातै पराङमुख होय लडनेको उद्यमी भया है। हृदयकों व्यथाकारी विद्याधरोके समूहकरि युक्त है। समुद्रके मध्य द्वीपको पायकर वह दुरात्मा गर्वको प्राप्त भया है, सो हम ताके ऊपर चढकर आए है। बडा युद्ध भया। वरुणके पुत्रोंने खरदूषणको जीवता पकडया है। सो मंत्रियोने मंत्रकरि खरदूषणके मरणकी शंकातै युद्ध रोक दिया है, तातै खर दूषणको छुडावना अर वरुणको जीतना सो तुम अवश्य शीघ्र आइयो, ढील मत करियो, तुम सारिखे पुरुष कर्तव्यमें न चूकै। अब सब विचार तिहारे आयवेपर है। यद्यपि सूर्य तेजका पुंज है तथापि अरुण सारिखा सारथी चाहिए। तब राजा प्रह्लाद पत्रके समाचार जानि मंत्रियोसो मंत्र कर रावणके समीप चलनेको उद्यमी भया। तब प्रह्लादको चलता सुनकर पवनंजयकुमारने हाथ जोडि गोडनिते धरती स्पर्श नमस्कारकर विनती करी। हे नाथ! मुझ पुत्रके होते सते तुमको गमन युक्त नाहीं, पिता जो पुत्रको पालै है सो पुत्रका यही धर्म है कि पिताकी सेवा करै। जो सेवा न करै तो जानिए पुत्र भया ही नाहीं। तातै आप कूच न करै, आज्ञा करै। तब पिता कहते भए—हे पुत्र! तुम कुमार हो, अबतक तुमने कोई युद्ध देख्या नाहीं। तातै तुम यहां रहो, मैं जाऊंगा। तब पवनंजयकुमार कनकाचलके तट

समान जो वक्षस्थल ताहि ऊंचाकर तेजके धरणहारे वचन कहता भया—हे तात ! मेरी शक्तिका लक्षण तुमने देख्या नाहीं, जगतके दाहवेमें अग्निके स्फुलिगेका क्या वीर्य परखना। तुम्हारी आज्ञारूप आशिष कर पवित्र भया है मस्तक मेरा, ऐसा जो मैं इन्द्रको भी जीतनेको समर्थ हूं, यामें संदेह नाहीं। ऐसा कहकर पिताको नमस्कारकर महाहर्ष संयुक्त उठकरि स्नान भोजनादि शरीरकी क्रिया करी अर आदरसहित जे कुलमें वृद्ध हैं, तिन्होने अशीष दीनी। भावसहित अरहंत सिद्धको नमस्कारकरि परम कांतिको धरतासंता महा मंगलरूप पितासों विदा होवेको आया सो पिताने अर माताने मंगलके भयतैं आंसू न काढे, आशीर्वाद दिया। हे पुत्र ! तेरी विजय होय, छातीसों लगाय मस्तक चूम्या। पवनंजय कुमार श्रीभगवानका ध्यान धर माता पिताको प्रणामकरि जे परिवारके लोग पायन पडे तिनको बहुत धीर्य बंधाय सबसों अति स्नेह कर विदा भए। पहले अपना दाहना पांव आगे धर चाले। फुरक है दाहिनी भुजा जिनकी, अर पूर्ण कलश जिनके मुखपर लाल पल्लव तिनपर प्रथम ही दृष्टि पडी अर थंभसों लगी हुई द्वार खडी जो अंजना सुंदरी आंसुवनि करि भीज रहे हैं नेत्र जाके, तांबूलादिरहित धूसरे होय रहे हैं अधर जाके, मानो थंभविषै उकेरी पुतली ही है। कुमारकी दृष्टि सुन्दरीपर पडी सो क्षणमात्रविषै दृष्टि संकोच कोपकरि बोले—हे दुरीक्षणे कहिए दुःखकारी है दर्शन जाका, या स्थानकतैं जावो, तेरी दृष्टि उल्कापात समान है, सो मैं सहार न सकूं। अहो बडे कुलकी पुत्री कुलवंती, तिनमें यह ढीठपणा कि मने किए भी निलज्ज ऊभी रहे। ये पतिके अतिक्रूर वचन सुने तो भी याहि अति प्रिय लागे—जैसे घने दिनके तिसाए पपयेको मेघकी बूंद प्यारी लागै सो पतिके वचन मनकरि अमृत समान पीवती भई, हाथ जोडि चरणारविंदकी ओर दृष्टि धरि गदगद वाणीकर डिगते डिगते वचन नीठि नीठि कहती भई—हे नाथ ! जब तुम यहां बिराजते हुते तबहू मैं वियोगिनी ही हुती परन्तु आप निकट हैं सो आशाकरि प्राण कष्टतैं टिक रहे हैं। अब आप दूर पधारे हैं मैं कैसे जीऊंगी ? मैं तिहारे वचनरूप अमृतके आस्वादनेकी अति आतुर तुम परदेशको गमन करते समय स्नेहतैं दयालु चित्त होयकर

वस्तीके पशु पक्षियोको भी दिलासा करी, मनुष्योकी तो कहा बात ? सबसो अमत समानवचन कहे। मेरा चित्त तिहारे चरणारविंदविष ह, म तिहारी अप्राप्तिकर अति दुखी औरनिकी श्रीमुखत एती दिलासा करी, मेरी औरनिके मुखत ही दिलासा कराई होती। जब मोहि आपने तजी तब जगतमें शरण नाहीं, मरण ही ह। तब कुमारने मुख सकोचकर कोपसो कही—मर। तब यह सती खेद खिन्न होय धरतीपर गिर पडी। पवनकुमार यासो कुमयाहीविष चाले। बडी ऋद्धि सहित हाथी पर असवार होय सामतोसहित पयान किया। पहले ही दिनविष मानसरोवर जाय डेरे भए, पुष्ट ह बाहन जिनके सो विद्याधरनिकी सेना देवोकी सेना समान आकाशत उतरती सती अति शोभायमान भासती भई। कसी ह सेना ? नानाप्रकारके जे बाहन अर शस्त्र तेई ह आभूषण जाके। अपने २ बाहनोके यथायोग्य यत्न कराये, स्नान कराये, खानपानका यत्न कराया।

अथानन्तर विद्याके प्रभावत मनोहर एक बहुखणा महल बनाया, चौडा अर ऊचा, सो आप मित्र सहित महल ऊपर विराजे। सग्रामका उपज्या ह अति हर्ष जिनके झरोखनिकी जाली के छिद्रकरि सरोवरके तटके वृक्षनिको देखते हुते, शीतल मद सुगध पवनकरि वृक्ष मद मद हालते हुते अर सरोवरविष लहर उठती हुती। सरोवरके जीव कछुवा, मीन, मगर अर अनेकप्रकारके जलचर गवके धरणहारे तिनकी भुजानिकरि किलोल होय रही ह। उज्ज्वल स्फटिक मणि समान निमल जल ह जाम, नानाप्रकारके कमल फूल रहे है। हस, कारड, क्रौंच सारस इत्यादि पक्षी सुन्दर शब्द कर रहे हैं, जिनके सुननेत मन अर कण हर्ष पाव। अर भमर गुजार कर रह ह। तहा एक चकवी, चकवे विना अकेली वियोगरूप अग्नित तप्तायमान, अति आकुल, नानाप्रकार चेष्टाकी करणहारी, अस्ताचलकी ओर सूय गया सो वा तरफ लग रहे ह नेत्र जाके, अर कमलिनीके पत्रनिके छिद्रोविष बारम्बार देख ह, पाखनिको हिलावती उठै है अर पडे है ? अर मृणाल कहिए कमलकी नालका तार ताका स्वाद विष समान देख है, अपना प्रतिबिम्ब जलविष देखकरि जाने ह कि वह मेरा पीतम ह, सो ताहि बुलाव ह, सो प्रतिबिम्ब कहा

आव ? तदि अप्राप्तित परम शोकको प्राप्त भई ह । कटक आय उतरघा ह, सो नाना देशनिके मनुष्योंके शब्द अर हाथी, घोडा आदि नानाप्रकारके पशुवनिके शब्द सुनकर अपने वल्लभ चकवाकी आशाकर, भम ह चित्त जाका, अश्रुपात सहित हं लोचन जाके, तटके वक्षपर चढि चढिकरि दशोदिशाकी ओर देख ह, पीतमको न देखकरि अति शीघ्र ही भूमिपर आय पडे ह पाख हलाय कमलिनीकी जो रज शरीरके लागी ह सो दूर कर ह । सो पवनकुमारने घनी बेर तक दष्टि धारि चकवीकी दशा देखी। दयाकर भीज गया ह चित्त जाका, चित्तमें ऐसा विचार ह कि पीतमके वियोग करि यह शोक रूप अग्निविष बल ह । यह मनोज्ञ मानसरोवर, अर चन्द्रमाकी चादनी चदन समान शीतल, सो या वियोगिनी चकवीको दावानल समान ह, पति विना याको कोमल पल्लव भी खडग समान भास हैं । चद्रमाकी किरण भी वज समान भास ह स्वग हू नरकरूप होय आचर ह । ऐसा चितवनकर याका मन प्रिया विष गया । अर या मानसरोवरपर ही विवाह भया हुता सो वे विवाहके स्थानक दष्टिमें पडे सो याको अति शोकके कारण भए, ममके भेदनहारे दु सह करौत समान लागे । चित्तविष विचारता भया—हाय ! हाय ! म क्रूरचित्त पापी, वह निर्दोष वथा तजी, एक रात्रिका वियोग चकवी न सहार सक तो बाईस वषका वियोग वह महासुन्दरी कस सहार ? कटुक वचन वाकी सखीने कहे हुते, वाने तो न कहे हुते, म पराए दोषकरि काहेको ताका परित्याग किया । धिक्कार ह मो सारिखे मूखको, जो विना विचारे काम कर । ऐसे निष्कपट प्राणीको विनाकारण दुख अवस्था करी । म पापचित्त हूँ, वज समान ह हृदय मेरा, जो मने एते वष ऐसी प्राणवल्लभाको वियोग दिया, अब क्या करू ? पितासो विदा होयकर घरत निकस्या हू, कस पाछा जाऊ ? बडा सकट पडचा, जो म वासो मिले विना सग्राममें जाऊ तो वह जीव नाहीं, अर वाके अभाव भए मेरा भी अभाव होयगा । जगतविष जीतव्य समान कोई पदाथ नाहीं, तात सव सदेहका निवारणहारा मेरा परम मित्र प्रहस्त विद्यमान ह वाहि सव भेद पूछू । वह सव प्रीतिकी रीतिमें प्रवीण ह । जे विचारकर काय कर हैं, ते प्राणी सुख पाव

ह। ऐसा पवनकुमारको विचार उपज्या, सो प्रहस्त मित्र ताके सुखविषै सुखी दुखविषै दुखी, याको चिंतावान देख पूछता भया कि—हे मित्र! तुम रावणकी मदद करनेको वरुण सारिखे योधासो लडनेको जावो हो, सो अति प्रसन्नता चाहिए तब कायकी सिद्धि होय। आज तिहारा वदनरूप कमल क्यो मुरझाया दीख ह, लज्जाको तजकरि मोहि कहो, तुमको चितावान देखकर मेरे व्याकुलभाव भया है। तब पवनजयने कही—हे मित्र! यह वार्ता काहूसो कहनी नाहीं, परन्तु तू मेरे सव रहस्यके भाजन हो तोसू अतर नाहीं। यह बात कहते परम लज्जा उपज ह। तब प्रहस्त कहते भए जो तिहारे चित्त विष होय सो कहो, जो तुम आज्ञा करो सो बात और कोई न जानेगा। जस तातें लोहेपर पडी जलकी बूद विलाय जाय, प्रकट न दीखै तस मोहि कही बात प्रकट न होय। तब पवनकुमार बोले—हे मित्र! सुनो—म कदापि अजनी सुदरीसो प्रीति न करी। सो अब मेरा मन अति व्याकुल ह, मेरी क्रूरता देखो, ऐते वष परणे भए सो अबतक वियोग रह्या, निष्कारण अप्रीति भई, सदा वह शोककी भरी रही। अश्रुपात झरते रहे, अर चलते समय द्वार खडी विरह रूप दाहसो मुरझाय गया ह मुखरूप कमल जाका, सव लावण्य सम्पदारहित मने देखी। अब ताके दीघ नेत्र नीलकमल समान मेरे हृदयको बाणवत भेद हैं। तातै ऐसा उपाय कर जाकरि मरा वासो मिलाप होय। हे सज्जन! जो मिलाप न होयगा तो हम दोनो हीका मरण होयगा। तब प्रहस्त क्षणएक विचारकरि बोले तुम माता पितासो आज्ञा माग शत्रुके जीतवेको निकसे हो, तात पीछे चलना उचित नाहीं। अर अबतक कदापि अजना सुन्दरी याद करी नाही, अर यहा बुलाव तो लज्जा उपज ह, तात गोप्य चलना अर गोप्य ही आवना, वहा रहना नाही। उनका अवलोकनकर सुख सभाषणकरि आनन्दरूप शीघ ही आवना। तब आपका चित्त निश्चल होयगा, परम उत्साहरूप चलना, शत्रुके जीतनेका निश्चय यही उपाय ह। तब मुदगर नामा सेनापतिको कटक रक्षा सौंपकरि मेरुकी वदनाका मिसकरि प्रहस्त मित्रसहित गुप्त ही सुगधादि सामग्री लेयकरि आकाशके मागसो चाले। सूय भी अस्त होयगया अर साझका प्रकाश भी होयगया,

५८
२६०

निशा प्रकट भई। अंजनीसुन्दरीके महलपर जाय पहुँचे, पवनकुमार तो बाहिर खडे रहे, प्रहस्त खबर देनेको भीतर गए। दीपकका मंद प्रकाश था, अंजनी कहती भई—कौन है? बसंतमाला निकट ही सोती हुती, सो जगाई। वह सब बातोविषै निपुण उठकर अंजनीका भय निवारण करती भई। प्रहस्त ने नमस्कार करि जब पवनजयके आगमका वृत्तांत कह्या तब सुन्दरीने प्राणनाथका समागम स्वप्न समान जान्या। प्रहस्तको गदगद बाणीकरि कहती भई—हे प्रहस्त! मै पुण्यहीन, पतिकी कृपा करिवर्जित, मेरे ऐसा ही पाप कर्मका उदय आया, तू हमसो काहे हंसे है? पतिसो जिसका निरादर होय वाकी कौन अवज्ञा न करे? मै अभागिनी दुःख अवस्थाको प्राप्त भई, कहांते सुख अवस्था होय? तब प्रहस्तने हाथ जोडि नमस्कारकरि विनती करी—हे कल्याणरूपिणी! हे पतिव्रते! हमारा अपराध क्षमा करो, अब सब अशुभ कर्म गए, तुम्हारे प्रेमरूप गुणका प्रेर्या तेरा प्राणनाथ आया। तुमसे अति प्रसन्न भया, तिनकी प्रसन्नताकरि कहाकहा आनन्द न होय, जैसे चन्द्रमाके योगकरि रात्रिकी अति मनोज्ञता होय। तब अंजनासुंदरी क्षणएक नीची होय रही अर बसंतमाला प्रहस्तसो कही—हे भद्र! मेघ बरसे जब ही भला, तातै प्राणनाथ इनके महल पधारे, सो इनका बडा भाग्य, अर हमारा पुण्यरूप वृक्ष फल्या। यह बात होय रही हुती ताही समय आनन्दके अश्रुपातकरि व्याप्त होयगए हैं नेत्र जिनके सो कुमार पधारे ही। मानो करुणारूप सखी ही पीतमको ढिग ले आई। तब भयभीत हिरणीके नेत्र समान सुन्दर हैं नेत्र जाके, ऐसी प्रिया पतिको देख सन्मुख जाय, हाथ जोडि, सीस निवाय पायनि पडी। तब प्राणबल्लभने अपने करतै सीस उठाय खडी करी। अमृत समान वचन कहे कि—हे देवी! क्लेशका सकल खेद निवृत्त होवे। सुन्दरी हाथ जोडि पतिके निकट खडी हुती। पतिने अपने करतै कर पकड करि सेजपर बिठाई, तब नमस्कारकर प्रहस्त तो बाहिर गए अर बसंतमाला हू अपने स्थान जाय बैठी। पवनजयकुमारने अपने अज्ञानतै लज्जावान होय सुन्दरीसो बारम्बार कुशल पूछी अर कही हे प्रिए! मैने अशुभ कर्मके उदयतै जो तिहारा वृथा निरादर किया सो क्षमा करो। तब सुन्दरी नीचा मुखकरि

२६०

मदमद वचन कहती भई—हे नाथ ! आपने पराभव कछु न किया, कर्मका ऐसा ही उदय हुता, अब आपने कृपा करी, अति स्नेह जताया तो मेरे सब मनोरथ सिद्ध भए। आपके ध्यान कर संयुक्त हृदय मेरा, सो आप सदा हृदयहीविषै विराजते, आपका अनादर हू आदर समान भास्या।

या भांति अंजना सुंदरीने कह्या तब पवनजयकुमार हाथ जोड कहते भए कि हे प्राणप्रिये ! मैं वृथा अपराध किया। पराये दोषत तुमको दोष दिया। सो तुम सब अपराध हमारा विस्मरण करो। मैं अपना अपराध क्षमावने निमित्त तिहारे पायन करू हूं, तुम हमसो अति प्रसन्न होवो। ऐसा कहकर पवनजयकुमारने अधिक स्नेह जनाया, तब अंजनासुंदरी पतिका एता स्नेह देखकरि बहुत प्रसन्न भई। अर पतिको प्रियवचन कहती भई, हे नाथ ! मैं अति प्रसन्न भई, हम तिहारे चरणारविंदकी रज हैं, हमारा इतना विनय तुमको उचित नाहीं, ऐसा कहकर सुखसो सेजपर विराजमान किये, प्राणनाथकी कृपाकरि प्रियाका मन अति प्रसन्न भया। अर शरीर अतिकांतिको धरता भया, दोनो परस्पर अतिस्नेहकं भरे एक चित्त भए। सुखरूप जागति रहे, निद्रा न लीनी। पिछले पहिर अल्प निद्रा आई, प्रभातका समय होय आया। तब यह पतिव्रता सेजसो उतर पतिके पाय पलोटने लगी, रात्रि व्यतीत भई, सोसुखमें जानी नाहीं, प्रात समय चन्द्रमाकी किरण फीकी पडगई, कुमार आनन्दके भारमें भर गए। अर स्वामीकी आज्ञा भूलगए, तब मित्र प्रहस्तने कुमारके हितविषै है चित्त जाका, ऊंचा शब्दकर बसंतमालाको जगाकर भीतर पठाई अर मंदमंद आपहू सुगंधित महलमें मित्रके समीप गए, अर कहते भए—हे सुंदर ! ऊठो, अब कहा सोवो हो ? चन्द्रमा भी तिहारे मुखकी कांतिकरि रहित होयगया है। वह वचन सुनकर पवनजय प्रबोधको प्राप्त भए। शिथिल है शरीर जिनका, जंभाई लेते, निद्राके आवेशकरि लाल हैं नेत्र जिनके, कानोको बाए हाथकी तर्जनी अंगुलीसो खुजावते, खुले हैं नेत्र जिनके, दाहिनी भुजा सकोचकरि अरिहंतका नाम लेकर सेजसो उठे। प्राणप्यारी आपके जगनेते पहिले ही सेजसो उतरकरि भूमिविषै विराजै है, लज्जाकर नम्रीभूत हैं नेत्र जाके, उठते ही पीतमकी दृष्टि प्रियापर पडी, बहुरि प्रहस्त

को देखकरि, आवो मित्र शब्द कहकर सेजसो उठे । प्रहस्तने मित्रसो रात्रिकी कुशल पूछी, निकट बैठे मित्र नीतिशास्त्रके वेत्ता कुमारसो कहते भए–हे मित्र ! अब उठो प्रियाजीका सन्मान बहुरि आय कर करियो, कोई न जान, या भाति कटकमें जाय पहुँच । अन्यथा लज्जा ह । रथनूपुरका धनी किन्नर गीतनगरका धनी रावणके निकट गया चाह ह सो तिहारी ओर देख ह—जो वे आग आव तो हम मिलकर चलें । अर रावण निरतर मन्त्रियोत पूछ जो पवनजयकुमारके डेरे कहा है अर कब आवेंगे ? तात अब आप शीघ्र ही रावणके निकट पधारो । प्रियाजीसो विदा मागो, तुमको पिताकी अर रावण की आज्ञा अवश्य करनी ह । कुशल क्षेमसो कायकर सिताब ही आवगे, तब प्राणप्रियासो अधिक प्रीत करियो । तब पवनजयने कही हे मित्र ! ऐसे ही करना । ऐसा कहकर मित्रको तो बाहिर पठाया अर आप प्राणवल्लभासो अतिस्नेहकर उरसो लगाय कहते भए–हे प्रिये ! अब हम जाय ह, तुम उदवेग मत करियो, थोडे ही दिनोमे स्वामीका कामकर हम आवेंगे, तुम आनन्दसो रहियो । तब अजना, सुन्दरी हाथ जोडकर कहती भई–हे महाराजकुमार ! मेरा ऋतुसमय ह सो गर्भ मोहि अवश्य रहेगा और अबतक आपकी कृपा नहीं हुती यह सब जान ह सो माता पितासो मेरे कल्याणके निमित्त गर्भ का वृत्तात कह जावो । तुम दीर्घदर्शी सब प्राणियोमें प्रसिद्ध हो । ऐसे जब प्रियाने कह्या तब प्राण वल्लभाको कहते भए–हे प्यारी ! म माता पितासो विदा होय निकस्या । सो अब उनके निकट जाना बन नाहीं, लज्जा उपज ह । लोक मेरी चेष्टा जान हसगे, तात जबतक तिहारा गर्भ प्रकाश न पाव ताके पहिले ही म आवू हू, तुम चित्त प्रसन्न राखो, अर कोई कह तो ये मेरे नामकी मुद्रिका राखो, हाथोके कडे राखो, तुमको सब शाति होयगी । ऐसा कहकर मुद्रिका दई अर बसतमालाको आज्ञा दई–इनकी सेवा बहुत नीके करियो । आप सेजसो उठे, प्रिया विषै लग रह्या ह प्रेम जिनका । कसी ह सेज सयोगके योगत बिखर रहे ह हारके मुक्ताफल जहा । अर पुष्पनकी सुगन्ध मकरदत भ्रम ह भ्रमर जहा, क्षीरसागरकी तरग समान अति उज्ज्वल बिछे ह पट जहाँ । आप उठकर मित्रके सहित विमानपर बैठि

आकाशके मार्ग चाले । अंजना सुन्दरीने अमंगलके कारण आंसू न काढे । हे श्रेणिक ! कदाचित् या लोकविषै उत्तमवस्तुके संयोगतैं किंचित सुख होय है सो क्षणभंगुर है । अर देहधारियोंके पापके उदयतैं दुख होय है सुख दुख दोनों विनश्वर है, तातैं हर्ष विषाद न करना । हो प्राणी हो ! जीवोंको निरंतर सुखका देनहारा दुःखरूप अंधकारका दूर करणहारा जिनवरभाषित धर्म सोई भया सूर्य ताके प्रताप करि मोहतिमिर हरहु ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै पवनंजय अंजनाका संयोग वर्णन करने वाला सोलहवां पर्व पूर्ण भया ।। १६ ।।

अथानन्तर कईएक दिनोंविषै महेन्द्रकी पुत्री जो अंजना ताके गर्भके चिह्न प्रकट भए । कछुइक मुख पांडुवर्ण होयगया । मानों हनुमान गर्भमें आया सो तिनका यश ही प्रकट भया है । मंद चाल चलने लगी जैसा मदोन्मत्त दिग्गज विचरै है । स्तनयुगल अति उन्नतिको प्राप्त भए, श्यामलीभूत है अग्रभाग जिनके । आलसतैं वचन मंदमंद निसरै, भौंहोंका कंप होता भया, इन लक्षणनिकरि ताहि सासू गर्भिणी जानकर पूछती भई । तैंने यह कर्म कौनतैं किया ? तब यह हाथ जोड प्रणामकर पतिके आवनेका समस्त वृत्तांत कहती भई । तदि केतुमती सासू क्रोधायमान भई । महा निठुरवाणीरूप पाषाणकर पीडती भई—हे पापिनी ! मेरा पुत्र तेरेतैं अति विरक्त, तेरा आकार भी न देख्या चाहै, तेरे शब्दको श्रवणविषै धारै नाहीं, माता पितासों विदा होयकर रणसंग्रामको बाहिर निकस्या । वह धीर कैसे तेरें मंदिर में आवै ? हे निलज्ज ! धिक्कार है तुझ पापिनीको । चन्द्रमाकी किरण समान उज्ज्वल वंशको दूषण लगावनहारी यह दोनों लोकमें निंद्य अशुभक्रिया तैंनें आचरी, अर तेरी यह सखी बसंतमाला याने तोहि ऐसी बुद्धि दीनी । कुलटाके पास वेश्या रहै तब काहेकी कुशल ? मुद्रिका अर कडे दिखाए तौ भी ताने न मानी अत्यन्त कोप किया । एक क्रूर नामा किंकर बुलाया, वह नमस्कारकर आय ठाढा भया ।

तब क्रोधकर केतुमतीने लाल नेत्र कर कहा–हे क्रूर ! सखी सहित याहि गाडीमें बठाय महेंद्र नगरके निकट छोड आव । तब क्रूर केतुमतीकी आज्ञात सखीसहित अंजनाको गाडीमें बठायकर महेंद्रके नगर की ओर ले चाल्या । कसी ह अंजना सुन्दरी ? अति काप ह शरीर जाका, महा पवनकर उपडी जो बेल तासमान निराश्रय, अति आकुल, कातिरहित, दु खरूप अग्निकर जल गया ह हृदय जाका, भय कर सासूको कछु उत्तर न दिया । सखीकी ओर धरे ह नेत्र जान, मनकर अपने अशुभकमको बारबार निंदती, अश्रुधारा नाखती, निश्चल नहीं ह चित्तजाका, सो क्रूर इनको लेय चाल्या । सो क्रूरकमविष अति प्रवीण ह । दिवसके अंतमें महेन्द्रनगरके समीप पहुँचायकर नमस्कार कर मधुर वचन कहता भया– हे देवी ! म अपनी स्वामिनीकी आज्ञात तुमको दुखका कारण काय किया, सो क्षमा करहु । ऐसा कह कर सखीसहित सुन्दरीकू गाडीत उतार, विदा होय, गाडी लेय स्वामिनीप गया । जाय विनती करी– आपकी आज्ञाप्रमाण तिनकू तहा पहुँचाय आया हू ।

अथानन्तर महाउत्तम महापतिव्रता जो अंजना सुन्दरी ताहि पतिके योगत दुखके भारत पीडित देख सूय भी मानो चिताकर मद होगई ह प्रभा जाकी, अस्त होयगया । अर रुदनकर अत्यन्त लाल होय गए ह नेत्र जाक, ऐसी अंजना मानो याके नेत्रकी अरुणताकर पश्चिमदिशा रक्त होयगई । अंध-कार फल गया, रात्रि भई । अंजनाके दु खत निकसी जो आसूनकी धारा, तेई भए मेघ, तिनकर मानो दशो दिशा श्याम होयगई । अर पछी कोलाहल शब्द करते भए सो मानो अजनीके दुखत दुखी भए पुकार ह । वह अंजना अपवादरूप महादु खका जो सागर तामें डूबी क्षुधादिक दुख भूलगई । अत्यन्त भयभीत अश्रुपात नाख, रुदनकर, सो बसंतमाला सखी धीय बधाव । रात्रिको पल्लवका साथरा बिछाय दिया सो याको निद्रा रंच भी न आई । निरंतर उष्ण अश्रुपात पडे सो मानो दाहके भयत निद्रा भाज गई । बसंतमाला पाव दाब, खेद दूर किया दिलासा करी । दुखके योगकर एक रात्रि वष बराबर बीती । प्रभातमें साथरेको तजकर नाना संकल्प विकल्पनिके संकडानि शंका करि अति विह्वल पिताके घर

की ओर चाली। सखी छाया समान संग चाली। पिताके मन्दिरके द्वार जाय पहुँची। भीतर प्रवेश करती द्वारपालने रोकी। दुखके योगते और ही रूप होयगया सो जानी न पडी। तब सखीने सब वृत्तात कह्या। तदि राजाके निकट प्रसन्नकीर्ति बैठा जानकर शिलाकवाट नामा द्वारपालने एक और मनुष्य को द्वार मेलि आप राजाके निकट जाय नमस्कार करि विनती करी। पुत्रीके आगमनका वृत्तात कह्या। तब राजाके निकट प्रसन्नकीर्ति नामा पुत्र बैठ्या हुता। सो राजाने पुत्रको आज्ञा करी—तुम सन्मुख जाय उसका शीघ्र ही प्रवेश करावो, अर नगरकी शोभा करावो, तुमतो पहिले जावो, और हमारी असवारी तयार करावो, हम भी पीछेते आवे है। तदि द्वारपालने हाथ जोड नमस्कारकर यथार्थ विनती करी। तब राजा महेंद्र लज्जाका कारण सुनकर महा कोपवान भए। अर पुत्रको आज्ञा करी कि पापिनीकू नगरमें ते काढ देवो, जाकी वार्ता सुनकर मेरे कान मानो वज्रकर हते गए हैं। तब एक महोत्साह नामा बडा सामंत राजाका अतिवल्लभ, सो कहता भया—हे नाथ! ऐसी आज्ञा करनी उचित नाहीं, बसंतमालासो सब ठीक पाड लेहु, सासू केतुमती अति क्रूर है, अर जिनधर्मते पराङ्मुख है, लौकिकसूत्र जो नास्तिकमत ताविषै प्रवीण है। तानै विना विचाऱ्या झूठा दोष लगाया। यह धर्मात्मा श्रावकके व्रतकी धरणहारी, कल्याण आचारविषै तत्पर। पापिनी सासूने निकासी है अर तुम भी निकासो तो कौनके शरण जाय? जैसे व्याघ्रकी दृष्टिते मृगी त्रासको प्राप्त भई संती महागहन वनका शरण लेय, तैसे यह भोली निष्कपट सासूते शंकित भई, तुम्हारे शरण आई है। मानो जेठके सूर्यकी किरणके संतापते दुखित भई, महावृक्षरूप जो तुम सो तिहारे आश्रय आई है। यह गरीबिनी, विह्वल है आत्मा जाका, अपवादरूप जो आताप ताकर पीडित, तिहारे आश्रय भी साता न पावै तो कहा पावै? मानो स्वर्गते लक्ष्मी ही आई है। द्वारपालने रोकी सो अत्यन्त लज्जाको प्राप्त भई। विलखि करि माथा ढांकि द्वार खडी है। आपके स्नेहकर सदा लाडली है, सो तुम दया करो। यह निर्दोष है, मन्दिरमाहि प्रवेश करावो। अर केतुमतीकी क्रूरता पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है। ऐसे न्यायरूप वचन महोत्साह

सामंतने कहे, सो राजा कान न धरै। जैसे कमलोंके पत्रनिविषै जलकी बूंद न ठहरै तैसे राजाके चित्तमें यह बात न ठहरी। राजा सामंतसो कहते भए—यह सखी बसंतमाला सदा याके पास रहै, अर याही के स्नेहके योगतैं कदाचित सत्य न कहै तो हमको निश्चय कैसे आवै? यातैं याके शीलविषै संदेह है, सो याको नगरतैं निकास देहु। जब यह बात प्रसिद्ध होयगी तो हमारे निर्मल कुलविषै कलंक आवेगा। जे बडे कुलकी बालिका निर्मल हैं अर महा विनयवती उत्तम चेष्टाकी धरणहारी हैं ते पीहर सासुरे सर्वत्र स्तुति करने योग्य हैं। जे पुण्याधिकारी बडे पुरुष जन्महीतैं निर्मल शील पालै हैं, ब्रह्मचर्यको धारण करै हैं, अर सर्व दोषका मूल जो स्त्री तिनको अंगीकार नाहीं करै हैं ते धन्य हैं। ब्रह्मचर्य समान और कोई व्रत नाहीं, अर स्त्रीके अंगीकारमें यह सफल होय है। जो कुपूत बेटा बेटी होय अर उनके अवगुण पृथ्वीविषै प्रसिद्ध होय तो पिताका धरतीमें गड जाना होय है। सबही कुलको लज्जा उपजै है। मेरा मन आज अति दुःखित होय रह्या है, मैं यह बात पूर्व अनेकबार सुनी हुती जो यह भरतारके अप्रिय है, अर वह याहि आंखतैं नाहीं देखै है, सो ताकरि गर्भकी उत्पत्ति कैसे भई, तातैं यह निश्चयसेती सदोष है। जो कोई याहि मेरे राज्यमें राखेगा सो मेरा शत्रु है। ऐसे वचन कहकर राजाने कोपकर जैसे कोई जानै नाहीं, या भांति याको द्वारतैं निकाल दीनी। सखीसहित दुःख की भरी अंजनी राजाके निजवर्गके जहां जहां आश्रयके अर्थि गई, सो आन न दीनी, कपाट दिए, जहां बाप ही क्रोधायमान होय निराकरण करै तहां कुटुम्बकी कैसी आशा, वे तो सब राजाके आधीन हैं। ऐसा निश्चयकर सबतैं उदास होय सखीसों कहती भई। आंसूवोंके समूहकर भीज गया है अंग जाका, हे प्रिये! यहां सब पाषाणचित्त हैं, यहां कैसा वास? तातैं वनमें चालें, अपमानतैं तो मरना भला। ऐसा कहकर सखीसहित वनको चाली, मानो मृगराजतैं भयभीत हिरणी है। शीत, उष्ण अर वातके खेद करि महा दुःखकरि पीडित वनमें बैठि महा रुदन करती भई। हाय हाय! मैं मंदभागिनी दुःखदाई जो पूर्वोपार्जित कर्म ताकरि महाकष्टको प्राप्त भई। कौनके शरण जाऊं, कौन मेरी रक्षा करै, मैं दुर्भाग्य-

सागरके मध्य कौन कमत पडी ? नाथ मेरा अशुभ कमका प्रेरचा कहातै आया ? काहेको गभ रह्या, मेरा दोनो ही ठौर निरादर भया । माताने भी मेरी रक्षा न करी, सो वह कहा कर ? अपने धनी की आज्ञाकारिणी पतिव्रतानिका यही धम ह । अर नाथ मेरा यह वचन कह गया हुता कि तेरे गभ की वृद्धित पहिले ही म आऊगा सो हाय नाथ ! दयावान होय वह वचन क्यो भूले ? अर सासूने विना परखे मेरा त्याग क्यो किया ? जिनके शीलमें सदेह होय तिनके परखनेके अनेक उपाय है । अर पिता को म बालअवस्था विष अति लाडिली हुती, निरतर गोदमें खिलावते हुते सो विना परखे मेरा निरादर किया, तिनकी एसी बुद्धि क्यो उपजी ? अर मातान मुझे गभमें धारी, प्रतिपालन किया, अब एक बात भी मुखत न निकाली कि इसके गुण दोषका निश्चय कर लेवें । अर भाई जो एक माताके उदरसो उत्पन्न भया हुता, सोहू मा दु खिनीको न राख सक्या, सब ही कठोरचित्त होय गए । जहा माता पिता भ्राताहीकी यह दशा, तहा काका बाबाके दूर भाई तथा प्रधान सामत कहा कर ? अथवा उन सबका कहा दोष ? मरा जो कमरूप वृक्ष फल्या सो अवश्य भोगना । या भाति अजना विलाप कर, सो सखी भी याके लार विलाप कर । मनत धीय जाता रह्या, अत्यन्त दीनमन होय यह ऊचे स्वरत रुदन कर । सो मगी भी याकी दशा देख आसू डालवे लागी । बहुत देर तक रोनेत लाल होय गए है नेत्र जाके । तब सखी बसतमाला महाविचक्षण याहि छातीसू लगाय कहती भई—हे स्वामिनी ! बहुत रोनेतै क्या लाभ ? जो कम तने उपार्ज्या ह सो अवश्य भोगना ह । सब ही जीवनिके कम आग पीछै लाग रहें है, सो कमके उदयविष शोक कहा ? हे देवी ! जे स्वगलोकके देव सकडो अप्सरावोके नेत्रनिकर निरतर अवलोकिए ह, तेहू सुकतके अत होते परम दु ख पाव है । मनमै चिंतिए कछू और, होय जाय कछु और, जगतके लोक उद्यमम प्रवरत ह तिनको पूर्वोपार्जित कमका उदय ही कारण ह । जो हितकारी वस्तु आय प्राप्त भई सो अशुभकमके उदयत विघटिजाय, अर जो वस्तु मनत अगोचर ह सो आय मिल । कमनिकी गति विचित्र ह । तात बाई ! तू गभके खेदकरि पीडित है, वथा क्लेश मत कर, तू

अपना मन बढ कर । जो तने पूवजन्म में कम उपारजे हैं तिनके फल टारे न टर, अर तू तो महाबुद्धि मती है तोहि कहा सिखावू ? जो तू न जानती होय तो म कहू । ऐसा कहकर याके नेत्रनिके अपने वस्त्रत आसू पोछे, बहुरि कहती भई—हे देवी ! यह स्थानक आश्रय रहित ह, तात उठो, आग चालैं या पहाड के निकट कोई गुफा होय जहा दुष्ट जीवन का प्रवेश न होय । तेरे प्रसूति का समय आया ह सो कएक दिन यत्नसू रहना । तब यह गभके भारत जो आकाशके माग चलनेमें ह असमथ ह तो भूमिपर सखीके सग गमन करती महा कष्टकरि पाव धरती भई । कसी ह वनी ? अनेक अजगरनित भरी, दुष्ट जीवनके नादकरि अत्यत भयानक, अति सघन नानाप्रकारके वक्षनिकरि सूयकी किरणका भी सचार नाहीं, जहा सूईके अग्रभाग समान डाभकी अणी अतितीक्ष्ण, जहा ककर बहुत अर माते हाथीनिके समूह अर भीलोके समूह बहुत ह । अर वनीका नाम मातगमालिनी ह, जहा मनकी भी गम्यता नाहीं तो मनुष्यनिकी क ा गम्यता ? सखी आकाशमागत जायवेको समथ अर यह गभके भारकरि समथ नाहीं, तात सखी याके प्रेमके बधनसो बधी शरीरकी छाया समान लार लार चाल ह । अजनी वनीको अतिभयानक देखकर काप ह, दिशा भूल गई । तब बसतमाला याको अति व्याकुल जानकर हाथ पकडकर कहती भई— हे स्वामिनी ! तू डर मत, मेर पाछ पाछ चली आव ।

तब यह सखीके काधेपर हाथ रखकर चली जाय, ज्यो २ डाभकी अणी चुभ त्यो २ खेदखिन्न होय विलाप करती, देहको कष्टतैं धारनी, जलके नीझरने जे अति तीव वेग सयुक्त बहै तिनको अति कष्ट त पार उतरती, अपने जे सब स्वजन अति निदई तिनका अति चितारकरती, अपन अशुभ कमको बार बार निंदती, बेलोको पकड, भयभीत हिरणीकेसे ह नेत्र जाके, अगविष पसेवको धारती, काटोसे वस्त्र लाग २ जाय सो छुडावती, लहूत लाल होयगए ह चरण जाके, शोकरूप अग्निके दाहकरि श्यामताको धरती, पत्र भी हाल तो त्रासको प्राप्त होती, चलायमान ह शरीर जाका, बारबार विश्राम लेती, ताहि सखी निरतर प्रियवाक्य कर धीय बधाव, सो धीरे २ अजनी पहाडकी तलहटीतक आई, तहा आसू भर

बैठ गई। सखीसो कहती भई—अब मुझमें एक पग धरनेकी है शक्ति नाहीं, यहां ही रहूंगी, मरण होय तो होय। तब सखी अत्यंत प्रेमकी भरी महा प्रवीण मनोहर वचननिकरि याको शांति उपजाय नमस्कार कर सकती भई—हे देवी! देख, यह गुफा नजदीक ही है, कृपाकर इहांते उठकर तहां सुखसो तिष्ठो। यहां क्रूर जीव विचरै है, तोको गर्भकी रक्षा करनी है, तातैं हठ मति कर। ऐसा कह्या तब वह आतापकी भरी सखीके वचननिकरि अर सघनवनके भयकरि चलवेको उठी। तब सखी हस्तावलंबन देयकर याको विषम भूमितैं निकासकर गुफाके द्वारपर लेयगई। विना विचारे गुफामें बैठनेका भय होय। सो ये दोनो बाहिर खडी विषम पाषाणके उलंघवेकर उपज्या है खेद जिनको, तातैं बैठ गई। तहां दृष्टि धर देख्या। कैसी है दृष्टि? श्याम श्वेत आरक्त कमल समान प्रभावको धरै। सो एक पवित्र शिलापर विराजे चारणमुनि देखे। जो पल्यंकासन धर, अनेक ऋद्धि संयुक्त, निश्चल है श्वासोच्छवास जिनके, नासिकाके अग्र भागपर धरी है दृष्टि जिनने, शरीर स्तंभ समान निश्चल है, गोदपर धरया है जो वामा हाथ ताके ऊपर दाहना हाथ, समुद्र समान गंभीर, अनेक उपमासहित विराजमान, आत्मस्वरूपका जो यथार्थ स्वभाव जैसा जिनशासनविषै गाया है तैसा ध्यान करते, समस्त परिग्रहरहित, पवन जैसे असंगी, आकाश जैस निर्मल, मानो पहाडके शिखर ही है। सो इन दोनोने देखे। कैसे है वे साधु? महापराक्रमके धारी महाशांति ज्योतिरूप है शरीर जिनका। ये दोनो मुनिके समीप गई। सब दुःख विस्मरण भया। तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोडि नमस्कार किया, मुनि परम बांधव पाए, फूल गए है नेत्र जिनके। जा समय जो प्राप्ति होनी होय सो होय। तदि ये दोनो हाथ जोड विनीत करती भई। मुनिके चरणारविंदकी ओर धरै है अश्रुपातरहित स्थिर नेत्र जिननें। हे भगवान! हे कल्याणरूप! हे उत्तम चेष्टाके धरणहारे! तिहारे शरीरमें कुशल है? कैसा है तिहारा देह? सब तपवंत आदि साधननिका मूल कारण है। हे गुणके सागर! ऊपरा ऊपर तपकी है वृद्धि जिनकी, हे महाक्षमावान, शांतिभावके धारी, मनइन्द्रियोके जीतनहारे! तिहारा जो विहार है सो जीवनके

कल्याणनिमित्त है। तुम सारिखे पुरुष सकल पुरुषनिको कुशलके कारण हैं, सो तिहारा कुशल कहा पूछना। परन्तु यह पूछनेका आचार है, तातैं पूछी है। ऐसा कहि विनयतैं नमीभूत भया है जिनका, सो चुप होय रही अर मुनिके दर्शनतैं सब भय रहित भई।

अथानन्तर मुनि अमृततुल्य परमशांतिके वचन कहते भये—हे कल्याणरूपिणी! हे पुत्री! हमारे कर्मानुसार सब कुशल है। ये सब ही जीव अपने अपने कर्मोंका फल भोगवै है। देखो कर्मनिकी विचित्रता यह राजा महेंद्रकी पुत्री अपराधरहित कुटुम्बके लोगनिनै काढी है। सो मुनि बडे ज्ञानी, विना कहे सब वृत्तांतके जाननहारे, तिनको नमस्कारकर बसंतमाला पूछती भई—हे नाथ! कौन कारणतैं भरतार यासों बहुत दिन उदास रहे? बहुरि कौन कारण अनुरागी भए? अर यह महासुखयोग्य बनविषै कौन कारणतैं दुखको प्राप्त भई? कौन मंदभागी याके गर्भमें आया जाकरि याको जीवनेका संशय भया? तब स्वामी अमितिगति तीन ज्ञानके धारक सब वृत्तांत यथार्थ कहते भए। यही महापुरुषोंकी वृत्ति है जो पराया उपकार करैं। बसंतमालासों कहै है—हे पुत्री! याके गर्भविषै उत्तम बालक आया है, सो प्रथम तो ताके भव सुनि, बहुरि जा कारणतैं यह अंजनी ऐसे दुखको प्राप्त भई जो पूर्व भवमें पापका आचरण किया सो सुन।

जम्बूद्वीपमें भरत नामा क्षेत्र, तहां प्रियनंदी नामा गृहस्थ, ताके जाया नामा स्त्री, अर दमयंत नामा पुत्र हुता, सो महा सौभाग्य संयुक्त कल्याणरूप जे दया क्षमा शील संतोषादि गुण तेई हैं आभूषण जाके। एक समय बसंतऋतुमैं नंदनवन तुल्य जो वन तहां नगरके लोग क्रीडाको गए। दमयंतनै भी अपने मित्रों सहित बहुत क्रीडा करी, अबीरादि सुगंधनिकरि सुगंधित है शरीर जाका, अर कुंडलादि आभूषणनिकरि शोभायमान सो तानै ताही समयविषै महामुनि देखे। कैसे हैं मुनि? अम्बर कहिए आकाश सो ही है अम्बर कहिए वस्त्र जिनके, तप ही है धन जिनका, अर ध्यान स्वाध्याय आदि जे क्रिया तिनविषै उद्यमी। सो यह दमयंत महा देदीप्यमान क्रीडा करते जे अपने मित्र तिनको छोड

मुनियोकी मडलीमे गया। वदना कर धमका व्याख्यान सुन सम्यकदशन सयुक्तभया, श्रावक व्रत धारे। नाना प्रकारके नियम अगीकार किये। एकदिन जे सप्त गुण दाताके अर नवधा भक्ति तिनकरि सयुक्त होय साधुनिको आहार दान दिया। कईएक दिनविष समाधिमरणकर स्वगलोकको प्राप्त भया, नियमके अर दानके प्रभावत अदभुत भोग भोगता भया। सकडो देवागनानिके नेत्रनिकी काति ही भई नीलकमल, तिनकी मालाकरि अर्चित चिरकाल स्वगके सुख भोगे। बहुरि स्वगत चयकरि जबूद्वीप में मगाकनामा नगरमें हरिचन्द्र नामा राजा, ताकी प्रियगुलक्ष्मी राणी, ताक सिहचन्द्र नामा पुत्र भया। अनेक कला गुणनिविष प्रवीण अनेक विवेकियोके हृदयमें बस। तहा भी देवोके से भोग किए, साधु गोकी सेवा करी। बहुरि समाधिमरण कर देवलोक गया। तहा मनवाछित अति उत्कृष्ट सुख पाए। कसा ह वह ? देव देवियोके जे वदन, तेई भए कमल, तिनके जो वन तिनके प्रफुल्लित करनेको सूय समान ह। बहुरि तहात चयकरि या भरतक्षेत्रविष विजयाध गिरिपर अहनपुर नगरमें राजा सुकठ रानी कनकोदरी ताक सिहबाहन नामा पुत्र भया। अपने गुणनिकरि खचा ह समस्त प्राणियोका मन जान। तहा देवोकेसे भोग भोगे। अप्सरा समान स्त्री तिनके मनके चोर। भावाथ—अतिरूपवान अति गुणवान सो बहुत दिन राज्य किया। श्रीविमलनाथजी के समोसरणम उपज्या ह आत्मज्ञान अर ससारत वराग्य जिनको, सो लक्ष्मीबाहन नामा पुत्रको राज्य देय, ससारको असार जानि, लक्ष्मीतिलक मुनिके शिष्य भए। श्रीवीतराग देवका भाख्या महाव्रतरूप यतिका धम अगीकार किया। अनित्यादि द्वादश अनुप्रेक्षाका चितवनकरि ज्ञानचेतनारूप भए। जो तप काहू पुरुषत न बन सो तप किया। रत्नत्रयरूप अपने निजभावनिविष निश्चल भए। तत्वज्ञानरूप आत्माके अनुभव विष मग्न भए। तपके प्रभावत अनेक ऋद्धि उपजी। सव वात समथ, जिनके शरीरको स्पशकरि पवन आव सो प्राणियोके अनेक रोग दुख हर, परन्त आप कम निजराके कारण बाईस परीषह सहते भए। बहुरि आयुपूणकर धमध्यानके प्रसादत ज्योतिषचक्रको उलघकर सातवा लातव नामा जो स्वग तहा

बडी ऋद्धिके धारी देव भए। चाहे जैसा रूप करें, चाहे जहां जांय, जो वचनकरि कहनेमें न आवे। ऐसे अद्भुत सुख भोगे परन्तु स्वर्गके सुखविषै मग्न न भए। परमधामकी है इच्छा जिनको, तहांतै चयकरि या अजनाकी कुक्षिविषै आए हैं सो महा परमसुखके भाजन हैं। बहुरि देह न धारेंगे, अवि नाशी सुखको प्राप्त होवेंगे, चरम शरीरी हैं। यह तो पुत्रके गर्भमें आवनेका वृत्तांत कह्या। अब हे कल्याणचेष्टिनी! यानें जिसकारणतैं पतिका विरह अर कुटुम्बतैं निरादर पाया सो वृत्तांत सुनो।

इस अजनीसुन्दरीने पूर्वभवमें देवाधिदेव श्रीजिनेंद्रदेवकी प्रतिमा पटराणी पदके अभिमानकरि सौकन (सौत) के ऊपर क्रोधकर मंदिरतैं बाहिर निकासी। ताही समय एक श्रीआर्यिका याके घर आहारको आई हुती, तपकर पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुती, सो याके द्वारा श्रीजीकी मूर्तिका अविनय देख पारणा न किया। पीछे चाली, अर याको अज्ञानरूप जान महा दयावती होय उपदेश देती भई। जे साधुजन हैं ते सबका भला ही चाहैं हैं। जीवनिके समझावनेके निमित्त विना पूछे ही साधुजन श्रीगुरु की आज्ञातैं धर्मोपदेश देनेको प्रवरतैं हैं। ऐसा जानकर वह संयमश्री शील—संयमरूप आभूषणकी धर णहारी पटराणीको महामाधुर्य अनुपम वचन कहती भई—हे भोरी! सुन, तू राजाकी पटराणी है, अर महारूपवती है राजाका बहुत सन्मान है, भोगनिका स्थानक है शरीर तेरा, सो पूर्वोपार्जित पुण्यका फल है। या चतुर्गतिविषै जीव भ्रमैं हैं, महादुःख भोगैं हैं। कबहूक अनंतकालविषै पुण्यके योगतैं मनुष्य देह पावैं हैं। हे शोभने! मनुष्यदेह काहू पुण्यके योगतैं पाई है, तातैं यह निंद्य आचार तू मत कर, योग्य क्रिया करनेके योग्य है। यह मनुष्यदेह पाय जो सुकृत न करैं हैं सो हाथमें आया रत्न खोवैं हैं। मन तथा वचन तथा कायसे जो शुभ क्रियाका साधन है, सोई श्रेष्ठ है, अर अशुभ क्रियाका साधन है सो दुःखका मूल है। जे अपने कल्याणके अर्थि सुकृतविषै प्रवरतैं हैं, तेई उत्तम हैं। यह लोक महानिंद्य अनाचारका भरया है। जे संत संसारसागरतैं आप तिरैं हैं औरनिको तारैं हैं, भव्यजीवोंको धर्मका उपदेश देय हैं तिन समान और उत्तम नाहीं, ते कृतार्थ हैं। तिन मुनिके नाथ, सर्व जगतके नाथ धर्मचक्री

श्रीअरहत देव तिनके प्रतिबिबका जे अविनय कर ह ते अज्ञानी अनेक भवविष कुगतिके महादुख पाव ह। सो वे दु ख कौन वणन कर सक ? यद्यपि श्रीवीतरागदेव रागद्वेषरहित हैं, जे सेवा कर तिनत प्रसन्न नाहीं, अर जे निदा कर तिनत द्वेष नाहीं, महामध्यम भावको धार ह। परन्तु जे जीव सेवा कर ते स्वग-मोक्ष पाव ह। जे निदा कर ते नरक निगोद पाव। काहेत ? जीवोके शुभ अशुभ परणामनित सुखदु ख की उत्पत्ति होय ह। जस अग्निके सेवनत शीतका निवारण होय ह अर खानपानत क्षुधा तषाकी पीडा मिट ह, तस जिनराजक अचनत स्वयमेव ही सुख होय ह अर अविनयत परमदुख होय ह। अर हे शोभने ! जे ससारविष दुख दीख ह ते सव पापके फल ह। अर जे सुख ह ते धमके फल हैं। सो तू पूवपुण्यके प्रभावत महाराजकी पटराणी भई, अर महासपत्तिवती भई, अर अदभुत कायका करण-हारा तरा पुत्र ह। अब तू ऐसा कर जो सुख पाव। अपना कल्याणकर मेरे वचनतैं। हे भव्ये ! सूयके अर नेत्रके होतेसते तू कूपमे मत पडे। जो ऐसे कम करेगी तो घोर नरकमें पडेगी। देवगुरुशास्त्रका अविनय करना अनत दु खका कारण ह। अर ऐसे दोष देखे जो म तोहि न सबोधू तो मोहि प्रमाद का दोष लाग ह। तात तेरे कल्याण निमित्त धर्मोपदेश दिया ह। जब श्रीआर्यिकाजीने ऐसा कह्या तदि यह नरकत डरी। सम्यग्दशन धारण किया, श्राविकाके वत आदरे, श्रीजीकी प्रतिमा मदिरविष पधराई, बहुत विधानत अष्टप्रकारकी पूजा कराई। या भाति राणी कनकोदरीको आर्यिका धमका उपदेश देय अपने स्थानकको गई। अर वह कनकोदरी श्रीसवज्ञदेवका धम आराधकर समाधिमरण कर स्वगलोकमें गई। तहा महासुख भोगे, अर स्वगत चयकर राजा महेद्रकी राणी जो मनोवेगा ताके अजनासुदरी नामा तू पुत्री भई। सो पुण्यके प्रभावत राजकुलविष उपजी, उत्तम वर पाया, अर जो जिनेद्रदेवकी प्रतिमाको एकक्षण मदिरके बाहिर राखो ताक पापकरि धनीका वियोग अर कुटुम्बत पराभव पाया। विवाहके तीनदिन पहिले पवनजय प्रछन्नरूप आए रात्रिमें तिहारे झरोखे-विष प्रहस्तमित्रके सहित बठे हुते। सो तासमय मिश्रकेशी सखीने विद्युत्प्रभकी स्तुति करी, अर पवनजय

की निंदा करी। ताकारण पवनजय द्वेषको प्राप्त भए। बहुरि युद्धके अर्थ घरते चाले, मानसरोवर पर डेरा किया, तहां चकवीका विरह देखकर करुणा उपजी। सो करुणा ही मानो सखीका रूप होय कुमारको सुन्दरीके समीप लाई। तब ताकरि गर्भ रह्या। बहुरि कुमार प्रछन्न ही पिताकी आज्ञाके साधिवेके अर्थि रावणके निकट गए। ऐसा कहकर फिर मुनि अजना सो कहते भए महा करुणाभाव कर अमृतरूप वचन गिरते भए—हे बालिके! तू कर्मके उदयकरि ऐसे दुःखको प्राप्त भई तातै बहुरि ऐसा निंद्यकर्म मत करना। संसारसमुद्रके तारणहारे जे जिनेन्द्रदेव तिनकी भक्ति कर। या पृथ्वीविषै जो सुख है ते सब जिन भक्तिके प्रतापतै होय है। ऐसे अपने भव सुनकर अजना विस्मयको प्राप्त भई। अर अपने किए जे कर्म तिनको निंद्यती अति पश्चाताप करती भई। तब मुनिने कही—हे पुत्री! अब तू अपनी शक्तिप्रमाण नियम लेहु, अर जिनधर्मका सेवन कर, यति व्रतियोकी उपासना कर। तनै ऐसे कर्म किए थे जो अधोगतिको जाती, परन्तु संयमश्री आर्याने कृपाकर धर्मका उपदेश दिया सो हस्तावलंबन देय कुगतिके पतनतै बचाई। अर यह बालक तेरे गर्भविषै आया है सो महा कल्याणका भाजन है। या पुत्रके प्रभावतैं तू परमसुख पावेगी। तेरा पुत्र अखंडवीर्य है, देवनिहूकरि जीत्या न जाय। अर अब थोडे ही दिनमें तेरा तेरे भरतारतैं मिलाप होयगा। तातैं हे भव्ये! तू अपने चित्तमें खेद मत कर, प्रमादरहित जो शुभ क्रिया तामें उद्यमी होहु। ये मुनिके वचन सुन अजनी अर बसतमाला बहुत प्रसन्न भई, अर बारबार मुनिको नमस्कार किया, फूल गए हैं नेत्रकमल जिनके। मुनिराजने इनको धर्मोपदेश देय आकाशमार्गतैं विहार किया। सो निर्मल है चित्त जिनका ऐसे संयमिनको यही उचित है कि जो निर्जन स्थानक होय तहाँ निवास करै, सो भी अल्प ही रहै। या प्रकार निजभव सुन अजना पाप कर्मतैं अति डरी, अर धर्मविषै सावधान भई। वह गुफा मुनिके विराजवेतैं पवित्र भई हुती सो तहाँ अजनी बसतमालासहित पुत्रका प्रसूति समय देखकर रही।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै है—हे श्रेणिक! अब वह महेन्द्रकी पुत्री गुफामें रहै। बसतमाला

विद्याबलकरि पूण, विद्याके प्रभावकरि खानपान आदि याके मनवाछित सव सामग्री कर । अथानतर
अजना पतिवृता पिया रहित वनविष अकेली, सो मानो सूय याका दुख देख न सक्या सो अस्त होने
लग्या । मानो याके दुखत सूयहूको किरण मद होयगई, सूय अस्त होय गया, अर पहाडके शिखर अर
वक्षनिक अग्रभागमें जो किरणोका उद्योत रह्या था सो भी सकोच लिया ।

५८
२७५

अथानन्तर मध्याकर क्षणएक आकाशमडल लाल होय गया, सो मानो अब क्रोधका भरया सिंह
आवेगा, ताके लाल नेत्रनिकी ललाई फली ह । बहुरि होनहार जो उपसग ताकी प्रेरी शीघ ही अध
कारका स्वरूप रात्रि प्रकट भई, मानो राक्षसिनी ही रसातलत नीसरी ह । पक्षी सध्या समय चिग
चगाटकर गहन वन में शब्दरहित वक्षनिके अग्रभागपर तिष्ठे, मानो रात्रिको श्यामरूप डरावनी देख
भयकर चुप होय रह । शिवा कहिए स्यालिनी तिनके भयानक शब्द प्रवरत सो मानो होनहार उप
सगके ढोल ही बाज ह ।

अथानन्तर गुफाके मुख सिह आया, कसा ह सिंह ? विदारे ह हाथियोके जे कु भस्थल, तिनके रुधिर
कर लाल होय रह ह केश जाके, अर काल समान क्रूर भकुटीको धर, अर महा विषम शब्द करता,
जिसके शब्दकरि बन गू जि रह्या ह, अर प्रलयकालको अग्निको ज्वाला समान जीभको मुखरूप गुफात
काढता, कसो ह जीभ ? महाकुटिल ह, अनेक प्राणियोकी नाश करनहारी, बहुरि जीवनिक खचनेको
जाकी अकुश समान श्या र जीभ, तीक्ष्ण दाढ, महा कुटिल ह रौद्र सबनिको भयकर ह, अर जाके नेत्र
अतित्रासके कारण ऊगता जो प्रलयकालका सूय ता समान तेजको धर, दिशाओके समूहको रग रूप
कर वह सिह पू छको अणीको मस्तक ऊपर धरे, नखकी अणीत विदारी ह धरती जान, पहाडके तट
समान उरस्थल, अर प्रबल ह जाघ जाकी, मानो वह सिह मत्युका स्वरूप दत्य समान, अनेक प्राणि-
योका क्षय करणहारा, अनकको भी अतक समान, अग्नित भी अधिक प्रज्वलित, ऐसे डरावने सिंह
को देखकर वनके सब जीव डरे । ताके नादकर सब गुफा गाज उठी, सो मानो भयकरि पहाड रोवने

२७५

लाग्या । अर याका निठुर शब्द वनके सब जीवोके काननिको ऐसा बुरा लाग्या मानो भयानक मुद गरका घात ही ह । जाके चिरमी समान लाल नेत्र । सो ताके भयकरि हिरण चित्राम कैसे होय रहे, अर मदोन्मत्त गजनिका मद जाता रह्या । सब ही पशुगण अपने अपने ताइ बचावनेके लिए भयकर कम्पायमान वक्षोके आसर होय रहे । नाहरको ध्वनि सुन अजनाने ऐसी प्रतिज्ञा करी जो उपसगत मेरा शरीर जाय तो मेरे अनशनवत ह, उपसग टरे भोजन लेना । अर सखी बसतमाला खडग ह हाथमें जाके, कबहू तो आकाशविष जाय, कबहू भूमिपर आव, अतिव्याकुल भई पक्षीनिकी नाइ भम । ये दोनो महा भयवान, कम्पायमान ह हृदय जिनका । तब गुफाका निवासी जो मणिचूल नामा गन्धवदेव, तासू ताकी रत्नचूल नामा स्त्री महादयावती कहती भई—हे देव ! देखो ये दोनो स्त्री सिहत महाभय भीत ह, अर अति विह्वल ह, तुम इनको रक्षा करो । तब गधवदेवको दया उपजी, तत्काल विक्रिया करि अष्टापदका स्वरूप रच्या ! सो सिहका अर अष्टापदका महा भयकर शब्द होता भया । सो अजनी हृदयमें भगवानका ध्यान धरती भई, अर बसतमाला सारसकी नाई विलाप कर, हाय अजना ! पहिले तो तू धनीके अप्रिय दुर्भागिनी भई, बहुरि काहूइक प्रकार धनीका आगमन भया तो तात तोको गभ रह्या, सो सासने विना समझे घरत निकासी बहुरि माता पितानेहू न राखी, सो महा भयानक वनविष आई । तहा पुण्यके योगत मुनिका दशन भया, मुनिने धीय बधाय पूवभव कहे, धर्मोपदश देय आकाशके माग गए, अर तू प्रसूतिकेअर्थि गुफाविष रही सो अब या सिहके मुखमें प्रवेश करेगी । हाय ! हाय ! राजपुत्री निजनवनविष मरणको प्राप्त होय ह, अब या वनके देवता दयाकर रक्षा करा । मुनिने कही हुती कि तेरा सकल दुख गया, सो कहा मुनिहूके वचन अन्यथा होय ह ? या भाति विलाप करती बसतमाला हिडोल झूलनेकी नाइ एक स्थल न रह, क्षणविष सुन्दरीके समीप आव क्षणविष बाहिर जाव ।

अथानन्तर वह गुफाका गधवदेव जो अष्टापदका स्वरूप धरि आया हुता, ताने सिहके पजोकी

दीनी। तब सिंह भाग्या, अर अष्टापद सिंहको भजाय कर निजस्थानको गया। यह स्वप्नसमान सिंह और अष्टापदके युद्धका चरित्र देख बसंतमाला गुफामें अंजनी सुंदरीके समीप आई, पल्लवों से भी अति कोमल जो हाथ तिनकरि विश्वासती भई। मानो नवा जन्म पाया। हितका संभाषण करती भई। सो एक वर्ष बराबर जाय है रात्रि जिनको ऐसी यह दोनो कभी तो कुटुम्बके निर्दईपनेकी कथा करें, कभी धर्मकथा करें। अष्टापदने सिंहको ऐसे भगाया जैसे हाथीको सिंह भगावै अर सर्पको गरुड़ भगावै। बहुरि वह गंधर्वदेव बहुत आनंदरूप होय गावने लग्या सो ऐसा गावता भया, जो देवोंके भी मनको मोहै तो मनुष्योंकी कहा बात? अर्धरात्रिके समय शब्दरहित होयगए तब यह गावता भया, अर बारबार वीणको अति रागत बजावता भया, और भी सारबाजे बजावत भया, अर मंजीरादिक बजावता भया, मृदंगादिक बजावता भया, बांसुरी आदिक फूंकके बाजे बजावता भया। अर सप्तस्वरोंमें गाया तिनके नाम निषाद १, ऋषभ २, गांधार ३, षडज ४, मध्यम ५, धैवत ६, पंचम ७। इन सप्तस्वरो के तीन ग्राम शीघ्र मध्य विलंबित, अर इक्कीस मूर्छना है, सो गंधर्वोंमें जे बडे देव हैं तिनके समान गान किया। या गानविद्यामें गंधर्वदेव प्रसिद्ध हैं। उंचास स्थानक रागके हैं सो सब ही गंधर्वदेव जानैं हैं। भगवान श्रीजिनेंद्रदेवके गुण सुंदर अक्षरोंमें गाए। मैं श्रीअरिहंत देवको भक्ति कर बंदू हूं। कैसे हैं भगवान? देव अर दैत्योंकर पूजनीक हैं। देव कहिये स्वर्गवासी, दैत्य कहिए ज्योतिषी विंतर अर भवनवासी, ये चतुरनिकायके देव हैं, सो भगवान सब देवोंके देव हैं, जिनको सुरनाथ विद्याधर अष्ट द्रव्यत पूजै हैं। बहुरि कैसे हैं? तीन भुवनमें अति प्रवीन हैं, अर पवित्र है अतिशय जिनके, ऐसे जे श्री मुनिसुव्रतनाथ तिनके चरणयुगलमें भक्ति पूर्वक नमस्कार करूं हूं, जिनके चरणारविंदके नखनिकी कांति इन्द्रके मुकुटकी रत्नोंकी ज्योतिको प्रकाश करे है। ऐसे गान गंधर्वदेवने गाए। सो बसंतमाला अतिप्रसन्न भई। ऐसे राग कभी सुने नाहीं थे, सो विस्मयकर व्याप्त भया है मन जाका, वा गीतकी अतिप्रशंसा करती भई। धन्य यह गीत काहूने अतिमनोहर गाए, मेरा हृदय अमृतकर आच्छादित

किया। अजनी को बसतमाला कहती भई—यह कोई दयावान देव है जान अष्टापदका रूपधरि सिंहको भगाया, अर हमारी रक्षा करी, अर यह मनोहर राग याहीन अपने आनन्दके अर्थि गाए है। हे देवी! हे शोभन, हे शीलवती! तेरी दया सब ही कर। जे भव्य जीव ह तिनके महाभयकर वनमें देव मित्र होय ह। या उपसगके विनाशत निश्चय तेरा पतिसो मिलाप होयगा, अर तेरे पुत्र अदभुत पराक्रमी होयगा। मुनिके वचन अन्यथा न होय मो मुनिके ध्यानकर जो पवित्र गुफा ताविष श्रीमुनिसुव्रतनाथ की प्रतिमा पधराय दोनो सुगध द्रव्यनित पूजा करती भइ। दोनोके चित्तविष यह विचार कि प्रसूति सुखत होय। बसतमाला नानाभाति अजनीके चित्तको प्रसन्न कर ह, अर कहती भई कि हे देवी! मानो यह वन अर गिरि तिहारे पधारनेत परम हषको प्राप्त भया ह, सो नीझरनेके प्रवाहकर यह पवत मानो हस ही ह। अर यह वनके वक्ष फलोके भारत नमीभूत लहलहाट कर ह। कोमल ह पल्लव जिनके, बिखर रहे ह फूल जिनके, सो मानो हषको प्राप्त भए ह। अर जे मयूर सूवा मना कोकिला दिक मिष्ट शब्द कर रहे ह सो मानो वन पहाडत वचनालाप कर ह। पवत नानाप्रकारकी जे धातु तिनकी ह खान जहा, अर सघनवक्षोक जे समूह सो इस पवतरूप राजाके सुन्दर वस्त्र ह, अर यहाँ नानाप्रकारके रत्न ह सोई या गिरिके आभूषण भए। अर या पवतमे भली—भली गुफा ह अर यहाँ अनेक जातिके सुगध पुष्प ह, अर या पवत ऊपर बडे बडे सरोवर ह तिनमें सुगध कमल फूल रहे ह। तेरा मुख महासुन्दर अनुपम सो चन्द्रमाकी और कमलकी उपमाको जीत ह। हे कल्याणरूपिणी! चिताके वश मति होहु, धीय धर, या वनमें सव कल्याण होयगा, देव सेवा करेंगे। पुण्याधिकारिनी तेरा शरीर निष्पाप ह, हषत पक्षी शब्द कर ह सो मानो तेरी प्रशसा ही करे ह। यह वक्ष शीतल मद सुगधके प्रेरे पत्रोके लहलहाटत मानो तेरे विराजवे करि महाहषको प्राप्त भए नत्य ही कर ह। अब प्रभातका समय भया ह, पहले तो आरक्त सध्या भई सो मानो सूयने तरी सेवा निमित्त सखी पठाई। अर अब सूय भी तेरा दशन करनेके अर्थि मानो उदय होनेको उद्यमी भया ह। यह प्रसन्न करनेकी

बात बसतमालान जब कही तब अजनी सुदरी कहती भई—हे सखी! तोहि होते सते मेरे निकट सब कुटुम्ब ह अर यह वन ही तेरे प्रसादत नगर ह। जो या प्राणीको आपदाम सहाय कर ह सो ही परम बाधव ह। अर जो बाधव दु खदाता ह सो ही परम शत्रु ह। या भाति परस्पर मिष्ट सभाषण करती ये दोनो गुफाम रह, श्रीमुनिसुवतनाथकी प्रतिमाका सेवन पूजन कर। विद्याके प्रभावत बसत-माला खान पान आदि बडी विधिसेती सब सामग्री कर। वह गधवदेव सब प्रकार इनको दुष्ट जीवनित रक्षा कर, अर निरतर भक्तित भगवानक अनेक गुण नानाप्रकारके राग रचनाकरि गाव।

अथानतर अजनीके प्रसूतिका समय आया तब बसतमाला से कहती भई—हे सखी! आज मेरे कछु व्याकुलता ह। तब बसतमाला बोली—ह शोभने! तेरे प्रसूतिका समय ह, तू आनन्दको प्राप्त होहु। तब याके लिए कोमल पल्लवोकी सेज रची। तापर याक पुत्रका जन्म भया। जस पूव दिशा सूयको प्रकट कर तस यह हनुमानको प्रकट करती भई। पुत्रके जन्मत गुफाका अधकार जाता रह्या, प्रकाशरूप होय गई। मानो सुवणमई ही भई। तदि अजनी पुत्रको उरसो लगाय दीनताके वचन कहती भई कि—हे पुत्र! तू गहन वनविष उत्पन्न भया, तेरे जन्मका उत्सव कसे करू? जो तेरा दादेके तथा नानाके घर जन्म होता तो जन्मका बडा उत्सव होता। तेरा मुखरूपचद्रमाके देखवेत कौनको आनद न होय, म कहा करू? मदभागिनी सव वस्तु रहित हू। देव कहिए पूर्वोपार्जित कमने मोहि दु ख दायिनी दशाको प्राप्त करी, ज्यो म कछु करनेको समथ नाही हू, परन्तु प्राणीनिको सव वस्तुत दीर्घायु होना दुलभ ह। सो हे पुत्र! तू चिरजीव हो, तू ह तो मेरे सव ह। यह प्राणोको हरणहारा महा गहन वन ह, याम जो म जीवू हू सो तो तेरे ही पुण्यके प्रभावत। ऐसे दीनताके वचन अजनी के मुखत सुनकरि बसतमाला कहती भई कि—हे देवी! तू कल्याणपूण ह ऐसा पुत्र पाया। यह सुन्दर लक्षण शुभरूप दीख ह, बडी ऋद्धिका धारी होयगा। तेरे पुत्रके उत्सवत मानो यह बेलरूप वनिता नत्य कर ह, चलायमान ह, कोमल पल्लव जिनके अर जो भमर गुजार कर ह सो मानो सगीत कर

२७१

है। यह बालक पूर्ण तेज है, सो याके प्रभावकरि तेरे सकल कल्याण होयगे। तू वृथा चिंतावती मत हो। या भांति इन दोऊनिके वचनालाप होते भए।

अथानन्तर बसंतमालाने आकाशमें सूर्यके तेज समान प्रकाशरूप एक ऊंचा विमान देख्या, सो देखकर स्वामिनीसो कह्या। तब वह शंका कर विलाप करती भई, यह कोई निःकारण वैरी पुत्रको ले जायगा अथवा मेरा कोई भाई है। तिनके विलाप सुन विद्याधरने विमान थांभ्या, दया संयुक्त आकाशतै उतरया, गुफाके द्वार पर विमानको थांभि महा नीतिवान, महा विनयवान शंकाको धरता हुवा स्त्री सहित भीतर प्रवेश किया। तब बसंतमालाने देखकरि आदर किया। यह शुद्ध मन विनयतै बैठ्या, और क्षणएक बैठ करि महामिष्ट अर गंभीरवाणी कहकर बसंतमालाको पूछता भया। ऐसे गम्भीर वचन कहता भया मानो मयूरनिको हर्षित करता मेघ ही गरज्या है। सुमर्यादा कहिए मर्यादाकी धरणहारी यह बाई कौनकी बेटी, कौनके परणी, कौन कारणतै महावनमें रहै है। यह बड़े घरकी पुत्री है, कौन कारणतै सब कुटुम्बतै रहित भई है? अथवा या लोकविषै रागद्वेष रहित जे उत्तम जीव हैं तिनके पूर्व कर्मोंके प्रेरे निःकारण वैरी होय है। तदि बसंतमाला दुःखके भारकरि रुकगया है कंठ जाका, आंसू डारती नीचो है दृष्टि जाकी, कष्टकर वचन कहती भई—महानुभाव! तिहारे वचनहीतै तिहारे मनकी शुद्धता जानी जाय है। जैसे रोग और मृत्युका मूल जो विषवृक्ष ताकी छायाहू सुन्दर न होय, अर जैसे दाहके नाशका मूल जो चन्दनका वृक्ष ताकी छाया भी सुंदर लागै है, सो तुम सारिखे जे गुणवान पुरुष हैं सो शुद्धभाव प्रकट करनेके स्थानक हैं। आप बड़े ही दयालु हो। यदि तिहारे याके दुःख सुनवेकी इच्छा है तो सुनहु मैं कहूं हूं। तुम सारिखे बड़े पुरुषनिको कह्या संता दुःख निवृत्त होय है। तुम दुःखहरी पुरुष हो, तिहारा यही स्वभाव ही है जो आपदाविषै सहाय करो। सो मैं कहूं सुनहु। यह अंजनी सुंदरी राजा महेंद्रकी पुत्री है। वह राजा पृथ्वीपर प्रसिद्ध महा यशवान नीतिवान निर्मल स्वभाव है। और राजा प्रह्लादका पुत्र पवनंजय गुणोंका सागर ताकी प्राणहूतै

प्यारी यह स्त्री ह । सो पवनजय एक समय बापकी आज्ञात आप तो रावणके निकट बरुणसों युद्धके अर्थि विदा होय चाले हुते सो मानसरोवरत रात्रिको याके महलमैं गोप्य आए । तातैं याको गभ रह्या, सो याकी सासूका क्रूर स्वभाव दयारहित महामूख था ही, वाके चित्त में गभका भम उपज्या । तब वान याको पिताके घर पठाइ । यह सब दोषरहित महासती शीलवती निर्विकार ह, सो पिताने भी अकीर्ति के भयत न राखी । जे सज्जन पुरुष है ते झूठे भी दोषत डरे है । यह बडे कुलकी बालिका सब आलबन रहित या वनविष मगीसमान रह ह । म याकी सेवा करू ह । इनके कुलक्रमतैं हम आज्ञाकारी सेवक ह, इतवारी ह, अर कपापात्र है । सो यह आज या वनविष प्रसूति भई ह । यह वन नाना उपसगका निवास ह । न जानिए कसे याको सुख होयगा ? हे राजन ! यह याका वृत्तात सक्षेपतै तुम सो कह्या, अर सम्पूण दु ख कहातक कहू ? या भाति स्नेहकरि पूरित जो बसतमालाके हृदयका राग सो अजनीक तापरूप अग्नित पिघल्या सता अगमें न समाया, सो मानो बसतमालाके वचन द्वारकरि बाहिर निकस्या । तब वह राजा प्रतिसूय हनूरुहनामद्वीपका स्वामी बसतमालासू कहता भया—हे भव्ये ! म राजा चित्रभानु अर गणी सुन्दरमालिनीका पुत्र हू, यह अ जनी मेरी भानजी ह । मने बहुत दिन में देखी सो पिछानी नाहीं । ऐसा कहकर अ जनीको बालावस्थात लेकर सकल वत्तात कहकर गदगद वाणीकर वचनालापकर आसू डालता भया । तब पूण वत्तात कहिनेत अ जनीने याको मामा जान गले लागि बहुत रुदन किया । सो मानो सकल दु ख रुदनसहित निकस गया । यह जगतकी रीति ह हितुके देख अश्रुपात पडे ह । वह राजा भी रुदन करने लाग्या अर ताकी रानी भी रोवने लागी । बसतमालाने भी अति रुदन किया । इन सबके रुदनत गुफा गु जार करती भई, सो मानो पवतने भी रुदन किया । जलके जे नीझरने, तेई भए अश्रुपात, तिनत सब वन शब्दमई होयगया । वनके जीव जे मगादि सो भी रुदन करते भए । तदि राजा प्रतिसूयने जलत अ जनीका मुख प्रक्षालन कराया अर आप भी जलत मुख पखाल्या । वन हू शब्द रहित होयगया । मानो इनकी वार्ता सुनना चाह ह । अजनी प्रति

सूयकी स्त्रोत सम्भाषण करती भई। सो बडोकी यह रीति ह जो दु खविष हू कतव्यतै न चूकै। बहुरि ग्रजनी मामासो कहती भई—हे पूज्य! पुत्रका समस्त शुभाशुभ वत्तात ज्योतिषीनित पूछो। तब सावत सर नामा ज्योतिषी लार था ताको पूछ्या। तब ज्योतिषी बोल्या बालकके जन्मकी वेला बतावो। तब बसतमालाने कही ग्राज ग्रधरात्रि गए जन्म भया ह। तब लग्न थाप कर बालकके शुभ लक्षण जान ज्योतिषी कहता भया कि यह बालक मुक्तिका भाजन ह। बहुरि जन्म न धरगा। जो तिहारे मनमें सदेह ह तो म सक्षेपतासो कहू हू सो सुन। चत्रवदी ग्रष्टमीकी तिथि ह, ग्रर श्रवण नक्षत्र ह, ग्रर सूय मेषका उच्चस्थानविष बठ्या ह, ग्रर च द्रमा वषका ह ग्रर मकरका मगल ह, ग्रर बुध मीनका है ग्रर बहस्पति ककका ह सो उच्च ह। शुक्र तथा शनश्चर दोनो मीनके ह। सूय पूण दष्टिकर शनिको देख ह, ग्रर मगल दश विश्वा सूयको देख ह ग्रर वहस्पति प द्रह विश्वा सूयको देख ह। ग्रर सूय वहस्पतिको दश विश्वा देख ह ग्रर च द्रमाको पूण दष्टि करि वहस्पति देख ह, ग्रर वहस्पतिको च द्रमा देख ह, ग्रर वह स्पति शनिश्चरको प द्रहविश्वा देख ह, ग्रर शनिश्चर वहस्पतिको दशविश्वा देखै ह। ग्रर वहस्पति शुक्रको प द्रह विश्वा देखै ह ग्रर शुक्र वहस्पतिको प द्रह विश्वा देखै ह। याकै सब ही ग्रह बलवान बठ ह। सूय ग्रौर मगल दोनो याका ग्रदभुत राज्य निरूपण कर ह। ग्रर वहस्पति ग्रर शनि मुक्ति का देनहारा जो योगी द्रपद निणय कर ह। जो एक वहस्पति ही उच्चस्थान बठ्या होय तो सव कल्याणके प्राप्तिका कारण ह। ग्रर ब्रह्मनामा योग ह, ग्रर मुहूत शुभ ह, सो ग्रविनाशी सुखका समागम याके होयगा। या भाति सब ही ग्रह ग्रति बलवान बठे ह, सो सब दोषरहित यह होयगा। ऐसा ज्योतिषीने जब कह्या तब प्रतिसूयने ताको बहुत दान दिया ग्रर भानजीको ग्रतिहष उपजाया ग्रर कही कि—हे वत्से! ग्रब हम सब हनूरुहद्वीपको चाल। तहा बालकका जन्मोत्सव भली भाति

१ नोट—मूलग्र थमें नक्षत्रादि दूसरे प्रकार वणन किए हैं परन्तु हम नही समझ सकते कि यह ग्रह ठीक हैं या मूल ग्र थके ठीक हैं। इसकारण हमने भाषाग्रन्थक मुजिब ही रक्खा है मल ग्र थक माफिक ग्रहादिकको भो ग्र थके ग्रन्तमे हम लिखगे। बुद्धिमान विचार लेवें।

होयगा। तदि अंजना भगवानकी वंदना कर पुत्रको गोदीमें लेय, गुफाका अधिपति जो वह गंधर्वदेव तासो बारम्बार क्षमा कराय प्रतिसूर्यके परिवार सहित गुफात निकसी, अर विमानके पास आय ऊभी रही, मानो साक्षात वनलक्ष्मी ही है। कैसा है विमान ? मोतीनिके जे हार सोई मानो नीझरने हैं, अर पवनकी प्रेरी क्षुद्रघण्टिका बाज रही है, अर लहलहाट करती जे रत्नोकी झालरी तिनत शोभायमान, अर केलिके वनोत शोभायमान है, सूर्यके किरणके स्पर्श कर ज्योतिरूप होय रह्या है, अर नानाप्रकारके रत्ननिकी प्रभाकर ज्योतिका मंडल पड रह्या है। सो मानो इन्द्रधनुष ही चढि रह्या है। अर नानाप्रकारके वर्णोकी सकडो ध्वजा फरहरै है। अर वह विमान कल्पवृक्ष समान मनोहर नानाप्रकारके रत्ननिकरि निर्मापित नानारूपको धरै मानो स्वर्गलोकत आया है। सो वा विमानमें पुत्रसहित अंजना, बसंतमाला तथा राजा प्रतिसूर्यका परिवार सकल बैठकर आकाशके मार्ग चाले। सो बालक कौतुककर मुलकता संता माताकी गोदमेंत उछलकर पर्वत ऊपर जा पड्या। माता हाहाकार करती भई, अर राजा प्रतिसूर्यके सबलोक हाहाकार करते भए। अर राजा प्रतिसूर्य बालकके ढूंढनेको आकाशत उतरिकरि पृथ्वी पर आया, अंजना अतिदीन भई विलाप करै है। ऐसा विलाप करै है जाको सुनकर तिर्यञ्चनिका मन भी करुणा कर कोमल होय गया। हाय पुत्र ! कहा भया ? देव कहिए पूर्वोपार्जित कर्मने कहा किया ? मोहि रत्न सम्पूर्ण निधान दिखायकरि बहुरि हरलिया। वियोगके दुःखत व्याकुल जो मैं सो मेरे जीवनका अवलंबन जो बालक भया हुता सो भी पूर्वोपार्जित कर्मने छिनाय लिया। सो माता तो यह विलाप करै है, अर पुत्र पत्थर पर पड्या, सो पत्थरके हजारो खंड होय गए, अर महा शब्द भया। प्रतिसूर्य देखै तो बालक एक शिला ऊपर सुखसे विराजै है, अपने अंगूठे आप ही चूसै है, क्रीडा करै है, अर मुलकै है, अति शोभायमान सूधे पडे है, लहलहाट करै है कर चरणकमल जिनके, सुन्दर है शरीर जिनका, वे कामदेव पदके धारक, उनको कौनकी उपमा दीजे ? मंद मंद जो पवन ताकरि लहलहाट करता जो रक्तकमलोका वन ता समान है, प्रभा जिनकी अपने तेजकरि पहाडके खंड–खंड

किए । ऐसे बालकको दूरत देखकर राजा प्रतिसूय अति आश्चयको प्राप्त भया । कसा ह बालक ?निष्पाप है शरीर जाका, धमका स्वरूप, तेजका पु ज । ऐसे पुत्रको देख माता बहुत विस्मयको प्राप्त भई, उठाय सिर चूमा अर छातीसो लगायलिया । तब प्रतिसूय अजनीत कहता भया–हे बालिके ! यह बालक तेरा समचतुरससस्थान, वजवषभनाराचसहननका धरणहारा, महा वजका स्वरूप ह । जाके पडने करि पहाड चूण होय गया । जब या बालककी ही देवनित अधिक अदभुत शक्ति ह तो यौवन अवस्थाकी शक्ति का कहा कहना ? यह निश्चय सेती चरमशरीरी ह । तदभवमोक्षगामी ह, फिर देह न धारगा । याकी यही पर्याय सिद्धपदका कारण ह । ऐसा जानकर तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड सिर नवाय, अपनी स्त्रीनिके समूह सहित बालकको नमस्कार करता भया । यह बालक, ताकी जे स्त्री, तिनके जे नेत्र, तेई भए श्याम श्वेत अरुण कमल, तिनकी जे माला, तिनकरि पूजनीक अति रमणीक मद मद मुलकनका करणहारा, सब ही नरनारीनिका मन हर । राजा प्रतिसूय पुत्रसहित अजनी भानजीको विमानम बठाय अपने स्थानक लेय आया । कसा ह नगर ? ध्वजा तोरणनिकरि शोभायमान ह । राजाको आया सुन सब नगरके लोक नाना प्रकारके मगल द्रव्यनिसहित सन्मुख आए । राजा प्रतिसूयने राजमहलमें प्रवश किया । वादित्रोके नादत व्याप्त भई ह दशो दिशा जहा, बालकके जन्म का बडा उत्सव विद्याधरने किया । जसा स्वगलोकविष इन्द्रकी उत्पत्तिका उत्सव देव कर हं । पवत विष जन्म पाया, अर विमानत पडकरि पवतको चूण किया । तात बालकका नाम माता अर बालकके मामा प्रतिसूयने श्रीशल ठहराया । अर हनूरुहद्वीपविष जन्मोत्सव भया तात हनूमान यह नाम पथ्वीविष प्रसिद्ध भया । वह श्रीशल (हनूमान) हनूरुहद्वीपविष रम । कसा ह कुमार ? देवनि समान ह प्रभा जाकी, महाकातिवान, सबको महा उत्सवरूप ह शरीरकी क्रिया जाकी, सबलोकके मन अर नेत्रनिको हरनहारा प्रतिसूयके पुरविष विराज ह ।

अथानन्तर गणधर देव राजा श्रेणिकत कह ह–हे नप ! प्राणीनिके पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावत

गिरिनका चूरण करनहारा महाकठोर जो वज्र सो भी पुष्प समान कोमल होय परणव हृ । अर महा आतापकी करणहारे जो अग्नि सो भी चन्द्रमाकी किरण समान तथा विस्तीण कमलनीके वन समान शीतल होय हृ । अर महा तीक्ष्ण खडगकी धारा सो महा मनोहर कोमल लता समान होय हृ । ऐसा जानकर जे विवेकी जीव हृ ते पापत विरक्त होय हृ । कसा हृ पाप ? महा दुःख देनेविषै प्रवीण हृ । तुम जिनराजके चरित्र विष अनुरागी होवो । कसा हृ जिनराजका चरित्र ? सारभूत जो मोक्षका सुख ताके देने विष चतुर हृ । यह समस्त जगत निरतर जन्मजरामरणरूप सूयके आतापत तप्तायमान हृ । ताम हजारो जे व्याधि हृ सोई किरणोका समूह ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष हनुमानकी जन्म कथाका वणन करने वाला सत्रहवा पव पूण भया ॥ १७ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसो कहृ हृ—हे मगधदेशके मडन ! यह हनुमानजीके जन्म का वत्तात तो तोहि कह्या, अब हनुमानके पिता पवनजयका वृत्तात सुन । पवनजय पवनकी नाईं शीघ्र ही रावणप गया, अर रावणत आज्ञा पाय वरुणत युद्ध करता भया । सो बहुत देरतक नाना प्रकारके शस्त्रनिकरि वरुणके अर पवनजयके युद्ध भया, सो युद्धविष वरुणको बाध लिया । तानै जो खरदूषणको वाध्या हुता तो छुडाया, अर वरुणको रावणके समीप लाया । वरुणने रावणकी सेवा अगीकार करी । रावण पवनजयत अति प्रसन्न भए । तब पवनजय रावणसो विदा होय अजनीके स्नेहतै शीघ्र ही घरको चाले । राजा प्रह्लादने सुनी कि पुत्र विजय कर आया, तब ध्वजा तोरण मालादिकोसे नगर शोभित किया । तब सब पुरिजन पुरजन लोग सन्मुख आय नगरके सव नर नारी इनके कत्तव्यकी प्रशसा कर हृ । राजमहलके द्वारे अर्घादिककरि बहुत सन्मानकर भीतर प्रवेश कराया । सारभूत मगलीक वचननिकरि कुवरको सबहीने प्रशसा करी । कुवर माता पिताको प्रणामकरि सबका मुजरा

लेय क्षणएक सभाविषै सबनकी शुश्रूषाकर आप अंजनीके महल पधारे। प्रहस्तमित्र लार सो वह महल जैसा जीवरहित शरीर सुन्दर न लागै, तैसे अंजनी विना मनोहर न लागै। तब मन अप्रसन्न होय गया। प्रहस्तसो कहते भए—हे मित्र! यहां वह प्राणप्रिया कमलनयनी नहीं दीखै है सो कहां है? यह मन्दिर ताके विना मुझे उद्यान समान भासै है, अथवा आकाश समान शून्य भासै है। तात तुम वार्ता पूछो, वह कहां है? तब प्रहस्त माहिले लोगनिते निश्चयकर सकल वृत्तांत कहता भया। तब याके हृदयको क्षोभ उपज्या। माता पितासो विना पूछें ही मित्रसहित महेन्द्रके नगरमें गए। चित्तमें उदास जब राजा महेंद्रके नगरके समीप जाय पहुँचे तब मनमें ऐसा जान्या जो आज प्रियाका मिलाप होयगा। तदि मित्रसो कहत भए कि—हे मित्र! देखो यह नगर मनोहर दीखै है, जहां वह सुन्दर कटाक्ष की धरनहारी सुन्दरी विराजै है। जैसे कैलाश पर्वतके शिखर शोभायमान दीखै है तैसे यह महलके शिखर रमणीक दीखै हैं। अर वनके वृक्ष ऐसे सुन्दर हैं मानो वर्षाकालकी सघनघटा ही है। ऐसी वार्ता मित्रसो करते संते नगरके पास जाय पहुंचे। मित्र भी बहुत प्रसन्न करता आया। राजा महेंद्र ने सुनी कि पवनंजयकुमार विजयकर पितासो मिल यहां आए हैं, तब नगरकी बडी शोभा कराई। अर आप अर्घादिक उपचार लेय सन्मुख आया, बहुत आदरतै कुंवरको नगरमें लाए। नगरके लोगो ने बहुत आदरतै गुण वर्णन किये। कुंवर राजमंदिरमें आए। एक मुहूर्त ससुरके निकट विराजे, सबहीका सन्मान किया, अर यथायोग्य वार्ता करी। बहुरि राजातै आज्ञा लेयकर सासूका मुजरा करया, बहुरि प्रियाके महल पधारे। कैसे हैं कुमार? कांताके देखनेकी है अभिलाषा जाके। तहां भी स्त्रीको न देख्या तब अति विरहातुर होय काहूको पूछ्या—हे बालिके! हमारी प्रिया कहां है? तब वह बोली हे देव! यहां तिहारी प्रिया नाहीं। तब वाके वचनरूप वज्रकर हृदय चूर्ण होयगया अर कान मानो ताते खारे पानीसे सींचे गए। जैसा जीवरहित मृतक शरीर होय तैसा होय गया। शोकरूप दाहकरि मुरझाय गया है मुखकमल जाका, यह ससुरालके नगरतै निकसिकरि पृथ्वीविषै स्त्रीके वार्ताके निमित्त

भमता भया, मानो वायुकुमारको वायु लागी। तब प्रहस्तमित्र याको अति आतुर देखकरि याके दुखतैं अति दुखी भया, अर यासो कहता भया—हे मित्र! कहा खेद—खिन्न होय है? अपना चित्त निराकुल कर। यह पृथ्वी केतीक है जहा होयगी वहा ठीककर लेवेंगे। तब कुमारने मित्रसो कही—तुम आदित्य पुर मेरे पिताप जावो अर सकल वृत्तात कहो। जो मुझे प्रियाकी प्राप्ति न होयगी तो मेरा जीवना नहीं होयगा। म सकल पृथ्वीपर भ्रमण करू हू, अर तुम भी ठीक करो। तब मित्र यह वृत्तात कहने को आदित्यपुर नगरविष आया, पिताको सब वृत्तात कह्या। अर पवनकुमार अम्बरगोचर हाथीपर चढकरि पृथ्वीविष विचरता भया। अर मनविष यह चिता करी कि वह सुन्दरी कमलसमान कोमल शरीर शोकके आतापको सतापको प्राप्त भई कहा गई? मेरा ही हृदयविष ध्यान जाके वह गरीबिनी विरहरूप अग्नित प्रज्वलित विषम बनमें कौन दिशाको गई? वह सत्यवादिनी नि कपट धमकी धरनहारी, गभ का ह भार जाक, मत कदापि बसतमालासो रहित होय गई होय। वह पतिव्रता श्रावकके व्रत पालनहारी राज कुमारी शोककर अध होय गए है दोनो नेत्र जाके, अर विकट वन विहार करती, क्षुधासो पीडित, अजगरकर युक्त जो अधकूप ताम ही पडी हो अथवा वह गभवती दुष्ट पशुओके भयकर शब्द सुन प्राणरहित ही होय गई होय। वह प्राणनित भी अधिक प्यारी या भयकर अरण्यविष जलविना प्यास कर सूखगए ह कठतालु जाके, सो प्राणोसे रहित होय गई होय? वह भोरी कदाचित गगाविष उतरी होय तहा नानाप्रकारके ग्राह सो पानीमें बह गई हो, अथवा वह अतिकोमल तनु डाभकी अणोकर विदारे गए होय चरण जाके सो एक पड भी पग धरनेकी शक्ति नाहीं सो न जानिए कहा दशा भई? अथवा दुखत गभपात भया होय अर कदाचित वह जिनधमको सेवनहारी महाविरक्तभाव होय आर्या भई होय। ऐसा चितवन करते पवनजयकुमारन पृथ्वीविष भ्रमण किया। सो वह प्राणवल्लभा न देखी। तबि विरहकर पीडित सवजगतको शून्य दखता भया, मरणका निश्चय किया। न पवतविष न मनोहर वृक्षनिविष, न नदीके तटपर काहू ठौर ही प्राणप्रिया विना उसका मन न रमता भया। ऐसा

विवेकवर्जित भया जो सुन्दरीकी वार्ता वृक्षनिको पूछ भ्रमता २ भूतरुवर नामा वनम आया। तहा हाथीत उतरचा अर जस मुनि आत्माका ध्यान कर तस प्रियाका ध्यान कर। बहुरि हथियार अर बखतर पृथ्वीपर डार दिए अर गजेन्द्रत कहते भए—हे गजराज! अब तुम वनस्वच्छन्द विहारी होवो। हाथी विनयकरि निकट खडचा ह। आप कह ह—हे गजेन्द्र! नदीके तीरमें शल्यकी वन ह ताके जो पल्लव सो चरते विचरो। अर यहा हथिनीनिके समूह ह सो तुम नायक होय विचरो। कुंवरने ऐसा कह्या परतु वह कृतज्ञ, धनीके स्नेहविष प्रवीण कुंवरका सग नहीं छोडता भया, जस भला भाई भाईका सग न छोडे। कुंवर अति शोकवत ऐसे विकल्प कर कि अति मनोहर जो वह स्त्री ताहि यदि न पाऊ तो या वन विष प्राण त्याग करू। प्रिया विष लग्या ह मन जाका, ऐसा जो पवनजय ताहि वनविष रात्रि भई। सो रात्रिके चार पहर चार वष समान बीते। नानाप्रकारके विकल्पकरि व्याकुल भया।

यहाकी तो यह कथा, अर मित्र पिताप गया सो पिताको सव वृत्तात कह्या। पिता सुनकर परम शोकको प्राप्त भया। सबको शोक उपज्या। अर केतुमती माता पुत्रके शोककरि अति पीडित होय रोवती सती प्रहस्तसू कहती भई कि जो तू मेरे पुत्रको अकेला छोड आया सो भला न किया। तवि प्रहस्तने कही मोहि अति आग्रहकर तिहारे निकट भेज्या सो आया, अब तहा जाऊगा। सो माताने कही—वह कहा ह? तब प्रहस्तने कही जहाँ अजनी ह तहा होयगा। तवि यान कही अजनी कहा ह, तान कही— म न जानू। हे माता! जो विना विचार शीघ्र ही काम कर तिनको पश्चापात होय। तिहारे पुत्रने ऐसा निश्चय किया कि जो म प्रियाको न देखू तो प्राणत्याग करू। यह सुनकर माता अति विलाप करती भई। अत पुरकी सकल स्त्री रुदन करती भइ, माता विलाप कर ह—हाय मो पापिनीने कहा किया जो महासतीको कलक लगाया, जाकरि मेरा पुत्र जीवनके सशयको प्राप्त भया। म क्रूरभावकी धरणहारी महावक्र मदभागिनीने विना विचारे यह काम किया। यह नगर, यह कुल, अर विजयार्ध पवत, अर रावणका कटक पवनजय विना शोभ नाहीं। मेरे पुत्र समान और कौन?

जानै वरुण जो रावणहूतैं असाध्य ताहि रणविषै क्षणमात्रमें बांध लिया। हाय वत्स! विनयके आधार, गुरु पूजनमैं तत्पर, जगतसुन्दर, विख्यातगुण तू कहां गया? तेरे दुखरूप अग्निकरि तप्तायमान जो मैं, सो हे पुत्र! मातासों वचनालाप कर, मेरा शोक निवार। ऐसे विलाप करती अपना उरस्थल अर सिर कूटती जो केतुमती सो तान सब कुटुम्ब शोकरूप किया। प्रह्लाद हू आसू डारते भए। सब परिवारको साथ लेय प्रहस्तको अगवानी कर अपने नगरतैं पुत्रको ढूंढनेको चाले। दोनों श्रेणियोंके सब विद्याधर प्रीतिसों बुलाये सो परिवार सहित आए। सब ही आकाशके मार्ग कुंवरको ढूंढ हैं, पृथ्वीमें देखैं हैं, अर गम्भीर वन और लतावोमें देखै हैं। अर प्रतिसूर्यके पास भी प्रह्लादका दूत गया सो सुन कर महा शोकवान भया। अर अंजनासों कहया। सो अंजना प्रथम दुखतैं भी अधिक दुखको प्राप्त भई। अश्रुधारा करि वदन पखालती रुदन करती भई, कि हाय नाथ! मेरे प्राणोंके आधार! मुझमें बांध्या है मन जिन्होंने सो मोहि जन्मदुखारीको छोडकरि कहाँ गए? कहा मुझसों कोप न छोडो हो, जो सब विद्याधरनितैं अदृश्य होय रहे हो। एकबार एक भी अमृत समान वचन मोसों बोलो। एते दिन ये प्राण तिहारे दर्शनकी वांछाकरि राखे हैं, अब जो तुम न दीखो तो ये प्राण मेरे किस कामके हैं? मेरे यह मनोरथ हुता कि पतिका समागम होयगा सो दैवने मनोरथ भग्न किया। मुझ मंदभागिनी के अर्थि आप कष्ट अवस्थाको प्राप्त भए। तिहारे कष्टकी दशा सुनकर मेरे प्राण पापी क्यो न विनश जाँय। ऐसें विलाप करती अंजनाको देखकरि बसंतमाला कहती भई—हे देवी! ऐसे अमंगल वचन मत कहो, तिहारे धनीसो अवश्य मिलाप होयगा। अर प्रतिसूर्य बहुत दिलासा करता भया कि तेरे पतिको शीघ्र ही लावं हैं। ऐसा कहकर राजा प्रतिसूर्यने मनतैं भी उतावला जो विमान ताविषै चढ कर आकाशतैं उतरकर पृथ्वीविषै ढूंढ्या। प्रतिसूर्यके लार दोनों श्रेणियोके विद्याधर, अर लंकाके लोग यत्नकरि ढूंढै हैं। देखते देखते भूतरवर नामा अटवीविषै आए। तहां अंबरगोचर नामा हाथी देख्या। वर्षाकालके सघन मेघसमान है आकार जाका, तबि हाथीको देखकरि सब विद्याधर प्रसन्न भए कि जहाँ यह

हाथी है तहां पवनंजय है । पूर्वे हमने यह हाथी अनेकबार देख्या है । यह हाथी अंजनगिरि समान है रंग जाका, अर कुंदके फूल समान श्वेत हैं दांत जाके, अर जैसी चाहिये तैसी सुंदर है सूंड जाकी। जब हाथी के समीप विद्याधर आए तब वाहि निरंकुश देख डरे अर हाथी विद्याधरोंके कटकका शब्द सुन महाक्षोभ को प्राप्त भया । हाथी महाभयंकर दुर्निवार शीघ्र है वेग जाका, मदकर भीज रहे हैं कपोल जाके, अर हाले हैं अर गाजै है कान जाके । जिस दिशाको हाथी दौडे ताही दिशातैं विद्याधर हट जावैं । यह हाथी लोगोंका समूह देख स्वामीकी रक्षाविषै तत्पर, सूंडसों बांधी है तलवार जाके, महाभयंकर पवनंजयका समीप न तजै । सो विद्याधर आसपास याके समीप न आवैं । तब विद्याधरोंने हथिनियोंके समूहसों याहि वश किया, क्योंकि जेते वशीकरणके उपाय हैं, तिनमें स्त्री समान और कोई उपाय नाहीं । तब ये आगे आय पवनकुमारको देखते भए । मानो काठका है, मौनसों बैठ्या है । वे यथायोग्य याका उपचार करते भए पर यह चिंतामें लीन काहूसों न बोलै । जैसे ध्यानारूढ मुनि काहूसों न बोलैं । तब पवनंजयके माता पिता आंसू डारते याके मस्तकको चूमते भए, अर छातीसों लगावते भए, अर कहते भए कि—हे पुत्र ! तू ऐसा विनयवान हमको छोडकरि कहां आया ? महाकोमल सेजपर सोवनहारा तेरा शरीर या भीमवनविषै कैसे रात्रि व्यतीत करी ? ऐसे वचन कहे तो भी न बोलै । तदि याहि नमीभूत और मौनव्रत धरे, मरणका है निश्चय जाके ऐसा जानकरि समस्त विद्याधर शोकको प्राप्त भए, पिता सहित सब विलाप करते भए ।

तदि प्रतिसूर्य अंजनीका मामा सब विद्याधरनिको कहता भया कि मैं वायुकुमारसों वचनालाप करूंगा । तब वह पवनंजयको छातीसों लगायकर कहता भया—हे कुमार ! मैं समस्त वृत्तांत कहूं हूं सो सुनो । एक महा रमणीक संध्याभ्रनामा पर्वत, तहां अनंगवीचि नामा मुनिको केवलज्ञान उपज्या था, सो इन्द्रादिकदेव दर्शनको आए हुते, अर मैं भी गया हुता । सो वंदनाकर आवता हुता सो मार्गमें एक पर्वतकी गुफा, ता ऊपर मेरा विमान आया, सो मैंने स्त्रीके रुदनकी ध्वनि सुनी । मानो बीन बाजै

है। तब मैं वहां गया, गुफाविषै अंजनी देखी। मैंने वनके निवासका कारण पूछ्या। तदि बसंतमाला ने सब वृत्तांत कह्या। अंजनी शोक कर विह्वल रुदन कर सो मैं धीर्य बंधाया, अर गुफामें ताके पुत्र का जन्म भया, सो गुफा पुत्रके शरीरकी कांतिकर प्रकाश रूप होयगई, मानो सुवर्णकी रची है। यह वार्ता सुनकर पवनंजय परम हर्षको प्राप्त भए। अर प्रतिसूर्यको पूछते भए—बालक सुखसो तिष्ठै है? तब प्रतिसूर्यने कह्या—"बालकको मैं विमानमें थापकर हनूरुहद्वीपको जाता था सो मार्गमें बालक एक पर्वतपर पड्या।" सो पर्वतके पडनेका नाम सुनकर पवनंजयने हाय हाय ऐसा शब्द कह्या। तदि प्रति-सूर्यने कह्या—"सोच मत कर, जो वृत्तांत भया सो सुनहु, जाकरि सब दुखसो निवृत्ति होय। बालक को पड्या देख मैं विलाप करता भया। विमानतै नीचे उतर्या, तब क्या देखा—पर्वतके खंड-खंड होय गए, अर एक शिलापर बालक पड्या है, अर ताकी ज्योतिकरि दशोदिशा प्रकाशरूप होय रही है। तब मैंने तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कार कर बालकको उठाय लिया, अर माता को सौंप्या। सो माता अति विस्मयको प्राप्त भई। पुत्रका श्रीशैल नाम धर्‌या। बसंतमाला अर पुत्र सहित अंजनीको हनुरुहद्वीप लेय गया। वहां पुत्रका जन्मोत्सव भया। सो बालकका दूजा नाम हनुमान भी है। यह तुमको मैंने सकल वृत्तांत कह्या। हमारे नगरमें वह पतिव्रता पुत्रसहित आनंदसो तिष्ठै है।" यह विरतांत सुनकर पवनंजय तत्काल अंजनीके अवलोकन के अभिलाषी हनुरुहद्वीपको चाले। अर सब विद्याधर भी इनके संग चाले। हनुरुहद्वीपमें गए। सो दोय महीना सबको प्रतिसूर्यने बहुत आदर सो राख्या। बहुरि सब प्रसन्न होय अपने अपने स्थानकको गए। बहुत दिनोमें पाया है स्त्रीका संयोग जान सो ऐसा पवनंजय यहां ही रहै। कैसा है पवनंजय? सुन्दर है चेष्टा जाकी, और पुत्रकी चेष्टा सो अति आनन्दरूप हनु-रुहद्वीपमें देवनकी नाईं रमते भए। हनुमान नवयौवनको प्राप्त भए। मेरुके शिखर समान सुन्दर है सीस जाका, सब जीवनिके मनके हरणहारे होते भए। सिद्ध भई है अनेक विद्या जाको, अर महाप्रभाव रूप विनयवान, बुद्धिमान, महाबली, सब शास्त्रनिके अर्थविषै प्रवीण, परोपकार करनेको चतुर, पूर्वभव

स्वर्गमें सुख भोगि आए, अब यहा हनुरुहद्वीपविषै देवोंकी नाईं रमैं हैं।

हे श्रेणिक ! गुरुपूजामें तत्पर श्रीहनुमानके जन्मका वर्णन, अर पवनजयका अजनीसों मिलाप, यह अद्भुत कथा नानारसकी भरी है। जे प्राणी भावधर यह कथा पढे पढावैं, सुन सुनावैं तिनको अशुभ कर्ममें प्रवृत्ति न होय, शुभक्रियाके उद्यमी होय। अर जो यह कथा भावधर पढ पढावैं उनको परभवमें शुभगति, दीर्घ आयु होय, शरीर निरोग सुन्दर होय, महापराक्रमी होय, अर उनकी बुद्धि करनेयोग्य कार्यके पारकों प्राप्त होय, अर चन्द्रमा समान निर्मलकीर्ति होय, अर जासों स्वर्गमुक्तिके सुख पाइए ऐसे धर्मकी बढवारी होय, जो लोकविषै दुर्लभ वस्तु हैं सो सब सुलभ होय, सूर्य समान प्रतापके धारक होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै पवनजय अजनाका मिलाप वर्णन करने वाला अठारहवा पर्व पूर्ण भया ॥ १८ ॥

अथानन्तर राजा वरुण बहुरि आज्ञालोप भया तदि कोपकरि तापर रावण फेर चढे। सब भूमिगोचरी विद्याधरनिको अपने समीप बुलवाया, सबके निकट आज्ञापत्र लेय दूत गए। कैसा है रावण ? राज्यकार्यविषै निपुण है, किहकधापुरके धनी, अर लकाके धनी, रथनूपुर अर चक्रवालपुरके धनी तथा वैताढ्यकी दोनो श्रेणीके विद्याधर तथा भूमिगोचर, सब ही आज्ञा प्रमाण रावणके समीप आए। हनुरुहपद्वीपविषै भी प्रतिसूर्य तथा पवनजयके नाम आज्ञापत्र लेय दूत आए सो ये दोनो आज्ञापत्रको माथे चढाय दूतका बहुत सन्मानकर, आज्ञाप्रमाण गमनके उद्यमी भए। तदि हनुमानको राज्याभिषेक देने लागे। वादित्रादिकके समूह बाजने लागे। अर कलश हैं जिनके हाथमें ऐसे मनुष्य आगे आय ठाढे भए। तदि हनुमानने प्रतिसूर्य अर पवनजयको पूछ्या यह कहा हैं ? तदि उन्होंने कही—हे वत्स ! हनुरुहद्वीपका प्रतिपालन कर, हम दोनोको रावण बुलावै है सो जाय हैं, रावणको मददके अर्थि। रावण वरुण पर जाय है। वरुणने बहुरि माथा उठाया है, महासामंत है, ताके बडी सेना है, पुत्र बलवान हैं, अर गढका बल

ह । तबि हनुमान विनय कर कहते भए कि मेरे होते तुमको जाना उचित नाहीं, तुम मेरे गुरुजन हो । तब उन्होने कही—हे वत्स ! तू बालक ह अबतक रण देख्या नाहीं । तबि हनुमान बोले—अनादिकालतै जीव चतुर्गतिविषै भ्रमण कर ह, पंचमगति जो मुक्ति सो जबतक अज्ञान का उदय है तबतक जीवने पाई नाहीं, परन्तु भव्यजीव पाव ही ह । तस हमने अब तक युद्ध किया नाहीं, परन्तु अब युद्धकर वरुणको जीतहींगे । अर विजय कर तिहारे पास आवै । सो जब पिता आदि कुटुम्बके जन उनने राखने का घना ही यत्न किया, परन्तु यें न रहते जाने, तदि उन्होने आज्ञा दई । यह स्नान भोजन कर पहिले पहिल मंगलीक द्रव्यो कर भगवान की पूजा कर, अरहंत सिद्धको नमस्कार कर माता पिता अर मामाकी आज्ञा लेय, बडोका विनयकरि, यथायोग्य सभाषण कर, सूर्यतुल्य उद्योत रूप जो विमान तामे चढ़करि शस्त्रके समूहकरि संयुक्त जे सामंत उन सहित, दशो दिशामें व्याप्त रह्या ह यश जाका, लंकाकी ओर चाल्या । सो त्रिकूटाचलके सन्मुख विमान में बैठ्या जाता ऐसा शोभता जसा मंदराचलके सन्मुख जाता ईशान इन्द्र शोभै ह । तदि जलबीचीनामा पर्वतपर सूर्य अस्त भया । कसा ह पर्वत ? समुद्रको लहरोके समूहकर शीतल हैं तट जाके । तहा रात्रिसुखसो पूर्ण करी । अर करी ह महा योधानित वीररसकी कथा जानै, महा उत्साहकर नाना प्रकारके देश द्वीप पर्वतोको उलंघता, समुद्रके तरंगनिकरि शीतल जे स्थानक तिनको अवलोकन करता, समुद्रविषै बडे-बडे जलचर जीवनिको देखता, रावणके कटकमें पोहच्या । हनुमानकी सेना देखकरि बडे बडे राक्षस विद्याधर विस्मयको प्राप्त भए । परस्पर वार्ता कर है यह बली श्रीशैल हनुमान भव्यजीवोंविषै उत्तम, जाने बाल अवस्थामें गिरिको चूर्ण किया । ऐसे अपने यश श्रवण करता हनुमान रावणके निकट गया । रावण हनुमानको देखकर सिंहासनसो उठे अर विनय किया । कसा है सिंहासन ? पारिजातादिक कहिए कल्पवृक्षोके फूलोसे पूरित हैं, जाकी सुगन्धकरि भ्रमर गुंजार कर हैं, जाके रत्ननिकी ज्योतिकर आकाशविषै उद्योत होय रह्या ह, जाके चारों ही तरफ बडे सामंत हैं । ऐसे सिंहासनतै उठकर रावणने हनुमानको उरसो लगाया । कैसा ह हनुमान ? रावणके विनयकरि नम्रीभूत होय गया है शरीर जाका ।

रावण हनुमानको निकट लेय बठ्या, प्रीतिकर प्रसन्न ह मुख जाका, परस्पर कुशल पूछी। अर परस्पर रूपसपदा देख हर्षित भए। दोनो ही महाभाग्य ऐसे मिले मानो दोय इन्द्र मिले। रावण अति स्नेह करि पूण ह मन जाका, सो कहता भया—पवनकुमारने हमत बहुत स्नेह बढाया जो ऐसा गुणोका सागर पुत्र हमपर पठाया। एसे महाबलीको पायकरि मेरे मनोरथ सिद्ध होवेंगे। ऐसा रूपवान, ऐसा तेजस्वी और नाहीं, जसा यह योधा सुन्या तसा ही ह, याम सदेह नाहीं। यह अनेक शुभ लक्षणो का भरया ह, याके शरीरका आकार ही गुणोको प्रकट कर ह। रावणने जब हनुमानके गुण वर्णन किए तदि हनुमान नीचा होय रह्या, लज्जावत पुरुषकी नाइ नमीभूत ह शरीर ज्याका, सो सतोकी यह रीति ह। अब रावणका वरुणसे सग्राम होयगा सो मानो सूय भयकर अस्त होनेको उद्यमी भया, मद होय गइ ह किरण जाकी। सूयके अस्त भए पीछ सध्या प्रकट भई, बहुरि गई, तो मानो प्राण-नाथकी विनयवती पतिवता स्त्री ही ह, अर चन्द्रमारूप तिलकको धरे रात्रिरूप स्त्री शोभती भई। बहुरि प्रभात भया सूयकी किरणनिकरि पथ्वीविष प्रकाश भया। तब रावण समस्त सेनाको लेय युद्धको उद्यमी भया। हनुमान विद्याधर समुद्रको भेद वरुणके नगरविष गया, वरुणपर जाता हनुमान ऐसी कातिको धरता भया जसा सुभूम चक्रवर्ती परशुरामके ऊपर जाता शोभ। रावणको कटकसहित आया जानकर वरुणकी प्रजा भयभीत भई। पाताल पुण्डरीक नगरका वह धनी सो नगरमें योधावो के महाशब्द होते भए। योधा नगरसो निकसे, मानो वह योधा असुरकुमार देवोके समान ह। अर वरुण चमरेंद्र तुल्य ह, महाशूरवीरपनेविष गर्वित। अर वरुणके सौ पुत्र महा उद्धत युद्ध करनेको आए। नानाप्रकारके शस्त्रोके समूहकरि रोका ह सूयका दशन जिन्होने। सो वरुणके पुत्रोने आवते ही रावणका कटक ऐसा व्याकुल किया जस असुरकुमार देव क्षुद्र देवोको कम्पायमान कर। चक्र, धनुष, वज, सेल, बरछी इत्यादि शस्त्रोके समूह राक्षसनिके हाथसे गिर पडे, अर वरुणके सौ पुत्रनिक आगे राक्षसनिका कटक ऐसा भमता भया जसा वक्षनिका समूह असनपातके भयसे भ्रम। तब अपने

कटककू व्याकुल देख रावण वरुणके पुत्रनिपर गया। जसे गजेंद्र वृक्षनिकू उपाडे तसै बडे बडे योधा-निकू उपाडे। एक तरफ रावण अकेला एक तरफ वरुणके सौ पुत्र, सो तिनके बाणनिकर रावणका शरीर भेदा गया तथापि रावण महायोधाने कछु न गिन्या। जसे मेघके पटल गाज तैसे वर्षते सूर्य-मंडलको आच्छादित करें तसे वरुणके पुत्रनिने रावणको वेढ्या, अर कुम्भकरण इन्द्रजीतसू वरुण लडने लाग्या। जब हनुमानने रावणको वरुणके पुत्रनिकर बेध्या टेसूके फूलोके रंगसमान आरक्त शरीर देख्या तदि रथमें असवार होय वरुणके पुत्रनिपर दौड्या। कसा है हनुमान? रावणसू प्रीति युक्त है चित्त जाका, अर शत्रुरूप अंधकारके हरिवेकू सूर्य समान है। पवनके वेगसे भी शीघ्र वरुणके पुत्रो पर गया सो हनुमानसे वरुणके पुत्र सौ कम्पायमान भए, जसे मेघके समूह पवनसे कम्पायमान होय। बहुरि हनुमान वरुणके कटकपर एसा पड्या जसा माता हाथी कदलीके वनमें प्रवेश कर। कई-यनिकू विद्यामई लांगूल पाशकर बांध लिया, अर कइयोको मुदगरके घात कर घायल किया। वरुणका समस्त कटक हनुमानते हार्‌या, जसे जिनमार्गीके अनेकांतनयकरि मिथ्यादृष्टि हार। हनुमानको अपने कटकविषै रण क्रीडा करते देख राजा वरुणने कोपकर रक्तनेत्र किए, अर हनुमान पर आया। तब रावण वरुणकू हनुमान पर आवता देख आप जाय रोक्या, जसे नदीके प्रवाहको पर्वत रोकै। वरुणके अर रावणके महायुद्ध भया। तब ताही समयमें वरुणके सौ पुत्र हनुमानने बांध लिए अर कईएकनिकू मुदगरनिके घातकरि घायल किए। सो वरुण सौऊ पुत्रनिकू बांधे सुनकर शोककर विह्वल भया। अर विद्याका स्मरण न रह्या तदि रावणने याको पकड लिया। सो मानो वरुण सूर्य, अर याके पुत्र किरण तिनके रोकनेकरि मानू रावण राहूका रूप धारता भया। वरुणको कुम्भकरणके हवाले किया अर आप डेरा भवनोन्माद नाम वनमें किया। कसा है वह वन? समुद्र की शीतल पवनसे महाशीतल है। सो ताके निवासकर सेनाको रणजनित खेद रहित किया। अर वरुणको पकडा सुन उसकी सेना भाजी, पुण्डरीकपुरविषै जाय प्रवेश किया। देखो पुण्यका प्रभाव जो एक नायकके

हारनेत सबही हारे, अर एक नायकके जीतनेत सब ही जीते। कुम्भकरण ने कोपकर वरुणके नगर लूटनेका विचार किया तदि रावणने मने किया, यह राजानिका धर्म नाहीं। कसे हैं रावण ? वरुणपर कोमल है चित्त जाका सो कुम्भकरण सें कहते भए—हे बालक ! तने यह दुराचारकी बात कही ? जो अपराध था सो तो वरुणका था, प्रजाका कहा अपराध ? दुबलको दुखदेना दुरगतिका कारण है, अर महाअन्याय है। ऐसा कहकर कुंभकरणको प्रशात किया अर वरुणको बुलाया। कसा है वरुण ? नीचा है मुख जाका। तदि रावण वरुणको कहते भए—हे प्रवीण ! तुम शोक मत करो, जो युद्ध-विष पकडा गया। योधावोकी दोय ही रीति है मारे जाय अथवा पकडे जाय। अर रणतैं भागना यह कायरनिका काम है। तात हमप क्षमा करो, अर अपने स्थानक जाय कर मित्र बान्धव सहित सकल उपद्रवरहित अपना राज्य सुखत करहु। ऐसे मिष्ट वचन रावणके सुनकर वरुण हाथ जोड रावणसू कहता भया—हे वीराधिवीर ! हे महाधीर ! तुम या लोकविष महापुण्याधिकारी हो, तुमसे जो वर भाव कर सो मूख है। अहो स्वामिन ! यह तिहारा परम धीय हजारो स्तोत्रनिस स्तुति करने योग्य है, तुमने देवाधिष्ठित रत्न विना मुझे सामान्य शस्त्रोसे जीता। कसे हो तुम ? अदभुत है प्रताप जिनका। अर इस पवनके पुत्र हनुमानके अदभुत प्रभावकी कहा महिमा कहू ? तिहारे पुण्यके प्रभावत ऐसे सत्पुरुष तिहारी सेवा कर है। हे प्रभो ! यह पथ्वी काहूके गोत्रमें अनुक्रमणकर नाहीं चली आई है। यह केवल पराक्रमिणिके वश है। शूरवीर ही याके भोक्ता है। सो आप सव योधावोके शिरो-मणि हो, सो भूमिका प्रतिपालन करहु। हे उदारकीर्ति ! हमारे अपराध क्षमा करहु। हे नाथ ! आप जसी उत्तम क्षमा कहू न देखी। तात आप सारिखे उदार चित्त पुरुषसे सम्बन्ध कर म कृतार्थ होऊगा। तात मेरी सत्यवती नामा पुत्री आप परणो, याके परिणवे योग्य आप ही हो। या भांति वीनती कर अति उत्साहत पुत्री परणाई। कसी है वह सत्यवती ? सवरूपवतियोका तिलक है, कमल समान है मुख जाका। वरुणन रावणका बहुत सत्कार किया अर कईएक प्रयाण रावणके लार गया।

रावणने अतिस्नेहकरि सीख दीनी। तदि रावण अपनी राजधानीमें आया। पुत्रीके वियोगतैं व्याकुल है चित्त जाका। कलाशकप जो रावण ताने हनुमानका अति सन्मानकर अपनी बहिन जो चन्द्रनखा ताकी पुत्री अनागकुसुमा महारूपवती सो हनुमानको परणाई। सो हनुमान ताकूं परण कर अतिप्रसन्न भए। कपी है अनागकुसुमा? सवलोकविष जो प्रसिद्ध गुण तिनकी राजधानी है। बहुरि कैसी है? कामके आयुध है नेत्र जाके। अर अति सम्पदा दीनी, अर कणकुण्डलपुरका राज्य दिया, अभिषेक कराया। ता नगरमें हनुमान सुखसूं विराजे, जस स्वर्गलोकमे इन्द्र विराजे। तथा किहकूपुर नगरका राजा नल, ताकी पुत्री हरमालिनी नामा रूप सम्पदाकर लक्ष्मीको जीतनहारी सो महाविभूतितैं हनुमानको परणाई। तथा किन्नरगीत नगरविष जे किन्नरजातिके विद्याधर तिनकी सौ पुत्री परणी। या भांति एकसहस्र रानी परणीं। पथ्वीविष हनुमानका श्रीशैल नाम प्रसिद्ध भया। काहेतैं? पर्वतकी गुफामें जन्म भया था। सो हनुमान पहाडपर आय निकसे सो देख अति प्रसन्न भए। रमणीक है तलहटी जाकी। वह पर्वत भी पथ्वीविष प्रसिद्ध भया।

अथानन्तर किहकधपुर नगरविष राजा सुग्रीव ताके रानी सुतारा, चन्द्रसमान कांतिकूं धरै है मुख जाका, अर रति समान है रूप जाका, तिनके पुत्री पद्मरागा, नवीन कमल समान है रंग जाका, अर अनेक गुणनिकरि मंडित है, पथ्वीपर प्रसिद्ध, लक्ष्मी समान सुन्दर हैं नेत्र जाके, ज्योतिके मण्डल से मंडित है मुखकमल जाका, अर महा गजराजके कुम्भस्थल समान ऊंचे कठोर स्तन हैं जाके, अर सिंह समान है कटि जाकी महा विस्तीर्ण, अर लावण्यतारूप सरोवरमें मग्न है मूर्ति जाकी, जाहि देख चित्त प्रसन्न होय, शोभायमान है चेष्टा जाकी। ऐसी पुत्रीको नवयौवन देख मातापिताकों याके परणावेकी चिंता भई। या योग्य वर चाहिए, सो माता पिताको रातदिन निद्रा न आवै। अर दिनमें भोजनकी रुचि गई, चिंता रूप है चित्त जिनका। तब रावणके पुत्र इन्द्रजीत आदि अनेक राजकुमार कुलवान शीलवान तिनके चित्रपट लिखे, रूप लिखाय सखियोंके हाथ पुत्रीको दिखाए।

सुन्दर है काति जिनकी सो कन्याकी दृष्टिमें कोई न आया अपनी दृष्टि सकोच लीनी । बहुरि हनुमानका चित्रपट देख्या ताहि देखकर शोषण, सतापन, उच्चाटन, मोहन, वशीकरण कामके यह पचबाणोसे बधी गई । तब ताहि हनुमानविषै अनुरागिनी जान सखीजन ताके गुण वर्णन करती भई ।

हे कन्ये ! यह पवनजयका पुत्र हनुमान ताके अपारगुण कहालो कहै । अर रूप सौभाग्य तो याके चित्रपटमें तने देखे, तात याको वर माता पिताकी चिता निवार । कन्या तो चित्रपटको देख मोहित भई हुती और सखी जनोने गुण वर्णन किया ही है तब लज्जाकर नीची होयगई अर हाथमें क्रीडा करनेका कमल था ताकी चित्रपट में दी । तब सबने जाना कि यह हनुमानसे प्रीतवती भई । तब याके पिता सुग्रीवने याका चित्रपट लिखाय भले मनुष्यके हाथ वायुपुत्रप भेजा । सो सुग्रीवका सेवक श्री नगरमें गया अर कन्याका चित्रपट हनुमानको दिखाया । सो अजनाका पुत्र सुताराकी पुत्रीके रूपका चित्रपट देख मोहित भया । यह बात सत्य है कि कामके पाच ही बाण है परन्तु कन्याके प्रेरे पवन पुत्रके मानो सौ बाण होय लागे । चित्तमें चितवता भया, मै सहस विवाह किए अर बडी २ ठौर परणा, खरदूषणकी पुत्री रावणकी भाणजी परणी तथापि जबलग यह पदमरागा न परणू तौलग परणा ही नाहीं । ऐसा विचार, महाऋद्धिसयुक्त एकक्षणमें सुग्रीवके पुरमें गया । सुग्रीव सुना जो हनुमान पधारे, तब सुग्रीव अति हर्षित होय सन्मुख आए । बडे उत्साहसे नगरमें ले गए सो राजमहल की स्त्री झरोखनिकी जालीसे इनका अद्भुत रूप देख सकल चेष्टा तज आश्चर्यरूप होयगई । अर सुग्रीवकी पुत्री पदमरागा इनके रूपको देखकर थकित होय गई । कैसी है कन्या ? अति सुकुमार है शरीर जाका । बडी विभूतिकरि पवनपुत्रसे पदमरागाका विवाह भया । जैसा वर तैसी वींदनी । सो दोनो अति हर्षको प्राप्त भए । स्त्री सहित हनुमान अपने नगरमें आए । राजा सुग्रीव और राणी सुतारा पुत्रीके वियोगत कईएक दिन शोकसहित रहे । अर हनुमान महालक्ष्मीवान समस्त पृथ्वीपर प्रसिद्ध है कीर्ति जाकी, सो ऐसे पुत्रको देख पवनजय महासुखरूप समुद्रविषै मग्न भए । रावण तीन

खडका नाथ, अर सुग्रीव समस्त ह पराक्रम जाका, हनुमान सारिखे महाभट विद्याधरोके अधिपति तिनका नायक लका नगरीविष सुखसो रम। समस्त लोकक् सुखदाई जसैं स्वगलोकविष इन्द्र रमै तस रमै। विस्तीण ह काति जाकी, महासुन्दर, अठारह हजार राणी, तिनके मुखकमल, तिनका भ्रमर भया। आयु व्यतीत होती न जानी। जाके एक स्त्री कुरूप और आज्ञारहित होय सो पुरुष उन्मत्त होय रहे ह, जाके अष्टादश सहस पदमनी पतिव्रता आज्ञाकारिणी लक्ष्मीसमान होय ताके प्रभावका कहा कहना? तीन खडका अधिपति, अनुपम है काति जाकी, समस्त विद्याधर अर भूमिगोचरी सिरपर धारे हैं आज्ञा जाकी, सो सब राजावोने अर्धचक्री पदका अभिषेक कराया और अपना स्वामी जाया। विद्याधरनिके अधिपति तिनकरि पूजनीक ह चरणकमल जाके, लक्ष्मी कीर्ति काति परिवार जासमान औरके नाहीं, मनोज्ञ ह देह जाका, वह दशमुख राजा चन्द्रमा समान बडे-बडे पुरुषरूप जे ग्रह तिनसे मडित, आह्लाद का उपजावनहारा कौनके चित्तको न हर? जाके सुदर्शनचक्र, सब कायकी सिद्धि करणहारा, देवाधिष्ठित मध्याह्नके सूयकी किरणोक समान ह किरणोका समूह जाविष, उद्धत प्रचड नृपवग आज्ञा न माने तिनका विध्वसक, अति देदीप्यमान, नानाप्रकारके रत्ननिकरि मडित शोभता भया। और दड-रत्न दुष्ट जीवनिको कालसमान भयकर, देदीप्यमान ह उग्र तेज जाका, मानो उलकापातका समूह ही ह सो प्रचड जाकी आयुधशाला विष प्रकाश करता भया। सो रावण आठमा प्रतिवासुदेव, सुन्दर ह कीर्ति जाकी, पूर्वोपार्जित कमके वशत कुलकी परिपाटीकर चली आई जो लकापुरी ताविष ससारके अद्भुत सुख भोगता भया। कसा ह रावण! राक्षस कहाव ऐसे जो विद्याधर तिनके कुलका तिलक ह। अर कसी ह लका? कोईप्रकारका प्रजाको नहीं ह दुख जहा, मुनिसवतनाथके मुक्ति गए पीछे और नमिनाथके उपजनेसे पहिले रावण भया, सो बहुत पुरुष जे परमाथरहित मूढलोक तिन्होने उनका कथन औरसे और किया, मासभक्षी ठहराया, सो वे मासाहारी नहीं थे, अन्नके आहारी थे। एक सीता के हरणका अपराधी बना, उसकर मारे गए और परलोकविष कष्ट पाया। कैसा ह श्रीमुनिसुव्रत

नाथका समय ? सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी उत्पत्तिका कारण है। सो वह समय बीते बहुत वर्ष भए। तातें तत्त्वज्ञानरहित विषयी जीवोंने बड़े पुरुषनिका वर्णन औरसे और किया। पापाचारी शीलव्रत-रहित जे मनुष्य सो तिनकी कल्पना जालरूप फांसीकर अविवेकी मन्दभाग्य जे मनुष्य तेई भए मृग सो बांधे। गौतमस्वामी कहै हैं ऐसा जानकर हे श्रेणिक ! इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादि कर वंदनीक जो जिन राजका शास्त्र, सोई रत्न भया, ताहि अंगीकार कर। कैसा है जिनका शास्त्र ? सूर्यतें अधिक है तेज जाका। और कैसा है तू ? जिनशास्त्रके श्रवणकर जान्या है वस्तुका स्वरूप जाने और धोया है मिथ्यात्व-रूप कर्दमका कलंक जाने।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै रावणका चक्रराज्याभिषेक वर्णन करने वाला उन्नीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ १९ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक महा विनयवान, निर्मल है बुद्धि जाकी सो विद्याधरनिका सकल वृत्तान्त सुन कर गौतम गणधरके चरणारविंदको नमस्कार कर आश्चर्यको प्राप्त होता संता कहता भया— हे नाथ ! तिहारे प्रसादतें आठवां प्रतिनारायण जो रावण ताकी उत्पत्ति और सकल वृत्तांत मैंने जान्या तथा राक्षसवंशी और वानरवंशी जे विद्याधर तिनके कुलका भेद भली भांति जान्या। अब मैं तीर्थंकरोंके पूर्व भव सहित सकल चरित्र सुना चाहूं हूं ? सो कैसा है तिनका चरित्र ? बुद्धिकी निर्मलताका कारण है, अर आठवें बलभद्र जे श्रीरामचन्द्र, सकल पृथ्वीविषै प्रसिद्ध सो कौन वंश विषै उपजे तिनका चरित्र कहो। अर तीर्थंकरनिके नाम अर उनके माता पिताके नाम सब सुनवेको मेरी इच्छा है सो तुम कहने योग्य हो। या भांति श्रेणिकने प्रार्थना करी, तब गौतम गणधर भगवत चरित्रके प्रश्न कर बहुत हर्षित भए ! कैसे हैं गणधर ? महा बुद्धिमान, परमार्थविषै प्रवीण। ते कहे हैं कि— हे श्रेणिक ! तू सुन, चौबीस तीर्थंकरनिके नाम अर इनके पितादिकनिके नाम सब पूर्व भव सहित

कथन करू हू पापके विध्वसका कारण इन्द्रादिक कर नमस्कार करने योग्य ऋषभ १, अजित २, सभव ३, अभिनन्दन ४, सुमति ५, पदमप्रभ ६, सुपाश्व ७, चन्द्रप्रभ ८, पुष्पदत (दूजा नाम सुविधिनाथ) ९, शीतल १०, श्रेयास ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनन्त १४, धम १५, शाति १६, कुथु १७, अर १८, मल्लि १९, मुनिसुव्रत २०, नमि २१, नेमि २२, पाश्व २३, महावीर २४, जिनका अब शासन प्रवरतै ह। ये चौबीस तीथकरनिके नाम कहे हैं। अब इनकी पूव भवकी नगरीनिके नाम कह ह। पुण्डरीकनी १, सुसीमा २, क्षमा, ३, रत्नसचयपुर ४, ऋषभदेव आदि तीन तीन एक एक नगरविष अनुक्रमत वासुपूज्य पयतकी ये चार नगरी पूव भवके निवासकी जाननी। अर महानगर १३, अरिष्टपुर १४, सुभद्रिका १५, पुण्डरीकनी १६, सुसीमा १७, क्षेम १८, वीतशोका १९, चम्पा २०, कौशाबी २१, नागपुर २२, साकेता २३, छत्राकार २४, ये चौवीस तीर्थंकरनिकी या भवके पहले जो देवलोक, ता भव पहिले जो मनुष्यभव ताका स्वगपुरी समान राजधानी कही। अब तिनके परभवके नाम सुनो–वजनाभि १, विमलवाहन २, विपुलख्याति ३, विपुलवाहन ४, महाबल ५, अतिबल ६, अपराजित ७, नदिषेण ८, पदम ९, महापदम १०, पदमोत्तर ११, पकजगुल्म १२, कमल समान है मुख जाका ऐसा नलिनगुल्म १३, पदमासन १४, पदमरथ १५, दृढरथ १६, मेघरथ १७, सिंहरथ १८, वश्रवण १९, श्रीधर्मा २०, सुरश्रेष्ठ २१, सिद्धाथ २२, आनन्द २३, सुनन्द २४ ये तीर्थंकरनिके या भव पहिले तीजे भवके नाम कहे। अब इनके पूवभवके पितानिके नाम सुन–वज्रसेन १, महातेज २, रिपुदमन ३, स्वयप्रभ ४, विमलवाहन ५, सीमधर ६, पिहिताश्रव ७, अरिदम ८, युगधर ९, सर्व जनानन्द १०, अभयानन्द ११, वजदत १२, वजनाभि १३, सवगुप्ति १४, गुप्तिमान १५, चितारक्ष १६ विमलवाहन १७, धनरव १८, धीर १९, सवर २०, त्रिलोकीरवि २१, सुनन्द २२, वीतशोक २३, प्रोष्ठिल २४, ये पूव भवके पितावोके नाम कहे। अब चौवीस तीर्थंकर जिस जिस देवलोकसे आए

वजयन्त ६, मध्यग्रवेयक ७, वजयन्त ८, अपराजित ९, आरणस्वर्ग १०, पुष्पोत्तर विमान ११, कापिष्ठ-स्वग १२, शुक्रस्वर्ग १३, सहसारस्वग १४, पुष्पोत्तर १५, पुष्पोत्तर १६, पुष्पोत्तर १७, सर्वार्थसिद्धि १८, विजय १९, अपराजित २०, प्राणत २१, वजयन्त २२, आनत २३, पुष्पोत्तर २४, ये चौवीस तीर्थंकरोके आवनके स्वग कहे।

अब आगे चौवीस तीथकरनिकी जन्मपुरी, जन्म नक्षत्र, माता–पिता अर वराग्यके वक्ष अर मोक्ष के स्थान म कहहू सो तुम सुनो। अयोध्यानगरी, पिता नाभिराजा, माता मरुदेवी राणी, उत्तरा षाढ नक्षत्र बटवक्ष कलाश पवत प्रथम जिन हे मगध देशके भूपति! तोहि अतींद्रिय सुखकी प्राप्ति करहु १। अयोध्यानगरी, जितशत्रु पिता, विजया माता रोहिणी नक्षत्र, सप्तच्छदवक्ष, सम्मेदशिखर अजितनाथ हे श्रेणिक तुझे मगलके कारण होउ २। श्रावस्ती नगरी जितारि पिता, सना माता पूर्वाषाढ नक्षत्र शालवक्ष सम्मेदशिखर, सभवनाथ तेरे भव बधन हरहु ३। अयोध्यापुरी नगरी, सवर पिता सिद्धार्था माता, पुनवसु नक्षत्र, सालवक्ष, सम्मेदशिखर, अभिनन्दन तोहि कल्याणके कारण होउ ४। अयोध्यापुरी नगरी, मेघप्रभ पिता, सुमगला माता, मघा नक्षत्र, प्रियगुवक्ष, सम्मेदशिखर, सुमतिनाथ जगतमें महामगलरूप तेरे सवविघ्न हरहु ५। कौशाबीनगरी, धारणपिता, सुसीमामाता, चित्रा नक्षत्र, प्रियगु वक्ष सम्मदशिखर, पदमप्रभ तेरे कामक्रोधादि अमगल हरहु ६। काशीपुरी नगर, सुप्रतिष्ठ पिता, पथ्वी माता, विशाखा नक्षत्र, शिरीषवक्ष, सम्मेदशिखर, सुपाश्वनाथ हे राजन तेरे जन्मजरामत्यु हरहु ७। चद्रपुरी नगरी, महासेन पिता, लक्ष्मणा माता, अनुराधा नक्षत्र, नागवक्ष, सम्मेदशिखर, चन्द्रप्रभ तोहि शातिभावके दाता होहु ८। काकदी नगरी, सुग्रीवपिता, रामामाता, मूल-नक्षत्र, शालवक्ष, सम्मेदशिखर, पुष्पदत तेर चित्तको पवित्र करहु ९। भद्रिकापुरी नगरी, बढरथ पिता, सुनन्दा माता, पूर्वाषाढ नक्षत्र, प्लक्षवक्ष, सम्मेदशिखर, शीतलनाथ तरे त्रिविधताप हरहु १०। सिंह-पुरी नगरी, दिष्णुराज पिता, विष्णुश्री देवी माता, श्रवननक्षत्र, तिन्दुक वक्ष, सम्मेदशिखर, श्रेयास-

नाथ तेरे विषय, कषाय हरहु, कल्याण करहु ११। चपापुरी नगरी, वासुपूज्य पिता, विजया माता, शतभिषा नक्षत्र, पाठलवक्ष, निर्वाणक्षेत्र चम्पापुरीका बन, श्रीवासुपूज्य तोहि निर्वाणकी प्राप्ति करहु १२। कपिलानगरी, कतवर्मापिता, सुरम्यामाता, उत्तराषाढ नक्षत्र, जबूवक्ष, सम्मेदशिखर, विमलनाथ तोहि रागादिमल रहित करहु १३। अयोध्यानगरी, सिंहसेन पिता, सवयशामाता रेवती नक्षत्र, पीपलवक्ष, सम्मदशिखर, अनतनाथ तुझे अतररहित करहु १४। रत्नपुरी नगरी, भानु पिता, सुव्रता माता, पुष्य नक्षत्र, दधिपण वक्ष, सम्मेदशिखर, धमनाथ तोहि धमरूप करहु १५। हस्तनागपुरनगर, विश्वसेनपिता, ऐरा माता, भरणीनक्षत्र, नदीवक्ष,सम्मेदशिखर, शातिनाथ तुझे सदा शाति करहु १६। हस्तनागपुर नगर, सूय पिता, श्रीदेवी माता, कतिका नक्षत्र, तिलक वक्ष, सम्मेदशिखर, कुथुनाथ हे राजन्द्र! तेरे पाप हरणके कारण होहु १७। हस्तिनागपुर नगर, सुदशन पिता, मित्रा माता, रोहिणी नक्षत्र, आमवक्ष, सम्मेदशिखर, अरनाथ हे श्रणिक! तेरे कमरज हरहु १८। मिथिलापुरी नगरी, कुभपिता, रक्षतामाता, अश्विनी नक्षत्र, अशोकवक्ष, सम्मेदशिखर, मल्लिनाथ हे राजा! तुझे मन शोक रहित करहु १९। कुशाग्रनगर, सुमित्रपिता, पदमावतीमाता, श्रवणनक्षत्र, चम्पकवक्ष, सम्मेदशिखर, मुनिसुव्रतनाथ सदा तेरे मनविष बसहु २०। मिथिलापुरी नगरी, विजयपिता,वप्रा माता, अश्विनी नक्षत्र, मौलश्रीवक्ष, सम्मेदशिखर, नेमिनाथ तुझे धमका समागम करहु २१। सौरीपुर नगर, समुद्रविजय पिता, शिवादेवी माता, चित्रानक्षत्र, मेषश्रृग वक्ष, गिरिनार पवत, नेमिनाथ तुझे शिवसुखदाता होवहु २२। काशीपुरी नगरी, अश्वसेन पिता, वामा माता, विशाखा नक्षत्र, धवलवक्ष, सम्मेदशिखर, पार्श्वनाथ तेरे मनको धीय देहु २३। कुण्डलपुरनगर, सिद्धाथ पिता, प्रियकारिणी माता, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र, शालवक्ष, पावापुर, महावीर तुझे परम मगल करहु, आपसमान करहु २४। ऋषभदेवका निर्वाणकल्याण कलाश १, वासुपूज्यका चपापुर, २, नेमिनाथका गिरनार ३, महावीरका पावापुर ४ औरनिका सम्मेदशिखर हैं। शाति कुथु अर तीन तीर्थंकर चक्रवर्ती भी भए और कामदेव भी भए,

राज्य छोड वराग्य लिया। और वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पाश्वनाथ महावीर ये पाच तीर्थंकर कुमार अवस्थामें वरागी भए, राज भी न किया और विवाह भी न किया। अन्य तीर्थंकर महामडलीक राजा भए, राजछोड वराग्य लिया। और चन्द्रप्रभ पुष्पदत ये दोय श्वेत वण भए, और श्रीसुपाश्वनाथ प्रियगुपञ्जरीक रग समान हरितवण भए और पाश्वनाथका वण कच्चा शालि समान हरितवण भया, पदमप्रभका वण कमल समान आरक्त भया, और वासुपूज्यका वण टेसूके फूलसमान आरक्त भया, और मुनिसुव्रतनाथका वण अजनी गिरिसमान श्याम, और नेमिनाथका वण मोरके कठ समान श्याम, और सोलह तीथ करोके वण ताता सोनेके समान वण भया। ये सब ही तीर्थंकर इन्द्र धरणेन्द्र चक्रवर्त्यादिकोसे पूजने योग्य और स्तुति करने योग्य भए और सबहीका सुमेरुके शिखर पाडुकशिला पर जन्माभिषेक भया। सबहीके पचकल्याणक प्रकट भये, सम्पूण कल्याणकी प्राप्ति का कारण ह सेवा जिनकी, वे जिनेन्द्र तेरी अविद्या हर। या भाति गणधर देवने वणन किया। तब राजाश्रणिक नमस्कारकर विनती करते भए—हे प्रभो! छहो कालकी वतमान आयुका प्रमाण कहो और पापकी निवत्तिका कारण परम तत्त्व जो आत्मस्वरूप उसका वणन बारम्बार करो और जिस जिनेन्द्रके अतरालमें श्रीरामचन्द्र प्रकट भए सो आपके प्रसादत म सब वणन सुना चाहू हू। ऐसा जब श्रणिकने प्रश्न किया तब गणधरदेव कृपा कर कहते भए— कसे हैं गणधरदेव? क्षीरसागरके जल समान निमल ह चित्त जिनका, हे श्रणिक! कालनामा द्रव्य ह सो अनन्त समय ह, जाकी आदि अत नाहीं, ताकी सख्या कल्पनारूप दष्टातसे पल्यसागरादि रूप महामुनि कह ह। एक महायोजन प्रमाण लम्बा चौडा ऊचा गोल गत (गडढा) उत्कष्ट भोगभूमिका तत्कालका जन्म्याहुवा मेडका बच्चा, ताके रोमके अग्रभागत भरिए, सो गत घनागाढा भरिए और सौ वष गए एक रोम काढे सो व्योहारपल्य कहिए। सो यह कल्पना दष्टात मात्र ह, काहूने ऐसा किया नाहीं। यातैं असख्यात गुणी उद्धारपल्य हैं। इससे सख्यातगुणी अर्द्धापल्य ह। ऐसी दसकोटाकोटि पल्य जाय तदि एक सागर कहिए और दश

कोटाकोटि सागर जाय तब एक अवसर्पिणीकाल कहिए और दसकोटाकोटि सागरको एक उत्सर्पिणी और बीसकोटाकोटि सागरका कल्पकाल कहिए। जस एक मासमें शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष ये दोय वर्तें तस एक कल्पकालविष एक अवसपणी और एक उत्सर्पिणी ये दोय वर्तें। इनके प्रत्येक २ छह छह काल ह तिनमें प्रथम सुखमासुखमाकाल चार कोटाकोटि सागरका ह, दूजा सुखमाकाल तीन कोटाकोटि सागरका ह, तीजा सुखमा दुखमा काल दो कोटाकोटि सागरका ह, और चौथा दुखमासुखमाकाल बयालीसहजार वष घाट एक कोटाकोटि सागरका ह, पचमा दु खमाकाल इक्कीस हजार वषका ह, छठा दु खमादु खमाकाल, सो भी इक्कीस हजार वषका ह। यह अवसपणीकालकी रीति कही। प्रथमकालसे लेय छठे काल पयत आयुआदि सब घटती गई और इससे उलटी जो उत्सपणी उसमें फिर छठेसे लेकर पहिले पयत आयु काय बल पराक्रम बढते गए। यह कालचक्रकी रचना जाननी।

अथान तर जब तीजे कालमे पल्यका आठवाँ भाग बाकी रहा तब चौदह कुलकर भए। तिनका कथन पूव कर आए ह। चौदहवें नाभिराजा तिनके आदि तीथकर ऋषभदेव पुत्र भए। तिनको मोक्ष गए पीछे पचासलाख कोटिसागर गए श्री अजितनाथ द्वितीय तीथकर भए। उनके पीछे तीसलाख कोटि सागर गये श्रीसभवनाथ भये। ता पीछे दशलाख कोटि सागर गये श्री अभिनन्दन भये। ता पीछ नव लाख कोटिसागर गये श्रीसुमतिनाथ भये। ता पीछें नव्वे हजार कोटिसागर गये श्री पद्मप्रभ भये। ता प छे नव हजार कोटिसागर गये श्रीसुपाश्वनाथ भये। ता पीछे नौसौ कोटिसागर गये श्रीचन्द्रप्रभ भये। ता पीछे नव्वे कोटिसागर गये श्री पुष्पदन्त भये। ता पीछें नव कोटिसागर गये श्रीशीतलनाथ भए। ता पीछे सौसागर घाट कोटिसागर गये श्रेयासनाथ भये। ता पीछे चव्वन सागर गये श्रीवासुपूज्य भये। ता पीछे तीससागर गये श्रीविमलनाथ भये। ता पीछे नवसागर गयें श्रीअनन्तनाथ भये। ता पीछे चारसागर गये श्रीधमनाथ भये। ता पीछे पौन पल्यघाट तीनसागर गये श्रीशातिनाथ भये। ता पीछे आधापल्य गये श्रीकु थुनाथ भये। ता पीछे हजारकोटि वषघाट पाव पल्य गये श्रीअरनाथ

भये । उनके पीछे पसठलाख चोरासी हजार वषघाट हजार कोटिवष गये श्रीमल्लिनाथ भये । ता पीछे चौवनलाखवष गये श्रीमुनिसुवतनाथ भए । उनके पीछे छहलाख वष गये श्रीनमिनाथ भए । उनके पीछे पाचलाख वषगए श्रीनेमिनाथ भये । उनके पीछे पौने चौरासी हजार वष गए श्रीपार्श्वनाथ भए । उनके पीछे अढाई सौ वष गए श्रीवद्धमान भए । जब वद्धमानस्वामी मोक्षको प्राप्त होवेंगे तब चौथेकालके तीन वष साढे आठ महीना बाकी रहेंगे । और इतने ही तीजेकालके बाकी रहे थ तब श्रीऋषभदेव मुक्ति पधारे । हे श्रेणिक ! धमचक्रके अधिपति श्रीवद्धमान इन्द्रके मुकुटके रत्ननिकी जो ज्योति, सोई भया जल, ताकरि धोए ह चरणयुगल जिनके, सो तिनको मोक्षपधारे पीछे पाचवाकाल लगेगा । जामै देव निका आगमन नाहीं और अतिशयके धारक मुनि नाहीं, केवलज्ञानकी उत्पत्ति नाहीं, चक्रवर्ती बल भद्र और नारायणकी उत्पत्ति नाहीं, तुम सारिखे न्यायवान राजा नाहीं, अनीतिकारी राजा होवेंगे और प्रजाके लोक दुष्ट, महा ढीठ, परधन हरवेको उद्यमी होवगे, शील रहित, वत रहित, महाक्लेश व्याधिके भरे, मिथ्यादष्टि घोरकर्मी होवेंगे और अतिवष्टि अनावष्टि, टिडडी, सूवा, मूषक, अपनी सेना और पराई सेनायें जो सप्तईतियें, तिनका भय सदाही होयगा । मोहरूप मदिराके माते, रागद्वेषके भरे, भौंहको टेढा करनहार, क्रूरदष्टि, पापी महामानी, कुटिलजीव होवेंगे । कुवचनके बोलनहारे, क्रूरजीव, धनके लोभी पथ्वीपर एसे विचरेंगे जसे रात्रिविष घूघू विचर । और जस पटवीजना चमत्कारकर तस थोडे ही दिन चमत्कार करेंगे । वे मूखदुजन जिनधमस पराङमुख कुधर्मविष आप प्रवर्तेंगे, औरोको प्रव र्तावेंगे । परोपकार रहित पराए कार्योंमें निरुद्यमी आप डूबेंगे औरोको डुबोवेंगे । वे दुगतिगामी आपको महत मानेंगे । त क्रूरकम चडाल मदोन्मत्त अनथकर माना ह हष जिन्होने, मोहरूप अधकारकरि अधे, कलिकालके प्रभावत हिसारूप जे कुशास्त्र वेई भए कुठार, तिनकरि अज्ञानी जीवरूप वृक्षनिको काटेंगे । पचम कालके आदिमें मनुष्योका सात हाथका ऊचा शरीर होयगा और एकसौ बीस वषकी उत्कृष्ट आयु होयगी । फिर पचमकालके अन्त दोय हाथका शरीर और बीस वषकी आयु उत्कष्ट रहेगी ।

बहुरि छठेके अन्त एक हाथका शरीर, उत्कष्ट सोला वर्षकी आयु रहेगी। वे छठे कालके मनुष्य महा विरूप, मांसाहारी, महादुःखी, पापक्रियारत, महारोगी, तिर्यच समान महा अज्ञानी होवेंगे। न कोई सम्बन्ध, न कोई व्यवहार, न कोई ठाकुर, न कोई चाकर, न राजा न प्रजा, न धन न घर, न सुख, महादुखी होवेंगे। अन्याय कामके सेवन हारे धर्मक, आचारसे शून्य, महापापके स्वरूप होहिंगे। जसै कृष्णपक्षमें चन्द्रमाकी कला घट और शुक्लपक्षमें बढ तस अवसर्पिणीकालमें घट, उत्सर्पिणीविषै बढे। और जसे दक्षिणायणमें दिन घट और उत्तरायणमें बढे तस अवसर्पिणी उत्सर्पिणीविष हानि वृद्धि जाननी। ये तीर्थकरनिका अंतराल तोहि कह्या।

हे श्रेणिक! अब तू तीर्थकरनिके शरीरकी ऊंचाईका कथन सुन! प्रथम तीर्थंकरका शरीर पांच सौधनुष ५००, दूजेका साढे चारसौ ४५०, तीजेका चारसौ धनुष ४००, चौथेका साढेतीनस धनुष ३५०, पाचवेंका तीनस धनुष ३००, छठेका ढाईसौ धनुष २५०, सातवेंका दो सौ धनुष २००, आठवेंका डेढसो धनुष १५०, नौवेंका सौ धनुष १००, दसवेंका नब्बे धनुष ९०, ग्यारहवेंका अस्सी धनुष ८०, बारहवेंका सत्तर धनुष ७०, तेरहवेंका साठ धनुष ६०, चौदहवेका पच्चास धनुष ५०, पन्द्रहवेका पतालीस धनुष ४५, सोलहवेंका चालीस धनुष ४०, सत्रहवेंका पतीस धनुष ३५, अठारवेंका तीस धनुष ३०, उन्नीसवेंका पच्चीस धनुष २५, बीसवेंका बीस धनुष २०, इक्कीसवेंका पन्द्रह धनुष १५, बाईसवेंका दस धनुष १०, तेईसवेंका नौहाथ ९, चौबीसवेंका सात हाथ ७।

अब आगे इन चौबीस तीर्थंकरनिकी आयुका प्रमाण कहिए है। प्रथमका चौरासी लाख पूर्व (चौरासी लाख वर्षका एक पूर्वांग और चौरासी लाख पूर्वांगका एक पूर्व होय है), और दूजेका बहत्तर लाखपूर्व, तीजेका साठलाखपूर्व, चौथेका पचासलाख पूर्व, पाचवेंका चालीसलाखपूर्व, छठेका तीसलाख पूर्व, सातवेंका बीसलाखपूर्व, आठवेंका दसलाखपूर्व, नवमेंका दोय लाखपूर्व, दसवेंका लाखपूर्व, ग्यारवेंका चौरासीलाख वर्ष, बारवेंका बहत्तरलाख वर्ष, तेरवेंका साठलाख वर्ष, चौदवेंका तीसलाख वर्ष, पन्द्रवे

का दस लाख वष, सोलवेंका लाख वष, सत्रणेका पचानव हजार वष, अठारणेका चौरासी हजार वष, उन्नीसणेका पचावनहजार वष, बीसवेंका तीसहजार वष, इक्कीसवेंका दसहजार वष, बाईसवेंका हजार वष, तेईसवेंका सौ वष, चौबीसवेंका बहत्तर वषका आयु प्रमाण जानना ।

अथानन्तर ऋषभदेवके पहिले जे चौदह कुलकर भए तिनके आयुकायका वणन करिए है–प्रथम कुलकरकी काय अठारहसौ धनुष, दूसरेकी तेरासौ धनुष तीसरेकी आठसौ धनुष, चौथेकी सातसौ पिच्चत्तर धनुष, पाचवेंकी साढे सातसौ धनुष, छठेकी सवा सातसौ धनुष, सातवेंकी सातसौ धनुष, आठवेंकी पौने सातसौ धनुष, नवमेकी साढे छसौ धनुष, दसवेंकी सवाछसौ धनुष, ग्यारवेंकी छसौ धनुष, बारवेंकी पोन छसौ धनुष, तेरवेंकी साढे पाचसौ धनुष, चौदहवेंकी सवा पाच सो धनुष ।

अब इन कुलकरनिकी आयुका वणन कर है–पहिलेकी आयु पल्यका दसमा भाग, दूजेकी पल्यका सौवा भाग, तीजेकी पल्यका हजारवा भाग, चौथेंकी पल्यका दसहजारवा भाग, पाचमेंकी पल्यका लाखवा भाग, छठेकी पल्यका दसलाखवा भाग सातवेंकी पल्यका कोडवा भाग, आठवेंकी पल्यका दस कोडवा भाग, नौवमेंकी पल्यका सौकोडवा भाग, दसवेंकी पल्यका हजार कोडवा भाग, ग्यारवेंकी पल्य का दस हजार कोडवा भाग, बारवेंकी पल्यका लाख कोडवा भाग, तेरवेकी पल्यका दसलाख कोडवा भाग, चौदहवेकी कोटि पूवकी आयु भई ।

अथानन्तर हे श्रेणिक ! अब तू बारह जे चक्रवर्ती तिनकी वार्ता सुन । प्रथम चक्रवर्ती भरत, श्री ऋषभदेवके यशस्वती राणी, ताकू सुनन्दा भी कहे है ताके पुत्र, या भरतक्षेत्रका अधिपति । ते पूव-भवविष पुण्डरीकनी नगरीविष पीठ नाम राजकुमार थे । वे कुशसेन स्वामीके शिष्य होय मुनिवत धर सर्वार्थसिद्धि गए । तहास चयकर षटखडका राज्य कर फिर मुनि होय, अतर्मुहूतमें केवलज्ञान उपजाय, निर्वाणको प्राप्त भए । फिर पृथ्वीपुर नामा नगरविष राजा विजयतेज, यशोधर नामा मुनिके निकट जिनदीक्षा धर विजयनाम विमान गए । वहासे चयकर अयोध्याविष राजा विजय, राणी सुमगला,

तिनके पुत्र सगर नाम द्वितीय चक्रवर्ती भए । ते महा भोग भोगकर इन्द्रसमान, देव–विद्याधरनिकरि धारिए है आज्ञा जिनकी, ते पुत्रनिके शोककरि राज्यका त्यागकर अजितनाथके समोसरणमें मुनि होय, केवलज्ञान उपजाय,सिद्ध भए । और पुंडरीकनी नगरीविषै एक राजा शशिप्रभ वह विमलस्वामीका शिष्य होय ग्रवेयक गये । वहासे चयकर श्रावस्ती नगरीमें राजा सुमित्र, राणी भद्रवती, तिनके पुत्र मघवा नाम ततीय चक्रवर्ती भए । लक्ष्मीरूप बेलके लिपटनेको वृक्ष ते श्रीधमनाथके पीछे शातिनाथके उपजने स पहिले भए । समाधान रूप जिनमुद्राधार सौधमस्वर्ग गए । फिर चौथे चक्रवर्ती जो श्रीसनत्कुमार भए, तिनकी गौतमस्वामीने बहुत बडाई करी । तब राजा श्रेणिक पूछते भए–हे प्रभो ! वे किस पुण्य से ऐसे रूपवान भए । तब उनका चरित्र सक्षेपताकरि गणधर कहते भए । कसा है सनत्कुमारका चरित्र ? जो सौवषमें भी कोऊ कहिवेको समथ नाही । यह जीव जबलग जनधमको नाहीं प्राप्त होय है तब लग तियच नारकी कुमानुष कुदेव कुगतिम दु ख भोगव है । जीवोने अनतभव किए सो कहालो कहिए । परन्तु एक एक भव कहिए है । एक गोवधन नाम ग्राम, वहा भले भले मनुष्य बस । तहा एक जिन-दत्त नामा श्रावक बडा गहस्थ, जस सब जलस्थानकोसे सागर शिरोमणि है और सब गिरनिम सुमेरु, और सब ग्रहोविषै सूय, तणोमें इक्षु, बेलोमें नागरबेल, वक्षोमें हरिचदन प्रशसायोग्य है तस कुलोमें श्रावकका कुल सर्वोत्कष्ट आचारकर पूजनीक है, सुगतिका कारण है । सो जिनदत्त नामा श्रावक गुणरूप आभूषणनिकरि मडित श्रावकके व्रत पाल उत्तम गति गया । और ताकी स्त्री विनयवती महा पतिव्रता श्रावकके व्रत पालनेहारी सो अपने घरकी जगहमें भगवानका चत्यालय बनाया, सकल द्रव्य तहा लगाया और आर्या होय महातपकर स्वगमें प्राप्त भई । अर ताही ग्रामविषै एक और हेमबाहु नामा गहस्थ, आस्तिक, दुराचारसे रहित, सो विनयवतीका कराया जो जिनमदिर ताकी भक्तिकरि जयदेव भया । सो चातुर्विधसघकी सेवामें सावधान, सम्यग्दष्टि, जिनवदनामें तत्पर, सो चयकर मनुष्य भया । बहुरि देव बहुरि मनुष्य । या भाति भवधर महापुरी नगरीविषै सुप्रभ नामा राजा । ताके तिलक

सुन्दरीरानी गुणरूप आभूषणकी मजूषा, ताके धमरुचि नामा पुत्र भया। सो राज्य तज सुप्रभनामा पिता जो मुनि ताका शिष्य होय, मुनिव्रत अगीकार करता भया। पच महाव्रत, पच समिति, तीन गुप्तिका प्रतिपालक आत्मध्यानी गुरुसेवामें अत्यन्त तत्पर अपनी देहविषै अत्यन्त निस्पृह, जीवदया का धारक, मन इन्द्रियोका जीतनहारा, शीलका सुमेरु, शका आदि जे दोष तिनसे अतिदूर, साधुओ का वयावत करनहारा, सो समाधिमरणकर चौथे देवलोकविषै गया। तहा सुख भोगता भया। तहा स चयकर नागपुरमें राजा विजय, राणी सहदेवी, तिनके सनत्कुमार नामा पुत्र चौथा चाक्रवर्ती भया। छहखण्ड पथ्वीमें जाकी आज्ञा प्रवरती, सो महारूपवान। एकदिवस सौधमइन्द्रने इनके रूपकी अति प्रशसा करी सो रूप देखनेको देव आए। सो प्रच्छन्न आयकर चाक्रवर्तीका रूप देख्या। ता समय चाक्र वर्तीने कुस्तीका अभ्यास किया था, सो शरीर रजकर धूसरा होय रहा था अर सुगध उबटना लगाया था, अर स्नानकी एक धोती ही पहिने नानाप्रकारके जे सुगध जल तिनसे पूण नानाप्रकारके रत्ननिके कलश, तिनके मध्य स्नानके आसनपर विराजे हुते। सो देव रूपको देख आश्चायको प्राप्त भए। पर स्पर कहते भए—जसा इन्द्रने वणन किया तसा ही ह यह मनुष्यका रूप, देवोके चित्तको मोहित करण हारा ह। बहुरि चाक्रवर्ती स्नानकर वस्त्राभरण पहर सिहासन पर आय विराजे। रत्नाचालके शिखर समान ह ज्योति जाकी। अर वह देव प्रकट होयकर द्वारे आय ठाढे रहे। अर द्वारपालसे हाथ जोड चाक्रवर्तीको कहलाया जो स्वगलोकके देव तिहारा रूप देखने आए ह। तब चाक्रवर्ती अदभुत शृगार किए विराजे हुते ही तब देवोके आयबेकर विशेष शोभा करी, तिनको बुलाया। ते आय चाक्रवर्तीका रूप देख माथा धुनते भए। अर कहते भए—एकक्षण पहिले हमने स्नानके समय जसा देखा था तसा अब नाहीं। मनुष्योके शरीरकी शोभा क्षणभगुर ह धिक्कार ह। इस असार जगतको मायाको। प्रथम दशन में जो रूप यौवनकी अदभुतता हुती सो क्षणमात्रमें ऐसे विलाय गई जस विजुली चामत्कारकर क्षणमात्रमें विलाय जाय ह। ये देवनिके वचान सनत्कुमार सुन, रूप अर लक्ष्मीको क्षणभगुर जान, वीतराग भावधर,

महामुनि होय, महातप करते भए। महाऋद्धि उपजी। पुनि कर्मनिर्जरा निमित्त महारोगकी परीषह सहते भए, महाध्यानारूढ होय समाधिमरण कर सनत्कुमार स्वर्ग सिधारे। वे शांतिनाथके पहले अर मघवा तीजा चक्रवर्ती ताके पीछे भए। अर पुण्डरीकनी नगरीविषै राजा मेघरथ,वह अपने पिता धनरथ तीर्थंकरके शिष्य मुनि होय सर्वार्थसिद्धि को पधारे। तहांतै चयकर हस्तनागपुरमें राजा विश्वसेन, राणी ऐरा, तिनके शांतिनाथ नामा सोलहवें तीर्थंकर, अर पंचम चक्रवर्ती भए। जगतकूं शांतिके करणहारे, जिनका जन्म कल्याणक सुमेरु पर्वतपर इन्द्रने किया,बहुरि षटखण्डके भोक्ता भए। तृण समान राज्यको जान तजा,मुनि व्रत धर मोक्ष गए। बहुरि कुंथुनाथ छठे चक्रवर्ती सत्रहवें तीर्थंकर, अरनाथ सातवें चक्रवर्ती अठारवें तीर्थंकर तें मुनि होय निर्वाण पधारे सो तिनका वर्णन तीर्थंकरोंके कथनमें पहिले कहा ही है। अर धान्यपुर नगर में राजा कनकप्रभ, सो विचित्रगुप्त स्वामीके शिष्य मुनि होय, स्वर्ग गए। तहांतै चयकर अयोध्या नगरी विषै राजा कीर्तिवीर्य, राणी तारा, तिनके सुभूमि नामा अष्टम चाक्रवर्ती भए। जाकरि यह भूमि शोभायमान भई। तिनके पिताका मारणहारा जो परशुराम तानै क्षत्री मारे हुते, अर तिनके सिर थम्भनविषै चिनाए हुते, सो सुभूमि अतिथिका भेषकर परशुरामके भोजनको आए। परशुरामने निमित्तज्ञानीके बचनतै क्षत्रीनिके दांत पात्रमें मेलि सुभूमिको दिखाये, तदि दांत क्षीरका रूप होय परणये, अर भोजनका पात्र चाक्र होय गया। ता करि परशुरामको मारचा। परशुरामने क्षत्री मारे, पृथ्वी निक्षत्री करी हुती सो सुभूमि परशुरामको मार द्विजवर्गतै द्वेष किया। पृथ्वी अब्राह्मण करी। जैसे परशुरामके राज्यमें क्षत्री कुल छिपाय रहे हुते तैसे याके राज्यमें विप्र अपने कुल छिपाए रहे। सो स्वामी अरनाथके मुक्ति गए पीछे अर मल्लिनाथके होयवे पहिले सुभूमि भए। अति भोगासक्त निर्दयपरिणामी अव्रती मरकर सातवें नरक गए। अर वीतशोका नगरी, ताविषै राजा चिंत्तसुप्रभ स्वामीके शिष्य मुनि होय ब्रह्मस्वर्ग गए। तहांतै चयकर हस्तनागपुर विषै राजा पदमरथ राणी मयूरी, तिनके महापदम नामा नौमे चाक्रवर्ती भए। षट्खंड पृथ्वीके भोक्ता, तिनकूं आठ पुत्री महारूपवती, सो रूपके अतिशयकरि गर्वित, तिनके विवाहकी इच्छा

नाहीं। सो विद्याधर तिन हर ले गये। सो चक्रवर्तीने छुडाय मगाई। ये आठो ही कन्या आर्यिकाके ब्रत धर समाधिमरणकर देवलोकमें प्राप्त भइ। अर विद्याधर इनको लेगए हुते तेभी विरक्त होय मुनिव्रत धर आत्मकल्याण करते भए। यह वृत्तात देख महापदम चक्रवर्ती पदमनामा पुत्रको राज देय विष्णु नामा पुत्र सहित वैरागी भए। महातपकर केवल उपजाय मोक्षको प्राप्त भए। अरनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे अर मल्लिनाथके उपजनेसे पहिले सुभूमिके पीछे भए। अर विजय नामा नगरविषै राजा महेन्द्रदत्त, ते अभिनन्दन स्वामीके शिष्य होय महेंद्र स्वर्गको गए। तहासे चयकर कापिलनगरमें राजा हरिकेतु ताकी राणी विप्रा, तिनके हरिषेण नामा दसवें चक्रवर्ती भए। तिनने सव भरतक्षेत्रकी पृथ्वी चैत्यालयनिकरि मडित करी, अर मुनिसुव्रतनाथ स्वामीके तीर्थमें मुनि होय सिद्धपदकू प्राप्त भए। अर राजपुर नामा नगरमे राजा जो असीकात थे वह सुधर्ममित्र स्वामीके शिष्य मुनि होय ब्रह्मस्वर्ग गये। तहात चयकर राजा विजय, राणी यशोवती तिनके जयसेन नामा ग्यारवें चक्रवर्ती भए। ते राज्य तज दिगम्बरी दीक्षा धर रत्नत्रयका आराधनकर सिद्धपदको प्राप्त भए। यह श्रीमुनिसुव्रतनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे नमिनाथ स्वामीके अतरालमे भये। अर काशीपुरीमे राजा सम्भूत, ते स्वतत्र लिग स्वामीके शिष्य मुनि होय पदमयुगल नामा विमानविषे देव भए। तहात चयकर कापिल नगर मे राजा ब्रह्मरथ राणी चूला, तिनके ब्रह्मदत्त नामा बारवे चक्रवर्ती भए। ते छ खण्ड पृथ्वीका राज्य कर, मुनिव्रत विना रौद्रध्यानकर सातवें नरक गये। यह श्रीनेमिनाथ स्वामीको मुक्ति गये पीछे पार्श्व नाथ स्वामीके अतरालमें भए। ये बारह चक्रवर्ती बडे पुरुष है, छ खड पृथ्वीके नाथ जिनकी आज्ञा देव विद्याधर सब ही मानै है। हे श्रेणिक! तोहि पुण्य पापका फल प्रत्यक्ष कह्या सो यह कथन सुन कर योग्य कार्य करना, अयोग्य काम न करना। जैसे बटसारी विना कोई मार्गमें चलै तो सुखसू स्थानक नाहीं पहुँचे, तैसे सुकृत विना परलोकमें सुख न पावै। कैलाशके शिखर समान जे ऊंचे महल तिनमें जो निवास करै है सो सब पुण्यरूप वृक्षका फल है। अर जहा शीत उष्ण पवन पानीकी बाधा

ऐसी कुटियोमें बस ह, दलिद्ररूप कीचमें फसे ह, सो सव अधमरूपवक्ष का फल ह । विध्याचल पवतके शिखर समान ऊचे जे गजराज उनपर चढकर सेनासहित चल ह, चवर ढुर हैं, सो सव पुण्यरूप वक्षका फल ह । जे महा तुरगनिपर चमर ढुरते अर अनेक असवार पियादे जिनके चौगिद चल हैं सो सब पुण्यरूप राजाका चरित्र ह । अर देवनिके विमान समान मनोज्ञ जो रथ तिनपर चढकर जे मनुष्य गमन कर ह सो पुण्यरूप पवतके मीठे नीझरने ह । अर जो फटे मले कपडे अर पियादे फिर ह सो सब पाप रूप वृक्षका फल ह । अर जो अमृत सारिखा अन्न स्वणके पात्रमें भोजन कर ह सो सब धम रसायन का फल मुनियोने कहा ह । अर जो देवोका अधिपति इन्द्र, अर मनुष्योका अधिपति चक्रवर्ती तिनका पद भव्यजीव पाव ह सो सब जीवदयारूप बेलका फल ह । कसे है भव्यजीव ? कमरूप कुजरको शार्दूल समान ह । अर राम कहिए बलभद्र, केशव कहिए नारायण तिनके पद जो भव्यजीव पाव ह सो सब धमका फल ह ।

हे श्रेणिक ! आगे वासुदेवोका वणन करिए ह सो सुनो—या अवसपणीकालके भरतक्षेत्रके नव वासुदेव ह । प्रथम ही इनके पूवभवकी नगरियोके नाम सुनो—हस्तिनागपुर १, अयोध्या २, श्रावस्ती ३, कौशाबी ४, पोदनापुर ५, शलनगर ६, सिहपुर ७, कौशाबी ८, हस्तनागपुर ९ । ये नव ही नगर कसे ह ? सव ही द्रव्यके भरे ह अर ईतिभीतिरहित ह । अब वासुदेवोके पूव भवके नाम सुनो—विश्वनन्दी १, पवत २, धनमित्र ३, सागरदत्त ४, विकट ५, प्रियमित्र ६, मानचेष्टित ७, पुनवसु ८, गगदेव जिसे निर्णामिक भी कहे है । ९ । ये नव ही वासुदेवोके जीव पूवभवविष विरूप दौर्भाग्य राज्य भ्रष्ट होय ह । बहुरि मुनि होय महा तप कर ह । बहुरि निदानके योगत स्वगविष देव होय ह । तहात चयकर बलभद्रके लघुभ्राता वासुदेव होय ह । तात तपत निदान करना ज्ञानियोको वर्जित ह । निदान नाम भोगाभिलाषका ह, सो महा भयानक दुख देनेको प्रवीण है । आगे वासुदेवोके पूवभवके गुरुवो के नाम सुनो, जिनपै इन्होने मुनिवत आदरे—सभूत १, सुभद्र २, वसुदशन ३, श्रेयास ४, भूतिसग ५,

वसुभूति ६, घोषसेन ७, पराभोधि ८, द्रुमसेन ९। अब जिस जिस स्वगत आय वासुदेव भए तिनके नाम सुनो—महाशुक्र १, प्राणत २, लातव ३, सहसार ४, ब्रह्म ५, महेंद्र ६, सौधम ७, सनत्कुमार ८, महाशुक्र ९। आगे वासुदेवोकी जन्मपुरियोके नाम सुनो—पोदनापुर १, द्वापुर २, हस्तनागपुर ३, बहुरि हस्तनागपुर ४, चक्रपुर ५, कुशाग्रपुर ६, मिथिलापुर ७, अयोध्या ८, मथुरा ९। ये वासुदेवोके उत्पत्तिके नगर हैं। कसे ह नगर ? समस्त धन धान्य कर पूण महाउत्सवके भरे ह। आग वासुदेवोके पिताके नाम सुनो—प्रजापति १, ब्रह्मभूति २, रौद्रनन्द ३, सौम ४, प्रख्यात ५, शिवाकर ६, सममूर्धाग्निनाद ७, दशरथ ८, वासुदेव ९। बहुरि इन नव वासुदेवोकी माताओके नाम सुनो—मगावती १, माधवी २, पथिवी ३, सीता ४, अबिका ५, लक्ष्मी ६, केशिनी ७, सुमित्रा ८, देवकी ९। ये नव ही वासुदेवोकी नव माता। कसी है ? अतिरूपगुणनिकरि मडित महा सौभाग्यवती जिनमती ह। आग नव वासुदेवोके नाम सुनो—त्रिपष्ट १, द्विपष्ट २, स्वयभू ३, पुरुषोत्तम ४, पुरुषसिह ५, पुण्डरीक ६, दत्त ७, लक्ष्मण ८, कष्ण ९। आगे नव ही वासुदवोकी पटराणियोके नाम सुनो—सुप्रभा १, रूपिणी २, प्रभवा ३, मनोहरा ४, सुनेत्रा ५, विमलसुन्दरी ६, आनन्दवती ७, प्रभावती ८, रुक्मिणी ९। ये वासुदेवोकी मुख्य पटराणी। कसी ह ? महागुण कलानिपुण धमवती व्रतवती ह।

अथानन्तर अब नव बलभद्रोका वणन सुनो। सो पहिले नव ही बलभद्रोकी पूवजन्मकी पुरियोके नाम कह ह—पुण्डरीकनी १, पथिवी २ आनदपुरी ३, नदपुरी ४, वीतशोका ५, विजयपुर ६, सुसीमा ७, क्षेमा ८, हस्तनागपुर ९। और बलभद्रोके नाम सुनो—बल १, मारुतवग २, नदिमित्र ३, महाबल ४, पुरुषवभ ५, सुदशन ६, वसुन्धर ७, श्रीचन्द्र ८ सखिसज्ञ ९। अब इनके पूवभवके गुरुवोके नाम सुनो जिनप इन्होने जिनदीक्षा आदरी—अमतार १, महासुव्रत २, सुव्रत ३, वषभ ४, प्रजापाल ५, दमवर ६, सुधम ७, अणव ८, विद्रुम ९। बहुरि नव बलदेव जिन जिन देवलोकनितै आए तिनके नाम सुनहु—तीन बलभद्र तो अनुत्तरविमानत आए, अर तीन सहसार स्वगत आए, दो ब्रह्मस्वगतै

आए, अर एक महाशुक्त आया। अब इन नव बलभद्रोकी मातानिके नाम सुनो, क्योंकि पिता तो बलभद्रोके और नारायणोके एक ही होय ह। ऋद्राभोजा १, सुभद्रा २, सुवेषा ३, सुदशना ४, सुप्रभा ५, विजया ६, वजयती ७, अपराजिता जाहि कौशल्या भी कह ह ८, रोहिणी ९। नव बलभद्र, नव नारायण, तिनमें पाच बलभद्र, पाच नारायण तो श्रेयासनाथ स्वामीके समय आदि ले धमनाथ स्वामीके समय पयत भए और छठे और सातवें अरनाथ स्वामीको मुक्ति गए पीछे मल्लिनाथ स्वामीके पहिले भए और अष्टम बलभद्र वासुदव मुनिसुवतनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे नेमिनाथ स्वामीके समयके पहिले भए। अर नवमें श्रीनेमिनाथके काकाके बेटे भाई महाजिनभक्त अदभुत क्रियाके धारणहारे भए। अब इनके नाम सुनहु–अचल १, विजय २, भद्र ३, सुप्रभ ४, सुदशन ५, नदिमित्र (आनद) ६, नन्दिषेण (नन्दन) ७, रामचन्द्र ८, पदम ९। आगें जिन महामुनियोप बलभद्रोने दीक्षा धरी तिनके नाम कहिए ह–सुवणकुम्भ १, सत्यकीर्ति २, सुधम ३, मगाक ४, श्रुतिकीर्ति ५, सुमित्र ६, भवनश्रुत ७, सुव्रत ८, सिद्धाथ ९। यह बलभद्रोके गुरुवोक नाम कहे। महातपको धारकरि कमनिजराके करण हारे, तीन लोकमें प्रकट ह कीर्ति जिनकी, नव बलभद्रोमें आठ तो कमरूप वनको भस्म कर मोक्ष प्राप्त भए। कसा ह ससार वन ? आकुलताको प्राप्त भए ह नानाप्रकारकी व्याधिकर पीडित प्राणी जहाँ, बहुरि वह वन कालरूप जो व्याघ तातकरि अति भयानक ह। अर कसा ह यह वन ? अनत जन्मरूप जो कटकवृक्ष तिनका ह समूह जहाँ। विजय बलभद आदि श्री रामचन्द्र पर्यंत आठ तो सिद्ध भए और पदम-नाभा जो नवमा बलभद्र वह ब्रह्मस्वगमें महाऋद्धिका धारी देव भया।

अब नारायणोके शत्रु जो प्रतिनारायण तिनके नाम सुनो–अश्वग्रीव १, तारक २, मेरक ३, मधु-कटभ ४, निशुभ ५, बलि ६, प्रह्लाद ७, रावण ८, जरासिंध ९। अब इन प्रतिनारायणोकी राज-धानियोका नाम सुनो–अलका १, विजयपुर २, नवनपुर ३, पृथ्वीपुर ४, हरिपुर ५, सूयपुर ६, सिंह पुर ७, लका ८, राजगृही ९। ये नौ ही नगर कसे ह ? महा रत्न जडित, अति देदीप्यमान, स्वगलोक

समान हैं ।

हे श्रेणिक ! प्रथम ही श्रीजिनेन्द्रदेवका चरित्र तुझे कह्या, बहुरि भरत आदि चक्रवर्तियोका कथन कह्या और नारायण बलभद्र तिनका कथन कह्या, इनके पूव जन्म सकल वृत्तात कहे, अर नव ही प्रतिनारायण तिनके नाम कहे । ये त्रेसठ शलाकाके पुरुष है । तिनमें कईएक पुरुष तो जिनभाषित तपकरि ताहि भवमें मोक्षको प्राप्त होय ह, कईएक स्वग प्राप्त होय पीछे मोक्ष पाव ह, अर कईएक जे वैराग्य नाहीं धर ह चक्री तथा हरि प्रतिहरि ते कईएक भव धर फिर तपकर मोक्षको प्राप्त होय ह । ये ससारके प्राणी नानाप्रकारके पाप तिनकरि मलीन, मोहरूप सागरके भ्रमणमें मग्न, महा दु खरूप चार गति तिनमें भ्रमणकर तप्तायमान सदा व्याकुल होय ह । ऐसा जानकर जे निकटससारी भव्यजीव ह ते ससारका भ्रमण नाहीं चाह ह, मोह तिमिरका अतकर सूयसमान केवलज्ञानका प्रकाश कर ह ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्र थ ताकी भाषा वचनिकाविष चोदह कुलकर चौबीस तीथङ्कर बारह चक्रवर्ती नव नारायण नव प्रतिनारायण नव बलभद्र ग्यार रुद्र इनके माता पिता पूवभव नगरीनिके नाम पूव गुरु कथन नाम वणन करने वाला बीसवा पव पूण भया ॥ २ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी कह ह–हे मगधाधिपति ! आग बलभद्र जो श्रीरामचन्द्र, तिनका सम्बन्ध कहिए ह, सो सुनहु, अर राजनिके वश अर महा पुरुषनिकी उत्पत्ति, तिनका कथन कहिए ह सो उरमें धारहु । भगवान दशम तीथकर जे शीतलनाथस्वामी तिनको मोक्ष गये पीछे कौशाबी नगरमें एक राजा सुमुख भया, अर ताही नगरमे एक श्रेष्ठी वीरक, ताकी स्त्री वनमाला, सो अज्ञानके उदयत राजा सुमुखने घरम राखी । फिर विवेकको प्राप्त होय मुनियोको दान दिया । सो मरकर विद्याधर और वह वनमाला विद्याधरी भई, सो ता विद्याधरने परणी । एक दिवस ये दोनो क्रीडा करवेकू हरिक्षेत्र गए अर वह श्रेष्ठी वीरक वनमालाका पति विरहरूप अग्निकर दग्धायमान सो तपकर देव-

लोकको प्राप्त भया । एक दिवस अवधिकर वह देव अपने बरी सुमुखके जीवको हरिक्षेत्रविष क्रीडा करता जान क्रोधकर तहात भार्या सहित उठाय लाया, सो या क्षेत्रमें हरि ऐसा नामकरि प्रसिद्ध भया । जाही कारणसे याका कुल हरिवंश कहलाया । ता हरिके महागिरि नामा पुत्र भया, ताके हिमगिरि ताके वसुगिरि, ताके इन्द्रगिरि, ताक रत्नमाल, ताके सभूत, ताके भूतदेव इत्यादि सकडो राजा हरिवंश-विष भए । ताही हरिवंशविष कुशाग्र नामा नगर विष एक राजा सुमित्र जगतविष प्रसिद्ध भया । कसा ह राजा सुमित्र ? भोगोकर इन्द्रसमान, कांतिकरि जीत्या ह चन्द्रमा जाने, अर दीप्तिकर जीत्या ह सूय, अर प्रतापकर नवाए ह शत्रु जान । ताके राणी पदमावती, कमल सारिखे ह नेत्र जाके, शुभ लक्षणनिकरि सपूण, अर पूण भये ह सकल मनोरथ जाके, सो रात्रिविष मनोहर महलमें सुखरूप सेजपर सूती हुती सो पिछले पहर सोलह स्वप्न देखे—गजराज १, वृषभ २, सिंह ३, लक्ष्मी स्नान करती ४, दोय पुष्पमाला ५, चन्द्रमा ६, सूय ७, मच्छ जलमें केलि करते ८, जलका भरा कलश, कमल समूहसे मु ह ढका ९, सरोवर कमल पूण १०, समुद्र ११, सिंहासन रत्न जटित १२, स्वगलोक के विमान आकाशत आवते देखे १३, अर नागकुमारके विमान पातालत निकसते देखें १४, रत्ननिकी राशि १५, निधू म अग्नि १६ । तब राणी पदमावती सुबुद्धिवती जागकरि आश्चयरूप भया ह चित्त जाका, प्रभात क्रियाकर विनयरूप भरतारके निकट आई, पतिके सिंहासनप आय विराजी । फूल रह्या ह मुखकमल जाका, महान्यायकी वेत्ता, पतिव्रता हाथ जोड नमस्कार कर पति सो स्वप्नोका फल पूछती भई । तब राजा सुमित्र स्वप्नोका फल यथाथ कहते भए । तदि ही रत्नोकी वर्षा आकाशत बरसती भई । साढे तीन कोटि रत्न एक सध्यामें बरसे, सो त्रिकाल सध्या वर्षा होती भई । पन्द्रह महीनो लग राजाके घरमें रत्नधारा वर्षी । अर जे षटकुमारिका ते समस्त परिवार सहित माताकी सेवा करती भइ । अर जन्म होते ही भगवानकू क्षीरसागरके जलकरि इन्द्र लोकपालनिसहित सुमेरु पवतपर स्नान करावते भए । अर इन्द्रने भक्तिथकी पूजा अर स्तुतिकर नमस्कार करी, फिर सुमेरुस ल्याय माताकी गोदविष

पधराए। जब से भगवान माताके गर्भमे आये तबहीत लोग अणुव्रतरूप महाव्रतकरि विशेष प्रवर्ते, अर माता व्रतरूप होती भई। तात पृथ्वीविष मुनिसुव्रत कहाए। अंजनगिरि समान ह वर्ण जिनका, परन्तु शरीरके तेजसे सूर्यको जीतते भए, अर कांतिकरि चन्द्रमाकू जीतते भए। सब भोग सामग्री इन्द्रलोकत कुवेर लाव। अर जसा आपको मनुष्यभवमें सुख ह तसा अहमिन्द्रनिको नाहीं। अर हाहा हूहू तुंवर नारद विश्वावसु इत्यादि गंधर्वनिकी जाति ह सो सदा निकट गान करा ही कर। अर किन्नरी जातिकी देवांगना तथा स्वर्गकी अप्सरा नृत्य किया ही कर अर वीणा वांसुरी मृदंग आदि वादित्र नाना विधके देव बजाया ही कर, अर इन्द्र सदा सेवा कर। अर आप महासुन्दर यौवन अवस्था विष विवाह भी करते भए। सो जिनके राणी अद्भुत आवती भई, अनेक गुणकला चातुर्यताकर पूर्ण—हावभाव विलास विभ्रमकी धरणहारी। सो कईएक वर्ष आप राज किया, मनवांछित भोग भोगे। एक दिवस शरदके मेघ विलय होते दख आप प्रतिबोधको प्राप्त भए। तब लौकांतिक देवनिने आय स्तुति करी। तब सुतव्रनामा पुत्रकू राज्य देय वैरागी भए। कसे ह भगवान? नहीं ह काहू वस्तुकी वांछा जिनके। आप वीतराग भावधर दिव्य स्त्रीरूप जो कमलनिका वन तहात निकसे। कसा ह वह सुन्दर स्त्रीरूप कमलनिका वन? सुगंधकरि व्याप्त किया ह दशो दिशा का समूह जाने, बहुरि महादिव्य जे सुगंधादिक तई ह मकरंद जामें और सुगंधताकर भ्रम ह भ्रमरोके समूह जाविष अर हरितमणिकी जे प्रभा, तिनके जो पुंज सोई ह पत्रनिका समूह जाविष। अर दांतो की जो पंक्ति, तिनकी जो उज्ज्वल प्रभा, सोई ह कमल तंतु जाविष। अर नानाप्रकार आभूषणनिके जे नाद तेई भये पक्षी उनके शब्दकरि पूरित ह। अर स्तनरूप जे चकवे तिनकर शोभित ह, अर उज्ज्वल कीर्तिरूप जे राजहंस तिनकरि मंडित है। सो ऐसे अद्भुत विलास तजाकर वैराग्यके अर्थ देवोपुनीत पालकीविष चढकर विपुलनाम उद्यान विष गए। कसे ह भगवान मुनिसुव्रत? सब राजानिके मुकुटमणि ह। सो वनम पालकीत उतरकर अनेक राजानि सहित जिनेश्वरी दीक्षा धरते भए। वेले पारणाकरना यह प्रतिज्ञा आदरी। राजगृहनगरमें वृषभदत्त

महाभक्तिकर श्रेष्ठ अन्न कर पारणा करावता भया। आप भगवान महाशक्तिकरि पूर्ण, कुछ क्षुधा नाहीं, परन्तु आचाराग सूत्रकी आज्ञा प्रमाण अतरायरहित भोजन करते भए। वृषभदत्त भगवानकू आहार देय कृतार्थ भया। भगवान कईएक महीना तपकर चम्पाके वृक्षके तले शुक्लध्यानके प्रतापतै घातिया कर्मनिका नाशकर, केवलज्ञानकू प्राप्त भए। तब इन्द्रसहित देव आयकर प्रणाम कर स्तुति कर धर्मश्रवण करते भए। आपने यति श्रावकका धर्म विधिपूर्वक वर्णन किया। धर्म श्रवणकर कई मनुष्य मुनि भए, कई मनुष्य श्रावक भए, कई तिर्यच श्रावकके व्रत धारते भए। अर देवनिको व्रत नाहीं, सो कई देव सम्यक्त्वको प्राप्त होतें भए। श्रीमुनिसुव्रतनाथ धर्मतीर्थका प्रवर्तनकर सुर असुर मनुष्यनि करि स्तुति करने योग्य अनेक साधुवोंसहित पृथ्वीपर विहार करते भए। सम्मेदशिखरपर्वतसे लोक-शिखरकू प्राप्त भए। यह श्रीमुनिसुव्रतनाथका चरित्र जे प्राणी भावधर सुनें तिनके समस्त पाप नाशकू प्राप्त होय, अर ज्ञानसहित तपसे परम स्थानकू पावें, जहाते फेर आगमन न होय।

अथानन्तर मुनिसुव्रतनाथके पुत्र राजा सुव्रत बहुत काल राज्य कर, दक्ष पुत्रको राज्य देय, जिन-दीक्षा धर मोक्षको प्राप्त भए। अर दक्षके एलावर्धन पुत्र भया, ताके श्रीवृक्ष, ताके सजयत, ताके कुणिम, ताके महारथ, ताके पुलोमई इत्यादि अनेक राजा हरिवंशकुलमें भए। तिनमे कईएक मुक्तिको गए, कईएक स्वर्गलोक गये। या भांति अनेक राजा भये। बहुरि याही कुलविषै एक राजा वासवकेतु भया, मिथिला नगरीका पति, ताके विपुला नामा पटराणी, सुन्दर हैं नेत्र जाके। सो वह रानी परम लक्ष्मीका स्वरूप ताके जनक नाम पुत्र होते भए। समस्त नयोमें प्रवीण वे राज्य पाय प्रजाको ऐसे पालते भए जैसें पिता पुत्रको पाले। गौतमस्वामी कहे है—हे श्रेणिक! यह जनककी उत्पत्ति कही, जनक हरिवंशी है।

अब ऋषभदेवके कुलमें राजा दशरथ भए तिनका वर्णन सुन—इक्ष्वाकुवंशमें श्रीऋषभदेव निर्वाण पधारे। बहुरि तिनके पुत्र भरत भी निर्वाण पधारे। सो ऋषभदेवके समयसे लेकर मुनिसुव्रतनाथके

समय पयत बहुत काल बीत्या, ताम असख्य राजा भए। कईएक तो महादुद्धर तपकर निर्वाणको प्राप्त भये। कईएक अहमिद्र भये। कईएक इन्द्रादिक बडी ऋद्धिके धारी देव भये। कईएक पापके उदयकर नरकमें गये। हे श्रेणिक! या ससारमें अज्ञानी जीव चक्रकी नाई भ्रमण कर ह। कबहू स्वर्गादिक भोग पाव ह, तिनविष मग्न होय क्रीडा कर ह। कईएक पापी जीव नरक निगोदमें क्लेश भोग ह। ये प्राणी पुण्य पापके उदयत अनादिकाल भ्रमण कर ह। कबहू कष्ट, कबहू उत्सव। यदि विचार कर देखिये तो दुःख मेरु समान, सुखराई समान ह। कईएक द्रव्यरहित क्लेश भोगवै ह, कईएक बाल अव स्थामे मरण कर ह, कईएक शोक कर ह कईएक रुदन कर ह, कईएक विवाद करै ह, कईएक पढे ह, कईएक पराई रक्षा कर ह, कईएक पापी बाधा कर ह, कईएक गरज ह कईएक गान कर ह, कईएक पराई सेवा कर ह, कईएक भार बह ह कईएक शयन कर ह, कईएक पराई निन्दा कर ह, कई एक केलि कर ह, कईएक युद्धकरि शत्रुवोको जीत ह, कईएक शत्रुको छोड देय ह, कईएक कायर युद्ध को देख भाग ह, कईएक शूरवीर पथ्वीका राज्य कर ह, विलास कर ह, बहुरि राज्य तज वराग्य धार ह। कईएक पापी हिसा कर ह, परद्रव्यकी वाछा कर ह, परद्रव्यकू हर ह, दौडे ह, कूट कपट कर ह ते नरकमें पडे ह। अर जे कईएक लज्जा धार ह, शील पाल ह, करुणाभाव धार ह, परद्रव्य तज ह, वीतरागताको भज ह, सतोष धार ह, प्राणियोको साता उपजाव ह ते स्वग पाय परपराय मोक्ष पाव ह। जे दान कर ह, तप कर ह अशुभ क्रियाका त्याग कर ह, जिनेंद्रकी अर्चा कर ह, जिनशास्त्रकी चर्चा कर ह, सब जीवनिसू मित्रता कर ह, विवेकियोका विनय कर ह ते उत्तम पद पाव ह। कईएक क्रोध कर ह, काम सेव ह, राग द्वेष मोहके वशीभूत ह, परजीवोको ठग ह ते भवसागरमें डूबे ह, नाना विध नाच ह, जगतमें राच ह खेद खिन्न ह, दीघ शोक कर ह, झगडा कर ह, सताप कर ह, असि मसि कषि वाणिज्यादि व्यापार कर ह, ज्योतिष वद्यक यत्र मत्रादिक कर ह, श्रगारादि शास्त्र रचें ह वे वथा पच पच कर मर ह। इत्यादि शुभाशुभकमकरि आत्मधमको भूल रहे ह। ससारी जीव चतुगति

विष भ्रमण कर ह । या अवसर्पिणीकालविष आयु काय घटती जाय ह । श्रीमल्लिनाथके मुक्ति गये पीछे मुनिसुव्रतनाथके अतरालविष या क्षेत्रमें अयोध्या नगरीविष एक विजय नामा राजा भया । महा शूरवीर, प्रतापकरि सयुक्त, प्रजाके पालनविष प्रवीण, जीते ह समस्त शत्रु जान । ताके हेमचूलनी नामा पटराणी, ताके महागुणवान सुरेद्रमन्यु नामा पुत्र भया । ताके कीर्तिसमा नामा राणी, ताके दोय पुत्र भये—एक वज्रबाहु, दूजा पुरदर ! चन्द्रसूर्यसमान ह काति जाकी, महागुणवान, अर्थसयुक्त ह नाम जिनके, वे दोऊ भाई पृथ्वीविष सुखसू रमते भये ।

अथानन्तर हस्तिनापुरमें एक राजा इन्द्रवाहन, ताके राणी चूडामणी, ताके पुत्री मनोदया अति सुन्दरी सो वज्रबाहुकुमारने परणी । सो कन्याका भाई उदयसुन्दर बहिनक लेनेकू आया सो वज्रबाहुकुमार का स्त्रीसू अतिप्रेम था, स्त्री अति सुन्दरी सो कुमार स्त्रीके लार सासरे चाले । मार्गविष बसतका समय था और बसतगिरि पर्वतके समीप जाय निकसे । ज्यो ज्यो वह पहाड निकट आव त्यो त्यो उसकी परमशोभा देख कुमार अतिहर्षक प्राप्त भए । पुष्पनिकी जो मकरदता उससे मिली सुगन्ध पवन सो कुमारके शरीरसे स्पर्शी, ताकरि ऐसा सुख भया जसा बहुत दिनोके विछुरे मित्रसो मिले सुख होय । कोकिलावोके मिष्ट शब्दनिकरि अतिहर्षित भया जस जीतका शब्द सुन हर्ष होय । पवनसे हाल ह वृक्षोके अग्रभाग सो मानो पर्वत वज्रबाहुका सनमान ही कर ह, और भ्रमर गुजार कर है सो मानो वीणका नाद ही होय ह । वज्रबाहुका मन प्रसन्न भया । वज्रबाहु पहाडकी शोभा देख ह कि यह आम्रवृक्ष, यह कणकार जातिका वृक्ष, यह रौद्र जातिका वृक्ष, फलनिकरि मडित यह प्रयालवृक्ष, यह पलाशका वृक्ष, अग्नि समान ददीप्यमान ह पुष्प जाक । वृक्षनिकी शोभा देखते देखते राजकुमारकी दृष्टि मुनिराज पर पडी । देखकर विचारता भया—यह थभ ह अथवा पर्वतका शिखर ह अथवा मुनि राज है । कायोत्सर्ग धर खडे जो मुनि तिनविष वज्रबाहुका ऐसा विचार भया । कसे ह मुनि? जिनको ठूठ जानकर जिनके शरीरसे मृग खाज खुजाव ह । जब नृप निकट गया तब निश्चय भया कि जो ये

महा योगीश्वर विदेह अवस्थाको धरे कायोत्सग ध्यान धरें स्थिररूप खडे ह, सूयकी किरणनिकरि स्पर्श्या ह मुखकमल जिनका और महासपके फण समान ददीप्यमान भुजावोको लम्बाय ऊभे ह। सुमेरु का जो तट उस समान सुन्दर ह वक्षस्थल जिनका और दिग्गजोके बाधनेके थभ तिन समान अचल ह जघा जिनकी, तपसे क्षीण शरीर ह परन्तु कातिसे पुष्ट दीख ह, नासिकाके अग्रभागविष लगाये ह निश्चल सौम्य नेत्र जिन्होने, आत्माकू एकाग्र ध्याव ह। ऐसे मुनिकू देखकर राजकुमार चितवता भया—अहो धन्य ह ये महामुनि शातिभावके धारक जो समस्त परिग्रहकू तजकर मोक्षाभिलाषी होय तप कर ह। इनकू निर्वाण निकट है। निज कल्याणमें लगी ह बुद्धि जिनकी, परजीवनकू पीडा देनेसे निवत्त भया हे आत्मा जिनका, अर मुनिपदकी क्रिया करि मडित ह। जिनके शत्रु मित्र समान ह, तण अर कचन समान पाषाण अर रत्न समान, मान और मत्सरसे रहित ह मन जिनका। वश करी है पाचो इन्द्रियें जिन्होने, निश्चल पवत समान वीतराग भाव ह, जिनको देखे जीवनिका कल्याण होय। मनुष्यदेहका फल इन होने पाया। यह विषयकषायोसे न ठगाए। कसे ह विषय कषाय ? महा क्रूर ह, अर मलिनताके कारण ह। म पापी कम—पाशकरि निरतर बधा, जसे चन्दनका वक्ष सर्पोंसे वष्टित होय ह तस म पापी असावधानचित्त अचेत समान होय रहा। धिक्कार ह मुझे। म भोगादिरूप जो महा पवत उसके शिखर पर निद्रा करू हू, सो नीचे ही पडूगा। जो इस योगींद्रकी सी अवस्था धरू तो मेरा जन्म कताथ होय। ऐसा चितवन करते बजबाहुकी दष्टि मुनिनाथमे अत्यन्त निश्चल भई, मानो थभसे बाधी गई। तब उसका उदयसुन्दर साला इसको निश्चल देख मुलकता हुवा याहि हास्यके वचन कहता भया— मुनिकी ओर अत्यन्त निश्चल होय निरखो हो सो क्या दिगम्बरीदीक्षा धरोगे ? तब बजबाहु बोले—जो हमारा भाव था सो तुमने प्रकट किया, अब तुम इसही भावकी वार्ता कहो। तब वह इसको रागी जान हास्यरूप बोला कि तुम दीक्षा धरोगे तो म भी धरूगा, परन्तु इस दीक्षासे तुम अत्यन्त उदास होवोगे। तब बजबाहु बोले यह तो ऐसे ही भई—यहकर विवाहके आभूषण उतार डारे और हाथीसे उतरे। तब

मृगनयनी स्त्री रोवने लगी। स्थूल मोती समान अश्रुपात डारती भई। तब उदयसुन्दर आसू डारता भया, हे देव! यह हास्यमें कहा विपरीत करो हो? तब वज्रबाहु अति मधुरवचनसू ताको शातता उपजावते हुए कहते भए—हे कल्याणरूप! तुम समान उपकारी कौन? म कूपमें पड़ू था सो तुमने राखा। तुम समान मेरा तीनलोकमें मित्र नाहीं। हे उदयसुन्दर! जो जन्म्या ह सो अवश्य मरेगा और जो मूआ ह सो अवश्य जन्मेगा। ये जन्म और मरण अरहटकी घडी समान हैं, तिनमें ससारी जीव निरतर भ्रम ह। यह जीतव्य बिजलीके चमत्कार समान ह तथा जलकी तरग समान, तथा दुष्ट-सर्पकी जिह्वा समान चचल ह। यह जगतके जीव दु खसागरविषै डूब रहे ह। यह ससारके भोग स्वप्नके भोग समान असार ह। जलके बुदबुदा समान काया ह, साझक रग समान यह जगतका स्नेह ह, और यह यौवन फूलसमान कुमलाय जाय ह। यह तुम्हारा हसना भी हमको अमृतसमान कल्याण-रूप भया। क्या हास्यसे जो औषधिको पीये तो रोगको न हर? अवश्य हरैही। अर तुम हमको मोक्षमार्गके उद्यमके सहाई भए, तुम समान हमारे और हितु नाहीं। म ससारके आचारविषै आसक्त होय रहा था सो वीतरागभावको प्राप्त भया। अब म जिनदीक्षा धरू हू। तुम्हारी जो इच्छा होय सो तुम करो। ऐसा कहकर सब परिवारसू क्षमा कराय वह गुणसागर नामा मुनि तपही ह धन जिनके, तिनके निकट जाय चरणारविंदको नमस्कार कर विनयवान होय कहता भया—हे स्वामी! तुम्हारे प्रसादसे मेरा मन पवित्र भया, अब म ससाररूप कीचसे निकस्या चाहू हू। तब इसके वचन सुन गुरु आज्ञा दई—तुमको भवसागरसे पार करणहारी यह भगवती दीक्षा ह। कसे है गुरु? सप्तम गुणस्थान से छठे गुणस्थान आये ह। यह गुरुकी आज्ञा उरमें धार वस्त्राभूषणका त्याग कर पल्लव समान जे अपने कर तिनमें केशोका लौंचकर पल्यकासन धरता भया। इस देहको विनश्वर जान देहसे स्नेह तजाकर राजपुत्रीको और राग अवस्थाको तज मोक्षकी देनहारी जो जिन दीक्षा सो अगीकार करता भया। और उदयसुन्दरको आदि दे छबीस राजकुमार जिनदीक्षा धरते भये। कसे ह वे कुमार? कामदेव

समान है रूप जिनका, तजे हैं राग द्वेष मद मत्सर जिन्होने, उपज्या है वैराग्यका अनुराग जिनके, परम उत्साहके भरे नग्न मुद्रा धरते भये। और यह वृत्तात देख वज्रबाहुकी स्त्री मनोदेवी पतिके और भाईके स्नेह-सो मोहित हुई, मोह तज आर्यिकाके व्रत धारती भई, सब वस्त्राभूषण तज कर एक सुफेद साडी धारती भई। महा तप व्रत आदरे। यह वज्रबाहुकी कथा इसका दादा जो राजा विजय उसने सुनी। सभाके मध्य बैठ्या था सो शोकसे पीडित होय ऐसे कहता भया—यह आश्चर्य देखो कि मेरा पोता नवयौवन में विषय विष समान जान विरक्त होय मुनि भया और मो सारिखा मूढ विषयोका लोलुपी वृद्ध अवस्थामेंभी भोगोको न तजता भया। कुमारने कैसे तजे? अथवा वह महाभाग्य जो भोगोको तृणवत तजकर मोक्षके निमित्त शातभावोमें तिष्ठया, मैं मंदभाग्य जराकर पीडित हू सो इन पापी विषयोने मोहि चिरकाल ठग्या। कैसे है यह विषय? देखनेमें तो अति सुंदर है परन्तु फल इनके अति कटुक है। मेरे इन्द्रनीलमणि समान श्याम जो केशोके समूह थे सो कफकी राशि समान श्वेत होयगए। जे यौवन अवस्थामें मेरे नेत्र श्यामता श्वेतता अरुणता लिये अतिमनोहर थे सो अब ऊडे पड गये, और मेरा जो शरीर अति देदीप्यमान शोभायमान महाबलवान स्वरूपवान था सो वृद्धअवस्थाविषै वर्षासे हता जो चित्राम ता समान होय गया। जे धर्म अर्थ काम तरुण अवस्थाविषै भलीभांति सधे है सो जराकर मंडित जे प्राणी तिनसे सधन विषम है। धिक्कार है मो पापी दुराचारी प्रमादीको जो मैं चेतन थका अचेतन दशा आदरी। यह झूठा घर, झूठी माया, झूठी काया, झूठे बांधव, झूठा परिवार तिनके स्नेहकरि भवसागरके भ्रमण में भ्रमा। ऐसा कहकर सब परिवारसो क्षमा कराय, छोटा पोता जो पुरन्दर उसे राज्य देय, अपने पुत्र सुरेंद्रमन्यु सहित राजा विजयने वृद्ध अवस्थामें निर्वाणघोष स्वामीके समीप जिनदीक्षा आदरी। कैसा है राजा? महा उदार है मन जाका।

अथानन्तर पुरन्दर राज्य करै है। उसके पृथ्वीमती राणी, कीर्तिधर नामा पुत्र भया, सो गुणोका सागर पृथ्वीविषै विख्यात। वह विनयवान अनुक्रमकर यौवनको प्राप्त भया। सब कुटुम्बको आनन्द

बढावताहुवा अपनी सु दर चेष्टासू सबको प्रिय भया । तब राजा पुर दरने अपने पुत्रको राजा कौशल की पुत्री परणाई और इसको राज्य देय,राजा पुरदरने गुण ही हैं आभरण जाके, क्षेमकर मुनिके समीप मुनिव्रत धरे, कर्मनिजराका कारण महातप आरभा ।

अथान तर राजा कीर्तिधर कुलक्रमसे चला आया जो राज्य उसे पाय जीते ह सब शत्रु जिसने, देवसमान उत्तम भोग भोगता हुवा रमता भया । एक दिवस राजा कीर्तिधर प्रजाका बधु, जे प्रजाके बाधक शत्रु तिनको भयकर, सिहासनविष जस इ द्र विराजे तसैं विराजै थे । सो सूयग्रहण देख चित्तमें चितवते भए कि देखो यह सूय जो ज्योतिका मडल ह सो राहुके विमानके योगसे श्याम होयगया । यह सूय, प्रतापका स्वामी, अधकारको मेट प्रकाश कर ह और जिसके प्रतापसे च द्रमाका बिब कातिरहित भासै ह, और कमलनिके वनको प्रफुल्लित कर ह सो राहुके विमानसे मदकाति भास ह । उदय होता ही सूय ज्योति रहित होयगया, इसलिए ससारकी दशा अनित्य ह । यह जगतके जीव विषयाभिलाषी, रकसमान मोहपाशसे बधे अवश्य कालके मुखमे पडेगे । ऐसा विचारकर यह महाभाग्य ससारकी अवस्था को क्षणभगुर जान मत्री पुरोहित सेनापति सामतनिको कहता भया कि यह समुद्र पर्यंत पथ्वीके राज्यकी तुम भलीभाति रक्षा करियो, म मुनिके व्रत धरू ह । तब सबही विनती करते भए–हे प्रभो ! तुम विना यह पथ्वी हमसे दब नाहीं, तुम शत्रुवोके जीतनहार हो, लोकोके रक्षक हो, तुम्हारी वय भी नवयौवन ह । इसलिए यह इ द्रतुल्य राज्य कईएक दिन करो, इस राज्यके पति अद्वितीय तुमही हो, यह पथ्वी तुमहीसे शोभायमान ह । तब राजा बोले–यह ससार अटवी अति दीघ ह । इसे देख मोहि अतिभय उपज ह । कसी ह ? यह भवरूप वन, अनेक जे दुख, वेही ह फल जिनके, ऐसे कमरूप वृक्षनिसे भरी ह । अर ज म जरा मरण रोग शोक रति अरति इष्टवियोग अनिष्टसयोगरूप अग्निसे प्रज्वलित ह । तब मत्रीजनोने राजाके परिणाम विरक्त जान बुझे अगारोके समूह लाय धरे और तिनके मध्य एक वडूयमणि ज्योतिका पु ज अति अमोलक लाय धरया । सो मणिकें प्रतापसैं कोयला प्रकाशरूप होयगए !

फिर वह मणि उठाय लई, तब वह कोइला नीके न लागे । तब मन्त्रियोने राजासे विनती करी हे देव ! जसैं यह काष्ठके कोयला रत्ननिविना न शोभ ह तस तुम विना हम सब ही न शोभ । हे नाथ ! तुम विना प्रजाके लोक अनाथ मारे जायगे और लूटे जायगे और प्रजाके नष्ट होते धमका अभाव होवेगा । इसलिए जैसा तुम्हारा पिता तुमको राज्य देय मुनि भया था तस तुम भी अपने पुत्रको राज देय जिनदीक्षा धरियो । या भाति प्रधान पुरुषोने विनती करी । तब राजाने यह नियम किया कि जो म पुत्रका जन्म सुनू उस ही दिन मुनिव्रत धरू । यह प्रतिज्ञाकर इन्द्र समान भोग भोगता भया, प्रजाको साता उपजाय राज्य किया । जिसके राज्यमें किसी भातिका भी प्रजाको भय न उपजा । कसा ह राजा ? समाधान रूप ह चित्त जाका । एक समय राणी सहदेवी राजा सहित शयन करती थी सो उसको गभ रह्या । कसा पुत्र गभमे आया ? सम्पूण गुणनिका पात्र और पथ्वीके प्रतिपालनको समथ । सो जब पुत्रका जन्म भया तब राणीने पतिक वरागी होनेके भयसे पुत्रका जन्म प्रकट न किया । कई एक दिवस वार्ता गोप राखी । जसै सूयके उदयको कोई छिपाय न सक तसैं राजपुत्रका जन्म कसैं छिप ? किसी मनुष्य दरिद्रीने द्रव्यके अथके लोभत राजासे प्रकट किया । तब राजाने मुकुट आदि सव आभूषण अगसे उतार उसको दिये और घोषशाखा नामा नगर, महा रमणीक, अतिधनकी उत्पत्तिका स्थानक, सौ गाव सहित दिया और पुत्र पन्द्रह दिनका माताकी गोदमें तिष्ठता था सो तिलककर उसको राजपद दिया जिससे अयोध्या अति रमणीक होती भई । और अयोध्याका नाम कौशल भी ह इसलिए उसका सकौशल नाम प्रसिद्ध भया । कसा ह सुकौशल ? सुन्दर ह चेष्टा जाकी, सुकौशलका राज्य देय राजा कीर्तिधर घररूपबदीगहत निकसकरि तपोवनको गए, मुनिव्रत आदरे । तपसे उपज्या जो तेज उससे जसैं मेघपटलसे रहित सूय शोभ तसैं शोभतें भए ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषा वचनिकाविष वज्रबाहु कीर्तिधर महात्म्य वणन करने वाला इक्कीसवा पव पूण भया ।। २१ ।।

अथानन्तर कईएक वर्षमें कीर्तिधर मुनि पृथ्वीसमान है क्षमा जिनके, दूर भया है मान मत्सर जिनका, और उदार है चित्त जिनका, तपकरि शोखा है सब अंग जिन्होंने, अर लोचन ही है सब आभूषण जिनके, प्रलम्बित हैं महाबाहु और जूडे प्रमाण धरती देख अधोदृष्टि गमन करे है। जैसे मत्त गजेन्द्र मन्द मन्द गमन करे तैसे जीवदयाके अर्थ धीरा धीरा गमन करे है। सब विकार रहित महा सावधानी ज्ञानी, महा विनयवान, लोभ रहित, पंचआचारके पालनहारे, जीवदयासे विमल है चित्त जिनका, स्नेहरूप कर्दमसे रहित, स्नानादि शरीरसंस्कारसे रहित, मुनिपदकी शोभासे मंडित। सो आहारके निमित्त बहुत दिनोंके उपवासे नगरमें प्रवेश करते भए। तिनको देखकर पापिनी सहदेवी उनकी स्त्री मनमें विचार करती भई कि कभी इनको देख मेरा पुत्र भी वैराग्यको प्राप्त न होय। तब महा क्रोधकर लाल होय गया है मुख जाका, दुष्ट चित्त द्वारपालनिसो कहती भई, यह यति नग्न महा मलिन घरका खोऊ है। इसे नगरसे बाहिर निकास देवो, फिर नगरमें न आवने पावै। मेरा पुत्र सुकुमार है, भोला है कोमल चित्त है सो उसे देखने न पावे। इसके सिवाय और भी यति हमारे द्वारे आवनें न पावे। रे द्वारपाल हो! इस बातमें चूक पडी तो मैं तुम्हारा निग्रह करूंगी। जबसे यह दया रहित बालक पुत्रको तजकर मुनि भया तबसूं इसभेषका मेरे आदर नाहीं। यह राज्यलक्ष्मी निंदे है अर लोगोंको वैराग्य प्राप्त करावै है, भोग छुडाय योग सिखावै है। जब राणीने ऐसे वचन कहे तब वे क्रूर द्वारपाल, बेतकी छडी है जिनके हाथमें, मुनिको मुखसे दुरवचन कहकर नगरसे निकास दिए। अर आहारको और भी साधु नगरमें आए थे वे भी निकास दिए। मत कदाचित मेरा पुत्र धर्म श्रवण करे या भांति कीर्तिधरका अविनय देख राजा सुकौशलकी धाय महाशोक कर रुदन करती भई। तब राजा सुकौशल धायको रोवती देख कहते भए—हे माता! तेरा अपमान करै ऐसा कौन? माता तो मेरी गर्भ धारण मात्र है और तेरे दुग्धकरि मेरा शरीर वृद्धिको प्राप्त भया, सो मेरे तू मातासे भी अधिक है। जो मृत्युके मुखमें प्रवेश किया चाहे सो तोहि दुखावै, जो मेरी माताने भी तेरा अनादर किया होय तो मैं उसका अविनय करूं,

औरोकी क्या बात ? तब बसतलता धाय कहती भई–हे राजन ! तेरे पिता तुझे बालअवस्थामें राज्य
देय ससाररूप कष्टके पीजरेसे भयभीत होय तपोवनको गए । सो वह आज इस नगरमें आहारको आए
थे सो तिहारी माताने द्वारपालनिसो आज्ञाकर नगरत कढाए । हे पुत्र ! वे हमारे सबके स्वामी सो उनका
अविनय म दख न सकी । इसलिए रुदन करू हू और तिहारी कपाकर मेरा अपमान कौन कर ? और
साधुवोको दखकर मेरा पत्र ज्ञानको प्राप्त होय ऐसा जान मुनिनका प्रवेश नगरसे निकारचा । सो तिहारे
गोत्रविष यह धम परम्परायसे चला आया ह कि जो पुत्रको राज्य देय पिता वरागी होय ह, और तिहारे
घरसे आहार विना कभो भी साधु पाछे न गए । यह वत्तात सुन राजा सुकौशल मुनिके दशनको महल
से उतर चमरछत्र वाहन इत्यादि राजचिह्न तजकर कमलसे भी अतिकोमल जो चरण सो उबाणे
ही मुनिके दशनको दौड और लोकनिको पूछते जाव–तुमन मुनि देखे, तुमने मुनि देखे । या भाति
परम अभिलाषासयुक्त अपन पिता जो कीर्तिधर मुनि तिनके समीप गए । अर इनके पीछे छत्रचमर
वारे सब दोड ही गए । महामुनि उद्यानविष शिलापर विराजे हुते सो राजा सुकौशल अश्रुपात कर
पूण ह नेत्र जाके, शुभ ह भावना जाकी, हाथ जोडि नमस्कार करि बहुत विनयसो मुनिके आग खडे,
द्वारपालनिने द्वारत निकाम थ सो ताकर अतिलज्जावत होय, महामुनिसो विनती करते भए–
हे नाथ ! जस कोई पुरुष अग्नि प्रज्वलित घरविष सूता होवे ताहि कोई मेघके नादसमान ऊचा शब्द
कर जगाव, तस ससाररूप महाजन्म मत्युरूप अग्निकर प्रज्वलित, ताविष म मोहनिद्राकरियुक्त
शयन करू था सो मोहि आप जगाया । अब कपा कर यह तिहारी दिगम्बरीदीक्षा मोहि देहु । यह
कष्टका सागर ससार तासो मोहि उबारहु । जब ऐसे वचन मुनिसो राजा सुकौशलने कहे तब ही
समस्त सामतलोक आए और राणी विचित्रमाला गभवती हुती सो हू अति कष्टकरि विषादसहित
समस्त राजालोकसहित आई । इनको दीक्षाके लिए उद्यमी सुन सब ही अत पुरके अर प्रजाके शोक
उपज्या । तब राजा सुकौशल कहते भए या राणी विचित्रमालाके गभविष पुत्र ह, ताहि म राज्य

दिया। ऐसा कहकरि निस्पह भए। आशारूप फासीको छेदि, स्नेहरूप जो पींजरा ताहि तोड, स्त्रीरूप बधनसो छूट, जीण तणवत राज्यको जानि तज्या और वस्त्राभूषण सब ही तजि बाह्याभ्यतर परिग्रहका त्याग करके केशनिका लोच किया अर पदमासन धार तिष्ठे। कीर्तिधर मुनींद्र इनके पिता, तिनके निकट जिनदीक्षा धरी। पच महाव्रत, पाच समिति, तीन गुप्ति अगोकार करि सुकौशल मुनिने गुरुके सग विहार किया। कमलसमान आरक्त जो चरण तिनकरि पथ्वीको शोभायमान करते सते विहार करते भए। अर इनकी माता सहदेवी आतध्यानकरि मरक तियच योनिम नाहरी भई। अर ए पिता पुत्र दोनो मुनि महाविरक्त जिनको एक स्थानक रहना, पिछले पहर विनसू निजन प्रासुक स्थान देखि बठि रह। अर चातुर्मासिकमें साधुवोको विहार न करना। सो चातुर्मासिक जान एक स्थान बठि रह। दशो दिशाको श्याम करता सता चातुर्मासिक पथ्वीविष प्रवर्त्या। आकाश मेघमाला के समूहकरि ऐसा शोभे मानो काजलत लिप्या ह। अर कहू एक बगुलानिकी पक्ति उडती ऐसी सौह मानो कुमुद फूल रहे ह। अर ठौर ठौर कमल फूल रहे ह, जिनपर भमर गु जार कर ह। सो मानो वर्षाकालरूप राजाके यश ही गाव ह। अजनगिरि ममान महानील जो अधकार ताकरि जगत व्याप्त होय गया। मेघके गाजनेत मानो चाद सूय डरकर छिप गए। अखण्डजलकी धारात पृथ्वी सजल होय गई और तण ऊग उठे, सो मानो चाद पथ्वी हषके अकूर धर ह। अर जलके प्रवाहकरि पथ्वीविष नीचा ऊचा स्थल नजर नाहीं आव, अर पथ्वीविष जलके समूह गाज ह, अर आकाशविष मेघ गाज ह सो मानो ज्येष्ठका समय जो वरी ताहि जीतकर गाजरहे ह। अर धरती निझरननि करि शोभित भई। भाति २ की वनस्पति पथ्वीविष ऊगी सो ता करि पथ्वी ऐसी शोभ ह मानो हरितमणिके समान बिछोना कर राखे ह। पथ्वीविष सवत्र जल ही जल होय रहा ह, मानो मेघ ही जलके भारत टूट पडे ह। अर ठौर ठौर इ द्रगोप अर्थात वीरबहूटी दीख ह सो मानो वराग्यरूप बजत चूण भए रागके खण्ड ही पृथ्वीविष फल रहे ह। अर बिजलीका तेज सव दिशाविष विचर ह सो मानो मेघ नेत्रकरि जलपूरित तथा अपूरित स्थानकको देख ह। अर नानाप्रकारके रगको धर जो इ द्रधनुष ताकरि मण्डित आकाश,

तो ऐसा शोभता भया मानो अति ऊचे तोरणो कर युक्त है। अर दोऊ पालि ढाहती, महा भयानक भमणको धर, अतिवेगकरयुक्त कलषतासयुक्त नदी बहै है। सो मानो मर्यादारहित स्वछद स्त्रीके स्वरूपको आचरै है। अर मेघके शब्दकर त्रासको प्राप्त भई जे मृगनयनी विरहिणी ते स्तम्भनसू स्पर्श कर है, अर महा विह्वल है, पतिके आवनेकी आशाविषै लगाए है नेत्र जिनने। ऐसे वर्षाकाल विषै जीवदयाके पालनहारे महाशांत, अनेक निर्ग्रंथ मुनि प्रासुक स्थानकविषै चौमासी उपवास लेय तिष्ठे। अर जे गृहस्थी श्रावक साधु–सेवाविषै तत्पर ते भी चार महीना गमनका त्याग कर नाना प्रकारके नियम धर तिष्ठे। ऐसे मेघकर व्याप्त वर्षाकालविषै वे पिता पुत्र यथार्थ आचारके आचरनहारे प्रेतवन कहिए श्मसान ताविषै चार महीना उपवास धर वृक्षके तले विराजे। कभी पद्मासन, कभी कायोत्सर्ग, कभी वीरासन आदि अनेक आसन धर चातुर्मास पूर्ण किया। कैसा है वह प्रेतवन? वृक्षनिके अंधकार करि महागहन है, अर सिंह व्याघ्र रीछ स्याल सर्प इत्यादि अनेक दुष्ट जीवनिकरि भरया है। भयंकर जीवनिको भी भयकारी महा विषम है, गीध सियाल चील इत्यादि जीवनिकरपूर्ण होय रहा है। अर्धदग्ध मृतकनिका स्थानक, महा भयानक विषमभूमि, मनुष्यनिके सिरके कपालके समूहकर जहा पृथ्वी श्वेत होय रही है और दुष्ट शब्द करते पिशाचनिके समूह विचरै है, अर जहा तृणजाल कंटक बहुत है। सो ये पिता पुत्र दोनो मुनि धीरवीर पवित्र मन चारमहीना तहा पूर्ण करते भए।

अथानंतर वर्षाऋतु गई, शरद ऋतु आई। सो मानो रात्रि पूर्ण भई, प्रभात भया। कैसा है प्रभात? जगतके प्रकाश करनेमें प्रवीण है। शरदके समय आकाशविषै बादल श्वेत प्रकट भए अर सूर्य मेघपटल रहित कांतिसो प्रकाशमान भया। जैसे उत्सर्पिणीकालका जो दुःखमाकाल ताके अन्तमें दुखमासुखमा के आदि श्रीजिनेन्द्रदेव प्रकट होय। अर चन्द्रमा रात्रिविषै तारानिके समूह के मध्य शोभता भया। जैसे सरोवरके मध्य तरुण राजहंस शोभै। अर रात्रिमें चान्द्रमाकी चांदनीकर पृथ्वी उज्ज्वल भई सो मानो क्षीरसागर ही पृथ्वीविषै विस्तर रह्या है। अर नदी निर्मल भई, कुरचि सारस चकवा आदि

पक्षी सुन्दर शब्द करने लगे, अर सरोवर मे कमल फूले जिन पर भ्रमर गुंजार कर हं, अर उडे है, सो मानो भव्यजीवनिने मिथ्यात्वपरिणाम तजे ह सो उडते फिर हं। (भावार्थ) मिथ्यात्वका स्वरूप श्याम अर भमरका भी स्वरूप श्याम। अनेक प्रकार सुगंधका ह प्रचार जहा ऐसे जे ऊचो महल, तिनके निवासविषं रात्रिके समय लोक निज प्रियानिसहित क्रीडा कर ह। शरदऋतुविषं मनुष्यनिके समूह महाउत्सवकर प्रवर्तं ह, सन्मान किया ह मित्र बाधवनिका जहा। अर जो स्त्री पीहर गई तिनका सासरे आगमन होय ह। कार्तिक सुदी पूणमासीके व्यतीत भए पीछे तपोधर जे मुनि ते जन तीर्थोमें विहार करते भए। तदि ये पिता अर पुत्र कीर्तिधर सुकौशल मुनि समाप्त भया है नियम जिनका, शास्त्रोक्त ईर्यासमितिसहित पारणाके निमित्त नगरकी ओर विहार करते भए। अर वह सहदेवी सुकौशलकी माता मरकरि नाहरी भई हुती सो पापिनी महाक्रोधकी भरी, लोहूकर लाल ह केशोके समूह जाक, विकराल ह वदन जाका, तीक्ष्ण ह दात जाके, कषायरूप पीत ह नेत्र जाके, सिर पर धरी ह पूछ जाने, नखोकरि विदारे ह अनेक जीव जाने, अर किए ह भयकर शब्द जाने, मानों मरी ही शरीर धरि आई ह। लहलहाट करे ह लाल जीभका अग्रभाग जाका, मध्याह्नके सूय समान आतापकारी, सो पापिनी सुकौशल स्वामीको देखकरि महावेगत उछलकर आई। ताहि आवती देख वे दोनो मुनि सुन्दर ह चरित्र जिनके, सव आलब रहित कायोत्सग धर तिष्ठ। सो पापिनी सिहनी सुकौशल स्वामीका शरीर नखो करि विदारती भई। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकत कह ह—हे राजन। देख ससारका चरित्र जहा माता पुत्रके शरीरके भक्षणका उद्यम कर ह। या उपरात और कष्ट कहा? जन्मातरके स्नेही बाधव कमके उदयत बरी होय परिणम। तदि सुमेरुत भी अधिक स्थिर सुकौशल मुनि शुक्लध्यानके धरणहारे तिनको केवलज्ञान उपज्या, अन्त कतकेवली भए। तब इन्द्रादिक देवोने आय इनके देहकी कल्पवृक्षादिक पुष्पनिसो अर्चा करी, चतुरनिकायके सव ही देव आए। अर नाहरी को कीर्तिधर मुनि धर्मोपदेश वचनोसे सबोधते भए—हे पापिनी! तू सुकोशलकी माता सहदेवी हुती।

अर पुत्रसे तेरा अधिक स्नेह हुता ताका शरीर तने नखनित विदारचा। तब वह जातिस्मरण होय श्रावकके व्रतधर सन्यास धारणकर शरीर तजि स्वर्गलोकमें गई। बहुरि कीर्तिधर मुनिको भी केवल ज्ञान उपज्या तब इनके केवलज्ञानकी सुर असुर पूजाकर अपने अपने स्थानको गए। यह सुकौशल मुनिका माहात्म्य जो कोई पुरुष पढै सुनै सो सब उपसर्गत रहित होय सुखसो चिरकाल जीवै।

अथानन्तर सुकौशलकी राणी विचित्रमाला ताके सम्पूर्ण समयपर सुन्दर लक्षणकरि मंडित पुत्र होता भया। जब पुत्र गर्भमें आया तबहीत माता सुवर्णकी कांतिको धरती भई। तातै पुत्रका नाम हिरण्यगर्भ पृथ्वीपर प्रसिद्ध भया। सो हिरण्यगर्भ ऐसा राजा भया मानो अपने गुणनिकर बहुरि ऋषभदेवका समय प्रकट किया। सो राजा हरिकी पुत्री अमृतवती महामनोहर ताहि तानै परणी। राजा अपने मित्र बांधवनिकरि संयुक्त पूर्ण द्रव्यके स्वामी मानो स्वर्णके पर्वत ही है। सब शास्त्रके पारगामी देवनि समान उत्कृष्ट भोग भोगते भए। एक समय राजा उदार है चित्त जिनका, दर्पणमें मुख देखते हुते। सो भ्रमर समान श्याम केशनिके मध्य एक सुफेद केश देख्या। तब चित्तमें विचारते भए कि यह कालका दूत आया। बलात्कार यह जराशक्ति कांतिकी नाश करणहारी ताकरि मेरे अंगोपांग शिथिल होवेंगे। यह चंदनके वृक्षसमान मेरी काया अब जरारूप अग्निकरि जल्या अंगार तुल्य होयगी। यह जरा छिद्र हेरै ही है। सो समय पाय पिशाचनीकी नाईं मेरे शरीरमें प्रवेशकर बाधा करेगी। अर कालरूप सिंह चिरकालतै मेरे भक्षणका अभिलाषी हुता, सो अब मेरे देहको बलात्कारतै भखेगा। धन्य है वह पुरुष जो कर्मभूमिको पायकर तरुण अवस्थामें व्रतरूप जहाजविषै चढ़ि कर भवसागरको तिरै। ऐसा चिंतवनकर राणी अमृतवतीका पुत्र जो नघोष ताहि राजविषै थाप करि विमलमुनिके निकट दिगम्बरी दीक्षा धरी। यह नघोष जाबत माताके गर्भमें आया तबहीत कोई पापका वचन न कहै, तातै नघोष कहाए। पृथ्वीपर प्रसिद्ध है गुण जिनके, तिन गुणोके पुंज, तिनके सिंहका नाम राणी। ताहि अयोध्याविषै राख उत्तर दिशाके सामंतोको जीतवे को चढे। तब राजाको

दूर गया जान दक्षिण दिशाके राजा बडी सेनाके स्वामी अयोध्या लेनेको आए। तब राणी सिंहका महाप्रतापिनी बडी फौज करि चढी। सो सब बरीनिको रणमें जीतकर अयोध्या दृढ थाना राखि आप अनेक सामंतनिको लेय दक्षिणदिशा जीतनेको गई। कसी है राणी? शस्त्रविद्याका किया है अभ्यास जान, प्रतापकरि दक्षिणदिशाके सामंतोको जीतकर जयशब्दकर पूरित पाछी अयोध्या आई। अर राजा नघोष उत्तर दिशाको जीतकर आए सो स्त्रीका पराक्रम सुन कोपको प्राप्त भए, मनमें विचारी जे कुलवती स्त्री अखंडित शीलकी पालनहारी है तिनमें एती धीठता न चाहिए। ऐसा निश्चयकर राणी सिंहिकासो उदासचित्त भए। यह पतिव्रता महाशीलवती पवित्र है चेष्टा जाकी, पटराणी के पदतैं दूर करी सो महादरिद्रताको प्राप्त भई।

अथानंतर राजाके महादाहज्वरका विकार उपज्या सो सब वैद्य यत्न कर पर तिनकी औषधि न लागै। तब राणी सिंहिका राजाको रोगग्रस्त जानकर व्याकुलचित्त भई, अर अपनी शुद्धताके अर्थि यह पतिव्रता पुरोहित मंत्री सामंत सबनिको बुलायकर पुरोहितके हाथ अपने हाथका जल दिया, अर कही कि यदि म मन वचन कायकरि पतिव्रता हूँ तो या जलकरि सींच्या राजा दाहज्वरकर रहित होवे। तब जल करि सींचते ही राजाका ज्वर मिट गया अर हिमविषै मग्न जैसा शीतल होय गया। मुखतैं ऐसे मनोहर शब्द कहता भया जैसे वीणाके शब्द होवे। अर आकाशविषै यह शब्द होते भए कि यह राणी सिंहिका पतिव्रता महाशीलवती धन्य है धन्य है। अर आकाशतैं पुष्प वर्षा भई। तब राजा ने राणीको महाशीलवती जान बहुरि पटराणीका पद दिया, अर बहुत दिन निष्कंटक राज किया। बहुरि अपने बडोके चरित्र चित्तविषै धरि संसारकी मायातैं निस्पृह होय सिंहिका राणीका पुत्र जो सौदास, ताहि राज देय आप धीर वीर मुनिव्रत धर, जो कार्य परम्परा इनके बडे करते आए है सो किया। सौदास राज कर, सो पापी मांस आहारी भया। इनके वंशमें किसीने यह आहार न किया। यह दुराचारी अष्टाह्निकाके दिवसविषै भी अभक्ष्य आहार न तजता भया। एक दिन रसोईदारसो कहता भया कि—

मेरे मांसभक्षणका अभिलाष उपज्या है तब तान कही—हे महाराज ! अष्टाह्निकाके दिन हैं, सब लोक भगवानकी पूजा अर व्रत नियम विषै तत्पर हैं, पृथ्वीपर धर्मका उद्योत होय रह्या है, इन दिनोमें यह वस्तु अभक्ष्य है । तदि राजाने कही—या वस्तु विना मेरा मन रहै नाहीं, तातैं जा उपायकरि यह वस्तु मिलै सो कर । तदि रसोईदार यह राजाकी दशा देख नगरके बाहिर गया । एक मूवा हुवा बालक देख्या । ताहि दिन वह मूआ था । सो ताहि वस्त्रमें लपेट वह पापी लेय आया, स्वादु वस्तुनिकरि ताहि मिलाय पकाय राजाको भोजन दिया, सो राजा महादुराचारी अभक्ष्यका भक्षण कर प्रसन्न भया । अर रसोईदारतैं एकांतमें पूछता भया कि—हे भद्र ! यह मांस तू कहांतैं लाया, अब तक ऐसा मांस मैंने भक्षण नहीं किया हुता । तदि रसोईदार अभयदान मांग यथावत कहता भया । तब राजा कहता भया, ऐसे ही मांस सदा लाया कर । तदि रसोईदार बालकनिको लाडू बांटता भया, तोन लाडुओंके लालचवशि बालक निरन्तर आवैं । सो बालक लाडू लेयकर जावे तब जो पीछे रहै जाय ताहि यह रसोईदार मार राजाको भक्षण करावै । निरंतर नगरविषै बालक छीजने लगे, तदि यह वृत्तांत लोकनिने जान रसोईदारसहित राजाको देशतैं निकाल दिया, अर याकी राणी कनकप्रभा, ताका पुत्र सिंहरथ ताहि राज्य दिया । तदि यह पापी सर्वत्र निरादर हुआ महादुखी पृथ्वीपर भ्रमण किया करै । जे मृतक बालक मसानविषै लोक डारि आवैं तिनको भखै जैसे सिंह मनुष्योंका भक्षण करै । तातैं याका नाम सिंहसौदास पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भया । बहुरि यह दक्षिणदिशाको गया । तहां मुनिनिके दर्शन कर धर्म श्रवणकर श्रावकके व्रत धरता भया । बहुरि एक महापुर नामा नगर, तहांका राजा मूवा । ताके पुत्र नहीं था तब सबने यह विचार किया कि पाटबांध हस्ती जाय कांधे चढाय लावै सोई राजा होवै । तदि याहि कांधे चढाय हस्ती लेयगया तब याको राज्य दिया । यह न्यायसंयुक्त राज्य करै, अर पुत्रके निकट दूत भेज्या कि तू मेरी आज्ञा मान, तदि वानै लिख्या जा तू महा निंद्य है, मैं तोहि नमस्कार न करूं । तब यह पुत्रपर चढकरि गया । याहि आवता सुन लोग भागने लगे कि यह मनुष्य-

निको खायगा। पुत्र अर याके महा युद्ध भया। सो पुत्रको युद्धमें जीत दोनो ठौरका राज्य पुत्रको देय कर आप महा वैराग्यको प्राप्त होय तपके अर्थि वन में गया।

अथानन्तर याके पुत्र सिंहरथके ब्रह्मरथ पुत्र भया ताके चतुर्मुख, ताके हेमरथ, ताके सत्यरथ, ताके पृथुरथ, ताके पयोरथ, ताके दृढरथ, ताके सूर्यरथ, ताके मानधाता, ताके वीरसेन, ताके पृथ्वीमन्यु, ताके कमलबंधु, दीप्तित मानो सूर्य ही है। समस्त मर्यादामें प्रवीण ताके रविमन्यु, ताके बसंत तिलक, ताके कुवेरदत्त, ताके कुन्थुभक्त सो महा कीर्तिका धारी, ताके शतरथ, ताके द्विरदरथ, ताके सिंहदमन, ताके हिरण्यकशिपु, ताके पुञ्जस्थल, ताके ककूस्थल, ताके रघु,महापराक्रमी। यह इक्ष्वाकु वंश श्रीऋषभदेवत प्रवरत्या सो वंशकी महिमा हे श्रेणिक! तोहि कही। ऋषभदेवके वंशमें श्रीराम पर्यंत अनेक बडे बडे राजा भये ते मुनिव्रत धार मोक्षगए। कईएक अहमिंद्र भये, कईएक स्वर्गमें प्राप्त भए। या वंशविषै पापी विरले भए।

बहुरि अयोध्या नगरविषै राजा रघुके अरण्य पुत्र भया,जाके प्रतापकरि उद्यानमें वस्तु होती भई,ताके पृथ्वीमती राणी महा गुणवती महाकांतिकी धरणहारी, महारूपवती, महापतिव्रता, ताके दोय पुत्र होते भए। महा शुभलक्षण एक अनंतरथ दूसरा दशरथ। सो राजा सहस्ररश्मि माहिष्मती नगरीका पति ताकी अर राजा अरण्यकी परम मित्रता होती भई। मानो ये दोनो सौधर्म अर ईशानइन्द्र ही है। जब रावण ने युद्धमें सहस्ररश्मिको जीत्या, अर तान मुनिव्रत धरे सो सहस्ररश्मिके अर अरण्यके यह वचन हुता कि जो तुम वैराग्य धारो तब मोहि जतावना। अर मैं वैराग्य धारूंगा तो तुम्हें जताऊंगा। सो वाने जब वैराग्य धारया तदि अरण्यको जतावा दिया। तदि राजा अरण्यने सहस्ररश्मिको मुनि हुवा जानकरि दशरथ पुत्रको राज्य देय आप अनंतरथ पुत्रसहित अभयसेन मुनिके समीप जिनदीक्षा धारी। महातपकरि कर्मोंका नाशकर मोक्षको प्राप्त भए। अर अनंतरथ मुनि सव परिग्रहरहित पृथ्वीपर विहार करते भए। बाईस परीषहके सहनहारे किसीप्रकार उद्वेगको न प्राप्त भए। तदि इनका अनंतवीर्य नाम पृथ्वी

पर प्रसिद्ध भया । अर राजा दशरथ राज्य कर, सो महासुन्दर शरीर नवयौवनविष अति शोभायमान होता भया । अनेकप्रकार पुष्पनिकरि शोभित मानो पवतका उतग शिखर ही ह ।

अथानतर दभस्थल नगरका राजा कौशल प्रशसायोग्य गुणोका धरणहारा, ताके राणी अमत प्रभाकी पुत्री कौशल्या, ताहि अपराजिता भी कह ह । काहेत कि यह स्त्रीके गुणनिकरि शोभायमान, कामकी स्त्री रति समान महास दर, किसीत न जीती जाय, महारूपवती, सा राजा दशरथने परणी । बहुरि एक कमलसकुल नामा बडा नगर, तहाका राजा सुबधुतिलक, ताके राणी मित्रा, ताके पुत्री सुमित्रा सवगुणनिकरि मडित, महा रूपवती जाहि नेत्र रूप कमलनिकरि देख मन हर्षित होय । पथ्वी पर प्रसिद्ध सो भी दशरथने परणी । बहुरि एक और महाराजा नामा राजा ताकी पत्री सप्रभा, रूप लावण्यकी खानि, जाहि लख लक्ष्मी लज्जावान होय सोहू राजा दशरथने परणी । अर राजा दशरथ सम्यग्दशनको प्राप्त होते भये अर राज्यका परम उदय पाय सो सम्यग्दशनको रत्नो समान जानते भए । अर राज्यको तण समान मानते भए कि जो राज्य न तज तौ यह जीव नरकमें प्राप्त होय, राज्य तज तो स्वग मुक्ति पाव । अर सम्यग्दशनके योगत निसदेह ऊध्वगति ही ह । सो ऐसा जानि राजाके सम्यग्दशनकी दढता होती भई अर जे भगवानके चत्यालय प्रशसायोग्य आग भरत चक्रवर्त्यादिकने कराए हुते तिनमें कईएक ठौर कईएक भगभावको प्राप्त भए हुते सो राजा दशरथने तिनको मरम्मत कराय ऐसे किए मानो नवीन ही ह । अर इन्द्रनिकरि नमस्कार करनेयोग्य महा रमणीक जे तीथकरनिके कल्याणक स्थानक तिनकी रत्ननिके समूह करि यह राजा पूजा करता भया । गौतमस्वामी राजा श्रेणिक सो कह ह-हे भव्यजीव ! दशरथ सारिख जीव परभवमें महाधमको उपाजनकर अति मनोज्ञ देवलोक की लक्ष्मी पायकर या लोकमें नरेंद्र भये ह, महाराज ऋद्धिके भोक्ता सूय समान दशो दिशाविष ह प्रकाश जिनका ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित मग पद्मपुराण सस्कृत ग्र थ नाका भाषा वचनिकाविष राजा सुकौशलका महात्म्य अर तिनके वशविष राजा दशरथकी उत्पत्तिका कथन वणन करने वाला बाईसवा पव पूण भया ॥ २२ ॥

अथानन्तर एक दिन राजा दशरथ महा तेज प्रतापकरि संयुक्त सभामें विराजते हुते। कैसे हैं राजा? जिनेन्द्रकी कथाविषै आसक्त है मन जिनका, और सुरेन्द्र समान है विभव जिनका। ता समय अपने शरीरके तेजकरि आकाशविषै उद्योत करते नारद आए। तब दूरहीसो नारदको देखकर राजा उठकर सनमुख गए। बडे आदरसो नारदकू ल्याय सिंहासनपर विराजमान किए। राजाने नारदकी कुशल पूछी। नारदने कही जिनेन्द्रदेवके प्रसाद करि कुशल है। बहुरि नारदने राजाकी कुशल पूछी, राजाने कही देव धर्म गुरुके प्रसादकरि कुशल है। बहुरि राजाने पूछी—हे प्रभो! आप कौन स्थानकतें आए, इन दिनोमें कहा कहा विहार किया, कहा देख्या? कहा सुन्या? तुमत अढाई द्वीपमें कोई स्थान अगोचर नाहीं। तदि नारद कहते भए। कैसे है नारद? जिनेन्द्रचन्द्रके चरित्र देखकर उपज्या है परमहर्ष जिनको, हे राजन! मैं महा विदेहक्षेत्रनिविषै गया हुता। कैसा है वह क्षेत्र? उत्तम जीवनिकरि भरया है, जहा ठौर ठौर श्रीजिनराजके मंदिर अर ठौर २ महामुनिराज विराजे है, जहा धर्मका बडा उपकार अतिशयकरि उद्योत है। श्रीतीर्थंकरदेव चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेवादि उपजै है। तहा श्रीसीमंधर स्वामीका मैंने पुंडरीकनी नगरीमें तपकल्याणक देख्या। कैसी है पुण्डरीकनी नगरी? नानाप्रकारके रत्ननिकरि जे महल तिनके तेजत प्रकाशरूप है। अर सीमंधरस्वामीके तपकल्याणकविषै नानाप्रकारके देवनिका आगमन भया। तिनके भांतिभांतिके विमान ध्वजा अर छत्रादि करि महाशोभित। अर नाना प्रकारके जे वाहन तिनकरि नगरी पूर्ण देखी। अर जैसा श्रीमुनिसुव्रतनाथका सुमेरु विषै जन्माभिषेक का उत्सव हम सुनै है तैसा श्रीसीमंधरस्वामीके जन्माभिषेकका उत्सव मैंने सुन्या। अर तपकल्याणक तो मैंने प्रत्यक्ष ही देखा। अर नानाप्रकारके रत्ननिकरि जडित जिनमन्दिर देखे, जहाँ महा मनोहर भगवानके बडे बडे बिंब विराजै है, अर विधिपूर्वक निरंतर पूजा होय है। अर महा विदेहतै मैं सुमेरु पर्वत आया। सुमेरुकी प्रदक्षिणा कर सुमेरुके वन, तहा भगवानके जे अकृत्रिम चैत्यालय तिनका दर्शन किया। हे राजन! नन्दनवनके चैत्यालय नानाप्रकारके रत्ननिसू जडे अतिरमणीक मैं देखे। जहा

स्वर्णसे पीत अति देदीप्यमान है सुन्दर हैं मोतियोंके हार अर तोरण जहाँ। जिनमंदिर देखते सूर्यका मंदिर कहा? अर चैत्यालयनिकी वैडूर्य मणिमई भीति देखी, तिनमें गज सिंहादिरूप अनेक चित्राम मंडे हैं, अर जहां देवदेवी संगीत शास्त्ररूप नृत्य कर रहे हैं। अर देवारण्यवनविषै चैत्यालय, तहां मैंने जिनप्रतिमाका दर्शन किया। अर कुलाचलनिके शिखरविषै जिनेन्द्रके चैत्यालय मैं देखे, वंदे। या भांति नारद कही तब राजा दशरथ 'देवेभ्यो नमः' ऐसा शब्द कहकर हाथ जोड सिर नवाय नमस्कार करता भया।

बहुरि नारदने राजाकूं सैन करी तदि राजाने दरबारको कहकर सबको सीख दीनी, आप एकांत विराजे तब नारद कही—हे सुकौशल देशके अधिपति! चित्त लगाय सुन, तेरे कल्याणकी कहूं हूं। मैं भगवानका भक्त जहां जिनमन्दिर होय तहां वंदना करूं हूं। सो लंकामें गया हुता, तहां महामनोहर श्रीशांतिनाथका चैत्यालय वंद्या। सो एक वार्ता विभीषणादिके मुखसे सुनी कि रावणने बुद्धिसार निमित्तज्ञानीको पूछा कि मृत्यु कौन निमित्तत है। तदि निमित्तज्ञानी कही—दशरथका पुत्र अर जनक राजाकी पुत्री इनके निमित्तत तेरी मृत्यु है सुनकर रावण सचिंत भया। तब विभीषण कही—आप चिंता न करहु, दोऊनिके पुत्र पुत्री न होय ता पहिले दोऊनको मैं मारूंगा। सो तिहारे ठीक करनेको विभीषणने हलकारे पठाए हुते, सो वे तिहारा स्थान निरूपादि सब ठीक करगए हैं। अर मेरा विश्वास जान मुझे विभीषणने पूछी कि क्या तुम दशरथ और जनकका स्वरूप नीके जानो हो। तब मैं कही मोहि उनको देखे बहुत दिन भए हैं, अब उनको देख तुमको कहूंगा। सो उनका अभिप्राय खोटा देखकर तुमपै आया। सो जबतक वह विभीषण तिहारे मारनेका उपाय करै ता पहिले तुम आपा छिपाय कहीं बैठ रहो। जे सम्यक्दृष्टि जिनधर्मी देव गुरु धर्मके भक्त हैं। तिन सबनिसों मेरी प्रीति है, तुम सारिखोसे विशेष है। तुम योग्य होय सो करहु, तिहारा कल्याण होहु। अब मैं राजा जनकसे यह वृत्तांत कहने जाऊं हूं। तब राजाने उठ नारदका सत्कार किया। नारद आकाश

के माग होय मिथिलापुरीकी ओर गए जनकको समस्त वत्तात कह्या । नारदको भव्यजीव जिनधर्मी प्राणनिहूत प्यारे ह । नारद तो वत्तात कह देशातरको गए, अर दोनो ही राजावोको मरणकी शका उपजी । राजा दशरथने अपने मत्री समुद्रहृदयको बुलाय एकातमें नारदका सकल वत्तात कह्या । तब राजाके मखत मत्री ये महाभयके समाचार सुन कर स्वामीकी भक्तिविषे परायण, अर मत्रशक्तिविषै महा श्रेष्ठ, राजाकू कहता भया—हे नाथ ! जीतव्यके अर्थ मकल करिए ह । जो त्रिलोकीका राज्य आव अर जीव जाय तो कौन अर्थ ? तात जौ लग म तिहारे वरीनिका उपाय करू तब लग तुम अपना रूप छिपाय कर पथ्वीपर विहार करहु । ऐसा मत्रीने कह्या । तदि राजा देश, भण्डार, नगर याको सोपकर नगरत बाहिर निकसे । राजाके गए पीछे मत्रीने राजा दशरथके रूपका पुतला बनाया, एक चेतना नाही और सब राजाहीके चिह्न बनाए । लाखादि रसके योगकर उसविष रुधिर निरमाप्या । अर शरीरकी कोमलता जसी प्राणधारीके होय तसी ही बनाई । सो महिलके सातवें खणमें सिहासन-विष राजा विराजमान किया सो समस्त लोकनिको नीचेसे मुजरा होय, ऊपर कोई जाने न पाव । राजाके शरीर मे रोग ह पथ्वीपर ऐसा प्रसिद्ध । एक मत्री अर दूजा पूतला बनानेवाला यह भेद जानै । इनहू कू देखकर ऐसा भम उपजै जो राजा ही ह । अर यही वत्तात राजा जनकके भया । जो कोई पडित ह तिनके बुद्धि एकसी होय ह । मत्रीनिकी बुद्धि सबके ऊपर होय विचर है । यह दोनो राजा लोकस्थितिके वेत्ता पथ्वीविष भागे फिर । आपदाकालविष जो रीति बताई ह ता भाति करै । जैस वर्षा-कालमें चाद सूय मेघके जोरसे छिपे रह तस जनक और दशरथ दोऊ छिप रहे ।

यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह—हे मगधदेशके अधिपति ! वे दोऊ बडे राजा, महा सुन्दर ह राजमदिर जिनके, अर महामनोहर देवागना सारिखी स्त्री जिनके, महामनोहर भोगनिके भोक्ता, सो पायनपियादे दलिद्री लोकनिकी नाई , कोई नहीं सग जिनके, अकेले भ्रमते भए । धिक्कार ह ससारके स्वरूपको—ऐसा निश्चयकर जो प्राणी स्थावर जगम सब जीवनिकू अभयदान दे सो आप

भी भयसे कम्पायमान न हो । इस अभयदान समान कोऊ दान नाहीं । जाने अभयदान दिया ताने सब ही दिया । अभयदानका दाता सत्पुरुषनिमें मुख्य है ।

अथानन्तर विभीषणने दशरथ जनकके मारवेकू सुभट बिदा किए । हलकारे जिनके संगमें ते सुभट, शस्त्र है हाथनिमें जिनके, महाक्रूर, छिपे छिपे रात दिन नगरीमें फिरे । राजाके महल अति ऊंचे सो प्रवेश न कर सकें । इनकू दिन बहुत लगे । तब विभीषण स्वयमेव आय महिलमें गीत नाद सुन महलमें प्रवेश किया । राजा दशरथ अंतःपुरके मध्य शयन करता देख्या । विभीषण तो दूर ठाढे रहे अर एक विद्युविलसित नामा विद्याधर ताको पठाया कि याका मस्तक ले आवो । सो आय मस्तक काट विभीषणको दिखाया, अर समस्त राजलोक रोय उठे । विभीषण इनका और जनकका सिर समुद्रविषै डार आप रावणके निकट गया । रावणको हर्षित किया । इन दोनो राजानिकी राणी विलाप करें । फिर यह जानकर कि कृत्रिम पूतला था तब यह संतोषकर बैठ रहीं । अर विभीषण लंका जाय अशुभकर्मके शांतिके निमित्त दान पूजादि शुभक्रिया करता भया । अर विभीषणके चित्त में ऐसा पश्चाताप उपज्या जो देखो मेरे कौन कर्म उदय आया जो भाईके मोहसे वृथा भय मान बापरे रंक भूमिगोचरी मृत्युको प्राप्त किए । जो कदाचित आशीविष (आशीविष सर्प कहिए जिसे देख विष चढे) जातिका सर्प होय तो भी क्या गरुडको प्रहार कर सके ? कहां वह अल्प ऐश्वर्यके स्वामी भूमिगोचरी अर कहां इन्द्र समान शूर वीरताका धरणहारा रावण ? अर कहां मूसा, कहाँ केशरी सिंह, जाके अवलोकनतें माते गजराजनिका मद उतर जाय । कैसा है केशरी सिंह ? पवन समान है वेग जाका । अथवा जा प्राणीको जा स्थानकमें जा कारणकरि जेता दुःख अर सुख होना है सो ताको ताकरि ता स्थानकविषै कर्मनिके वशकरि अवश्य होय है । अर यह निमित्तज्ञानी जो कोऊ यथार्थ जानै तो अपना कल्याण ही क्यो न करे, ताकरि मोक्षके अविनाशी सुख पाइए । निमित्तज्ञानी पराई मृत्युको निश्चय जाने तो अपनी मृत्युके निश्चयसे मृत्युके पहिले आत्मकल्याण क्यो न करे ? निमित्तज्ञानीके कहनेसे मैं मूर्ख

भया। खोटे मनुष्यनिकी शिक्षासे जे मन्दबुद्धि हैं ते अकायविषै प्रवरते हैं। यह लकापुरी पाताल है तलै जाका ऐसा जो समुद्र ताके मध्य तिष्ठै। जो देवनहू को अगम्य, तहां विचारे भूमिगोचरियोके कहांसे गम्य होय ? मैं यह अत्यन्त अयोग्य किया, बहुरि ऐसा काम कबहू न करूं। ऐसी धारणा धार उत्तम दीप्तिसे युक्त जैसे सूर्य प्रकाश रूप विचरै तैसे मनुष्यलोकमें रमते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषा वचनिकाविषै राजा दशरथ अर जनकको विभीषणकृत भय वर्णन करने वाला तेईसवां पर्व पूर्ण भया॥ २३॥

अथानन्तर गौतम स्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक ! अरण्यके पुत्र दशरथने पृथ्वीपर भ्रमण करते केकई को परणा, सो कथा महा आश्चर्यका कारण तू सुन। उत्तर दिशाविषै एक कौतुकमंगल नामा नगर, ताके पर्वत समान ऊंचा कोट, तहां राजा शुभमति राज करै। सो वह शुभमति नाममात्र नाहीं, यथार्थ शुभमति ही है। ताकी राणी पृथुश्री गुण रूप आभरणनिकरि मंडित, ताके केकई पुत्री, द्रोणमेघ पुत्र भए, जिनके गुण दशोदिशामें व्याप्त रहे। केकई अतिसुन्दर, सर्व अंग मनोहर, अद्भुत लक्षणनिकी धरणहारी, सर्व कलाओंकी पारगामिनी अति शोभती भई। सम्यग्दर्शनकरि संयुक्त श्राविकाके व्रत पालनहारी, जिनशासनकी वेत्ता, महाश्रद्धावती तथा सांख्य पातंजल वैशेषिक वेदांत न्याय मीमांसा चार्वाकादिक परशास्त्रनिके रहस्यकी ज्ञाता तथा लौकिकशास्त्र शृंगारादिक तिनका रहस्य जानै, नृत्यकलामें अति निपुण, सर्व भेदोंसे मंडित जो संगीत सो भलीभांति जानै। उर कंठ सिर इन तीन स्थानकसे स्वर निकसे हैं अर स्वरोंके सात भेद हैं—षडज १, ऋषभ २, गांधार ३, मध्यम ४, पंचम ५, धैवत ६ निषाद ७ सो केकईको सर्वगम्य अर तीन प्रकारका लय शीघ्र १, मध्यम २, विलम्बित २, अर चार प्रकारका ताल स्थायी १ संचारी २ आरोहक ३ अवरोहक ४, अर तीन प्रकारकी भाषा संस्कृत १ प्राकृत २ शौरसेनी ३, स्थाईचालके भूषण चार प्रसंगादि १, प्रसन्नान्त २, मध्यप्रसाद ३, प्रसन्नाद्यवसान ४

अर सचारीके छहभूषण निवत्त १, प्रस्थिल २, विदु ३, प्रखोलित ४, तमोमद ५, प्रसन्न, ६, आरोहणका एक प्रसन्नादि भूषण अर अवरोहणके दो भूषण प्रसन्नान्त १, कुहर २, ये तेरह अलकार अर चार प्रकार वादित्र ते ताररूप सो तात १ और चामके मढे ते आनद्ध २ अर वासुरी आदि फूकके बाजे वे सुषिर ३ अर कासीके बाजे वे घन ४ ये चार प्रकारके वादित्र जस ककई बजाव तस और न बजाव। गीत नत्य वादित्र ये तीन भेद ह सो नत्यमें तीनो आए। अर रसके भेद नव—श्रगार १ हास्य २ करुणा ३ वीर ४, अदभुत ५, भयानक ६, रौद्र ७, वीभत्स ८, शात ९। तिनके भेद जस केकई जान तस और कोऊ न जान। अक्षर मात्रा अर गणितशास्त्रमें निपुण, गद्यपद्य सवमें प्रवीण, व्याकरण, छद, अलकार नाममाला, लक्षणशास्त्र तक, इतिहास अर चित्रकलामे अतिप्रवीण, तथा रत्नपरीक्षा अश्व परीक्षा नरपरीक्षा शस्त्रपरीक्षा, गजपरीक्षा, वक्षपरीक्षा, वस्त्रपरीक्षा, सुगधपरीक्षा, सुगन्धादिक द्रव्य निका निपजावना इत्यादि सव बातनि मे प्रवीण, ज्योतिष विद्यामें निपुण, बाल वद्ध तरुण मनुष्य तथा घोडे हाथी इत्यादि सबके इलाज जान, मत्र औषधादि सवमे तत्पर, वद्यविद्यानिधान, सव कलामें सावधान, महा शीलवती, महामनोहर युद्धकलामे अतिप्रवीण, श्रगारादि कलामे अति निपुण, विनय ही ह आभूषण जाके, कला, अर गुण अर रूपमे एसी कन्या और नाहीं। गौतम स्वामी कह ह—हे श्रेणिक! बहुत कहवेकर कहा? केकई के गणनिका वणन कहातक करिए। तब ताके पिताने विचारा कि ऐसी कन्या के योग्य वर कौन? स्वयवरमडप करिये, तहा यह आप ही वर। ताने हरिवाहन आदि अनेक राजा स्वयवरमडपमे बुलाए सो विभवकर सयुक्त आये। तहा भमते सते जनकसहित दशरथहू आए। सो यद्यपि इनके निकट राज्यका विभव नाही तथापि रूप अर गुणनिकर सव राजावोत अधिक है। सव राजा सिहासन पर बठ अर केकईका द्वारपाली सबनक नाम ग्राम गुण कह ह। सो वह विवेकिनी साधुरूपिणी मनुष्योक लक्षण जाननेवाली प्रथम तो दशरथकी ओर नेत्ररूप नीलकमलकी माला डारी। बहुरि वह सुन्दर बुद्धिकी धरनहारी जसे राजहसनी बगुलोके मध्य बठे जो राजहस उसकी ओर जाय

तसे अनेक राजावोके मध्य बठा जो दशरथ ताकी ओर गई । सो भावमाला तो पहिले ही डारी हुती, अर द्रव्यरूप जो रत्नमाला सो भी लोकाचारके अर्थ दशरथके गलेमें डारी । तदि कईएक नृप जे न्यायवत बठे हुते ते प्रसन्न भए । अर कहते भए कि जसी कन्या थी वसा ही योग्य वर पाया । अर कईएक विलखे होय अपने देश उठ गए । अर कईएक जे अति धीठ थे ते क्रोधायमान होय युद्धकू उद्यमी भये । अर कहते भए जे बडे बडे वशके उपजे, अर महाऋद्धिके मडित ऐसे नृप उनको तजकर यह कन्या, नहीं जानिये कुलशील जिसका ऐसा यह विदेशी, उसे कसे वर ? खोटा ह अभिप्राय जाका ऐसी कन्या ह, इसलिए एक विदेशीको यहासे काढकर कन्याके केश पकड बलात्कार हरलो । ऐसा कहकर वे दुष्ट कईएक युद्धको उद्यमी भये । तदि राजा शुभमति अति व्याकुल होय दशरथकू कहता भया—हे भव्य ! म इन दुष्टनिकू निवारू हू । तुम इस कन्याको रथमें चढाय अन्यत्र जावो । जैसा समय देखिये तसा करिए, सब राजनीतिमें यह बात मुख्य ह । या भाति जब ससुरने कह्या तदि राजा दशरथ अत्यन्त धीर ह बुद्धि जिनकी, हँसकर कहते भये—हे महाराज ! आप निश्चित रहो । देखो इनसबनिको दशो दिशाको भगाऊ । ऐसा कहकर आप रथविषे चढे और केकईको चढाय लीनी । कसा ह रथ ? जाके महामनोहर अश्व जुडे ह । कसे ह दशरथ ? मानो रथपर चढे शरदऋतुके सूर्य ही हैं । अर केकई घोडोकी बाघ सभारती भई । केकई कसी ह ? महापुरुषार्थके स्वरूपकू धर युद्ध की मूर्ति ही है । पतिसू विनती करती भई—हे नाथ ! आपकी आज्ञा होय और जाकी मृत्यु उदय आई होय उसहीकी तरफ रथ चलाऊ । तदि राजा कहते भये—हे प्रिय ! गरीबनिके मारवेकर क्या ? जो इस सब सेनाका अधिपति हेमप्रभ ह, जाके सिर पर चन्द्रमा सारिखा सफेद छत्र फिर है ताकी तरफ रथ चलो । हे रण-पण्डिते ! आज म इस अधिपतिहीको मारूगा । जब दशरथने ऐसा कह्या तदि वह पतिकी आज्ञा प्रमाण वाहीउर रथ चलावती भई । कसा ह रथ ? ऊचा ह सफेदछत्र जाके, अर तरगरूप ह महा ध्वजा जाके । रथविषे ये दोनो दम्पती देवरूप विराजे ह । इनका रथ अग्नि समान ह, जे या रथकी

और आए वे हजारो पतगकी न्याई भस्म भए। दशरथके चलाए जे वाण तिनसे अनेक राजा बींधे गए। सो क्षणमात्रमे भागे। तब हेमप्रभ जो सबनिका अधिपति था। उसके प्रेरे, अर लज्जावान होय दशरथसू लडवेको हाथी घोडा रथ पयादोसे मण्डित आए, किया है शूरपनेका महा शब्द जिनने, तोमर जातिके हथियार बाण चक्र कनक इत्यादि अनेक जातिके शस्त्र, अकेले दशरथ पर डारते भए। सो बडा आश्चर्य है। दशरथ राजा एक रथका स्वामी था सो युद्ध समय मानो असख्यात रथ होयगए। अपने वाणनि करि समस्त वरियनिक बाण काट डाले। अर आप जे बाण चलाए वे काहूकी दष्टिमें न आए और शत्रुवोके लागे। सो राजा दशरथ ने हेमप्रभको क्षणमात्रमें जीत लिया, ताकी ध्वजा छेदी, छत्र उडाया और रथके अश्व घायल किए रथ तोड डाला, रथत नीचे डार दिया। तबि वह राजा हेमप्रभ और रथ पर चढकर भयकर कपायमान होय अपना यश काला कर शीघही भाग्या। दशरथने आपको बचाया स्त्रीकू बचाई, अपने अश्व बचाये, बरियोके शस्त्र छेदे अर बरियोको भगाया। एक दशरथ अनत रथ जस काम करता भया। एक दशरथ सिंह समान उसको देख सव योधा सवदिशाको हिरण समान हो भागे। अहो धन्य शक्ति या पुरुषकी अर धन्य शक्ति याकी, ऐसा शब्द सुसुरकी सेनामें और शत्रुवोकी सेनामे सवत्र भया। अर बदीजन बिरद बखानते भए। राजा दशरथने महाप्रतापकू धर कौतुकमगल नगरविषे केकईसू पाणिग्रहण किया। महामगलाचार भया। राजा केकईको परणकर अयोध्या आए और जनक भी मिथिलापुर गए। फिर इनका जन्मोत्सव और राज्याभिषेक विभूतिसे भया अर समस्त भय रहित इन्द्र समान रमते भए।

अथानन्तर सव राणियोके मध्य राजा दशरथ केकईसू कहते भए—हे चद्रवदनी। तेरे मनमें जो वस्तुकी अभिलाषा होय सो माग। जो तू माग सोई देऊ। हे प्राणप्यारी! तेरेसे अति प्रसन्न भया हू, जो तू अतिविज्ञानसे उस युद्धमे रथको न प्रेरती तो एकसाथ एते बरी आये थे तिनको म कसे जीतता? जब रात्रिको अन्धकार जगतमें व्याप रह्या ह जो अरुण सारिखा सारथी न होय तो उसे सूय कसे जीत? या

भाति ककईके गुण वणन राजाने किये तदि वह पतिव्रता लज्जाके भार कर अधोमुख होयगई। राजाने बहुरि कही वर माग। तब केकईने बीनती करी, हे नाथ! मेरा वर आपके धरोहर रह, जा समय मेरी इच्छा होयगी ता समय लू गी। तब राजा प्रसन्न होय कहते भये—हे कमलवदनी मृगनयनी! श्वेतता श्यामता आरक्तता ये तीन वणको धरे अदभुत है नेत्र जाके, अदभुत बुद्धि तेरी ह, महा नरपतिकी पुत्री, अति नयकी वेत्ता, सवकलाकी पारगामिनी, सव भोगोपभोगकी निधि, तेरा वर म धरोहर राख्या, तू जब जो मागेगी सोही म दू गा। अर सबही राजलोक केकईको देख हषको प्राप्त भये और चित्तमें चितवते भये यह अदभुत बुद्धिनिधान ह सो कोई अपूव वस्तु मागेगी अल्पवस्तु कहा मागे।

अथानन्तर गौतमस्वामी श्रेणिकसे कहे ह—हे श्रेणिक! लोकका चरित्र म तुझे सक्षेपताकर कह्या। जो पापी दुराचारी ह वे नरक निगोदके परम दु ख पाव ह। अर जे धर्मात्मा साधुजन ह वे स्वगमोक्ष में महा सुख पाव ह। भगवानकी आज्ञाके अनुसार बडे सतपुरुषनिके चरित्र तुझे कहे। अब श्रीराम चन्द्रजीकी उत्पत्ति सुन। कसे ह श्रीरामचन्द्रजी? महा उदार, प्रजाके दुखहरणहारे, महान्यायवन्त, महाधमवत, महाविवेकी, महाशूरवीर, महाज्ञानी, इक्ष्वाकुवशका उद्योत करणहारे बडे सत्पुरुष हैं।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष रानी केकईक राजा दशरथ का वरदान कथन वणन करने वाला चौवोसवा पव पूण भया॥ २४॥

अथानन्तर जाहि अपराजिता कह ह ऐसी जो कौशल्या सो रत्नजडित महलविष महासुन्दर सेज पर सूती थी सो रात्रिके पिछले पहिर अतिशयकरि अद्भुत स्वप्न देखती भई। उज्ज्वल हस्ती इन्द्रके ऐरावत हस्तीसमान १ और महाकेसरो सिह २, अर सूय ३ तथा सवकला पूण चन्द्रमा ४ ये पुराण पुरुषोके गभमें आवनेके अदभुत स्वप्न देख आश्चयको प्राप्त भई। फिर प्रभातके वादित्र और मगल शब्द सुनकर सेजसे उठी। प्रभात क्रियासे हषकू प्राप्त भया ह मन जाका, महा विनयवती, सखीजन

मडित भरतारके समीप जाय सिहासन पर बठी । कसी ह राणी ? सिहासनको शोभित करणहारी, हाथ जोड नमीभूत होय महामनोहर स्वप्ने जे देखे तिनका वत्तात स्वामीसू कहती भई । तदि समस्त विज्ञानके पारगामी राजा स्वप्ननिका फल कहते भए—हे काते ! परम ग्राश्चयकारी तेरे मोक्षगामी पुत्र, ग्रन्तर वाहच शत्रुवोका जीतनहारा महापराक्रमी होयगा । रागद्वेष मोहादिक ग्रतरगके शत्रु कहिये, ग्रर प्रजाके बाधक दुष्ट भूपति बहिरगशत्रु कहिये । या भाति राजा कही तदि राणी ग्रति हर्षित होय ग्रपने स्थानक गई, मद मुलकन रूप जो केश उनसे सयुक्त ह मुखकमल जाका । ग्रर राणी केकई पति सहित श्रीजिनेद्रके जे चत्यालय तिनमे भाव सयुक्त महापूजा करावती भई । सो भगवानकी पूजाके प्रभावस राजाका सव उद्वेग मिटा, चित्तमें महा शाति होती भई ।

ग्रथानन्तर राणी कौशल्याके श्रीरामका जन्म भया । राजा दशरथने महा उत्सव किया । छत्र चमर सिंहासन टार बहुत द्रव्य याचकनिको दिए । उगते सूयसमान ह वण रामका, कमल समान ह नेत्र ग्रौर लक्ष्मीसे ग्रालिगित ह वक्षस्थल जाका, तात माता पिता सव कुटुम्बने इनका नाम पदम धरा । फिर राणी सुमित्रा ग्रति सुन्दर ह रूप जाका, सो महा शभस्वप्न ग्रवलोकन कर ग्राश्चयको प्राप्त होती भई । वे स्वप्न कसे ? सो सुनो—एक बडा केहरी सिह देख्या, लक्ष्मी ग्रौर कीर्ति बहुत ग्रादरसे सुन्दर जलके भरे कलश, कमलसे ढकें, उनसे स्नान कराव ह । ग्रौर ग्राप समित्रा बड पहाडके मस्तकपर बठी ह । ग्रर समुद्र पयत पथ्वीको देख ह । ग्रर देदीप्यमान ह किरणनिके समूह जाक, ऐसा सूय देख्या, ग्रर नाना प्रकारके रत्ननिकरि मडित चक्र देख्या । ये स्वप्न देख प्रभातके मगलीक शब्द भए तब सेजसे उठकर प्रात क्रियाकर, बहुत विनयसयुक्त पतिके समीप जाय, मिष्टबानीकरि स्वप्ननिका वत्तात कहती भई । तदि राजा कही—हे वरानने कहिए सुन्दर ह वदन जाका ! तेरे पथ्वीपर प्रसिद्ध पुत्र होयगा, शत्रुवोके समूहका नाश करनहारा, महातेजास्वी, ग्राश्चयकारी ह चेष्टा जाकी । ऐसा पतिने कहा तदि वह पतिवता हषकरि भरचा ह चित्त जाका, ग्रपने स्थानक गई । सव लोकनिको ग्रपन सेवक जानती भई । फिर

याके परमज्योतिका धारी पुत्र होता भया । मानो रत्नोकी खानविषै रत्न ही उपज्या । सो जैसा श्रीराम के जन्मका उत्सव किया हुता तैसा ही उत्सव भया । जा दिन सुमित्राके पुत्रका जन्म भया, ताही दिन रावणके नगरविषै हजारो उत्पात होते भए । अर हितुवोके नगरविषै शुभ शकुन भए । इन्दीवर कमल समान श्यामसुन्दर, अर कांतिरूप जलका प्रवाह, भले लक्षणनिका धरणहारा, तात माता पिताने लक्ष्मण नाम धरचा । राम लक्ष्मण ये दोऊ बालक महामनोहर रूप, मूंगा समान है लाल होठ जिनके, अर लाल कमल समान है कर अर चरण जिनके, माखनहूतै अतिकोमल है शरीरका स्पर्श जिनका, अर महासुगन्ध शरीर । ये दोऊ भाई बाललीला करते कौनके चित्तकूं न हरैं ? चन्दनकरि लिप्त है शरीर जिनका, केसरका तिलक किये कैसे सोहैं मानो विजयार्धगिरि अर अंजनगिरि ही, स्वर्णके रससे लिप्त है शरीर जिनका, अनेक जन्मका बढा जो स्नेह तातै परम स्नेहरूप चन्द्र सूर्य समान हो है । महल माहीं जावैं तब तो सब स्त्रीजनको अतिप्रिय लागैं । अर बाहिर आवैं, तब सब जननिको प्यारे लागैं । जब ये वचन बोलैं तब मानो जगतको अमृतकर सींचै है । अर नेत्रनिकर अवलोकन करै है, तब सबनिको हर्ष करि पूर्ण करै है । सबनिके दारिद्र हरणहारे, सबके हितु, सबके अंतःकरण पोषणहारे, मानो ये दोऊ हर्षकी अर शूरवीरताकी मूर्ति ही है, अयोध्यापुरीविषै सुखसूं रमते भए । कैसे है दोनो कुमार ? अनेक सुभट करै है सेवा जिनकी, जैसे पहले बलभद्र विजय अर वासुदेव त्रिपृष्ट होते भये तिन समान है चेष्टा जिनकी । बहुरि केकई को दिव्यरूपका धरणहारा महाभाग्य पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भरत नामा पुत्र भया । बहुरि सुप्रभाके सब लोकमें सुन्दर, शत्रुवोका जीतनहारा शत्रुघ्न ऐसा नाम का पुत्र भया । अर रामचन्द्रका नाम पदम तथा बलदेव अर लक्ष्मणका नाम हरि अर वासुदेव अर अर्द्धचक्री भी कहै है । एक दशरथकी जो चार राणी सो मानो चार दिशा ही है, तिनके चार ही पुत्र समुद्र समान गम्भीर, पर्वत समान अचल, जगतके प्यारे । इन चारो ही कुमारनिको पिता विद्या पढावनके अर्थि योग्य पाठकको सौंपते भए ।

अथानन्तर कापिल्य नामा नगर अतिसुन्दर, तहां एक शिवी नामा ब्राह्मण, ताकी इषु नामा स्त्री, ताके अरि नामा पुत्र सो महा अविवेकी अविनयी, माता पिताने लडाया सो महा कुचेष्टाका धरणहारा, हजारो उलहनोका पात्र होता भया। यद्यपि द्रव्यका उपार्जन, धर्मका संग्रह, विद्याका ग्रहण, वा नगरमें ये सब ही बाते सुलभ हैं परन्तु याको विद्या सिद्ध न भई। तदि माता पिता विचारी विदेशमें याहि सिद्धि होय। यह विचार खेदखिन्न होय घरत निकास दिया, सो महा दुखी होय केवल वस्त्र याके पास सो यह राजगृह नगरमें गया। तहां एक वैवस्वत नामा धनुर्विद्याका पाठी महापंडित, ताके हजारो शिष्य विद्याका अभ्यास करें। ताके निकट ये अरि यथार्थ धनुषविद्याका अभ्यास करता भया। सो हजारो शिष्यनिविषै यह महाप्रवीण होता भया। ता नगरका राजा कुशाग्र सो ताके पुत्र भी वैवस्वतके निकट बाणविद्या पढे सो राजाने सुनी कि एक विदेशी ब्राह्मणका पुत्र आया है जो राजपुत्रनितैं अधिक बाणविद्याका अभ्यासी भया। सो राजा मनमें रोष किया। जब यह बात वैवस्वतने सुनी तब अरिको समझाया, कि तू राजाके निकट मूर्ख हो जा, विद्या मत प्रकाश। सो राजाने धनुषविद्याके गुरुको बुलाया। जो मैं तेरे सब शिष्यनिकी विद्या देखूंगा। तब सब शिष्यनिको लेयकर गया। सब ही शिष्यनि यथायोग्य अपनी अपनी बाणविद्या दिखाई, निशाने बींधे, ब्राह्मणका जो पुत्र अरि, ताने ऐसे बाण चलाए सो विद्यारहित जाना गया। तब राजा जानी, याकी प्रशंसा काहूने झूठी कही। तब वैवस्वतको सब शिष्यनि सहित सीख दीनी। तब अपने घर आय वैवस्वतने अपनी पुत्री अरिको परणाय विदा किया, सो रात्रि ही पयाणकर अयोध्या आया, राजा दशरथसो मिल्या, अपनी बाणविद्या दिखाई। तब राजा प्रसन्न होय अपने चारो पुत्र बाणविद्या सीखनेको याके निकट राखे। ते बाणविद्याविषै अतिप्रवीण भए। जैसे निर्मल सरोवरमें चन्द्रमा की कांति विस्तारको प्राप्त होय तैसे इनविषै बाणविद्या विस्तारको प्राप्त भई। और भी अनेक विद्या गुरुसंयोगतैं तिनको सिद्ध भई। जैसे काहू ठौर रत्न मिले होवें, अर ढकनेसे ढके होवें, सो ढकना उघाडे प्रकट होय, तैसे सब

बिद्या प्रकट भइ । तब राजा अपने पुत्रनिकू सव शास्त्रविष अति प्रवीणता देख, अर पुत्रोका विनय उद्दार चेष्टा अवलोकन कर अति प्रस न्न भया । इनके सव विद्याके गुरुवोकी बहुत सन्मानता करी । राजा दशरथ गुणोके समूहसे युक्त, महाज्ञानीने जो उनकी वाछा हुती तात अधिक सपदा दीनी, दान विष विख्यात ह कीर्ति जाकी । केतेक जीव शास्त्रज्ञानको पायकर परम उत्कष्टताको प्राप्त होय हैं, अर कईएक जसेके तसे ही रह ह, अर कईएक विषमकमके योगत मदकरि आधे होय ह । जस सूय की किरण स्फटिकगिरिके तटविष अति प्रकाशको धर ह, और स्थानकविष यथास्थित प्रकाशको धर ह अर उल्लुवोके समूहमे अतितिर्मिररूप होय परणव ।

इति श्रीरविषेण चायविरचित महापद्मपु ाण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविप चा र भाईनिक ज मका वणन करनेवाला प चोसवा पव पूण भया ॥२५॥

अथानन्तर गोतम स्वामी राजा श्रणिकत कह ह—हे श्रे णिक ! अब जनकका कथन सनहु । राजा जनकको स्त्री विदेहा, ताहि गभ रह्या । सो एक देवके यह अभिलाषा हुई कि जो याके बालक होय सो म ले जाऊ । तब श्रे णिकने पूछी हे नाथ ! वा देवके ऐसी अभिलाषा काहेत उपजी ? सो म सुना चाहू हू । तदि गौतम स्वामी कहते भए—हे राजन ! चक्रपुर नामा एक नगर ह । तहा चक्रध्वज नामा राजा, ताके राणी मनस्विनी, तिनके पुत्री चित्तोत्सवा, सो कुवारी चटशालामें पढे । अर राजाका पुरोहित धूमकेश, ताके स्वाहा नामा स्त्री, ताका पुत्र पिगल सो भी चटशालामें पढे । सो चित्तोत्सवा का अर पिगलका चित्त मिल गया । सो इनकू विद्याकी सिद्धि न भई । जिनका मन कामबाणकरि बेधा जाय तिनकू विद्या अर धमकी प्राप्ति न होय ह । प्रथम स्त्री पुरुषका ससग होय बहुरि प्रीति उपज, प्रीतितैं परस्पर अनुराग बढे, बहुरि विश्वास उपज, तार्कार विकार उपज । जस हिंसादिक पच पापनिकरि अशुभकम बध तस स्त्रीसागत काम उपज ह ।

अथानन्तर वह पापी पिंगल चित्तोत्सवाकू हर ले गया, जसे कीर्तिको अपयश हर ले जाय। जब दूर देशनिविष हर लेगया तदि सब कुटुम्बके लोकनि जानी, अपने प्रमादके दोषकरि ताने वह हरी ह। जस अज्ञान सगतिको हर तस वह पिंगल कन्याकू चोरीकरि हर ले गया। परन्तु धनरहित शोभै नाहीं। जस लोभी धमर्वजित तष्णा करि न सोह। सो यह विदग्ध नगरमें गया। तहा अन्य राजानिको गम्यता नाही। सो निधन नगरके बाहिर कुटी बनायकर रहया। ता कुटीके किवाड नाहीं। अर यह ज्ञान विज्ञान रहित तण काष्ठादिकका सग्रहकर विक्रयकर उदर भर, दारिद्रके सागरमें मग्न सो स्त्रीका अर आपका उदर महा कठिनतासू भर। तहा राजा प्रकाशसिह, अर राजी प्रवरावलीका पुत्र जो राजा कुण्डलमण्डित, सो याकी स्त्रीकू देख, शोषण-सतापक-उच्चाटन-वशीकरण-मोहन ये कामके पच बाण इनकरि बेध्या गया। ताने रात्रिको दूती पठाई सो चित्तोत्सवाको राजमदिरमें ले गई। जस राजा सुमुखके मदिर विष दूती वनमालाको लेगई हुती। सो कुण्डलमण्डित वामहित सुखसू रम।

अथानन्तर वह पिंगल काष्ठका भार लेकर घर आया। सो सुन्दरीकू न दखकर अतिकष्टके समुद्रमें डूबा, विरहकरि महा दुखित भया काहू ठौर सुख न पाव। चक्रविष आरूढ समान याका चित्त व्याकुल भया। हरी गई ह भार्या जाकी ऐसा जो यह दीन ब्राह्मण सो राजाप गया और कहता भया-हे राजन! मेरी स्त्री तिहारे राजमें चोरी गई। जे दरिद्री आर्तिवत भयभीत स्त्री वा पुरुष उनका राजा ही शरण ह। तब राजा धूत, सो राजाने मत्रीको बुलाय झूठमूठ कहा- याकी स्त्री चोरी गई ह ताहि पदा करो, ढील मत करो। तब एक सेवकने नेत्रोकी सन मार कर झूठ कहा। ह देव! म या ब्राह्मणकी स्त्री पोदनापुरके मागमे पथिकनिके साथ जाती देखी, सो आर्यिकानिक मध्य तप करवेको उद्यमी ह, तात हे ब्राह्मण! तू ताहि लाया चाहे तो शीघ ही जा, ढील काहेको कर। ताका अवार दीक्षा धरनेका समय कहा? तरुण ह शरीर जाका, अर महा श्रेष्ठ स्त्रीके गुणनिसे पूण ह। ऐसा जब झूठ कहा तब ब्राह्मण गाढी कमर बाध शीघ वाकी ओर दौडया, जसे तेज घोडा शीघ दौडे। सो पोदनापुरमें चैत्यालय तथा

उपवनादि वनमें सवत्र ढूंढी, काहू ठौर न देखी। तब पाछा विदग्धनगरमें आया। सो राजाकी आज्ञातैं क्रूर मनुष्योने गलहटा देय लष्टमुष्टि प्रहार कर दूर किया। ब्राह्मण स्थानभ्रष्ट भया, क्लेश भोगा, अपमान लहा, मार खाई। एते दुःख भोग कर दूर देशांतर उठ गया। सो प्रिया विना याको किसी ठौर सुख नाहीं। जैसे अग्निमें पडा सर्प मूसै तैसे यह रात दिन मूसता भया। विस्तीर्ण कमलनिका वन याहि दावानल समान दीखे अर सरोवर अवगाह करता विरहरूप अग्निसे बलै। या भांति यह महा दुखी पृथ्वीविषै भ्रमण करै। एक दिन नगरसे दूर वनमें मुनि देखे। मुनिका नाम आयगुप्ति बडे आचार्य, तिनके निकट जाय हाथ जोड नमस्कार कर धर्म श्रवण करता भया। धर्म श्रवण कर याको वैराग्य उपजा। महा शांतचित्त होय जिनेंद्रके मार्गकी प्रशंसा करता भया। मनमें विचारै है—अहो यह जिनराजका मार्ग परम उत्कृष्ट है। मैं अंधकारमें पडा हुता, सो यह जिनधर्मका उपदेश मेरे घटमें सूर्य समान प्रकाश करता भया। मैं अब पापोंका नाश करनहारा जो जिनशासन ताका शरण लेऊं। मेरा मन और तन विरहरूप अग्निमें जरै है सो मैं शीतल करूं। तब गुरुकी आज्ञातैं वैराग्यको पाय, परिग्रहका त्यागकर दिगम्बरी दीक्षा धरता भया। पृथ्वीपर विहार करता, सर्व संगका परित्यागी नदी पर्वत समान वन उपवनोंमें निवास करता, तपकर शरीरका शोषण करता भया। जाके मनको वर्षाकालमें अति वर्षा भई तो भी खेद न उपज्या, और शीतकालमें शीत वायुकरि जाका शरीर न कांपा और ग्रीषम ऋतुमें सूर्यकी किरण कर व्याकुल न भया। याका मन विरहरूप अग्निकर जला हुता सो जिनवचनरूप जलकी तरंगकरि शीतल भया। तपकर शरीर अधदग्ध वृक्षके समान होय गया।

अब विदग्धपुरका राजा जो कुण्डलमंडित ताकी कथा सुनहु। राजा दशरथका पिता अरण्य अयोध्यामें राज्य करै। सो यह कुण्डलमंडित पापी गढके बलकर अरण्यके देशको विराधै। जैसे कुशील पुरुष मर्यादा लोप करै तैसे यह ताकी प्रजाको बाधा करै। राजा अरण्य बडा राजा ताके बहुत देश। सो याने कईएक देश उजाडे, जैसे दुर्जन गुणोंको उजाडै, अर राजाके बहुत सामंत विराधे जैसे कषाई

जीवनिके परिणाम विराध, अर योगी कषायोका निग्रह कर, तस याने राजासे विरोध कर अपने नाशका उपाय किया। सो यद्यपि यह राजा अरण्यके आगे रक ह तथापि गढके बलसे पकडा न जाय। जस मूसा पहाडके नीचे जो बिल तामे बठ जाय तब नाहर क्या कर ? सो राजा अरण्यको या चिता से रात दिन चन न पडे, आहारादिक शरीरकी क्रिया अनादरसे कर। तब राजाका बालचन्द्र नामा सेनापति सो राजाको चितावान दख पूछता भया—हे नाथ ! आपको व्याकुलताका कारण कहा ? जब राजाने कुण्डलमडितका वत्तात कहा तब बालचन्द्रने राजासे कही आप निश्चित होवो, उस पापी कु डलमडितको बाधकर आपक निकट ले आऊ। तब राजाने प्रसन्न होय बालचन्द्रको विदा किया। चतुरग सेना ले बालचन्द्र सेनापति चढ्या सो कण्डलमडित मूख चित्तोत्सवास आसक्तचित्त सव राज्य चेष्टारहित महाप्रमादमें लोन था। नही जाना ह लोकका वत्तात जाने वह कु डलमडित, नष्ट भया ह उद्यम जाका। जो बालचन्द्रने जायकर क्रीडामात्रमें जस मगको बाधे तसे बाध लिया अर उसके सव राज्यमे राजा अरण्यका अधिकार किया, अर कु डलमडितको राजा अरण्यके समीप लाया। बालचन्द्र सेनापतिने राजा अरण्यका सव देश बाधा रहित किया। राजा सेनापतिसे बहुत हर्षित भया अर बहुत बधारा, अर पारितोषिक दिये, अर कु डलमडित अन्यायमागत राज्यसे भ्रष्ट भया, हाथी घोडे रथ पयादे सब गए, शरीरमात्र रह गया, पयादे फिरें सो महादुखी पथ्वीपर भ्रमण करता खेदखिन्न भया। मनमे बहुत पछताव जो म अन्यायमार्गीने बडोसे विरोधकर बुरा किया। एक दिन यह मुनियोके आश्रम जाय आचायको नमस्कारकर भावसहित धर्मका भेद पूछता भया। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकत कह ह—हे राजन ! दुखी दरिद्री कुटुम्बरहित व्याधिकरि पीडित तिनमैं काहू एक भव्यजीवके धर्म बुद्धि उपज ह। ताने आचायसू पूछा—हे भगवन ! जाकी मुनि होनेकी शक्ति न होय सो गहस्थाश्रममे कसे धर्मका साधन कर ? आहार भय मैथुन परिग्रह यह चार सज्ञा, तिनमे तत्पर यह जीव कसे पापनिकरि छूट? सो मैं सुना चाहू हू, आप कपाकर कहो। तब गुरु कहते भये—धर्म जीवदयामई ह। ये सब प्राणी

अपनी निंदाकर अर गुरुनिके पास आलोचनाकर पापत छूट है। तू अपना कल्याण चाहे है, अर शुद्ध कर्मकी अभिलाषा कर है तो हिंसाका कारण महाघोरकर्म लहू अर वीयसे उपजा ऐसा जो मास ताका भक्षण सवथा तज। सब ही ससारी जीव मरणत डर है। तिनके मासकर जे अपने शरीरको पोखे हैं ते पापी नि सदेह नरकमें पडेंगे। जे मासका भक्षण कर है अर नित्य स्नान कर है तिनका स्नान वथा है। अर मू ड मुडाय भेष लिया सो भेष भी वथा है। अर अनेक प्रकारके दान उपवासादिक यह मासाहारीको नरकसे नाहीं बचा सक हैं। या जगतमे ये सब ही जातिके जीव पूवजन्मम ये या जीवके बाधव भए हैं। तात जो पापी मासका भक्षण कर है ताने तो सब बाधव भखे। जो दुष्ट निदई मच्छ मृग पक्षियोको हन हैं अर मिथ्यामागमें प्रवरत हैं सो मधु मासके भक्षणत महाकुगतिविष जाव है। यह मास वक्षनितें नाहीं उपज है, भूमित नाहीं उपज है, अर कमलकी न्याइ जलसे नाहीं निपज है, अथवा अनेक वस्तुनिके योगत जैस औषधि बन है तस मासकी उत्पत्ति नाहीं होय है। दुष्ट जीव, निदयी वा गरीब बडा वल्लभ है जीतव्य जिनको, ऐसे पक्षी मग मत्स्यादिक तिनको हन कर मॉस उपजाव है। सो उत्तम जीव दयावान नाहीं भख है। अर जिनके दुग्धकरि शरीर वद्धिको प्राप्त होय ऐसी गाय भस छेरी तिनके मृतक शरीरको भख है अथवा मार मारकर भख है, तथा तिनके पुत्र पौत्रादिकको भख है तें अधर्मी महानीच नरक निगोदके अधिकारी हैं। जो दुराचारी मास भख है ते माता पिता पुत्र मित्र सहोदर सब ही भख। या पृथ्वीके तले भवनवासी अर व्यतर देवनिके निवास हैं, अर मध्यलोकमें भी हैं। ते दुष्ट कर्मके करनहारे नीच देव है। जो जीव कषाय सहित तापस होय है ते नीच देवनिमें निपज है। पातालमे प्रथम ही रत्नप्रभा पृथ्वी, ताके छ भाग, अर पच भागमे तो भवनवासी अर व्यतर देवनिके निवास है, अर बहुलभागमें पहिला नरक, ताके नीचे छह नरक और है। ये सातो नरक छह राजूमें हैं। अर सातवें नरकके नीचे एक राजूमें निगोदादि स्थावर ही हैं, त्रस जीव नाहीं हैं अर निगोदसे तीन लोक भरे हैं।

अथानन्तर नरकका व्याख्यान सुनहु—कसे ह नारकी जीव ? महाक्रूर, महाकुशब्द बोलनहारे, अति कठोर ह स्पश जाका, महा दुर्गंध अ धकाररूप नरकमें पडे ह, उपमारहित जे दु ख तिनका भोगनहारा ह शरीर जिनका। महा भयकर नरक ताहि कुम्भीपाक कहिए जहा वतरणी नदी ह, अर तीक्ष्ण कटक युक्त शाल्मलीवक्ष, जहा असिपत्रवन तीक्ष्ण खडगकी धारा समान ह पत्र जिनके, अर जहाँ देदीप्यमान अग्निसे तप्तायमान तीखे लोहेके कीले निरतर ह। उन नरकनिमे मधुमासके भक्षणहारे, अर जीवनिके मारणहारे निरतर दुख भाग ह। जहा एक आध अगुल मात्र भी क्षेत्र सुखका कारण नाहीं, अर एक पलको भी नारकियोका विश्राम नाही जो चाह कि कहू भाजकर छिप रहे तो जहाँ जाय तहाँ ही नारकी मार। अर असुरकुमार पापी देव बताय देय। महाप्रज्वलित अगार तल्य जो नरककी भूमि ताविष पडे ऐसे विलाप कर जस अग्निमे मत्स्य व्याकुल हुआ विलाप कर। अर भयसे व्याप्त काहू प्रकार निकस कर अन्य ठौर गया चाह तो तिनको शीतलता निमित्त और नारकी वतरणी नदीके जलसे छाटे देय, तो वतरणी महादुगध क्षीरजलकी भरी ताकरि अधिक दाहको प्राप्त होय। बहुरि विश्रामके अथ असिपत्रवनमें जाय सो असिपत्र सिरपर पडे मानो चक्र खडग गदादिक ह, तिनकरि विदारे जावे छिद गए ह नासिका कण कधा जघा आदि शरीरके अग जिनके। नरकमें महा विकराल महा दुखदाई पवन ह, अर रुधिरके कण बरस ह। जहा घानीमें पेलिए ह, अर क्रूर शब्द होय ह तीक्ष्ण शूलोसे भेदिए ह, महा विलापके शब्द कर ह, अर शाल्मली वक्षनिसे घसीटिए ह, अर महा मुदगरोके घातसे कूटिए ह। अर जब तिसाए होय ह तब जलकी प्राथना कर ह तब उन्हें ताबा गलाकर प्याव ह ? तात देह महा दग्धमान होय ह, ताकर महादुखी होय ह, अर कह ह कि हमें तष्णा नाहीं। तो पुनि बलात्कार इनको पथ्वीपर पछाडकर, ऊपर पग देय, सडासियोसे मुख फाड, ताता ताबा प्यावै ह। तात कठ भी दग्ध होय ह अर हृदय भी दग्ध होय ह। नारकियोको नारकीनिका अनेक प्रकारका परस्पर दु ख, तथा भवनवासी देव जे असरकुमार तिनकरि करवाया दु ख, सो कौन वरणन कर सक?

नरकमें मद्यमासके भक्षणसे उपजा जो दुःख ताहि जानकर मद्य मासका भक्षण सर्वथा तजना। ऐसे मुनिके वचन सुन, नरकके दुखसे डरा है मन जाका, ऐसा जो कुण्डलमंडित सो बोला—हे नाथ! पापी जीव तो नरकही के पात्र हैं, अर जे विवेकी सम्यग्दृष्टि श्रावकके व्रत पालें हैं तिनको कहा गति है? तब मुनि कहते भए—जे दृढव्रत सम्यकदृष्टि श्रावकके व्रत पालें हैं ते स्वर्ग मोक्षके पात्र होय हैं। औरहु जे जीव मद्य मांस शहतका त्याग करैं हैं ते भी कुगतिसे बचें हैं। जे अभक्ष्यका त्याग करैं हैं सो शुभ गति पावैं हैं। जो उपवासादिक रहित हैं, अर दानादिक भी नहीं बनै हैं, परन्तु मद्यमांसके त्यागी हैं तो भले हैं। अर जो कोई शीलव्रत मंडित हैं, अर जिनशासनका सेवक हैं, अर श्रावकके व्रत पालें हैं ताका कहा पूछना? सो तो सौधर्मादि स्वर्गमें उपजैं ही हैं। अहिंसाव्रत धर्मका मूल कहा है। अहिंसा मांसादिकके त्यागीके अत्यंत निर्मल होय है। जे म्लेच्छ अर चांडाल हैं, अर दयावान होवें हैं ते मधु मांसादिकका त्याग करैं हैं, सो भी पापनिसे छूटैं हैं। पापनिकरि छूटा हुआ पुण्यको ग्रहै है, अर पुण्यके बंधनसे देव अथवा मनुष्य होय है। अर जो सम्यकदृष्टि जीव हैं सो अणुव्रतको धारण कर देवोंका इन्द्र होय, परम भोगोंको भोगै है। बहुरि मनुष्य होय मुनिव्रत धर मोक्षपद पावै है। ऐसे आचार्यके वचन सुनकर यद्यपि कुण्डलमंडित अणुव्रतके धारनेमें शक्तिरहित है तो भी सीस नवाय गुरुनिकूं सविनय नमस्कारकर मद्यमांसका त्याग करता भया, अर समीचीन जो सम्यग्दर्शन ताका शरण ग्रहा। भगवानकी प्रतिमाको नमस्कार अर गुरुवोंको नमस्कारकर देशांतरको गया। मनमें ऐसी चिंता भई कि मेरा मामा महापराक्रमी है सो निश्चय सेती मुझे खेदखिन्न जान मेरी सहायता करेगा। मैं बहुरि राजा होय शत्रुनिको जीतूंगा। ऐसी आशा धर दक्षिण दिशा जायवेको उद्यमी भया। सो अति खेदखिन्न दुखसे भरा, धीरा २ जाता हुता सो मार्गमें अत्यन्त व्याधि वेदनाकर सम्यक्त्वरहित होय मिथ्यात्व गुणठाने मरणको प्राप्त भया। कैसा है मरण? नाहीं है जगतमें उपाय जाका। सो जिस समय कुंडलमंडितके प्राण छूटे सो राजा जनककी स्त्री विदेहाके गर्भमें आया। ताही समय वेदवतीका जीव

जो चित्तोत्सवा भई हुती, सो भी तपके प्रभावकरि सीता भई, सो हू विदेहाके गभमें आई । ये दोनो एक गभमें आए । अर वह पिगल ब्राह्मण जो मुनिव्रत धर भवनवासी देव भया हुता, सो अवधिकर अपने तपका फल जान, बहुरि विचारता भया कि वह चित्तोत्सवा कहा, अर वह पापी कु डलमडित कहा, जाकरि म पूवभवमें दुख अवस्थाको प्राप्त भया । अब वे दोनो राजा जनककी स्त्रीके गभमें आए ह । सो वह तो स्त्रीकी जाति पराधीन हुती, उस पापी कु डलमडितने अन्यायमाग किया, सो यहा मेरा परमशत्रु ह । जो गभमे विराधना करू तो रानी मरणको प्राप्त होय, सो यास मेरा बर नाहीं । तात जब यह गभत बाहिर आव तब म याहि दुख दू । ऐसा चितवता हुता पूवकमक बरिकर क्रोधायमान जो देव, सो कु डलमडितके जीवपर हाथ मसले । ऐसा जानकर सब जीवनकू क्षमा करनी, काहूकू दु ख न देना । जो कोई काहूकू दु ख देय ह सो आपको ही दु खसागरमे डुबोव ह ।

अथानन्तर समय पाय रानी बिदेहाके पुत्र अर पुत्रीका युगल जन्म भया । तब वह देव पुत्रको हरता भया । सो प्रथम तो कोधके योगकरि ताने ऐसी विचारी कि म याहि शिलापर पटक मारू । बहुरि विचारी कि धिक्कार ह मोकू । मैं ऐसा अनन्त ससारका कारण पाप चितया । बालहत्या समान और कोई पाप नाहीं । पूवभवमें म मुनिव्रत धरे हुते सो तृणमात्रका भी विराधन न किया, सब आरभ तजा, नाना प्रकार तप किए । श्रीगुरुके प्रसादसे निमल धम पाय ऐसी विभूति को प्राप्त भया । अब मैं ऐसा पाप कसे करू ? अल्पमात्र भी पापकर महादु खकी प्राप्ति होय ह । पापकरि, यह जीव ससारवनविष बहुत काल दुखरूप अग्निमे जल ह । अर जो दयावान, निर्दोष ह भावना जाकी, महा सावधानरूप ह सो धन्य ह, सुगति नामा रत्न वाके हाथमें ह । वह दव ऐसा विचारकर दयावान होयकर बालकको आभूषण पहिराय काननविष महा ददीप्यमान कु डल घाले । परणलब्धी नामा विद्याकर आकाशत पृथ्वीविष सुखको ठौर पधराय आप अपने धाम गया । सो रात्रिके समय चद्रगति नामा विद्याधरने या बालकको आभरणकी ज्योतिकर प्रकाशमान आकाशसे पडता देखा । तब विचारी कि यह नक्षत्रपात भया या

विद्युत्पात भया। यह विचारकर निकट आय देख तो बालक है। तब हर्षकर बालकको उठाय लिया, अर अपनी रानी पुष्पवती जो सेजमें सूती हुती ताकी जाघोंके मध्य धर दिया। अर राजा कहता भया—हे राणी! उठो उठो तिहारे बालक भया है, बालक महाशोभायमान है। तब रानी सुन्दर है मुख जाका, ऐसे बालकको देख प्रसन्न भई, जाकी ज्योतिके समूहकर निद्रा जाती रही। महा विस्मय को प्राप्त होय राजा को पूछती भई—हे नाथ! यह अद्भुत बालक कौन पुण्यवती स्त्रीने जाया। तब राजाने कही—हे प्यारी तेरे समान और पुण्यवती कौन है? धन्य है भाग्य तेरा, जाके ऐसा पुत्र भया। तब वह रानी कहती भई—हे देव! मैं तो बांझ हूं, मेरे पुत्र कहां? एक तो मुझे पूर्वोपार्जित कर्मने ठगी—बहुरि तुम कहा हास्य करो हो? तब राजाने कही—हे देवी! तुम शंका मत करहु, स्त्रियोंके प्रच्छन्न (गुप्त) भी गर्भ होय है। तब रानीने कही ऐसे ही होहु। परन्तु याके मनोहर कुंडल कहांते आए? ऐसे भूमंडलमें नाहीं। तब राजाने कही—हे रानी! ऐसे विचारकर कहा? यह बालक आकाशसे पडा, अर मैं झेला, तुझे दिया। यह बडे कुलका पुत्र है याके लक्षणनिकर जानिए है। यह मोटापुरुष है, अन्य स्त्री तो गर्भके भारकर खेदखिन्न भई है, परन्तु हे प्रिये! तैंने याहि सुखसे पाया। अर अपनी कुक्षिमें उपजा भी बालक जो माता पिताका भक्त न होय, अर विवेकी न होय, शुभ काम न करै, तो ताकर कहा? कई एक पुत्र शत्रु समान परणवै है। तातैं उदरके पुत्रका कहा विचार? तेरे यह पुत्र सुपुत्र होयगा। शोभनीक वस्तुमें सन्देह कहा? अब तुम या पुत्रको लेवो, अर प्रसूतिघर में प्रवेशकर अर लोकनिको यही जनावना जो राणीके गुप्त गर्भ हुता सो पुत्र भया। तब राणी पतिकी आज्ञा प्रमाण प्रसन्न होय प्रसूतिगृहविषै गई। प्रभातविषै राजाने पुत्रके जन्मका उत्सव किया। रथनूपुरमें पुत्रके जन्मका ऐसा उत्सव भया जो सव कुटुम्ब अर नगरके लोग आश्चर्यको प्राप्त भए। रत्ननिके कुंडलकी किरणोंकर मंडित जो यह पुत्र सो माता पिताने याका नाम प्रभामण्डल धरा। अर पोषनेके निमित्त धायको सौंपा। सब अंतःपुरकी राणी आदि सकल स्त्री तिनके हाथरूप कमलनिका

भमर होता भया। भावार्थ—यह बालक सब लोकनिको बल्लभ बालक मुखसो तिष्ठै है। यह तो कथा यहां ही रही।

अथानन्तर मिथिलापुरीविषै राजा जनककी रानी विदेहा पुत्रको हरा जान विलाप करती भई। अति ऊंचे स्वरसूं रुदन किया, सब कुटुम्बके लोक शोकसागरमें पडे। रानी ऐसे पुकारे मानो शस्त्रकर मारी है। हाय! हाय पुत्र! तुझ कौन लेगया, मोहि महादुखका करनहारा वह निर्दई कठोर चित्त के हाथ तेरे लेने पर कैसे पडे? जैसे पश्चिम दिशाकी तरफ सूर्य आय अस्त होय जाय तैसे तू मेरे मंदभागिनीके आयकर अस्त होय गया। मैं हू परभवविषै काहूका बालक विछोहा हुता सो मैं फल पाया। तातैं कभी भी अशुभ कर्म न करना। जो अशुभकर्म है सो दुखका बीज है। जैसे बीज बिना वृक्ष नाहीं, तैसे अशुभकर्म विना दुख नाहीं। जा पापीने मेरा पुत्र हरचा सो मोकूं ही क्यो न मार गया? अधमुईकर दुःखके सागरमें काहेको डुबो गया? या भांति रानी अति विलाप किया। तदि राजा जनक आय। आय धीर्य बधावते भये—हे प्रिये! तू शोकको मत प्राप्त होउ, तेरा पुत्र जीवै है, काहूने हरचा है सो तू निश्चयसेती देखेगी। वृथा काहेका रुदन करै है। पूर्व कर्मके प्रभावकर गई वस्तु कोई तो देखिए कोई न देखिए। तू थिरताको प्राप्त होउ। राजा दशरथ मेरा परम मित्र है सो वाको यह वार्ता लिखूं हूं। वह अर मैं तेरे पुत्रकूं तलाशकर लावेंगे, भले २ प्रवीण मनुष्य तेरे पुत्रके ढूंढिवेको पठावेंगे। या भांति कहकर राजा जनकने अपनी स्त्रीको संतोष उपजाय दशरथके पास लेख भेजा। सो दशरथ लेख बांच महाशोकवंत भए। राजा दशरथ अर जनक दोऊननें पृथ्वीमें बालकको तलाश किया परन्तु कहूं देख्या नाहीं। तदि महाकष्टकर शोकको दाब बैठ रहे। ऐसा कोई पुरुष वा स्त्री नाहीं जो इस बालकके गए आंसुओंकर भरे नेत्र न भया होय, सब ही शोकके वश होय रुदन करते भए।

अथानन्तर प्रभामण्डलके गएका शोक भुलावनेकूं महामनोहर जानकी बाललीलाकर सब बंधुलोककूं आनन्द उपजावती भई। महा हर्षकूं प्राप्त भई जो स्त्रीजन तिनकी गोदमें तिष्ठती, अपने शरीर

की कातिकर दशोदिशाकू प्रकाशरूप करती वृद्धिकू प्राप्त भई। कसी ह जानकी ? कमल सारिखे ह नेत्र जाके अर महासुकठ, प्रसन्न वदन, मानो पदमद्रहके कमलके निवाससे साक्षात श्रीदेवी ही आई ह। याके शरीररूप क्षेत्रविष गुणरूप धान्य निपजते भए। ज्यो २ शरीर बडा त्यो त्यो गुण बढे। समस्त लोकनिकू सुखदाता, अत्यन्त मनोज्ञ सुन्दर लक्षणनिकर सयुक्त ह अग जाका। सीता कहिए भूमि-ता समान क्षमाकी धरणहारी तात जगतविष सीता कहाई। वदनकर जीत्या ह चन्द्रमा जाने, पल्लव समान ह कोमल आरक्त हस्ततल जाके महाश्याम, महासुन्दर, इन्द्रनीलमणि समान ह केश निके समूह जाका, अर जीती ह मदकी भरी हसनीकी चाल जान, अर सुन्दर भौंह जाकी, अर मोल श्रीके पुष्प समान मुखकी सुगन्ध, गुजार कर ह भ्रमर जापर, अति कोमल ह पुष्माला समान भुजा जाकी, अर केहरी समान ह कटि जाकी, अर महा श्रेष्ठ रसका भरा जो केलिका थभ ता समान ह जघा जाकी, स्थलकमल समान महामनोहर ह चरण जाके, अर अति सुन्दर ह कुचयुग्म जाका, अति शोभायमान ह रूप जाका। महाश्रेष्ठ मदिरके आगन विष महारमणीक सातस कन्याओके समूहमें शास्त्रोक्त क्रीडा कर। जो कदाचित इन्द्रकी पटराणी शची वा चक्रवर्तीकी पटराणी सुभद्रा याके अगकी शोभाकू किचितमात्र भी धर तो वे अति मनोज्ञरूप भास। एसी यह सीता सर्वनित सुन्दर ह। याकू रूप गुणयुक्त देख राजा जनक विचारचा—जस रति कामदेव हीको योग्य ह तस यह कन्या सव विज्ञानयक्त दशरथके बडे पुत्र जो राम तिनहीकू योग्य ह। सूर्यकी किरणके योगत कमलनिकी शोभा प्रकट होय ह।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष सीता प्रभामण्डल का जन्म कथन वर्णन करनेवाला छबीसवा पर्व पूर्ण भया। २६॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक यह कथा सुनकर गौतमस्वामीको पूछता भया—हे प्रभो ! जनकने राम

का कहा महात्म्य देख्या जो अपनी पुत्री देनी विचारी। तब गणधर चित्तको आनंदकारी वचन कहते भए—हे राजन ! महा पुण्याधिकारी जो श्रीरामचन्द्र तिनका सुयश सुनि, जा कारणते जनक महा बुद्धिमानने रामकू अपनी कन्या देनी विचारी। वैताढ्यपर्वतके दक्षिणभागविषै अर कैलाश पर्वतके उत्तरभागविषै अनेक अंतर देश बसै है तिननें एक अर्द्धबरवर देश, असंयमी जीवनिका है मान्य जहां, महा मूढजन निर्दई म्लेच्छ लोकनिकरि भर्या। ता विषै एक मयूरमाल नामा नगर, कालके नगर समान महा भयानक, तहां अंतरगत नामा म्लेच्छ राज्य करै। सो महापापी दुष्टनिका नायक महा निर्दई, बडी सेनाते नानाप्रकारके आयुधनिकर मंडित सकल म्लेच्छ संग लेय आप देश उजाडनेकू आए, सो अनेक देश उजाडे। कैसे है म्लेच्छ ? करुणाभाव रहित प्रचण्ड है चित्त जिनके, अर अत्यन्त है दौड जिनकी। सो जनक राजाका देश उजाडनेकू उद्यमी भए। जैसे टिड्डीदल आवै तैसे म्लेच्छोंके दल आए, सबको उपद्रव करणे लगे। तब राजा जनकने अयोध्याको शीघ्र ही मनुष्य पठाए। म्लेच्छ के आवनेके सब समाचार राजा दशरथकू लिखे। सो जनकके जन शीघ्र ही जाय सकल वृत्तांत दशरथ सू कहते भए—हे देव ! जनक वीनती करी है, परचक्र भीलनिका आया, सो सब पृथ्वी उजाडे है। अनेक आर्यदेश विध्वंस किए। ते पापी प्रजाकू एक वर्ण किया चाहे है, सो प्रजा नष्ट भई। तब हमारे जीवेकर कहा ? अब हमको कहा कर्त्तव्य है ? उनसे लडाई करना अथवा कोई गढ पकड तिष्ठें, लोकनिकू गढमें राखें। कालिन्द्री भागा नदीकी तरफ विषमस्थल है वहां जाव, अथवा विपुलाचलकी तरफ जाव अथवा सब सेना सहित कुंजगिरिकी ओर जावें। परसेना महा भयानक आवै है। साधु श्रावक सबलोक अति विह्वल है। ते पापी गौ आदि सब जीवनिके भक्षक है। सो जो आप आज्ञा देहु सो करें। यह राज्य भी तिहारा और पृथ्वी भी तिहारी। यहांकी प्रतिपालना सब तुमकू कर्त्तव्य है। प्रजाकी रक्षा किए धर्मकी रक्षा होय है। श्रावक लोक भावसहित भगवानकी पूजा करै है, नानाप्रकारके व्रत धरै है, दान करै है, शील पालै है, सामायिक करै है पोशा परिक्रमणा करै है,

भगवानके बडे बडे चैत्यालय तिनविषै महा उत्सव होय है, विधि पूर्वक अनेक प्रकार महा पूजा होय है, अभिषेक होय है, विवेकी लोक प्रभावना करै है। अर साधु दशलक्षणधर्म कर युक्त, आत्मध्यानमें आरूढ मोक्षका साधन तप करै है। सो प्रजाके नष्ट भए साधु अर श्रावकका धर्म लुप्त है। अर प्रजाके होते धर्म अर्थ काम मोक्ष सब सधै है। जो राजा परचक्रतै पृथ्वीकी प्रतिपालना करै सो प्रशंसाके योग्य है। राजाके प्रजाकी रक्षातैं यालोक परलोकविषै कल्याणकी सिद्धि होय है। प्रजा विना राजा नहीं, अर राजा बिना प्रजा नहीं। जीवदयामय धर्मका जो पालन करै सो यह लोक परलोकमें सुखी होय है। धर्म अर्थ काम मोक्ष की प्रवृत्ति लोकनिके राजाकी रक्षासे होय है, अन्यथा कैसे होय ? राजाके भुजबलकी छाया पायकर प्रजा सुखसे रहै है। जाके देशमें धर्मात्मा धर्म सेवन करै है, दान तप शील पूजादिक करै है, सो प्रजाकी रक्षाके योगतैं छठा अंश राजाको प्राप्त होय है। यह सब वृत्तांत राजा दशरथ सुनकर आप चलने को उद्यमी भए, अर श्रीरामको बुलाय राज्य देना विचारचा। वादित्रनिके शब्द होते भए, सब मंत्री आए, अर सब सेवक आए। हाथी घोडे रथ पयादे सब आय ठाढे भए। जलके भरे स्वर्णमयी कलश सेवक लोग स्नानके निमित्त भरलाए। अर शस्त्र बांधकरि बडे बडे सामंत लोक आए। अर नृत्यकारिणी नृत्य करती भई। अर राजलोककी स्त्री जन नानाप्रकारके वस्त्र आभूषण पटलनिमैं ले आईं। यह राज्याभिषेकका आडम्बर देखकर राम दशरथसू पूछते भये कि हे प्रभो ! यह कहा है ? तब दशरथ कही—हे भद्र ! तुम या पृथ्वीकी प्रतिपालना करो, मैं प्रजाके हित निमित्त शत्रुनिके समूहतैं लडने जाऊं हूं। वे शत्रु देवनिकरहू दुर्जय हैं। तब कमलसारिखे हैं नेत्र जिनके ऐसे श्रीराम कहते भए—हे तात ! ऐसे रंकन पर एता परिश्रम कहा ? ते आपके जायवे लायक नाहीं। वे पशुसमान दुरात्मा जिनसूं संभाषण करना उचित नाहीं, तिनके सन्मुख युद्धकी अभिलाषाकर आप कहा पधारे ? उन्दरु (चूहा) के उपद्रव कर हस्ती कहा क्रोध करै ? अर रुईके भस्म करवेकू अर्थ अग्नि कहा परिश्रम करै ? तिनपर जायवेकी हमकूं आज्ञा देहु यही उचित है। ये रामके वचन सुन

दशरथ अति हर्षित भए। तदि रामकू उरसू लगाय कहते भए। हे पद्म! कमल समान है नेत्र जाके ऐसे तुम बालक, सुकुमार अंग, कैसे उन दुष्टनिसू जीतोगे ? यह बात मेरे मनमें न आवै। तब राम कहते भए-हे तात! कहा तत्कालका उपज्या अग्निकी कणका मात्र हू विस्तीर्ण वनको भस्म न कर ? कर ही कर। छोटी बडी अवस्थासू कहा प्रयोजन ? अर जैसे अकेला ऊगता ही बालसूर्य घोर अंधकारकू हर ही है तैसे हम बालक तिन दुष्टनिकू जीतें ही जीतें। ये वचन रामके सुन राजा दशरथ अति प्रसन्न भए, रोमांच होय आए अर बालपुत्रकू भेजनेका कछुएक विषाद भी न उपज्या, नेत्र सजल होय गए। राजा मनमें विचारै है जो महापराक्रमी त्यागादि व्रतके धारणहारे क्षत्री तिनकी यही रीति है-जो प्रजाकी रक्षाके निमित्त अपने प्राण भी तजनेका उद्यम करै। अथवा आयुके क्षय बिना मरण नाहीं, यद्यपि गहन रणमें जाय तौ हू न मरै। ऐसा चिंतवन करता जो राजा दशरथ ताके चरणकमलयुगसहं नमस्कारकरि राम लक्ष्मण बाहिर नीसरे। सब शास्त्र अर शस्त्र विद्याविषै प्रवीण, सब लक्षणनिकरि पूर्ण, सबकू प्रिय है दर्शन जिनका, चतुरंग सेनाकरि मंडित, विभूतिकरि पूर्ण, अपने तेजकर देदीप्यमान दोऊ भाई रामलक्ष्मण रथविषै आरूढ होय जनककी मदद चाले। सो इनके जायवे पहिले जनक अर कनक दोऊ भाई, परसेनाका दो योजन अंतर जान युद्ध करवेकू चढे हुते, सो जनक कनकके महारथी योधा शत्रुनिके शब्द न सहते संते म्लेच्छनिके समूहमें जैसे मेघकी घटामें सूर्यादिक ग्रह प्रवेश करै तैसे पैठे थे, सो म्लेच्छोंके अर सामंतनिके महायुद्ध भया। जाके देख अर सुने रोमांच होय आवै। कैसा संग्राम भया ? बडे शस्त्रनिकरि किया है प्रहार जहां, दोऊ सेनाके लोक व्याकुल भए, कनककू म्लेच्छनिका दबाव भया तदि जनक भाईकी मददके निमित्त अतिक्रोधायमान होय दुर्निवार हाथियोंकी घटा प्रेरता भया। सो वे बरबर देशके म्लेच्छ महा भयानक जनककू दबावते भये। ताही समय राम लक्ष्मण आय पहुँचे। अति अपार महागहन म्लेच्छनिकी सेना रामचन्द्र देखी। सो श्रीरामचन्द्रका उज्ज्वल छत्र देख कर शत्रुनिकी सेना कम्पायमान भई, जैसे पूर्णमासीके चंद्रमा

का उदय देखकर अंधकारका समूह चलायमान होय । म्लेच्छानके बाणनिकरि जनकका बखतर टूट गया हुता, अर जनक खेदखिन्न भया हुता, सो रामने धीय बधाया । जैसे ससारी जीव कमनिके उदय कर दु खी होय सो धमके प्रभावत दु खनित छूटे, सुखी होय, तसे जनक रामके प्रभावकर सुखी भया । चचल तुरगनि कर युक्त जो रथ, ताविषै आरूढ, जो राघव, महाउद्योतरूप है शरीर जिनका, बखतर पहिरे, हार अर कु डल कर मडित, धनुष चढाए और बाण हाथमे, सिहके चिह्नकी है ध्वजा जिनके, अर जिनपर चमर ढुरे है, अर महामनोहर उज्ज्वल छत्र सिरपर फिर है, पृथ्वीके रक्षक, धीर वीर है मन जिनका ऐसे श्रीराम लोकके वल्लभ, प्रजाके पालक, शत्रुनिकी विस्तीण सेनाविषै प्रवश करते भए । सुभटनिके समूह कर सयुक्त जैसे सूय किरणनिके समूह कर सोहे है तसे शोभते भए । जैसे माता हाथी कदलीवनमें बठया केलनिके समूहका विध्वस कर तसे शत्रुनिकी सेनाका भग किया । जनक अर कनक दोऊ भाई बचाए । अर लक्ष्मण जैसे मेघ बरसे तैसे बाणनिकी वर्षा करता भया । तीक्ष्ण सामान्य चक्र अर शक्ति कनक त्रिशूल कुठार करात इत्यादि शस्त्रनिके समूह लक्ष्मणके भुजानिकर चले । तिनकर अनेक म्लेच्छ मुवे । जैसे फरसानकर वृक्ष कटे तसे भील पारधी महाम्लेच्छ लक्ष्मणके बाणनि कर विदारे गये है उरस्थल जिनके, कटगई है भुजा अर ग्रीवा जिनकी, हजारो पृथ्वीविषै पडे । तदि वे पृथ्वीके कटक तिनकी सेना लक्ष्मण आगे भागी । लक्ष्मण सिहसमान दुर्निवार, ताहि देखकर जे म्लेच्छमें शार्दू ल समान हुते तेहू अति क्षोभकू प्राप्त भए । महावादित्रके शब्द करते, अर मुखते भयानक शब्द करते, अर धनुषबाण खडग चक्रादि अनेक शस्त्रनिकू धरे, अर रक्त वस्त्र पहिरे, खजर जिनके है हाथमें, नाना वणका अग जिनका, कईएक काजल समान श्याम, कईएक कदम, कई एक तामवण, वृक्षनिके बक्कल पहिरे, अर नानाप्रकारके गेरुवादि रग तिनकरि लिप्त है अग जिनके, अर नानाप्रकारके वृक्षनिकी मजरी तिनके है छोगा सिरपर जिनके, अर कौडी सारिखे है दात जिनके, अर विस्तीण है उदर जिनके, ऐसे भासे मानो कुटजजातिके वृक्ष ही फूल है । अर कईएक निजहाथनि

विष आयुधनिकू धरे कठोर है जघा जिनकी, भारी भुजानिके धरणहारे, मानू असुरकुमार देवनि सारिखे उन्मत्त, महानिर्दई, पशुमासके भक्षक, महामूढ, जीवहिंसाविषे उद्यमी, जन्महीतैं लेकर पापनिके करणहारे, तत्काल खोटे आरम्भके करणहारे, अर सूकर भैस व्याघ्र ल्याली इत्यादि जीवनिके चिह्न है जिनकी ध्वजानिमे, नानाप्रकारके जे वाहन तिनपर चढे, पत्रनिके है छत्र जिनके, नानाप्रकार युद्धके करणहारे, अति दौडके करणहारे, महा प्रचण्ड तुरग समान चचल, ते भील मेघमाला समान लक्ष्मणरूप पर्वतपर मेघमालासमान अपने स्वामीरूप पवनके प्रेरे बाणवृष्टि करते भए। तदि लक्ष्मण तिनके निपात करवेकू उद्यमी तिनपर दौडे, महाशीघ्र है बेग जिनका, जैसे महा गजेन्द्र वृक्षनिके समूहपर दौडे। सो लक्ष्मण के तेज प्रतापकरि वे पापी भागे सो परस्पर पगनि कर मसले गए। तदि तिनका अधिपति आतरगतम अपनी सेनाकू धीर्य बधाय सकल सेनासहित आप लक्ष्मणके सन्मुख आया। महाभयकर युद्ध किया, लक्ष्मणकू रथरहित किया। तदि श्रीरामचन्द्र अपना रथ चलाया, पवन समान है वेग जाका, लक्ष्मणके समीप आए। लक्ष्मणकू दूजे रथ पर चढाया अर जैसे अग्नि बनकू भस्म कर तैसे तिनकी अपार सेना बाणनिरूप अग्निकर भस्म करी। कईएक तो बाणनिकर मारे, अर कईएक कनक नामा शस्त्रनिकरि विध्वसे, कईएक तोमरनामा आयुधनिकरि हते, कईएक सामान्य चक्रनामा शस्त्रनि करि निपात किए। वह म्लेच्छनिकी सेना महाभयकर दश दिशाकू जाती रही। छत्र चमर ध्वजा धनुष आदि शस्त्र डार भाजे। महा पुण्याधिकारी जो राम तिनने एकनिमिषमें म्लेच्छनिका निराकरण किया। जैसे महामुनि क्षणमात्रमे सब कषायनिका निराकरण कर तैसें म्लेच्छनिका निपात किया। वह पापी आतरगतम अपार सेनारूप समुद्रकरि आया हुता, सो भयकरि युक्त दस घोडाके असवारनिसू भाग्या। तदि श्रीराम आज्ञा करी ये नपुसक युद्धतै पराड्गमुख होय भागे, अब इनके मारवेकरि कहा? तब लक्ष्मण भाईसहित पाछे बाहुडे। वे म्लेच्छ भयकरि व्याकुल होय सह्याचल विध्याचलके वननिमें छिप गए। श्रीरामचन्द्रके भयतै पशु हिंसादिक दुष्ट कर्मकू तजि वनके फलनिका आहार कर। जैसे

गरुडत सप डर तस श्रीरामसू डरते भए । लक्ष्मण सहित श्रीराम शात ह स्वरूप जिनका, राजा जनक कू बहुत प्रसन्न कर विदा किया । अर आप अपने पिताके समीप अयोध्याकू चाले । सब पथ्वीके लोक आश्चयकू प्राप्त भए । यह देख सबकू परम आनन्द उपज्या, परमहषकरि रोमाच होय आए । राम के प्रभाव सब पथ्वी शोभायमान भई–जैस चतुथकालके आदि ऋषभदेवके समय सम्पदासे शोभायमान भई हुती । धम अथ कामकरि युक्त जे पुरुष तिनसे जगत एसा भासता भया जस बफके अवरोध कर वर्जित जे नक्षत्र तिनसू आकाश शोभ । गौतमस्वामी कहे ह–हे राजा श्रेणिक ! ऐसा रामका माहात्म्य देखकर जनक अपनी पुत्री सीता रामकू देनी विचारी । बहुत कहवेकरि कहा ? जीवनिके सयोग तथा वियोगका कारण भाव एक कमका उदय ही ह । सो वह श्रीराम श्रेष्ठ पुरुष, महासौभाग्यवत, अतिप्रतापी, औरनमें न पाइए ऐसे गुणनिकरि पथ्वीविष प्रसिद्ध होता भया, जस किरणनि के समूहकर सूय महिमाकू प्राप्त होय ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष म्लेछनिकी हार रामकी जीतका कथन वणन करनवालासत्ता सवाँ पव पूण भया ।।२७।।

अथानन्तर ऐसे पराक्रमकर पूण जो राम तिनकी कथा विना नारद एक क्षण भी न रहे, सदा राम कथा करवो ही कर । कसा ह नारद ? रामके यश सुनकर उपज्या ह परम आश्चय जाको । बहुरि नारदने सुनी जो जनकने राम को जानकी देनी विचारी, कसी ह जानकी ? सब पथ्वीविष प्रकट ह महिमा जाकी । नारद मनमें चितवता भया, एक बार सीताकू देखू जो कसी ह, कसे लक्षणनि कर शोभायमान ह जो जनकने रामको देनी करी ह । सो नारद शील सयुक्त ह हृदय जाका, सीता के देखवेकू सीताके घर आया । सो सीता दपणमें मुख देखती हुती । सो नारदकी जटा दपणमें भासी सो कन्या भयकर व्याकुल भई । मनमें चितवती भई हाय माता यह कौन ह ? भयकर कम्पायमान

होय महलके भीतर गई । नारद भी लारही महलमें जाने लगे । तब द्वारपालने रोका सो नारदके अर द्वारपालके कलह हुवा । कलहके शब्द सुन खडगके अर धनुषके धारक सामत दौडे ही गए कहते भए, पकड लो, पकडलो, यह कौन ह । ऐसे तिन शस्त्रधारियोके शब्द सुनकर नारद डरा, आकाशविषे गमन कर कलाश पवत गया, तहा तिष्ठकर चितवता भया ।

जो म महाकष्टकू प्राप्त भया सो मुश्किलसे बचा, नवा जन्म पाया । जैसे पक्षी दावानलसे बाहिर निकस तस म वहासे निकस्या । सो धीरे धीरे नारदकी कापनी मिटी । अर ललाटके पसेव पू छ, केश बिखर गए हुते ते समारकर बाध, कापे ह हाथ जाके, ज्यो ज्यो वह बात याद आव त्यो त्यो निश्वास नाख । महाक्रोधायमान होय मस्तक हलाए ऐस विचारता भया कि देखो कन्याकी दुष्टता । मैं अदुष्टचित्त सरलस्वभाव रामके अनुरागत ताके दखवेकू गया हुता सो मत्यु समान अवस्थाकू प्राप्त भया । यम समान दुष्ट मनष्य मोहि पकडवेकू आए सो भली भई जो बचा पकडा न गया । अब वह पापिनी मो आगे कहा बचे ? जहा जहा जाय तहा ही उसे कष्टमें नाखू । म विना बजाए वादित्र नाचू , सो जब वादित्र बाज तब कसे टरू ? एसा विचारकर शीघ्र ही वताडयकी दक्षिणश्रेणीविषे जा रथनूपुर नगर वहा गया । महा सुन्दर जो सीताका रूप सो चित्रपटविष लिख लेगया । कसा ह सीताका रूप ? महा सुन्दर ह ऐसा लिखा मानो प्रत्यक्ष ही ह । सो उपवनविष भामडल, चन्द्रगतिका पुत्र अनेक कुमारनि सहित क्रीडा करनेकू आया हुता सो चित्रपट उसके समीप डार आप छिप रह्या । सो भामण्डलने यह तो न जान्या कि यह मेरी बहिनका चित्रपट ह, चित्रपट देख मोहित चित्त भया । लज्जा अर शास्त्रज्ञान अर विचार सब भूल गया । लम्बो २ निश्वास नाख, होठ सूक गये, गात शिथिल हो गया, रात्रि अर दिवस निद्रा न आव । अनेक मनोहर उपचार कराये तो भी इसे सुख नाहीं । सुगन्ध पुष्प अर सुन्दर आहार याहि विष समान लागे । शीतल जल छाटिये तौ भी सताप न जाय । कबहू मौन पकड रहे, कबहू हस, कबहू विकथा बक, कबहू उठ खडा रह, वथा उठ चल बहुरि

पाछा आव । ऐसी चेष्टा कर मानो याहि भूत लगा है । तब बडे बडे बुद्धिमान याहि कामातुर जान परस्पर बात करते भए । जो यह कन्याका रूप किसीने चित्रपटविषै लिखकर याके ढिग आय डारचा, सो यह विक्षिप्त होयगया । कदाचित यह चेष्टा नारदन ही करी होय । तब नारदने अपने उपायकर कुमारकू व्याकुल जान लोगनको बात सुन कुमारके बन्धूनिकू दर्शन दिया । तब तिनने बहुत आदर कर पूछा—हे देव ! कहो यह कौनकी कन्याका रूप है ? तुमने कहा देखी ? यह कोऊ स्वर्गविषै देवांगना का रूप है अथवा नागकुमारीका रूप है, या पृथ्वीविषै आई होवेगी सो तुमने देखी । तब नारद माथा हलायकर बोला कि मिथिला नामा नगरी है । वहा महासुन्दर राजा इन्द्रकेतुका पुत्र जनक राज्य कर है । ताके विदेहा राणी है । सो राजाको अतिप्रिय है । तिनकी पुत्री सीताका यह रूप है । ऐसा कहकर फिर नारद भामण्डलसे कहते भए—हे कुमार ! तू विषाद मतकर, तू विद्याधर राजाका पुत्र है । तोहि यह कन्या दुर्लभ नाहीं, सुलभ ही है । अर तू रूपमात्रसे ही क्या अनुरागी भया, यामे बहुत गुण है । याके हावभाव विलासादिक कौन वर्णन कर सकै ? अर यही देखे तेरा चित्त वशीभूत हुआ सो क्या आश्चर्य है । जिसे देख बडे पुरुषनिका भी चित्त मोहित होजाय । मै तो आकारमात्र पटमें लिख्या है । ताकी लावण्यता वाहीविषै है, लिखवेमें कहा आवै ? नवयौवन रूप जलकर भरा जो कांतिरूप समुद्र, ताकी लहरनिविषै वह स्तनरूप कुम्भनिकर तिरै है । अर ऐसी स्त्री तोय टार और कौनको योग्य । तेरा अर वाका संगम योग्य है । या भांति कहकर भामंडलकू अति स्नेह उपजाया, अर आप नारद आकाशविषै विहार किया । भामंडल कामके बाणकर वेध्या अपने चित्तमें विचारता भया कि यदि वह स्त्रीरत्न शीघ्र ही मुझे न मिले तो मेरा जीवना नाहीं । देखो यह आश्चर्य है, वह सुन्दरी परमकांतिकी धरणहारी मेरी हृदयमें तिष्ठती हुई अग्निकी ज्वालासमान हृदयकू आताप करै है । सूर्य है सो तो बाह्य शरीर को आताप करै है अर काम है सो अन्तर दाहयदाह उपजावै है । सूर्यके आताप निवारवेकू तो अनेक उपाय हैं परन्तु कामके दाह निवारवेकू उपाय नाहीं । अब मुझे दो अवस्था आय बनी है । कै तो वाका

संयोग होय अथवा कामके बाणनिकर मेरा मरण होयगा। निरंतर ऐसा विचारकर भामंडल विह्वल होयगया। सो भोजन तथा शयन सब भूल गया। ना महलविषै ना उपवन विषै याहि काहू ठौर साता नाहीं। यह सब वृत्तांत कुमारके व्याकुलताका कारण नारदकृत कुमारको माता जानकर कुमार के पितासूं कहती भई—हे नाथ! अनर्थका मूल जो नारद तानै एक अत्यन्त रूपवती स्त्रीका चित्रपट लायकर कुमारकूं दिखाया। सो कुमार चित्रपटकूं देखकर अति विभ्रम चित्त होयगया, सो धीर्य नाहीं धरै है। लज्जारहित होयगया है। बारम्बार चित्रपटकूं निरखै है अर सीता ऐसे शब्द उच्चारण करै है। अर नानाप्रकार की अज्ञान चेष्टा करै है मानूं याहि वाय लगी है। तातैं तुम शीघ्र ही साता उपजावनेका उपाय विचारो। वह भोजनादिकतैं पराङ्मुख होय गया है। सो वाके प्राण न छूटैं ता पहिलै ही यत्न करहु। तब यह वार्ता चन्द्रगति सुनकर अति व्याकुल भया। अपनी स्त्रीसहित आयकर पुत्रकूं ऐसे कहता भया—हे पुत्र! तू स्थिरचित्त हो, अर भोजनादि सब क्रिया जैसे पूर्वैं करै था तैसे कर। जो कन्या तेरे मनमें बसी है सो तुझै शीघ्र ही परणाऊंगा। या भांति कहकर पुत्रको शांतता उपजाय राजा चन्द्रगति एकांतविषै हर्ष विषाद अर आश्चर्यकूं धरता संता अपनी स्त्रीसूं कहता भया हे प्रिये! विद्याधरनिकी कन्या अतिरूपवन्ती अनुपम, उनकूं तजकर भूमिगोचरिनका सम्बन्ध हमकूं कहा उचित? अर भूमिगोचरिनके घर हम कैसे जावेंगे? अर जो कदाचित हम जाय प्रार्थना करैं अर वह न दे तो हमारे मुखकी प्रभा कहा रहेगी? तातैं कोई उपायकर कन्याके पिताकूं यहां शीघ्र ही ल्यावैं। अन्य उपाय नाहीं। तब भामंडलकी माता कहती भई—हे नाथ! युक्त अथवा अयुक्त तुम ही जानो। तथापि ये तिहारे वचन मुझै प्रिय लागे। तब एक चपलवेग नामा विद्याधर अपना सेवक, आदर सहित बुलायकर राजा सकल वृत्तांत वाके कानमें कहा, अर नीके समझाया। सो चपलवेग राजाकी आज्ञा पाय बहुत हर्षित होय शीघ्र ही मिथला नगरीको चाल्या। जैसे प्रसन्न भया तरुणहंस सुगंधकी भरी जो कमलिनी ताकी ओर जाय। यह शीघ्र ही मिथला नगरी जाय पहुँच्या। आकाशतैं उतरकर

अश्वका भेष धर गौ महिषादि पशूनिकू त्रास उपजावता भया। राजाके मडलमें उपद्रव किया। तब लोकनिकी पुकार आई सो राजा सुनकर नगरके बाहिर निकस्या। प्रमोद, उद्वेग अर कौतुकका भरथा राजा अश्वकू देखता भया। कसा है अश्व? नवयौवन है, अर उछलता सता अति तेजकू धर, मन समान है वेग जाका, सुन्दर है लक्षण जाके, अर प्रदक्षिणारूप महा आवर्तकू धरे है, मनोहर है मुख जाका, अर महा बलवान खुरोके अग्रभागकर मानो मदग ही बजावे है, जापर कोई चढ न सके अर नासिकाका शब्द करता सता अतिशोभायमान है। ऐसे अश्वकू देखकर राजा हर्षित होय बारम्बार लोगनिसू कहता भया—यह काहुका अश्व बधन तुडाय आया है। तब पडितनिके समूह राजासू प्रियवचन कहते भए—हे राजन! या तुरगके समान कोई तुरग नाहीं, औरोकी तो क्या बात ऐसा अश्व राजाके भी दुलभ। आप के भी देखनेमें ऐसा अश्व न आया होयगा। सूर्यके रथके तुरगनिकी अधिक उपमा सुनिए है सो या समान तो ते भी न होयेंगे। कोई दवके योगत आपके निकट ऐसा अश्व आया है सो आप वाहि अगीकार करहु। आप महापुण्याधिकारी हो। तब राजाने अश्वको अगीकार किया। अश्वशालामें ल्याय सुन्दर डोरीतें बाधा अर भातिभातिकी योग सामग्रीकर याके यत्न किए। एक मास याकू यहा हुआ। एक दिन सेवकने आय राजाकू नमस्कार कर विनती कीनी—हे नाथ! एक वनका मतग गज आया है सो उपद्रव करे है। तब राजा बडे गजपर असवार होय वा हाथी की ओर गए। वह सेवक जिसने हाथीका वृत्तात आय कहा था, ताके कहे मागकर राजाने महावनमें प्रवेश किया। सो सरोवरके तट हाथी खडा देखा अर चाकरनिसू कहा जो एक तेज तुरग ल्यावो। तब मायामई अश्वकू तत्काल लेगए। सुन्दर है शरीर जाका, राजा उसपर चढे। सो वह आकाशमें राजाकू ले उडा। तब सब परिजन पुरजन हाहाकार कर शोकवत भए। आश्चर्यकर व्याप्त हुवा है मन जिनका तत्काल पाछे नगरमें गये।

अथानन्तर वह अश्वके रूपका धारक विद्याधर, मन समान है वेग जाका, अनेक नदी पहाड वन उपवन नगर ग्राम देश उलघन कर राजाकू रथनूपुर लेगया। जब नगर निकट रह्या तब एक वृक्ष

के नीचे आय निकस्या। सो राजा जनक वृक्षकी डाली पकड लूब रहा। वह तुरंग नगरविषै आया। राजा वृक्षतै उतर विश्रामकर आश्चर्य सहित आगे गया। तहां एक स्वर्णमई ऊंचा कोट देख्या, अर दरवाजा रत्नमई तोरणनि कर शोभायमान, अर महासुन्दर उपवन देख्या। ताविषै नाना जातिके वृक्ष अर बेल फल फूलनिकर सम्पूर्ण देखे, जिनपर नानाप्रकारके पक्षी शब्द करै है। अर जैसे सांझके बादले होवें तैसे नानारंगके अनेक महिल देखे, मानो ये महल जिनमंदिरकी सेवा ही करै है। तब राजा खडगको दाहिने हाथमें मेल सिंह समान अति निशंक, क्षत्रीव्रतमें प्रवीण दरवाजेमें गया। दरवाजेके भीतर नानाजातिके फूलनिकी बाडी अर रत्न स्वर्णके सिवाण जाके ऐसी वापिका, स्फटिक-मणि समान उज्ज्वल है जल जाका, अर महा सुगंध मनोग्य विस्तीर्ण कुंद जातिके फूलनिके मंडप देखे। चलायमान है पल्लवोंके समूह जिनके अर संगीत करै है भमरोंके समूह जिनपर, अर माधवी लतानिके समूह फूले देखे। महा सुन्दर अर आगे प्रसन्न नेत्रनिकर भगवानका मंदिर देख्या। कैसा है मंदिर? मोतिनिकी झालरिनिकर शोभित, रत्ननिके झरोखनिकर संयुक्त, स्वर्णमई हजारां महास्तम्भ तिनकर मनोहर, अर जहां नानाप्रकारके चित्राम, सुमेरुके शिखर समान ऊंचे शिखर, अर वज्रमणि जे हीरा तिनकर बेढ्या है पीठ (फरश) जाका, ऐसे जिनमंदिरकूं देखकर जनक विचारता भया कि यह इन्द्रका मंदिर है अथवा अहमिंद्रका मंदिर है। ऊर्ध्वलोकतें आया है अथवा नागेन्द्रका भवन पातालतैं आया है, अथवा काहू कारणतैं सूर्यकी किरणनिका समूह पृथ्वीविषै एकत्र भया है। अहो उस मित्र विद्याधरने मेरा बडा उपकार किया जो मोहि यहां ले आया ऐसा स्थानक अबतक देख्या नाहीं। भला मंदिर देख्या। ऐसा चिंतवनकर महामनोहर जो जिनमंदिर ताविषै बैठि फूलगया है मुखकमल जाका श्रीजिनराजका दर्शन किया। कैसे है श्रीजिनराज? स्वर्ण समान है वर्ण जिनका, अर पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है सुन्दर मुख जिनका, अर पद्मासन विराजमान, अष्ट प्रातिहार्य संयुक्त, कनकमई कमलनिकर पूजित, अर नानाप्रकारके रत्ननिकर जडित जे छत्र ते है सिरपर जिनके, अर ऊंचे सिंहा-

सनपर तिष्ठ है । तब जनक हाथ जोड सीस निवाय प्रणाम करता भया । हर्षकर रोमांच होय आए । भक्तिके अनुरागकर मूर्छाकू प्राप्त भया, क्षणएक सचेत होय भगवानकी स्तुति करने लाग्या । अति विश्रामकू पाय परम आश्चर्यकू धरता मता जनक चैत्यालयविषै तिष्ठ है । वह चपलवेग विद्याधर जो अश्वका रूपकर इनको ले आया हुता सो अश्वका रूप दूर कर राजा चन्द्रगतिके पास गया, अर नमस्कार कर कहता भया । मैं जनककू ले आया, मनोग्य वनमें भगवानके चैत्यालयविषै तिष्ठ है, तब राजा सुनकर बहुत हर्षकू प्राप्त भया । थोडेसें समीपी लोक लार लेय राजा चन्द्रगति, उज्ज्वल है मन जाका, पूजाकी सामग्री लेय मनोरथ समान रथ पर आरूढ होय चैत्यालयविषै आया । सो राजा जनक चन्द्रगतिकी सेनाकू देख अर अनेक वादित्रनिका नाम सनकर कछुइक शकायमान भया । कईएक विद्याधर मायामई सिंहोपर चढे है, कईएक मायामई हाथिनि पर चढे हैं, कईएक घोडावो पर चढे, कईएक हंसो पर चढे, तिनके बीच राजा चन्द्रगति है । सो देखकर जनक विचारता भया जो विजयार्ध पर्वत पर विद्याधर बसै है ऐसी मैं सुनता सो ये विद्याधर है । विद्याधरनिकी सेनाके मध्य यह विद्याधरो का अधिपति कोई परमदीप्ति कर शोभै है । ऐसा चितवन जनक करै है । ताही समय वह चन्द्रगति राजा दैत्यजातिके विद्याधरनिका स्वामी चैत्यालयविषै आय प्राप्त भया । महाहर्षवंत नमीभूत है शरीर जाका । तब जनक ताकू देखकर कछुइक भयवान होय भगवानके सिंहासनके नीचे बैठ रह्या । अर वह राजा चन्द्रगति भक्ति कर भगवानके चैत्यालयविषै जाय प्रणाम कर, विधिपूर्वक महा उत्तम पूजा करी । अर परम स्तुति करता भया । बहुरि सुन्दर है स्वर जाके, ऐसी बीणा हाथमें लेयकर महाभावना सहित भगवानके गुण गावता भया । सो कैसे गावै है सो सुनो । अहो भव्यजीव हो ! जिनेंद्र को आराधहु । कैसे हैं जिनेन्द्रदेव ? तीनलोकके जीवनिकू वरदाता, अर अविनाशी है सुख जिनके, अर देवनिमें श्रेष्ठ जे इन्द्रादिक तिनकर नमस्कार करनेयोग्य है । कैसे है इन्द्रादिक ? महा उत्कृष्ट जो पूजाका विधान ताविषै लगाया है चित्त जिन्होने । अहो उत्तम जन हो ! श्रीऋषभदेवको मन वच

कायकर निरतर भजो । कसे है ऋषभदेव ? महाउत्कष्ट ह, अर शिवदायक ह । जिनके भजेते जन्म २ के पाप किये समस्त विलय होय ह । अहो प्राणी हो ! जिनवरको नमस्कार करहु । कसे ह जिनवर? महा अतिशय धारक ह, कमनिके नाशक ह, अर परमगति जो निर्वाण ताकू प्राप्त भए ह । अर सब सुरासुर नर विद्याधर, उन कर पूजित ह चरण कमल जिनके । क्रोधरूप महाबरीका भग करनहारे ह । म भक्तिरूप भया जिनेद्रकू नमस्कार करू हू । उत्तम लक्षणकर सयुक्त ह देह जिनका, अर विनय कर नमस्कार कर ह सब मुनियोके समूह जिनको ते भगवान नमस्कार मात्र ही से भक्तोके भय हरे ह । अहो भव्य जीव हो ! जिनवरको बारम्बार प्रणाम करहु । वे जिनवर अनुपम गुणको धर ह, अर अनुपम ह काया जिनकी, अर हते ह ससारमई सकल कुकम जिनने, अर रागादिक रूप जे मल तिनकर रहित महानिमल ह, अर ज्ञानावरणादिक रूप जो पट तिनके दूर करनहारे, पारकरबेकू अति प्रवीण ह अर अत्यन्त पावत्र ह । या भाति राजा चद्रगति बीण बजाय भगवानकी स्तुति करी । तब भगवानके सिंहासनके नीचत राजा जनक भय तज कर जिनराजकी स्तुति कर निकस्या, महाशोभायमान । तब चद्रगति जनककू देख हर्षित भया ह मन जाका सो पूछता भया—तुम कौन हो ? या निजन स्थानकविष भगवानके चत्यालयविष कहात आए हो ? तुम नागोके पति नगेद्र हो अथवा विद्याधरो के अधिपति हो । हे मित्र ! तुम्हारा नाम क्या ह सो कहो । तब जनक कहता भया—हे विद्याधरोके पति ! म मिथिला नगरी से आया हू, अर मेरा नाम जनक ह । मायामई तुरग मोहि ले आया ह । जब ये समाचार जनकने कहे तब दोऊ अति प्रीतिकर मिले । परस्पर कुशल पूछी । एक आसन पर बठ, फिर क्षरण एक तिष्ठकर दोउ आपसमें विश्वासको प्राप्त भए । तब चद्रगति और कथाकर जनककू कहते भए—हे महाराज ! म बडा पुण्यवान जो मोहि मिथिला नगरीके पतिका दशन भया । तिहारी पुत्री महा शुभलक्षणनिकर मण्डित ह, म बहुत लोगनिके मुखसे सुनी ह । सो मेरे पुत्र भामडलको देवो, तुमसे सम्बध पाय म अपना परम उदय मानू गा । तब जनक कहते भए—हे

विद्याधराधिपति ! तुम जो कही सो सब योग्य है, परन्तु मैं मेरी पुत्री राजा दशरथके बडे पुत्र जो श्रीरामचन्द्र तिनकू देनी करी है। तब चन्द्रगति बोले काहेते उनको देनी करी है ? तब जनकने कही जो तुमको सुनिवेको कौतुक है तो सुनहु। मेरी मिथिलापुरी रत्नादिक धनकर अर गौ आदि पशुधन कर पूर्ण, सो अर्धबर्बर देशके म्लेच्छ महा भयंकर उन्होंने आय मेरे देशको पीडा करी, धनके समूह लूटने लगे, अर देशमें श्रावक अर यतिका धर्म मिटने लगा। सो मेरे अर म्लेच्छोंके महा युद्ध भया। ता समय राम आय मेरी अर मेरे भाई की सहायता करी। वे म्लेच्छ जो देवोंसें भी दुर्जय, सो जीते। अर रामका छोटा भाई लक्ष्मण, इन्द्र समान पराक्रमका धरणहारा है, अर बडे भाईका सदा आज्ञाकारी, महा विनयकर संयुक्त है। वे दोनो भाई आयकर जो म्लेच्छनिकी सेनाको न जीतते तो समस्त पृथ्वी म्लेच्छमई होजाती। वे म्लेच्छ महा अविवेकी शुभक्रियारहित, लोककू पीडाकारी महा भयंकर विष समान दारुण उत्पातका स्वरूप ही है। सो रामके प्रसाद कर सब भाज गए। पृथ्वीका अमंगल मिटगया। वे दोनो राजा दशरथके पुत्र महादयालु लोकनिके हितकारी, तिनकू पायकर राजा दशरथ सुखसे सुरपति समान राज्य करै है। ता दशरथके राजविषं महासम्पदावान लोक बसै है। अर दशरथ महा शूरवीर है। जाके राज्यमें पवनहू काहूका कछु नाहीं हर सकै तो और कौन हरे ? राम लक्ष्मणने मेरा ऐसा उपकार किया तब मोहि ऐसी चिंता उपजी जो मैं इनका कहा प्रतिउपकार करूं। रात्रि दिवस मोहि निद्रा न आवती भई। जाने मेरे प्राण राखे, प्रजा राखी, ता राम समान मेरे कौन ? मोतें कबहु कछु उनकी सेवा न बनी, अर उनने बडा उपकार किया।

तब मैं विचारता भया—जो अपना उपकार करै अर उसकी सेवा कछु न बनै तो कहा जीतव्य ? कृतघ्नका जीतव्य तृण समान है। तब मैंने मेरी पुत्री सीता नवयौवन पूर्ण रामयोग्य जान रामको देनी विचारी। तब मेरा सोच कछु इक मिट्या। मैं चितारूप समुद्रमें डूबा हुता सो पुत्री नावरूप भई ? तातैं मैं सोचसमुद्रतैं निकस्या। राम महा तेजस्वी है। यह वचन जनकके सुन चन्द्रगतिके

निकटवर्ती और विद्याधर मलिन मुख होय कहते भए—अहो ! तुम्हारी बुद्धि शोभायमान नाहीं। तुम भूमिगोचरी अपडित हो। कहा वे रक म्लेच्छ अर कहा उनके जीतवेकी बडाई ? यामें कहा रामका पराक्रम, जाको एती प्रशसा तुमने म्लेच्छनिके जीतवे कर करी। रामका जो ऐसा स्तोत्र किया सो इसमें उलटी निदा ह। अहो ! तुम्हारी बात सुन हासी आव ह, जस बालकको विषफल ही अमत भास ह, अर दरिद्रीकू बदरी (बेर) फल ही नीके लाग, अर काक सूके वक्षविष प्रीति कर, यह स्वभाव हो दुर्निवार ह। अब तुम भूमिगोचरियोका खोटा सम्बन्ध तजकर यह यह विद्याधरोका इन्द्र राजा चन्द्रगति तासू सबध करहु। कहा देवो समान सम्पदाके धरणहारे विद्याधर, अर कहा वे रक भूमिगोचरी ? सवथा अति दुखी। तब जनक बोले—क्षीरसागर अत्यन्त विस्तीण ह परन्तु तषा हरता नाहीं। अर वापिका थोडे ही मिष्ट जलसे भरी ह सो जीवनिकी तषा हर ह। अर अधकार अत्यन्त विस्तीण ह ताकर कहा ? अर दीपक अल्प भी ह परन्तु पथ्वीम प्रकाश कर ह पदाथनिको प्रकट कर है। अर अनेक माते हाथी जो पराक्रम न कर सक तो अकेला कसरी सिहका बालक कर ह। ऐस जब राजा जनक ने कहा तब वे सव विद्याधर कोपवत होय अति शब्दकर भूमिगोचरियोकी निदा करते भए। हो जनक ! वे भूमिगोचरी विद्याके प्रभावत रहित, सदा खेदखिन्न, शूरवीरतारहित, आपदावान, तुम कहा उनकी स्तुति करो हो ? पशुनिमे अर उनमें भेद कहा ? तमम विवेक नाहीं तात उनकी कीर्ति करो हो। तब जनक कहते भए—हाय ! हाय ! बडा कष्ट ह जो मने पापके उदयकरि बडे पुरुषनिकी निदा सुनी। तीन भवनमे विख्यात जे भगवान ऋषभदेव, इन्द्रादिक देवनिमे पूजनीक, तिनका इक्ष्वाकुवश लोकमें पवित्र, सो कहा तुम्हारे श्रवणमें न आया ? तीनलोकके पूज्य श्रीतीथकरदेव अर चक्रवर्ती बलभद्र नारायण सो भूमिगोचरियोमें उपजे तिनकू तुम कौन भाति निदो हो ? अहो विद्याधरो ! पचकल्याणकको प्राप्ति भूमिगोचरियोके ही होय ह, विद्याधरोमें कदाचित किसीके तुमने देखी ? इक्ष्वाकुवश में उपजे बडे बडे राजा, जो षट खड पथ्वीके जीतनहारे, तिनके चक्रादि महारत्न अर बडी ऋद्धिके

स्वामी, चक्रके धारी, इन्द्रादिककर गाई है जो उदार कीर्ति जिनकी, ऐसे गुणोंके सागर, कृतकृत्य पुरुष ऋषभदेवके वंशके बडे २ पृथ्वीपति या भूमिमें अनेक भए। ताही वंशमें राजा अरण्य बडे राजा भए। तिनके राणी समगला, ताके दशरथ पुत्र भए। जे क्षत्री धर्ममें तत्पर लोकनिकी रक्षा निमित्त अपना प्राण त्याग करते न शंक, जिनकी आज्ञा समस्त लोक सिर पर धरै। जिनकी चार पटराणी मानों चार दिशा ही हैं। सब शोभाकू धरै, गुणनिकर उज्ज्वल पांच सौ और राणी। मुखकर जीता है चन्द्रमा जिनने, जे नाना प्रकारके शुभ चरित्रनिकर पतिका मन हरे हैं। अर राजा दशरथके राम बडे पुत्र, जिनकू पदम कहिए। लक्ष्मीकर मंडित है शरीर जिनका, दीप्तिकर जीता है सूर्य अर कीर्तिकर जीता है चन्द्रमा, स्थिरताकर जीता है सुमेरु, शोभाकर जीता है इन्द्र, शूरवीरताकर जीते हैं सब सुभट जिनने, सुन्दर है चरित्र जिनके। जिनका छोटा भाई लक्ष्मण, जाके शरीरमें लक्ष्मीका निवास, जाके धनुषको देख शत्रु भयकर भाज जावे। अर तुम विद्याधरोंको उनसे भी अधिक बतावो हो सो काक भी तो आकाशमें गमन करै है तिनमें कहा गुण है ? अर भूमिगोचरनिमें भगवान तीर्थंकर उपजै हैं तिनको इन्द्रादिक देव भूमिमें मस्तक लगाय नमस्कार करै हैं, विद्याधरोंकी कहा बात ? ऐसे वचन जब जनकने कहे तब वे विद्याधर एकांतमें तिष्ठकर आपस में मंत्र कर जनककू कहते भए—हे भूमि गोचरनिके नाथ ! तुम राम लक्ष्मणका एता प्रभाव ही कहो हो, अर वृथा गरज गरज बातें करो हो सो हमारे उनके बल पराक्रमकी प्रतीति नाहीं। तातैं हम कहै हैं सो सुनहु। एक वज्रावर्त दूजा सागरावर्त, ये दो धनुष, तिनकी देव सेवा करै हैं। सो ये धनुष वे दोनों भाई चढावें तो हम उनकी शक्ति जानें। बहुत कहनेकर कहा जो वज्रावर्त धनुष राम चढावें तो तुम्हारी कन्या परणै, नातर हम बलात्कार कन्याकू यहां ले आवेंगे, तुम देखते ही रहोगे। तब जनकने कही यह बात प्रमाण है। तब उनने दोऊ धनुष दिखाए सो जनक उन धनुषनिकू अति विषम देखकर कछुएक आकुलताकू प्राप्त भया। बहुरि वे विद्याधर भाव थकी भगवानकी पूजा स्तुति कर गदा अर हलादि रत्नोंकर संयुक्त

धनुषनिकू ले और जनककू ले मिथिलापुरी आए। अर चन्द्रगति उपवनसे रथनूपुर गया। जब राजा जनक मिथिलापुरी आये तब नगरीकी महाशोभा भई, मगलाचरण भए, अर सब जन सम्मुख आए। अर वे विद्याधर नगरके बाहिर एक आयुधशाला बनाय तहा धनुष धरे अर महागवको धरते सते तिष्ठे। जनक खेदसहित, किंचित भोजन खाय, चिंताकर व्याकुल, उत्साहरहित सेजपर पडे। तहाँ महा नमीभूत उत्तम स्त्री बहुत आदर सहित चन्द्रमाकी किरणसमान उज्ज्वल चमर ढारती भई। राजा अति दीघ निश्वास महा उष्ण अग्नि समान नाखे। तब राणी विदेहाने कहा—हे नाथ! तुमने कौन स्वगलोककी देवागना दखी जिसके अनुरागकर ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भए हो ? सो हमारे जानने में वह कामिनी गुणरहित निदई ह जो तुम्हारे आतापविष करुणा नाहीं कर ह। हे नाथ! वह स्थानक हम बतावो जहात वाहि ले आव। तुम्हारे दुखकर मोहि दुख अर सकल लोकनिकू दुख होय ह। तुम ऐसे महासौभाग्यवत ताहि कहा न रुच। वह कोई पाषाणचित्त ह। उठो, राजावोको ज उचित काय होय सो करो। यह तिहारा शरीर ह तो सब मनवाछित काय होगे। या भाति राणी विदेहा जो प्राणहूत प्रिया हुती सो कहती भई। तब राजा बोले—हे प्रिये! हे शोभन! हे बल्लभे! मुझे खेद और ही ह, तू वृथा ऐसी बात कहि काहेको अधिक खेद उपजाव ह। तोहि या वत्तातकी गम्य नाहीं। तात ऐसे कह ह। वह मायामई तुरग मोहि विजयाधगिरिमें ले गया। तहा रथनूपुरके राजा चन्द्रगतिसे मेरा मिलाप भया। सो वान कही तुम्हारी पुत्री मेरे पुत्रको देवो। तब मने कही मेरी पुत्री दशरथके पुत्र श्रीरामचन्द्रको देनी करी ह। तब वाने कही जो रामचद्र वजावत धनुषकू चढावें तो तिहारी पुत्री परणें नातर मेरा पुत्र परणेगा। सो म तो पराए वश जाय पडया। तब उनके भय थकी अर अशुभकमके उदय थकी यह बात प्रमाण करी। सो वजावत अर सागरावत दोऊ धनुष ले विद्याधर यहा आये ह। ते नगरके बाहिर तिष्ठ ह। सो म ऐसी जानू हू ये धनुष इन्द्रहूत चढाए न जाय। जिनकी ज्वाला दशोदिशामें फल रही ह, अर मायामई नाग फुकार ह, सो नेत्रनिसो तो देखा न जावें। धनुष विना चढाये ही स्वत स्वभाव महाभयानक शब्द कर

हैं। इनको चढायवेकी कहा बात ? जो कदाचित श्रीरामचन्द्र धनुषकू न चढावें तो यह विद्याधर मेरी पुत्रीकू जोरावरी लेंजावेंगे, जैसे स्यालके समीपत मासकी डली खग कहिए पक्षी ले जाय। सो धनुषके चढायवेका बीस दिन बाकी ह। एही करार ह। जो न बना तो वह कन्याकू ले जायगे। फिर याका देखना दुलभ ह। हे श्रणिक ! जब राजा जनक या भाति कही तब राणी विदेहाके नेत्र अश्रुपातसू भर आये, अर पुत्रके हरनेका दु ख भूल गई हुती सो याद आया। एक तो प्राचीन दुख, बहुरि नवीन दुख, अर आगामी दुख, सो महाशोककर पीडित भई, महा शब्दकर पुकारने लगी। ऐसा रुदन किया जो सकल परिवारके मनुष्य विह्वल हो गए। राजासू राणी कह ह–हे देव ! म ऐसा कौनसा पाप किया जो पहिले तो पुत्र हरचा गया, अर अब पुत्री भी हरी जाय ह। मेरे तो स्नेहका अवलबन एक यह शुभ चेष्टित पुत्री ही ह। मेर तिहारे सव कुटुम्ब लोगनिके यह पुत्री ही आनन्दका कारण ह। सो पापिनिके एक दुख नाहीं मिट ह अर दूजा दुख आय प्राप्त होय ह। या भाति शोकके सागरमें पडी राणी रुदन करती, ताहि राजा धीय बधाय कहते भए–हे राणी ! रुदनकर कहा ? जो पूर्व या जीवने कम ऊपार्जे ह तिनके उदय अनुसार फल ह। ससाररूप नाटकका आचाय जो कम सो समस्त प्राणीनिकू नचाव ह। तेरा पुत्र गया सो अपने अशुभके उदयत गया। अब शुभ कमका उदय ह सो सकल मगल ही होहिं। ऐसे नानाप्रकारके सार वचननिकर राजा जनकने राणी विदेहाकू धीय बधाया। तब राणी शातिकू प्राप्त भई।

बहुरि राजा जनक नगर बाहिर जाय धनुषशालाके समीप स्वयवर मडप रच्या, अर सकल राजपुत्रनिके बुलायवेकू पत्र पठाये। सो पत्र बाच बाच सब राजपुत्र आये। अर अयोध्या नगरीको हू दूत भेजे सो माता पिता सयुक्त रामादिक चारो भाई आये। राजा जनक बहुत आदरकर पूजे। सीता परमसुन्दरी मातसौ कन्याओंके मध्य महलके ऊपर तिष्ठ ह। बडे २ सामत याकी रक्षा करै। अर एक महा पडित खोजा जानै बहुत देखी, बहुत सुनी है, स्वणरूप वेतकी छडी जाके हाथमें, सो ऊचे शब्द

कर कहे ह, प्रत्येक राजकुमारको दिखाव ह । हे राजपुत्री ! यह श्रीरामचन्द्र कमललोचन राजा दशरथ के पुत्र ह, तू नीके देख । अर यह इनका छोटाभाई लक्ष्मीवान लक्ष्मण है, महा ज्योतिकू धर । अर यह इनका भाई महाबाहु भरत ह । अर यह यात छोटा शत्रुघन ह । यह चारो ही भाई गुणनिके सागर ह । इन पुत्रनिकर राजा दशरथ पथ्वीकी भलीभाति रक्षा कर ह, जाके राज्यमें भयका अकुर नाहीं । अर यह हरिबाहन महा बुद्धिमान काली घटासमान ह प्रभा जाकी । अर यह चित्ररथ महा गुणवान, तेजस्वी, महा सु दर ह । अर यह हमु ख नामा कुमार अतिमनोहर महातेजस्वी ह । अर यह श्रीसजय, यह जय, यह भानु, यह सुप्रभ, यह मदिर, यह बुध, यह विशाल यह श्रीधर, यह वीर यह बधु, यह भद्रवल, यह मयूरकुमार इत्यादि अनेक राजकुमार महापराक्रमी महासौभाग्यवान निमल वशके उपजे, च द्रमा समान निमल ह काति जिनकी, महागुणवान, भूषणके धरणहारे, परम उत्साह रूप, महाविनयवत, महाज्ञानी, महाचतुर आय इकटठे भए ह । अर यह सकाशपुरका नाथ, याके हस्ती पवतसमान, अर तुरग महाश्रेष्ठ, अर रथ महामनोज्ञ अर योधा अदभुत पराक्रमके धारी । अर यह सुरपुरका राजा, यह रधपुरका राजा, यह न दपुरका राजा यह कु दनपुरका अधिपति, यह मगध देशका राजे द्र, यह कपिल्य नगरका नरपति, इनमें कईएक इक्ष्वाकुवशी अर कईएक नागवशी, अर कईएक सोमवशी, अर कईएक उग्रवशी, अर कईएक हरिवशी, अर कईएक कुरुवशी । इत्यादि महागुणवत जो राजा सुनिए ह ते सव तेरे अथ आए ह । इनके मध्य जो पुरुष वजावत धनुषकू चढाव ताहि तू वर । जो पुरुषनिमें श्रेष्ठ होयगा ताहीसू यह काय होयगा । या भाति खोजा कही । अर राजा जनक सबनिकू एकत्रकर सव ही राजकुमार अनुक्रमत धनुषकी ओर पठाए सो गए । सुन्दर ह रूप जिनका सो सव ही धनुषकू देख कम्पायमान भए । धनुषत सव ओर अग्निकी ज्वाला बिजुली समान निकस । अर मायामई भयानक सप फु कार कर । तब कईएक तो कानोपर हाथ धर भागे । अर कईएक धनुषकू देख कर दूर ही कोलेसे ठाढे रहे, काप ह समस्त अग जिनके, अरमु द गए ह नत्र जिनके । अर कईएक

ज्वरकरि व्याकुल भए, अर कईएक धरतीविषै गिर पडे, अर कईएक ऐसे भए जो बोल न सके। अर कईएक मूर्छाकूं प्राप्त भये, अर कईएक धनुषके नागनिके स्वासकरि जैसे वृक्षका सूका पत्र पवनसे उडा उडा फिर तैसे उडते फिरे, अर कईएक कहते भए जो अब जीवते घर जावें तो महादान करैं, सकल जीवनिकूं अभयदान देवें। अर कईएक ऐसे कहते भये, यह रूपवती कन्या है तो कहा? याके निमित्त प्राण तो न देने। अर कईएक कहते भये यह कोई मायामई विद्याधर आया है सो राजावोंके पुत्रनिकूं बाधा उपजाई है। अर कई एक महाभाग ऐसे कहते भये अब हमारे स्त्रीतै प्रयोजन नाहीं, यह काम महा दुखदाई है। जैसे अनेक साधु अथवा उत्कृष्ट श्रावक शीलव्रत धारै हैं तैसे हमहू शीलव्रत धारेंगे, धर्म ध्यानकर काल व्यतीत करेंगे। या भांति सब पराङ्मुख भए। अर श्रीरामचन्द्र धनुष चढावनेकूं उद्यमी उठकर महामाते हाथीकी नाईं मनोहर गतिसे चलते, जगतकूं मोहते, धनुषके निकट गए। सो धनुष रामके प्रभावतै ज्वाला रहित होय गया। जैसा सुन्दर देवोपुनीत रत्न है तैसा सौम्य होयगया। जैसे गुरुके निकट शिष्य सौम्य होयजाय। तब श्रीरामचन्द्र धनुषकूं हाथमें लेयकरि चढायकर खैंचते भए सो महाप्रचंड शब्द भया, पृथ्वी कम्पायमान भई। कैसा है धनुष? विस्तीर्ण है प्रभा जाकी, जैसा मेघ गाजै तैसा धनुषका शब्द भया। मयूरनिके समूह मेघका आगमन जान नाचने लगे। जाके तेजके आगे सूर्य ऐसा भासने लग्या जैसा अग्निका कणा भासै। अर स्वर्णमई रजकर आकाशके प्रदेश व्याप्त होय गए। यह धनुष देवाधिष्ठित है सो आकाशविषै धन्यधन्य शब्द कहते भए, अर पुष्पनिकी वर्षा होती भई। देव नृत्य करते भए। तब राम महादयावंत धनुषके शब्दकरि लोकनिकूं कम्पायमान देख धनुषकूं उतारते भए। लोक ऐसे डरे मानो समुद्रके भ्रमरमें आय गये हैं, तब सीता अपने नेत्रनि करि श्रीरामकूं निरखती भई। कैसे हैं नेत्र? पवनकरि चंचल, जैसे कमलोंका दल होय तातैं अधिक है कांति जिनकी, अर जैसा कामका बाण तीक्ष्ण होय तैसे तीक्ष्ण हैं। सीता रोमांचकर संयुक्त मनकी वृत्तिरूप माला जो प्रथम देखते ही इनकी ओर प्रेरी हुती बहुरि लोकाचार निमित्त हाथमें रत्नमाला

लेकर श्रीरामके गलेमें डारी । लज्जासे नमीभूत है मुख जाका तैसे जिनधर्मके निकट जीवदया तिष्ठै, तैसे रामके निकट सीता आय तिष्ठी । श्रीराम अतिसुन्दर हुते सो याके समीपते अत्यन्त सुन्दर भासते भए । इन दोऊनिके रूपका दृष्टांत देवेमें न आवै । अर लक्ष्मण दूजा धनुष सागरावर्त, क्षोभकूं प्राप्त भया जो समुद्र समान है शब्द जाका, उसे चढाय खचते भए । सो पृथ्वी कम्पायमान भई । आकाश में देव जयजयकार शब्द करते भये, अर पुष्पवर्षा होती भई । लक्ष्मण धनुषकूं चढाय खचकर जब बाणपर दृष्टि धरी तब सब डरे । लोकनिकूं भयरूप देख आप धनुषकी पिणच उतार महाविनय संयुक्त रामके निकट आए । जैसे ज्ञानके निकट वैराग्य आवै । लक्ष्मणका ऐसा पराक्रम देख चंद्रगति का पठाया जो चंद्रवर्द्धन विद्याधर आया हुता, सो अतिप्रसन्न होय अष्टादश कन्या विद्याधरनिकी पुत्री लक्ष्मण कूं दीनी । श्रीराम लक्ष्मण दोऊ धनुष लेय महाविनयवन्त पिताके पास आए—अर सीताहू आई । अर जेते विद्याधर आय हुते सो राम लक्ष्मणका प्रताप देख चन्द्रवर्द्धनकी लार रथनूपुर गये । जाय राजा चन्द्रगतिकूं सब वृत्तांत कह्या । सो सुनकर चितावान होय तिष्ठ्या । अर स्वयम्बर मंडप में रामके भाई भरत हू आए हुते सो मनमें ऐसा विचारते भये कि मेरा अर राम लक्ष्मणका कुल एक, अर पिता एक परन्तु इनकासा अद्भुत पराक्रम मेरा नाहीं । यह पुण्याधिकारी है, इनकेसे पुण्य मैंने न उपार्जे । यह सीता साक्षात लक्ष्मी, कमलके भीतर दल समान है वर्ण जाका, राम सारिखा पुण्याधि-कारी हीकी स्त्री होय । तब केकई इनकी माता सब कलाविषै प्रवीण भरतके चित्तका अभिप्राय जान पतिके कानविषै कहती भई—हे नाथ! भरतका मन कछुइक बिलखा दीखै है, ऐसा करो जो यह विरक्त न होय । इस जनकके भाई कनकके राणी सुप्रभा, उसकी पुत्री लोकसुन्दरी है, सो स्वयंबर मंडपकी विधि बहुरि करावो अर वह कन्या भरतके कण्ठमें वरमाला डारे तो यह प्रसन्न होय । तब दशरथ याकी बात प्रमाणकर कनकके कान पहुँचाई । तब कनक दशरथकी आज्ञा प्रमाणकर जे राजा गए हुते सो पाछे बुलाये । यथायोग्य स्थानविषै तिष्ठे । सब जे भूपति तेई भये नक्षत्रनिके समूह तिन

विष तिष्ठता जो भरतरूप चन्द्रमा ताहि कनककी पुत्री लोकसुन्दरीरूप शुक्लपक्षकी रात्रि सो महा अनुरागकरि वरती भई। मनकी अनुरागतारूप माला तो पहिले अवलोकन करते ही डारी हुती, बहुरि लोकाचारमात्र सुमन कहिये पुष्प तिनकी वरमाला भी कण्ठमें डारी। कसी है कनककी पुत्री ? कनक समान ह प्रभा जाकी, जैसे सभद्रा भरत चक्रवर्तीकू वरचा हुता तसे यह दशरथके पुत्र भरतको वरती भई। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकत कह ह—हे श्रेणिक! कर्मनिकी विचित्रता देख, भरत जैसे विरक्त चित्त राजकन्या पर मोहित भए। अर सब राजा विलखे होय अपने अपने स्थानक गए। जान जैसा कर्म उपार्जा होय तसा ही फल पाव ह। किसीके द्रव्यको दूसरा चाहनेवाला न पाव।

अथानन्तर मिथिलापुरीमें सीता अर लोकसुन्दरीके विवाहका परम उत्साह भया। कसी ह मिथिलापुरी ध्वजा अर तोरणनिक समूहकरि मडित ह, अर महा सुगन्ध करि भरी ह, शख आदि वादित्रनिके समूहसे पूरित ह। श्रीरामका अर भरतका विवाह महाउत्सव सहित भया। द्रव्यकरि भिक्षुक लोक पूर्ण भए। जे राजा विवाहका उत्सव देखवेकू रहे हुते ते दशरथ अर जनक कनक दोनो भाईसे अति सन्मान पाय अपन अपने स्थानक गये। राजा दशरथके पुत्र चारो, रामकी स्त्री सीता, भरतकी स्त्री लोकसुन्दरी महा उत्सवनिसू अयोध्याके निकट आये। कसे ह दशरथके पुत्र ? सकल पृथ्वीविष प्रसिद्ध है कीर्ति जिनकी, अर परमरूप परमगुण, सोई भया समुद्र, ताविष मग्न ह। अर परम रत्ननिके आभूषण तिनकर शोभित ह शरीर जिनके, माता पिताकू उपजाया ह महाहर्ष जिनने, नानाप्रकारके वाहन तिनकर पूर्ण जो सेना, सोई भया सागर, जहा अनेक प्रकारके वादित्र बाजे ह, जैस जलनिधि गाजै, ऐसी सेना सहित राजमार्ग होय महिल पधारे। मार्गमें जनक अर कनकको पुत्रीकू सब ही देख है। सो देख देख अति हर्षित होय ह, अर कह ह इनकी तुल्य और कोऊ नाहीं। यह उत्तम शरीरकू धरै ह इनके देखवेकू नगरके नर नारी मार्गमें आय इकटठे भये, तिनकरि मार्ग अति सकीर्ण भया। नगरके दरवाजे सो ले राजमहिल परियत मनुष्यनिका पार नाहीं। किया ह समस्त जननिने आदर जिनका

ऐसे दशरथके पुत्र इनके श्रेष्ठ गुणनिकी ज्यो ज्यो लोक स्तुति कर त्यो त्यो ये नीचे हो रहे। महा सुखके भोगनहारे ये चारो ही भाई सुबुद्धि अपने अपने महिलनिमें आनन्दसो विराज। यह सब शुभ कमका फल विवेकी जन जानकर ऐसे सुकृत करहु जाकरि सूयत अधिक प्रताप होय। जेते शोभायमान उत्कष्ट फल ह ते सव धमके प्रभावत ह। अर जो महानिद्य कटुक फल ह ते सब पापकमके उदयत। तात सुखके अर्थि पापक्रियाकू तजहु, अर शुभक्रिया करहु।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष राम लक्ष्मणका धनुष चढावने आदि प्रताप वणन अर रामका सीतासो तथा भरत का लोकसु दरीसो विवाह वणन करनेवाला अठाईसवा पव पूण भया ॥ २८ ॥

अथानन्तर आषाढ शुक्ल अष्टमीत अष्टाह्निका का महा उत्सव भया। राजा दशरथ जिनेन्द्रकी महा उत्कष्ट पूजा करनेकू उद्यमी भया। राजा धमविष अति सावधान ह। राजाकी सब राणी, पुत्र, बाधव तथा सकल कुटुम्ब जिनराजके प्रतिबिम्बनिको महा पूजा करवेकू उद्यमी भए। केई बहुत आदर से पच वणके जे रत्न तिनके चूणका माडला माडे ह। अर कई नानाप्रकारके रत्ननिकी माला बनावे ह, भक्तिविष लाया ह अधिकार जिनने। अर कोऊ एला (इलायची) कपूरादि सुगन्ध द्रव्यनिकरि जलकू सुगन्ध कर ह, अर कोऊ सुगन्ध जलसे पथ्वीको छाटें ह, अर कोऊ नानाप्रकारके परम सुगन्ध पीसे ह, अर कोऊ जिनमदिरोके द्वारनिकी शोभा अति ददीप्यमान वस्त्रनिकरि कराव ह, अर कोऊ नाना प्रकारके धातुओके रगोकर चत्यालयनिकी भीतियोको मडवावे ह। या भाति अयोध्यापुरीके सब ही लोक वीतराग देवकी परम भक्तिको धरते सते अत्यन्त हषकरि पूण जिनपूजाके उत्साहसे उत्तम पुण्यकू उपाजते भए। राजा दशरथ भगवानका अति विभूतिकरि अभिषेक करावता भया। नाना-प्रकारके वादित्र बाजते भये। राजा अष्ट दिनोके उपवास किए, अर जिनेन्द्रकी अष्ट प्रकारके द्रव्य नित महा पूजा करी, अर नानाप्रकारके सहज पुष्प अर कत्रिम कहिए स्वण रत्नादिकके रचे पुष्प

तिनकरि अर्चा करी। जैसे नंदीश्वर द्वीपविषै देवनिकरि संयुक्त इन्द्र जिनेन्द्र की पूजा करै तैसे राजा दशरथने अयोध्यामें करी। अर राजा चारों ही पटरानियोंको गंधोदक पठाया सो तीनके निकट तो तरुण स्त्री ले गई, सो शीघ्र ही पहुँचा। वे उठकर समस्त पापोंका दूर करनहारा जो गंधोदक ताहि मस्तक अर नेत्रनिते लगावती भई। अर राणी सुप्रभाके निकट वृद्ध खोजा ले गया हुता सो शीघ्र नहीं पहुँचा। तातै राणी सुप्रभा परमकोप अर शोककूं प्राप्त भई। मनमें चिंतवती भई जो राजा उन तीन राणिनिको गंधोदक भेज्या अर मोहि न भेज्या सो राजाका कहा दोष है? मैं पूर्व जन्ममें पुण्य न उपजाया, वे पुण्यवती महा सौभाग्यवती प्रशंसा योग्य हैं जिनको भगवानका गंधोदक महा पवित्र राजाने पठाया। अपमानकर दग्ध जो मैं सो मेरे हृदयका ताप और भांति न मिटै, अब मुझे मरण ही शरण है। ऐसा विचार एक विशाखनामा भण्डारीकूं बुलाय कहती भई—हे भाई! यह बात तू काहूसे मत कहियो, मोहि विषतै प्रयोजन है। सो तू शीघ्र ले आ। तब प्रथम तो वाने शंकावान होय लायवेमें ढील करी, बहुरि विचारी कि औषधि निमित्त मंगाया होगा सो लेवेकूं गया। अर राणी शिथिलगात्र मलिन चित्त वस्त्र ओढ सेजपर पडी। राजा दशरथने अंतःपुरमें आयकर तीन राणी देखी, सुप्रभा न देखी। सुप्रभासूं राजाका बहुत स्नेह सो इसके महिलमें राजा आय खडे रहे। ता समय जो विष लेनेकूं पठाया हुता सो ले आया अर कहता भया—हे देवि! यह विष लेहु। यह शब्द राजा ने सुना तब उसके हाथसे उठाय लिया अर आप राणीकी सेजपर बैठ गए। तब राणी सेजसे उतर बैठी। तब राजा आग्रहकर सेजऊपर बैठाई। अर कहते भए—हे वल्लभे! ऐसा क्रोध काहेतै किया, जाकर प्राण तजा चाहे है। सब वस्तुनितै जीतव्य प्रिय है, अर सब दुःखोंसे मरणका बडा दुःख है। ऐसा तोहि कहा दुःख है जो विष मंगाया। तू मेरे हृदयका सर्वस्व है, जाने तुझे क्लेश उपजाया होय ताको मैं तत्काल तीव्र दंड दूं। हे सुन्दरमुखी! तू जिनेन्द्रका सिद्धांत जाने है। शुभ अशुभ गतिके कारण जाने है। जो विष तथा शस्त्र आदिसे अपघात कर मरै हैं ते दुर्गतिमें पडे हैं। ऐसी बुद्धि तोहि

क्रोधसे उपजी सो क्रोधको धिक्कार। यह क्रोध महा अंधकार है। अब तू प्रसन्न हो। जे पतिव्रता हैं तिनने जौलग प्रीतमके अनुरागके वचन न सुने तौलग ही क्रोधका आवेश है। तब सुप्रभा कहती भई हे नाथ! तुमपर कोप कहा? परन्तु मुझे ऐसा दुःख भया जो मरण विना शांत न होय। तब राजा कही–हे राणी! तोहि ऐसा कहा दुःख भया? तब राणी कही भगवानका गंधोदक और राणिनिकूं पठाया अर मोहि न पठाया, सो मोमें कौन कायकर हीनता जानी? अबलों तुम मेरा कभी भी अनादर न किया अब काहेत अनादर किया? यह बात राजासों राणी कहै है ता समय वृद्ध खोजा गंधोदक ले आया, अर कहता भया–हे देवी! यह भगवानका गंधोदक नरनाथ तुमको पठाया सो लेहु। अर ता समय तीनों राणी आइ अर कहती भइ–हे मुग्धे! पतिकी तोपर अति कृपा है, तू कोपको काहे प्राप्त भई? देख हमकूं तो गंधोदक दासी ले आई अर तेरे वृद्ध खोजा ले आया। पतिके तोसूं प्रेमकी न्यूनता नाहीं, जो पतिमें अपराध भी होय अर वह आय स्नेहकी बात करे तो उत्तम स्त्री प्रसन्न ही होय है। हे शोभने! पतिसूं क्रोध करना सुखके विघ्नका कारण है। सो कोप उचित नाहीं। सो तिनने जब या भांति संतोष उपजाया तब सुप्रभाने प्रसन्न होय गंधोदक शीशपर चढाया अर नेत्रनिकूं लगाया। राजा खोजासे कोपकर कहते भए। हे निकृष्ट! तैं एती ढील कहा लगाई? तब वह भयकर कंपायमान होय हाथ जोड सीस निवाय कहता भया–हे भक्तवत्सल! हे देव! हे विज्ञानभूषण! अत्यन्त वृद्ध अवस्था कर हीनशक्ति जो मैं, सो मेरा कहा अपराध? मोपर आप कोप करो, सो मैं क्रोधका पात्र नाहीं। प्रथम अवस्थाविषै मेरे भुज हाथीके सूंड समान हुते, उरस्थल प्रबल, अर जांघ गजबंधन तुल्य हुती, अर शरीर दृढ हुता। अब कर्मनिके उदयकरि शरीर शिथिल होय गया। पूर्वे ऊंची नीची धरती राजहंसकी न्याइ उलंघ जाता, मनवांछित स्थान जाय पहुँचता, अब अस्थानकतै उठा भी नहीं जाय है। तिहारे पिताके प्रसादकर मैं यह शरीर नानाप्रकार लडाया था सो अब कुमित्रकी न्याई दुःखका कारण होय गया। पूर्वे मुझे वरीनिके विदारनेकी शक्ति हुती सो अब तो लाठीके अवलंबनकर

महाकष्टसू फिरू ह । बलवान परुषनिकर खवा जो धनुष वा समान वक्र मेरी पीठ हो गई ह, अर मस्तकके केश अ स्थिसमान श्वेत होय गए ह, अर मेरे दातहू गिर गए मानो शरीरका आताप दख न सक । हे राजन ! मेरा समस्त उत्साह विलय गया । ऐसे शरीरकर कोई दिन जीवू हू सो बडा आश्चय ह । जराकरि अत्य त जजरा मेरा शरीर, साझ सकारे विनश जायगा । मोहि मेरी कायाकी सुधि नाहीं तो और सुध कहासे होय ? पूर्वे मेरे नेत्रादिक इन्द्रिय विचक्षणताकू धरे हुते, अब नाम मात्र रहगए ह । पाय धरू किसी ठौर अर पर काहू ठौर । समस्त पथ्वीतल दष्टिकर श्याम भास ह । ऐसी अवस्था होय गई तो भी बहुत दिननित राजद्वारकी सेवा ह सो नाहीं तज सकू हू । पक्के फलसमान जो मेरा तन ताहि काल शीघ्र ही भक्षण करेगा । मोहि मत्युका ऐसा भय नाही जसा चाकरी चूकने का भय ह । अर मेरे आपका आज्ञा हीका अवलबन ह और अवलम्बन नाही । शरीरकी अशक्तिता कर विलब होय ताकू म कहा करू । हे नाथ ! मेरा शरीर जराके आधीन जान कोप मत करो कपा ही करो । ऐसे वचन खोजाके राजा दशरथ सुनकर वामा हाथ कपोलके लगाय चितावान होय विचारता भया, अहो यह जलके बुदबुदा समान असार शरीर, क्षणभगुर ह, अर यह यौवन बहुत विभ्रमकू हू धर सध्याके प्रकाश समान अनित्य ह, अर अज्ञानका कारण ह, बिजलीके चमत्कार समान शरीर अर सम्पदा तिनके अथ अत्य त दु खके साधन कम यह प्राणी कर ह । उन्मत्त स्त्रीके कटाक्षसमान, चचल सपके फण समान, विषके भरे, महातापके समूहके कारण ये भोग ही जीवनकू ठग हैं, तात महा ठग हैं । ये विषय विनाशीक, इनसे प्राप्त हुआ जो दुख सो मूढनिकू सुखरूप भास ह । ये मूढ जीव विषयनि-की अभिलाषा कर ह अर इनकू मनवाछित विषय दुष्प्राप्य ह, विषयोके सुख देखनेमात्र मनोज्ञ ह । अर इनके फल अति कटुक ह । ये विषय इन्द्रायणके फल समान ह, ससारी जीव इनकू चाह ह सो बडा आश्चय है । जे उत्तमजन विषयनिकू विषतुल्य जानकर तज ह अर तप कर ह । ते धन्य ह अनेक विवेकी जीव पुण्याधिकारी महा उत्साहके धरणहारे जिनशासनके प्रसादकरि प्रबोधकू प्राप्त भए ह । मै कब इन

विषयनिका त्यागकर स्नेहरूप कीचसे निकस निवृत्तिका कारण जिनेन्द्रका तप आचरू गा। मैं पृथ्वी की बहुत सुखसे प्रतिपालना करी, अर भोग भी मनवांछित भोगे, अर पुत्र भी मेरे महापराक्रमी उपजे। अब भी मैं वैराग्य विषै विलम्ब करू तो यह बडी विपरीत है। हमारे वंशकी यह रीति है कि पुत्रकू राज्यलक्ष्मी देकर वैराग्यको धारण कर महाधीर तप करनेकू वनमें प्रवेश करै। ऐसा चितवनकर राजा भोगनित उदासचित्त कई एक दिन घरमें रहे। हे श्रेणिक! जो वस्तु जा समय जा क्षेत्रमें जाकी जाको जेती प्राप्त होनी होय सो ता समय ता क्षेत्रमें तासे ताकू तेती निश्चय सेती होय ही होय।

गौतम स्वामी कहै है—हे मगध देशके भूपति! कईएक दिनोमे सब प्राणीनिके हित सर्वभूपति नामा मुनि बडे आचार्य, मन पर्ययज्ञानके धारक, पृथ्वीविषै विहार करते संघसहित सरयू नदीके तीर आए। कहै है मुनि? पिता समान छह कायके जीवनिके पालक, दयाविषै लगाई है मन वचन कायकी क्रिया, जिन आचार्यकी आज्ञा पाय कईएक मुनि तो गहन वनमें विराजे, कईएक पर्वतनिकी गुफानिमें, कई एक वनके चैत्यालयनिमें, कईएक वृक्षनिके कोटरनिमें, इत्यादि ध्यान योग्य स्थाननिमें साधु तिष्ठे। अर आप आचार्य महेन्द्रोदय नामा वनमें एक शिलापर जहां विकलत्रय जीवनिका संचार नाहीं, अर स्त्री नपुंसक बालक ग्राम्यजन पशुनिका संसर्ग नाहीं, ऐसा जो निर्दोष स्थानक तहां नागवृक्षके नीचे निवास किया। महागम्भीर महाक्षमावान, जिनका दर्शन दुर्लभ, कर्म खिपावनके उद्यमी महा उदार है मन तिनका, महामुनि तिनके स्वामी, वर्षाकाल पूर्ण करवेकू समाधि योग धर तिष्ठे। कैसा है वर्षाकाल? विदेश गमन किया तिनकू भयानक है। वर्षती जो मेघमाला अर चमकती जो विजुरी अर गरजती कारीघटा तिनकी भयंकर जो ध्वनि, ताकरि मानो सूर्यको खिझावता संता पृथ्वीपर प्रकट भया है। सूर्य ग्रीष्म ऋतुविषै लोकनिकू आतापकारी हुता सो अब स्थूल मेघकी धारा अंधकारत भय थकी भाज मेघमालामें छिप्या चाहै है। अर पृथ्वी तल हरे नाजके अंकुरनिरूप कंचुकिन

कर मडित ह । अर महानदियनिके प्रवाह वद्धिकू प्राप्त भए ह ढाहा पहाडत बहै हैं । इस ऋतुमें जे गमन करे है ते अति कम्पायमान होय हं अर तिनके चित्तमें अनेक प्रकार की भाति उपज ह । ऐसी वर्षा ऋतुमें जनी जन खडगकी धार समान कठिन व्रत निरतर धार ह । चारण मुनि अर भूमिगोचरी मुनि चातुर्मासिकमें नानाप्रकारकें नियम धरते भए । हे श्रेणिक ! ते मुनि तेरी रक्षा करहु रागादिक परणतित तोहि निवृत्त करहु ।

अथानन्तर प्रभात समय राजा दशरथ वादित्रनिके नादकरि जागत भया, जसे सूर्य उदयकू प्राप्त होय । अर प्रात समय कूकडे बोलने लगे, सारिस चकवा, सरोवर तथा नदियनिके तटविष शब्द करते भए । स्त्री पुरुष सेजनित उठे । भगवानके चत्यालय तिनविष भेरी मदग बीणा वादित्रनिके नाद होते भए । लोक निद्राकू तज जिन पूजनादिक विष प्रवरते । दीपक मद ज्योति भए । चन्द्रमाकी प्रभा मद भई । कमल फूले, कुमुद मुद्रित भए । अर जस जिन सिद्धातके ज्ञातनिके वचननिकरि मिथ्यावादी विलय जाय तस सूयकी किरणनिकरि ग्रह तारा नक्षत्र छिप गए । या भाति प्रभात समय अत्यन्त निमल प्रकट भया । तब राजा देहकत्य क्रियाकर भगवानकी पूजाकर बारबार नमस्कार करता भया । अर भद्र जातिकी हथिनीपर चढ, देवनि सारिखे जे राजा तिनके समूहनिकर सयुक्त, ठौर २ मुनिनकू अर जिनमन्दिरनिकू नमस्कार करता महेन्द्रोदय वनमें पथ्वीपति गया । जाकी विभूति पथ्वीकू आनद उपजावनहारी, वर्षोंपर्यंन व्याख्यान करिए तो भी न कह सकिये । जो गुणरूप रत्ननिका सागर जा समय याकी नगरीके समीप आव ताही समय याकू खबर होय । जो मुनि आए ह तब ही यह दशनकू जाय । सो सव भूत हित मुनिकू आए सुन, तिनके निकट केते समीपी लोकनि सहित आया । हथिनीसू उतर अति हषका भरया नमस्कारकर महाभक्ति सयुक्त सिद्धात सम्बन्धी कथा सुनता भया । चारो अनुयोगनिकी चर्चा धारी, अर अतीत अनागत वतमान कालके जे महापुरुष तिनके चरित्र सुने । लोकालोकका निरूपण, अर छह द्रव्यनिका स्वरूप, छह कायके जीवनिका वणन, छह

लेश्याका व्याख्यान, अर छहोकालका कथन, अर कुलकरनिकी उत्पत्ति, अर अनेक प्रकार क्षत्रियादिकनि के वश अर सप्त तत्त्व, नव पदार्थ, पचास्तिकायका वर्णन आचार्यके मुखतैं श्रवणकर सब मुनियनिकू बारम्बार नमस्कारकर राजा धर्मके अनुरागकरि पूर्ण नगरमें आए। जिनधर्मके गुणनिकी कथा निकट वर्ती राजानिसो अर मत्रियनिसू कर अर सबनिकू विदाकर महलमे प्रवेश करता भया। विस्तीर्ण है विभव जाके। अर राणी लक्ष्मीतुल्य परमकातिकर सपूर्ण चन्द्रमा समान सम्पूर्ण सुन्दर वदनकी धरण-हारी, नेत्र अर मनकी हरणहारी, हाव भाव विलास विभ्रमकर मडित, महा निपुण, परम विनयकी करणहारी प्यारी तेई भई कमलनिकी पक्ति, तिनकू राजा सूर्य समान प्रफुल्लित करता भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकीभाषा वचनिकाविषै अष्टाह्निका आगम अर राजा दशरथ का धर्मश्रवण वर्णन नाम वर्णन करने वाला उनतीसवा पर्व पूर्ण भया ॥ २९ ॥

अथानन्तर मेघके आडम्बरकर युक्त जो वर्षाकाल सो गया अर आकाश सभारे खडगकी प्रभा समान निर्मल भया। पद्म महोत्पल पुण्डरीक इन्दीवरादि अनेक जातिके कमल प्रफुल्लित भए। कैसे हैं कमलादिक पुष्प ? विषयी जीवनिकू उन्मादके कारण हैं। अर नदी सरोवरादिविषै जल निर्मल भया जैसा मुनिका चित्त निर्मल होय तैसा। अर इन्द्रधनुष जाते रहे। पृथ्वी कर्दम रहित होय गई। शरदऋतु मानू कुमुदनिक प्रफुल्लित होनेसे हसती हुई प्रकट भई। विजुरियोके चमत्कारकी सभावना ही गई। सूर्य तुलाराशिपर आया। शरदके श्वेत बादरे कहू कहू दृष्टि आवें सो क्षणमात्रमें विलाय जाय। निशारूप नवोढा स्त्री सध्याके प्रकाशरूप महा सुन्दर लाल अधरनिकू धरे, चादनीरूप निर्मल वस्त्रनिकू पहिर, चन्द्रमारूप है चूडामणि जाके, सो अत्यन्त शोभती भई। अर वापिका निर्मल जल की भरी मनुष्यनिके मनकू प्रमोद उपजाती भई। चकवा चकवीके युगल करे हैं केलि जहा, अर मदोन्मत्त जे सारिस ते करे हैं नाद जहा, कमलनिके वनमें भ्रमत जो राजहस अत्यन्त शोभाकू धरे

है, सो सीताकी है चिन्ता जाके ऐसा जो भामण्डल ताहि यह ऋतु सुहावनी न लगी, अग्नि समान भासै है जगत जाकूं। एक दिन यह भामण्डल लज्जाकूं तजकर पिताके आगे वसंतध्वज नामा जो परम मित्र ताहि कहता भया। कैसा है भामंडल? अरतिसे पीडित है अंग जाका, मित्रसूं कहै है—हे मित्र! तू दीर्घशोची है, अर परकार्यविषै उद्यमी है। एते दिन होयगए तोहि मेरी चिंता नाहीं। व्याकुलता रूप भ्रमणकूं धरै जो आकाशरूप समुद्र ताविषै डूबा हूं, मोहि आलम्बन कहा न देवो? ऐसे आर्त-ध्यानकर युक्त भामंडलके वचन सुन राजसभाके सबलोक प्रभावरहित विषाद संयुक्त होयगए। तब तिनकूं महा शोककर तप्तायमान देख भामंडल लज्जासे अधोमुख होय गया। तब एक बृहत्केतु नामा विद्याधर कहता भया—अब कहा छिपाव राखो, कुमारसूं सब वृत्तांत यथार्थ कहो जाकरि भ्रांत न रहै। तब वे सब वृत्तांत भामंडलसूं कहते भए। हे कुमार! हम कन्याके पिताकूं यहां ले आए हुते, कन्याकी बात याचना करी सो वाने कही मैं कन्या रामकूं देनी करी है। हमारे अर वाके वार्ता बहुत भई वह न मानै। तब वज्रावर्त धनुषका करार भया जो धनुष राम चढावे तो कन्याकूं परणै, नातर हम यहां ले आवेंगे अर भामंडल विवाहेंगा। सो धनुष लेकर यहांसे विद्याधर मिथिलापुरी गए। सो राम महा पुण्याधिकारी धनुष चढाया ही। तब स्वयंबर मंडपमें जनककी पुत्री अति गुणवती, महा विवेकवती, पतिके हृदयकी हरणहारी, व्रत नियमकी धरनहारी, नवयौवन मंडित, दोषनिकरि अखंडित, सब कलापूर्ण, शरदऋतुकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान मुखकी कांतिकूं धरै, लक्ष्मी सारिखे शुभलक्षण, लावण्यताकरि युक्त, सीता महासती श्रीरामके कंठमें वरमाला डार वल्लभा होती भई। हे कुमार! वे धनुष वर्तमान कालके नाहीं, गदा अर हल आदि देवोपुनीत रत्ननिकर युक्त, अनेक देव जिनकी सेवा करैं हैं, कोई जिनकूं देख न सकै, सो वज्रावर्त सागरावर्त दोऊ धनुष राम लक्ष्मण दोऊ भाई चढावते भए। वह त्रिलोकसुन्दरी रामने परणी। अयोध्या ले गए। सो अब वह बलात्कार देवनिकरि भी न हरी जाय, हमारी कहा बात? अर कदाचित कहोगे रामको परणाये पहले ही क्यों

न हरी। जनकका मित्र रावणका जमाई मधु है सो हम कस हर सकैं। तात हे कुमार! अब संतोष आदरौ। निर्मलता भजहु। होनहार होय सो इन्द्रादिक भी और भांति न कर सकैं। तब धनुष चढावनका वृत्तांत अर रामसे सीताका विवाह होगया सुन भामंडल अति लज्जावान होय विषादकरि पूर्ण भया। मनमें विचारै है जो मेरा यह विद्याधरका जन्म निरर्थक है जो मैं हीन पुरुषकी न्याईं ताहि न परण सक्या। ईर्षा अर क्रोधकर मंडित होय सभाके लोकनिकूं कहता भया, कहा तुम्हारा विद्याधरपना, तुम भूमिगोचरिनितेंहूं डरो हो। मैं आप जायकर भूमिगोचरिनिकूं जीत ताकूं ले आऊंगा। अर जे धनुषके अधिष्ठाता उनकूं धनुष दे आये तिनका निग्रह करूंगा। ऐसा कहकर शस्त्र सजि विमानविषैं चढ आकाशके मार्ग गया। अनेक ग्राम नदी नगर वन उपवन सरोवर पर्वतादिक पूर्ण पृथ्वीमंडल देख्या। तब याकी दृष्टि जो अपने पूर्व भवका स्थानक विदग्धपुर पहाडनिके बीच हुता यहां पडी। चित्तमें चितईं कि यह नगर मैंने देख्या है। जातिस्मरण होय मूर्छा आय गई। तब मंत्री व्याकुल होय पिताके निकट ले आए। चन्दनादि शीतल द्रव्यनिकरि छांटया तब प्रबोधकूं प्राप्त भया। राजलोककी स्त्री याहि कहती भई—हे कुमार! तुमको यह उचित नाहीं जो माता पिताके निकट ऐसी लज्जारहित चेष्टा करहु। तुम तो विचक्षण हो, विद्याधरनिकी कन्या देवांगनाहूंतैं अतिसुन्दर है, तें परणो। लोक हास कहा करावो हो? तब भामंडल लज्जा अर शोक करि मुख नीचा किया। अर कहता भया-धिक्कार है मोकूं, मैं महामोहकरि विरुद्धकार्य चितया। जो चांडालादि अत्यन्त नीचकुल हैं तिनहूंके यह कर्म न होय। मैं अशुभ कर्मनिके उदयकरि अत्यन्त मलिन परणाम किए। मैं अर सीता एकही माताके उदरसे उपजे हैं। अब मेरे अशुभकर्म गया तब जथार्थ जानी। सो याके ऐसे वचन सुनकर अर शोककर पीडित देख याका पिता राजा चन्द्रगति गोदमें लेय मुख चूम पूछता भया—हे पुत्र! यह तू कौन भांति कही? तब कुमार कहता भया—हे तात! मेरा चरित्र सुनहु। पूर्वभवविषैं मैं इस ही भरतक्षेत्रविषैं विदग्धपुर नगर, तहां कुण्डलमंडित राजा हुता। परमंडलका लूटनहारा, सदा विग्रहका करणहारा, पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध निज

प्रजाका पालक, महाविभवकर सयुक्त । सो म पापी मायाचारकर एक विप्रकी स्त्री हरी । सो वह विप्र तो अतिदुखी होय कहीं चला गया अर म राजा अरण्यके देशमें बाधा करी । सो अरण्यका सेनापति बालचन्द्र मोहि पकड लेगया अर मेरी सवसम्पदा हर लीनी । मैं शरीरमात्र रह गया । कईएक दिनमे बदीगहत छूटचा सो महादु खित पथ्वीविष भमण करता मुनियोके दशनकू गया । महावत अणुवत का व्याख्यान सुन्या । तीन लोकपूज्य जो सवत्र वीतरागदेव तिनका पवित्र जो माग ताकी श्रद्धा करी । जगतके बाधव जे श्रीगुरु तिनकी आज्ञाकर मैंने मद्यमासका त्यागरूप वत आदरचा । मेरी शक्ति हीन हुती तात ये विशेष व्रत न आदर सक्या । जिनशासनका अदभुत माहात्म्य जो मैं महापापी हुता सो एते ही वतसे मैं दुगतिमे न गया । जिनधर्मके शरणकरि जनककी राणी विदहाके गभमे उपज्या अर सीता भी उपजी । सो कन्या सहित मेरा जन्म भया । अर वह पूवभवका विरोधी विप्र जाकी मैं स्त्री हरी हुती सो दव भया । अर मोहि जन्मत ही जैस गद्ध पक्षी मासकी डलीकू ले जाय तस नक्षत्र नित ऊपर आकाशविष ले गया । सो पहिलें तो तान विचार किया कि याकू मारू । बहुरि करुणा-करि कुण्डल पहराय लघुपरण विद्याकर मोहि यत्नसो डारचा सो रात्रिविष पडता तुमने झेल्या । अर दयावान होय अपनी राणीकू सौंप्या, सो म तिहारे प्रसादत वद्धिकू प्राप्त भया, अनेक विद्याका धारक भया । तुमने बहुत लडाया, अर माता मेरी बहुत प्रतिपालना करी । भामडल ऐसे कहके चुप हो रह्या । राजा चन्द्रगति यह वत्तात सुनकर परम प्रबोधकू प्राप्त भया अर इन्द्रियनिकी वासना तज महा वराग्य अगीकार करवेकू उद्यमी भया । लोकधम कहिए स्त्रीसवन सोई भया वक्ष, ताहि सुखफलसू रहित जान्या । अर ससारका बधन जानकर अपना राज्य भामडलकू देय आप सव भूतहित स्वामीके समीप शीघ्र आया । वे सव भूतहित स्वामी पथ्वीविष सूयसमान प्रसिद्ध, गुणरूप किरणनिके समूह कर भव्य जीवनिकू आनन्दके करनहारे, सो राजा चन्द्रगति विद्याधर महेन्द्रोदय उद्यानविष आय मुनिकी अचना करी । बहुरि नमस्कार स्तुति कर सीस नवाय हाथ जोड या भाति कहता भया—हे भगवन ! तिहारे

प्रसादकर मै जिनदीक्षा लेय तप किया चाहू हू, मै गहवासत उदास भया। तब मुनि कहते भए–भव सागरसू पार करणहारी यह भगवती दीक्षा ह सो लेउ। राजा तो वराग्यकू प्राप्त भया अर भाम डलके राज्यका उत्सव होता भया, ऊचे स्वर नगारे बाजे, नारी गीत गावती भई, बासुरी आदि वादित्रनिके समूह बाजत भए। ताल मजीरा आदि बासुरीक वादित्र बाजे, 'शोभायमान जनक राजा का पुत्र जयवत होवे' ऐसा बदीजननिका शब्द होता भया। सो महेन्द्रोदय उद्यानविष ऐसा मनोहर शब्द रात्रिविष भया जात अयोध्याक समस्त जन निद्रारहित होयगए। बहुरि प्रात समय मुनिराजके मुखत महाश्रेष्ठ शब्द सुनकर जनीजन अति हषकू प्राप्त भए। अर सीता जनक राजाका पुत्र जयवत होए, ऐसी वनि सुनकर मानो अमतसे सीची गई, रोमाचकर सयुक्त भया ह सव अग जाका, अर फरक ह बाई आख जाकी, मनमे चितवती भई।

जो यह बारम्बार ऊचा शब्द सुनिए कि जनक राजाका पुत्र जयवत होऊ सो मेरा हू पिता जनक ह। कनकका बडाभाई, अर मेरा भाई ज मताही हरचा गया था सो वही न होय। ऐसा विचारकर भाईक स्नेहरूप गया ह मन जाका, सो ऊच स्वरकर रुदन करती भई। तब राम अभिराम कहिए सुन्दर ह अग जावा, महामधुर वचनकर कहते भये–ह प्रिय! तू काहेकू रुदन कर ह, जो यह तेरा भाई ह तो अब खबर आव ह। अर जो और ह नो हे पडिते! तू कहा सोच कर ह? जो विचक्षण ह ते मुएका, हरेका, गएका, नष्ट हुएका, शोच न कर। हे वल्लभे! जे कायर ह अर मूख ह उनके विषाद होय ह। अर जे पडित ह, पराक्रमी ह तिनक विषाद नाहीं होय ह। या भांति रामक अर सीताके वचनालाप होव ह। ताही समय बधाईवारे मगल शब्द करते आए। तब राजा दशरथने महाहषत बहुत आदरत नानाप्रकार के दान कर अर पुत्र कलत्रादि सव कुटुम्बसहित वनमे गया। सो नगरके बाहिर चारो तरफ विद्याधरनिकी सेना सकडो सामतनिसे पूण दख आश्चयकू प्राप्त भया। विधाधरनिने इन्द्रके नगर तुल्य सेनाका स्थानक क्षणमात्रमे बनाय राखा ह। जाकें ऊचा कोट, बडा दरवाजा, जे पताका तोरण

तिनत शोभायमान, रत्ननिकरि मंडित ऐसा निवास देख राजा दशरथ जहा वनमें साधु विराजे हुते तहा गया, नमस्कारकर स्तुतिकर राजा चन्द्रगतिका वैराग्य देख्या। विद्याधरनिसहित श्रीगुरुकी पूजा करी। राजा दशरथ सब बांधवसहित एक तरफ बैठ्या, अर भामंडल सब विद्याधरनिसहित एक तरफ बैठ्या। विद्याधर अर भूमिगोचरी मुनिके पास यति अर श्रावकका धर्म श्रवण करते भए। भामंडल पिताके वैराग्य होयवेकर कछुइक शोकवान बैठा। तब मुनि कहते भए जो यतिका धर्म है शूरवीरोका है, जिनके गृहवास नाहीं, महा शांतदशा है, आनंदका कारण है, महा दुर्लभ है, त्रैलोक्यमें सार है, कायर जीवनिकू भयानक भासै है। भव्यजीव मुनिपदकू पाय कर अविनाशीधामकू पावै है। अथवा इन्द्र अहमिंद्र पद लहै है। लोकके शिखर जो सिद्ध स्थानक है, सो मुनिपद विना नाहीं पाइये है। कैसे है मुनि? सम्यग्दर्शनकरि मंडित है, जिनमार्गसे निर्वाणके सुखकू प्राप्त होय अर चतुर्गतिके दुखतै छूटै सो ही मार्ग श्रेष्ठ है। सो सब भूतहित मुनिनै मेघकी गर्जना समान है ध्वनि जिनकी, सब जीवनिके चित्तकू आनंदकारी ऐसे वचन कहे। कैसा है मुनि? समस्त तत्त्वोंके ज्ञाता, सो मुनिके वचनरूप जल संदेहरूप तापकू हरता प्राणी जीवनिने कर्णरूप अंजुलीनिकरि पीये। कईएक मुनि भए, कईएक श्रावक भए, महा धर्मानुराग कर युक्त है चित्त जिनका। धर्मका व्याख्यान हो चुक्या तब दशरथ पूछता भया—हे नाथ! चन्द्रगति विद्याधरकू कौनकारण वैराग्य उपज्या। अर सीता अपने भाई भामंडलका चरित्र सुनवेकी इच्छा करती भई। कैसी है सीता? महाविनयवती है। तब मुनि कहते भए—हे दशरथ! तुम सुनहु। इन जीवनिकी अपने अपने उपार्जे कर्मनिकर विचित्रगति है। यह भामंडल पूर्वे संसारमे अनन्त भ्रमणकर अति दुखित भया, कर्मरूपी पवनका प्रेरया या भवमे आकाशसू पडता राजा चन्द्रगतिकू प्राप्त भया, सो चन्द्रगति अपनी स्त्री पुण्यवतीकू सौंप्या। सो नवयौवनमे सीताका चित्रपट देख मोहित भया। तब जनककू एक विद्याधर कृत्रिम अश्व होय लेगया, यह करार ठहरया जो धनुष चढावै सो कन्या परणै। बहुरि जनककू मिथिलापुरी लेय आए, अर धनुष श्रीरामने चढाया अर सीता परणी। तब भामंडल विद्या-

धरनिके मुखसे यह वार्ता सुन क्रोधकर विमानमें बैठ आवै था सो मार्गमें पूर्वभवका नगर देख्या, तब जातिस्मरण हुआ जो मैं कुण्डलमंडित नामा या विदग्धपुरका राजा अधर्मी हुता। पिंगल ब्राह्मणकी स्त्री हरी। बहुरि मोहि अरण्यके सेनापतिने पकड्या, देशतै काढ दिया, सर्वस्व लूट लिया। सो महा पुरुषनिके आश्रय आय मधुमांसका त्याग किया, शुभपरिणामनितै मरणकर जनककी राणी विदेहाके गर्भतै उपज्या। अर वह पिंगल ब्राह्मण जाकी स्त्री याने हरी सो वनसे काष्ठ लाय स्त्रीरहित शून्य-कुटी देख अति विलाप करता भया कि हे कमलनयनी! तेरी राणी प्रभावती सारिखी माता, अर चक्रध्वज सारिखे पिता तिनकूं, अर बडी विभूति अर बडा परिवार ताहि तज मोसूं प्रीतिकर विदेश आई, रूखे आहार अर फाटे वस्त्र तनै मेरे अर्थसे आदरे। सुंदर है सर्व अंग जाके, अब तू मोहि तज कहां गई? या भांति वियोगरूप अग्नि कर दग्धायमान वह पिंगल विप्र पृथ्वीविषै महा दुखसहित भ्रमणकर मुनिराजके उपदेशतै मुनि होय तप अंगीकार करता भया। तपके प्रभावतै देव भया सो मनमें चिंतवता भया कि वह मेरी कांता सम्यक्त्वरहित हुती सो तिर्यंचगतिकूं गई। अथवा मायाचार रहित सरल परिणाम हुती सो मनुष्यणी भई, अथवा समाधिमरणकर जिनराजकूं उरमें धर देव गतिकूं प्राप्त भई। अर वह दुष्ट कुण्डलमंडित जान आगै मेरी स्त्री हरी हुती सो कहां? तब अवधि करि जनककी स्त्रीके गर्भमें आया जान जन्म होते ही बालककूं हर्‍या, सो चंद्रगति झेल्या अर राणी पुष्पवतीको सौंप्या। सो भामंडल जातिस्मरण होय सर्व वृत्तांत चंद्रगतिकूं कहा। जो सीता मेरी बहिन है अर राणी विदेहा मेरी माता है, अर पुष्पवती मेरी प्रतिपालक माता है। यह वार्ता सुन विद्याधरनिकी सब सभा आश्चर्यकूं प्राप्त भई। अर चंद्रगति भामंडलकूं राज्य देय संसार, शरीर अर भोगनितै उदास होय वैराग्य अंगीकार करना विचार्‍या, अर भामंडलकूं कहता भया— हे पुत्र! तेरे जन्मदाता माता पिता तेरे शोककरि महादुखी तिष्ठै है सो अपना दर्शन देय तिनके नेत्र-निकूं आनन्द उपजाय। सो स्वामी सर्वभूतहित मुनिराज राजा दशरथसूं कहै है यह राजा चन्द्रगति

ससारका स्वरूप असार जान हमारे निकट आय जिनदीक्षा धरता भया। जो जन्म्या है सो निश्चय से मरेहीगा, अर जो मूवा है सो अवश्य नया जन्म धरेगा। यह ससारकी अवस्था जान चद्रगति भवभ्रमणते डरचा। ये मुनिके वचन सुनकर भामडल पूछता भया—हे प्रभो! चद्रगतिका अर पुष्पवतीका मोपर अधिक स्नेह काहेते भया? तब मुनि बोले—ये पूर्वभवके तेरे माता पिता है सो सुन। एक दारूनामा ग्राम, वहा ब्राह्मण विमुचि, ताके स्त्री अनुकोशा, अर अतिभूत पुत्र, ताकी स्त्री सरसा। अर एक कयान नामा परदेशी ब्राह्मण सो अपनी माता ऊर्या सहित दारूग्राममें आया सो पापी अतिभूतकी स्त्री सरसाकू अर इनके घरके सारभूत धनकू ले भागा। सो अतिभूत महादुखी होय ताके ढूढवेकू पृथ्वीपर भटक्या। अर याका पिता कईएक दिन पहिले दक्षिणाके अर्थ देशातर गया हुता सो घर पुरुषनि विना सूना होयगया। जो घरमें थोडा बहुत धन रहा था सो भी जाता रहा। अर अतिभूतकी माता अनुकोशा सो दरिद्रकरि महादुखी। यह सब वृत्तात विमुचिनें सुना कि घरका धन हू गया अर पुत्रकी बहू हू गई, अर पुत्र ढूढवेकू निकसा है सो न जानिये कौन तरफ गया। तब विमुचि घर आया अर अनुकोशाकू अति विह्वल देख धीर्य बधाया, अर कयानकी माता ऊर्या सो हू महादुखी, पुत्र अन्याय कार्य किया ताकरि अति लज्जायमान सो कहके दिलासा करी जो तेरा अपराध नाहीं, अर आप विमुचि पुत्रके ढूढवेकू गया। सो एक सर्वारिनाम नगर, ताके वनमें एक अवधिज्ञानी मुनि, सो लोकनके मुखतें उनकी प्रशसा सुनी—जो अवधिज्ञानरूप किरणोकर जगतमें प्रकाश करे हैं। तब यह मुनिपै गया। धन अर पुत्रवधूके जानेसे महादुखी हुता ही सो मुनिराजकी तपोऋद्धि देखकर अर ससारकी झूठी माया जान तीव्र वैराग्य पाय विमुचि ब्राह्मण मुनि भया। अर विमुचिकी स्त्री अनुकोशा अर कयानकी माता ऊर्या ये दोनो ब्राह्मणी कमलकाता आर्यिकाके निकट आर्यिकाके व्रत धारती भई। सो विमुचि मुनि अर ये दोनो आर्यिका तीनो जीव महानिस्पृह धर्मध्यानके प्रसादतें स्वर्गलोक गए। कैसा है वह लोक? सदा प्रकाशरूप है। विमुचिका पुत्र अतिभूत हिंसामार्गका प्रशसक, अर सयमी

जीवोका निन्दक । सो आत रौद्रध्यानके योगत दुगति गया । अर यह कयान भी दुगति गया । अर वह सरसा अतिभूतकी स्त्री जो कयानकी लार निकसी हुती सो वलाहक पवतकी तलहटीमे मगी भई, सो व्याघके भयत मगोके यूथसे अकेली होय दावानलमे जलमुई । सो ज मातरमे चित्तोत्सवा भई, अर वह कयान भव भमण कर ऊँट भया । धूमकेशका पुत्र पिगल भया, अर वह अतिभूत सरसाका पति भव भमण करता राक्षस सरोवरक तीर हस भया । सो सिचानूने इसका सव अग घायल किया सो चत्यालयके समीप पडा तहा गुरु शिष्यको भगवानका स्तोत्र पढावता भया सो याने सुना । हसकी पर्याय छोड दसहजार वषकी आयुका धारी नगोत्तम नामा पवतविष किन्नर देव भया । तहाते चयकर विदग्धपुरका राजा कुण्डलमडित भया सो पिगलके पाससे चित्तोत्सवा हरी, सो ताका सकल वत्तात पूर्वे कहा ही ह । अर वह विमुचि ब्राह्मण जो स्वलोकक् गया हुता सो राजा च द्रगति भया, अनु कोशा ब्राह्मणी पुष्पवती अर वह कयान कई भव लेय पिगल होय मुनिवत धार देव भया सो वाने भामडलकू होतेही हरचा, अर वह ऊर्या ब्राह्मणी देवलोकत चयकर राणी विदेहा भई । यह सकल वत्तात राजा दशरथ सुनकर भामडलत मिल्या अर नेत्र अश्रुपातत भरलिये । अर सम्पूण सभा यह कथा सुनकर सजलनेत्र होय गई अर रोमाच होय आए । अर सीता अपने भाई भामडलसू देख स्नेह कर मिली अर रुदन करती भई, हे भाई ! मै तोहि प्रथम ही देख्या, अर श्रीराम लक्ष्मण उठ कर भामडलत मिले । मुनिकू नमस्कार कर खेचर भूचर सब ही वनसे नगरकू गए । भामडलकू मत्र कर राजा दशरथने जनक राजाके पास विद्याधर पठाया अर जनककू आवनेके अथ विमान भेजे । राजा दशरथने भामडलका बहुत स मान किया, अर भामडलकू अतिरमणीक महिल रहिवेकू दीए, जहा सु दर वापी सरोवर उपवन ह । सो वहा भामडल सुखसू तिष्ठचा । अर राजा दशरथने भामडल के आवनेका बहुत उत्सव किया, याचकनिकू वाछासे भी अधिक दान दिया, सो दरिद्रतात रहित भए । अर राजा जनकके निकट पवनहूते अति शीघ विद्याधर गए, जायकर पुत्रके आगमनकी बधाई दी,

अर दशरथका अर भामडलका पत्र दिया। सो बाचकर जनक अति आनन्दकू प्राप्त भया, रोमाच होय आए। विद्याधरसू राजा पूछ ह–हे भाई! यह स्वप्न ह या प्रत्यक्ष ह ? तू आ हमसो मिल। ऐसा कहकर राजा मिले अर लोचन सजल होय आए। जसा हष पुत्रके मिलने का होय तैसा पत्र लाने वालेत मिलनेका हष भया। सम्पूण वस्त्र आभूषण ताहि दिए। सब कुटुम्बके लोग भेले होय उत्सव किया। अर बारम्बार पुत्रका वत्तात ताहि पूछ ह अर सुन सुन तप्त न होय। विद्याधर सकल वत्तात विस्तारसू कह्या। ताही समय राजा जनक सव कुटुम्बसहित विमानमें बठ अयोध्या चाले। सो एक निमिषमें जाय पहुँचे। कसी ह अयोध्या ? जहा वादित्रनिके नाद होय रहे ह। जनक शीघ ही विमानत उतर पुत्रत मिल्या, सुखकर नेत्र मिल गए, क्षणएक मूर्छा आय गई। बहुरि सचेत होय अश्रुपातके भरे नेत्रनिसू पुत्रकू देखा अर हाथसे स्पर्शा। अर माता विदेहा हू पुत्रकू देख मूर्छित होय गई, बहुरि सचेत होय मिली, अर रुदन करती भई। जाके रुदनकू सनकर तियचनिकू भी दया उपज। हाय पुत्र! तू जन्मत ही उत्कष्ट वरी त हरागया हुता। तेरे देखवेकू चितारूप अग्नि कर मेरा शरीर दग्ध भया हुता, सो तेरे दशनरूप जलकरि सींचा शीतल भया। अर धन्य ह वह राणी पुष्पवती विद्याधरी जाने तेरी बाललीला देखी, अर क्रीडा कर धूसरा तेरा अग उरसें लगाया, अर मुख चूमा, अर नव यौवन अवस्थाविष चन्दन कर लिप्त सुगन्धनिकर युक्त तेरा शरीर देख्या। ऐसे शब्द माता विदेहाने कहे, अर नेत्रनित अश्रुपात झर, स्तनित दुग्ध झरा, अर विदेहाकू परम आनन्द उपज्या। जसे जिन शासनकी सेवक देवी आनन्दसहित तिष्ठ तस पुत्रकू देख सुखसागरमे तिष्ठी। एकमास पयत यह सब अयोध्यामें रहे। फिर भामडल श्रीरामसू कहते भए–हे देव! या जानकीके तिहारो ही शरण ह, धन्य ह भाग्य जाके जो तुम सारिखे पति पाए। ऐसे कह बहिनकू छातीसे लगाया। अर माता विदेहा सीताकू उरसे लगाय कर कहती भई–हे पुत्री! सासू ससुरकी अधिक सेवा करियो, अर ऐसा करियो जो सब कुटुम्बमे तेरी प्रशसा होय। सो भामडलने सबकू बुलाया, जनकका छोटा भाई जो कनक

उसे मिथिलापुरीका राज्य सौंपकर जनक अर विदेहाकू अपने स्थानक लेगया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकत कह ह कि–हे मगधदेशके अधिपति! तू धमका माहात्म्य देख जो धर्मके प्रसादत श्रीरामदेवके सीता सारिखी स्त्री भई, गुणरूपकर पूण जाका भामडलसा भाई विद्याधरनिका इन्द्र, अर देवाधिष्ठित वे धनुष सो रामने चढाए, अर जिनके लक्ष्मणसा भाई सेवक। यह श्रीरामका चरित्र भामडलके मिलापका वणन जो निमलचित्त होय सुन ताहि मनबांछित फलकी सिद्धि होय अर निरोग शरीर होय, सूय समान प्रभाकू पाव।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष भामण्डलका मिलाप कथन वणन करनेवाला तीसवां पव पूण भया ॥ ३ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतमस्वामीसू पूछते भए–हे प्रभो! वे राजा दशरथ, जगतके हितकारी, राजा अरण्यके पुत्र बहुरि कहा करते भए? अर श्रीराम लक्ष्मणका सकल वत्तात म सुना चाहू हू सो कपा करके कहो। तुम्हारा यश तीन लोकमें विस्तार रहा ह। तब मुनियोके स्वामी महातप तेज के धारनहारे गौतम गणधर कहते भए जसा यथाथ कथन श्री सवज्ञदेव वीतरागने भाख्या है तसा–हे भव्योत्तम! तू सुन।

जब राजा दशरथ बहुरि मुनियोके दशनोकू गए तो सवभूतहित स्वामीकू नमस्कारकर पूछते भए–ह स्वामी! म ससारमें अनन्त जन्म धरे सो कई भवकी वार्ता तिहारे प्रसादसे सुनकर ससारकू तजा चाहू हू। तब साधु दशरथकू भव सुननेका अभिलाषी जानकर कहते भए–हे राजन! सब ससारके जीव अनादिकालसे कर्मोके सम्बन्धसे अनत जन्म मरण करते दुख ही भोगते आए है। इस जगतमें जीवनिके कर्मोकी स्थिति उत्कृष्ट मध्यम जघन्य तीन प्रकारकी ह। अर मोक्ष सवमें उत्तम है जाहि पचमगति कह ह। सो अनत जीवनिमे कोई एकके होय ह, सबनिको नाहीं। यह पचमगति

कल्याणरूपिणी है तहाँ ते बहुरि आवागमन नाहीं। वह अनन्त सुखका स्थानक शुद्ध सिद्ध पद, इन्द्रिय विषयरूप रोगनिकरि पीडित मोहकर अन्ध प्राणी ना पावै। जे तत्त्वार्थश्रद्धानकर रहित वैराग्यतैं बहिर्मुख हैं, अर हिंसादिकमें है प्रवृत्ति जिनकी तिनकूं निरंतर चतुर्गतिका भ्रमण ही है। अभव्यों को तो सर्वथा मुक्ति नाहीं, निरंतर भव भ्रमण ही है। अर भव्यनिक कोई एकको निवृत्ति है। जहां तक जीव पुद्गल धर्म अधर्म काल है सो लोकाकाश है, अर जहां अकेला आकाश ही है सो अलोकाकाश है। लोकके शिखर सिद्ध विराजे हैं। या लोकाकाशमें चेतना लक्षण जीव अनन्त हैं जिनका विनाश नाहीं। संसारी जीव निरंतर पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रस काय ये छः काय तिनमें देह धार भ्रमण करे है। यह त्रैलोक्य अनादि अनंत है, यामें स्थावर जंगम जीव अपने अपने कर्मनिके समूहकरि बंधे नाना योनिविषै भ्रमण करे हैं। अर जिनराजके धर्मकर अनंत सिद्ध भए अर अनंत सिद्ध होयंगे, अर होय हैं। जिनमारग टारकर और मार्ग मोक्ष नाहीं। अर अनंतकाल व्यतीत भया, अनंत काल व्यतीत होयगा, कालका अंत नाहीं। जो जीव संदेहरूप कलंक कर कलंकी है। अर पापकर पूर्ण है, अर धर्मनिकूं नाहीं जाने तिनके जैनका श्रद्धान कहांते होय? अर जिनके श्रद्धान नाहीं, सम्यक्तरहित है तिनके धर्म कहांते होय? अर धर्मरूप वृक्ष विना मोक्षफल कैसे पावै? अज्ञान अनंत दुःखका कारण है। जे मिथ्यादृष्टि अधर्मविषै अनुरागी हैं, अर अति उग्र पाप कर्मरूप कंचुकी (चोला) कर मंडित हैं, रागादि विषके भरे हैं, तिनका कल्याण कैसे होय, दुख ही भोगवे हैं। एक हस्तिनापुरविषै उपास्तनामा पुरुष, ताकी दीपनी नामा स्त्री, सो मिथ्याभिमान कर पूर्ण, जाके कछु नियम व्रत नाहीं, श्रद्धानरहित महाक्रोधवती, अदेखसकी, कषायरूप विषकी धारणहारी, महादुर्भाव, निरन्तर साधुनिकी निंदा करणहारी, कुशब्द बोलनहारी, महा कृपण, कुटिल, आप काहूकूं अन्न न देय, अर जो कोई दान करे ताकूं मने करे, धनकी धिरानी अर धर्म न जाने, इत्यादिक महादोषकी भरी मिथ्यामार्गकी सेवक सो पापकर्मके प्रभावकर भवसागरविषै अनंतकाल

भमण करती भई। अर उपास्ति दानके अनुरागकर जद्रधुर नगरविषै भद्रनामा मनुष्य, ताके धारिणी स्त्री, ताके धारण नामा पुत्र भया। भाग्यवान, बहुत कुटुम्बी, ताक नयनसुन्दरी नामा स्त्री, सो धारण शुद्ध भावत मुनिनिको आहारदान देय, अंतकाल शरीर तजकर धातुकीखंड द्वीपविषै उत्तरकुरु भोग भूमिमें तीन पल्य सुख भोग, देवपर्याय पाय, तहांते चयकर पथुलावती नगरीविषै राजा नंदिघोष, राणी बसुधा ताके नंदिवर्धन नामा पुत्र भया। एक दिन राजा नंदिघोष यशोधर नामा मुनिके निकट धर्म श्रवणकर नंदिवर्धनकूं राज्य देय आप मुनि भया। महातपकर स्वर्गलोक गया। अर नंदिवर्धन श्रावक के व्रत धारे, पंच णमोकारके स्मरणविषै तत्पर, कोटिपूर्व पर्यंत महाराजपदके सुख भोगकर अंतकाल समाधि मरणकर पंचमे देवलोक गया। तहांते चयकर पश्चिम विदेहविषै विजयार्ध पर्वत तहां शशि-पुर नामा नगर, तहां राजा रत्नमाली, ताके राणी विद्युल्लता, ताके सूर्यजय नामा पुत्र भया। एक दिन रत्नमाली महा बलवान सिंहपुरका राजा वज्रलोचन तासूं युद्ध करवेकूं गया। अनेक दिव्य रथ हाथी, घोडे, पियादे, महापराक्रमी सामंत लार नानाप्रकार शस्त्रनिके धारक, राजा होंठ डसता धनुष चढाय, वस्त्र पहिरे रथविषै आरूढ, भयानक आकृतिकूं धर, आग्नेय विद्याधर, शत्रुके स्थानककूं दग्ध करवेकी इच्छा जाके, ता समय एक देव तत्काल आयकर कहता भया—हे रत्नमाली! तैं यह कहा आरम्भ्या? अब तू क्रोध तज मैं तेरा पूर्व भवका वृत्तांत कहूं हूं। सो सुन भरतक्षेत्रविषै गांधारी नगरी तहां राजा भूति ताके पुरोहित उपमन्यु सो राजा अर पुरोहित दोनो पापी मांसभक्षी। एकदिन राजा केवलगर्भस्वामीके मुखतै व्याख्यान सुन यह व्रत लिया, जो मैं पापका आचरण न करूं। सो व्रत उपमन्यु पुरोहितने छुडाय दिया। एक समय राजापर परशत्रुओंकी धाड आई। सो राजा अर पुरोहित दोनो मारे गए। पुरोहितका जीव हाथी भया सो हाथी युद्धमें घायल होय अंतकाल नमोकार मंत्रका श्रवणकर तहां गांधारी नगरीविषै राजा भूतिकी राणी योजनगंधा, ताके अरिसूदन नामा पुत्र भया। सीताने केवलगर्भ मुनिका दर्शनकर पूर्व जन्म स्मरण किया, तब महा वैराग्य उपजा।

सो मुनिपद आदरा, समाधिमरण कर ग्यारहवें स्वर्गविष देव भया। सो म उपमन्यु पुरोहितका जीव अर तू राजा भूति मरकर मदारण्यविष मय भया। दावानलमें जर मूवा, मरकर कालिजनामा नीच पुरुष भया सो महापापकर दूजे नरक गया। सो म स्नेहके योगकर नरकविष तुझे सबोधा। आयु पूर्णकर नरकसे निकस रत्नमाली विद्याधर भया, सो तू वे अब नरकके दुख भूल गया। यह वार्ता सुन रत्नमाली सूर्यजय पुत्रसहित परम वैराग्यकू प्राप्त भया। दुर्गतिके दुखसे डरया, तिलकसुन्दर स्वामी का शरण लेय पिता पुत्र दोनो मुनि भए। सूर्यजय तपकर दशमे देवलोक देव भया। तहात चयकर राजा अरण्यका पुत्र दशरथ भया। सो सर्व भूतहित मुनि कह ह—अल्पमात्र भी सुकृतकर उपास्तिका जीव कईएक भव विष बडके बीजकी न्याइ वृद्धिकू प्राप्त भया। तू राजा दशरथ उपास्तिका जीव ह अर नदिवधनके भवविष तेरा पिता राजा नदिघोष मुनि होय ग्रैवेयक गया, सो तहात चयकर म सर्व-भूतहित भया। अर जो राजा भूतिका जीव रत्नमाली भया हुता। तू राजा दशरथ उपास्तिका अर उपमन्यु पुरोहितका जीव जाने रत्नमालीको सबोधा हुता सो जनकका भाई कनक भया। या ससारविष न कोई अपना ह, न कोई पर ह, शुभाशुभ कर्मोंकर यह जीव जन्म मरण कर ह। यह पूर्व भवका वर्णन सुन राजा दशरथ नि सदेह होय सयमको सम्मुख भया। गुरुके चरणनिको नमस्कारकर नगरमे प्रवेश किया। निर्मल ह अत करण जिनका, मनमें विचारता भया कि यह महा मडलेश्वर पदका राज्य महा सुबुद्धि जे राम तिनको देकर म मुनिव्रत अगीकार करू। राम धर्मात्मा है, अर महा धीर ह, धर्यको धरे ह। यह समुद्रात पृथ्वीका राज्य पालवे समर्थ ह। अर भाई भी इनके आज्ञाकारी ह, ऐसा राजा दशरथने चितवन किया। कसे ह राजा? मोहत पराडमुख अर मुक्तिके उद्यमी। ता समय शरद ऋतु पूर्ण भई, अर हिमऋतुका आगमन भया। कसी ह शरदऋतु? कमल ही ह नेत्र जाके, अर चन्द्रमाकी चादनी सोही ह उज्ज्वल वस्त्र जाके, सो मानो हिमऋतुके भयकर भागगई।

अथानन्तर हिमऋतु प्रकट भई, शीत पडने लगा, वृक्ष दहे, अर ठडी पवनकर लोक व्याकुल भए।

जो ऋतुविषै धनरहित प्राणी जीर्ण कुटिमे दुखसे काल व्यतीत करै है। कैसे है दरिद्री ? फट गए है अधर अर चरण जिनके, अर बाजै है दांत जिनके, अर रूखे है केश जिनके, अर निरंतर अग्निका है सेवन जाके, अर कभी भी उदरभर भोजन न मिले, कठोर है चर्म जिनका। अर घरमें कुभार्याके वचन रूप शस्त्रनिकर विदारा गया है चित्त जिनका। अर काष्ठादिकके भार लायवेको कांधे कुठारादिक को धरे वन वन भटके है, अर शाक बोरघलि आदि ऐसे आहारकर पेट भरै है। अर जे पुण्यके उदय करि राजादिक धनाढ्य पुरुष भए है ते बडे महलोमें तिष्ठै है, अर शीतके निवारणहारे, अगरके धूप की सुगंधिताकरयुक्त सुंदर वस्त्र पहरै है। अर सुवर्ण अर रूपादिकके पात्रोमें षटरससंयुक्त सुगंधित स्निग्ध भोजन करै है। केसर अर सुगंधादिकर लिप्त है अंग जाके, अर जिनके निकट धूपदानमें धूप खेईये है। अर परिपूर्ण धनकर चिंतारहित है, झरोखोमें बैठे लोकनिको देखै है। अर जिनके समीप गीत नृत्यादिक विनोद होयवो करै है। रत्नोके आभूषण अर सुगंध मालादिककर मंडित सुंदर कथा में उद्यमी है। अर जिनके विनयवान अनेक कलाकी जाननहारी महारूपवान पतिव्रता स्त्री है। पुण्य के उदयकरि ये संसारी जीव देवगति मनुष्यगतिके सुख भोगै है, अर पापके उदयकरि नरक तिर्यंच तथा मनुष होय दुख दरिद्र भोगवै है। सब लोक अपने अपने उपार्जित कर्मके फल भोगवै है। ऐसे मुनि के वचन दशरथ पहिले सुने हुते सो संसारतै विरक्त भया। द्वारपालकू कहता भया, कैसा है द्वारपाल ? भूमिविषै थाप्या है मस्तक अर जोडे है हाथ जाने। नृपति ताको आज्ञा करी।

हे भद्र! सामंत मंत्री पुरोहित सेनापति आदि सबको ल्यावो। तब वह द्वारपाल द्वारेपर आय दूजे मनुष्यको द्वारपर मेलि तिनकी आज्ञा प्रमाण बुलावनको गया। तब वे आयकर राजाकू प्रणामकरि यथायोग्य स्थानकविषै तिष्ठे, विनती करते भए—हे नाथ! आज्ञा करहु, क्या कार्य है ? तब राजा कही—मैं संसारका त्यागकर निश्चय सेती संयम धारूंगा। तब मंत्री कहते भए—हे प्रभो! तुमको कौन कारण वैराग्य उपज्या ? तब नृपति कही जो प्रत्यक्ष यह समस्त जगत सूके तृणकी न्याईं मृत्यु

रूप अग्निकर जरै है, अर जो अभव्यनिकूं अलभ्य अर भव्यनिकूं लेने योग्य ऐसा सम्यक्तसहित सयम सो भव तापका हरणहारा, अर शिवसुखका देनहारा है, सुर असुर नर विद्याधरनिकरि पूज्य प्रशसा योग्य है। मैं आज मुनिके मुखसे जिनशासनका व्याख्यान सुन्या। कसा है जिनशासन? सकलपापो का वजन हारा है। तीनलोकविषै प्रकट महा सूक्ष्म है चर्चा जाविषै, अति निर्मल उपमारहित है। सब वस्तुनिमे सम्यक्तपरम वस्तु है ता सम्यक्तका मूल जिनशासन है, श्रीगुरुओंके चरणारविंदके प्रसाद कर मैं निवृत्तिमार्गमें प्रवर्त्या, मेरी भवभ्रांतिरूप नदीकी कथा आज मैं मुनिके मुखसे सुनी अर मोहि जातिस्मरण भया। सो मेरे अग देखो त्रास कर कापे है। कसी है मेरी भवभ्रांति नदी? नानाप्रकार के जे जन्म वे ही है भ्रमर जामैं, अर मोहरूप कीच करि मलिन, कुतर्करूप ग्राहनिकरि पूर्ण, महादुःख रूप लहर उठै है निरन्तर जामैं, मिथ्यारूप जलकर भरी, मृत्युरूप मगरमच्छनिका है भय जाविषै, रुदनके महाशब्दकूं धरै, अधर्म प्रवाह कर बहती, अज्ञानरूप पर्वतते निकसी, ससाररूप समुद्रमे है प्रवेश जाका। सो अब मै इस भवनद्वीपकूं उलघकर शिवपुरी जायवेका उद्यमी भया हूं। तुम मोह के प्रेरे कछु वृथा मत कहो, ससार समुद्र तर निर्वाण द्वीप जाते अतराय मत करहु। जसे सूर्यके उदय होते अधकार न रहै तसे सम्यग्ज्ञानके होते सशय तिमिर कहा रहै? तातै मेरे पुत्रकूं राज्य देहु अब ही पुत्रका अभिषेक करावहु, मैं तपोवनमे प्रवेश करूं हूं। ए वचन सुन मन्त्री सामत राजाकूं वैरा ग्यका निश्चय जान परमशोककूं प्राप्त भए। नीचे होय गए है मस्तक जिनके, अर अश्रुपात कर भर गए है नेत्र जिनके, अगुरी कर भूमिकूं कुचरते क्षणमात्रमे प्रभावरहित होय गए, मौनसे तिष्ठे। अर सकलही रणवास प्राणनाथका निर्ग्रंथ व्रतका निश्चय सुनि शोककूं प्राप्त भया। अनेक विनोद करते हुते सो तजकर आसुओंसे लोचन भर लिए, अर महारुदन किया। भरत पिताका वैराग्य सुन आप भी प्रतिबोधकूं प्राप्त भए। चित्तमे चितवते भए अहो यह स्नेहका बध छेदना कठिन है। हमारा पिता ज्ञानकूं प्राप्त भया। जिनदीक्षा लेवेकूं इच्छै है, अब इनके राज्यकी चिंता कहा, मोहि तो न

किसीको कुछ पूछना न कछु करना, तपोवनमें प्रवेश करू गा, सयम धारू गा। कसा ह सयम ? ससार के दु खनिका क्षय करणहारा ह, अर मेरे या देह करहू कहा ? कसा ह यह देह व्याधिका घर ह, अर विनश्वर ह, सो यदि देहीसे मेरा सबध नाहीं तो बाधवनिसो कहा सबध ? यह सब अपने कम फल के भोक्ता है। यह प्राणी मोहकर अधा ह, दु खरूप वनविष अकेला ही भटक ह। कसा ह दु खरूप वन ? अनेक भवभयरूप वक्षनित भरचा ह।

अथानन्तर केकई सकल कलाकी जाननहारी भरतकी यह चेष्टा जान अति शोककू धरती भई। मनमें चितव ह–भरतार अर पुत्र दोनो ही वराग्य धारचा चाह ह, कौन उपाय करि इनका निवारण करू। या भाति चिता कर व्याकुल भया ह मन जाका, तब राजाने जो वर दिया हुता सो याद आया। अर शीघ ही पतिप जाय आधे सिहासनपर बठी, अर विनती करती भई–हे नाथ! सव ही स्त्रीनिके निकट तुम मोहि कपाकर कही हुती जो तू माग सो म देऊ, सो अब देवो। तुम सत्यवादी हो, अर दान करि निमलकीर्ति तिहारी जगतविष विस्तार रही ह। तब दशरथ कहते भए–हे प्रिये! जो तेरी वाछा हाय सो ही लेहु। तब राणी केकई आसू डारती सती कहती भई–हे नाथ! हमप ऐसी कहा चूक भई जो तुम कठोर चित्त किया ? हमकू तजा चाहो हो, हमारा जीव तो तिहारे आधीन ह। अर यह जिनदीक्षा अत्यन्त दुधर सो लेयनेको तुम्हारी बुद्धि काहेकू प्रवत्ति ह ? यह इन्द्र धनुष समान जे भोग तिनकर लडाया जो तिहारा शरीर सो कैसे मुनिपद धारोगे ? कसा ह मुनिपद ? अत्यन्त विषम ह। या भाति जब राणी केकईने कहचा तब आप कहते भए–हे काते! समथनिकू कहा विषम ? म तो निसदेह मुनिवत धारू गा, तरी अभिलाषा होय सो माग लेहु। राणी चितावान होय नीचा मुखकर कहती भई हे नाथ! मेरे पत्रकू राज्य देहु। तब दशरथ बोले यामे कहा सदेह ? त धरोहरि मेली हुती सो अब लेहु। त जो कहा जो हम प्रमाण किया। अव शोक तज, त मोहि ऋणसहित किया। तब राम लक्ष्मणकू बुलाय दशरथ कहते भए। कसे ह दोऊ भाई ? महा विनयवान ह, पिताके आज्ञाकारी है।

राजा कहे है—हे वत्स ! यह केकई अनेक कलाकी पारगामिनी, याने पूर्व महा घोर संग्रामविषे मेरा सारथीपना किया, यह अति चतुर है । मेरी जीत भई तब मैं तुष्टायमान होय याहि वर दीया जो तेरी बाछा हो सो माग । तब याने वचन मेरे धरोहरि मेला । अब यह कहे है मेरे पुत्रकू राज्य देवो । सो जो याके पुत्रकू राज्य न देऊ तो याका पुत्र भरत संसारका त्याग करे, अर यह पुत्रके शोककरि प्राण तजे । अर मेरी वचन चूकवेकी अकीर्ति जगतमे विस्तरे । अर यह काम मर्यादात विपरीत है जो बडे पुत्रकू छोडकर छोटे पुत्रकू राज्य देना ! अर भरतकू सकल पृथ्वीका राज्य दीए तुम लक्ष्मण सहित कहा जावो ? तुम दोऊ भाई परमक्षत्रीय तेजके धरनहारे हो, तात हे वत्स ! मैं कहा करू ? दोऊ ही कठिन बात आय बनी है । मैं अत्यन्त दुखरूप चिंताके सागरमें पड्या हू । तब श्रीरामचन्द्र महा विनयकू धरते संते कहते भए, पिताके चरणारविंदकी ओर है नेत्र जिनके अर महा सज्जनभावकू धरे है, हे तात ! तुम अपना वचन पालहु, हमारी चिंता तजहु । जो तिहारे वचन चूकनेकी अपकीर्ति होय अर हमारे इन्द्रकी सम्पदा आवे तो कौन अर्थ ? जो सुपुत्र है सो ऐसा ही कार्य करे जाकर माता पिताकू रंचमात्र भी शोक न उपजे । पुत्रका यही पुत्रपना पंडित कहे है—जो पिताकू पवित्र करे, अर कष्टत रक्षा करे । पवित्र करणा यह कहावे जो उनकू जिनधर्मके सम्मुख करे । दशरथके अर राम लक्ष्मणके यह बात होय है ताही समय भरत महिलत उतरया, मनमे विचारी मैं कर्मनिकू हनू, मुनिव्रत धरू, सो लोकनिके मुखत हाहाकार शब्द भया । तब पिताने विह्वल चित्त होय भरतकू वन जायवेत राख्या, गोदमे ले बैठे, छातीसू लगाय लिया, मुख चूमा अर कहते भए—हे पुत्र ! तू प्रजाका पालनकर, मैं तपके अर्थि वनमे जाऊ हू । भरत बोले—मैं राज्य न करू, जिनदीक्षा धरूगा । तब राजा कहते भए—हे वत्स ! कईएक दिन राज्य करहु । तिहारी नवीन वय है, वृद्ध अवस्थामे तप करियो । भरत कही—हे तात ! जो मृत्यु है सो बाल वृद्ध तरुणकू नाहीं देखे है, सर्वभक्षी है । तुम मोहि वृथा काहेकू मोह उपजावो हो ? तब राजा कही—हे पुत्र ! गृहस्थाश्रमविषे भी धर्मका संग्रह होय है । कुमानुषनित नाहीं

बन है । तब भरत कही—हे नाथ ! इन्द्रियनिके वशतै काम क्रोधादिक भरे गृहस्थनिकूं मुक्ति कहां ? तब भूपतिने कही—हे भरत ! मुनिनहूमें सब ही तद्भव मुक्ति नाहीं होय है, कई एक होय हैं । तातैं तू कई दिन गृहस्थधर्म आराधि । तब भरत कही—हे देव ! आप जो कही सो सत्य है, परन्तु गृहस्थ-निका तो यह नियम ही है जो मुक्ति न होय । अर मुनिनिमैं कोई होय, कोई न होय । गृहस्थधर्मतै परम्पराय मुक्ति होय है, साक्षात नाहीं । तातैं हीनशक्ति वारेनिका काम है । मोहि यह बात न रुचै, मैं महाव्रत धरणेका ही अभिलाषी हूं । गरुड कहा पतंगनिकी रीति आचरै ? कुमानुष कामरूप अग्निकी ज्वालाकरि परम दाहकूं प्राप्त भए संतै स्पर्शनइन्द्रिय अर जिह्वा इन्द्रियकरि अधमकायकूं करै है तिनकूं निर्वृत्ति कहां ? पापी जीव धर्मतैं विमुख, विषयभोगनिकूं सेयकरि निश्चयसेती महा दुःखदाता जो दुर्गति ताहि प्राप्त होय है । ये भोग दुर्गतिके उपजावनहारे, अर राखे न रहैं, क्षणभंगुर हैं, तातैं त्याज्य ही हैं । ज्यों ज्यों कामरूप अग्निमें भोगरूप इंधन डारिए त्यों त्यों अत्यन्त तापकी करण हारी कामाग्नि प्रज्वलित होय है । तातैं हे तात ! तुम मोहि आज्ञा देवो जो बनमें जाय विधिपूर्वक तप करूं । जिनभाषित तप परम निर्जराका कारण है । या संसारतैं मैं अतिभयकूं प्राप्त भया हूं । अर हे प्रभो ! जो घर ही विषैं कल्याण होय तो तुम काहेको घर तजि मुनि हुआ चाहो हो ? तुम मेरे तात हो । सो तातका यही धर्म है—संसार समुद्रतैं तारै, तपकी अनुमोदना करै, यह बात विचक्षण पुरुष कहैं हैं । शरीर स्त्री धन माता पिता भाई सकलकूं तजि यह जीव अकेला ही परलोककूं जाय है । चिरकाल देवलोकके सुख भोगे हैं, तौ हू यह तृप्त न भया । सो कैसे मनुष्यनिके भोगनिकरि तृप्त होय ? पिता भरतके ये वचन सुनकर बहुत प्रसन्न भया, हर्षथकी रोमांच होय आए । अर कहता भया—हे पुत्र ! तू धन्य है, भव्यनिविषैं मुख्य है जिनशासनका रहस्य जानि प्रतिबोधकूं प्राप्त भया है । तू जो कहै है सो प्रमाण है, तथापि हे धीर ! तैं अबतक कबहू मेरी आज्ञा भंग न करी, तू विनयवान पुरुषोंमें प्रधान है, मेरी वार्ता सुनि । तेरी माता केकईने युद्धविषैं मेरा सारथीपना किया । वह युद्ध अति

विषम हुता, जामें जीवनेकी आशा नाही । सो याके सारथीपनेकरि युद्धविष विजय पाई । तब म तुष्टायमान होय याकू कहा—जो तेरी बाछा होय सो माग । तब याने कही यह वचन भडार रह, जादिन मोहि इच्छा होयगी तादिन माग लू गी । सो आज याने यह मागी कि मेरे पुत्रकू राज्य देहु सो मै प्रमाण किया । अब हे गुणनिधे ! तू इन्द्रके राज्य समान यह राज्य निकटक करि । मेरी प्रतिज्ञा भगकी अकीर्ति जगतविष न होय, अर यह तेरी माता तेर शोककरि तप्तायमान होय मरणको न पाव । कसी ह यह ? निरन्तर सुखकर लडाया ह शरीर जान । अपत्य कहिए पुत्र, ताका यही पुत्रपना ह कि माता पिताकू शोकसमुद्रम न डारे ! यह बात बुद्धिमान कह ह । या भाति राजा कही ।

अथानन्तर श्रीराम भरतका हाथ पकड महामधुर वचनकरि प्रेमकी भरी दृष्टिकरि देखते सते कहते भए, हे भात ! तातने जसे वचन तोहि कहे ऐसे और कौन कहने समथ ? जो समुद्रसे रत्नोकी उत्पत्ति होय सो सरोवरसे कहा ? अवार तेरी वय तपके योग्य नाहीं, कईएक दिन राज्य कर जास पिता की कीर्ति वचनके पालिवेकी चन्द्रमा समान निमल होय । अर तो सारिखे पुत्रके होते सते माता शोककर तप्तायमान मरणकू प्राप्त होय यह योग्य नाहीं । अर म पवत अथवा वनविष ऐसी जगह निवास करू गा जो कोई न जान । तू निश्चिन्त राज्य करि । म सकल राजऋद्धि तज देशत दूर रहूगा । अर पथ्वीको पीडा काहू प्रकार न होयगी । तात अब तू दीघ सास मत डार, कईएक दिन पिताकी आज्ञा मान राज्य करि न्याय सहित पथ्वीकी रक्षाकरि । हे निमल स्वभाव ! यह इक्ष्वाकुवशनिका कुल, ताहि तू अत्यन्त शोभायमान करि, जस चन्द्रमा ग्रह नक्षत्रादिकको शोभायमान कर ह । भाईका यही भाईपना पडितनिने कहा ह कि भाइनिकी रक्षा कर, सताप हर । श्रीरामचन्द्र ऐसे वचन कहिकर पिताके चरणनिको भावसहित प्रणाम कर चल पडे । तब पिताकू मूर्च्छा आय गई, काष्ठके स्तम्भ समान शरीर होय गया । राम तकश बाध धनुष हाथमें लेय माताकू नमस्कार कर कहते भए—हे माता ! हम अन्य देशकू जाय ह, तुम चिता न करनी । तब माताको भी मूर्छा आय

गई, बहुरि सचेत होय आसू डारती सती कहती भई हाय पुत्र ! तुम मोहि शोकके समुद्रमें डार कहा जावो हो ? तुम उत्तम चेष्टाके धरणहारे हो, माताका पुत्र ही अवलबन ह, जस शाखाके मूल आधार ह । माता रुदनकरि विलाप करती भई । तब श्रीराम माताकी भक्तिविष तत्पर ताहि प्रणामकर कहते भए—हे माता ! तुम विषाद मत करहु । म दक्षिणदिशाथिष कोई स्थानक कर तुमकू निसदेह बुलाऊगा । हमारे पिताने माता ककईकू वर दिया हुता सो भरतकू राज्य दिया । अब म यहा रहू नाही, विध्याचलके वनविष अथवा मलयाचलके वनविष तथा समुद्रके समीप स्थानक करि तुमकू निसदेह बुलाऊगा । म सूय समान यहा रहू तो भरत चद्रमाकी आज्ञा ऐश्वयरूप काति न विस्तर । तब माता नमीभूत जो पुत्र ताहि उरसू लगाय रुदन करती सती कहती भई—हे पुत्र ! मोकू तिहारे लार ही चलना उचित ह, तुमकू देखे विना म प्राणनिकू राखिवे समथ नाहीं । जे कुलवती स्त्री ह तिनके पिता अथवा पति तथा पुत्र ये ही आश्रय ह । सो पिता तो कालवश भया, अर पति जिनदीक्षा लेयवेकू उद्यमी भया ह । अब तो पुत्रहीका अवलबन ह । सो तुमहू छाड चाले तो मेरी कहा गति भई ? तब राम बोल हे—माता ! मागमे पाषाण, अर कटक बहुत ह, तुम कस पायन चलोगी ? तात कोऊ सुख का स्थानककरि असवारी भेज तुमकू बुलाऊगा । मोहि तिहारे चरणनिकी सौगध ह, तिहारे लेनेकू म आऊगा तुम चिता मत करहु । ऐसे कह माताकू शातता उपजाय सीख दीनी । बहुरि पिताप गए । पिता मूर्छित होय गये हुते सो सचेत भए । पिताकू प्रणामकर और मातानिप गए । सुमित्रा, केकई सुप्रभा कौशिल्या सबनिकू प्रणाम कर सीख करी । कसे ह राम ? न्यायविष प्रवीण, निराकुल ह चित्त जिनका, तथा भाई बध मत्री अनेक राजा उमराव परिवारके लोक सबनिकू शुभ वचन कह विदा भए । सबनिको बहुत दिलासाकर छातीसू लगाए, आसू पूछे । उनने घनी ही विनती करी जो यहा ही रहो, सो न मानी । सामत तथा हाथी, घोडे, रथ सबकी ओर कपादष्टिकर देख्या । बहुरि बडे बडे सामत हाथी, घोडे भेट लाए सो रामने न राखे । सीता अपने पतिकू विदेश गमनकू उद्यमी

देख ससुर अर सासूकू प्रणामकर नाथक सग चाली । जस शची इन्द्रके साथ चाल अर लक्ष्मण स्नेह कर पूण रामकू विदेशगमनकू उद्यमी दख चित्तमे क्रोधकर चितवता भया । जो हमारे पिताने स्त्री के कहेत यह कहा अन्याय काय विचारचा, जो रामको टार औरको राज्य दिया । धिक्कार ह स्त्री-निकू जो अनुचित काम करती शका न कर, स्वाथविष आसक्त ह चित्त जिनका । अर यह बडा भाई महानुभाव पुरुषोत्तम ह सो ऐसे परिणाम मुनिनके होय ह । अर म ऐसा समथ हू जो समस्त दुरा-चारिनिका पराभवकर भरतकू राज्यलक्ष्मीत रहित करू, अर राज्यलक्ष्मी श्रीरामके चरणनिमें लाऊ । परन्तु यह बात उचित नाहीं, क्रोध महा दुखदाई ह, जीवनिकू अध कर ह । पिता तो जिनदीक्षाकू उद्यमी भया अर म क्रोध उपजाऊ, सो योग्य नाहीं । अर मोहि ऐसे विचारकर कहा ? योग्य अर अयोग्य पिता जान अथवा बडा भाई जान । जाम पिताकी कीर्ति उज्ज्वल होय सो कतव्य ह । मोहि काहूसू कछु न कहना, म मौन पकड बडे भाईके सग जाऊगा । कसा ह यह भाई ? साधु समान हैं भाव जाके । ऐसा विचारकर कोप तज धनुषबाण लेय समस्त गुरुजननिकू प्रणामकर महाविनय सपन्न रामके लार चाल्या । दोऊ भाई जस दवालयत देव निसर तस राजमन्दिरत नीसरे । अर माता पिता सकल परि वार अर भरत शत्रुघ्नसहित इनके वियोगत अश्रुपातकरि मानो वर्षाऋतु करते सते राखवेकू चाले । सो राम लक्ष्मण अति पिताभक्त, अर सबोधवेकू महापडित, विदश जायवेहीका ह निश्चय जिनके, सो माता पिताकी बहुत स्तुतिकर बारम्बार नमस्कारकर बहुत धीय बधाय पीठ पीछे फेरे, सो नगर में हाहाकार भया । लोक वार्ता कर ह । हे मात ! यह कहा भया, यह कौनने मता उपजाया ? या नगरीहीका अभाग्य ह अथवा सकल पथ्वीका अभाग्य ह । ह मात ! हम तो अब यहा न रहेंगे, इनके लार चालेंगे । ये महा समथ ह । अर देखो यह सीता नाथके सग चाली ह । अर रामकी सेवा करण हारा लक्ष्मण भाई ह । धन्य ह यह जानकी विनयरूप वस्त्र पहिरे भरतारके सग जाय ह । नगरकी नारी कह ह हम सबनिकू शिक्षा देनहारी यह सीता महापतिव्रता ह । या समान और नारी नाहीं,

जो महापतिव्रता होय सो याकी उपमा पावें। पतिव्रतानिके भरतार ही देव है। अर देखो यह लक्ष्मण माताकूं रोवती छोड बडे भाईके संग जाय है। धन्य याकी भक्ति, धन्य याकी प्रीति, धन्य याकी शक्ति, धन्य याकी क्षमा, धन्य याकी विनयकी अधिकता। या समान और नाहीं। अर दशरथ भरतकूं यह कहा आज्ञा करी जो तू राज्य लेहु? अर राम लक्ष्मणकूं यह कहा बुद्धि उपजी जो अयोध्याकूं छाड चाले। जा कालमें जो होनी होय सो होय है, जाके जैसा कर्म उदय होय तैसी ही होय, जो भगवानके ज्ञानमें भासा है सो होय। देवगति दुर्निवार है। यह बात बहुत अनुचित होय है। यहाके देवता कहा गए। ऐसे लोगनिके मुखध्वनि होती भई। सब लोक इनके लार चालवेकूं उद्यमी भए। घरनित निकसे नगरीका उत्साह जाता रह्या, शोककर पूर्ण जो लोक तिनके अश्रुपातनिकरि पृथ्वी सजल होय गई। जैसे समुद्रकी लहर उठे है तैसे लोक उठे। रामके संग चाले, मने किए हू लोक न रहे। रामकूं भक्तिकर लोक पूजें, संभाषण करें सो राम पैड पैडमें विघ्न मानें। इनका भाव चलवेका, लोक राख्या चाहे है, कईएक लार चलें। रामका विदेश गमन मानो सूर्य देख न सक्या सो अस्त होने लग्या। अस्त समय सूर्यके प्रकाशने सब दिशा तजी, जैसे भरत चक्रवर्ती मुक्तिके निमित्त राज्यसम्पदा तजी हुती। सूर्यके अस्त होते परम रागको धरती संती संध्या सूर्यके पीछे ही चाली, तैसे सीता रामके पीछे चाली। अर समस्त विज्ञानका विध्वंस करणहारा अंधकार जगतमें व्याप्त भया, मानो रामके गमनकरि तिमिर विस्तरचा। लोग लार लागे सो रहें नाहीं। तब राम लोकनिके टारिवेकूं श्रीअरनाथ तीर्थंकरके चैत्यालयविषै निवास करना विचारचा। संसारके तारणहारे भगवान तिनका भवन सदा शोभायमान, महासुगंध अष्ट मंगल द्रव्यनिकर मंडित, जाके तीन दरवाजे, ऊंचा तोरण। सो राम लक्ष्मण सीता प्रदक्षिणा देय चैत्यालय मांहि पैठे, समस्त विधिके वेत्ता। दोय दरवाजें तक तो लोक चले गए, तीसरे दरवाजे पर द्वारपालने लोकनिकूं रोक्या जैसे मोहिनीकर्म मिथ्यादृष्टिनिकूं शिवपुर जायवेते रोके। राम लक्ष्मण धनुष बाण अर बखतर बाहिर मेल भीतर दर्शनकूं

गए, कमल समान है नेत्र जिनके । श्रीअरनाथका प्रतिबिंब रत्ननिके सिंहासनपर विराजमान, महाशोभायमान, महासौम्य, कायोत्सर्ग, श्रीवत्सलक्षणकर देदीप्यमान है उरस्थल जिनका, प्रकट है समस्त लक्षण जिनके, सम्पूर्ण चन्द्रमा समान वदन, फूले कमलसे नेत्र, कथनविषै अर चिंतवनविषै न आवै ऐसा है रूप जिनका, तिनका दर्शनकर भावसहित नमस्कारकर ये दोऊ भाई परम हर्षकू प्राप्त भए। कैसे है दोऊ ? बुद्धि पराक्रमरूप लज्जाके भरे जिनेन्द्रकी भक्तिविषै तत्पर । रात्रिकू चैत्यालयके समीप रहे, तहा इनकू बसे जान माता कौशल्यादिक पुत्रनिविषै है वात्सल्य जिनका आयकर आंसू डारती बारम्बार उरसू लगावती भई । पुत्रनिके दर्शनविषै अतृप्त विकल्परूप हिंडोलविषै झूलै है चित्त जिनका। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतै कहै है—

हे श्रेणिक ! सर्व शुद्धतामें मनकी शुद्धता महा प्रशंसा योग्य है । स्त्री पुत्रकू भी उरसे लगावै अर पतिकू भी उरसे लगावै, परन्तु परिणामनिका अभिप्राय जुदा जुदा है । दशरथकी चारो ही राणी गुणरूप लावण्यताकर पूर्ण, महामिष्टवादिनी, पुत्रनिसू मिल पतिपै गई, जायकर कहती भई । कैसा है पति ? सुमेरुसमान निश्चल है भाव जाका। राणी कहै है—हे देव ! कुलरूप जहाज शोकरूप समुद्रविषै डूबै है सो थांभो । राम लक्ष्मणकू पीछा ल्यावौ तब राजा कहते भए यह जगत विकाररूप मेरे आधीन नाहीं । मेरी इच्छा तो यह ही है कि सर्व जीवनिकू सुख होय, काहूकू दुख न होय, जन्म जरा मरणरूप पारधीनकरि कोई जीव पीड्या न जाय । परन्तु ये जीव नानाप्रकारके कर्मनिकी स्थितिकू धरै है, तातै कौन विवेकी वृथा शोक करै । बांधवादिक इष्टपदार्थनिके दर्शनविषै प्राणिनिकू तृप्ति नाहीं, तथा धन अर जीतव्य इनकरि तृप्ति नाहीं । इन्द्रियनिके सुख पूर्ण न होय सकैं अर आयु पूर्ण होय तब जीव देहकू तज और जन्म धरै, जैसे पक्षी वृक्षकू तज चला जाय है । तुम पुत्रनिकी माता हो, पुत्रनिकू ले आवो, पुत्रनिके राज्यका उदय देख विश्रामकू भजो । मैने तो राज्यका अधिकार तज्या । पापक्रियातै निवृत्त भया, भवभ्रमणतै भयकू प्राप्त भया। अब मैं मुनिव्रत धारूंगा या भांति राजा राणीनिसो कही ।

निर्मोहताके निश्चयकू प्राप्त भया, सकल विषियाभिलाषरूप दोषनित रहित, सूय समान है तेज जाका सो पथ्वीमे तप सयमका उद्योत करता भया ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविषै दशरथका वराग्य वणन करनेवाला इकतीसवा पर्व पूर्ण भया ॥ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण क्षणएक निद्रा कर अधरात्रिके समय जब मनुष्य सोय रहे, लोकनिका शब्द मिट गया, अर अधकार फलगया ता समय भगवानकू नमस्कारकर बखतर पहिर, धनुष बाण लेय, सीताकू बीचमे लेकर चाले । घर घर दीपकनिका उद्योत होय रहा है, कामीजन अनेक चेष्टा कर है । ये दोऊ भाई महाप्रवीण नगरके द्वारकी खिडकीकी ओरसे निकसे, दक्षिण दिशाका पथ लिया । रात्रिके अतमें दौडकर सामत लोक आय मिले, राघवके सग चलनेकी है अभिलाषा जिनके । दूरत राम लक्ष्मणकू देख महा विनयके भरे असवारी छोड प्यादे आए, चरणारविदको नमस्कारकरि निकट आय वचनालाप करते भए । बहुत सेना आई । अर जानकीकी बहुत प्रशसा करते भए जो याके प्रसादत हम राम लक्ष्मणको आय मिले, यह न होती तो ये धीरे धीरे न चलते तो हम कसे पहुँचते । ये दोऊ भाई पवन समान शीघ्रगामी है अर यह सीता महासती हमारी माता है । या समान प्रशसा योग्य पथ्वीविषै और नाही । ये दोऊ भाई नरोत्तम सीताकी चाल प्रमाण मद मद दो कोस चाले । खेतनिविषै नानाप्रकारके अन्न हरे होय रहे है, अर सरोवरनिमे कमल फूल रहे है, अर वक्ष महारमणीक दीखे है । अनेक ग्राम नगरादिमे ठौर ठौर लोक पूजे है, भोजनादि सामग्रीकरि, अर बडे बडे राजा बडी फौजसे आय मिले, जसे वर्षाकालमे गगा जमुनाके प्रवाहविषै अनेक नदियनिके प्रवाह आय मिले । कईएक सामत मार्गके खेदकरि इनका निश्चय जान आज्ञा पाय पीछे गए, अर कईएक लज्जाकर, कईएक भयकर कईएक भक्ति कर लार प्यादे चले जाय है । सो राम लक्ष्मण क्रीडा करते

परियात्रा नामा अटवीविष पहुचे। कसी ह अटवी ? नाहर अर हाथीनिके समूहकरि भरी, महा भयानक, वक्षनिकर रात्रिसमान अधकारको भरी, जाके मध्य नदी ह, ताके तट आए जहा भीलनिका निवास ह, नानाप्रकारक मिष्टफल ह। आप तहा तिष्ठकर, कईएक राजनिकों विदा किया। अर कई एक पीछे न फिरे, रामने बहुत कहा तो भी सग ही चाले, सो सकल नदीको महा भयानक देखते भए। कसी ह नदी ? पवतनिसो निकसती महानील ह जल जाका, प्रचण्ड ह लहर जामें, महा शब्दायमान अनेक जे ग्राह मगर तिनकर भरी, दोऊ ढाहा विदारती कल्लोलनिके भयकर उडे ह तीरके पक्षी जहा, ऐसी नदी को देखकर सकल सामत त्रासकर कम्पायमान होय राम लक्ष्मणकू कहते भए—हे नाथ! कपाकर हमें भी पार उतारहु, हम सेवक भक्तिवत हमसे प्रसन्न होवो। हे माता जानकी! लक्ष्मणसे कहो जो हमकू पार उतार। या भाति आसू डारते, अनेक नरपति नाना चेष्टाके करणहारे नदीविष पडने लगे। तब राम बोले अहो! अब तुम पाछे फिरो। यह वन महा भयानक ह। हमारा तुमारा यहा लग ही सग हुता। पिताने भरतकू सबका स्वामी किया ह सो तुम भक्तिकर तिनकू सेवहु। तब वे कहते भए—हे नाथ! हमारे स्वामी तुमही हो, महादयावान हो, हमपर प्रसन्न होवो, हमको मत छोडहु। तुम विना यह प्रजा निराश्रय भई, आकुलतारूप कहो कौनकी शरण जाय ? तुमसमान और कौन है ? व्याघ, सिह अर गजेन्द्र, सर्पादिकका भरा भयानक जो यह वन तामें तुम्हारे सग रहेंगे। तुम बिना हमार स्वगहु सखकारी नाहीं। तुम कही पाछे जावो सो चित्त फिर नाहीं, कसे जाहिं ? यह चित्त सबइन्द्रियनिका अधिपति याहीत कहिए ह जो अदभुत वस्तुमें अनुराग कर। हमारे भोगनिकर घरकर तथा स्त्री कुटुम्बादिकर कहा ? तुम नररत्न हो, तुमको छाड कहा जाहि ? हे प्रभो! तुमने बालक्रीडाविष भी हमसो कबहू वचना न करी, अब अत्यन्त निठुरताकू धारौ हो। हमारा अपराध कहा ? तिहारे चरणरजकर परमवद्धिकू प्राप्त भए, तुम तो भत्यवत्सल हो। अहो माता जानकी! अहो लक्ष्मण धीर! हम सीस निवाय हाथ जोड विनती कर है, नाथकू हमपर प्रसन्न करहु। ये वचन

सबने कहे। तब सीता अर लक्ष्मण रामके चरणनिको ओर निरख रहे। राम बोले अब तुम पाछे जाहु। यही उत्तर ह। सुखसों रहियो। ऐसा कहकर दोनो धीर नदीके विष प्रवेश करते भए। श्रीराम सीताका कर गह सुखसे नदीमें लेगए जस कमलीनिको दिग्गज लेजाय। वह असराल नदी राम लक्ष्मण क प्रभावकर नाभि प्रमाण बहने लगी। दोऊ भाई जलविहारविष प्रवीण क्रीडा करते चले गए। सीता रामके हाथ गहें एसी शोभ मानो साक्षात लक्ष्मी ही कमलदलमें तिष्ठी ह।

राम लक्ष्मण क्षणमात्रविषै नदीपार भए, वक्षनिके आश्रय आय गए। तब लोकनिकी दृष्टित अगोचर भए, तब कईएक तो विलाप करते आसू डारते घरनिकू गए, अर कईएक राम लक्ष्मणकी ओर धरी ह दष्टि जिनने सो काष्ठसे होय रहे। अर कईएक मूर्छा खाय धरतीपर पडे। अर कईएक ज्ञानको प्राप्त होय जिनदीक्षाको उद्यमी भए, परस्पर कहत भए जो धिक्कार ह या असार ससारको, अर धिक्कार इन क्षणभगुर भोगनिको, ये काले नागके फण समान भयानक ह। ऐसे शूरवीरनिकी यह अवस्था, तो हमारी कहा बात ? या शरीरको धिक्कार, जो पानीके बुदबुदा समान निस्सार, जरा मरण इष्टवियोग अनिष्टसयोग इत्यादि कष्टका भाजन। धन्य ह वे महापुरुष, भाग्यवत, उत्तम चेष्टाके धारक, जे मरकट (बदर) की भौंह समान लक्ष्मीको चचल जान तजिकर दीक्षा धरते भए। या भाति अनेक राजा विरक्त दीक्षाको सन्मुख भए। तिनने एक पहाडकी तलहटीमें सुन्दर वन देख्या। अनेक वृक्ष निकर मडित, महासघन, नानाप्रकारके पुष्पनिकर शोभित, जहाँ सुगन्धके लोलुपी भ्रमर गुजार कर ह। तहा महापवित्र स्थानकमें तिष्ठते ध्यानाध्ययनविष लीन महातपके धारक साधु देखे। तिनको नमस्कारकर वे राजा जिननाथका जो चत्यालय तहा गए। ता समय पहाडनिकी तलहटी तथा पहाड निके शिखरविष, अथवा रमणीक वननिविष, अथवा नदीनिके तटविषै, नगर ग्रामादिकविषै जिन मदिर हुत तहा नमस्कारकरि एक समुद्र समान गम्भीर मुनिनके गुरु सत्यकेतु आचाय तिनके निकट गए। नमस्कारकर महाशातरसके भरे आचायसे वीनती करते भए—हे नाथ! हमको ससार समुद्रत

पार उतारहु । तब मुनि कही तुमको भवपार उतारनहारी भगवती दीक्षा है सो अंगीकार करहु । यह मुनिकी आज्ञा पाय ये परम हर्षकू प्राप्त भए । राजा विदग्धविजय मेरुक्रूर संग्रामलोलुप श्रीनाग दमन धीर शत्रुदमन अर विनोद कटक सत्यकठोर प्रियवधन इत्यादि निग्रंथ होते भए । तिनका गज तुरग रथादि सकल साज सेवक लोकनिन जायकरि उनके पुत्रादिकनिकू सौंप्या । तब वे बहुत चितावान भए । बहुरि समझकर नानाप्रकारके नियम धारते भए । कईएक सम्यग्दर्शनकू अंगीकारकर संतोषकू प्राप्त भय, कईएक निर्मल जिनेश्वरदेवका धर्म श्रवणकरि पापतें पराङमुख भए । बहुत सामंत राम लक्ष्मणकी वार्ता सुन साधु भए । कईएक श्रावकके अणुव्रत धारते भए । बहुत राणी आर्यिका भईं, कईएक सुभट रामका सब वृत्तांत भरत दशरथपर जाकर कहते भए सो सुनकर दशरथ अर भरत कछु एक खेदकू प्राप्त भए ।

अथानन्तर राजा दशरथ भरतको राज्याभिषेक कर, कछुयक जो रामके वियोग कर व्याकुल भया हुता हृदय, सो समतामें लाय, विलाप करता जो अंत पुर ताहि प्रतिबोधि, नगरतें वनकू गए । सर्वकू भूतहित स्वामीको प्रणामकरि बहुत नपनिसहित जिनदीक्षा आदरी । एकाकी विहारी जिनकलपी भए । परम शुक्लध्यानकी है अभिलाषा जिनके तथापि पुत्रके शोककर कबहुक कछुएक कलुषता उपज आवै सो एक दिन ये विचक्षण विचारते भए कि संसारके दुखका मूल यह जगतका स्नेह है । इसे धिक्कार हो, या करि कर्म बंधे है । मैं अनंत जन्म धरे, तिनविषै गर्भ जन्म बहुत धरे, सो मेरे गर्भ जन्म के अनेक माता पिता भाई पुत्र कहां गये ? अनेक बार मैं देवलोकके भोग भोगे, अर अनेक बार नरकके दुख भोगे, तिर्यचगतिविषै मेरा शरीर अनेक बार इन जीवनिने भख्या, इनका मैं भख्या, नानारूप जे योनियें तिनविषै मैं बहुत दुख भोगे, अर बहुत वार रुदन किया, अर रुदनके शब्द सुने, अर बहुत बार वीणाबांसुरी आदि वादित्रोंके नाद सुने, गीत सुने, नृत्य देखे, देवलोकविषै मनोहर अप्सरानिके भोग भोगे, अनेक बार मेरा शरीर नरकविषै कुल्हाडनि कर काटा गया, अर अनेक वार मनुष्यगतिविषै

महा सुगन्ध महावीर्यका करणहारा षटरस संयुक्त अन्न आहार किया, अर अनेकबार नरकविषै गला सीसा अर तांबा नारकियोने मार मार मुझे प्याया, अर अनेकवार सुर नर गतिविषै मनके हरणहारे सुन्दररूप देखे अर सुन्दररूप धारे, अर अनेकवार नरकविषै महाकुरूप धारे, अर नानाप्रकारके त्रास देखे, कईएक वार राजपद देवपदविषै नानाप्रकारके सुगन्ध सूंघे तिनपर भ्रमर गुंजार कर, अर कई एक वार नरककी महादुर्गंध सूंघी, अर अनेक वार मनुष्य तथा देवगतिविषै महालीलाकी धरणहारी वस्त्राभरण मंडित, मनकी चोरणहारी जे नारी तिनसों आलिंगन किया, अर बहुत वार नरकनि विषै कूटशाल्मलि वृक्ष तिनके तीक्ष्ण कंटक अर प्रज्वलित लोहकी पुतलीनिसे स्पर्श किया। या संसार विषै कर्मनिके संयोगतें मैं कहा कहा न देखा, कहा कहा न सूंघा, कहा कहा न सुना, कहा कहा न भखा? अर पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकायविषै ऐसा देह नाहीं जो मैं न धारा, तीनलोकविषै ऐसा जीव नाहीं जासूं मेरे अनेक नाते न भए। ये पुत्र मेरे कईवार पिता भए, माता भए, शत्रु भये, मित्र भये, ऐसा स्थानक नाहीं जहां मैं न उपजा न मुआ। ये देह भोगादिक अनित्य, या जगतविषै कोई शरण नाहीं, यह चतुर्गतिरूप संसार दुखका निवास है, मैं सदा अकेला हूं। ये षटद्रव्य परस्पर सबही भिन्न हैं यह काय अशुचि, मैं पवित्र। ये मिथ्यात्वादि अव्रतादिक कर्म आस्रवके कारण हैं। सम्यक्त व्रत संयमादि संवरके कारण हैं। तपकर निर्जरा होय है। यह लोक नानारूप, मेरे स्वरूपतें भिन्न। या जगतविषै आत्मज्ञान दुर्लभ है। अर वस्तुका जो स्वभाव सोई धर्म तथा जीवदया धर्म सो मैं महाभाग्यतें पाया। धन्य ये मुनि जिनके उपदेशतें मोक्षमार्ग पाया। सो अब पुत्रनिकी कहा चिंता? ऐसा विचारकर दशरथ मुनि निर्मोहदशाकूं प्राप्त भए। जिन देशोमें पहिले हाथी चढे चमर ढुरते छत्र फिरते हुते अर महारण संग्रामविषै उद्धत वैरिनिकूं जीते तिन देशनिविषै निर्ग्रंथ दशा धरे, बाईस परीषह जीतते शांतिभाव संयुक्त विहार करते भए।

अर कौशल्या तथा सुमित्रा पतिके वैरागी भए अर पुत्रनिके विदेश गए महाशोकवती भई, निर-

तर अश्रुपात डारें। तिनके दुःखकू देख, भरत राज्य विभूतिको विषसमान मानता भया। अर केकई तिनकू दुखी देख उपजी है करुणा जाके पुत्रको कहती भई—हे पुत्र! तू राज्य पाया, बडे बडे राजा सेवा कर है परन्तु राम लक्ष्मण विना यह राज्य शोभै नाहीं। सो वे दोऊ भाई महाविनयवान उन विना कहा राज्य? अर कहा सुख, अर कहा देशकी शोभा, अर कहा तेरी धर्मज्ञता? वे दोऊ कुमार अर वह सीता राजपुत्री सदा सुखके भोगनहारे, पाषाणादिककर पूरित जे मार्ग तिनविषै वाहन विना कैसे जावेंगे? अर तिन गुणसमुद्रनिकी ये दोनो माता निरंतर रुदन कर हैं सो मरणकू प्राप्त होयगी। तात तुम शीघ्रगामी तुरंगपर चढ सिताबी जावो, उनको ले आवो, तिनसहित महासुखसो चिरकाल राज करियो। अर मैं भी तेरे पीछे ही उनके पास आऊं हूं। यह माताकी आज्ञा सुन बहुत प्रसन्न होय ताकी प्रशंसा कर अति आतुर भरत हजार अश्वसहित रामके निकट चला। अर जे रामके समीप वापिस आए हुते तिनकू संग ले चला। आप तेज तुरंगपर चढा उतावली चाल वनविषै आया। वह नदी असराल बहती हुती तो तामें वृक्षनिके लठे गेर बेडे बांध क्षणमात्रमें सेना सहित पार उतरे। मार्गविषै नरनारिनसो पूछते जाय जो तुम राम लक्ष्मण कहीं देखे? वे कहै हैं यहांते निकट ही है सो भरत एकाग्रचित्त चले गए। सघन वनमें एक सरोवरके तटपर दोऊ भाई सीता सहित बैठे देखे, समीप हैं धनुष बाण जिनके। सीताके साथ ते दोऊ भाई घने दिवसविषै आए अर भरत छह दिनमें आया। रामकू दूरते देख भरत तुरंगत उतर पायपियादा जाय रामके पायन पर मूर्छित होय गया। तब राम सचेत किया। भरत हाथ जोड सिर निवाय रामसू वीनती करता भया —

जो हे नाथ! राज्य देयवेकर मेरी कहा विडम्बना करी? तुम सब न्यायमार्गके जाननहारे महा प्रवीण मेरे या राज्य करि कहा प्रयोजन? तुम विना जीवेकर कहा प्रयोजन? तुम महा उत्तम चेष्टा के धरणहारे मेरे प्राणनिके आधार हो। उठो अपने नगर चलें। हे प्रभो! मोपर कृपा करहु, राज्य तुम करहु, राज्य योग तुम ही हो, मोहि सुखकी अवस्था देहु। मैं तिहारे सिरपर छत्र फेरता खडा

रहू गा। अर शत्रुघन चमर ढारेगा, अर लक्ष्मण मन्त्रीपद धारेगा, मेरी माता पश्चातापरूप अग्निकर जरै है। अर तिहारी माता अर लक्ष्मणकी माता महाशोक करै है। यह बात भरत करै है ताही समय शीघ्र रथपर चढी अनेक सामंतनिसहित महाशोककी भरी केकई आई, अर राम लक्ष्मणकू उरसू लगाय बहुत रुदन करती भई। रामने धीर्य बधाया, तब केकई कहती भई—हे पुत्र! उठो, अयोध्या चालो, राज्य करहु, तुम विन मेरे सकल पुर वन समान है अर तुम महा बुद्धिमान हो, भरतकू सिखायलेहु। बहुरि हम स्त्रीजन नष्टबुद्धि है मेरा अपराध क्षमा करहु। तब राम कहते भये—हे मात! तुम तो बातनिविषै प्रवीण हो। तुम कहा न जानो हो, क्षत्रियनिका यही विरुद है जो वचन न चूकें, जो कार्य विचारया ताहि और भांति न करैं। हमारे तातने जो वचन कह्या सो हमकू, अर तुमकू निवाहना, या बातविषै भरतकी अकीर्ति न होयगी। बहुरि भरतसू कहा कि—हे भाई! तू चिंता मत कर, तू अनाचारतै शंकै है सो पिताकी आज्ञा अर हमारी आज्ञा पालवेतै अनाचार नाहीं। ऐसा कह कर वनविषै सब राजानिके समीप भरतका श्रीरामने राज्याभिषेक किया। अर केकईकू प्रणामकर बहुत स्तुतिकर बारम्बार सम्भाषणकर, भरतकू उरसू लगाय, बहुत दिलासा करी, नीठि नीठि विदा किया। केकई अर भरत राम लक्ष्मण सीताके समीपतै पाछे नगरकू चाले। भरत रामकी आज्ञा प्रमाण प्रजाका पिता समान हुआ राज्य करै। जाके राज्यविषै सब प्रजाकू सुख, कोई अनाचार नाहीं, ऐसा निःकंटक राज्य है तौहू भरतका क्षणमात्र राग नाहीं। तीनों काल श्रीअरनाथकी वंदना करै है। अर मुनिनके मुखतै धर्मश्रवण करै। द्युति भट्टारक नामा जे मुनि, अनेक मुनि करै हैं सेवा जिनकी, तिनके निकट भरतने यह नियम लिया कि रामके दर्शनमात्रतै ही मुनिव्रत धारूंगा।

तब मुनि कहते भये कि—हे भव्य! कमल सारिखे हैं नेत्र जिनके, ऐसे राम जो लग न आवैं तौ लग तुम गृहस्थके व्रत धारहु। जे महात्मा निर्ग्रन्थ हैं तिनका आचरण अति विषम है। सो पहिले श्रावकके व्रत पालने, तासू यतिका धर्म सुखसू सधै। जब वृद्ध अवस्था आवैगी तब तप करेंगे, यह वार्ता कहते हुते।

अनेक जडबुद्धि मरणकू प्राप्त भए। महा अमोलक रत्नसमान यतिका धर्म जाकी महिमा कहनेविषै न आवै ताहि जे धारै है तिनकी उपमा कौनकी देहि। यतिके धर्मतै उतरता श्रावकका धर्म है, सो जे प्रमादरहित करै है ते धन्य है। यह अणुव्रत हू प्रबोधका दाता है। जैसे रत्नद्वीपविषै कोऊ मनुष्य गया अर वह जो रत्न लेय सोईदेशांतरविषै दुर्लभ है, तैसे जिनधर्म नियमरूप रत्ननिका द्वीप है, ताविषै जो नियम लेय सोई महाफलका दाता है। जो अहिंसारूप रत्नकू अंगीकारकर जिनवरकू भक्तिकर अरचै सो सुरनरके सुख भोग मोक्षकू प्राप्त होय। अर जो सत्यव्रतका धारक मिथ्यात्वका परिहारकर भावरूप पुष्पनिकी माला कर जिनेश्वरकू पूजै है ताकी कीर्ति पृथ्वीविषै विस्तरै है, अर आज्ञा कोई लोप न सकै। अर जो परधनका त्यागी जिनेंद्रकू उरविषै धारै, बारम्बार जिनेन्द्रकू नमस्कार करै सो नव निधि चौदह रत्नका स्वामी होय अक्षयनिधि पावै। अर जो जिनराजका मार्ग अंगीकार कर परनारीका त्याग करै सो सबके नेत्रनिकू आनन्दकारी मोक्षलक्ष्मीका वर होय। अर जो परिग्रहका प्रमाण कर संतोष धर जिनपतिका ध्यान करै सो लोकपूजित अनन्त महिमाकू पावै, अर आहारदानके पुण्यकर महा सुखी होय ताकी सब सेवा करैं। अर अभयदानकर निर्भयपद पावै, सर्व उपद्रवतै रहित होय। अर ज्ञानदानकर केवलज्ञानी होय सर्वज्ञपद पावै। अर औषधिदानके प्रभावकर रोगरहित निर्भयपद पावै। अर जो रात्रिकू आहारका त्याग करै सो एक वर्षविषै छह महीना उपवासका फल पावै। यद्यपि गृहस्थपदके आरम्भविषै प्रवृत्त है तो हू शुभगतिके सुख पावै। जो त्रिकाल जिनदेवकी वंदना करै ताके भाव निर्मल होय, सर्व पाप का नाश करै। अर जो निर्मल भावरूप पहुपनिकरि जिननाथकू पूजै सो लोकविषै पूजनीक होय। अर जो भोगी पुरुष कमलादि जलके पुष्प तथा केतकी मालती आदि पृथ्वीके सुगंध पुष्पनिकर भगवानकू अरचै सो पुष्पकविमानकू पाय यथेष्ट क्रीडा करै। अर जो जिनराजपर अगर चंदनादि धूप खेवै सो सुगन्ध शरीर का धारक होय। अर जो गृहस्थी जिनमंदिरविषै विवेकसहित दीपोद्योत करै सो देवलोकविषै प्रभाव संयुक्त शरीर पावै। अर जो जिनभवनविषै छत्र चमर झालरी पताका दर्पण

आदि मंगलद्रव्य चढावै अर जिनमंदिरकू शोभित करै सो आश्चर्यकारी विभूति पावै। अर जो जल चंदनादित जिनपूजा करै—जो मनुष्य सुगंधि से दिशाओं को व्याप्त करने वाली गंध से जिनेन्द्र भगवान का लेपन करता है[1] वह देवनिका स्वामी होय महा निर्मल सुगंध शरीर जे देवांगना तिनका वल्लभ होय। अर जो नीरकर जिनेन्द्रका अभिषेक करै सो देवनिकर मनुष्यनित सेवनीक चक्रवर्ती होय, जाका राज्याभिषेक देव विद्याधर करै। अर जो दुग्धकरि अरहंतका अभिषेक करै सो क्षीर सागरके जलसमान उज्ज्वल विमानविषै परम कांति धारक देव होय, बहुरि मनुष्य होय मोक्ष पावै। अर जो दधिकर सर्वज्ञ वीतरागका अभिषेक करै सो दधि समान उज्ज्वल यशकू पायकर भवोदधिकू तरै। अर जो घृतकर जिननाथका अभिषेक करै सो स्वर्ग विमानमें महाबलवान देव होय परम्पराय अनंतवीर्यकू धरै। अर जो ईखरसकर जिननाथका अभिषेक करै सो अमृतका आहारी सुरेश्वर होय नरेश्वर पद पाय मुनीश्वर होय अविनश्वर पद पावै। अभिषेकके प्रभावकर अनेक भव्यजीव देव अर इन्द्रनिकरि अभिषेक पावते भए, तिनकी कथा पुराणनिमें प्रसिद्ध है। जो भक्तिकर जिनमंदिर विषै मयूर पिच्छादिककर बुहारी देय सो पापरूप रजतै रहित होय परम विभूति आरोग्यता पावै। अर जो गीत नृत्य वादित्रादिकर जिनमंदिरविषै उत्सव करै ते स्वर्गविषै परम उत्साहकू पावै। अर जो जिनेश्वरके चैत्यालय करावै सो ताके पुण्यकी महिमा कौन कहि सकै? सुरमंदिरके सुखभोग परंपराय अविनाशीधाम पावै। अर जो जिनेन्द्रकी प्रतिमा करावै सो सुरनरके सुख भोगि परमपद पावै। व्रत विधान तप दान इत्यादि शुभ चेष्टानिकरि प्राणी जे पुण्य उपारजे है सो समस्त कार्य जिनबिंब करावनेके तुल्य नाहीं। जो जिनबिंब करावै सो परंपराय पुरुषाकार सिद्धपद पावै। अर जो भव्य जिन-मंदिरके शिखर चढावै सो इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादिक सुख भोग लोकके शिखर पहुँचै। अर जो जीर्ण जिनमंदिरनिकी मरम्मत करावै सो कर्मरूप अजीर्णकू हरै निर्भय निरोगपद पावै। अर जो

---

१ समालभ्य जिनान् गंधैः सौरभ्य याप्ताखिल मुखैः। सुरभिः प्रमदानां दो जायते दयितः पुमान्॥ १६४॥
पद्मपुराण पर्व ३२ वां (ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित)।

नवीन चैत्यालय कराय जिनबिंब पधराय प्रतिष्ठा करै सो तीन लोकविषै प्रतिष्ठा पावै। अर जो सिद्धक्षेत्रादि तीर्थनिकी यात्रा करै सो मनुष्यजन्म सफल करै। अर जो जिनप्रतिमाके दर्शनका चितवन करै ताहि एक उपवासका फल होय। अर दर्शनको उद्यमका अभिलाषी होय सो बेलाका फल पावै। अर जो चैत्यालय जायवेका आरम्भ करै ताहि तेलाका फल होय, अर गमन किए चौलाका फल होय। कछुएक आगे गए पंच उपवासका फल होय, आधी दूर गए पक्षोपवासका फल होय, अर, चैत्यालयके दर्शनतें मासोपवासका फल होय, अर भाव भक्तिकर महास्तुति किए अनन्त फल प्राप्ति होय। जिनेन्द्रकी भक्ति समान और उत्तम नाहीं। अर जो जिनसूत्र लिखवाय ताका व्याख्यान करै, करावैं, पढै पढावैं, सुनैं सुनावैं, शास्त्रनिकी तथा पंडितनिकी भक्ति करै वे सर्वांगके पाठी होय केवल पद पावैं। जो चतुर्विध संघकी सेवा करै सो चतुर्गतिके दुःख हर पंचमगति पावै। मुनि कहै हैं—हे भरत! जिनेंद्रकी भक्तिकर कर्म क्षय होय। अर कर्म क्षय भए—अक्षयपद पावै। यें वचन मुनिके सुन राजा भरत प्रणामकर श्रावकका व्रत अंगीकार किया। भरत बहुश्रुत, अतिधर्मज्ञ, महाविनयवान, श्रद्धावान, चतुर्विध संघकूं भक्तिकर अर दुखित जीवनिकूं दयाभावकर दान देता भया। सम्यग्दर्शन रत्नकूं उरविषै धारता, अर महासुन्दर श्रावकके व्रतविषै तत्पर न्यायसहित राज्य करता भया।

भरत गुणनिका समुद्र ताका प्रताप अर अनुराग समस्त पृथ्वीविषै विस्तरता भया। ताके देवांगना समान ड्योढ सौ राणी तिनविषै आसक्त न भया, जलमें कमलकी न्याईं अलिप्त रहा, जाके चित्तमें निरन्तर यह चिंता वरतै कि कब यतिके व्रत धरूं, तप करूं, निर्ग्रंथ हुवा पृथ्वीविषै विचरूं। धन्य हैं वे पुरुष जे धीर सब परिग्रहका त्याग कर तपके बल कर समस्त कर्मनिकूं भस्मकर सारभूत जो निर्वाणका सुख सो पावे हैं। मैं पापी संसारविषै मग्न प्रत्यक्ष देखूं हूं जो यह समस्त संसारका चरित्र क्षणभंगुर है, जो प्रभात देखिये सो मध्याह्नविषै नाहीं। मैं मूढ होय रहा हूं। जे रंक विषयाभिलाषी संसारमें राचै है ते खोटी मृत्यु मरै है, सर्प, व्याघ्र, गज, जल, अग्नि शस्त्र विद्युत्पात शूलारोपण

असाध्य रोग इत्यादि कुरीतित शरीर तजेंगे। यह प्राणी अनेक सहसो सुख का भोगनहारा ससारविषै भ्रमण कर ह बडा आश्चय ह ! अल्प आयुमें प्रमादी होय रह्या ह। जस कोई मदोन्मत्त क्षीरसमुद्रके तट सूता तरगोंके समूहसे न डर तस म मोहकर उन्मत्त भव भ्रमणसे नाहीं डरू हू, निभय होय रहा हू। हाय हाय ! म हिसा आरम्भादि अनेक जे पाप तिनकरि लिप्त म राज्य कर कौनसे घोर नरक में जाऊंगा। कसा ह नरक ? बाण खडग चक्रके आकार तीक्ष्ण पत्र ह जिनके, ऐसे शाल्मलीवक्ष जहाँ ह। अथवा अनेक प्रकार तियञ्चगति ताविष जावू गा। देखो ! जिनशास्त्र सारिखा महाज्ञान रूप शास्त्र ताहूको पाय करि मेरा मन पाप युक्त होय रह्या ह। निस्पह होकर यतिका धम नाहीं धार ह सो न जानिए कौन गति जाना ह ? ऐसी कमनिकी नाशनहारी जो धमरूप चिता ताकू निरन्तर प्राप्त हुआ जो राजा भरत सो जनपुराणादि ग्रन्थनिके श्रवणविष आसक्त ह, सदव साधुनकी कथाविषै अनुरागी, रात्रि दिन धममें उद्यमी होता भया।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष दशरथका वराग्य रामका विदेशगमन भरतका रा य वणन करनेवाला बत्तीसवाँ पव पूण भया ॥ ३२ ॥

अथानन्तर श्री रामचन्द्र लक्ष्मण सीता जहा एक तापसीका आश्रम ह तहा गए। अनेक तापस जटिल नानाप्रकारके वक्षनिके वक्कल पहिरे, अनेकप्रकारका स्वादुफल तिनकर पूण है मठ जिनके, वन विषै वक्षसमान बहुत मठ देखे। विस्तीण पत्तोकर छाए ह मठ जिनके, अथवा घासके फूलनिकर आच्छादित ह निवास जिनके, बिना बोये सहज ही उगे जे धान्य ते उनके आगनमें सूके ह, अर मग भयरहित आगनमें बठे जुगाले ह, अर तिनके निवास विषै सूवा मना पढे ह, अर तिनके मठनिके समीप अनेक गुलक्यारी लगाय राखी ह, सो तापसनिकी कन्या मिष्ट जलकर पूण जे कलश ते थावलनिम डार है। श्रीरामचन्द्रकू आए जान तापस नानाप्रकारके मिष्टफल सुगन्ध पुष्प मिष्टजल इत्यादिक सामग्रीनि

कर बहुत आदरतें पाहुन गति करते भए। मिष्ट वचनका सभाषणकर रहनेको कुटी, मधुपल्ल वनकी शय्या इत्यादि उपचार करते भए। ते तापस सहज ही सबनिका आदर कर है, इनको महा रूपवान अद्भुत पुरुष जान बहुत आदर किया। रात्रिकू वसकर ये प्रभात उठकर चाले। तब तापस इनकी लार चाले, इनके रूपकू देख अनुरागी होते हुए पाषाण हू पिघल तौ मनुष्यनिकी कहा बात ? ते तापस सूके पत्रनिके आहारी इनके रूपकू देख अनुरागी होते भए। जे वृद्ध तापस है ते इनकू कहते भये—तुम यहा ही रहो तौ यह सखका स्थानक ह अर कदाचित न रहो तौ या अटवीविष सावधान रहियो। यद्यपि यह वनी जल फल पुष्पादिकर भरी ह तथापि विश्वास न करना। नदी वनी नारी ये विश्वास योग्य नाहीं। सो तुम तो सब बातनिमे सावधान हो हो। फिर राम लक्ष्मण सीता यहा त आग चाले। अनेक तापसिनी इनके देखवेकी अभिलाषाकरि बहुत विह्वल भई सती दूरलग पत्र पुष्प फल इधनादिकके मिसकर साथ चली आई। कईएक तापसिनी मधुर वचनकर इनकू कहती भई जो तुम हमारे आश्रमविष क्यो न रहो, हम तिहारी सब सेवा कर। यहात तीन कोसपर ऐसी वनी ह जहा महासघन वक्ष ह, मनुष्यनिका नाम नाहीं। अनेक सिह व्याघ दुष्ट जीवनिकर भरी, जहा ईधन अर फल फूलके अथ तापसहू न आव। डाभकी तीक्ष्ण अणीनिकर जहा सचार नाहीं। वन महा भयानक ह। अर चित्रकूट पवत अति ऊचा दुलघ्य विस्तीण पड्या ह, तुम कहा नहीं सुन्या ह जो निशक चले जावो हो ? तब राम कहते भए अहो तापसिनी हो ! हम अवश्य आगे जावगे, तुम अपने स्थानक जाहु। कठिनतात तिनकू पाछे फेरी। ते परस्पर इनके गुण रूपका वणन करती अपने स्थानक आई। ये महा गहन वनविष प्रवेश करते भए। कसा ह वह वन ? पवतके पाषाणनिके समूहकरि महा ककश, अर बडे बडे जे वक्ष तिनपर आरूढ बेलनिके समूह जहा, अर क्षुधाकर अति क्रोधायमान जे शादूल तिनके नखनिकर विदारे गए ह वृक्ष जहा, अर सिंहनिकर हते गए जे गज राज तिनके रुधिरकर रक्त भए जे मोती सो ठौर २ विखर रहे ह। अर माते जे गजराज तिनकर

भग्न भये है तरुवर जहा, अर सिहनीकी ध्वनि सुनकर भाग रहे है कुरग जहा, अर सूते जे अजगर तिनके श्वासनिकी पवनकरि गूज रही है गुफा जहाँ, सूकरनिके समूहकर कदमरूप होय रहे हैं तुच्छ सरोवर जहाँ, अर महा अरण्य भसे तिनके सींगनकर भग्न भए है वबइयनिके स्थल जहा, अर फणकू ऊचे किये फिर है भयानक सप जहाँ अर काटनिकर बींधा है पू छका अग्रभाग जिनका—ऐसी जे सुर गाय सो खेदखिन्न भई है, अर फल रहे है कटेरी आदि अनेक प्रकारके कटक जहा, अर विष पुष्प निकी रजकी वासनाकर घूमे है अनेक प्राणी जहाँ, अर गडानिक नखनिकर विदारे गए है वृक्षनिके पींड जहा अर भमते रोझनके समूह तिनकर भग्न भए है पल्लवनिके समूह जहा, अर नानाप्रकारके जे पक्षिनिके समूह तिनके जो क्रूर शब्द उनकर वन गू ज रह्या है, अर बदरनिके समूह तिनके कूदने कर कम्पायमान है वक्षनिकी शाखा जहा, अर तीव वेगकू धरें पवतमौं उतरती जे नदी तिनकर पथ्वीविष पड गया है दाहना जहा अर वक्षनिके पल्लवनिकर नाहीं दीख है सूयकी किरण जहाँ, अर नानाप्रकारके फल फूल तिनकर भरा, अनेक प्रकारकी फल रही है सुगन्ध जहा, नानाप्रकारकी जे औषधि तिनकरि पूण, अर वनके जे धान्य तिनकरि पूरित, कहू एक नील कहू एक रक्त, कहू एक हरित नानाप्रकार वणकू धर जो वन ताम दोऊ वीर प्रवेश करते भये। चित्रकूट पवतके महामनो हर जे नीझरने तिनविष क्रीडा करते, वनकी अनेक सुन्दर वस्तु देखते, परस्पर दोऊ भाई बात करते, वनके मिष्टफल आस्वादन करते, किन्नर देवनिके हू मनकू हर ऐसा मनोहर गान करते, पुष्पनिके परस्पर आभूषण बनावते सुगन्धद्रव्य अगविष लगावते, फूल रहे है सुन्दर नत्र जिनके, महा स्वच्छन्द अत्यन्त शोभाके धारणहारे, सुरनर नागनिके मनके हरणहारे, नेत्रनिकू प्यारे, उपवनकी नाई भीम वनमे रमते भए। अनेक प्रकारके सुन्दर जे लतामण्डप तिनविष विश्राम करते, नानाप्रकारकी कथा करते, विनोद करते, रहस्यकी बात करत, जसे नन्दनवनविष देव भमण कर तसे अतिरमणीक लीला सू वनविहार करते भये।

अथानन्तर साढे चार मासमें मालव देशविषे आए। सो देश अत्यन्त सुन्दर, नानाप्रकारके धान्यो कर शोभित, जहां ग्राम पट्टन घने, सो केतीक दूर आयकर देखे तो बस्ती नाहीं, तब एक बटकी छाया बैठ दोऊ भाई परस्पर बतलावते भये जो काहेत यह देश उजाड दीख है? नानाप्रकारके खेत फल रहे हैं अर मनुष्य नाहीं, नानाप्रकारके वृक्ष फलफूलनिकर शोभित हैं, अर पौंडे साठेके बाड बहुत हैं, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे हैं। नानाप्रकारके पक्षी केलि कर रहे हैं। यह देश अति विस्तीर्ण मनुष्यनिके सचार विना शोभै नाहीं, जैसे जिनदीक्षाकूं धरै मुनि वीतराग भावरूप परम संयम बिना शोभै नाहीं। ऐसी सुन्दर वार्ता राम लक्ष्मणसूं करै हैं। तहां अत्यन्त कोमल स्थानक देख रत्नकम्बल बिछाय श्रीराम बैठे, निकट धरया है धनुष जिनके, अर सीता प्रेमरूप जलकी सरोवरी श्रीरामकेविषै आसक्त है मन जाका, सो समीप बैठी। श्रीरामने लक्ष्मणकूं आज्ञा करी तू बट ऊपर चढकर देख कछु वस्ती दीखै है। सो आज्ञा प्रमाण देखता भया अर कहता भया कि हे देव! विजयार्ध पर्वत समान ऊंचे जिनमंदिर दीखै हैं, जिनके शरदके बादल समान शिखर शोभै हैं, ध्वजा फरहरै हैं, अर ग्राम हूं बहुत दीखै हैं, कूप वापी सरोवरनि करि मंडित हैं, अर विद्याधरनिके नगर समान दीखै हैं, खेत फल रहे हैं परन्तु मनुष्य कोई नाहीं दीखै है। न जानिये लोक परिवार सहित भाज गये हैं अथवा क्रूरकर्मके करणहारे म्लेच्छ बांधकर लेगये हैं। एक दरिद्री मनुष्य आवता दीखै है। मृगसमान शीघ्र आवै है। रूक्ष हैं केश जाके, अर मलकर मंडित है शरीर जाका, लम्बी दाढी कर आच्छादित उरस्थल, अर फाटे वस्त्र पहिरे, फाटे हैं चरण जाके, ढरै है पसेव जाके, मानो पूर्व जन्मके पापकूं प्रत्यक्ष दिखावै है। तब राम आज्ञा करी जो शीघ्र जाय याकूं ले आव, तदि लक्ष्मण बटतें उतर दरिद्रीके पास गये। तब दरिद्री लक्ष्मणकूं देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया। जो यह इन्द्र है, वरुण है अथवा नागेन्द्र है, तथा नर है, किन्नर है, चन्द्रमा है, सूर्य है, अग्नि-कुमार है कि कुबेर है। यह कोऊ महातेजका धारक है, ऐसा विचारता संता डरकर मूर्छा खाय भूमिविषै गिर पडया। तब लक्ष्मण कहते भए-हे भद्र! भय न

करहु, उठ उठ, ऐसा कहि उठाया, अर बहुत दिलासाकरि श्रीरामके निकट ले आया। सो दरिद्री पुरुष क्षुधा आदि अनेक दुखनिकर पीडित हुतो सो रामकू देख सब दुख भूल गया। राम महासुन्दर सौम्य है मुख जिनका, कांतिके समूहत विराजमान, नेत्रनिकू उत्साहके करणहारे, महाविनयवान, जिनके सीता समीप बैठी है। सो मनुष्य हाथ जोड सिर पृथ्वीसू लगाय नमस्कार करता भया। तब आप दयाकर कहते भए—तू छायाविषै आय बैठ भय न करि। तब वह आज्ञा पाय दूर बैठ्या। रघुपति अमृतरूप वचनकर पूछते भए—तेरा नाम कहा, अर कहांत आया, अर कौन है? तब वह हाथ जोडि विनती करता भया। हे नाथ! मै कुटुम्बी (कुनबी) हूं। मेरा नाम सीरगुप्ति है दूरत आऊ हू। तब आप बोले यह देश उजाड काहेत है? तब वह कहता भया हे देव! उज्जयनी नाम नगरी, ताके पति राजा सिंहोदर प्रसिद्ध, प्रतापकर नवाए हैं बडे २ सामंत जाने, देवनि समान है विभव जाका। अर एक दशांगपुरका पति वज्रकर्ण सो सिंहोदरका सेवक अत्यन्त प्यारा सुभट, जाने स्वामीके बडे २ कार्य किये। सो निर्ग्रंथ मुनिकू नमस्कारकर धर्मश्रवणकर ताने यह प्रतिज्ञा करी जो मै देव गुरु शास्त्र टार औरनिकू नमस्कार न करू। साधुके प्रसादकर ताकू सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति भई सो पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है। आप कहा अब लो वाकी वार्ता न सुनी? तब लक्ष्मण रामके अभिप्रायत पूछते भये जो वज्रकर्णपर कौन भांति संतनकी कृपा भई। तब पंथी कहता भया—हे देवराज! एकदिन वज्रकर्ण दशारण्य वनविषै मृगयाकू गया हुता, जन्महीत पापी क्रूरकर्मका करणहारा, इन्द्रियनिका लोलुपी, महामूढ, शुभक्रियातै पराङ्मुख महासूक्ष्म जिनधर्मकी चर्चा सो न जाने, कामी क्रोधी लोभी अन्ध, भोग सेवनकर उपजा जो गर्व सोई भया पिशाच, ताकर पीडित, सो वनविषै भ्रमण कर—सो ताने ग्रीष्म समयविषै एक शिलापर तिष्ठता संता सत्पुरुषनिकर पूज्य ऐसा महामुनि देख्या। चार महीना सूर्यकी किरणका आताप सहन हारा महातपस्वी पक्षीसमान निराश्रय सिंहसमान निर्भय सो तप्तायमान जो शिला ताकर तप्त शरीर ऐसे दुर्जय तीव्रतापका सहनहारा सज्जन। सो ऐसे तपोनिधि साधुकू देख वज्रकर्ण तुरंगपर चढ्या

बरछी हाथमें लिए, कालसमान महाक्रूर पूछता भया। कसे ह साधु? गुणरूप रत्ननिके सागर, परमार्थके वेत्ता, पापनिके घातक, सब जीवनिके दयालु, तपोविभूतिकर मडित तिनसू वजकण कहता भया।

हे स्वामी! तुम या निजन वनविषै कहा करो हो? ऋषि बोले—आत्मकल्याण कर ह जो पूर्वे अनन्त भवविषै न आचरया। तब वजकण हसकर कहता भया या अवस्थाकरि तुमकू कहा सुख है? तुम तपकर रूपलावण्यरहित शरीर किया। तिहारे अथ काम नाहीं, वस्त्राभरण नाहीं, कोई सहाई नाहीं। स्नान सुगन्ध लेपनादि रहित हो, पराए घरनिके आहार कर जीविका पूरी करो हो, तुम सारिखे मनुष्य कहा आत्महित कर? तब याकू काम भोग कर अत्यन्त आतिवत देख महादयावान सयमी बोले—कहा तूने महा घोर नरककी भूमि न सुनी ह जो तू उद्यमी होय पापनिविषै प्रीति कर है? नरककी महाभयानक सात भूमि ह ते महादुगधमई देखी न जाय, स्पर्शी न जाय, सुनी न जाय, महातीक्ष्ण लोहेके काटेनिकर भरी। जहा नारकीनिकू घानीमें पेल ह, अनेक वेदना त्रास होय ह, छुरियो कर तिल तिल काटिए है, अर ताते लोह समान ऊपरले नरकनिका पथ्वीतल अर महाशीतल नीचले नरकनिका पथ्वीतल ताकर महा पीडा उपज ह। जहा महाअधकार महाभयानक रौरवादि गत, असिपत्रवन, महा दुगध वतरणी नदी जे पापी माते हाथिनिकी न्याई निरकुश है ते नरकविषै हजारा भातिके दु ख देख है। हम तोहि पूछ ह तो सारिखे पापारभी विषयातुर कहा आत्महित कर ह? ये इन्द्रायणके फलसमान इन्द्रियनिके सुख तू निरतर सेय कर सुख मान ह सो इनमें हित नाहीं, ये दुगतिके कारण ह। आत्माका हित वह कर ह जो जीवनिकी दया पाले, मुनिके व्रत आदर, निमल है चित्त जिनका। जे महाव्रत तथा अणुव्रत नाहीं आचर ह ते मिथ्यात्व अव्रतके योमत समस्त दु खके भाजन होय ह। तने पूवजन्मविषै कोई सुकत किया हुता ताकर मनुष्य देह पाया। अब पाप करगा तो दुर्गति जायगा। ये विचारे निबल निरपराध मृगादि पशु अनाथ, भूमि ही ह शय्या जिनके, चचल

नेत्र सदा भयरूप, वनके तृण अर जल कर जीवनहारे, पूर्व पापकर अनेक दुखनिकर दुखी, रात्रि हू निद्रा न कर, भयकर महा कायर, सो भले मनुष्य ऐसें दीननिकू कहा हनें ? तातै जो तू अपना हित चाहै है तो मन वचन काय कर हिंसा तज, जीवदया अगीकार करि। ऐसे मुनिके श्रेष्ठ वचन सुनि वज्रकर्ण प्रतिबोधकू प्राप्त भया। जैसे फला वृक्ष नय जाय तैसे साधुके चरणारविंदकू नय गया, अश्वतै उतर साधुके निकट गया। हाथ जोड प्रणाम कर अत्यन्त विनयकी दृष्टि कर चित्तमें साधुकी प्रशंसा करता भया। धन्य है ये मुनि परिग्रहके त्यागी, जिनकू मुक्तिकी प्राप्ति होय है। अर या वन के पक्षी अर मृगादि पशु प्रशंसा योग्य हैं जे इस समाधिरूप साधुका दर्शन करै है। अर अति धन्य हू मैं जो मोहि आज साधुका दर्शन भया। ये तीन जगतकर वंदनीक है, अब मैं पापकर्मतै निवृत्त भया। ये प्रभू ज्ञानस्वरूप नखनिकर बंधुस्नेहमई संसार रूप जो पींजरा, ताहि छेदकर सिंहकी न्याई निकसे। तै साधु देखो मनरूप वैरीकू वशकरि, नग्नमुद्रा धार शील पालै है। अतएव आत्मा पूर्ण वैराग्य कू प्राप्त नाहीं भया, तातै श्रावकके अणुव्रत आचरू। ऐसा विचार कर साधुके समीप श्रावकके व्रत आदरे अर अपना मन शांतिरसरूप जलसे धोया, अर यह नियम लिया जो देवाधिदेव परमेश्वर परमात्मा जिनेन्द्रदेव, अर तिनके दास महाभाग्य निर्ग्रंथ मुनि, अर जिनवाणी, इन विना औरनिकू नमस्कार न करू। प्रीतिवर्धन नामा जे मुनि तिनके निकट वज्रकर्ण अणुव्रत आदरे, अर उपवास धारे। मुनि याकू विस्तार कर धर्मका व्याख्यान कह्या, जाकी श्रद्धाकर भव्यजीव संसारपाशतै छूटै। एक श्रावकका धर्म एक यतिका धर्म। इसमें श्रावकका धर्म गृहावलंबन संयुक्त, अर यति का धर्म निरालम्ब निरपेक्ष। दोऊ धर्मनिका मूल सम्यक्त्वकी निर्मलता। तप अर ज्ञानकर युक्त अत्यन्त श्रेष्ठ, जो प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोगरूपविषै जिनशासन प्रसिद्ध है। यतिका धर्म अति कठिन जान अणुव्रतविषै बुद्धि ठहराई, अर महाव्रतकी महिमा हृदयमें धारी। जैसे दारिद्रीके हाथमें निधि आवै अर वह हर्षकू प्राप्त होय तैसे धर्मध्यानकू धरतासता आनन्दकू प्राप्त भया। यह अत्यन्त

क्रूरकर्मका करणहारा एक साथ ही शांत दशाकूं प्राप्त भया, या बातकर मुनि भी प्रसन्न भए। राजा तादिन तो उपवास किया, दूजे दिन पारणा कर दिगम्बरके चरणारविंदकूं प्रणामकर अपने स्थानक गया। गुरुके चरणारविंदकूं हृदयमें धारता संता संदेहरहित भया। अणुव्रत आराधे। चित्तमें यह चिंता उपजी जो उज्जैनीका राजा जो सिंहोदर ताका मैं सेवक सो ताका विनय किए बिना मैं राज्य कैसे करूं ? तब विचारकर एक मुद्रिका बनाई। जामें श्रीमुनिसुव्रतनाथकी प्रतिमा पधराई, दक्षिण अंगुष्ठमें पहरी। जब सिंहोदरके निकट जाय तब मुद्रिका विषै प्रतिमा ताहि बारम्बार नमस्कार करै। सो याका कोऊ बैरी हुता तानें यह छिद्र हेर सिंहोदरतें कही जो यह तुमकूं नमस्कार नाहीं करै है, जिनप्रतिमाकूं करै है। तब सिंहोदर पापी क्रोधकूं प्राप्त भया अर कपटकर वज्रकर्णकूं दशांग नगरतें बुलावता भया, सम्पदाकर उन्मत्त याके मारवेकूं उद्यमी भया। सो वज्रकर्ण सरलचित्त, सो तुरंग पर चढ उज्जयिनी जावेकूं उद्यमी भया। ता समय एकपुरुष जवान पुष्ट अर उदार है शरीर जाका, दंड जाके हाथ में, सो आयकर कहता भया। हे राजा ! जो तू शरीरतें और राज्य भोगतें रहित भया चाहै है तो उज्जयनी जाहु। सिंहोदर अति क्रोधकूं प्राप्त भया है, तू नमस्कार न करै तातैं तोहि मारया चाहै है। तू भले जानै सो कर। यह वार्ता सुनकर वज्रकर्ण विचारी कि कोऊ शत्रु मोविषै अर नृपविषै भेद किया चाहै है तानैं मन्त्रकर यह पठाया होय। बहुरि विचारी जो याका रहस्य तो लेना। तब एकांतविषै ताहि पूछता भया—तू कौन है अर तेरा नाम कहा, अर कहांतैं आया है, अर यह गोप्य मन्त्र तूनें कैसे जान्या ? तब वह कहता भया कुन्दननगरविषै महा धनवंत एक समुद्र संगम सेठ है जाके यमुना स्त्री, ताके वर्षाकालमें बिजुरीके चमत्कार समय मेरा जन्म भया, तातैं मेरा विद्युदंग नाम धरया। सो मैं अनुक्रमतैं नवयौवनकूं प्राप्त भया। व्यापारके अर्थ उज्जयनी गया तहां कामलता वेश्याकूं देख अनुरागकर व्याकुल भया। एक रात्रि तासूं संगम किया सो वानें प्रीतिके बंधनकर बांध लिया जैसे पारधी मृगकूं पासितैं बांधै। मेरे बापने बहुत वर्षनिमें जो धन उपार्ज्या

हुता सो म ऐसा कुपूत वेश्याके सग कर षटमासमें सब खोया। जस कमलविष भमर आसक्त होय तस ताविष आसक्त भया। एक दिन वह नगरनायिका अपनी सखीके समीप अपने कुण्डलनिकी निंदा करती हुती सो मैं सनी। तब वास पूछी, तब तान कही— ध-य ह रानी श्रीधरा महासौभाग्यवती ताके काननिमें जस कुण्डल ह तस काहूके नाहीं। तब म मनमें चितई जो म राणीके कुण्डल हरकर याकी आशा पूण न करू तो मेरे जीने कर कहा? तब कुण्डल हरनेकू म अंधेरी रात्रिविष राजमंदिर गया सो राजा सिंहोदर कोप हो रहा था, अर राणी श्रीधरा निकट बठी हुती। सो राणी पूछी—हे देव! आज निद्रा काहेत न आव ह? तब राजा कही हे राणी! मैं वज्रकणकू छोटेतै मोटा किया, अर मोहि सिर न नवाव, सो वाहि जबतक न मारू तब तक आकुलताके योगत निद्रा कहा आव? ऐते मनुष्यनित निद्रा दूर ही भाग—अपमानसे दग्ध, अर कुटुम्बी निधन, शत्रुने आय दबाया अरु जीतने समथ नाहीं, अर जाके चित्तमें शल्य तथा कायर अर ससारत विरक्त, इनत निद्रा दूर ही रह ह। यह वार्ता राजा रानीकू कही। सो म सुनकर ऐसा होयगया मानो काहूने मेरे हृदयमें बजकी दीनी। सो कुण्डल लेयवेकी बुद्धि तज यह रहस्य लय तेरे निकट आया, अब तुम वहा जावो मत। कसे हो तुम? जिनधममें उद्यमी हो। अर निरतर साधुनिके सेवक हो। अजनीगिरि पवतसे हाथी, जिनसे मद झरे, तिन पर चढे योधा, वक्तर पहिरे, अर महा तेजस्वी तुरगनिके असवार, कवच पहिरे महाक्रूर समत तेरे मारवेके अथ राजाकी आज्ञात माग रोके खडे ह। तात तू कपाकर अबार वहा मत जाय। म तरे पायन परू हू। मेरा वचन मान, अर तेरे मनमें प्रतीत नाहीं आव तो देख वह फौज आई, धूरके पटल उठे ह, महा शब्द होते आव ह। यह विद्युदगके वचन सुन वजकण परचक्रकू आवता देख याकू परम मित्र जान लार लेय अपने गढविष तिष्ठ्या। सिंहोदरके सुभट दरवाजेमें आवने न दिये। तब सिंहोदर सव सेना लार ल चढ आया। सो गढ गाढा जान अपने कटकके लोग इनके मारवेके डरत तत्काल गढ लेवेकी बुद्धि न करी। गढके समीप डेरे कर वजकणके समीप दूत भेज्या सो अत्यन्त कठोर

वचन कहता भया । तू जिनशासनके गर्वकरि मेरे ऐश्वर्यका कंटक भया । जे घरखोवा यति तिनने तोहि बहकाया, तू न्यायरहित भया, देश मेरा दिया खाय,माथा अरहंतकू नवावे । तू महा मायाचारी है । तातैं शीघ्र ही मेरे समीप आयकर मोहि प्रणाम कर नातर मारा जायगा । यह वार्ता दूतने वज्रकर्णसू कही तब वज्रकर्ण जो जवाब दिया सो दूत जाय सिंहोदरसू कहै है, हे नाथ ! वज्रकर्णकी यह बीनती है जो देश नगर भण्डार हाथी, घोडे सब तिहारे है सो लेहु, मोहि स्त्रीसहित धर्मद्वार देय काढ देहु, मेरा तुमतैं उजर नाहीं । परन्तु मै यह प्रतिज्ञा करी है जो जिनेन्द्र, मुनि अर जिनवाणी इन विना और कू नमस्कार न करू सो मेरा प्राण जाय तोहू प्रतिज्ञा भग न करू । तुम मेरे द्रव्यके स्वामी हो, आत्माके स्वामी नाहीं । यह वार्ता सुन सिंहोदर अति क्रोधकू प्राप्त भया, नगरकू चारो तरफसे घेरया अर देश उजाड दिया । सो दरिद्री मनुष्य श्रीरामसू कहै है—हे देव ! देश उजाडनेका कारण मै तुमसू कह्या । अब मै जाऊ हू, यहातै नजदीक मेरा ग्राम है, सो ग्राम सिंहोदरके सेवकनिन बाल्या लोगनिके विमान तुल्य घर हुते सो भस्म भए । मेरी तृण काष्ठकर रची कुटी सो हू भस्म भई होयगी, मेरे घरमें एक छाज, एक माटीका घट, एक हाडी यह परिग्रह हुता सो लाऊ हू । मेरे खोटी स्त्री तानै क्रूर वचन कह मोहि पठाया है । अर वह बारम्बार ऐसे कहै है जो सूने गावमें घरनिके उपकरण बहुत मिलेंगे सो जायकर ले आवहु । सो मै जाऊ हू मेरे बडे भाग्य जो आपका दर्शन भया, स्त्रीने मेरा उपकार किया जो मोहि पठाया । वह वचन सुन श्रीराम महा दयावान पथीकू दुखी देख अमोलक रत्ननिका हार दिया सो पथी प्रसन्न होय चरणारविंदकू नमस्कार कर हार लेय अपने घर गया, द्रव्यकर राजनिके तुल्य भया ।

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मणसू कहते भए—हे भाई ! यह ज्येष्ठका सूर्य अत्यन्त दुस्सह जब अधिक न चढे पहिले ही चलें या नगरके समीप निवास करें । सीता तृषाकर पीडित है सो याहि जल पिलावैं । अर आहारकी विधि भी शीघ्र ही करें । ऐसा कहि आगै गमन किया । सो दशागनगरके समीप जहा

श्री चन्द्रप्रभुका चत्यालय महा उत्तम ह तहाँ आए अर श्रीभगवानकू प्रणामकर सुखसू तिष्ठे। अर आहारकी सामग्री निमित्त लक्ष्मण गए, सिहोदरके कटकमें प्रवेश करते भए। कटकके रक्षक मनुष्य नित मन किए तब लक्ष्मण विचारी ये दरिद्री अर नीच कुल इनत म कहा विवाद करू। यह विचार नगरकी ओर आए सो नगरके दरवाजे अनेक योधा बठे हुते अर दरवाजेके ऊपर वजकण तिष्ठा हुता, महासावधान। सो लक्ष्मणकू देख लोक कहते भए, तुम कौन हो, अर कहात कौन अथ आए हो ? तब लक्ष्मण कही दूरत आए ह अर आहार निमित्त नगरमें आए ह। तब वज्रकण इनकू अति सुन्दर देख आश्चयकू प्राप्त भया अर कहता भया हे नरोत्तम! माहि प्रवेश करो। तब यह हर्षित होय गढमें गया, वज्रकण बहुत आदरसू मिल्या अर कहता भया जो भोजन तयार ह सो आप कपा कर यहा ही भोजन करहु। तब लक्ष्मण कही मेरे गुरुजन बडे भाई और भावज श्रीचन्द्रप्रभुके चत्यालयविष बठ ह तिनकू पहिले भोजन कराय म भोजन करूगा। तब वज्रकणने कही बहुत भली बात, वहा ले जाइये, उन योग्य सब सामग्री ह ले जावो। अपन सेवकनि हाथ ताने भाति भातिकी सामग्री पठाई सो लक्ष्मण लिवाय लाए। श्रीराम लक्ष्मण अर सीता भोजनकर बहुत प्रसन्न भए। श्रीराम कहते भए—हे लक्ष्मण! देखो वज्रकणकी बडाई जो ऐसा भोजन कोऊ अपने जमाईको हू न जिमाव सो विना परच अपने ताइ जिमाए। पीनेकी वस्तु महामनोहर, अर व्यजन महामिष्ट यह अमृत तुल्य भोजन जाकरि मागका खेद मिटचा अर जेठके आतापकी तप्त मिटी। चादनी समान उज्ज्वल दुग्ध महा सुगन्ध, जापरि भ्रमर गुजार कर ह, अर सुन्दर घत, सुदर दधि, मानो कामधेनुके स्तननिकरि उपजाया दुग्ध, ताकरि निरमापे ह। ऐसे व्यजन, ऐसे रस और ठोर दुलभ ह। ता पथीने पहिले अपने ताइ कहा हुता जो यह अणुव्रतका धारी श्रावक ह, अर जिनेन्द्र मुनीन्द्र जिनसूत्र टार औरनिकू नमस्कार नाहीं कर ह। सो ऐसा धर्मात्मा, व्रत शीलका धारक आपने आगे शत्रुकरि पीडित रहैं तो अपने परुषाथ कर कहा ? अपना यही धम ह जो दुखीका दुख निवार, साधर्मीका तो अवश्य निवार।

यह अपराध रहित, साधुसेवाविष सावधान, महाजिनधर्मी, जाके लोक जिनधर्मी, ऐसे जीवकू पीडा काहे उपज ? यह सिंहोदर ऐसा बलवान ह जो याके उपद्रवत वज्रकणकू भरत भी न बचाय सक । तातै हे लक्ष्मण ! तुम याकू शीघ ही सहाय करो, सिंहोदर प जाओ अर वजकणका उपद्रव मिट सो करहु । हम तुमकू कहा सिखाव जो यू कहियो, तुम महाबुद्धिवान हो, जस महा मणि प्रभा सहित प्रकट होय है तस तुम महा बुद्धि पराक्रमकू धर प्रकट भए हो । या भाति श्रीरामने भाईके गुण गाए, तब भाई लक्ष्मण लज्जाकर नीचे मुख होय गए । नमस्कारकर कहते भये—हे प्रभो ! जो आप आज्ञा करोगे सोई होयगा । महाविनयवान लक्ष्मण रामकी आज्ञा प्रमाण धनुषबाण लेय धरतीकू कम्पायमान करते सते शीघ ही सिंहोदर प गए । सिंहोदरके कटकक रखवार पूछते भए तुम कौन हो ? लक्ष्मण कही म राजा भरतका दूत हू । तब कटकमें पठने दिया, अनेक डेरे उलघ राजद्वार गया । द्वारपाल राजासू मिलाया सो महा बलवान सिंहोदरकू तणसमान गिनता सता कहता भया, हे सिंहोदर ! अयोध्याका अधिपति भरत तान यह आज्ञा करी ह जो वथा विरोधकर कहा ? वजकणसू मित्रभाव करहु । तब सिंहोदर कहता भया—हे दूत ! राजा भरतसू या भाति कहियो जो अपना सेवक होय अर विनयमागसे रहित होय ताहि स्वामी समझाय सेवामें लाव, यामें विरोध कहा ? यह वजकण दुरात्मा, मानी, मायाचारी, कृतघ्न, मित्रनिका निंदक, चाकरीचूक, आलसी, मूढ, विनयचार रहित, खोटी अभिलाषाका धारक, महाक्षुद्र, सज्जनता रहित ह सो याके दोष तब मिट जब यह मरणको प्राप्त होय अथवा राज्य रहित करू । तात तुम कछु मत कहो । मेरा सेवक ह जो चाहूगा सो करू गा । तब लक्ष्मण बोले—बहुत उत्तरनिकरि कहा ? यह परमहितु ह, या सेवकका अपराध क्षमा करहु । ऐसा जब कह्या तब सिंहोदर क्रोध कर अपने बहुत सामतनिकू देख गवकू धरता सता उच्च स्वरसू कहता भया ।

यह वजकण तो महामानी ह ही अर तू याके कायकू आया सो तू भी महामानी ह । तेरा तन अर मन मानो पाषाणत निरमाप्या ह । रचमात्र हू नमता तोमैं नाहीं । तू भरतका मूढ सेवक है ।

जानिए ह जो भरतके देशमें तो सारिखे मनुष्य होवेंगे। जस सीझती भरी हाडी माहींसू एक चावल काढकर नम कठोरकी परीक्षा करिए ह तस एक तेरे देखवेकरि सबनिकी बानिगी जानी जाय ह। तब लक्ष्मण क्रोधकर कहते भए, म तेरी वाकी सधि करावेकू आया हू, तोहि नमस्कार करवेकू न आया, बहुत कहनेसू कहा? थोडे हीमें समझहु। वजकणसू सधि कर लेहु, नातर मारा जायगा। ये वचन सुन सबही सभाके लोक क्रोधकू प्राप्त भए। नानाप्रकारके दुवचन कहते भए, अर नानाप्रकार क्रोध की चेष्टाकू प्राप्त भए। कईएक छुरी लेय, कईएक कटारी भाला तलवार लेयकरि याके मारवेकू उद्यमी भए। हुकार शब्द करते अनेक सामत लक्ष्मणकू बेढते भए। जस पवतकू मच्छर रोक तैसें रोकते भए। सो यह धीर वीर युद्धक्रियाविष पडित, शीघ क्रियाके वेत्ता, चरणके घातकर तिनकू दूर उडाय दिए। कईएक गोडनित मारे, कईएक कुहनिनत पछाडे, कईएक मुष्टिप्रहार करि चूर्णकर डारे, कईएकनिके केश पकड पृथ्वीपर पाडि मारे, कईएकनिकू परस्पर सिर भिडाय मारे। या भाति अकेले महाबली लक्ष्मणने अनेक योधा विध्वस किये। तब और बहुत सामत हाथी घोडनिपर चढ बखतर पहिर लक्ष्मणकी चौगिरद फिर, नानाप्रकारके शस्त्रनिके धारक। तब लक्ष्मण जस सिंह स्यालनिको भगाव तस तिनकू भगावता भया। तब सिंहोदर कारीघटा समान हाथी पर चढकर अनेक सुभटनिसहित लक्ष्मणत लडवेकू उद्यमी भया। अनेक योधा मेघ समान लक्ष्मण रूप चद्रमाकू बेढते भए। सो सब योधा ऐसे भगाए जस पवन आकके डोडनिके जे फफूदे तिनकू उडाव। ता समय महा योधानिकी कामिनी परस्पर वार्ता कर ह, देखो यह एक महासुभट अनेक योधानिकरि बेढ्या ह, परतु यह सबकू जीत ह, कोऊ याहि जीतिवे समथ नाहीं। धन्य याहि, धन्य याके माता पिता इत्यादि अनेक वार्ता सुभटनिकी स्त्री कर ह। अर लक्ष्मण सिंहोदरकू कटकसहित चढ्या देखकर गजका थम्भ उपाड्या अर कटकके सम्मुख गया। जैस अग्नि वनकू भस्म कर तस कटकके बहुत सुभट विध्वस किए। अर जो दशागनगरके योधा नगरके दरवाजे ऊपर बजकणके समीप बठे हुते, सो फूल गए है नेत्र जिनके,

स्वामीसूं कहते भए–हे नाथ! देखो यह एक पुरुष सिंहोदरके कटकतैं लडे है, ध्वजा रथ चक्र भग्न कर डारे, परम ज्योतिका धारी है, खडगसमान है कांति जाकी, समस्त कटककूं व्याकुलतारूप भ्रमण में डारचा है, सब तरफ सेना भागी जाय है जैसैं सिंहतैं मृगनिके समूह भागें। अर भागते थके सुभट परस्पर बतलावे हैं कि बक्तर उतार धरो, हाथी घोडे छोडो, गदा खाडेमें डार देहु, ऊंचे शब्द न करहु। ऊंचे शब्दको सुनकर शस्त्रके धारक देख यह भयानक पुरुष आय मारेगा। अरे भाई! यहांतैं हाथी लेजावो, कहा थाभ राखा है, गैल देऊ। अरे दुष्ट सारथी! कहा रथकूं थाभ राख्या है। अर घोडे आगे करहु। यह आया यह आया। या भांतिके वचनालाप करते महाकष्टकूं प्राप्त भए, सुभट संग्राम तजि आगे भागे जाय हैं। नपुंसक समान होयगए। यह युद्धमें क्रीडाका करणहारा कोई देव है, तथा विद्याधर है, अथवा काल है, अर क वायु है? यह महाप्रचण्ड सब सेनाकूं जीतकर सिंहोदर कूं हाथीसे उतार गलेमें वस्त्र डार बांध लिए जाय है, जैसे बलदको बांध धनी अपने घर ले जाय। यह वचन वज्रकर्णके योधा वज्रकर्णसूं कहते भए। तब वह कहता भया–हे सुभट हो! बहुत चिंता कर कहा? धर्मके प्रसादतैं सब शांति होयगी। अर दशांगनगरकी स्त्री महलनिके ऊपर बैठी परस्पर वार्ता करै हैं, हे सखी! देखो या सुभटकी अद्भुत चेष्टा, जो एक पुरुष अकेला नरेन्द्रकूं बांध लिए जाय है। अहो धन्य याका रूप, धन्य याकी कांति, धन्य याकी शक्ति। यह कोई अतिशयका धारी पुरुषोत्तम है। धन्य हैं वे स्त्री, जिनका यह जगदीश्वर पति हुआ है, तथा होयगा। अर सिंहोदरकी पटराणी बाल तथा वृद्धनि सहित रोवती संती लक्ष्मणके पायनि पडी अर कहती भई–हे देव! याहि छोड देहु, हमैं भरतारकी भीख देहु। अब जो तिहारी आज्ञा होयगी सो यह करेगा। तब आप कहते भए यह आगे बड़ा वृक्ष है तासूं याहि लटकाऊंगा। तब वाकी राणी हाथ जोड बहुत विनती करती भई–हे प्रभो! आप रोस भए हो तो हमें मारो याहि छाडो, कृपा करो, प्रीतमका दुख हमें मत दिखावो। जे तुम सारिखे पुरुषोत्तम हैं ते स्त्री अर बालक वृद्धनिपर करुणा ही करै हैं। तब आप दयाकर कहते भए–तुम

चिंता न करहु, आगे भगवानका चत्यालय ह तहां याहि छोडेंगे। ऐसा कह आप चत्यालयमें गए। जाय कर श्रीरामत कहते भए–हे देव! यह सिंहोदर आया ह, आप कहो सो कर। तब सिंहोदर हाथ जोड कापता सता श्रीरामके पायन पर्या अर कहता भया–हे देव! तुम महाकातिके धारी, परम तेजस्वी हो, सुमेरु सारिखे अचल पुरुषोत्तम हो मैं आपका आज्ञाकारी, यह राज्य तिहारा, तुम चाहो ताहि देहु। मै तिहारे चरणारविंदकी निरन्तर सेवा करू गा। अर रानी नमस्कार कर पतिकी भीख मागती भई अर सीता सतीके पायन परी अर कहती भई–हे दवी! हे शोभने! तुम स्त्रीनिकी शिरोमणि हो, हमारी करुणा करो। तब श्रीराम सिंहोदरकू कहते भए मानो मेघ गाज्या।

अहो सिंहोदर! तोहि जो वज्रकण कहे सो कर। या बातकरि तेरा जीतव्य ह और बातकर नाहीं। या भाति सिंहोदरकू रामकी आज्ञा भई ताही समय जे वजकर्णके हितकारी हुते तिनकू भेज वजकर्ण कू बुलाया, सो परिवार सहित चत्यालय आया, तीन प्रदक्षिण देय भगवानकू नमस्कार करि चन्द्रप्रभु स्वामीको अत्यन्त स्तुतिकर रोमाच होय आए। बहुरि वह विनयवान दोनो भाइनके पास आया, स्तुति कर शरीरकी आरोग्यता पूछता भया, अर सीताकी कुशल पूछी। तब श्रीराम अत्यन्त मधुर ध्वनिकर वजकणकू कहते भए–हे भव्य! तेरी कुशलकरि हमारे कुशल ह। या भाति वज्रकणकी अर श्रीरामकी वार्ता होय ह, तबही सुन्दर भेष धरे विद्युदग आया, श्रीराम लक्ष्मणकी स्तुति कर वज्रकणके समीप आया। सव सभाविष विद्युदगकी प्रशसा भई जो यह वज्रकर्णका परम मित्र ह। बहुरि श्रीरामचन्द्र प्रसन्न होय वजकर्णसू कहते भए तेरी श्रद्धा महा प्रशसा योग्य ह। कुबुद्धीनिके उत्पातकरि तेरी बुद्धि रचमात्र भी न डिगी जस पवनके समूहकरि सुमेरुकी चूलिका न डिग। मोहूकू देखकर तेरा मस्तक न नया सो धन्य ह तेरी सम्यक्तकी दढता। जे शद्ध तत्त्वके अनुभवी पुरुष ह तिनकी यही रीति ह जो जगत कर पूज्य जे जिनेन्द्र तिनकू प्रणाम कर। बहुरि मस्तक कौनको नवाव? मकरद रसका आस्वाद करण हारा जो भ्रमर सो गदभ (गधा) की पूछप कसें गुजार कर? तू बुद्धिमान ह, धन्य ह, निकटभव्य है,

चन्द्रमा हूते उज्ज्वल बलकीर्ति तरी पृथ्वीमें विस्तरी है। या भांति वज्रकर्णके साचे गुण श्रीरामचन्द्रने वर्णन कीये। तब वह लज्जावान होय नीचा मुख कर रह्या श्रीरघुनाथसूं कहता भया—हे नाथ! मोपर यह आपदा तो बहुत पडी हुती परन्तु तुम सरीखे सज्जन जगतके हितु मेरे सहाई भए। मेरे भाग्य करि तुम पुरुषोत्तम पधारे। या भांति वज्रकरण ने कही तब लक्ष्मण बोले तेरी वांछा जो होय सो कर। वज्रकरण ने कही तुम सारिखे उपकारी पुरुष पायकर मोहि या जगतविषै कछु दुर्लभ नाहीं। मेरी यही विनती है मैं जिनधर्मी हूं, मेरे तृणमात्रको भी पीडाकी अभिलाषा नाहीं, अर यह सिंहोदर तो मेरा स्वामी है तातैं याहि छोडो। ये वचन जब वज्रकरण कहे तब सबके मुखतैं धन्य धन्य यह ध्वनि होती भई। जो देखो यह ऐसा उत्तम पुरुष है द्वेष प्राप्ति भए भी पराया भला ही चाहै है। जे सज्जन पुरुष हैं ते दुर्जनहूका उपकार करैं। अर जे आपका उपकार करैं ताका तौ करैं ही करैं। लक्ष्मणने वज्रकर्णकूं कही जो तुम कहोगे सो ही होयगा। सिंहोदरको छोडा, अर वज्रकर्णका अर सिंहोदरका परस्पर हाथ पकडाया, परम मित्र किए, वज्रकर्णकूं सिंहोदरका आधा राज्य दिवाया। अर जो माल लूटा हुता सो हू दिवाया, अर देश धन सेनाका आधा आधा विभाग कर दिया। वज्रकर्णके प्रसाद करि विद्युदंग सेनापति भया अर वज्रकर्ण राम लक्ष्मणकी बहुत स्तुति करि अपनी आठ पुत्रीनिकी लक्ष्मणसों सगाई करी। कैसी हैं ते कन्या? महाविनयवती, सुंदर भेष, सुन्दर आभूषणकौं धरैं। अर राजा सिंहोदरकूं आदि देय राजानिकी परम कन्या तीनसौं लक्ष्मणकूं दई। सिंहोदर अर वज्रकर्ण लक्ष्मणसूं कहत भए—ये कन्या आप अंगीकार करहु, तब लक्ष्मण बोले—विवाह तो तब करूंगा जब अपने भुजा कर राज्य स्थान जमाऊंगा। अर श्रीराम तिनसूं कहते भए—हमारे अबतक देश नाहीं है। तातैं राज भरतकूं दिया है। तातैं चन्दनगिरीके समीप तथा दक्षिणसमुद्रके समीप स्थानक करैंगे तब हमारी दोऊ मातानिकूं लेनेकूं मैं आऊंगा अथवा लक्ष्मण आवेगा। ता समय तिहारी पुत्रीनिकूं परणकर लेआवेगा। अब तक हमारे स्थानक नाहीं, कैसे पाणिग्रहण करैं? जब या भांति कही, तब

वे सब राजकन्या ऐसी होय गई जसा जाडे का मारया कमलनिका वन होय । तब मनमें विचारती भई—वह दिन कब होयगा जब हमकू प्रीतमके सगम रूप रसायनकी प्राप्ति होयगी ? अर जो कदाचित प्राणनाथका विरह भया तो हम प्राण त्याग करगी । इन सबका मन विरहरूप अग्निकर जलता भया । यह बिचारती भई एक ओर महा औंडागत अर एक ओर महाभयकर सिह, कहा कर ? कहा जाव ? विरहरूप व्याघकू पतिके सगमकी आशात बशीभूत कर प्राणनिकू राखेगी, यह चितवन करती सती अपने पिताकी लार अपने स्थानक गई । सिहोदर बज्रकर्ण आदि सब ही नरपति, रघुपतिकी आज्ञा लेय घर गए । ते राजकन्या उत्तम चेष्टाकी धरणहारी माता पितादि कुटुम्बकरि अत्य त न समान जिनका अर पतिमे ह चित्त जिनका सो नाना विनोद करतीं पिताके घरमें तिष्ठती भई । अर विद्युदगने अपने माता पिताकू कुटुम्बसहित बहुत विभूतिसे बुलाया, तिनके मिलापका परम उत्सव किया अर वज्रकर्णक अर सिहोदरके परस्पर अतिप्रीति बढी । अर श्रीरामचन्द्र लक्ष्मण अध रात्रिकू चत्यालयत चाले । धीर २ अपनी इच्छा प्रमाण गमन कर है । अर प्रभात समय जे लोक चत्यालयमें आए तो श्रीरामकू न देख शू यहृदय होय अति पश्चाताप करते भए ।

इति अ विषेण चायविरचित महापद्मपु ाण सस्कृत ग्रथ ाकी भाषावचनिकाविष राम लक्ष्मण कृत वज्रकणका उपका कथन वणन करनवाला ततोसवा पव पूण भया ।। ३३ ।।

अथानन्तर राम लक्ष्मण जानकीकू धीर धीरे चलावते, अर रमणीक वनमें विश्राम लेते, अर महामिष्ट स्वादुफलका रसपान करते, क्रीडा करते, रसभरी बात करते, सुन्दर चेष्टाके धरणहारे, चले २ नलकूवर नामा नगर आए । कसा ह नगर ? नानाप्रकारके रत्ननिके जे मदिर तिनके उत्तु ग शिखरनिकरि मनोहर, अर सुन्दर उपवनोकरि मडित, जिनमदिरनिकरि शोभित, स्वगसमान निरतर उत्सवका भरया लक्ष्मीका निवास ह । सो श्रीराम लक्ष्मण और सीता नलकूवर नामा नगरके परम

सुन्दर वनमें आय तिष्ठे। कसा ह वह वन ? फल पुष्पनिकर शोभित, जहा भमर गु जार कर ह अर कोयल बोले ह। सो निकट सरोवरी तहा लक्ष्मण जलके निमित्त गए, सो ताही सरोवरीपर क्रीडा के निमित्त कल्याणमाला नामा राजपुत्री राजकुमारका भेष किए आई हुती। कैसा ह राजकुमार ? महा रूपवान, नेत्रनिकू हरणहारा, सबकू प्रिय, महा विनयवान, कातिरूप निर्झरनिका पवत, श्रेष्ठ हाथीपर चढ्या, सुन्दर प्यादे लार, जो नगरका राज्य कर। सो सरोवरीके तीर लक्ष्मणकू देख मोहित भया। कसा ह लक्ष्मण ? नीलकमल समान श्याम सुन्दर लक्षणनिका धारक। राजकुमार एक मनुष्यकू आज्ञा करी जो इनकू ले आव। सो वह मनुष्य जायकर हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया—ह धीर ! यह राजपुत्र आपसू मिल्या चाह ह सो पधारिए। तब लक्ष्मण राजकुमारके समीप गए। सो हाथीत उतरकर कमल तुल्य जे अपने कर तिनकर लक्ष्मणका हाथ पकड वस्त्रनिके डेरामें लेगया, एक आसनपर दोऊ बठे। राजकुमार पूछता भया आप कौन हो, कहा त आए हो ? तब लक्ष्मण कही मेरे बडे भाई मो बिना एक क्षण न रहै सो उनके निमित्त अन्न पान सामग्रीकर उनकी आज्ञा लेय तुमपर आऊगा, तब सब बात कहूगा। यह बात सुन राजकुमार कही—जो रसोई यहा ही तयार भई ह सो यहा ही तुम अर वे भोजन करोगे। तदि लक्ष्मणसे आज्ञा पाय सुन्दर भात दाल, नाना विधि व्यजन, नवीन घत कपूरादि सुग ध द्रव्यनिसहित दधि दुग्ध, अर नानाप्रकार पीनेकी वस्तु, मिश्री के स्वाद जामें ऐसे लाडू, अर पूरी साकली इत्यादि नानाप्रकार भोजनकी सामग्री, अर वस्त्र आभूषण माला इत्यादि अनेक सुग ध नाना प्रकार तयार किये। अर अपन निकटवर्ती जो द्वारपाल ताहि भेज्या। सो जायकर सीतासहित रामकू प्रणाम कर कहता भया—हे देव ! या वस्त्र भवनके विषै तिहारा भाई तिष्ठ ह, अर या नगरके नाथने बहुत आदरत विनती करी है,—वहा छाया शीतल है अर स्थान मनोहर, सो आप कृपाकर पधारो तो मागका खेद निवृत्त होय। तब राम सीतासहित पधारे जस चादनीसहित चाद उद्योत कर। कसे है राम ? माते हाथी समान ह चाल जिनकी। लक्ष्मण

सहित नगरका राजा दूर होत देख उठकर सामने आया। सीतासहित राम सिंहासनपर बिराजे, राजाने आरती उतार कर अर्घ दिए, अति सन्मान किया, आप प्रसन्न होय स्नानकर भोजन किया, सुगन्ध लगाई। बहुरि राजा सबनिकूं सीखदेय बिदा किये। ए चार ही रहे—एक राजा तीन ए। राजा सबनिकूं कह्या—जो मेरे पिताके पासतैं इनके हाथ समाचार आए हैं सो एकांतकी वार्ता है, कोई आवने न पावै। जो आवेगा ताही मैं मारूंगा। बडे २ सामंत द्वारे रखे। एकांतविषै इनके आगे लज्जा तज कन्या जो राजाका भेष धारे हुती सो तज अपना स्त्रीपदका रूप प्रकट दिखाया। कैसी है कन्या? लज्जाकर नमीभूत है मुख जाका, अर रूपकर मानो स्वर्गकी देवांगना है, अथवा नागकुमारी है। ताकी कांतिकरि समस्त मन्दिर प्रकाशरूप होयगया मानो चन्द्रमाका उदय भया। चंद्रमा किरणोंकरि मंडित है, याका मुख लज्जा अर मुलकनकर मंडित है। मानो यह राजकन्या साक्षात लक्ष्मी ही है, कमलनिके वनतैं आय तिष्ठी है। अपनी लावण्यता रूप सागरविषै मानो मंदिरकूं मग्न किया है। जाकी द्युति आगे रत्न अर कंचन द्युतिरहित भासै है। जाके स्तन युगलसे कांतिरूप जलकी तरंगनि समान त्रिबली शोभै है। अर जैसे मेघपटलकूं भेद निशाकर निकसै तैसे वस्त्रकूं भेद अंगकी ज्योति फैल रही है। अर अत्यन्त चिकने सुगन्ध कारे वाके पतले लम्बे केश, तिनकरि विराजित है प्रभारूप वदन जाका, मानो कारी घटामें बिजरीके समान चमके है। अर महासूक्ष्म स्निग्ध जो रोमनिकी पंक्ति ताकर विराजित मानो नीलमणिकरि मंडित सुवर्णकीमूर्ति ही है। तत्काल नररूप तज, नारीका रूपकर, मनोहर नेत्रनिकी धरनहारी सीताके पायन लाग समीप जाय बैठी, जैसे लक्ष्मी रतिके निकट जाय बैठे। सो याका रूप देख लक्ष्मण कामकर बींधा गया, और ही अवस्था होय गई, नेत्र चलायमान भए। तब श्रीरामचन्द्र कन्यातैं पूछते भए, कौनकी पुत्री है अर पुरुषका भेष कौन कारण किया? तब वह महामिष्टवादिनी अपना अंग वस्त्रतैं ढांक कहती भई—हे देव! मेरा वृत्तांत सुनहु। या नगरका राजा बालखिल्य, महा सुबुद्धि, सदा आचारवान, श्रावकके व्रतधारक, महा दयालु, जिनधर्मियोंपर वात्सल्य अंगका धारणहारा।

राजा के पृथ्वो रानी, ताहि गर्भ रह्या, सो मैं गर्भविषै आई। अर म्लेच्छनिका जो अधिपति तासूं संग्राम भया। मेरा पिता पकड्या गया। सो मेरा पिता सिंहोदरका सेवक सो सिंहोदरने यह आज्ञा करी जो बाल्यखिल्यके पुत्र होय सो राज्य का कर्त्ता होय, सो मैं पापिनी पुत्री भई। तब हमारे मंत्री सुबुद्धि तानै मनसूबाकर राज्यके अर्थ मोहि पुत्र ठहराया। सिंहोदरकूं वीनती लिखी, कल्याणमाला मेरा नाम धरया अर बडा उत्सव किया। सो मेरी माता अर मंत्री ये तो जानै हैं जो यह कन्या है और सब कुमार ही जानै है। सो एते दिन मैं व्यतीत किए। अब पुण्यके प्रभावतैं आपका दर्शन भया। मेरा पिता बहुत दुःखसूं तिष्ठै है म्लेच्छनिकी बंदीमें है। सिंहोदर ताहि छुडायवे समर्थ नाहीं। अर जो द्रव्य देशविषै उपजै है सो सब म्लेच्छके जाय है। मेरी माता वियोगरूप अग्निकर तप्तायमान जैसे दूजके चन्द्रमाकी मूर्ति क्षीण होय तैसी होय गई है। ऐसा कहकर दुखके भारकर पीडित है समस्त अंग जाका सो मूर्छा खाय गई अर रुदन करती भई। तदि श्रीरामचन्द्रने अत्यन्त मधुर वचन कह कर धीर्य बंधाया, सीता गोदमें लेय बैठी, मुख धोया। अर लक्ष्मण कहते भए—हे सुन्दरी! सोच तज, अर पुरुषका भेषकरि राज्य करि, कईएक दिननिमें म्लेच्छनिकूं पकड कर अपने पिताकूं छूटया ही जान। ऐसा कहकर परम हर्ष उपजाया सो इनके वचन सुनकर कन्या पिताकूं छूटया ही जानती भई। श्रीराम लक्ष्मण देवनकी नाईं तीन दिन यहां बहुत आनन्द रहे। बहुरि रात्रिमें सीतासहित उपवनतैं निकसकर गोप चले गए। प्रभात समय कन्या जागी तिनकूं न देख व्याकुल भई, अर कहती भई—वे महापुरुष मेरा मन हर ले गए, मो पापिनीकूं नींद आगई सो गोप चले गए। या भांति विलाप कर मनको थांभ हाथी पर चढ पुरुषके भेष नगरविषै गई। अर राम लक्ष्मण कल्याणमालाके विनयकर हरया गया है चित्त जिनका, अनुक्रमतैं मेकला नामा नदी पहुंचे। नदी उतर क्रीडा करते अनेक देशनिकूं उल्लंघि विन्ध्याटवीकूं प्राप्त भए। पंथमें जाते संते गुवालनिने मने किए कि यह अटवी भयानक है तिहारे जाने योग्य नाहीं। तब आप तिनकी बात न मानी, चले गए। कैसी है वनी? कहीं एक

लताकर मंडित जे शालवृक्षादिक तिनकरि शोभित है। अर नानाप्रकारके सुगंध वृक्षनिकर भरी महा सुगंधरूप है, अर कहीं एक दावानलकर जले वृक्ष, तिनकर शोभारहित है, जैसे कुपुत्र कलंकित गोत्र न शोभै।

अथानन्तर सीता कहती भई—कटकवृक्षके ऊपर बाई ओर काग बैठ्या है सो यह तो कलहकी सूचना करै है। अर दूसरा एक काग क्षीरवृक्षपर बैठा है सो जीत दिखावै है। तातै एक मुहूर्त थिरता करहु। या मुहूर्तविषै चालै आगे कलहके अंत जीत है, मेरे चित्तमें ऐसा भासै है। तब क्षणएक दोऊ भाई थम्भे बहुरि चाले। आगे म्लेच्छनिकी सेना दृष्टि पडी। ते दोऊ भाई निर्भय धनुषबाण धारे म्लेच्छनिकी सेनापर पडे, सो सेना नाना दिशानिकूं भाग गई। तदि अपनी सेनाका भंग देखि और म्लेच्छनिकी सेना शस्त्र धरै, बहुत म्लेच्छ बक्तर पहिर आए। सो ते भी लीलामात्रमें जीते। तब वे सब म्लेच्छ धनुष बाण डार पुकार करते पतिप जाय सब वृत्तांत कहते भए। तब वे सब म्लेच्छ परम क्रोधकर धनुष बाण लीए महा निर्दई बडी सेनासूं आए। शस्त्रनिके समूहकरि संयुक्त वे काकोदन जातिके म्लेच्छ, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, सर्व मांसके भक्षी, राजानहूकरि दुर्जय, ते कारी घटासमान उमडि आए। तदि लक्ष्मणने क्रोधकर धनुष चढाया, तब वन कम्पायमान भया, वनके जीव कांपने लग लए। तब लक्ष्मणने धनुषके शर बांधा तब सब म्लेच्छ डर, वनमें दशो दिश आंधेकी याई भटकते भए। तब महा भयंकर पूर्ण म्लेच्छनिका अधिपति रथसे उतर हाथ जोड प्रणामकर पायन परया अर अपना सर्व वृत्तांत दोऊ भाइनसूं कहता भया। हे प्रभो! कौशांबी नाम नगरी है। तहां एक विश्वानल नामा ब्राह्मण अग्निहोत्री, ताके प्रतिसंध्यानाम स्त्री, तिनके रौद्रभूतनामा पुत्र! सो द्यूत कलामें प्रवीण, बाल अवस्थाहीतै क्रूरकर्मका करणहारा। सो एक दिन चोरीतै पकडया गया अर सूली देवेकूं उद्यमी भए। तदि एक दयावंत पुरुषने छुडाया सो मैं कांपता देश तज यहां आया। कर्मानुयोगकर काकोदन जातिके म्लेच्छनिका अधिपति भया। महाभ्रष्ट, पशुसमान व्रत क्रिया रहित तिष्ठूं हूं। अब तक महा

सेनाके अधिपति बडे बडे राजा मेरे सम्मुख युद्ध करवेकू समथ न भए, मेरी दृष्टिगोचर न आए, सो म आपके दशनमात्रहीत वशीभूत भया। धन्य भाग्य मेरे जो मने तुम पुरुषोत्तम देखे। अब मोहि जो आज्ञा देहु सो करू। आपका किकर, आपके चरणारविंदकी चाकरी सिरपर धरू हू। अर वह विध्याचल पर्वत अर या स्थानक निधिकर पूण ह। बहुत धनकर पूण युनत ह। आप यहा राज्य करहु। म तिहारा दास। ऐसा कहकर म्लेच्छ मूर्छा खायकर पायन परचा, जस वृक्ष निमू ल होय गिर पडे। ताहि विह्वल देख श्री रामचन्द्र दयारूप बलकर बेढे कल्पवक्ष समान कहते भए, उठ उठ, डरे मत। बालखिल्यकू छोड, तत्काल यहा मगाओ, अर ताका आज्ञाकारी मन्त्री होय कर रह। म्लेच्छनिकी क्रिया तज, पापकर्मत निवत्त हो, दशकी रक्षा कर। या भाति किये तेरी कुशल ह। तब याने कही—हे प्रभो! ऐसा ही करू गा। यह वीनती कर आप गया अर महारथका पुत्र जो बालखिल्य ताहि छोडचा। बहुत विनयसयुक्त ताके तलादि मदन कर, स्नान भोजन कराय, आभूषण पहिराय, रथविष चढाय, श्रीरामचन्द्रके समीप ले जानेकू उद्यमी किया। तदि बालखिल्य परम आश्चयकू प्राप्त होय विचारता भया—कहा यह म्लच्छ महाशत्रु कुकर्मी, अत्यन्त निदयी ? अर मेरा एता विनय कर ह सो जानिये ह जो आज मोहि काहूकी भेंट देगा। अब मेरा जीवन नाहीं, यह विचार सो बालखिल्य सचित चाल्या। आग राम लक्ष्मणको देख परम हर्षित भया। रथत उतर आय नमस्कार किया अर कहता भया, हे नाथ! मेरे पुण्यके योगत आप पधारे मोहि बधनत छुडाया। आप महासुन्दर इन्द्र तुल्य मनुष्य हो, पुरुषोत्तम पुरुष हो। तब राम ने आज्ञा करी तू अपने स्थानक जाहु, कुटुम्बत मिलहु। तब बालखिल्य रामकू प्रणामकरि रौद्रभूत सहित अपने नगर गया। श्रीराम बालखिल्यकू छुडाय रौद्रभूतकू दासकरि वहाते चाले। बालखिल्य कू आया सुनकर कल्याणमाला महा विभूति सहित सन्मुख आई। अर नगरमें महा उत्सव भया। राजा राजकुमारको उरसे लगाय अपनी असवारीमें चढाय नगरविष प्रवश किया। राणी पृथ्वीके हषसे रोमाच होय आए। जसा आगे शरीर सुन्दर हुता तसा पतिके आए भया। सिहोदरकू आदि

देय बालखिल्यके हितकारी सब ही प्रसन्न भए। अर कल्याणमाला पुत्रीने एते दिवस पुरुषका भेष कर राज थाम्भ्या हुता सो या बातका सबक आश्चय भया। यह कथा राजा श्रेणिकसू गौतमस्वामी कह ह—हे नराधिप! वह रौद्रभूत परद्रव्यका हरणहारा, अनेक देशनिका कटक सो श्रीरामके प्रतापत बालखिल्यका आज्ञाकारी सेवक भया। जब रौद्रभूत वशीभूत भया अर म्लेच्छनिकी विगम भूमिमें बालखिल्यकी आज्ञा प्रवर्ती, तब सिंहोवर भी शका मानता भया। अर स्नेह सहित सन्मान करता भया। बालखिल्य रघुपतिके प्रसादत परम विभूति पाय जसा शरद ऋतुमें सूय प्रकाश कर तसा पथ्वी विष प्रकाश करता भया। अपनी राणी सहित देवनिको न्याई रमता भया।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकीभाषा वचनिकाविष म्लेच्छनिके राजा रौद्रभतिका वणन करनेवाला चौतोसवा पव पूण भया ॥ ४ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण देवनि सारिखे मनोहर, नन्दनवन सारिखा वन, ताविष सुखसे विहार करते एक मनोग्य देशविष आय निकसे। जाके मध्य तापी नदी बह। नानाप्रकारके पक्षिनिके शब्द करि सुन्दर तहा एक निजन वनमें सीता तषाकर अत्यन्त खेदखिन्न भई। तब पतिकू कहती भई—हे नाथ! तषासे मेरा कठ सूख ह। जसे अनन्त भवके भमणकर खेदखिन्न हुआ भव्यजीव सम्यकदशनकू बाछे तैस म तषासे व्याकुल शीतल जलकू बाछू हू। ऐसा कहिकर एक वक्षके नीचे बठ गई। तब रामने कही—हे देवी! हे शुभे! तू विषादकू मत प्राप्त होउ, नजीक ही यह आगे ग्राम ह, तहा सुन्दर मदिर ह उठ, आगे चल। या ग्राममें तोहि शीतल जलकी प्राप्ति होयगी। ऐसा जब कह्या तब उठ कर सीता चली, मद मद गमन करती गजगामिनी। ता सहित दोऊ भाई अरुणनामा ग्राममें आए। महा धनवान किसान रह, जहाँ एक ब्राह्मण अग्निहोत्री कपिलनामा प्रसिद्ध, ताके धरमें आय उतरे। ताको अग्निहोत्रीकी शालामें क्षण एक बठ खेद निवारया। कपिलकी ब्राह्मणी जल लाई सो सीता

पिया । तहा विराजे । अर वनत ब्राह्मण बोल तथा छीला वा खेजडा इत्यादि काष्ठका भार बाधे आया । दावानल समान प्रज्वलित जाका मन, महाक्रोधी, कालकूट विषसमान वचन बोलता भया । उल्लू समान ह मुख जाका अर करमें कमण्डलु, चोटीमें गाठ दिए लाबो डाढी, यज्ञोपवीत पहिरे, उञ्छवृत्ति कहिए अन्नको काटकर ले गय पीछे खेतनत अन्न कण बीन लाव । या भाति ह आजीविका जाकी । सो इनकू बठा देख वक्र मुखकर ब्राह्मणीकू दुवचन कहता भया–हे पापिनी ! इनकू घरमें काहे प्रवेश दिया, म आज तोहि गायनिके मठनमें बाधूगा । देख ! इन निलज्ज ढीठ पुरुष धूरकर धूसरोने मेरा अग्निहोत्रका स्थान मलिन किया । यह वचन सुन सीता रामत कहती भई, हे प्रभो ! या क्रोधीके घरमें न रहना, वनमें चलिए, जहा नानाप्रकारके पुष्प फल तिनकर मडित वृक्ष शोभ ह । निमल जलके भरे सरोवर ह, तिनमें कमल फूल रहे हैं, अर मग अपनी इच्छासे क्रीडा करते है । यहा ऐसे दुष्ट पुरुषनिके कठोर वचन सुनिए ह । यद्यपि यह देश धनसे पूण ह अर स्वग सारिखा सुन्दर ह, परन्तु लोग महाकठोर ह, अर ग्रामीजन विशेष कठोर ही होय ह । सो विप्रके रूखे वचन सुन ग्रामके सकल लोक आए, इन दोऊ भाइनिका देवनिसमान रूप देख मोहित भए । ब्राह्मणकू एकातमें ले जाय लोक समझावते भये । ये एक रात्रि यहा रह ह तेरा कहा उजाड ह ? ये गुणवान, विनयवान, रूपवान, पुरुषोत्तम है । तब द्विज सबसे लडया, अर सबसे कह्या–तुम मरे घर काहे आये, परे जाहु । अर मूख इनपर क्रोधकर आया जसे श्वान गजपर आव । इनकू कहता भया–रे अपवित्र हो–मेरे घरत निकसो । इत्यादि कुवचन सुन लक्ष्मण कोप भए । ता दुजनके पाव ऊचेकर नाडि नीचेकर भमाया, भूमिपर पछाडने लगा । तब श्रीराम परमदयालु ताहि मने किया, हे भाई ! यह कहा ? ऐसे दीनके मारबेकरि कहा ? याहि छोड देहु, याके मारनेत बडा अपयश ह । जिनशासनमें शूरवीरकू ऐसे न मारने–यति, ब्राह्मण, गाय, पशु, स्त्री, बालक, वृद्ध ये दोष सयुक्त होय तो भी हनने योग्य नाहीं । या भाति भाईकू समझाया, विप्र छुडाया अर आप लक्ष्मणकू आगेकरि सीतासहितकुटीतै निकसे । आप जानकी

से कहहै—हे प्रिये ! धिक्कार ह नीचकी सगतिकू , जिसकर क्रूरवचन सुनियेसो मनमें विकारका कारण ह, अत महापुरुषनिकरि त्याज्य ह। महाविषम वनमें वक्षनिके नीचे वास भला, न नीचनिके साथ । अर आहाराविक विना प्राण जावें तो भले, परन्तु दुजनके घर क्षण एक रहना योग्य नाहीं । नदिनिके तटविष पवतनिकी कवरानिविष रहेंगे । बहुरि ऐसे दुष्टके घर न आवेंगे । या भाति दुष्टके सगकू निदते ग्राम से निकसे । राम बनकू गय, वहा वर्षा समय आय प्राप्त भया । समस्त आकाशको श्याम करता हुवा अर अपनी गजना कर शब्दरूप करी ह पवतको गुफा जान, ग्रह नक्षत्र तारानि समूहको ढाककर शब्दसहित बिजुरीके उद्योतकर मानो अम्बर हसे ह । मेघ पटल ग्रीष्मके तापकू निवारकर पथिनिको बिजुरीरूप अगुरिनिकरि डरावता सता गाज ह । श्याम मेघ आकाशमें अधकार करता सता जलकी धाराकर मानो सीताकू स्नान कराव ह । जस गज लक्ष्मीकू स्नान कराव । ते दोऊ वीर वनमें एक बडा वटका वक्ष, ताके डाहला घरके समान, तहा विराजे । सो एक इभकण नामा यक्ष उस वटमें रहता हुता सो इनको महा तेजस्वी जानकर अपने स्वामीकू नमस्कारकर कहता भया—हे नाथ ! कोई स्वगत आए ह, मेरे स्थानकविष तिष्ठ ह । जिनने अपने तेजकर मोहि स्थानत दूर किया ह, वहा म जाय न सकू हू । तब यक्षके वचन सुनकर यक्षाधिपति अपने देवनिसहित बटका वक्ष जहा राम लक्ष्मण हुते तहा आया, महाविभवसयुक्त वनक्रीडाविष आसक्त, नूतन ह नाम जाका । दूरही त दोऊ भाइनिकू महा रूपवान देख अवधिकरि जानता भया—जो ये बलभद्र नारायण ह । तब वह इनके प्रभावकर अत्यन्त वात्सल्यरूप भया । क्षणमात्रमें महामनोग्य नगरी निरमापी तहा सुखसू सोते हुए प्रभात सुन्दर गीतोके शब्दनिकर जागे । रत्नजडित सेजपर आपकू देख्या अर मदिर महामनोहर, बहुत खण का, अति उज्ज्वल, अर सम्पूण सामग्राकर पूण । अर सेवक सुन्दर बहुत आदरके करनहारे । नगरमें रमणीक शब्द, कोट दरवाजेनिकर शोभायमान, ते पुरुषोत्तम महानुभाव, तिनका चित्त ऐसे नगरकू तत्काल देख आश्चयकू न प्राप्त भया । वह क्षुद्र पुरुषनिकी चेष्टा ह जो अपूव वस्तु देख आश्चयको

प्राप्त होय। समस्त वस्तु कर मडित वह नगर, तहा वे सुन्दर चेष्टाके धारक निवास करते भए, मानों य देव ही ह । यक्षाधिपतिने रामके अर्थ नगरी रची। तात पृथ्वीपर रामपुरी कहाई। ता नगरी विष सुभट मन्त्री द्वारपाल नगरके लोग अयोध्या समान होते भए। राजा श्रेणिक गौतमस्वामीको पूछ ह–हे प्रभो! ये तो देवकृत नगरविष विराजे अर ब्राह्मणकी कहा बात? सो कहो। तब गणधर बोले– वह ब्राह्मण अन्य दिन दाँतला हाथमें लेय वनमें गया, लकडी ढू ढते अकस्मात ऊँचे नेत्र किये। निकट ही सुन्दर नगर देखकर आश्चर्यकू प्राप्त भया। नानाप्रकारके रगकी ध्वजा, उन कर शोभित शरदके मेघ समान सुन्दर महिल देखे। अर एक राजमहिल महाउज्ज्वल, मानो कलाशका बालक ह सो ऐसा देखकर मनमें विचारता भया–जो यह अटवी मृगनित भरी जहा म लकडी लेने निरतर आवता हुता, सो यहा रत्नाचल समान सुन्दर मदिरनित सयुक्त नगरी कहासू बसी? सरोवर जलके भरे कमलनिकरि शोभित दीखे ह जो म अब तक कभी न देखे। उद्यान महामनोहर, जहा चतुर जन क्रीडा करते दीख ह, अर देवालय महाध्वजानिकर सयुक्त शोभ ह, अर हाथी, घोडे, गाय, भस तिनक समूह दृष्टि आव ह। घटादिकके शब्द होय रहे ह। यह नगरी स्वर्गत आई ह अथवा पातालत निसरी ह, कोऊ महाभाग्यके निमित्त। यह स्वप्न ह अक प्रत्यक्ष ह, अक देवमाया ह, अक गन्धर्वनिका नगर ह, अक म पित्तकर व्याकुल भया हू, याके निकटवर्ती जो म सो मेरे मृत्युका चिह्न दीख ह। ऐसा विचार कर विप्र विषादकू प्राप्त भया। सो एक स्त्री नानाप्रकारके आभरण पहरे देखी। ताक निकट जाय पूछता भया। हे भद्रे! यह कौनकी पुरी ह? तब वह कहती भई यह रामकी पुरी ह तूने कहा न सुनो? जहा राम राजा जाके लक्ष्मण भाई, सीता स्त्री। अर नगरके मध्य यह बडा मदिर ह शरद के मेघ समान उज्ज्वल, जहा वह पुरुषोत्तम विराजे ह, कसा ह पुरुषोत्तम? लोकविष दुर्लभ ह दर्शन जाका। सो ताने मनवाछित द्रव्यके दानकरि सब दरिद्री लोक राजानि समान किये। तब ब्राह्मण बोला–हे सुन्दरी! कौन उपाय कर याहि देखू सो तू कह। ऐसे काष्ठका भार डारकर हाथ जोड ताक

पायन परघा। तब वह सुमाया नामा यक्षिनी कृपाकर कहती भई, हे विप्र! या नगरीके तीन द्वार हैं, जहा देव हू प्रवेश न कर सक, बडे–बडे योधा रक्षक बठे हैं, रात्रिम जाग ह, जिनके मुख सिंह गज, व्याघ तुल्य ह, तिनकरि भयकू मनुष्य प्राप्त होय ह। यह पूव द्वार है जाके निकट बडे बडे भगवानके मदिर ह, मणिके तोरणकरि मनोग्य। तिनमें इन्द्र कर वदनीक ग्ररहतके बिंब विराजे हैं। ग्रर जहा भव्यजीव सामायिक ग्रादि स्तवन कर ह। ग्रर जो नमोकारमत्र भाव सहित पढे है सो माँहि प्रवेश कर सक ह। जो पुरुष ग्रणुव्रतका धारी गुणशीलकरि शोभित ह ताको राम परम प्रीतिकर वाछ ह। यह वचन यक्षिनीके ग्रमत समान सुनकर ब्राह्मण परम हषकू प्राप्त भया। धन ग्रागमन का उपाय पाय, यक्षनीकी बहुत स्तुति करी। रोमाच कर मडित भया ह सव ग्रग जाका। सो चारित्र–शूर नामा मनिके निकट जाय हाथ जोड नमस्कार कर श्रावकको क्रियाका भेद पूछता भया। तवि मुनिने श्रावकका धम याहि सुनाया चारो ग्रनुयोगका रहस्य बताया। सो ब्राह्मण धमका रहस्य जान मुनिकी स्तुति करता भया–हे नाथ! तिहारे उपदेशकरि मेरे ज्ञानदृष्टि भई, जैस तषावानकू शीतल जल, ग्रर ग्रीष्मके तापकर तप्तायमान पथीकू छाया, ग्रर क्षुधावानकू मिष्टान्न, ग्रर रोगीकू ग्रौषधि मिल, तस कुमागमें प्रतिपन्न जो म सो मोहि तिहारा उपदेश रसायन मिल्या, जस समुद्रविष डूबतेकू जहाज मिल। म यह जनका माग सव दु खनिका दूर करणहारा तिहारे प्रसादकरि पाया, जो ग्रविवेकीनिकू दुलभ ह। तीनलोकमें मेरे तुम समान कोऊ हित नाहीं जिनकर ऐसा जिनधम पाया। ऐसा कहकर मुनिके चरणारविंदकू नमस्कार कर ब्राह्मण ग्रपने घर गया। ग्रति हर्षित, फूल रहे है नेत्र जाके, स्त्रीसू कहता भया, हे प्रिये! मने ग्राज गुरुके निकट ग्रदभुत जिनधम सुन्या ह, जो तेरे बापने ग्रथवा मेरे बापने ग्रथवा पिताके पिताने भी न सुन्या। ग्रर हे ब्राह्मणी! मने एक ग्रदभुत वन देख्या तामें एक महामनोग्य नगरी देखी, जाहि दख ग्रचरज उपज, परन्तु मेरे गुरुके उपदेशकरि ग्रचरच नाहि उपज ह। तब ब्राह्मणी कही, हे विप्र! त कहा देख्या ग्रर कहा २ सुन्या मो कहहु। तब

पद्म पुराण ४४६

ब्राह्मण कही—हे प्रिये ! मैं हर्ष थकी कहने समर्थ नाही, तब बहुत आदर कर ब्राह्मणी बारम्बार पूछया । तब ब्राह्मण कही—हे प्रिये ! मैं काष्ठके अर्थ वनविषै गया हुता । सो वनविषै एक महा रमणीक रामपुरी देखी । ता नगरीके समीप उद्यानविषै एक नारी सुन्दर देखी । सो वह कोई देवता होयगी महा मिष्टवादिनी । मैंने पूछया या नगरी कौनकी है, तब वाने कही यह रामपुरी है, जहां राम श्रावकनिकूं मनवांछित धन देवे है । तब मैं मुनिपै जाय जिनवचन सुने सो मेरा आत्मा बहुत तृप्त भया, मिथ्यादृष्टि कर मेरा आत्मा आताप युक्त हुता सो आताप गया । जिनधर्मकूं पायकर मुनिराज मुक्तिके अभिलाषी सब परिग्रह तज महा तप करे । सो वह अरहंतका धर्म त्रैलोक्यविषै एक महानिधि मैं पाया । ये बहिर्मुख जीव वृथा क्लेश करे है । मुनि थकी जैसा जिनधर्मका स्वरूप सुन्या हुता तैसा ब्राह्मणीकूं कह्या । कैसा है जिनधर्मका स्वरूप ? उज्ज्वल है । अर कैसा है ब्राह्मण ? निर्मल है चित्त जाका । तब ब्राह्मणी सुनकर कहती भई मैं भी तिहारे प्रसादकरि जिनधर्मकी रुचि पाई । अर जैसे कोई विष फलका अर्थी महानिधि पावै, तैसे ही तुम काष्ठादिकके अर्थी धर्म इच्छाते रहित श्रीअरहंतका धर्म रसायन पाया, अबतक तुमने धर्म न जान्या । अपने आंगनविषै आए सत्पुरुष तिनका निरादर किया, उपवासादिकरि खेदखिन्न दिगम्बर तिनकूं कबहु आहार न दिया, इन्द्रादिक कर वंदनीक जे अरहंत देव तिनकूं तज कर ज्योतिषी व्यंतरादिककूं प्रणाम किया, जीवदयारूप जिनधर्म अमृत तज अज्ञानके योगते पापरूप विषका सेवन किया । मनुष्य देहरूप रत्नदीप पाय, साधुनिकरि परखा धर्मरूप रत्न तज, विषयरूप कांचका खंड अंगीकार किया । जे सर्वभक्षी दिवस रात्रि आहारी, अव्रती, कुशीली तिनकी सेवा करी । भोजनके समय अतिथि आवै अर जो निर्बुद्धि अपने विभवप्रमाण अन्नपानादि न दे ताके धर्म नाहीं । अतिथि पदका अर्थ—तिथि कहिये उत्सवके दिन तिनविषै उत्सव तज जाके तिथि कहिये विचार नाहीं, अर सर्वथा निस्पृह धनरहित साधु सो अतिथि कहिये, जिनके भाजन नाहीं, कर ही पात्र है वे निर्ग्रंथ आप तिरैं और निकूं तारैं अपने शरीरमें हू निस्पृह काहू वस्तुविषै जिनका लोभ नाहीं । ते निरपरिग्रही मुक्तिके कारण

जे दशलक्षण तिनकर शोभित है। या भांति ब्राह्मणने ब्राह्मणीकूं धर्मका स्वरूप कह्या। अर सुशर्मा नामा ब्राह्मणी मिथ्यात्वरहित होती भई। जैसे चन्द्रमाके रोहिणी शोभै, अर बुधके भरणी सोहै तैसे कपिलके सुशर्मा शोभती भई। ब्राह्मण ब्राह्मणीकूं वाही गुरुके निकट ले गया, जाके निकट आप व्रत लिये हुते। सो स्त्रीको हू श्रावकके व्रत दिवाये। कपिलकूं जिनधर्मविषै अनुरागी जान और हू अनेक ब्राह्मण समभाव धारते भए। मुनिसुव्रतनाथका मत पायकर अनेक सुबुद्धि श्रावक श्राविका भए। अर जे कर्मनिके भारकर संयुक्त, मानकर ऊंचा है मस्तक जिनका, वे प्रमादी जीव थोडे ही आयुविषै पापकर घोर नरकविषै जाय हैं। कईएक उत्तम ब्राह्मण सर्व संगका परित्यागकर मुनि भए। वैराग्यकर पूर्ण, मनविषै ऐसा विचार किया—यह जिनेन्द्रका मार्ग अबतक अन्य जन्ममें न पाया, महा निर्मल अब पाया, ध्यानरूप अग्निविषै कर्मरूप सामग्री भाव घृतसहित होम करेंगे। सो जिनके परम वैराग्य उदय भया ते मुनि ही भए। अर कपिल ब्राह्मण महा क्रियावान श्रावक भया। एक दिवस ब्राह्मणीकूं धर्मकी अभिलाषिनी जान कहता भया—हे प्रिये! श्रीरामके देखवेकूं रामपुरी क्यों न चालें? कैसे हैं राम? महापराक्रमी, निर्मल है चेष्टा जिनकी, अर कमल सरीखे हैं नेत्र जिनके, सब जीवनिके दयालु, भव्य जीवनिपर है वात्सल्य जिनका। जे प्राणी आशामें तत्पर, नित्य, उपायविषै है मन जिनका, दलिद्रीरूप समुद्रमें मग्न, उदर पूर्णविषै असमर्थ, तिनकूं दरिद्ररूप समुद्रतैं पार उतार परमसम्पदाकूं प्राप्त करै हैं। या भांति कीर्ति जिनकी पृथ्वीविषै फैल रही है, महाआनन्दकी करणहारी, तातैं हे प्रिय! उठ, भेंट लेकर चालें। अर मैं सुकुमार बालककूं कांधे लूंगा। ऐसे ब्राह्मणीकूं कह तैसे ही कर, दोऊ हर्षके भरे उज्ज्वल भेषकर शोभित रामपुरीकूं चाले। सो उनकूं मार्गविषै भयानक नागकुमार दृष्टि आए, बहुरि विंतर विकराल वदन हाडहडास करते दृष्टि आए। इत्यादि भयानक रूप देख ये दोऊ निकम्प हृदय होयकर या भांति भगवानकी स्तुति करते भए, श्रीजिनेश्वर ताईं निरन्तर मन वचन कायकर नमस्कार होहु। कैसे हैं जिनेश्वर? त्रैलोक्यकर वंदनीक हैं, संसार

कीचसे पार उतार ह, परम कल्याणके देनहारे ह । यह स्तुति पढते ये दोऊ चले जावै ह । इनकू जिन भक्त जान यक्ष शात होय गए । ये दोऊ जिनालयमें गए, नमस्कार होहु—जिनमदिरकू ऐसा कह दोऊ हाथ जोड अर चत्यालयकी प्रदक्षिणा दई, अर माहीं जाय स्तोत्र पढते भए—हे नाथ ! महाकुगतिका दाता मिथ्यामाग ताहि तजकर बहुत दिनमें तिहारा शरण गहा । चौबीस तीथकर अतीत कालके अर चौबीस वतमान कालके अर चौबीस अनागत कालके तिनकू म वदू ह । अर पचभरत, पच ऐरावत, पचविदेह ये पद्रह कमभूमि तिनविषै जे तीर्थंकर भए, अर वर्ते ह, अर अब होवेंगे, तिन सब निकू हमारा नमस्कार होहु । जो ससार समुद्रसू तिर अर औरनकू तार ऐसे श्रीमुनिसुव्रतनाथके ताई नमस्कार होहु । तीन लोकम जिनका यश प्रकाश कर ह । या भाति स्तुतिकर अष्टाग दण्डवतकरि ब्राह्मण स्त्रीसहित श्रीरामके अवलोकनकू गए । मागमें बडे बडे मदिर महाउद्योतरूप ब्राह्मणीकू दिखाए अर कहता भया—ये कुदके पुष्प समान उज्ज्वल सव कामना पूण नगरीके मध्य रामके मदिर ह, जिनकरि यह नगरी स्वगसमान शोभ ह । या भाति वार्ता करता ब्राह्मण राजमदिरविषै गया । सो दूर हीत लक्ष्मणकू देख व्याकुलताकू प्राप्त भया । चित्तमें चितारे ह—वह श्याम सुन्दर नीलकमल समान प्रभा जाकी, म अज्ञानी दुष्ट वचननि करि दुखाया सो मोहि त्रास दीनी । पापिनी जिह्वा, महादुष्टिनी काननकू कटुक वचन भाखे, अब कहा करू ? कहा जाऊ ? पथ्वीके छिद्रमें बठू , अब मोहि शरण कौन का ? जो म यह जानता अक ये यहा ही नगरी बसाए रहे ह तो मैं देश त्यागकर उत्तर दिशाकू चला जाता । या भाति विकल्परूप होय ब्राह्मणीकू तज ब्राह्मण भागा । सो लक्ष्मणने देख्या । तब हसकर रामकू कहा—वह ब्राह्मण आया ह, अर मगकी नाई व्याकुल होय मोहि देख भाग ह । तब राम बोले याकू विश्वास उपजाय शीघ लावो । तब सेवकजन दौडे, दिलासा देय लाए डिगता अर कापता आया । निकट आय भय तज, दोऊ भाइनके आगे भेट मेल 'स्वस्ति' ऐसा शब्द कहता भया, अर अति स्तवन पढता भया । तब राम बोले—हे द्विज ! त हमकू अपमानकर अपने घरत काढे हुते । अब

काहे पूज ह । तब विप्र बोला–हे देव ! तुम प्रच्छन्न महेश्वर हो, म, अज्ञानत न जाने, तात अनादर किया । जसैं भस्मत दबी अग्नि जानी न जाय । हे जगन्नाथ ! या लोकको यही रीति है, धनवानकू पूजिये ह । सूय शीतऋतुमें ताप रहित होय ह सो तासे कोई नाहीं सक ह । अब मैं जाना तुम पुरुषो त्तम हो । हे पदमलोचन ! ये लोक द्रव्यकू पूज हैं, पुरुषको नाही पूज ह । जो अथकर युक्त होय ताहि लौकिकजन मान ह । अर परम सज्जन ह अर धनरहित ह तो ताहि निष्प्रयोजन जन जान न मान ह । तब राम बोले–हे विप्र ! जाके अथ ताके मित्र, जाके अथ ताके भाई, जाके अथ सोई पडित, अथ विना न मित्र न सहोदर, जो अथकर सयुक्त ह, ताके परजन हू निज होय जाय ह । अर धन वही जो धर्मकरयुक्त । अर धर्म वही जो दयाकरयुक्त । अर दया वही जहा मास भोजनका त्याग । जब सब जीवनिका मास तजा, तब अभक्ष्यका त्याग कहिए, ताके और त्याग सहज ही होय । मासके त्याग विना और त्याग शोभ नाहीं । ये वचन रामके सुन विप्र प्रसन्न भया अर कहता भया–हे देव ! जो तुम सारिखे पुरुषनिकू महापुरुष पूजिए ह तिनका भी मूढ लोक अनादर कर ह । आगे सनत्कुमार चक्रवर्ती भए । बडी ऋद्धिके धारी महारूपवान जिनका रूप देव देखने आए । सो मुनि होयकर आहार कू ग्रामादिकविष गए । महा आचार प्रवीण सो निरतराय भिक्षाकू न प्राप्त होते भए । एक दिवस विजयपुर नाम नगरविष एक निधन मनुष्यक आहार लिया, याके पच आश्चय भए । हे प्रभो ! मैं मदभाग्य तुम सारिखे पुरुषनिका आदर न किया सो अब मेरा मन पश्चातापरूप अग्नि कर तप ह । तुम महारूपवान, तुमकू दख महाक्रोधीका क्रोध जाता रह, अर आश्चयकू प्राप्त होय । ऐसा कह कर सोचकर गहस्थ कपिल रुदन करता भया । तदि श्रीरामने शुभवचनकरि सतोष्या अर सुशर्मा ब्राह्मणीकू जानकी सतोषती भई । बहुरि राघवकी आज्ञा पाय स्वणके कलशनिकरि सेवकनिने द्विजकू स्त्रीसहित स्नान कराया अर आदरसो भोजन कराया । नानाप्रकारके वस्त्र अर रत्ननिके आभूषण दिए, बहुत धन दिया । सो लेयकर अपने घर आया । मनुष्यनिकू विस्मयका करणहारा धन याके

भया। यद्यपि याके घरविषै सब उपकार सामग्री अपूर्व है तथापि या प्रवीणका परिणाम विरक्त, घर विषै आसक्त नाहीं। मनविषै विचारता भया—आगे काष्ठके भारका वहनहारा दरिद्री हुता, सो श्री रामदेवने तृप्त किया। याही ग्रामविषै मैं सोषित शरीर अभूषित हुता सो रामने कुवेर समान किया। चिंता दुखरहित किया। मेरा घर जीर्ण तृणका, जाके अनेक छिद्रकादि, अशुचि पक्षिनिकी बीटकर लिप्त, अब रामके प्रसादकरि अनेक स्वर्णके महिल भए। बहुत गोधन, बहुत धन, काहू वस्तुकी कमी नाहीं। हाय २ मैं दुर्बुद्धि कहा किया ? वे दोऊ भाई, चन्द्रमा समान वदन जिनके, कमलनेत्र मेरे घर आए हुते, ग्रीष्मके आतापकरि तप्तायमान सीता सहित, सो मैंने घरतें निकासे। या बातकी मेरे हृदयविषै महाशल्य है। जो लग घरविषै बसूं हूं तौ लग खेद मिटै नाहीं। तातें गृहारम्भका परित्यागकर जिनदीक्षा आदरूं। जब यह विचारी, तब याकूं वैराग्यरूप जान समस्त कुटुम्बके लोक अर सुशर्मा ब्राह्मणी रुदन करते भए। तब कपिल सबकूं शोकसागरविषै मग्न देख निर्ममत्वबुद्धिकरि कहता भया। कैसा है कपिल ? शिवसुखविषै है अभिलाषा जाकी, हो प्राणी हो ! परिवारके स्नेहकरि अर नानाप्रकारके मनोरथनिकरि यह मूढ जीव भवातापकर जरै है, तुम कहा नाहीं जानौ हो ? ऐसा कह महा विरक्त होय, दुखकर मूर्छित जो स्त्री ताहि तज, अर सब कुटुम्बकूं तज, अठारह हजार गाय, अर रत्ननिकर पूर्ण घर, अर घरके बालक स्त्रीकूं सौंप आप सर्वारम्भ तज दिगम्बर भया। स्वामी अनंतमतिका शिष्य भया—कैसे हैं अनंतमति ? जगतविषै प्रसिद्ध तपोनिधि, गुण शीलके सागर। यह कपिल मुनि गुरुकी आज्ञा प्रमाण महातप करता भया। सुन्दर चरित्रका भार धर परमार्थविषै लीन है मन जाका, वैराग्य विभूतिकर अर साधुपदकी शोभाकर मंडित है शरीर जाका। सो जो विवेकी यह कपिलकी कथा पढै सुनै ताहि अनेक उपवासनिका फल होय, सूर्य समान ताकी प्रभा होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै देवनिकर नगरका बसावन कपिल ब्राह्मणका वैराग्य वर्णन करनेवाला पैंतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३५ ॥

अथानन्तर वर्षाऋतु पूर्ण भई । कैसी है वर्षाऋतु ? श्याम घटाकरि महा अंधकाररूप, जहां मेघ जल असराल बरसै, अर बिजुरिनिके चमत्कारकर भयानक । वर्षाऋतु व्यतीत भई, शरदऋतु प्रकट भई, दशो दिशा उज्ज्वल भई तब वह यक्षाधिपति श्रीरामसूं कहता भया—कैसे हैं श्रीराम ? चलवेका है मन जिनका । यक्ष कहै है—हे देव ! हमारी सेवामें जो चूक होय सो क्षमा करो । तुम सारिखे पुरुषनिकी सेवा करवेकूं कौन समर्थ है ? तब राम कहते भए—हे यक्षाधिपते ! तुम सब बातोंके योग्य हो, अर तुम पराधीन होय हमारी सेवा करी सो क्षमा करियो । तब इनके उत्तम भाव विलोक अति हर्षित भया, नमस्कारकर स्वयप्रभ नामा हार श्रीरामको भेंट किया, महा अद्भुत । अर लक्ष्मणकूं मणिकुंडल चांद सूर्य सारिखे भेंट किए । अर सीताकूं सकल्याण नामा चूडामणि महा देदीप्यमान दिया, अर महामनोहर मनवांछित नादकी करनहारी देवोपुनीत वीणा दई । ते अपनी इच्छातें चाले । तब यक्षराज पुरी संकोच लई अर इनके जायवेका बहुत शोक किया । अर श्रीरामचन्द्र यक्षकी सेवाकर अति प्रसन्न होय आगे चले । देवोंकी न्याई रमते, नानाप्रकारकी कथाविषै आसक्त, नानाप्रकारके फलनिके रसके भोक्ता पृथ्वीपर अपनी इच्छासूं चलते भ्रमते, मृगराज तथा गजराजनिकर भरचा जो महाभयानक वन ताहि उलंघकर विजयपुर नामा नगर आये । ता समय सूर्य अस्त भया । अंधकार फैल्या, आकाशविषै नक्षत्रनिके समूह प्रकट भए, नगरतैं उत्तर दिशाकी तरफ न अति निकट न अतिदूर कायरलोगनिकूं भयानक जो उद्यान वहां विराजे ।

अथानन्तर नगरका राजा पृथ्वीधर, जाके इन्द्राणी नामा राणी, स्त्रीके गुणनिकरि मंडित, ताके वनमाला नामा पुत्री महासुन्दर, सो बाल अवस्थाहीतैं लक्ष्मणके गुण सुन अति आसक्त भई । बहुरि सुनी दशरथने दीक्षा धरी, अर केकईके वचनतैं भरतकूं राज्य दिया, राम लक्ष्मण परदेश निकसे हैं । ऐसा विचार याके पिताने कन्याको इन्द्र नगरका राजा ताका पुत्र जो बालमित्र महासुन्दर ताहि देनी विचारी । सो यह वृत्तांत वनमाला सुना । हृदयविषै विराजै है लक्ष्मण जाके । तब मनविषै विचारी

कठफासी लय मरण भला परन्तु अन्य पुरुषका सम्बन्ध शुभ नाही। यह विचार सूर्यसू सभाषण करती भई। हे भानो ! अस्त होय जावो, शीघ्र ही रात्रिकू पठावहु, अब दिनका एकक्षण मोहि वर्ष समान बीत है। सो मानो याके चितवनकर सूर्य अस्त भया। कन्याका उपवास है, सध्या समय माता पिता की आज्ञा लेय श्रेष्ठरथविषै चढ वनयात्राका बहानाकर रात्रिविषै तहा आई जहा राम लक्ष्मण तिष्ठे हुते। सो यान आनकर ताही वनविषै जागरण किया। जब सकललोक सोयगए तब यह मद मद पर धरती बनकी मृगी समान डेरात निकस वनविषै चाली। सो यह महासती पदमनी ताके शरीरकी सुगधताकरि वन सुगधित होयगया। तब लक्ष्मण विचारता भया यह कोई राजकुमारी महाश्रेष्ठ मानो ज्योतिकी मूर्ति ही है, सो महा शोकके भार कर पीडित है मन जाका, यह अपघात कर मरण वाछ है, सो मै याकी चेष्टा छिपकर देखू। ऐसा विचारकर छिपकर वटके वृक्ष तले बैठ्या, मानो कौतुकयुक्त देव कल्पवृक्षके नीचे बैठे। ताही वटके तले हसनीकोसी है चाल जाकी, अर चन्द्रमा समान है वदन जाका, कोमल है अग जाका, ऐसी वनमाला आई। जलसू आला वस्त्रकर फासी बनाई, अर मनोहर वाणीकर कहती भई— अहो या वृक्षके निवासी देवता ! कृपाकर मेरी बात सुनहु। कदाचित वनविषै विचरता लक्ष्मण आवै तो तुम ताहि ऐसे कहियो—जो तिहारे विरहकरि महादुखित वनमाला तुमविषै चित्त लगाय, वटके वृक्ष विषै वस्त्रकी फासी लगाय, मरणकू प्राप्त भई, हम या देखी। अर तुमकू यह सदेशा कह्या है जो या भवविषै तिहारा सयोग मोहि न मिल्या, अब परभवविषै तुमही पति हूजियो। यह वचन कह वृक्ष की शाखासू फासी लगाय आप फासी लेने लगी। ताही समय लक्ष्मण कहता भया—हे मुग्धे ! मेरी भुजाकर आलिगन योग्य तेरा कठ ताविषै फासी काहेकू डारै है ? हे सुन्दरवदनी ! परमसुन्दरी ! मै लक्ष्मण हू। जैसा तेरे श्रवणविषै आया है तैसा देख। अर प्रतीत न आवै तो निश्चयकर लेहु। ऐसा कह ताके करसे फासी हर लीनी, जैसे कमलथकी झागोंके समूहकू दूर करे। तब वह लज्जाकरयुक्त प्रेमकी दृष्टिकर लक्ष्मणकू देख मोहित भई। कैसा है लक्ष्मण ? जगतके नेत्रनिका हरणहारा है रूप

जाका। परम आश्चर्यकू प्राप्त भई चित्तविषै चितवै है यह कोई मोपर देवनि उपकार किया, मेरी अवस्था देख दयाकू प्राप्त भए। जैसा मैं सुन्या हुता तैसा दैवयोगतै यह नाथ पाया, जाने मेरे प्राण बचाए। ऐसा चितवन करती वनमाला लक्ष्मणके मिलापतै अत्यन्त अनुरागकू प्राप्त भई।

अथानंतर महासुगंध कोमल साथरेपर श्रीरामचन्द्र पौढे हुते। सो जागकर लक्ष्मणकू न देख जानकीकू पूछते भए—हे देवी! यहां लक्ष्मण नाहीं दीखै है। रात्रिके समय मेरे सोवनेकू पुष्प पल्लवनिका कोमल साथरा बिछाय आप यहां ही तिष्ठता हुता सो अब नाहीं दीखै है। तब जानकी कही—हे नाथ! ऊंचा स्वरकर बुलाय लेहु। तब आप शब्द किया—हे भाई! हे लक्ष्मण! हे बालक! कहां गया? शीघ्र आवहु। तब भाई बोला—हे देव! आया। वनमालासहित बडे भाईके निकट आया। आधी रात्रि का समय चंद्रमाका उदय भया कुमुद फूले शीतल मंद सुगंध पवन बाजने लागी। ता समय वनमाला कोंपल समान कोमल कर जोड वस्त्रकर बढ्या है सब अंग जाका, लज्जाकर नम्रीभूत है मुख जाका, जाना है समस्त कर्तव्य जाने महाविनयकू धरती श्रीराम अर सीताके चरणारविंदकू बंदती भई। सीता लक्ष्मणकू कहती भई—हे कुमार! तैने चन्द्रमाकी तुल्यता करी। तब लक्ष्मण लज्जाकर नीचा होय गया। श्रीराम जानकीतै कहते भए तुम कैसे जानी? तब कही—हे देव! जा समय चन्द्रमाका उद्योत भया ताही समय कन्यासहित लक्ष्मण आया। तब श्रीराम सीताके वचन सुन प्रसन्न भए।

अथानंतर वनमाला महाशुभ शील इनकू देख, आश्चर्यकी भरी, प्रसन्न है मुख चन्द्रमा जाका, फूल रहे हैं नेत्रकमल जाके, सीताके समीप बैठी, अर ये दोऊ भाई देवनि समान महासुन्दर निद्रारहित सुखतै कथा वार्ता करते तिष्ठै हैं। अर वनमालाकी सखी जागकर देखै तो सेज सूनी, कन्या नाहीं। तब भयकर खेदित भई अर महाव्याकुल होय रुदन करती भई। ताके शब्दकर योधा जागे, आयुध लगाय तुरंग चढ दशो दिशाको दौडे अर पयादे दौडे। बरछी अर धनुष है हाथमें जिनके, दशोदिशा ढूंढी। राजाका भय अर प्रीतिकर संयुक्त है मन जाका, ऐसे दौडे मानो पवनके बालक हैं। तब कईएक या तरफ दौडे

आए। वनमालाकू वनविषै रामलक्ष्मणके समीप बैठी देख बहुत हर्षित होय जायकर राजा पृथ्वीधरकू बधाई दई अर कहते भए—हे देव! जिनके पावनेका बहुत यत्न करिये तो भी न मिलैं वे सहज ही आए है। हे प्रभो! तेरे नगरमें महानिधि आई, विना बादल आकाशतैं वृष्टि भई, क्षेत्रविषै विना बाहे धान ऊगा। तिहारा जमाई लक्ष्मण नगरके निकट तिष्ठै है, जानें वनमाला प्राण त्याग करती बचाई, अर राम तिहारे परमहितु सीतासहित विराजै है, जैसे शचीसहित इन्द्र विराजै। ये वचन राजा सेवकनिके सुनकर महाहर्षित होय क्षणएक मूर्छित होय गया। बहुरि परम आनन्दकू प्राप्त होय सेवकनिकू बहुत धन दिया अर मनविषै विचारता भया—मेरी पुत्रीका मनोरथ सिद्ध भया। जीवनिके धनकी प्राप्ति, अर इष्टका समागम और हू सुखके कारण पुण्यके योगकरि होय है। जो वस्तु सैकडो योजन दूर अर श्रवणमें न आवै सो हू पुण्याधिकारीके क्षणमात्रविषै प्राप्त होय है। अर जे प्राणी दुखके भोक्ता पुण्यहीन है तिनके हाथसे इष्टवस्तु विलाय जाय है। पर्वतके मस्तकपर तथा वनविषै सागरविषै पथविषै पुण्याधिकारिनके इष्ट वस्तुका समागम होय है। ऐसा मनविषै चितवनकर स्त्रीसू सब वृत्तांत कह्या। स्त्री बारम्बार पूछै है, यह जानै मानो स्वप्न ही है। बहुरि रामके अधर समान आरक्त सूर्यका उदय भया। तब राजा प्रेमका भर्या सब परिवारसहित हाथीपर चढकर परम कांतियुक्त रामसू मिलने चाल्या, अर वनमालाकी माता आठ पुत्रसहित पालकीपर चढकर चाली। सो राजा दूरहीतैं श्रीरामका स्थानक देखकर फूल गए है नेत्रकमल जाके, हाथीतैं उतर समीप आया। श्रीराम अर लक्ष्मणसू मिल्या। अर वाकी रानी सीताके पायन लागी अर कुशल पूछती भई, वीणा, बासुरी, मृदंगादिक शब्द होते भए, वंदीजन बिरद बखानते भए, बडा उत्सव भया। राजाने लोकनिकू बहुत दान दिया। नृत्य होता भया, दशोदिशा नादकर शब्दायमान होती भई। श्रीराम लक्ष्मणकू स्नान भोजन कराया। बहुरि घोडे, हाथी, रथ तिनपर चढे अनेकसामंत अर हिरण समान कूदते प्यादे तिन सहित रामलक्ष्मणने हाथीपर चढे सतै पुरविषै प्रवेश किया। राजाने नगर उछाया। महाचतुर मागध

विरद बखान है, मंगल शब्द कर है। राम लक्ष्मणने अमोलिक वस्त्र पहरे, हारकर विराज हैं वक्षस्थल जिनका, मलयागिरिके चंदनते लिप्त है अंग जिनका, नानाप्रकारके रत्ननिकी किरणनिकरि इन्द्रधनुष होय रह्या है। दोऊ भाई चांदसूर्य सारिखे, नाहीं वरणे जाय हैं गुण जिनके, सौधर्म ईशान सारिखे जानकीसहित लोकनिकू आश्चर्य उपजाते राजमन्दिर पधारे। श्रेष्ठ माला धरे, सुगन्धकर गुंजार कर हैं भ्रमर जापर, महा विनयवान चन्द्रवदन इनकू देख लोक मोहित भए। कुबेर कासा किया जो वह सुन्दर नगर वहां अपनी इच्छाकरि परमभोग भोगते भए। या भांति सुकृतमैं है चित्त जिनका, महा गहन वनविष प्राप्त भए हू परम विलासकू अनुभव है। सूर्य समान है कांति जिनकी, वे पापरूप तिमिरकू हर है, निज पदार्थके लोभत आनन्दरूप है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकीभाषा वचनिकाविषवनमालाका लाभ वर्णन करनेवाला छत्तीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३६ ॥

— —

अथानन्तर एक दिन श्रीराम सुखसे विराजे हुते अर पृथ्वीधर भी समीप बैठा हुता, ता समय एक पुरुष दूरका चाल्या महा खेदखिन्न आयकर नमीभूत होय पत्र देता भया। सो राजा पृथ्वीधरने पत्र लेयकर लेखककू सौंप्या। लेखकने खोलकर राजाके निकट बांच्या। तामें या भांति लिख्या हुता कि इन्द्र समान है उत्कृष्ट प्रभाव जाका, महालक्ष्मीवान, नमें हैं अनेक राजा जाकू, श्रीनन्द्यावर्त नगरका स्वामी, महा प्रबल पराक्रमका धारी, सुमेरुपर्वतसा अचल, प्रसिद्ध शस्त्र शास्त्रविद्याविषै प्रवीण, सब राजानिका राजा महाराजाधिराज, प्रतापकर वश किए हैं शत्रु अर मोहित करी है सकल पृथ्वी जान, उगते सूर्य समान महा बलवान, समस्त कर्तव्यविषै कुशल, महानीतिवान, गुणनिकर विराजमान, श्रीमान, पृथ्वीका नाथ महाराजेन्द्र अतिवीर्य, सो विजयनगरविषै पृथ्वीधरकू क्षेमपूर्वक आज्ञा करै है— कि जे कई पृथ्वीपर सामंत हैं, वे भण्डारसहित, अर सब सेनासहित मेरे निकट प्रवरते हैं। आर्य खंड

के अर म्लेच्छ खडके चतुरग सेनासहित नानाप्रकारके शस्त्रनिके धरणहारे मेरी आज्ञाकू शिरपर धारे है। अञ्जनिगिरि सारिखे आठसो हाथी, अर पवनके पुत्रसम तीनहजार तुरग, अनेक पयादे, तिनसहित महापराक्रमका धारी महातेजस्वी, मेरे गुणनिसे खींचा ह मन जाका, ऐसा राजा विजयशार्दू ल आया है। अर अग देशके राजा मृगध्वज, रणोर्मि कलभकेशरी यह प्रत्येक पाच पाच हजार तुरग अर छह सौ छहसौ हाथी अर रथ पयादे तिनसहित आए ह, महा उत्साहके धारी, महा न्यायविषै प्रवीण ह बुद्धि जिनकी। अर पाचालदेशका राजा पौढ परम प्रतापकू धरता, न्यायशास्त्रविषै प्रवीण, अनेक प्रचड बलकू उत्साहरूप करता हजार हाथी अर सातहजार तुरगनित अर रथ पयादनिकरि युक्त हमारे आया ह। अर मगधदेशका राजा सुकेश बडी सेनासू आया ह। अनेक राजानिसहित जसै सकर्डनि नदीनिके प्रवाहकू लिए रेवाका प्रवाह समुद्रविषै आव, तस ताके सग कालीघटा समान आठ हजार हाथी, अनेक रथ अर तुरगनिके समूह ह, अर वजका आयुध धार ह। अर म्लेच्छनिके अधिपति समुद्र, मुनिभद्र, साधुभद्र, नन्दन इत्यादि राजा मेरे समीप आए ह। वज्रधर समान, अर नाहीं निवारघा जाय पराक्रम जका, ऐसा राजा सिहवीर्य आया ह। अर राजा वग अर सिहरथ ये दोऊ हमारे मामा महा बलवान बडी सेनासू आए ह। अर वत्सदेशका स्वामी मारुदत्त अनेक पयादे, अनेक रथ, अनेक हाथी, अनेक घोडानिकर युक्त आया ह। अर राजा प्रौष्ठल सौवीर सुमेरु सारिखे अचल प्रबल सेनात आए ह। ये राजा महापराक्रमी पृथ्वीपर प्रसिद्ध देवनि सारिखे दस अक्षोहिणी दल सहित आए ह। तिन राजानि सहित म बडे कटकत अयोध्याके राजा भरत पर चढा हू, सो तेरे आयवेकी बाट देखू हू। तात आज्ञापत्र पहुँचते प्रमाण पयानकर शीघ्र आइयो, किसी कार्यकर विलम्ब न करियो। जस किसान वर्षाकू चाहै तस म तेरे आगमनकू चाहू हू। या भाति पत्रके समाचार लेखकने बाचे तब पृथ्वीधर ने कछू कहनेका उद्यम किया। तासू पहले लक्ष्मण बोले अरे दूत! भरतके अर अतिवीर्यके विरोध कौन कारणत भया? तब वह वायुगत नाम दूत कहता भया—म सब बातोका मरमी ह, सब चरित्र

जानू हू । तब लक्ष्मण बोले हमारे सुनवेकी इच्छा है । तान कही आपको सुननेकी इच्छा है तो सुनो । एक श्रुतिके नामा दूत हमारे राजा अतिवीयने भरतपर भज्या सो जायकर कहता भया । इन्द्र तुल्य राजा अतिवीयका मैं दूत हू, प्रणाम कर है समस्त नरेन्द्र जाकू न्यायके थापनेविषै महा बुद्धिमान, सो पुरुषनिविषै सिंह समान, जाके भयतै अरिरूप मृग निद्रा नाहीं कर है। ताके यह पृथ्वी वनिता समान है । कैसी है पृथ्वी ? चार तरफके समुद्र सोई हैं कटिमेखला जाके, जैसे परणी स्त्री आज्ञाविषै होय तैसे समस्त पृथ्वी आज्ञाके वश है । सो पृथ्वीपति महा प्रबल मेरे मुख होय तमकू आज्ञा कर है कि—हे भरत ! शीघ्र आयकर मेरी सेवा करहु अथवा अयोध्या तज समुद्रके पार जावो । ये वचन सुन शत्रुघन महा क्रोधरूप दावानल समान प्रज्वलित होय कहता भया । अरे दूत ! तोहि ऐसे वचन कहने उचित नाही । वह भरतको सेवा करै अर भरत ताकी सेवा करै । अर भरत अयोध्याका भार मन्त्रिनिकू सौंप पृथ्वीके वश करनेके निमित्त समुद्रके पार जाय अक और भांति जाय । अर तेरा स्वामी ऐसे गर्वके वचन कहै है सो गर्दभ माते हाथीकी न्याई गाजे है, अथवा ताकी मृत्यु निकट है तातै ऐसे वचन कहै है, अथवा वायुके वश है । राजा दशरथकू वैराग्यके योगतै तपोवनको गए जान वह दुष्ट ऐसी बात कहै है। सो यद्यपि तातकी क्रोधरूप अग्नि मुक्तिकी अभिलाषाकर शांत भई तथापि पिताकी अग्निसे हम स्फुलिंग समान निकसे है, सो अतिवीर्यरूपकाष्ठकू भस्म करने समर्थ है । हाथीनिके रुधिररूप कीच कर लाल भए है केश जाके ऐसा जो सिंह सो शांत भया तो ताका बालक हाथिनिके निपात करने समर्थ है । ये वचन कह शत्रुघन बलता जो बासोका वन ता समान तडतडात कर महाक्रोधायमान भया । अर सेवकनिकू आज्ञा करी जो या दूतका अपमान कर काढ देवहु । तब आज्ञा प्रमाण सेवकनिनें अपराधीकू स्वानकी न्याई तिरस्कारकर काढ दिया । सो पुकारता नगरीके बाहिर गया । धूलकरि धूसरा है अंग जाका दुर्वचनकरि दग्ध, अपने धनी पै जाय पुकारया, अर राजा भरत समुद्र समान गम्भीर परमार्थका जाननहारा अपूर्व दुर्वचन सुन कछूएक कोपकू प्राप्त भया । भरत शत्रुघन दोऊ भाई नगरतै सेनासहित शत्रु

पर निकसे। अर मिथिला नगरीका धनी राजा जनक अपने भाई कनक सहित बडी सेनासूं आय भेला भया। अर सिंहोदरकूं आदि दे अनेक राजा भरतसूं आय मिले। भरत बडी सेना सहित नन्द्यावर्त पुरके धनी अतिवीर्यपर चढ्या। पिता समान प्रजाकी रक्षा करता संता, कैसा है भरत ? न्याय विषै प्रवीण है। अर राजा अतिवीर्य भी दूतके वचन सुन परम क्रोधकूं प्राप्त भया। क्षोभकूं प्राप्त भया जो समुद्र ता समान भयानक सब सामंतनिकरि मंडित भरतके ऊपर जाइवेकूं उद्यमी भया है।

यह समाचार सुन श्रीरामचन्द्र अपना ललाट दूजके चन्द्रमा समान वक्रकर पृथ्वीधरसूं कहते भए। जो अतिवीर्यकूं भरतसे ऐसा करना उचित ही है क्योंकि जाने पिता समान बडे भाईका अनादर किया। तदि राजा पृथ्वीधरने रामसूं कही, वह दुष्ट है हम प्रबल जान सेवा करै है। तब मंत्रकर अतिवीर्यकूं जुवाब लिख्या कि मैं कागदके पीछे ही आऊं हूं अर दूतकूं विदा किया। बहुरि श्रीरामसूं कहता भया अतिवीर्य महाप्रचण्ड है तातैं मैं जाऊं हूं। तब श्रीरामने कही तुम तो यहां ही रहो अर मैं तिहारे पुत्रकूं अर तिहारे जवाई लक्ष्मणकूं ले अतिवीर्यके समीप जावूंगा। ऐसा कहकर रथपर चढ बडी सेना सहित पृथ्वीधरके पुत्रकूं लार लेय सीता अर लक्ष्मण सहित नन्द्यावर्त नगरीकूं चाले। सो शीघ्र गमनकर नगरके निकट जाय पहुंचे। वहां पृथ्वीधरके पुत्रसहित स्नान भोजनकर राम लक्ष्मण सीता ये तीनों मंत्र करते भए। जानकी श्रीरामसूं कहती भई-हे नाथ! यद्यपि मेरे कहिवेका अधिकार नाहीं, जैसे सूर्यके प्रकाश होते नक्षत्रनिका उद्योत नाहीं, तथापि हे देव! हितकी वांछाकर मैं कछूएक कहूं हूं। जैसे बांसनितैं मोती लेना तैसे हम सारिखनितैं हितकी बात लेनी, काहू एक बांसके बीडविषै मोती निपजै है-हे नाथ! यह अतिवीर्य महासेनाका स्वामी, क्रूरकर्मी भरतकर कैसे जीत्या जाय। तातैं याके जीतवेका उपाय करहु। तुमसे अर लक्ष्मणतैं कोई कार्य असाध्य नाहीं, तब लक्ष्मण बोले-हे देवी! यह कहा कहो हो ? आज अथवा प्रभात या अतिवीर्यकूं मेरे कर हता ही जानहु। श्रीरामके चरणारविंदकी जो रजकर पवित्र है सिर मेरा, मेरे आगे देव भी टिक नाहीं सकैं, मनुष्य क्षुद्र अति

वीयकी तो कहा बात ? जबतक सूर्य अस्त न होय तात पहिले ही या क्षुद्रवीयकूं मूवा ही देखियो। यह लक्ष्मणके वचन सुन पृथ्वीधरका पुत्र गर्जना कर ऐसे कहता भया। तबि श्रीराम भौंह फेर ताहि मनकर लक्ष्मणसे कहते भए। महा धीरवीर ह मन जाका—हे भाई! जानकी कही सो युक्त ह। यह अतिवीय बलकर उद्धत ह, रणविषै भरतके वश करनेका पात्र नाहीं, भरत याके दसवें भाग भी नाहीं। यह दावानल समान, याका वह मतंग गज कहा कर ? यह हाथिनिकर पूर्ण, रथ पयादनिकर पूर्ण, यामूं जीतवे समर्थ भरत नाहीं। जसे केशरीसिंह महाप्रबल ह परन्तु विंध्याचल पर्वतके ढाहिवे समर्थ नाहीं, तसे भरत याकूं जीत नाही, सेनाका प्रलय होवेगा। जहां निःकारण संग्राम होय वहां दोनों पक्षनिके मनुष्यनिका क्षय होय। अर यदि इस दुरात्मा अतिवीयने भरतकूं वश किया, तब रघुवंशिन के कष्टका कहा कहना ? अर इनविषै संधि भी सूझ नाहीं। शत्रुघन अति मानी बालक सो उद्धत वरीसूं दोष किया, यह न्यायविषै उचित नाही। अंधेरी रात्रिविषै रौद्रभूत सहित शत्रुघनने दूरके दौरा जाय अतिवीयके कटकविषै धाडा दिया। अनेक योधा मारे, बहुत हाथी घोडे काम आए। अर पवन सारिखे तेजस्वी हजारों तुरंग अर सातस अंजनगिरि समान हाथी लेगया। सो तूने कहा लोग निके मुखतें न सुनी ? यह समाचार अतिवीय सुन महाक्रोधकूं प्राप्त थया। अर अब महा सावधान ह रणका अभिलाषी ह। अर भरत महामानी ह सो यासूं युद्ध छोड संधि न कर। तात तू अति वीयकूं वशकर, तरी शक्ति सूर्यकूं तिरस्कार कहवे समर्थ ह। अर यहांतें भरतहू निकट ह सो हमकूं आपा न प्रकाशना। जे मित्रकूं न जनाव अर उपकार कर ते पुरुष अद्भुत प्रशंसा करने योग्य ह, जसे रात्रिका मेघ। या भांति मंत्रकरि रामकूं अतिवीयके पकडबेकी बुद्धि उपजी।

रात्रितो प्रमाद रहित होय समीचीन लोगनित कथाकर पूर्ण करी, सुखसो निशा व्यतीत भई। प्रात समय दोऊ वीर उठकर प्रात-क्रियाकर एक जिनमंदिर देख्या सो ताविषै प्रवेशकर जिनेन्द्रका दर्शन किया। तहां आर्यिकानिका समूह विराजता हुता तिनकी वंदना करी। अर आर्यिकानिकी जो गुरानी

वरधर्मा महा शास्त्रको वेत्ता सीताकू याके समीप राखी, आप भगवानकी पूजाकर लक्ष्मण सहित नृत्यकारिणी स्त्रीका भेष कर लीलासहित राजमन्दिरकी तरफ चाले। इन्द्रकी अप्सरा तुल्य नृत्यकारिणीकू देख नगरके लोग आश्चर्यकू प्राप्त भए, लार लागे। ये महा आभूषण पहिरे सब लोकके मन अर नेत्र हरते राजद्वार गए। चोवीसौं तीर्थकरनिके गुण गाए, पुराणोके रहस्य बताए। प्रफुल्लित है नेत्र जिनके, इनकी ध्वनि राजा सुन इनके गुणनिका खचा समीप आया जैसे रस्सीका खचा जलकेविषै काष्ठका भार आवै। नृत्यकारिणीने नृपके समीप नृत्य किया। रेचक कहिए भ्रमण, अग मोडना, मुलकना, अवलोकना, भौंहनिका फेरना, मंद मंद हँसना, जघा बहुरि करपल्लव तिनका हलावना, पृथ्वीकू स्पर्शि शीघ्र ही पगनिका उठावना, रागका बढ करना, केशरूप फांसका प्रवर्तना, इत्यादि चेष्टारूप कामबाणनिकर सकललोकनिकू बींधे। स्वरनिके ग्राम यथास्थान जोडवेकरि अर वीणाके बजायवेकर सबनिकू मोहित किए। जहा नृत्यकी खडी रहै वहा सकल भावके नेत्र चले जाय, रूपकर सबनिके नेत्र, स्वरकर सबनिके श्रवण, गणकर सबनिके मन बाध लिए। गौतम स्वामी कहै है—हे श्रेणिक ! जहा श्रीराम लक्ष्मण नृत्य कर, अर गाव बजाव तहा देवनिके मन हरे जाय तो मनुष्यनिकी कहा बात ? श्रीऋषभादि चतुर्विशति तीर्थंकरनिके यश गाय सकल सभा वश करी, राजाकू सगीतकरि मोहित देख शृगाररससे वीररसमें आए। आख फेर भौहें फेर महा प्रबल तेजरूप होय अतिवीयकू कहते भए—हे अतिवीय ! तै यह कहा दुष्टता आरम्भी ? तोहि यह मत्र कौनने दिया, तै अपने नाशके निमित्त भरतसो विरोध उपजाया। जिया चाहै तो महाविनयकर तिनकू प्रसन्नकर, दास होय तिनके निकट जावहु। तेरी राणी बडे वश की उपजी, कामक्रीडाकी भूमि विधवा न होय, तोहि मृत्युकू प्राप्त भए सब आभूषण डार शोभा रहित होयगी। जैसे चन्द्रमा बिना रात्रि शोभारहित होय। तेरा चित्त अशुभविषै आया है सो चित्तकू फेर भरतकू नमस्कार कर। हे नीच ! या भाति न करेगा तो अबार ही मारा जायगा। राजा अरण्य के पोता अर दशरथके पुत्र तिनके जीवते तू कैसे अयोध्याका राज्य चाहै है। जैसे सूर्यके प्रकाश होते

चद्रमाका प्रकाश कैसे होय ? जैसे पतग दीपविषै पड मूवा चाहे है तैसे तू मरण चाहे है। राजा भरत गरुड समान महाबली तिनके तू सर्पसमान निबल बराबरी करे है। यह वचन भरतकी प्रशसाके अर अपनी निंदाके नृत्यकारणीके मुखते सुन सकल सभा सहित अतिवीर्य क्रोधकू प्राप्त भया, लाल नेत्र किए। जैसे समुद्रकी लहर उठे है तैसे सामत उठे अर राजाने खडग हाथमे लिया। ता समय नृत्यकारणीने उछल हाथसो खडग खोस लिया अर सिरके केश पकड बाध लिया। अर नृत्यकारणी अतिवीर्यके पक्षी राजा तिनसो कहती भई—जीवनेकी बाछा राखो तो अतिवीर्यका पक्ष छोड भरतपै जाहु भरत की सेवा करहु। तब लोकनिके मुखते ऐसी ध्वनि निकसी—महा शोभायमान गुणवान भरत भूप जयवत होऊ। सूर्य समान है तेज जाका न्यायरूप किरणनिके मडलकर शोभित, दशरथके वशरूप आकाश विषै चन्द्रमा समान लोकक् आनन्दकारी जाका उदय थकी लक्ष्मीरूपी कुमुदनी विकासकू प्राप्त होय। शत्रुनिके आतापते रहित परम आश्चर्यकू धरती सती अहो यह बडा आश्चर्य जाकी नृत्यकारणीकी यह चेष्टा जो ऐसे नृपतिकू पकड लेय तो भरतकी शक्तिका कहा कहना ? इन्द्रहुकू जीते। हम या अतिवीर्यसो आय मिले, सो भरत महाराज कोप भए होयगे न जानिये कहा करेगे। अथवा वे दयावत पुरुष है जाय मिले पायन परे, कृपा ही करेगे। ऐसा विचारि अतिवीर्यके मित्र राजा कहते भए। अर श्रीराम अतिवीर्यकू पकड हाथीपर चढि जिनमदिर गए। हाथीसू उतर जिनमदिरविषै जाय भगवानकी पूजा करी, अर बरधर्मा आर्यिकाकी बदना करी, बहुत स्तुति करी।

रामने अतिवीर्य लक्ष्मणकू सौप्या लक्ष्मणने केश गहे दृढ बाध्या। तब सीता कही याहि ढीला करहु, पीडा मत देवहु शातता भजहु। कर्मके उदयकरि मनुष्य मतिहीन होय जाय है। आपदा मनुष्यनिमैही होय, बडे पुरुषनिकू सर्वथा परकी रक्षा ही करना, सत्पुरुषनिकू सामान्य पुरुषका हू अनादर न करना, यह तो सहस्रराजानिका शिरोमणि है। तात याहि छोड देवहु। तुम यह वश किया, अब कृपा ही करना योग्य है। राजानिका यही धर्म है जो प्रबल शत्रुनिकू पकड छोड दे। यह अनादि कालकी मर्यादा है। जब

या भाति सीता कही तब लक्ष्मण हाथ जोड प्रणामकर कहता भया—हे देवी ! तिहारी आज्ञासे छोडवेकी कहा बात ? एसा करू जो देव याकी सेवा करे। लक्ष्मणका क्रोध शात भया। तब अतिवीय प्रतिबोधकू पाय श्रीरामसू कहता भया—हे देव ! तुम बहुत भला किया। ऐसी निमल बुद्धि मेरी अबतक कबहू न भई हुती सो तिहारे प्रतापत भई। तब श्रीराम ताहि हार मुकुटादिरहित देख विश्रामके वचन कहते भए। कसे ह रघुवीर ? सौम्य ह आकार जिनका, हे मित्र ! दीनता तज, जैसा प्राचीन अवस्था में धय हुता तसा ही धर, बडे पुरुषनिके ही सम्पदा अर आपदा दोऊ होय है। अब तोहि कुछ आपदा नाहीं। नन्द्यावतपुरका राज्य भरतका आज्ञाकारी होयकर रहवो कर। तब अतिवीय कही मेरे अब राज्यकी वाछा नाहीं, म राज्यका फल पाया, अब म और ही अवस्था धारू गा। समुद्र पयन्त पृथ्वीका वश करणहारा महामानका धारी जो म सो कसा पराया सेवक हो राज्य करू ? याविष पुरुषाथ कहा ? अर यह राज्य कहा पदाथ ? जिन पुरुषनि षट खडका राज्य किया तें तृप्त न भए तो मैं पाचग्रामोका स्वामी कहा अल्प विभूतिकर तृप्त होऊगा ? जन्मातरविष किया जो कम ताका प्रभाव देखहु, जो मोहि कातिरहित किया जसैं राहु च द्रमाकू कातिरहित कर। यह मनुष्यदेह सारभूत, देवनहूत अधिक म वृथा खोई, नवा जन्म धरनकू कायर, सो तुमने प्रतिबोध्या, अब म ऐसी चष्टा करू जाकर मुक्ति प्राप्त होय। या भाति कहकर श्रीराम लक्ष्मणकू क्षमा कराय, वह राजा अतिवीय, केसरीसिंह जसा ह पराक्रम जाका, श्रुतधरनामा मुनीश्वरके समीप हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया—हे नाथ ! मै दिगम्बरी दीक्षा वाछू हू। तब आचाय कही यही बात योग्य ह। या दीक्षाकर अन त सिद्ध भए, अर होवेंग। तब अतिवीय वस्त्र तज केशनिकू लु चकर महाव्रतका धारी भया। आत्माके अथविष मग्न, रागादि परिग्रहका त्यागी, विधिपूवक तप करता पथ्वी पर विहार करता भया। जहा मनुष्यनिका सचार नाहीं वहा रह। सिहादि क्रूरजीवनिकर युक्त जो महागहन वन अथवा गिरिशिखर गुफादि तिनविष निभय निवास कर। ऐसे अतिवीय स्वामीकू नमस्कार होहु, तजो ह समस्त परिग्रहको

आशा जाने, अर अगीकार किया है चारित्रका भार जान, महाशीलके धारक, नानाप्रकार तपकर शरीरका शोषणहारा, प्रशसा योग्य महामुनि, सम्यकदशन ज्ञान चारित्र रूप सुन्दर है आभूषण अर दशोदिशा ही वस्त्र जिनके, साधुनिके जे मूलगुण उत्तरगुण वे ही सम्पदा, कम हरिबेकू उद्यमी, सजमी, मुक्तिके वर योगीन्द्र तिनकू नमस्कार होहु। यह अतिवीय मुनिका चारित्र जो सुबुद्धि पढे सुने सो गुणनिकी वद्धिकू प्राप्त होय, भानु समान तेजस्वी होय और ससारके कष्टत निवत्त होय।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष अतिवायका वराग्य वणन करनवाला सतीसवा पव पुण भया ।। ७ ।।

अथानन्तर श्रीरामचन्द्र महा न्यायके वेत्ताने अतिवीयका पत्र जो विजयरथ ताहि अभिषेक कराय पिताके पदविष थाप्या। ताने अपना समस्त वित्त दिखाया सो ताका ताकू दिया अर तान अपनी बहिन रत्नमाला लक्ष्मणकू देनी करी सो तिनने प्रमाण करी। ताके रूपकू देख लक्ष्मण हर्षित भए मानो साक्षात लक्ष्मी ही है। बहुरि श्रीराम लक्ष्मण जिनेन्द्रकी पूजाकरि पथ्वीधरके विजयपुर नगर विष वापिस गए। अर भरतने सुनी जो अतिवीयकू नत्यकारिणीने पकडचा सो विरक्त होय दीक्षा धरी तब शत्रुघन हास्य करने लाग्या। तब ताहि मनेकर भरत कहते भये—अहो भाई! राजा अतिवीय महा धन्य है जे महादुखरूप विषयनिकू तज शातिभावकू प्राप्त भए। वे महा स्तुति योग्य है तिनकी हासी कहा? तपका प्रभाव देखहु जो रिपु हू प्रणाम योग्य गुरु होय है। यह तप देवनिकू दुलभ है। या भाति भरत अतिवीयकी स्तुति कर है। ताही समय अतिवीयका पुत्र विजयरथ आया, अनेक सामतनिसहित सो भरतकू नमस्कारकर तिष्ठचा। क्षणिक और कथाकर जो रत्नमाला लक्ष्मणकू दई ताकी बडी बहिन विजयसुन्दर नानाप्रकार आभूषण की धरणहारी भरतकू परणाई अर बहुत द्रव्य दिया। सो भरत ताकी बहिन परणकरि प्रसन्न भए। विजयरथसू बहुत स्नेह किया। यही

बडेनिकी रीति ह । अर भरत महा हर्षथकी पूर्ण ह मन जाका तेज तुरगपर चढ्या अतिवीर्य मुनिके दर्शनकू चाल्या । सो जा गिरिपर मुनि विराजे हुते तहा पहिले मनुष्य देख गए हुते, सो लार है । तिनकू पूछते जाय है—कहा महामुनि है, कहा महामुनि ह ? वे कह ह आगे विराजे हैं । सो जा गिरिपर मुनि हुते वहा जाय पहुँचे, कसा ह गिरि ? विषम पाषाणनिके समूहकरि महा अगम्य, अर नानाप्रकार के वृक्षनिकरि पूर्ण, पुष्पनिकी सुगन्धकर महासुगन्धित, अर सिंहादिक क्रूर जीवनिकरि भरचा । सो राजा भरत अश्वत उतर महा विनयवान मुनिके निकट गए । कसे ह मुनि ? रागद्वेषरहित ह, शात भई ह इन्द्रियाँ जिनकी, शिलापर विराजमान, निर्भय, अकेले जिनकल्पी, अतिवीर्य मुनीन्द्र महातपस्वी ध्यानी, मुनिपद की शोभाकर सयुक्त, तिनकू देख भरत आश्चर्यकू प्राप्त भया । फूल गए ह नेत्र कमल जाके, रोमाच होय आए । हाथ जोड नमस्कारकर साधुके चरणारविंदकी पूजाकर महा नमीभूत होय मुनिभक्तिविषै ह प्रेम जाका, सो स्तुति करता भया—हे नाथ ! परमतत्त्वके वेत्ता तुम ही या जगतविषै शूरवीर हो, जिनने यह जनेन्द्री दीक्षा महा दुद्धर धारी । जे महत पुरुष विशुद्ध कुलविषै उत्पन्न भए ह तिनकी यही चेष्टा ह । या मनुष्य लोककू पाय जो फल बडे पुरुष वाछ ह सो आपने पाया । अर हम या जगतकी मायाकरि अत्यन्त दुखी ह । हे प्रभो ! हमारा अपराध क्षमा करहु, तुम कृतार्थ हो पूज्यपदकू प्राप्त भए, तुमको बारम्बार नमस्कार होहु । ऐसा कहकर तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड नमस्कारकर मुनिसम्बन्धी कथा करता करता गिरत उतर तुरगपर चढ हजारो सुभटनिकर सयुक्त अयोध्या आया । समस्त राजानिके निकट सभाविषै कहा कि वे नृत्यकारिणी, समस्त लोकनिके मनकू मोहित करनी, अपने जीवितविषै हू निर्लोभ प्रबल नृपनकू जीतनहारी कहा गई ? देखो आश्चर्यकी बात । अतिवीर्यके निकट मेरी स्तुति करे, अर ताहि पकडे । स्त्री वर्गविषै ऐसी शक्ति कहा होय ? जानिए ह जिनशासनकी देविनिने यह चेष्टा करी । ऐसा चिंतवन करता सता प्रसन्नचित्त भया । अर शत्रुघन नानाप्रकारके धान्यकर मडित जो धरा ताके देखवेकू गया । जगतविषै व्याप्त है

कीर्ति जाकी, बहुरि अयोध्या आया, परम प्रतापकू धर । अर राजा भरत अतिवीयकी पुत्री विजय सुन्दरीसहित सुख भोगता सुखसू तिष्ठ, जस सुलोचना सहित मेघेश्वर तिष्ठ्या । यह तो कथा यहा ही रही, आग श्रीराम लक्ष्मणका वणन कर ह ।

अथानन्तर राम लक्ष्मण सबलोककू आनन्दके कारण कईएक दिन पृथ्वीधरके पुरविष रहे । फिर जानकीसहित मत्र कर आग चलवेकू उद्यमी भए । तदि सुन्दर लक्षणकी धरणहारी वनमाला लक्ष्मण सू कहती भई, नेत्र सजल होय आए, हे नाथ ! म मदभागिनी, मोहि आप तज जावो हो तो पहिले मरणत क्यो बचाई, तब लक्ष्मण बोले—हे प्रिये ! तू विषाद मत कर, थोडे दिनमें तेरे लेवेकू आव ह । हे सुन्दरवदनी ! जो तेरे लेयवेको शीघ ही न आव तो हमको वह गति हूजौ जो सम्यग्दशनरहित मिथ्यादृष्टिकी होय ह । हे बल्लभे ! जो शीघ ही तेरे निकट न आव तो हमको वह पाप होय जो महा मानकर दग्ध साधुनिके निदकनिके होय ह । हे गजगामिनी ! हम पिताके वचन पालिवे निमित्त दक्षिण के समुद्रके तीर निसदेह जाय ह । मलयाचलके निकट कोई परम स्थानकर तोहि लवे आवेंगे । हे शुभ मते ! तू धीय राख । या भाति कहकर अनक सौगन्धकर अति दिलासा देय आप सुमित्रा के नन्दन लक्ष्मण श्रीरामके सग चलबेकू उद्यमी भए । लोकनिकू सूते जान रात्रिकू सीतासहित गोप्य निकसे । प्रभातविष इनकू न देखकर नगरके लोक परमशोककू प्राप्त भए । राजाकू अतिशोक उपज्या, बन माला लक्ष्मण विना घर सूना जानती भई, अपना चित्त जिनशासनविष लगाय धर्मानुरागरूप तिष्ठी । राम लक्ष्मण पृथ्वीविष विहार करते नरनारिनिकू मोहत, पराक्रमी, पृथ्वीकू आश्चयके कारण, धीरे धीरे लीलात विचर ह । जगतके मन अर नेत्रनिकू अनुराग उपजावते रम ह । इनकू देख लोग विचार ह जो यह पुरुषोतम कौन पवित्र गोत्रविष उपजे हैं । धन्य हैं वह मात जाकी कुक्षिविष ये उपजे, अर धन्य ह वे नारी जिनकू ये परणे ऐसा रूप देवनिकू दुलभ, ये सुन्दर कहात आए अर कहा जाय ह इनके कहा वाछा ह ? परस्पर स्त्रीजन ऐसी वार्ता कर ह । हे सखी ! देखो दोऊ कमल

नेत्र, चन्द्रमा सारिखे अद्भुत वदन जिनके अर एक नारी नागकुमारी समान अद्भुत देखी। न जानिये वे सुर हुते वा नर हुते। हे मुग्धे! महापुण्य विना उनका दर्शन नाहीं। अब तो वे दूर गए, पाछे फिरो, वे नेत्र अर मनके चोर जगतका मन हरते फिर हैं। इत्यादि नर नारिनिके आलाप सुनते सब कू मोहित करते वे स्वेच्छाविहारी शुद्ध है चित्त जिनके, नाना देशनिविष विहार करते क्षेमाजलि नामा नगरविष आए। ताके निकट कारीघटा समान सघन वनविष सुखसू तिष्ठे, जैसे सौमनसवनमें देव तिष्ठे। तहा लक्ष्मण महा सुन्दर अन्न अर अनेक व्यजन तयार किए, दाखनिका रस, सो श्रीराम सीतासू लक्ष्मण सहित भोजन किया।

अथानन्तर लक्ष्मण श्रीरामकी आज्ञा लेय क्षेमाजलि नाम पुरके देखवेकू चाले। महासुन्दर माला पहिरे, अर पीताम्बर धारे, सुन्दर है रूप जिनका, नानाप्रकारकी बेल वृक्ष तिनकरि युक्त वन, अर निर्मल जलकी भरी नदी, अर नानाप्रकारके क्रीडागिरि अनेक धातुके भरे, अर ऊचे २ जिनमन्दिर, अर मनोहर जलके निर्वाण अर नानाप्रकारके लोक तिनकू देख नगरविष प्रवेश किया। कैसा है नगर? नानाप्रकारके व्यापारकर पूर्ण। सो नगरके लोक इनका अद्भुत रूप देख परस्पर वार्ता करते भए, तिनके शब्द इनने सुने—जो या नगरके जितपद्मानामा पुत्री है ताहि वह परणे जो राजाके हाथकी शक्तिकी चोट खाय जीवता बचे। सो कन्याकी कहा बात, स्वर्गका राज्य देय तौ भी यह बात कोई न करै। शक्तिकी चोटते प्राण ही जाय तब कन्या कौन अर्थ? जगतविषै जीतव्य सब वस्तुतै प्रिय है, तातै कन्याके अर्थ प्राण कौन देय? यह वचन सुनकर महाकौतुकी लक्ष्मण काहूकू पूछते भए—हे भद्र! यह जितपद्मा कौन है? तब वह कहता भया—यह कालकन्या पडित माननीय सब लोक प्रसिद्ध तुम कहा न सुनी? या नगरका राजा शत्रुदमन, जाके राणी कनकप्रभा, ताके जितपद्मा पुत्री रूपवती गुणवती, जाके वदनकी कातिकरि कमल जीत्या है, अर गात्रकी शोभाकर कमलिनी जीती, सो तातै जितपद्मा कहावै है। नवयौवन मडित, सब कलापूर्ण, अद्भुत आभूषणकी धरणहारी ताहि

पुरुषका नाम रुच नाहीं देवनिका दर्शन हू अप्रिय, मनुष्यनिकी तो कहा बात ? जाके निकट कोई पुल्लिग शब्दका उच्चारण हू न कर सके, यह कलाशके शिखर समान जो उज्ज्वल मंदिर ताविषै कन्या तिष्ठै है। सकडनि सहेली जाकी सेवा करै है। जो कोई कन्याके पिताके हाथकी शक्तिकी चोटते बचे ताहि यह कन्या वरै। लक्ष्मण यह वार्ता सुन आश्चर्यकू प्राप्त भया, अर कोप हू उपज्या। मनमे विचारी महागर्वित दुष्ट चेष्टासंयुक्त यह कन्या ताहि देखू। यह चितवन कर राज मार्ग होय विमान समान सुंदर घर देखता अर मदोन्मत्त हाथी कारी घटा समान, अर तुरंग चंचल अवलोकता अर नृत्यशाला निरखता राजमंदिरविषै गया। कैसा है राजमंदिर ? अनेक प्रकारके झरोखानिकर ध्वजानिकर मंडित शरदके बादर समान उज्ज्वल मंदिर जहां कन्या तिष्ठै है, महामनोहर रचनाकर संयुक्त ऊंच कोटकर वेष्टित सो लक्ष्मण जाय द्वारपर ठाढा भया। इन्द्रके धनुष समान अनेक वर्णका है तोरण जहां सुभटनिके समूह अनेक देशनिके नानाप्रकार भेट लेयकर आए हैं। कोई निकसे है कोई जाय है। सामंतनिकी भीड होय रही है। लक्ष्मणकू द्वारमे प्रवेश करता देख द्वारपाल सौम्य वाणीसू कहता भया—तुम कौन हो, अर कौनकी आज्ञाते आए हो, कौन प्रयोजन राजमंदिरमे प्रवेश करो हो ? तब कुमारने कही राजाकू देखा चाहै है, तू जाय राजासो पूछ। तब वह द्वारपाल अपनी ठौर दूजेको राख आप राजाते जाय विनती करता भया—हे महाराज ! आपके दर्शनकू एक महारूपवान पुरुष आया है, द्वार तिष्ठै है, नील कमल समान है वर्ण जाका, अर कमललोचन, महा शोभायमान, सौम्य शुभ मूर्ति है। तब राजाने प्रधानकी ओर निरख आज्ञा करी—आवै। तदि द्वारपाल लक्ष्मणकू राजाके समीप लेय गया सो समस्त सभा याकू अति सुंदर देख हर्षकी वृद्धिकू प्राप्त भई, जैसे चन्द्रमाकू देख समुद्रकी शोभा वृद्धिकू प्राप्त होय। राजा याकू प्रणामरहित देदीप्यमान विकट स्वरूप देख कछुइक विकारकू प्राप्त हो पूछता भया। तुम कौन हो, कौन अर्थ कहाते यहां आए हो ? तदि लक्ष्मण वर्षाकालके मेघ समान शब्द करते भए—मैं राजा भरतका सेवक हू, पृथ्वीके देखबेको

अभिलाषाकरि विचरू हूँ। तेरी पुत्रीका वृत्तात सुन यहा आया हू। यह तेरी पुत्री महादुष्ट मरकनी गाय है, नहीं भग्न भए ह मानरूपी सींग जाके। यह सब लोकनिकू दु खदायिनी वर्ते ह। तब राजा शत्रु-दमनने कही मेरी शक्तिकू जो सहार सक, सो जितपदमाकू वर। तब लक्ष्मण कहता भया तेरी एक शक्तिकरि मेरे कहा होय। तू अपना समस्त शक्तिकरि मेरे पच शक्ति लगाय। या भाति राजा के अर लक्ष्मणके विवाद भया। ता समय झरोखाते जितपदमा लक्ष्मणकू देख मोहित भई, अर हाथ जोड इशारा कर मन करती भई, जो शक्तिकी चोट मत खावो। तब आप सन करते भए तू डरें मत। या भाति समस्याविष ही धीय बधाया। अर राजासू कही—काहे कायर होय रह्या है, शक्ति चलाय, अपनी शक्ति हमकू दिखा। तब राजा कही तू मूवा चाह ह, तो झेल। महाकोपकर प्रज्वलित अग्नि समान एक शक्ति चलाई, सो लक्ष्मणने दाहिने करत ग्रही, जस गरुड सपकू ग्रह, अर दूसरी शक्ति दूसरे हाथत गही, अर तीजी, चौथी दोनो काखविष गही। सो चारो शक्तिनिकू गह लक्ष्मण ऐसे शोभ ह मानो चोदता हस्ती ह। तब राजा पाचवीं शक्ति चलाई सो दातनित गही, जसे मगराज मगीका गह। तब देवनिके समूह हर्षित होय पुष्पवष्टि करते भए अर दु दुभी बाजे बजाते भए। लक्ष्मण राजासू कहते भए और ह तो और भी चला। तब सकल लोक भयकर कम्पायमान भए। राजा लक्ष्मणका अखण्डबल देख आश्चयकू प्राप्त भया। लज्जाकर नीचा होय गया अर जितपदमा लक्ष्मण के रूप अर चरित्र कर खची थकी आय ठाढी भई। वह कन्या सु दरवदनी मगनयनी लक्ष्मणके समीप ऐसी शोभती भई, जस इन्द्रके समीप शची होय। जितपदमाकू देख लक्ष्मणका हृदय प्रसन्न भया। महा सग्रामविष जाका चित्त कपित न होय, सो याक स्नेहकरि वशीभूत भया। लक्ष्मण तत्काल विनयकर नमीभूत होय राजाकू कहता भया—हे माम! हम तुम्हारे बालक ह। हमारा अपराध क्षमा करहु, जे तुम सारिखे गम्भीर नर ह ते बालकनिकी अज्ञान चेष्टा कर अर कुवचन कर विकारकू नाहीं प्राप्त होय हैं। तब शत्रुदमन अति हर्षित होय हाथीकी सूण्ड समान अपनी भुजानिकर कमार

सू मिल्या, अर कहता भया–हे धीर ! मैं महायुद्धविषै मातै हाथिनिकूं क्षणमात्रविषै जीतनहारा, सो तूने जीत्या । अर वनके हस्ती पर्वत समान तिनकूं मद रहित करनहारा जो मैं, सो तुम मोहि गर्वरहित किया । धन्य तिहारा पराक्रम, धन्य तिहारा रूप, धन्य तिहारी निर्ममता, महा विनयवान अद्भुत चरित्रके धरणहारे ! तुमसे तुमही हो । या भांति राजाने लक्ष्मणके गुण सभाविषै वर्णन किये । तब लक्ष्मण लज्जाकर नीचा होयगया । अर राजाकी आज्ञाकर मेघकी ध्वनि समान वादित्रनिके शब्द सेवक करते भए अर याचकनिकूं अतिदान देय उनकी इच्छा पूर्ण करते भए । नगर के विषै आनन्द वार्ता, राजानें लक्ष्मणसूं कहा– हे पुरुषोत्तम ! मेरी पुत्रीका तुम पाणिग्रहण किया चाहो हो तो करो । लक्ष्मणने कही मेरे बडे भाई अर भावज नगरके निकट तिष्ठै हैं तिनकूं पूछो । तिनकी आज्ञा होय सो तुमको हमको करनी उचित है । वे सब नीके जाने हैं । तब राजा पुत्रीकूं अर लक्ष्मणकूं रथमें चढाय सब कुटुम्ब सहित रघवीर पै चाल्या । सो क्षोभकूं प्राप्त हुआ जो समुद्र ताकी गर्जना समान याकी सेनाका शब्द सुनकर अर धूलके पटल उठते देखकर सीता भयभीत होय कहती भई–हे नाथ ! लक्ष्मण ने कुछ उद्धत चेष्टा करी, या दिशाविषैं उपद्रव दृष्टि आवै है । तात सावधान होय जो कुछ करना होय सो करहु । तब आप जानकीकूं उरसूं लगाय कहते भए–हे देवी ! भय मत करहु । ऐसा कहकर उठे, धनुष ऊपर दृष्टि धरी । तब ही मनुष्यनिके समूहके आगे स्त्रीजन सुन्दर गान करती देखीं, बहुरि निकट ही आइ, सुन्दर हैं अंग जिनके, स्त्रीनिकूं गावती अर नृत्य करती देख श्रीरामकूं विश्वास उपज्या । सीता सहित सुखसूं विराजे । स्त्रीजन सब आभूषण मंडित अति मनोहर मंगलद्रव्य हाथमें लिये हर्षके भरे हैं नेत्र जिनके, रथसूं उतर कर आई, अर राजा शत्रुदमन भी बहुत कुटुम्ब सहित श्रीराम के चरणारविंदकूं नमस्कार कर बहुत विनयसूं बैठ्या । लक्ष्मण अर जितपद्मा एक साथ रथविषै बैठे आए हुते, सो उतर कर लक्ष्मण श्रीरामचन्द्रकूं अर जानकीकूं सीस निवाय प्रणामकर महा विनयवान दूर बैठ्या । सो श्रीराम राजा शत्रुदमनसे कुशल प्रश्न वार्ता करि सुखसूं विराजे । राम

के आगमनकरि राजाने हर्षित होय नृत्य किया, महा भक्तिकरि नगरमें चलवेकी विनती करी। श्रीराम अर सीता अर लक्ष्मण एक रथविषै विराजे। परम उत्साहसूं राजाके महल पधारे। मानो वह राजमन्दिर सरोवर ही है। स्त्री रूप कमलनिकर भरया, लावण्यरूप जल है जाविषै, शब्द करते जे आभूषण तेही हैं सुन्दर पक्षी जहां। यह दोऊ वीर नवयौवन, महाशोभाकरि पूर्ण, कईएक दिन सुखसूं विराजे, राजा शत्रुदमन करै है सेवा जिनकी।

अथानन्तर सबलोकके चित्तकूं आनन्दके करणहारे राम लक्ष्मण महाधीर वीर सीतासहित अर्धरात्रिकूं उठ चले। लक्ष्मणने प्रिय वचनकर जैसे वनमालाकूं धीर्य बंधाया हुता, तैसे जितपद्माको धीर्य बंधाया, बहुत दिलासाकर आप श्रीरामके लार भए। नगरके सब लोक अर नृपको इनके चलेजानेकी अति चिंता भई, धीर्य न रह्या। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै है हे मगधाधिपति! ते दोऊ भाई जन्मांतरके उपार्जे जे पुण्य तिनकरि सब जीवनिके वल्लभ, जहां जहां गमन करैं तहां तहां राजा प्रजा सब लोक सेवा करैं, अर यह चाहैं कि न जावैं तो भला। सब इन्द्रियनिके सुख अर महा मिष्ट अन्नपानादि विना ही यत्न इनकूं सर्वत्र सुलभ, जे पृथ्वीविषै दुर्लभ वस्तु हैं ते सब इनकूं प्राप्त होय। महा भाग्य भव्य जीव सदा भोगनिते उदास है। ज्ञानके अर विषयनिके वैर है। ज्ञानी ऐसा चितवन करै है—इन भोगनिकर प्रयोजन नाहीं, ये दुष्ट नाशकूं प्राप्त होय। या भांति यद्यपि भोगनिकी सदा निन्दा ही करै है, भोगनिते विरक्त ही है, दीप्तिकरि जीत्या है सूर्य जिनने, तथापि पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावतैं पहाडके शिखरविषै निवास करै है तहां हू नानाप्रकार सामग्रीका संयोग होय है, जबलग मुनिपदका उदय नाहीं तबलग देवो समान सुख भोगवै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै जितपद्माका व्याख्यान वर्णन करनेवाला अडतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३८ ॥

—•—

अथानन्तर ये दोय वीर महाधीर सीता सहित वनविषे आए । कैसा है वन ? नानाप्रकारके वृक्षनिकर शोभित, अनेक भांतिके पुष्पनिकी सुगंधिताकर महासुगंध, लतानिके मंडपनिकरि युक्त, तहां राम लक्ष्मण रमते रमते आए । कैसे हैं दोनो ? समस्त देवोपुनीत सामग्रीकर शरीरका है आधार जिनके । कहूं इक मूंगोके रंग समान महा सुन्दर वृक्षनिका कूंपललेय श्रीराम जानकीके कर्णाभरण करे हैं, कहूंइक छोटा वृक्षविषै लग रही जो बेल ताकर हिंडोला बनाय दोऊ भाई झोटा देय देय जानकी कूं झुलावे हैं, अर आनन्दकी कथा कर सीताकूं विनोद उपजावे है । कभी सीता रामसो कहे है-हे देव ! यह बेलि, यह वृक्ष महामनोज्ञ दीखे है । अर सीताके शरीरका सुगंधताकर भ्रमर आय लगे है, सो दोऊ उडावे है । या भांति नानाप्रकारके वननिविषै धीरे धीरे विहार करते दोऊ धीर, मनोग्य है चारित्र जिनके, जैसे स्वर्गके वनविषै देव रमें तैसे रमते भए । अनेक देशनिकूं देखते अनुक्रमकर वंशस्थल नगर आए । ते दोऊ पुण्याधिकारी तिनकूं सीताके कारण थोडी दूर ही आवनेविषै बहुत दिन लागे, सो दीर्घकालहु दुःख क्लेशका देनहारा न भया, सदा सुखरूप ही रहे । नगरके निकट एक वंशधर नामा पर्वत देख्या, मानूं पृथ्वीकूं भेदकर निकस्या । जहां बांसनिके अति समूह तिनकरि मार्ग विषम है, ऊंचे शिखरनिकी छायाकरि मानो सदा संध्याकूं धारे है, अर निझरनोकर मानो हसे है । सो नगरते राजा प्रजाकूं निकसती देख श्रीरामचन्द्र पूछते भए । अहो ! कहा भयकर नगर तजो हो ? कोई कहता भया आज तीसरा दिन है । रात्रिके समय या पहाडके शिखरविषै ऐसी ध्वनि होय है जो अब तक कबहु नाहीं सुनी, पृथ्वी कम्पायमान होय है, अर दशो दिशा शब्दायमान होय है । वृक्षनिकी जड उपड जाय है । सरोवरनिका जल चलायमान होय है । ता भयानक शब्दकर सवलोकनिके कान पीडित होय मानो लोहेके मुदगरनि कर मारे । कोई एक दुष्ट देव जगतका कंटक हमारे मारवेके अर्थ उद्यमी होय है, या गिरिपर पीडा करे है । ताके भयकर संध्या समय लोक भागे है, प्रभातविषै बहुरि आवे है, पांच कोस परे जाय रहे है, जहां वाकी ध्वनि न सुनिये । यह वार्ता सुनि सीता राम लक्ष्मणसो

कहती भई—जहा यह सब लोक जाय ह वहा अपनहु चालें । जे नीतिशास्त्रके वेत्ता हैं वे देश कालकू जानकर पुरुषार्थ कर ह, ते कदाचित आपदाकू नाहीं प्राप्त होय ह । तब दोऊ धीर हसकर कहते भये तू भयकर बहुत कायर ह, सो यह लोक जहा जाय ह तहा तू भी जाहु, प्रभात सब आवें तब तू आइयो । हम तो आज या गिरिपर रहेंगे । यह अत्यन्त भयानक कौनकी ध्वनि होय ह सो देखेंगे, यह निश्चय ह । यह लोक रक ह, भयकर पशु बालकनिकू लेय भाग ह, हमकू काहूका भय नाहीं । तब सीता कहनी भई—तिहारे हठको कौन हरिवे समथ, तिहारा आग्रह दुर्निवार ह । ऐसा कहकर वह पतिके पीछे चाली । खिन्न भए ह चरण जाके, पहाडके शिखरपर ऐसी शोभ मानो निमल चन्द्रकाति ही ह । श्रीरामके पीछे अर लक्ष्मणके आगे सीता कसी सोह मानो चन्द्रकाति अर इन्द्रनीलमणिके मध्य पुष्पराग मणि ही ह, ता पवतका आभूषण होती भई । राम लक्ष्मणकू यह डर ह जो यह कहीं गिरिसे गिर न पडे । तात याका हाथ पकड लिए जाय ह । वे निभय पुरुषोत्तम, विषम है पाषाण जाके ऐसे पवतकू उलघ कर सीतासहित शिखरपर जाय पहुँचे । तहा देशभूषण अर कुलभूषण नामा दोय मुनि महाध्यानारूढ दोऊ भुज लु बाए कायोत्सग आसन धर खडे, परम तेजकर युक्त समुद्रसारिखे गम्भीर गिरि सारिखे स्थिर, शरीर अर आत्माकू भिन्न भिन्न जाननहारे, मोह रहित, नग्न स्वरूप यथाजातरूप धरनहारे, कातिके सागर, नवयौवन, परम सुन्दर, महासयमी, श्रेष्ठ ह आकार जिनके, जिनभाषित धमके आराधनहारे, तिनकू श्रीराम लक्ष्मण देखकर हाथ जोड नमस्कार करते भए । अर बहुत आश्चयकू प्राप्त भए । चित्तविषं चितवते भए जो ससारके सब काय असार ह दु खके कारण ह । मित्र द्रव्य स्त्री सब कुटुम्ब अर इन्द्रियजनित सुख यह सब दु ख ही ह, एक धम ही सुखका कारण ह ।

महा भक्तिके भरे दोऊ भाई परम हषकू धरते विनयकरि नमीभूत हैं शरीर जिनके, मुनिनिक समीप बठे । ताही समय असुरके आगमनत महा भयानक शब्द भया । मायामई सप अर बिच्छू तिनकर दोनो मुनिनिका शरीर वेष्टित होय गया । सप अति भयानक, महा शब्दके करणहारे, काजल समान कारे,

चलायमान है जिह्वा जिनकी। अर अनेक वर्णके अति स्थूल बिच्छू तिनकरि मुनिनके अंग वेढे देख, राम लक्ष्मण असुरपर कोपकूं प्राप्त भए। सीता भयकी भरी भरतारके अंगसूं लिपट गई। तब आप कहते भए—तू भय मत कर। याकूं धीर्य बधाय, दोऊ सुभट निकट जाय साप बिच्छू मुनिनके अंगतै दूर किए, चरणारविंदकी पूजा करी। भक्ति से भरी सीताने निर्झर के जल से देर तक उन मुनियो के पर धोकर मनोहर गंध से लिप्त किये[1]। तथा जो वनको सुगंधित कर रहे थे एवं लक्ष्मणने तोड कर दिये थे, ऐसे निकटवर्ती लताओ के फूलो से उनकी पूजा की। अर योगीश्वरनिकी भक्ति वंदना करते भए। श्रीराम वीण लेय बजावते भए अर मधुर स्वरसूं गावते भए—अर लक्ष्मण गान करते भए। गानविषै ये शब्द गाए—महा योगीश्वर धीर वीर मन वचन कायकर वंदनीक है, मनोग्य है चेष्टा जिनकी, देव निहूविषै पूज्य, महाभाग्यवंत जिनने अरहंतका धर्म पाया जो उपमारहित अखंड महाउत्तम तीन भवनविषै प्रसिद्ध जे महामुनि, जिनधर्मके धुरंधर, ध्यानरूप वजदंडकरि महामोहरूप शिलाकूं चूर्ण कर डारे, अर जे धर्मरहित प्राणिनिकूं अविवेकी जान दयाकर विवेकके मार्ग ल्यावें। परम दयालु,आप तिरें औरनिकूं तारें। या भांति स्तुति करि दोऊ भाई ऐसे गावें, जो वनके तिर्यंचनिहूके मन मोहित भए अर भक्तिकी प्रेरी सीता ऐसा नृत्य करती भई, जैसा सुमेरुके विषै शची नृत्य करै। जाना है समस्त संगीत शास्त्र जान, सुन्दर लक्षणकूं धरे, अमोलक हार मालादि पहिरे, परम लीलाकरि युक्त दिखाई है प्रकटपणे अद्भुत नृत्यकी कला जान, सुन्दर है बाहुलता जाकी, हावभावादिविषै प्रवीण, मंद मंद चरणनिकूं धरती, महा लयकूं लिए गीत अनुसार भावकूं बतावती, अद्भुत नृत्य करती महा

[1] अथोद्धृत्यचिर पादौ तयोर्निर्झर—वारिणा। ग धेन सीतया लिप्तौ चारणा पुरु—भावया ॥४४॥
प्रासन्नाना च व-लीना कुसुमैर्वन—सौरभं लक्ष्मीधरार्पित शुक्ल पूरितान्तरमर्चितौ ॥५४॥
पद्मपुराण भाग दूसरा पर्व ३९ वां (भारतीय ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित)

शोभायमान भासती भई। अर असुरकत उपद्रवकू मानू सूय देख न सक्या सो अस्त भया। अर सध्या हू प्रकट होय जाती रही, आकाशविषै नक्षत्रनिका प्रकाश भया। दशोदिशाविषै अंधकार फल गया। ता समय असुरकी मायाकरि महारौद्र भूतनिकेगण हुडहुड हसते भए, महा भयकर है मुख जिनके, अर राक्षस खोटे शब्द करते भए अर मायामई स्यालिनी मुखतै भयानक अग्निकी ज्वाला काढती शब्द बोलती भई, अर सकडो कलेवर भयकारी नत्य करते भए, मस्तक भुजा जघादि की तथा अगनिकी वृष्टि होती भई। अर दुर्गंधसहित स्थूल बू द लोहूकी बरसती भई। अर डाकिनी नग्न स्वरूप लावैं हाडो के आभरण पहिरे, क्रूर है शरीर जिनके, हाल है स्तन जिनके, खडग है हाथमें जिनके, वे दृष्टिविषै आवती भई, अर सिंह व्याघ्रादिकके से मुख, तप्तलोह समान लोचन, हस्तविषै त्रिशूल धारे, होठ डसते, कुटिल है भौंहै जिनकी, कठोर है शब्द जिनके, ऐसे अनेक पिशाच नत्य करते भए। पवतकी शिला कम्पायमान भई, अर भूकम्प भया। इत्यादि चेष्टा असुरने करी, सो मुनि शुक्लध्यानविषै मग्न किछु न जानते भए। ये चेष्टा देख जानकी भयकू प्राप्त भई, पतिके अगसे लग गई, तब श्रीराम कहते भए–हे देवी! भय मत करहु, सब विघ्नके हरणहारे जे मुनिके चरण तिनका शरण गहहु। ऐसा कह कर सीताकू मुनिके पायन मेल आप लक्ष्मणसहित धनुष हाथविषै लिए महाबली मेघसमान गरजे, धनुषके चढायवेका ऐसा शब्द भया जसा वज्रपातका शब्द होय। तब वह अग्निप्रभ नामा असुर इन दोऊ वीरनिकू बलभद्र नारायण जान भाग गया, वाकी सब चेष्टा विलाय गई। श्रीराम लक्ष्मणने मुनिका उपसग दूर किया, तत्काल देशभूषण मुनिनिको केवलज्ञान उपज्या। चतुरनिकायके देव दशनकू आए। विधिपूवक नमस्कारकर यथायोग्य बठे। केवलज्ञानके प्रतापत केवलीके निकट रात दिनका भेद न रहै। भूमिगोचरी अर विद्याधर केवलीकी पूजाकर यथायोग्य बठे, सुर नर विद्याधर सब ही धर्मोपदेश श्रवण करते भए। राम लक्ष्मण हर्षितचित्त सीतासहित केवलीकी पूजाकर हाथ जोड नमस्कारकर पूछते भए।

हे भगवन ! असुरने आपकू कौन कारण उपसग किया। अर तुम दोऊविष परस्पर अति स्नेह काहत भया ? तब केवलीकी दिव्यध्वनि होती भई—पदिमनीनामा नगरीविष राजा विजयपर्वत गुण धा यके उपजिवेका उत्तमक्षेत्र, जाके धारणीनामा स्त्री, अर अमतसुर नामा दूत, सव शास्त्रविष प्रवीण राजकाजविष निपुण लोकरीतिको जान, अर जाकू गुण ही प्रिय जाके उपभोग नामा स्त्री ताकी कुक्षि विष उपजे उदित मुदित नामा दोय पुत्र व्यवहारमें प्रवीण। सो अमतसुरनामा दूतकू राजाने कायनिमित्त बाहिर भेज्या। सो वह स्वामीभक्त वसुभूति मित्र सहित चला, वसुभूति पापी याकी स्त्रीसू आसक्त दुष्टचित्त सो रात्रिविष अमतसरको खडगसे मार नगरीमें वापिस आया। लोग-नित कही—मोहि वापिस भेज दिया ह। अर ताकी स्त्री उपभोगसे यथाथ वत्तात कहा। तब वह कहती भई—दोऊ पुत्रनिको भी मारि जो हम दोऊ निश्चित तिष्ठ। सो यह वार्ता उदितकी बहूने सुनी अर सव वत्तात उदितस कहा। यह बहू सासके चरित्रकू पहिले भी जानती हुती। याको वसुभूतिकी बहूने समाचार कह हुत जो परदाराके सेवनत पतिसे विरक्त हुती। सो उन्तिने सब बातोसे सावधान होय मुदितको भी सावधान किया। अर वसुभूतिका षडग देख पिताक मरणका निश्चयकर उदितने वसुभूति को मारा, सो पापी मरकर म्लेच्छकी योनिकू प्राप्त भया। ब्राह्मण हुता सो कुशीलके अर हिंसाके दोष त चाडालका ज म पाया। एक समय मतिवधननामा आचाय, मुनिनिविष महातेजस्वी पदमनी नगरी आए सो बसततिलकनामा उद्यानमे सघसहित विराजे, अर आर्यिकानिकी गुरानी अनुधरा धमध्यानविष तत्पर सोह आर्यिकादिनिके सघसहित आई, सो नगरके समीप उपवनविष तिष्ठी। अर जा वनमें मुनि विराजे हुते ता वनके अधिकारी आय राजासू हाथ जोड बिनती करते भए—हे देव ! आगेको या पीछेको कहो सघ कौन तरफ जावे ? तब राजा कही जो कहा बात ह ? ते कहते भए—उद्यानविषै मुनि आए ह। जो मन कर तो डरें, जो नहीं मन करें तो तुम कोप करो। यह हमको बडा सकट ह। स्वगके उद्यान समान यह वन ह अब तक काहूको याविषै आने न दिया। परन्तु मुनिनिका कहा करें ? ते दिग

श्वर देवनिकर न निवारे जाव, हम सारखे कसे निवार ? तब राजा कही तुम मत मन करो, जहा साधु विराजे सो स्थानक पवित्र होय ह । सो राजा बडी विभूतिसू मुनिनिके दशनको गया । ते महाभाग्य उद्यानमें विराजे हुते । वनकी रजकरि धूसर है अग जिनके, मुक्ति योग्य जो क्रिया ताकरि युक्त, प्रशात है हृदय जिनके, कईएक कायोत्सग धरे दोनो भुजा लु बाय खडे ह, कईएक पदमासन धरे विराजे ह, बेला तेला चौला, पच उपवास, दस उपवास, पक्षमासादि अनेक उपवासनिकरि शोषा ह अग जिनने, पठन पाठनविष सावधान, भ्रमर समान मधुर ह शब्द जिनके, शुद्ध स्वरूपविष लगाया ह चित्त जिनने, सौ राजा ऐसे मुनिनिकू दूरसे देख गर्वरहित होय गजत उतर सावधान होय सब मुनिनिको नमस्कार कर आचायके निकट जाय तीन प्रदक्षिणा देय प्रणामकर पूछता भया । हे नाथ ! जसी तिहारे शरीर में दीप्ति ह तसे भोग नाहीं । तब आचाय कहते भए—यह कहा बुद्धि तेरी तू शूरवीरकू स्थिर जान ह, यह बुद्धि ससारकी बढावनहारी ह । जसे हाथीके कान चपल तता जीतव्य चपल ह । यह देह कदली के थम्भसमान असार ह अर ऐश्वय स्वप्न तुल्य ह अर कटम्ब पुत्र कलत्र बाधव सब असार ह । ऐसा जानकर या ससारकी मायाविष कहा प्रीति ? यह ससार दु खदायक ह । यह प्राणी अनेक बार गभ वासक सकट भोगवे ह । गभवास नरक तुल्य महा भयानक, दुर्गंध कमिजाल कर पूण, रक्त श्लेषमा दिकका सरोवर, महा अशुचि कदमका भरा ह । यह प्राणी मोहरूप अधकार करि अधा भया गभवास सू नाहीं डर ह । धिक्कार ह या अत्यन्त अपवित्र देहकू , सव अशभका स्थानक, क्षणभगुर, जाका कोई रक्षक नाहीं । जीव देहकू पोषै वह याहि दु ख देय सो महा कतघ्न, नसाजालकर बेढा, चमकरि ढका अनेक रोगनिका पु ज, जाके आगमनकरि ग्लानिरूप । ऐसे देहमे जे प्राणी स्नेह कर ह, ते ज्ञानरहित अविवेकी ह । तिनके कल्याण कहाते होय ह ? अर या शरीरविषै इन्द्रिय चोर बस ह ते बलात्कार धमरूप धनकू हरै ह । यह जीवरूप राजा कुबुद्धिरूप स्त्रीसू रम ह, अर मत्यु याकू अचानक ग्रसा चाह ह । मनरूप माता हाथी विषयरूप वनविषै क्रीडा कर ह । ज्ञानरूप अकुशत याहि वशकर वराग्यरूप थभ

सू विवेकी बाध है । यह इन्द्रियरूप तुरग मोहरूप पताकाकू धर, परस्त्रीरूप हरित तृणनिविषै महा लोभकूं धरते शरीररूप रथकू कुमार्गमें पाडे है । चित्तके प्रेरे चचलता धरे है तातै चित्तको वश करना योग्य है । तुम ससार शरीर भोगनित विरक्त होय भक्तिकर जिनराजकू नमस्कार करहु, निरतर सुमरहु । जाकरि निश्चयत ससार समुद्रकू तिरहु । तप सयमरूप बाणनिकरि मोहरूप शत्रुको हनि, लोकके शिखर अविनाशीपुरका अखड राज्य करहु, निर्भय निजपुरविषै निवास करहु । यह मुनिके मुखत वचन सुनकर राजा विजयपर्वत सुबुद्धि राज्य तज मुनि भया । अर वे दूतके पुत्र दोऊ भाई उदित मुदित जिनवाणी सुन, मुनि होय, महीविषै विहार करते भए । सम्मेदशिखरकी यात्राकू जाते हुते, सो काहू प्रकार मार्ग भूल वनविषै जाय पडे । वह वसुभूति विप्रका जीव महारौद्र भील भया, तान देखे, अति क्रोधायमान होय कुठार समान कुवचन बोले, इनकू खडे राखे अर मारवेकू उद्यमी भया । तब बडा भाई उदित मुदितसे कहता भया ।

हे भ्रात ! भय मत करहु । क्षमा ढालको अगीकार करहु । यह मारवेको उद्यमी भया है सो हमने बहुत दिन तपसू क्षमाका अभ्यास किया है सो अब दृढता राखनी । यह वचन सुन मुदित बोला, हम जिनमार्गके सरधानी हमकू कहा भय ? देह तो विनश्वर ही है अर यह वसुभूतिका जीव है जो पिताके बैरत मारा हुता । परस्पर दोऊ मुनि ए वार्ता कर शरीरका ममत्व तज कायोत्सर्ग धार तिष्ठे । वह मारवेको आया सो म्लेच्छ कहिए भील ताके पतिने मने किया, दोऊ मुनि बचाए । यह कथा सुनि रामने केवलीसू प्रश्न किया—हे देव ! वाने बचाए सो वासू प्रीतिका कारण कहा ? तब केवलीकी दिव्य-ध्वनिविषै आज्ञा भई । एक यक्षस्थान नाम ग्राम तहा सुरप, अर कर्षक दोऊ भाई हुते । एक पक्षीकू पारधी जीवता पकड ग्राममें लाया सो इन दोऊ भाईने द्रव्य देय छुडाया । सो पक्षी मरकर म्लेच्छपति भया, अर वे सुरप कर्षक दोऊ वीर उदित मुदित भए । ता परोपकारकरि वाने इनको बचाए । जो कोई जेती नेकी कर है सो वह भी तासू नेकी कर है, अर जो काहूसू बुरी कर है वाहूसू वह हू बुरी

करै है। यह संसारी जीवनिकी रीति है। तातै सबनिका उपकार ही करहु। काहू प्राणीसूं वैर न करना। एक जीवदया ही मोक्षका मार्ग है, दया विना ग्रंथनिके पढवेकरि कहा? एक सुकृत ही सुख का कारण सो करना। वे उदित मुदित मुनि उपसर्गतैं छूटि सम्मेदशिखरकी यात्राकूं गए। अर अन्य हू अनेक तीर्थनिकी यात्रा करी। रत्नत्रयका आराधनकरि समाधितैं प्राण तज स्वर्गलोक गए। अर वह वसुभूतिका जीव जो म्लेच्छ भया हुता सो अनेक कुयौनिविषै भ्रमणकर मनुष्य देह पाय तापस-व्रत धर, अज्ञान तपकर मर ज्योतिषी देवनिकेविषै अग्निकेतु नामा क्रूर देव भया। अर भरतक्षेत्रके विषै अरिष्टपुर नगर, जहां राजा प्रियव्रत महा भोगी ताकै दो राणी महा गुणवती, एक कनकप्रभा दूजी पद्मावती। सो वे उदित मुदितके जीव स्वर्गसूं चयकर पद्मावती राणीके रत्नरथ विचित्ररथ नामा पुत्र भए, अर कनकप्रभाके वह ज्योतिषी देव चयकर अनुधर नामा पुत्र भया। राजा प्रियव्रत पुत्रकूं राज्य देय भगवानके चैत्यालयविषै छह दिनका अनशन धार देह त्याग स्वर्गलोक गया।

अथानन्तर एक राजाकी पुत्री श्रीप्रभा लक्ष्मीसमान, सो रत्नरथने परणी। ताकी अभिलाषा अनुधरके हुती। सो रत्नरथतैं अनुधरका पूर्व जन्मका तो वैर हुता ही, बहुरि नया वैर उपजा। सो अनुधर रत्नरथकी पृथ्वी उजाडने लगा। तब रत्नरथ अर विचित्ररथ दोऊ भाइनि अनुधरकूं युद्धमें जीत देशतैं निकाल दिया। सो देशतैं निकासनेतैं अर पूर्व वैरतैं महा क्रोधकूं प्राप्त होय जटा अर वक्कलका धारी तापसी भया, विषवृक्ष समान कषाय विषका भरया। अर रत्नरथ विचित्ररथ महातेजस्वी चिरकाल राज्य कर मुनि होय तपकर स्वर्गविषै देव भए, महासुख भोग तहांतैं चयकर सिद्धार्थ नगरकेविषै राजा क्षेमंकर राणी विमला, तिनकै महासुन्दर देशभूषण कुलभूषण नामा पुत्र होते भए। सो विद्या पढनेके अर्थ घरमें उचित क्रीडा करते तिष्ठे। ता समय एक सागरघोष नामा पंडित अनेक देशनिमें भ्रमण करता आया। सो राजा पंडितकूं बहुत आदरसूं राखा। अर ये दोऊ पुत्र पढनेकूं सौंपे। सो महा विनयकर संयुक्त सबकला सीखीं। केवल एक विद्या गुरुको जाने या विद्याको जाने और कुटुम्बमें काहूको न जाने।

तिनके एक विद्याभ्यासहीका काय। विद्यागुरुत अनेक विद्या पढी। सब कलाके पारगामी होय पिताप आए। सो पिता इनकू महाविद्वान सब कला निपुण देखकर प्रसन्न भया। पंडितको मनवांछित दान दिया। यह कथा केवली रामसू कह ह, वे देशभूषण कुलभूषण हम ह। सो कुमार अवस्थामें हमने सुनी जो पिताने तिहारे विवाहके अर्थ राजकन्या मगाई ह। यह वार्ता सुनकर परमविभूति धरे, तिनकी शोभा देखवेको नगर बाहिर जायवेको उद्यमी भए। सो हमारी बहिन कमलोत्सवा कन्या झरोखेमें बठी नगरी की शोभा देखती हुती। सो हम तो विद्याके अभ्यासी, कबहू काहूको न देखा, न जाना। हम न जाने यह हमारी बहिन ह। अपनी माग जान विकाररूप चित्त किया। दोऊ भाइनिके चित्त चले, दोऊ परस्पर मनविषै विचारते भए—याहि म परणू, दूजा भाई परणा चाह तो ताहि मारू। सो दोऊके चितविषै विकारभाव अर निदईभाव भया। ताही समय बन्दीजनके मुख ऐसा शब्द निकसा कि राजा क्षेमकर विमला राणी सहित जयवन्त होवे। जाके दोनो पुत्र देवन समान, अर यह झरोखविषै बठी कमलोत्सवा इनकी बहिन सरस्वती समान। दोऊ वीर महागुणवान, अर बहिन महागुणवती। ऐसी सतान पुण्याधिकारिनिके ही होय ह। जब यह वार्ता हमने सुनी तब मनविषै विचारी अहो! देखो मोह कमकी दुष्टता, जो हमारे बहिनकी अभिलाषा उपजी। यह ससार असार महादुखका भरा, हाय! जहा ऐसा भाव उपजें, पापके योग करि प्राणी नरक जाय, वहा महादुख भोगे। यह विचारकर हमारे ज्ञान उपजा सो वराग्यको उद्यमी भए। तब माता पिता स्नेहसू व्याकुल भए। हमने सबसू ममत्व तज दिगम्बरी दीक्षा आदरी। आकाशगामिनी रिद्धि सिद्धभई। नानाप्रकारके जिन तीर्थादिविषै विहार किया। तप ही ह धन जिनके। अर माता पिता राजा क्षेमकर अगले भी भवका पिता सो हमारे शोकरूप अग्निकर तप्तायमान हुवा। सब आहार तज मरणको प्राप्त भया सो गरुडेंद्र भया। भवनवासी देवनिविषै गरुडकुमार जातिके देव, तिनका अधिपति, महा सुन्दर, महा पराक्रमी, महालोचन नाम, सो आयकर यह देवनिकी सभाविषै बठा ह। अर वह अनुधर तापसी विहार करता कौमुदी नगरी गया।

अपने शिष्यनिके समूह करि बेढा। तहा राजा सुमुख ताके राणी रतिवती परम सुन्दरी, सैकडा राणिनिविष प्रधान, अर ताके एक नृत्यकारणी मानो मदकी पताका ही है, अति सुन्दर रूप अदभुत चेष्टा की धरणहारी। ताने साधुदत्त मुनिके समीप सम्यक्दर्शन ग्रह्या, तबते कुदेव कुधमकू तृणवत जाने। ताके निकट एक दिन राजा कही यह अनुधर तापसी महातपका निवास है। तब मदनाने कही हे नाथ! अज्ञानीका कहा तप? लोकविषै पाखण्ड रूप है। यह सुनकर राजाने क्रोध किया। तू तपस्वी की निंदा कर है। तब वाने कही आप कोप मत करहु, थोड ही दिनविषै याकी चेष्टा दृष्टि पडेगी। ऐसा कहकर घर जाय, अपनी नागदत्ता नामा पुत्रीको सिखाय तापसीको आश्रम पठाई। सो वह देवागना समान परम चेष्टाकी धरणहारी महा विभ्रमरूप तापसीको अपना शरीर दिखावती भई। सो याके अग उपग महा सुन्दर निरखकर अज्ञानी तापसीका मन मोहित भया, अर लोचन चलायमान भए। जो अगपर नेत्र गए वहा ही बध गया। कामबाणनिकरि तापसी पीडित भया। व्याकुल होय देवागना समान जो यह कन्या ताके समीप आय पूछता भया, तू कौन है अर यहाँ कहाँ आई है? सध्याकालविषै सब ही लघु वृद्ध अपने स्थानकविषै तिष्ठै है। तू महासुकमार अकेली वनमें क्यो विचर है? तब वह कन्या मधुर शब्दकर याका मन हरती सती दीनताको लिये बोली, चचल नीलकमल समान है लोचन जाके, हे नाथ! दयावान! शरणागत–प्रतिपाल! आज मेरी माताने मोहि घरते निकास दई, सो अब मै तिहारे भेषकर तिहारे स्थानक रहना चाहू हू। तुम मोसो कृपा करहु, रात दिन तिहारी सेवाकर मेरा यह लोक परलोक सुधरेगा। धर्म अर्थ काम इनविषै कौनसा पदार्थ है जो तुम विषै न पाइए। परम निधान हो, मै पुण्यके योगते तुम पाये। या भाति कन्याने कही तब याका मन अनुरागी जान विकल तापसी कामकर प्रज्वलित बोला–हे भद्रे! मै कहा कृपा करू, तू कृपाकर प्रसन्न होहु, मै जन्मपर्यंत तेरी सेवा करूगा। ऐसा कहकर हाथ चलावनेका उद्यम किया, तब कन्या अपने हाथसू मने कर आदरसहित कहती भई–हे नाथ! मै कुमारी कन्या, ऐसा करना उचित नाहीं। मेरी

माताके घर जायकर पूछो, घर भी निकट ही है। जैसी मोपर तिहारी करुणा भई है, तैसे मेरी माको प्रसन्न करहु, वह तुमको देवेगी, तब जो इच्छा होय सो करियो। यह कन्याके वचन सुन मूढ तापसी व्याकुल होय तत्काल कन्याकी लार रात्रिको ताकी माताके पास आया। कामकर व्याकुल है सब इन्द्रिय जाकी। जैसे माता हाथी जलके सरोवरविषै पठे तैसे नृत्यकारिणी के घरविषै प्रवेश किया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसे कहे है—

हे राजन्! कामकर ग्रसाहुवा प्राणी न स्पर्शे, न स्वादे, न सूंघे, न देखे, न सुने, न जाने, न डरे अर न लज्जा करे। महा मोहसे निरंतर कष्टकूं प्राप्त होय है। जैसे अंधा प्राणी सर्पनिके भरे कूपमें पड़े। तैसे कामांध जीव स्त्रीके विषयरूप विषमकूपमें पड़े। सो वह तापसी नृत्यकारिणीके चरणमें लोट अति अधीन होय कन्याकूं याचता भया। ताने तापसीको बांध राखा, राजाको समस्या हुती। सो राजाने आय कर रात्रिको तापसी बंधा देखा। प्रभात तिरस्कारकरि निकास दिया। सो अपमान कर लज्जायमान महादुःखको धरता संता पृथ्वीविषै भ्रमणकर मूवा। अनेक कुयोनिविषै जन्म मरण किए। बहुरि कर्मानुयोगकर दरिद्रीके घर उपजा। जब यह गर्भमें आया तब ही याकी माताने याके पिताको क्रूर वचन कहकर कलह किया। सो उदास होय विदेश गया, अर याका जन्म भया। बालक अवस्था हुती तब भीलनि देशके मनुष्य बन्द किये, सो याकी माताभी बन्दीमें गई। सब कुटुम्ब रहित यह परम दुखी भया। कईएक दिन पीछे तापसी होय अज्ञान तप कर ज्योतिषी देवनिविषै अग्निप्रभ नामा देव भया। अर एक समय अनन्तवीर्य केवलीकूं धर्मविषै निपुण जो शिष्य, तिनने पूछ्या, कैसे हैं केवली? चतुरनिकायके देव अर विद्याधर तथा भूमिगोचरी तिनकरि सेवित, हे नाथ! मुनिसुव्रतनाथ के मुक्ति गये पीछे तुम केवली भए, तुम समान संसारका तारक कौन होयगा। तब तिनने कही देशभूषण कुलभूषण होवेंगे। केवलज्ञान अर केवलदर्शनके धरणहारे, जगतविषै सार, जिनका उपदेश पायकर लोक संसार समुद्रकूं तिरेंगे। ये वचन अग्निप्रभने सुने सो सुनकर अपने स्थानक गया। इन दिननिमें कुअवधि कर हमकूं या

पर्वतविषै तिष्ठे जान 'अनन्तवीर्य केवलीका वचन मिथ्या करूं' ऐसा गर्वधर पूर्व वैरकर उपद्रव करनेकूं आया। सो तुमकूं बलभद्र नारायण जान भयकर भाज गया। हे राम! तुम चरम शरीरी, तद्भव मोक्षगामी बलभद्र हो। अर लक्ष्मण नारायण है। ता सहित तुमने सेवा करी अर हमारे घातिया कर्मके क्षयसे केवलज्ञान उपज्या। या प्रकार प्राणीनिके बैरका कारण सब वैरानुबन्ध है, ऐसा जानकर जीवनिके पूर्वभव श्रवणकर, हे प्राणी हो! रागद्वेष तज, निश्चल होवो। ऐसे महापवित्र केवलीके वचन सुन सुर नर असुर बारम्बार नमस्कार करते भये, अर भवदुःखत डरे। अर गरुडेन्द्र परम हर्षित होय केवलीके चरणारविंदकूं नमस्कार कर महा स्नेहकी दृष्टि विस्तारता, लहलहाट कर हैं मणि कुण्डल जाके, रघुवंशमें उद्योत करणहारे जे राम तिनसो कहता भया-हे भव्योत्तम! तुम मुनिनिकी भक्ति करी सो मैं अति प्रसन्न भया। ये मेरे पूर्व भवके पुत्र हैं जो तुम मांगो सो मैं देहुं। तब श्रीरघुनाथ क्षणएक विचार कर बोले तुम देवनिके स्वामी हो, कभी हमपै आपदा परै तो चितारियो। साधुनिकूं सेवाके प्रसादसे यह फल भया जो तुम सारिखोसे मिलाप भया। तब गरुडेन्द्रने कही तुम्हारा वचन मैं प्रमाण किया। जब तुमकूं कार्य पडेगा तब मैं तिहारे निकट ही हूं। ऐसा कहा तब अनेक देव मेघकी ध्वनि समान वादित्रनिके नाद करते भये। साधुनिके पूर्वभव सुन कईएक उत्तम मनुष्य मुनि भये, कईएक श्रावकके व्रत धारते भए। वे देशभूषण कुलभूषण केवली, जगत पूज्य, सब संसारके दुःखसे रहित, नगर ग्राम पर्वतादि सब स्थानविषै विहार कर, धर्मका उपदेश देते भये। यह दोऊ केवलिनिके पूर्वभवका चरित्र जे निर्मल स्वभावके धारक भव्यजीव श्रवण करैं वे सूर्य समान तेजस्वी पापरूप तिमिरकूं शीघ्र ही हरैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै देशभूषण कुलभूषण केवलीका व्याख्यान वर्णन करनेवाला उनतालीसवा पर्व पूर्ण भया॥ ३९॥

अथानन्तर केवलीके मुखत रामचन्द्रको चरम शरीरी कहिये तद्भव मोक्षगामी सुनकर सकल राजा जय जय शब्द कहकर प्रणाम करते भये। अर वशस्थलपुरका राजा सुरप्रभ महा निर्मलचित्त राम लक्ष्मण सीताकी भक्ति करता भया। महिलनिके शिखरकी कातिकरि उज्ज्वल भया ह आकाश जहा, ऐसा जो नगर वहा चलनेकी राजा प्राथना करी, परन्तु रामने न मानी। वशगिरिके शिखर हिमाचलके शिखर समान सुन्दर, जहा नलिनी वनविष महारमणीक विस्तीर्ण शिला, तहा आय हस समान विराजे। कसा ह वन? नानाप्रकारके वक्ष अर लतानि करि पूर्ण, अर नानाप्रकारके पक्षी कर ह नाद जहा, सुगन्ध पवन चाल ह, भाति भातिके फल पुष्प तिनकरि शोभित, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे ह, स्थानक अति सुन्दर सव ऋतुकी शोभा जहा बन रही ह, शुद्ध आरसीके तल समान मनोग्य भूमि, पाच वर्णके रत्ननिकरि शोभित, जहा कुद मौलसिरी मालती स्थलकमल, जहा अशोक वक्ष नागवक्ष इत्यादि अनेक प्रकारके सुगन्ध वक्ष फूल रहे ह, तिनके मनोहर पल्लव लहलहाट कर ह। तहा राजाकी आज्ञाकर महा भक्तिवन्त जे पुरुष तिनने श्रीरामकू विराजनेके निमित्त वस्त्रनिके महा मनोहर मण्डप बनाय, सवक जन महा चतुर सदा सावधान अति आनन्दक करणहारे, मगलरूप बाणीके बोलनहारे, स्वामीकी भक्तिविष तत्पर, तिनने बहुत तरहके चौडे ऊचे वस्त्रनिके मण्डप बनाये। नानाप्रकारके चित्राम ह जिनमें, अर जिन पर ध्वजा फरहर ह, मोतिनकी माला जिनके लटके ह, क्षुद्र घटिकानिके समूह कर युक्त, अर जहा मणिनिकी झालर लूम्ब रही ह, महा ददीप्यमान सूर्यकीसी किरण धर, अर पथ्वी पर पूर्ण कलश थापे ह, अर छत्र चमर सिंहासनादि राज चिह्न तथा सव सामग्री धर ह, अनेक मगलद्रव्य ह। ऐसे सुन्दर स्थलविष सुखसो तिष्ठ ह। जहा जहा रघुनाथ पाव धरें तहा तहा पथ्वी पर राजा अनेक सेवा कर। शय्या आसन, मणि सुवर्णके नानाप्रकारके उपकरण, अर इलायची, लवग, ताम्बूल, मेवा, मिष्टान्न तथा श्रेष्ठ वस्त्र, अद्भुत आभूषण, अर महा सुगन्ध, नानाप्रकारके भोजन दधि, दुग्ध, घत, भाति भाति अन्न इत्यादि अनुपम वस्तु लावें। या भाति

सब ठौर सब जन श्रीरामकू पूजे। वशगिरि पर श्रीराम लक्ष्मण सीताके रहिवेको मण्डप रचे। तिनमें किसी ठौर गीत, कहीं नत्य, कहीं वादित्र बाज हैं। कहू सुकतकी कथा होय है अर नत्यकारिणी ऐसा नत्य कर मानो देवागनाही ह। कहीं दान बट ह। ऐसे मदिर बनाए जिनका कौन वणन करसक, जहा सब सामग्री पूण, जो याचक आव सो विमुख न जाय। दोनो भाई सब आभरणनिकरि युक्त, सुदर वस्त्र धरें मनवाछित दानके करणहारे, महा यशकर मण्डित, अर सीता परम सौभाग्यकी धरणहारी, पापके प्रसगसू रहित, शास्त्रोक्त रीतिकर रहे। ताकी महिमा कहातक कहिए। अर वशगिरिविष श्रीरामचद्रने जिनेश्वर देवके हजारो अदभुत चत्यालय बनवाये। महावृढ है स्तभ जिनके, योग्य ह लम्बाई चौडाई ऊचाई जिनकी, अर सुन्दर झरोखनिकरि शोभित, तोरण सहित है द्वार जिनके, कोट अर खाई कर मडित, सुन्दर ध्वजानिकरि शोभित, बदनाके करणहारे भव्यजीव तिनके मनोहर शब्द सयक्त, मदग, वीणा, बासुरी, जालरी, झाझ, मजीरा, शख, भेरी इत्यादि वादित्रनिके शब्दकर शोभायमान, निरतर आरम्भए ह महा उत्सव जहा। ऐसे रामके रचे रमणीक जिनमदिर, तिनकी पक्ति शोभती भई। तहा पच वणके प्रतिबिब जिनेद्र सब लक्षणनि कर सयुक्त, सब लोकनिकरि पूज्य विराजते भए। एक दिन श्रीराम कमललोचन लक्ष्मणसू कहते भए—हे भाई! यहा अपने ताई दिन बहुत बीते, अर सुखसू या गिरि पर रहे, श्रीजिनेश्वरके चत्यालय बनायवेकर पथ्वी में निमल कीर्ति भई, अर या वशस्थलपुरके राजाने अपनी बहुत सेवा करी, अपने मन बहुत प्रसन्न किए। अब यहा ही रहें तो कायकी सिद्धि नाहीं, अर इन भोगनिकर मेरा मन प्रसन्न नाहीं। ये भोग रोगके समान ह—ऐसा ही जानता हू, तथापि ये भोगनिके समूह मोहि क्षणमात्र नाहीं छोडे ह। सो जबतक सयमका उदय नाहीं तबतक ये विना यत्न आय प्राप्त होय ह। या भवविष जो कम यह प्राणी करै ह ताका फल परभवमें भोगव ह। अर पूव उपार्जे के कम तिनका फल वतमान कालविष भोग ह। या स्थलमें निवास करते अपने सुख सम्पदा ह, परत जे दिन जाय ह वे फेर न आव। नदीका

वेग, अर आयुके दिन अर यौवन गए वे फेर न आवे। ता कणरवा नाम नदीके समीप दडक बन सुनिये है। वहा भूमिगोचरनिकी गम्यता नाहीं, अर वहा भरतकी आज्ञाकाहू प्रवेश नाहीं। वहा समुद्र के तट एक स्थान बनाय निवास करेंगे। यह रामकी आज्ञा सुन लक्ष्मणने विनती करी—हे नाथ ! आप जो आज्ञा करोगे सोई होयगा। ऐसा विचार दोऊ वीर महाधीर इन्द्रसारिखे भोग भोगि वश गिरित सीता सहित चाले। राजा सरप्रभ वशस्थलपुरका पति लार चाल्या सो दूर तक गया। आप विदा किया सो मुश्किलसे पीछे बाहुड, महा शोकवत अपने नगरमें आया। श्रीरामका विरह कौन कोनको शोकवत न कर ? गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह है—हे राजन ! वह वशगिरि बडा पवत, जहा अनेक धातु सो रामचन्द्रने जिनमदिरकी पक्ति कर महा शोभायमान किया। कसे ह जिनमन्दिर ? दिशानिके समूहकू अपनी काति करि प्रकाशरूप कर ह। ता गिरिपर श्रीरामने परम सुन्दर जिन-मन्दिर बनाए, सो वशगिरि रामगिरि कहाया, या भाति पथ्वीपर प्रसिद्ध भया। रवि समान ह प्रभा जाकी।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष रामगिरिका वणन करनेवाला चालीसवा पव पूण भया ॥ ॥

अथानन्तर राजा अरण्यके पोता दशरथके पुत्र राम लक्ष्मण सीतासहित दक्षिण दिशाके समुद्रकू चाले। कसे ह दोऊ भाई ? महा सुखके भोक्ता, नगर ग्राम तिनकरि भरे जे अनेक देश तिनको उलघ कर महा वनविष प्रवेश करते भए। जहा अनेक मगनिके समूह ह, अर माग सूझ नाहीं, अर उत्तम पुरुषनिकी बस्ती नाहीं। जहा विषम स्थानक सो भील भी विचर न सक, नानाप्रकार के वृक्ष अर बेल तिनकर भरया, महा विषम अति अधकाररूप, जहा पवतनिकी गुफा, गम्भीर निझरने झर है, ता वन विष जानकी प्रसगत धीरे धीरे एक एक कोस रोज चाले। दोऊ भाई निभय अनेक क्रीडाके करणहारे

नरमदा नदी पहुंचे। जाके तट महारमणीक प्रचुर तणनिके समूह अर समानता धरे, महाछायाकारी अनेक वक्ष फल पुष्पादिकरि शोभित। अर जाके समीप पवत, एसे स्थानकू देख दोऊ भाई वार्ता करते भए। यह वन अति सुन्दर अर नदी सुन्दर ऐसा कहकर रमणीक वृक्षकी छायाविष सीतासहित तिष्ठे। क्षणएक तिष्ठकर तहाके रमणीक स्थानक निरखकर जलक्रीडा करते भए। बहुरि महामिष्ट आरोग्य पक्व फल फूलनि के आहार बनाये, सुखकी ह कथा जिनके, तहा रसोईके उपकरण अर बासण माटीके अर बासनिके नानाप्रकार तत्काल बनाय, महास्वादिष्ट सुन्दर सुगन्ध आहार, वनके धान सीताने तयार किए। भोजनके समय दोऊ वीर मुनिके आयवेके अभिलाषी द्वारापेक्षणको खडे। ता समय दो चारण मुनि आए—सुगुप्ति अर गुप्ति है नाम जिनके, ज्योतिपटलकर सयुक्त है शरीर जिनका, अर सुन्दर ह दशन जिनका, मति श्रुति अवधि तीन ज्ञान विराजमान, महाव्रतके धारक, परम तपस्वी, सकल वस्तु की अभिलाषारहित, निमल ह चित्त जिनके, मासोपवासी, महाधीर वीर, शुभचेष्टाके धरणहारे, नेत्रनिकू आनन्दके करता, शास्त्रोक्त आचारकर सयुक्त ह शरीर जिनका, सो आहारकू आए। सो दूरत सीताने देखे। तब महाहषके भरे ह नेत्र जाके, अर रोमाचकर सयुक्त ह शरीर जाका, पतिसो कहती भई, हे नाथ! हे नर श्रेष्ठ! देखहु! देखहु! तपकर दुबल शरीर दिगम्बर कल्याणरूप चारण युगल आए। तब राम कही—हे प्रिये! हे पडिते! सुन्दर मूर्ति! वे साधु कहा ह? हे रूप आभरण की धरणहारी? धन्य ह भाग्य तेरे, तूने निर्ग्रंथ युगल देखे, जिनके दशनत जन्म जन्मके पाप जाये भक्तिवत प्राणीके परम कल्याण होय। जब या भाति रामने कही तब सीता कहती भई—ये आए, ये आए। तब ही दोनो मुनि रामके दृष्टि पडे। जीवदयाके पालक, ईर्यासमिति सहित, समाधानरूप है मन जिनके। तब श्रीरामने सीता सहित सन्मुख जाय नमस्कारकर महाभक्तियुक्त श्रद्धा सहित मुनि-निकू आहार दिया। आरणी भैसोका अर वनकी गायोका दुग्ध, अर छुहारे गिरी दाख नानाप्रकार के वनके धान्य, सुन्दर घी, मिष्टान्न, इत्यादि मनोहर वस्तु विधिपूवक तिनकरि मुनिनकू पारणा करा

वते भए। तें मुनि भोजनके स्वादके लोलुपतासू रहित, निरन्तराय आहार करते भए। जब रामने अपनी स्त्री सहित भक्तिकर आहार दिया, तब पचाश्चय भए, रत्ननिकी वर्षा, पुष्पवृष्टि, शीतल मद सुगध पवन, अर दुदुभी बाजे, जयजयकार शब्द। सो जा समय रामके मुनिनिका आहार भया ता समय वनविष एक गृध्र पक्षी अपनी इच्छाकर वृक्षपर तिष्ठ था। सो अतिशयकर सयुक्त मनिनकू देख अपने पूवभव जानता भया कि कोई एकभव पहिले म मनुष्य हुता, प्रमादी अविवेककर जन्म निष्फल खोया, तप सयम न किया, धिक्कार मो मूढबुद्धिकू। अब म पापके उदयकरि खोटी योनिविष आय पड्या, कहा उपाय करू? मोहि मनुष्य भवविष पापी जीवनि भरमाया। वे कहिवेके मित्र अर महाशत्रु, सो उनके सगमें धमरत्न तज्या, अर गुरुनिके वचन उलघ महापाप आचरया। म मोहकर अध, अज्ञान तिमिरकर धम न पहिचान्या। अब अपने कम चितार उरविष जलू हू। बहुत चितवन कर कहा? दुखके निवारनेके अथ इन साधुनिका शरण गहू, ये सवसुखके दाता, इनसू मेरे परम अथकी प्राप्ति निश्चय सेती होयगी। या भाति पूवभवके चितारनेत प्रथम तो परम शोककू प्राप्त भया हुता। बहुरि साधुनिके दशनत तत्काल परम हर्षित होय, अपनी दोऊ पाख हलाय, आसुनिकर भरे है नेत्र जाके, महा विनयकर मडित पक्षी वृक्षके अग्रभागत भूमिविष पड्या। सो महामोटा पक्षी ताके पडनेके शब्दकरि हाथी अर सिंहादि वनके जीव भयकर भाग गए, अर सीता भी आकुलचित्त भई। देखो यह ढीठ पक्षी मुनिनिके चरणनिके कहासू आय पड्या? कठोर शब्दकर घना ही निवारया, परन्तु वह पक्षी मुनिनिके चरणविष धोवनविषै आय पड्या। चरणोदकके प्रभाव कर क्षण-मात्रविषै ताका शरीर रत्नोकी राशि समान नानाप्रकारके तेजकर मण्डित होय गया, पाख तो स्वण की प्रभाको धरते भए, दोऊ पाव वडूयमणिसमान होय गए, अर देह नानाप्रकारके तेजकर रत्ननिकी छविको धरता भया, अर चूच मूगासमान आरक्त भई। तब यह पक्षी आपकू अर रूपकू देख परम हषकू प्राप्त भया, मधुरनादकर नृत्य करवेकू उद्यमी भया। देवनिके दुन्दुभी समान ह नाद जाका,

नेत्रनितैं आनन्दके अश्रुपात डारता शोभता भया। जैसा मोर मेहके आगमनविषैं नृत्य करै तैसा मुनि के आगे नृत्य करता भया। महा मुनि विधिपूर्वक पारणाकर वैडूर्य मणिसमान शिलापर विराजे। पद्मराग मणिसमान है नेत्र जाके, ऐसा पक्षी पांख संकोच मुनिनिके पांओंको प्रणामकर आगे तिष्ठा। तब श्रीराम फूले कमल समान हैं नेत्र जिनके, पक्षीकूं प्रकाशरूप देख आप परम आश्चर्यकूं प्राप्त भए। साधुनिके चरणारविंदको नमस्कारकर पूछते भए। कैसे हैं साधु? अठाईस मूलगुण, चौरासी लाख उत्तरगुण, वेही हैं आभूषण जिनके। बारम्बार पक्षीकी ओर निरख राम मुनिसूं पूछते भए— हे भगवन! यह पक्षी प्रथम अवस्थाविषै महाविरूप अंग हुता सो क्षणमात्रविषै सुवर्ण अर रत्ननिके समूहकी छवि धरता भया। यह अशुचि सर्व मांसका आहारी दुष्ट गृध्रपक्षी आपके चरणनिके निकट तिष्ठकर महाशांत भया सो कौन कारण? तब सुगुप्ति नामा मुनि कहते भए—हे राजन! पूर्वे या स्थल विषै दंडकनामा देश हुता, जहां अनेक ग्राम नगर पट्टण संवाहण मटंब घोष खेट करवट द्रोणमुख हुते। बाड़िकरयुक्त सो ग्राम, कोट खाई दरवाजेनिकर मंडित सो नगर, अर जहां रत्ननिकी खान सो पट्टण, पर्वतके ऊपर सो संवाहन, अर जाहि पांचसौ ग्राम लागे सो मटंब, अर गायनिके निवास गुवालनिके आवास सो घोष, अर जाके आगे नदी सो खेट, अर जाके पीछे पर्वत सो करवट, अर समुद्रके समीप सो द्रोणमुख, इत्यादि अनेक रचनाकार शोभित। तहां कर्णकुण्डल नामा नगर महामनोहर, ताविषै या पक्षी का जीव दंडकनामा राजा हुता, महाप्रतापी उदय धरे, प्रचंड पराक्रम संयुक्त, भग्न किये हैं शत्रुरूप कटक जान, महामानी, बडी सेनाका स्वामी। सो या मूढने अधर्मकी श्रद्धाकर पापरूप मिथ्या शास्त्र सेया, जैसे कोई घृतका अर्थी जलकूं मथे। याकी स्त्री दंडिनिकी सेवक हुती तिनसों अति अनुरागिणी। सो वाके संगकर यह भी ताके मार्गकूं धरता भया। स्त्रिनिकी वश हुवा पुरुष कहा २ न करै? एक दिवस यह नगरके बाहिर निकस्या सो वनविषै कायोत्सर्ग धरे ध्यानारूढ मुनि देखे। तब या निर्दईने मुनिके कंठविषै मूवा सर्प डारथा। कैसा हुता यह? पाषाण समान कठोर हुता चित्त जाका। सो

मुनि ध्यान धरे मौनसू तिष्ठे, अर यह प्रतिज्ञा करी, जो लग मर कठत दूर न कर तौलग मैं हलन चलन नाहीं करू, योगरूप ही रहू। सो काहूने सप दूर न किया, मुनि खडे ही रहे। बहुरि कईएक दिननिविष राजा ताही माग गया। ताही समय काहू भले मनुष्यने साप काढ्या, अर मुनिके पास बठ्या हुता सो राजा वा मनुष्यसू पूछा जो मुनिके कठत साप कौन काढ्या, अर कब काढ्या ? तब वाने कही—हे नरेन्द्र ! किसी नरकगामीने ध्यानारूढ मुनिके कठविष मूवा सप डारया हुता सो सपके सयोगसे साधुका शरीर अतिखेद खिन्न भया। इनके तो कोई उपाय नहीं, आज सव मने काढ्या ह। तब राजा मुनिको शातस्वरूप कषायरहित जान प्रणामकर अपने स्थानक गया। उन दिनसे मुनियो की भक्तिविष अनुरागी भया और किसीकू उपद्रव न करे। तब यह वत्तात राणीने दडियोके मुखसे सुना कि राजा जिनधमका अनुरागी भया। तब या पापिनीने क्रोधकर मुनियोके मारनेका उपाय किया। जे दुष्टजीव ह वे अपने जीनेका भी यत्न तज पराया अहित करें। सो पापिनीने अपने गुरुको कहा—तुम निग्रथ मुनिका रूपकर मेरे महलमे आवो और विकार चेष्टा करहु। तब याने याही भाति करी। सो राजा यह वत्तात जानकर मुनियोसे कोप भया और मत्री आदि दुष्ट मिथ्यादष्टि सदा मुनियोकी निन्दा ही करते। अन्य भी और जे क्रूरकर्मी मुनियोके अहितु थे तिन्होने राजाकू भरमाया। सो पापी राजा मुनियोको घानीविष पेलिवे की आज्ञा करता भया। आश्चयसहित सव मुनि घानीमे पेले। एक साधु बहिर्भूमि गया पीछे आवता था सो किसी दयावानने कही—अनेक मुनि पापी राजाने यत्रमें पेले ह, तुम भाग जावो। तुम्हारा शरीर धर्मका साधन ह सो अपने शरीरकी रक्षा करहु। तब यह समाचार सुन सघके मरणके शोककर चुभी ह दुखरूप शिला जाके, क्षणएक बजके स्तम्भसमान निश्चल होय रहा, बहुरि न सहा जाय ऐसा क्लेश रूप भया, सो मुनिरूप जो पवत उसकी समभावरूप गुफासे क्रोधरूप केसरी सिंह निकस्या। जस आरक्त अशोकवक्ष होय तैस मुनिके आरक्त नेत्र भए। तेजकर आकाश सध्याके रगसमान होय गया। कोप कर तप्तायमान जो मुनि ताके सव शरीरविष पसेवकी

बूंद प्रकट भई । फिर कालाग्नि समान प्रज्वलित अग्निपूतला निकस्या, सो धरती आकाश अग्निरूप होय गए, लोक हाहाकार करते मरणकूं प्राप्त भए । जस बासोका बन बलै तस देश भस्महोय गया, न राजा, न अंतःपुर, न पुर, न ग्राम, न पर्वत न नदी, न बन, न कोई प्राणी, कुछ भी देशमें न बच्या । महा ज्ञान वैराग्यके योगकर बहुत दिनोमें मुनिने समभावरूप जो धन उपार्ज्या हुता सो तत्काल क्रोधरूप रिपुने हरा । दंडक देशका दंडक राजा पापके प्रभावकर प्रलय भया और देश प्रलय भया, सो अब यह दंडक बन कहावे है । कईएक दिन तो यहां तृणभी न उपज्या । फिर घने काल-विषै मुनियोका बिहार भया, तिनके प्रभावकरि वृक्षादिक भए । यह वन देवोको भी भयंकर है, विद्या-धरोकी क्या बात ? सिंह व्याघ्र अष्टापदादि अनेक जीवोसे भरचा और नानाप्रकारके पक्षियोकर शब्दरूप है, और अनेक प्रकारके धान्यसे पूर्ण है । वह राजा दंडक महा प्रबल शक्तिका धारक हुता सो अपराधकर नरक तिर्यंचगतिविषै बहुत काल भ्रमणकर यह गृध पक्षी भया । अब इसके पापकर्मकी निवृत्तिभई, हमकूं देख पूर्वभव स्मरण भया । ऐसा जान जिनआज्ञा मान संसार शरीर भोगते विरक्त होय, धर्मविषै सावधान होना । परजीवोका जो दृष्टांत है सो अपनी शांतभावकी उत्पत्तिका कारण है । या पक्षीकूं अपनी विपरीत चेष्टा पूर्वभवकी याद आई है सो कम्पायमान है । पक्षीपर दयालु होय । मुनि कहते भए—हे भव्य ! अब तू भय मत कर, जा समय जसी होनी होय, सो होय रुदन काहेको करै है, होनहारके मेटवे समर्थ कोऊ नाहीं । अब तू विश्रामकूं पाय सुखी होय, पश्चात्ताप तज । देख कहां यह वन और कहां सीतासहित श्रीरामका आवना और कहां हमारा वनचर्याका अवग्रह जो वनमें श्रावकके आहार मिलेगा तो लेवेंगे, और कहां तेरा हमको देख प्रतिबोध होना ? कर्मोकी गति विचित्र है, कर्मोंको विचित्रतासे जगतकी विचित्रता है । हमने जो अनुभया और सुना देखा है सो कहे हैं—पक्षीके प्रतिबोधवेके अर्थ रामका अभिप्राय जान सुगुप्ति मुनि अपना और गुप्ति मुनि दूजा दोनोका वैराग्य का कारण कहते भए । एक वाराणसी नगरी वहां अचल नामा राजा विख्यात उसके राणी गिरदेवी

गुणरूप रत्नोकर शोभित । उसके एक दिन त्रिगुप्तिनामा मुनि शुभ चेष्टाके धरणहारे आहारके अर्थ आए । सो राणीने परमश्रद्धाकर तिनकू विधिपूर्वक आहार दिया । जब निरंतराय आहार हो चुका तब राणीने मुनिकू पूछी–हे नाथ! यह मेरा गृहवास सफल होयगा या नहीं । भावार्थ–मेरे पुत्र होगा या नहीं । तब मुनि वचनगुप्तिभेद (तोडकर) इसके संदेह निवारणके अर्थ आज्ञा करी । तेरे दोय पुत्र विवेकी होयगे । सो हम दोय पुत्र त्रिगुप्ति मुनिकी आज्ञा भए पीछे भए, इसलिए सुगुप्ति और गुप्ति हमारे नाम माता पिताने राखे सो हम दोनो राजकुमार लक्ष्मीकर मंडित सवकलाके पारगामी लोकोके प्यारे नाना प्रकारकी क्रीडा कर रमते घरमें तिष्ठे ।

अथानन्तर एक और वृत्तांत भया । गन्धवती नामा नगरी, वहाके राजाका पुरोहित सोम, उसके दोय पुत्र एक सुकेतु दूजा अग्निकेतु, तिनविषै अतिप्रीतिसो सुकेतुका विवाह भया । विवाहकर यह चिन्ता भई कि कभी इस स्त्रीके योगकर हम दोनो भाइयोमें जुदायगी न होय । फिर शुभकर्मके योगसे सुकेतु प्रतिबोध होय अनन्तवीर्य स्वामीके समीप मुनि भया और लहुरा भाई अग्निकेतु भाईके वियोगकर अत्यन्त दुखी होय वाराणसीविषै उग्रतापस भया । तब बडाभाई सुकेतु जो मुनि भया हुता, सो छोटे भाईकू तापस भया जान सबोधिबेके अर्थ आयवेका उद्यमी भया, गुरुपै आज्ञा मागी । तब गुरुने कहा तू भाईको सबोधा चाहै है तो यह वृत्तांत सुन । तब इसने कहा–हे नाथ! वृत्तांत क्या ? तब गुरुने कही–वह तुमसो मत पक्षका वाद करेगा । और तुम्हारे वादके समय एक कन्या गंगाके तीर तीन स्त्रियो सहित आवेगी । गौर है वर्ण जाका, नानाप्रकारके वस्त्र पहिरें । दिनके पिछले पहिर आवेगी । तो इन चिह्नो कर जान तू भाईसे कहियो–इस कन्याका कहा शुभ अशुभ होनहार है सो कहो, तब वह विलखा होय तोहू कहेगा, मैं तो न जानू तुम जानो हो तो कहो । तब तू कहियो इस पुरविषै एक प्रवर नामा श्रेष्ठी धनवंत उसकी यह रुचिरा नामा पुत्री है । सो आजतै तीसरे दिन मरणकर कवर ग्रामविषै विलास नामा कन्याके पिताका मामा उसके छेली होयगी, ताहि ल्याली मारेगा, सो मरकर गाडर होयगी, फिर

भस, भससे उसी विलासके विधुरा नामा पुत्री होयगी । यह वार्ता गुरु कही, तब सुकेतु सुनकर गुरु कू प्रणामकर तापसीनिके आश्रम आया । जा भाति गुरु कही हुती ताही भाति तापससो कही और ताही भाति भई । वह विधुरा नामा विलासकी पुत्रीकू प्रवर नामा श्रेष्ठी परणे लाग्या, तब अग्नि-केतु कही यह तेरी रुचिरा नामा पुत्री सो मरकर अजा गाडर भस होय तेरे मामाके पुत्री भई, अब तू याहि परन सो उचित नाहीं और विलासकू भी सब वत्तात कहा, कन्याके पूवभव कहे, सो सुनकर कन्याकू जातिस्मरण भया, कुटुम्बसे मोह तज सब सभाकू कहती भई—यह प्रवर मेरा पूवभवका पिता ह सो ऐसा कह आर्यिका भई और अग्निकेत तापस मुनि भया । यह वत्तात सुनकर हम दोनो भाइयो ने महा वराग्यरूप होय अनन्तवीयस्वामीके निकट जनेन्द्रव्रत अगीकार किये । मोहके उदयकर प्राणियो के भव वनके भटकावनहारे अनेक अनाचार होय ह । सदगुरुके प्रभावकर अनाचारका परिहार होय ह । ससार असार ह, मातापिता बाधव मित्र स्त्री सतानादिक तथा सुख दुख ही विनश्वर ह । एसा सुन कर पक्षी भवदुखसे भयभीत भया धमग्रहणकी वाच्छा कर वारम्बार शब्द करता भया । तब गुरु कही हे भद्र ! तू भय मत कर श्रावकके व्रत लवो, जाकरि फिर दुखकी परम्परा न पाव, अब तू शातभाव धर काहू प्राणीकू पीडा मत कर । अहिसा व्रत धर, मषा वाणी तज, सत्यव्रत आदरो परवस्तुका ग्रहण तज, परदारा तज तथा सवथा ब्रह्मचय भज । तष्णा तज सन्तोष भज । रात्रि भोजनका परिहार कर अभक्ष आहारका परित्याग कर । उत्तमचेष्टाका धारक होहु और त्रिकाल सध्याविष जिनेन्द्रका ध्यान धरहु । हे सुबुद्धि ! उपवासादि तपकर नानाप्रकारके नियम अगीकार कर । प्रमाद रहित होय इन्द्रिय जीत साधुवोकी भक्तिकर, देव अरहत गुरु निग्रन्थ, दयामयी धम निश्चयकर । या भाति मुनिने आज्ञा करी तब पक्षी बारम्बार नमस्कारकर मुनिके निकट श्रावकके व्रत धरता भया । सीताने जानी यह उत्तम श्रावक भया तब हर्षित होय अपने हाथसे बहुत लडाया । ताहि विश्वास उपजाय दोऊ मुनि कहते भये—यह पक्षी तपस्वी शात चित्त भया कहा जायगा ? गहन वनविष अनेक

क्रूर जीव हैं या सम्यग्दृष्टि पक्षीकी तुम्हें सदा काल रक्षा करनी। यह गुरुके वचन सुन, सीता पक्षीके पालिवेरूप है चित्त जाका, अनुग्रहकर राख्या। राजा जनककी पुत्री करकमलकर विश्वासती सती कैसी शोभती भई? जैसे गरुडकी माता गरुडकूं पालती शोभै। अर श्रीराम लक्ष्मण पक्षीको जिन धर्मी जान अतिधर्मानुराग करते भये। अर मुनिनिकी स्तुतिकर नमस्कार करते भये। दोनो चारण मुनि आकाशके मार्ग गए, सो जाते कैसे शोभते भये? मानो धर्मरूप समुद्रकी कल्लोल ही हैं। अर एक वनका हाथी मदोन्मत्त वनमें उपद्रव करता भया। ताकूं लक्ष्मण वशकर तापर चढ रामपै आए। सो गजराज गिरिराज सारिखा ताहि देख राम प्रसन्न भए। अर वह ज्ञानी पक्षी मुनिकी आज्ञा प्रमाण यथाविधि अणुव्रत पालता भया। महा भाग्यके योगते राम लक्ष्मण सीताका ताने समीप पाया। इनके लार पृथ्वीविषै बिहार करै। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं। हे राजन! धर्मका माहात्म्य देखो, याही जन्मविषै वह विरूप पक्षी अदभुत रूप होय गया प्रथम अवस्थाविषै अनेक मांसका आहारी, दुर्गन्ध निंद्यपक्षी, सुगन्धके भरे कंचन कलश समान, महासुगन्ध सुन्दर शरीर होय गया। कहूं इक अग्निकी शिखासमान प्रकाशमान, अर कहूंइक वैडूर्यमणि समान, कहूंइक स्वर्ण समान, कहूंइक हरितमणिकी प्रभाकूं धरै शोभता भया। राम लक्ष्मणके समीप वह सुन्दर पक्षी श्रावकके व्रत धारै महास्वाद संयुक्त भोजन करता भया। महाभाग्य पक्षीके जो श्रीरामकी संगति पाई। रामके अनुग्रहतै अनेक चर्चाधारै दृढव्रती महाश्रद्धानी भया। श्रीराम ताहि अति लडावैं, चन्दनकर चर्चित है अंग जाका, स्वर्णकी किंकिणी कर मण्डित रत्नकी किरणनिकर शोभित है शरीर जाका, ताके शरीरविषै रत्न हेमकर उपजी किरणनिकी जटा, तातै याका नाम श्रीरामने जटायु धरया। राम लक्ष्मण सीताकूं यह अति प्रिय, जीती है हंसकी चाल जाने, महा सुन्दर मनोहर चेष्टाकूं धरै, रामका मन मोहता भया। ता वनके और जे पक्षी वे देखकर आश्चर्यकूं प्राप्त भए। यह व्रती तीनो सन्ध्याविषै सीताके साथ भक्तिकर नम्रीभूत हुआ अरहन्त सिद्ध साधुनिकी बन्दना करै। महा दयावान

जानकी जटायु पक्षी पर अतिकपाकर सावधान भई, सदा याकी रक्षाकर । कसी ह जानकी ? जिन धमत ह अनुराग जाका । वह पक्षी महा शुद्ध अमत समान फल, अर महा पवित्र, सोधा अन्न, निमल छाना जल इत्यादि शुभ वस्तुका आहार करता भया । जनककी पुत्री सीता ताल बजावे अर राम लक्ष्मण दोऊ भाई तालके अनुसार तान लावे तब यह जटायु पक्षी रविसमान ह काति जाकी परम हर्षित भया ताल अर तानके अनुसार नत्य कर ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष जटायुका याख्यान वणन करनेवाला इकतालीसवाँ पव पूण भया ।। १ ।।

अथानन्तर पात्र दानके प्रभावकर राम लक्ष्मण सीता या लोकमें रत्नहेमादि सम्पदाकर युक्त भए । एक सुवणमई रत्नजडित, अनेक रचनाकर सुन्दर ताके मनोहर स्तम्भ, रमणीक वाड, बीच विराजवेका सुन्दर स्थानक, अर जाके मोतिनकी माला लूम्बे, सुन्दर झालरी, सुगन्ध चदन कपूरादि कर मडित, जामें सेज आसन वादित्र सव सुगन्ध कर पूरित ऐसा एक एक विमान समान अदभुत रथ बनाया, जाके चार हाथी जुत, ताविष बठे राम लक्ष्मण सीता जटायु सहित रमणीक वनविष विचरें, जिनको काहूका भय नाहीं, काहूकी घात नाहीं । काहू ठौर एक दिन, काहू ठौर पन्द्रह दिन, काहू ठौर एक मास, मनवाछित क्रीडा कर । यहा निवास कर अक यहा निवास कर, ऐसी ह अभिलाषा जिनके । नवीन शिष्यकी इच्छाकी याई इनकी इच्छा अनेक ठौर विचरती भई । महा निमल जे नीझरने तिनकू निरखते, ऊची नीची जायगा टार समभूमि निरखते, ऊचे वक्षनिकू उलघकर धीरे धीरे आगे गए । अपनी स्वेच्छाकर भमण करते ये धीर वीर सिंह समान निभय दडकवनके मध्य जाय प्राप्त भए । कसा है स्थानक ? कायरनकू भयकर, जहा पवत विचित्र शिखरके धारक, जहा रमणीक नीझरने झरें । जहाते नदी निकस जिनका मोतिनके हारसमान उज्ज्वल जल । जहा अनेक वृक्ष बड,

पीपल, बहेडा, पीलू, सरसी, बडे बडे सरल वक्ष, धवल वक्ष, कदब, तिलक जातिके वक्ष, लोद वक्ष, अशोक, जम्बूवक्ष, पाटल, आम, आवला, अमिली, चम्पा, कण्डीरशालि वक्ष, ताड वक्ष, प्रियगू, सप्तच्छव तमाल, नागवक्ष, नन्दीवक्ष, अर्जुन जातिके वक्ष, पलाशवृक्ष, मलयगिरि चन्दन, केसरि, भोजवक्ष, हिंगोट वक्ष, काला अगर अर सुफेद अगर, कुन्द वक्ष, पदमाक वक्ष, कुरज वक्ष, पारिजात वक्ष, मिजन्या, केतकी, केवडा, महुवा, केदली, खर मदनवक्ष, नीम्बू, खजूर, छुहारे, चारोली, नारगी, विजोरा, दाडिम, नारियल, हरडे, कथ, किरमाला, विदारीकद अगथिया, करज, कटालीकूट, अजमोद कौंच, ककोल, मिच, लवग, इलायची, जायफल, जावित्री, चव्य, चित्रक, सुपारी। ताबूलोकी बेलि रक्तचन्दन, बेत, श्याम लता, मीठासींगी, हरिद्रा अरलू, सहिजडा, कुडा वक्ष, पदमाख पिस्ता, मौलश्री, बीलवक्ष, द्राक्षा, बिदाम, शाल्मलि इत्यादि अनेक जातिके वक्ष, तिनकर शोभित ह, अर स्वयमेव उपजे नानाप्रकारके धान्य, अर महारसके भरे फल अर पौंडे (साठे) इत्यादि अनेक वस्तुनिकर वह वन पूर्ण नानाप्रकार के वक्ष, नानाप्रकारकी बेल, नानाप्रकारके फल फूल तिनकर वन अति सुन्दर, मानो दूजा नन्दनवन ही ह। सो शीतल मन्द सुगन्ध पवन कर कोमल कपोल हालें। सो ऐसा सोह मानो वह वन रामके आइवे कर हर्ष कर नत्य कर ह। अर सुगन्ध पवन कर उठी जो पुष्पकी रज सो इनके अग सू आय लाग, सो मानो अटवी आलिगन ही कर ह। अर भ्रमर गुजार कर ह सो मानो श्रीरामके पधारने कर प्रसन्न भया वन गान ही कर ह। अर महा मनोज्ञ गिरिनके नीझरनिके छाटेनिके उछरिवे के शब्द कर मानो हस ही ह, अर भरुण्ड जातिके पक्षी तथा हस, सारिस, कोयल मयूर, सिचाड, कुरुचि, सूवा, मना, कपोत, भारद्वाज इत्यादि अनेक पक्षिनके ऊँचे शब्द होय रहे ह। सो मानो श्रीराम लक्ष्मण सीताके आइवेका आदर ही कर ह। अर मानो वे पक्षी कोमल वाणीकर ऐसा वचन कह हं कि महाराज भले ही यहा आवो। अर सरोवरनि विषै सफेद श्याम अरुण कमल फूल रहे ह, सो मानो श्रीरामके देखवेकू कौतूहलत कमलरूप नेत्रनिकर देखणेकू प्रवर्त्तै ह। अर फलनिके भारकर

नम्रीभूत जो वृक्ष सो मानो रामकूं नमै है। अर सुगन्ध पवन चालै है सो मानो वह रामके आयवेसूं आनन्दके स्वास लेय है। सो श्रीराम सुमेरुके सौमनसवन समान वनकूं देखकर जानकीसूं कहते भए—कैसी है जानकी? फूले कमल समान है नेत्र जाके। पति कहै है—हे प्रिये! देखो यह वृक्ष बेलनिसूं लिपटे पुष्पनिके गुच्छनिकर मण्डित मानो गृहस्थ समान ही भासै है। अर प्रियंगुकी बेल मौलसरीके वृक्षसूं लगी कैसी शोभै है जैसी जीवदया जिनधर्मसूं एकताकूं धरै सोहै। अर यह माधवीलता पवन कर चलायमान जे पल्लव तिनकर समीपके वृक्षनिको स्पर्शै है। अर हे पतिव्रते! यह वनका हाथी मदकर आलसरूप है नेत्र जाके, सो हथिनीके अनुरागका प्रेर्या कमलनिके वनमें प्रवेश करै हैं, जैसे अविद्या कहिए मिथ्यापरणति ताका प्रेरा अज्ञानी जीव, विषयवासनाविषै प्रवेश करै। कैसा है कमलनिका वन? विकसि रहे जे कमलदल तिनपर भ्रमर गुंजार करै है। अर दृढव्रते! यह इन्द्रनीलमणि समान श्यामवर्ण सर्प बिलतै निकसकर मयूरकूं देख भागकर पीछे बिलमें धसै है, जैसे विवेकतै काम भाग भववनमें छिपै। अर देखो सिंह केशरी महा सिंह साहसरूप चरित्र इस पर्वतकी गुफामें तिष्ठा हुता सो अपने रथका नाद सुन निद्रा तज गुफाके द्वार आय निर्भय तिष्ठै है। अर वह बघेरा क्रूर है मुख जाका, गर्वका भर्या, मांजरे नेत्रनिका धारक, मस्तक पर धरी है पूंछ जाने, नखनिकर वृक्षकी जड़कूं कुचरै। अर मृगनिके समूह दूबके अंकुर तिनके चरिवेकूं चतुर, अपने बालकनिकूं बीचकर मृगीनि सहित गमन करै है। सो नेत्रनिकर दूरहीसो अवलोकन करते अपने ताई दयागत जान निर्भय भए विचरै है। यह मृग मरणसूं कायर सो पापी जीवनिके भयतै सावधान है, तुमकूं देख अति प्रीतिकूं प्राप्त भए विस्तीर्ण नेत्र कर बारम्बार देखै है। तुम्हारेसे नेत्र इनके नाहीं। तातै आश्चर्यकूं प्राप्त भए है। अर यह वन का शूकर अपनी दाढ़नि कर भूमिकूं विदारता, गर्वका भर्या चलाजाय है, लग रह्या है कर्दम जाके। अर हे गजगामिनी! या वनविषै अनेक जातिके गजनिकी घटा विचरै है सो तुम्हारीसी चाल तिनकी नाहीं। तातै तिहारी चाल देख अनुरागी भए हैं। अर ये चीते विचित्र अंग अनेक वर्णकर

शोभ ह, जसे इन्द्रधनुष अनेकवणकर सोह ह । हे कलानिधे ! यह वन अनेक अष्टापदादि क्रूर जीवनि कर भरचा ह, अर अति सघन वक्षनिकर भरचा ह, अर नानाप्रकारके तणनिकर पूण ह । कहीं इक महासुन्दर ह जहा भयरहित मगनिके समूह विचर हैं । कहू इक महा भयकर अतिगहन ह, जसे महा राजनिका राज्य अति सुन्दर ह तथापि दुष्टनिकू भयकर ह । अर कहीं इक महामदोन्मत्त गजराज वक्षनिकू उखाडे ह, जस मानी पुरुष धमरूप वक्षकू उखाडे ह । कहूइक नवीन वक्षनिके महासुगन्ध समूहपर भमर गुजार कर ह जस दातानिके निकट याचक आव । काहू ठौर वन लाल होय रहा है, काहू ठौर श्वेत, काहू ठौर पीत, काहू ठौर हरित, काहू ठौर श्याम, काहू ठौर चचल, काहू ठौर निश्चल, काहू ठौर शब्द सहित, काहू ठौर शब्दरहित,काहू ठौर गहन, काहू ठौर विरले वक्ष, काहू ठौर सुभग, काहू ठौर दुभग, काहू ठौर विरस,काहू ठौर सम,काहू ठौर सरस, काहू ठौर विषम वक्ष, काहू ठौर तरुण, काहू ठौर वक्षवद्धि या भाति नाना विधि भास ह ।

यह दडकवन विचित्र गति लिये ह, जस कामनिका प्रपच विचित्र गति लिये ह । हे जनकसुते ! जे जिनधमकू प्राप्त भए ह ते ही या कमप्रपचत निवत्त होय निर्वाणकू प्राप्त होय ह । जीवदयासमान कोऊ धम नाहीं । जो आप समान परजीवनिकू जान सर्व जीवनिका दया कर, तेई भवसागरसू तिर । यह दण्डक नामा पर्वत, जाके शिखर आकाशसो लग रहे ह ताका नाम यह दण्डक वन कहिए ह । या गिरिके ऊचेशिखर ह अर अनेक धातुकर भरचा ह, जहा अनेक रगनिकर आकाश नानारग होय रहचा ह । पर्वतमें नानाप्रकारकी औषधी ह । कईएक ऐसी जडी ह जे दीपक समान प्रकाशरूप अधकारकू हर, तिनकू पवनका भय नाहीं, पवनमें प्रज्वलित । और या गिरित नीझरने झर ह जिनका सुन्दर शब्द होय ह जिनके छाटोकी बूद मोतिनकी प्रभा कर ह । या गिरिके स्थानक कईएक उज्ज्वल, कईएक नील, कईएक आरक्त दीख ह, अर अत्यन्त सुन्दर ह । सूयकी किरण गिरिके वक्षनिके अग्रभागविष आय पडे ह अर पत्र पवनकरि चचल ह सो अत्यन्त सोह ह । हे सुबुद्धिरूपिणी ! या वनविषै कहूइक

वृक्ष फूलनिके भारकर नमीभूत होय रहे है, अर कहुइक नानारगके जे पुष्प तेई भए पट तिनकर शोभित है, अर कहुइक मधुरशब्द बोलनहारे पक्षी तिनकरि शोभित है। हे प्रिये! या पर्वतत यह क्रौंचरवा नदी जगत प्रसिद्ध निकसी है जैसे जिनराजके मुखतै जिनवाणी निकसै। या नदीका जल ऐसा मिष्ट है जैसी तेरी चेष्टा मिष्ट है। हे सुकेशी! या नदी पवनकरि उठै है लहर, अर किनारेके वृक्षनिके पुष्प जलमें पडे है, सो अति शोभित है। कैसी है नदी? हंसनिके समूह अर झागनिके पटलनि करि अति उज्ज्वल है, अर ऊंचे शब्दकर युक्त है जल जाका, कहूं एक महाविकट पाषाणनिके समूह तिनकर विषम है, अर हजारा ग्राह मगर तिनकरि अति भयकर है, अर कहुइक अति वेगकर चला आवै है जलका जो प्रवाह ताकर दुर्निवार है, जैसे महा मुनिनके तपकी चेष्टा दुर्निवार है। कहु इक शीतल बहै है, कहू इक वेगरूप बहै है, कहुइक काली शिला, कहुइक श्वेतशिला, तिनकी कांतिकर जल नील श्वेत दुरंग होय रहा है, मानो हलधर हरिका स्वरूप ही है। कहुइक रक्तशिलानिके किरणकी समूहकर नदी आरक्त होय रही है जैसे सूर्यके उदयकरि पूर्व दिशा आरक्त होय, अर कहुइक हरित पाषाणके समूहकर जलविषै हरितता भासै है, सो सिवालकी शंका कर पक्षी पीछे होय जा रहे है। हे कांते! यहां कमलनिके समूहविषै मकरंदके लोभी भ्रमर निरतर भ्रमण करै है, अर मकरंदकी सुगंधताकर जल सुगंधमय होय रहा है, अर मकरंदके रंगनिकर जल सुरंग होय रहा है, परन्तु तिहारे शरीरकी सुगंधता समान मकरंदकी सुगन्धि नाहीं, अर तिहारे रंग समान मकरंदका रंग नाहीं, मानो तुम कमलवदनी कहावो हो। सो तिहारे मुखकी सुगंधताही सै कमल सुगन्धित है। अर ये भ्रमर कमलनिकूं तज तिहारे मुखकमलपर गुञ्जार कर रहे है। अर नदीका जल काहू ठौर पाताल समान गम्भीर है मानो तिहारे मनकीसी गम्भीरताकूं धरै है। अर कहू इक नीलकमलनिकर तिहारे नेत्रनिकी छायाकूं धरै है अर यहां अनेक प्रकारके पक्षिनिके समूह नानाप्रकार क्रीडा करै है जैसे राजपुत्र अनेक प्रकारकी क्रीडा करै। हे प्राणप्रिये! या नदीके पुलनिकी बालू रेत अति सुन्दर शोभित है, जहां स्त्री सहित

सुर कहिए विद्याधर अथवा खग कहिए पक्षी आनन्दकरि विचर ह । हे अखडव्रते ! यह नदी अनेक विलासनिकू धर समुद्रकी ओर चली जाय ह, जस उत्तम शीलकी धरणहारी राजानिकी कन्या भर तारके परणवेकू जाय । कसे ह भरतार ? महामनोहर प्रसिद्ध गुणके समूहकू धर शुभ चेष्टा कर युक्त जगतविष विख्यात ह । हे दयारूपिनी ! इस नदीके किनारेके वक्ष फल फूलनिकर युक्त नाना प्रकार पक्षिनिकर मडित जलकी भरी कारीघटा समान सघन शोभाकू धर ह । या भाति श्रीराम च द्रजी अति स्नेहके भरे वचन जनकसुतासू कहते भए, परम विचित्र अथकू धर, तब वह पतिव्रता अति हषके समूह करि भरी पतिसू प्रसन्न भई परम आदरसू कहती भई ।

हे करुणानिधे ! यह नदी निमल जल जाका, रमणीक ह तरग जाविष, हसादिक पक्षिनिके समूह कर सु दर ह पर तु जसा तिहारा चित्त निमल ह तसा नदीका जल निमल नाहीं । अर जस तम सघन अर सुग ध हो तसा वन नाही अर जस तुम उच्च अर स्थिर हो तस गिर नाहीं, अर जिनका मन तुमम अनुरागी भया ह तिनका मन और ठोर जाय नाहीं । या भाति राजसुताके अनेक शुभ वचन श्रीराम भाई सहित सुनकर अतिप्रसन्न होय याकी प्रशसा करते भए । कसे ह राम ? रघुवश रूप आकाशविष च द्रमा समान उद्योतकारी ह, नदीके तटपर मनोहर स्थल देख हाथिनिके रथसे उतर लक्ष्मण प्रथम ही नानास्वादकू धर सु दर मिष्टफल लाया, अर सुग ध पुष्प लाया, बहुरि राम सहित जल क्रीडाका अनुरागी भया । कसा ह लक्ष्मण ? गुणनिकी खान ह मन जाका । जसी जलक्रीडा इ द्र नागे द्र चक्रवर्ती कर तसी राम लक्ष्मणने करी । मानो वह नदी श्रीरामरूप कामदेवकू देख रति-समान मनोहर रूप धारती भई । कसी ह नदी ? लहलहाट करती जे लहर तिनकी माला कहिए पक्ति, ताकरि मर्दित किये ह श्वेत श्याम कमलनिके पत्र जाने, अर उठे ह झाग जामें, भ्रमररूप ह चूडा जाके, पक्षिनिके जे शब्द तिनकर मानो मिष्ट शब्द कर ह, वचनालाप कर ह । राम जलक्रीडाकर कमल निके वनविष छिप रहे बहुरि शीघ ही आए । जनकसुतासू जलकेलि करते भए । इनकी चष्टा देख

वनके तिर्यच हू और तरफसे मन रोक एकाग्र चित्त होय इनकी ओर निरखते भए। कसे ह दोऊ वीर ? कठोरतासे रहित ह मन जिनका, अर मनोहर ह चेष्टा जिनकी, सीता गान करती भई। सो गानके अनुसार रामच द्र ताल देते भए। मदगनिकरि अति सुन्दर राम जलक्रीडाविष आसक्त अर लक्ष्मण चौगिरदा फिर। कसा ह लक्ष्मण ? भाईके गुणनिविष आसक्त ह बुद्धि जाकी। राम अपनी इच्छा प्रमाण जलक्रीडाकर समीपके मगनिकू आन द उपजाय, जलक्रीडात निवत्त भए। महा प्रसन्न जे वन के मिष्ट फल तिनकर क्षुधा निवारणकर लतामडपविष तिष्ठे। जहा सूयका आताप नाहीं। ये देवनि सारिखे सुन्दर नानाप्रकारकी सु दर कथा करते भए। सीतासहित अति आन दसू तिष्ठे। कसी ह सीता ? जटायु के मस्तकपर हाथ ह ज्याका। तहा राम लक्ष्मणसू कह ह–हे भात ! यह नानाप्रकारके वक्ष स्वादुफल कर सयुक्त, अर नदी निमल जलकी भरी, अर जहा लतानिके मडप, अर यह दडकनामागिरि अनेक रत्ननिकर पूण, यहा अनेक स्थानक क्रीडा करनेके ह। तात या गिरिके निकट एक सु दर नगर बसावें। अर यह वन अत्य त मनोहर औरनित अगोचर, यहा निवास हषका कारण ह। यहा स्थानककर हे भाई ! तू दोऊ मातानिके लायवेकू जाहु, वे अत्य त शोकवती ह सो शीघ्र ही लावहु, अथवा तू यहा रह अर सीता तटा जटायु भी यहा रह, म मातानिके ल्यायवेकू जाऊगा। तब लक्ष्मण हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया जो आपकी आज्ञा होयगी सो होयगा। तब राम कहते भए–अब तो वर्षा ऋतु आई, अर ग्रीष्म ऋतु गई, यह वर्षाऋतु अति भयकर ह, जाविष समुद्र समान गाजते मेघघटा निके समूह विचर ह, चालते अजनगिरि समान दशोदिशाविष श्यामता होय रही ह। विजुरी चमक ह, बगुलानिकी पक्ति विचर ह अर निर तर बादलनिके जल वरस ह जस भगवानके ज मकल्याणक विष देव रत्नधारा बरसाव। अर देख ! हे भ्रात ! यह श्यामघटा तेरे रगसमान सु दर जलकी बू द बरसावै ह, जस तू दानकी धारा बरसावै। ये बादल आकाशविष विचरते विजुरीके चमत्कारकरि युक्त बडे बडे गिरिनिकू अपनी धाराकर आछादते, ध्वनि करते सते कसे सोह ह, जस तुम पीत वस्त्र पहिरे

अनेक राजानिकू आज्ञा करते पृथ्वीकू कृपावृष्टिरूप अमृतकी वृष्टिकर सींचते सोहो । हे वीर! ये कई एक बादल पवनके वेगसे आकाशविषै भ्रमै है, जैसे यौवन अवस्थाविषै असंयमियोका मन विषय वासना-विषै भ्रमै । अर यह मेघ नाजके खेत छोड वथा पर्वतकेविषै बरसै है, जैसे कोई द्रव्यवान पात्रदान अर करुणादान तज वेश्यादिक कुमार्गविषै धन खोवै । हे लक्ष्मण! या वर्षाऋतुविषै अतिवेगसू नदी बहै है, अर धरती कीचसू भर रही है अर प्रचंड पवन बाजै है, भूमिविषै हरितकाय फल रहो है, अर त्रसजीव विशेषतासे है, या समयविषै विवेकिनिका विहार नाहीं । ऐसे वचन श्रीरामचन्द्रके सुनकर सुमित्राका नन्दन लक्ष्मण बोला—हे नाथ! जो आप आज्ञा करोगे सो ही मैं करूंगा। ऐसी सुन्दर कथा करते दोऊ वीर महाधीर सुंदर स्थानकविषै सुखसू वर्षाकाल पूर्ण करते भए । कैसा है वर्षाकाल? जा समय सूर्य नाहीं दीखै है ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रंथ ताकीभाषा वचनिकाविषै दंडकवनविषै निवास वर्णन करनेवाला बियालीसवा पर्व पूर्ण भया ॥ ४२ ॥

— —

अथानन्तर वर्षाऋतु व्यतीत भई । शरदऋतुका आगमन भया । मानो यह शरदऋतु चन्द्रमाकी किरणरूप बाणनिकरि वर्षारूप बरीकू जीत पृथ्वीविषै अपना प्रताप विस्तारती भई । दिशारूप जे स्त्री सो, फूल रहे हैं फूल जिनके ऐसे वृक्षनिकी सुगंधताकर सुगन्धित भई है । अर वर्षा समयविषै कारीघटानिकर जो आकाश श्याम हुता सो अब चन्द्रकांतिकर उज्ज्वल शोभता भया, मानो क्षीर सागरके जलकरि धोया है । अर बिजलीरूप स्वर्ण साकलकर युक्त, वर्षाकालरूपी गज, पृथ्वीरूप लक्ष्मीकू स्नान कराय कहां जाता रहा? अर शरदके योगतैं कमल फूले तिनपर भ्रमर गुंजार करते भए, हंस क्रीडा करते भए, नदीनके जल निर्मल होय गए, दोऊ किनारे महासुन्दर भासते भए, मानो शरदकालरूप नायिककू पाय सरितारूप कामिनी कांतिकू प्राप्त भई है । अर वन वर्षा अर पवनकर

छूटे कसे शोभते भए मानो निद्राकरि रहित जाग्रत दशाकू प्राप्त भए ह । सरोवरनिविषै सरोजनि पर भमर गु जार कर ह, अर वनविष वक्षनिविष पक्षी नाद कर हैं सो मानो परस्पर वार्ता ही करै ह । अर रजनीरूप नायिका नानाप्रकारके पुष्पनिकी सुग धता कर सुगन्धित निमल आकाशरूप वस्त्र पहिरे च द्रमारूप तिलक धरे मानो शरदकालरूप नायकप जाय ह । अर कामीजननिकू काम उपजावती केतकीके पुष्पनिकी रज कर सुग ध पवन चल ह । या भाति शरदऋतु प्रवरती । सो लक्ष्मण बडे भाईकी आज्ञा माग सिंह समान महा पराक्रमी वन देखवेकू अकेला निकस्या । सो आग गए एक सुग ध पवन आई । तब लक्ष्मण विचारते भए यह सुग ध काहेकी ह ? ऐसी अदभुत सुगन्ध वक्षनिकी न होय, अथवा मेरे शरीरकी ह ऐसी सुग ध नाहीं । यह सीताजीके अगकी सुग ध होय तथा रामजी के अगकी सुग ध होय, तथा कोऊ देव आया होय । ऐसा सदेह लक्ष्मणकू उपजा । सो यह कथा राजा श्रेणिक सुन गौतम स्वामीसू पूछता भया—हे प्रभो ! जो सुग धकर वासुदेवकू आश्चय उपजा सो वह सुग ध काहेकी ? तब गौतम गणधर कहते भए । कसे ह गौतम ? सदेहरूप तिमिर दूर करवेकू सूय ह सवलोकको चेष्टाकू जाने ह, पापरूप रजके उडावनेको पवन ह । गौतमस्वामी कह ह-हे श्रेणिक ! द्वितीय तीथकर श्रीअजितनाथ तिनके समोसरणमें मेघवाहन विद्याधर रावणका बडा, शरणे आया । ताहि राक्षसनिके इन्द्र महाभीमने त्रिकूटाचल पवतके समीप राक्षसद्वीप, तहा लका नामा नगरी, सो कृपाकर दई । अर यह रहस्यकी बात कही, हे विद्याधर ! सुनहु ! भरत क्षेत्रके दक्षिण दिशाकी तरफ लवणसमुद्रके उत्तरकी ओर पथ्वीके उदर विष एक अलकारोदय नामा नगर ह, सो अदभुत स्थानक ह । अर नानाप्रकार रत्ननिकी किरणनिकरि मडित ह । देवनिकू भी आश्चय उपजाव तो मनुष्यनिकी कहा बात ? भूमिगोचरीनिकू तो अगम्य ह, अर विद्याधरकू भी अतिविषम ह, चितवनविष न आवै, सब गुणनिकरि पूण ह । जहा मणिनिके मदिर ह, परचक्रत अगोचर ह । सो कदाचित तुमकू अथवा तेरे सन्तानके राजानिकू लकाविष परचक्रका भय उपजै तो अलकारोदयपुरविष निभय भए तिष्ठियो ।

याहि पाताललका कह ह । ऐसा कहकर महाभीम बुद्धिमान राक्षसनिके इन्द्रने अनुग्रहकर रावणके बडेनिकू लका अर पाताललका दई, अर राक्षसद्वीप दिया । सो यहा इनके वशमें अनेक राजा भए । बडे २ विवेकी व्रतधारी भए । सो रावणके बडे विद्याधर कुलविष उपजे ह, देव नाहीं । विद्याधर अर देवनिविष भेद ह, जसा तिलक अर पवत, कदम अर चन्दन, पाषाण अर रत्नविष बडा भेद । देवनिकी शक्ति बडी, काति बडी । अर विद्याधर तो मनुष्य ह, क्षत्री, वश्य, शूद्र यह तीन कुल ह । गभवासके खेद भुगत ह । विद्याधर साधनकर आकाशविष विचर ह । सो अढाई द्वीप पयत गमन कर ह । अर देव गभवाससे उपज नाहीं, महासुन्दर स्वरूप, पवित्र, धातु उपधातुकर रहित, आखनिकी पलक लगे नाहीं, सदा जाग्रत, जरारोग रहित, नवयोवन, तेजस्वी, उदार, सौभाग्यवत, महासुखी, स्वभावहीत विद्यावत, अवधिनेत्र, चाहें जसा रूप कर, स्वेच्छाचारी । देव विद्याधरनिका कहा सम्बन्ध ? हे श्रेणिक ! ये लकाके विद्याधर राक्षस द्वीपविष बस, तात राक्षस कहाए । ये मनुष्य क्षत्रीवश विद्याधर ह, देव हू नाहीं, राक्षस हू नाहीं । इनके वशविष लकाविष अजितनाथके समयत लेकर मुनिसुव्रतनाथके समय पयत अनेक सहस राजा प्रशसा करने योग्य भए । कई सिद्ध भए, कई सर्वार्थसिद्ध गए कई स्वगविष देव भए, कईएक पापी नरक गए । अब ता वशविष तीन खण्डका अधिपति जो रावण सो राज्य कर ह । ताकी बहिन चन्द्रनखा रूपकरि अनूपम, सो महा पराक्रमवत खरदूषणने परणी, वह चौदह हजार राजानिका शिरोमणी, रावणकी सेनाविषै मुख्य, सो दिग्पाल समान अलकारपुर जो पाताललका वहा थाने रहे ह । ताके सम्बूक अर सुन्दर ये दो पुत्र, रावणके भानजे पृथ्वीविषै अतिमान्य भए । सो गौतमस्वामी कह ह—ह श्रेणिक ! माता पिताने सम्बूकक् बहुत मने किया । तथापि कालका प्रेरया सूयहास खडग साधिवे के अथ महाभयानक वनविषै प्रवश करता भया । शास्त्रोक्त आचारकू आचारता साता सूयहास खडगके साधिवेकू उद्यमी भया । एक ही अन्नका आहारी, ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय, विद्या साधिवेकू बासके बीडेमें यह कहकर बठा कि जब मेरा पूण साधन होयगा, तब ही म बाहिर

आऊगा, ता पहिली कोई बीडेमें आवेगा अर मेरी दृष्टि पडेगा तो ताहि म मारू गा। ऐसा कह कर एकात बठा। सो कहा बठा ? दडकवनमें क्रोचवा नदीके उत्तर तीर बासके बीडेमें बठा। बारहवष साधन किया, खडग प्रकट भया। सो सातदिनविष यह न लेय तो खडग परके हाथ जाय, अर वह मारा जाय। सो चन्द्रनखा निरन्तर पुत्रके निकट भोजन लेय आवती सो खडग देख प्रसन्न भई, अर पतिसू जाय कही कि सम्बूकको सूयहास खडग सिद्ध भया। अब मेरा पुत्र मेरुकी तीन प्रदक्षिणा कर आवेगा। सो यह तो ऐसे मनोरथ कर, अर ता वनविष भमता लक्ष्मण आया। हजारा देवनिकरि रक्षायोग्य खडग, स्वभाव सुगन्ध, अदभुत रत्न। सो गोतम कह ह—हे श्रेणिक! वह देवोपुनीत खडग महासुगन्ध दिव्य गधादिकर लिप्त, कल्पवक्षनिके पुष्पनिकी माला तिनकरि युक्त, सो सूयहास खडग की सुगन्ध लक्ष्मणकू आई। लक्ष्मण आश्चयकू प्राप्त भया और काय तज सीधा शोघ हो बासकी ओर आया, सिह समान निभय देखता भया। वक्षनिकरि आच्छादित महाविषम स्थल, जहा बेलनिके समूह अनेक जाल, ऊचे पाषाण, तहा मध्यविषै समभूमि, सुन्दर क्षेत्र, श्रीविचित्ररथ मुनिका निर्वाणक्षेत्र सुवणके कमलनिकरि पूरित, ताके मध्य एक बासनिका बीडा, ताके ऊपर खडग आय रहा ह। सो ताकी किरणके समूहकरि बासनिका बीडा प्रकाशरूप होय रहा ह। सो लक्ष्मणने आश्चयकू पाय निशक होय खडग लिया। अर ताकी तीक्ष्णता जाननेके अथ बासके बीडापर वाह्या, सो सम्बूक सहित बासका बीडा कट गया। अर खडगके रक्षक सहसो देव लक्ष्मणके हाथविषै खडग आया जान कहते भए तुम हमारे स्वामी हो। ऐसा कह नमस्कार कर पूजते भए।

अथानन्तर लक्ष्मणकू बहुत बेर लगी जान, रामचन्द्र सीतासू कहते भए—लक्ष्मण कहा गया, हे भद्र जटायू! तू उडकर देख लक्ष्मण आव ह। तब सीता बोली हे नाथ! वह लक्ष्मण आया, केसर कर चरचा ह अग जाका, नानाप्रकारकी माला अर सुन्दर वस्त्र पहिरे, अर एक खडग अदभुत लिए आव है। क्षो खडगसू ऐसा सोह जसा केसरी सिहसू पवत शोभ। तब राम आश्चयकू प्राप्त भया

हे मन जिनका, अति हर्षित होय लक्ष्मणकू उठकर उरसे लगाय लिया, सकल वृत्तात पूछ्या। तब लक्ष्मण सब बात कही, आप भाई सहित सुखसे विराजे। नानाप्रकारकी कथा कर, अर सम्बूककी माता चन्द्रनखा प्रतिदिन एकही अन्न भोजन लावती हुती। सो आगे आय कर देखे तो बासका बीडा कटा पडा है। तब विचारती भई जो मेरे पुत्रनें भला न किया, जहा इतने दिन रहा अर विद्या सिद्ध भई ताही बीडेको काटा सो योग्य नाहीं। अब अटवी छोड कहा गया? इत उत देखे तो अस्त होता जो सूर्य ताके मंडल समान कुण्डल सहित सिर पडा है। देखकर ताहि मूर्छा आय गई। सो मूर्छा याका परम उपकार किया, नातर पुत्रके मरण करि यह कहा जीवे। बहुरि केतीक बेरमें याहि चेत भया तब हाहाकार कर उठी। पुत्रका कटा मस्तक देख शोककर अतिविलाप किया। नेत्र आसूनिसू भर गए, अकेली बनमें कुरचीकी न्याई पुकारती भई—हा पुत्र! बारह वर्ष अर चार दिन यहा व्यतीत भए, तसे तीन दिन और हू क्यो न निकसि गए? तोहि मरण कहाते आया? हाय पापी काल मैं तेरा कहा बिगाड्या जो नेत्रनिका निधि पुत्र मेरा तत्काल विनास्या। मैं पापिनी परभवमें काहूके बालक हता सो मेरा बालक हता गया। हे पुत्र! आर्तिका मेटनहारा एक वचन तो मुखसू कहु। हे वत्स! आ अपना मनोहर रूप मोहि दिखा। ऐसा माया रूप अमंगल क्रीडा करना तोहि उचित नाहीं। अब तक तै माताकी आज्ञा कबहु न लोपी। अब निःकारण यह विनयलोप कार्य करना तोहि योग्य नाहीं। इत्यादिक विकल्पकर विचारती भई—निःसन्देह मेरा पुत्र परलोककू प्राप्त भया। विचारा कुछ और ही हुता अर भया कुछ और ही, यह बात विचारमें न हुती सो भई। हे पुत्र! जो तू जीवता अर सूर्यहास खड्ग सिद्ध होता तो जैसे चन्द्रहासके धारक रावणके सन्मुख कोऊ नाहीं आय सकै है तैसे तेरे सन्मुख कोऊ न आय सकता। मानो चन्द्रहास मेरे भाईके हाथमें स्थानक किया सो अपना विरोधी सूर्यहास ताहि तेरे हाथमें न देख सक्या। अर भयानक वनमें अकेला निर्दोष नियमका धारी ताहि मारवेकू जाके हाथ चले, सो ऐसा पापी खोटा वैरी कौन है? जा दुष्टने तोहि हत्या। अब वह कहा जीवता

जायगा। या भांति विलाप करती पुत्रका मस्तक गोदमें लेय चूमती भई। मृगासमान आरक्त हैं नेत्र जाके। बहुरि शोक तज, क्रोधरूप होय, शत्रुके मारवेकू दौडी। सो चली चली तहां आई, जहां दोऊ भाई विराजे हुते। दोऊ महा रूपवान, मन मोहिबेके कारण। तिनकू देख याका प्रबल क्रोध तत्काल जाता रहा। तत्काल राग उपजा, मनविषै चिंतवती भई, इन दोऊनिमें जो मोहि इच्छै ताहि मैं सेवू। यह विचार तत्काल कामातुर भई। जैसे कमलनिके वनविषै हंसनी मोहित होय, अर महा ह्रदविषै भैंस अनुरागिनी होय, अर हरे धानके खेतविषै हरिणी अभिलाषिणी होय तैसे इनविषै यह आसक्त भई। सो एक पुन्नागवृक्षके नीचे बैठी रुदन कर, अतिदीन शब्द उचार, वनकी रज कर धूसरा होय रहा है अंग जाका। ताहि देखकर रामकी रमणी सीता अति दयालुचित्त उठकर ताके समीप आय कहती भई। तू शोक मत कर। हाथ पकड ताहि शुभ वचन कह धीर्य बंधाय रामके निकट लाई। तब वह राम ताहि कहते भए। तू कौन है? यह दुष्ट जीवनिका भरा वन ताविषै अकेली क्यों विचरै है? तब वह कमल सरीखे हैं नेत्र जाके, अर भ्रमरकी गुंजार समान है वचन जाके, सो कहती भई—हे पुरुषोत्तम! मेरी माता तो मरणकू प्राप्त भई सो मोकू गम्य नाहीं, मैं बालक हुती। बहुरि ताके शोककरि पिता भी परलोक गया। सो मैं पूर्वले पापतै कुटुम्बरहित दंडक वनविषै आई, मेरे मरणकी अभिलाषा सो या भयानक वनमें काहू दुष्ट जीवने न भखी, बहुत दिननतैं या वनविषै भटक रही हूं। आज मेरे कोऊ पाप कर्मका नाश भया सो आपका दर्शन भया। अब मेरे प्राण न छूटैं ता पहिले मोहि कृपाकर इच्छहु। जो कन्या कुलवती शीलवती होय ताहि कौन न इच्छै? सब ही इच्छैं। यह याके लज्जारहित वचन सुनकर दोऊ भाई नरोत्तम परस्पर अवलोकनकर मौनसू तिष्ठे। कैसे हैं दोऊ भाई? सर्वशास्त्रनिके अर्थका जो ज्ञान सोई भया जल, ताकरि धोया है मन जिनका, कृत्य अकृत्यके विवेकविषै प्रवीण। तब वह इनका चित्त निष्काम जान निश्वास नाख कहती भई—मैं जाऊं? तब राम लक्ष्मण बोले जो तेरी इच्छा होय सो कर। तब वह चली गई। ताके गए पीछे राम लक्ष्मण सीता आश्चर्यकू प्राप्त भए। अर

यह क्रोधायमान होय शीघ पतिके समीप गई। अर लक्ष्मण मनमें विचारता भया जो यह कौनकी पुत्री, कौन देशविषे उपजी, समूहसे विछुरी मृगी समान यहां कहांसूं आई। हे श्रेणिक! यह कार्य कर्तव्य, यह न कर्तव्य, याका परिपाक शुभ वा अशुभ, ऐसा विचार अविवेकी न जानें, अज्ञानरूप तिमिर करि आच्छादित है बुद्धि जिनकी। अर प्रवीण बुद्धि महाविवेकी, अविवेकता रहित है, सो या लोकविषे ज्ञानरूप सूर्यके प्रकाशकर योग्य अयोग्यकूं जान अयोग्यके त्यागी होय योग्यक्रियाविषे प्रवर्त्ते है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषे शम्बूकका वध वर्णन करनेवाला
तेतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४३ ॥

अथानन्तर जैसे हृदयका तट फूटजाय अर जलका प्रवाह विस्तारकूं प्राप्त होय तैसे खरदूषणकी स्त्रीका राम लक्ष्मणसे राग उपजा हुता सो उनकी अवांछाते विध्वंस भया। तब शोकका प्रवाह प्रकट भया, अतिव्याकुल होय नानाप्रकार विलाप करती भई, अरतिरूप अग्निकर तप्तायमान है अंग जाका। जैसे बछडे विना गाय विलाप करै, तैसे शोक करती भई। झरै हैं नेत्रनिके आंसू जाके सो विलाप करती पति देखी। नष्ट भया है धीर्य जाका अर धूरकर धूसरा है अंग जाका, विखर रहे हैं केशनिके समूह जाके, अर शिथिल होय रही है कटिमेखला जाकी। अर नखनिकर विदारे गए हैं वक्षस्थल, कुक्ष, अर जंघा जाकी, सो रुधिरकरि आरक्त है। अर आवरण रहित लावण्यता रहित, अर फट गई है चोली जाकी। जैसे माते हाथीने कमलनीकूं दलमली होय तैसी याहि देख, पति धीर्य बंधाय पूछता भया—हे कांते! कौन दुष्टने तोहि ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त करी। सो कहो, वह कौन है जाहि आज आठवां चन्द्रमा है। अथवा मरण ताके निकट आया है। वह मूढ पहाडके शिखरपर चढ सोवै है, सूर्यसे क्रीडाकर अंधकूपमें पडे है। दैव तासूं रूसा है, मेरी क्रोधरूप अग्नि विषे पतंगकी नाईं पडेगा। धिक्कार ता पापी अविवेकीको, वह पशु समान अपवित्र, अनीति, यह लोक परलोक भ्रष्ट, जान तोहि दुखाई। तू

बडवानलकी शिखा समान है, रुदन मत कर, और स्त्रीनि सारिखी तू नाहीं। बडे वंशकी पुत्री बडे घर परणी आई है। अबही ता दुराचारीकू हस्त तलतें हण परलोककू प्राप्त कराऊंगा, जैसे सिंह उन्मत्त हाथीकू हण। या भांति जब पतिने कही तब चन्द्रनखा महा कष्ट थकी रुदन तज, गदगद वाणीसू कहती भई। अलकनिकर आच्छादित है कपोल जाके, हे नाथ! मैं पुत्रके देखवेकू वनविषै नित्य जाती हुती, सो आज पुत्रका मस्तक कटा भूमिमें परचा देख्या। अर रुधिरकी धाराकर बासोंका बीडा आरक्त देख्या, काहू पापीने मेरे पुत्रकू मार खड्गरत्न लिया। कैसा है खड्ग? देवनिकर सेवने योग्य। सो मैं अनेक दुःखनिका भाजन भाग्य रहित पुत्रका मस्तक गोदमें लेय बिलाप करती भई सो जा पापीने शम्बूककू मारचा हुता ताने मोहि अनीति विचारी, भुजाकर पकडी, मैं कही मोहि छाड सो पापी नीचकुली छाडे नाहीं, नखनिकरि दातननिकरि विदारी। निर्जन वनविषै मैं अकेली वह बलवान पुरुष, मैं अबला तथापि पूर्व पुण्यसे शील बचाय महाकष्टतैं मैं यहां आई। सब विद्याधरनिका स्वामी, तीन खण्ड अधिपति, तीनलोकविषै प्रसिद्ध रावण काहूसे न जीत्या जाय सो मेरा भाई, अर तुम खर दूषण नामा महाराज, दैत्यजातिके जे विद्याधर तिनके अधिपति, मेरे भरतार तथापि मैं दैवयोगतैं या अवस्थाकू प्राप्त भई। ऐसे चन्द्रनखाके वचन सुन महा क्रोधकर तत्काल जहां पुत्रका शरीर मृतक पडचा हुता, तहां गया सो मूवा देखकर अति खेदखिन्न भया। पूर्व अवस्थाविषै पुत्र पूर्णमासीके चन्द्रमा समान हुता, सो महा भयानक भासता भया। खरदूषणने अपने घर आय अपने कुटुम्ब से मन्त्र किया। तब कईएक मन्त्री कर्कशचित्त हुते वे कहते भए—हे देव! जाने खड्ग रत्न लिया अर पुत्र हता ताहि जो ढीला छोडोगे तो न जानिए कहा करै? सो ताका शीघ्र यत्न करहु। अर कईएक विवेकी कहते भए हे नाथ! यह लघु कार्य नाहीं, सब सामन्त एकत्र करहु, अर रावणपै हू पत्र पठावहु। जिनके हाथ सूर्य हास खड्ग आया ते सामान्य पुरुष नाहीं। तातैं सब सामंत एकत्रकर जो विचार करना होय सो करहु शीघ्रता न करहु। तदि रावणके निकट तो तत्काल दूत पठाया, दूत शीघ्रगामी अर तरुण। सो तत्काल

रावण प गया । रावणका उत्तर पीछा आव ताके पहिले खरदूषण अपने पुत्रके मरणकर महा द्वेषका भरचा साम-तनिमू कहता भया—वे रक विद्यावल रहित भूमिगोचरी हमारी विद्याधरनिकी सेनारूप समुद्रके तिरवेकू समथ नाहीं। धिक्कार हमारे सूरापनकू जो औरका सहारा चाह ह। हमारी भुजा ह वही सहाई ह, अर दूजा कौन ? एसा कहकर महा अभिमानकू धर शीघ्रही मदिरसू निकस्या, आकाश माग गमन किया तजरूप ह मख जाका। सो ताहि सवथा युद्धकू स-मुख जान चौवह हजार राजा सग चाले, सो दण्डक वनमे आए तिनकी सेनाके वादित्रनिके शब्द समुद्रके शब्द समान सीता सनकर भयकू प्राप्त भई। हे नाथ ! कहा ह ? ऐसे शब्द कह पतिके अगसू लगी, जस कल्पबेल कल्पवक्षसू लग। तब राम कहत भए—ह प्रिये ! भय मतकर। याहि धीय बधाय विचारते भए—यह दुधर शब्द सिहका ह, अक मेघ का ह, अक समुद्रका ह, अक दुष्ट पक्षिनका ह, अक आकाश पूरगया ह ? तब सीतासू कहते भए—हे प्रिये ! ये दुष्टपक्षी ह ज मनुष्य अर पशुनिकू लेजाए ह, धनुषके टकारत इ-हे भगाऊ हू। इतनेही में शत्रु की सेना निकट आई। नानाप्रकारके आयुधनिकर युक्त सुभट दष्टिपर, जसे पवनके प्ररे मेघघटानिके समूह विचर तस विद्याधर विचरते भए। तब श्रीराम विचारी ये न दीश्वर द्वीपकू भगवानकी पूजाके अथ देव जाय ह, अथवा बासनिके बीडेंमे काहू मनुष्यकू हतकर लक्ष्मण खडग रत्न लाया, अर वह क-या बन आई हुती सो कुशील स्त्री हुती, तान ये अपने कुटुम्बके सामत प्रेरे ह। तात अब परसेना समीप आए निश्चित रहना उचित नाही। धनुषको ओर दष्टि धरी अर बक्तर पहिरनेकी तयारी करी। तब लक्ष्मण हाथ जोड सिर नवाय विनती करता भया। हे देव ! मोहि तिष्ठते आपकू एता परिश्रम करना उचित नाहीं। आप राजपुत्रीकी रक्षा करहु, म शत्रुनिके स-मुख जाऊ हू। सो जो कदाचित भीड पडेगी तो म सिहनाद करू गा, तब आप मेरी सहाय करियो। ऐसा कहिकर वक्तर पहर, शस्त्र धार, लक्ष्मण शत्रुनिके स-मुख युद्धकू चाल्या। सो वे विद्याधर लक्ष्मणकू उत्तम आकारका धरन हारा वीराधिवीर श्रेष्ठ पुरुष देख जस मेघ पवतकू बेढे तस बेढते भए। शक्ति, मुदगर, सामान्य

चक्र, बरछी, बाण इत्यादि शस्त्रनिकी वर्षा करते भए। सो अकेला लक्ष्मण सब विद्याधरनिके चलाए बाण अपने शस्त्रनिकरि निवारता भया, अर आप विद्याधरनिकी ओर आकाशमें वजवड बाण चलावता भया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै है। हे राजन! अकेला लक्ष्मण विद्याधरनिकी सेनाकू बाणनिकरि ऐसा रोकता भया जसे सयमी साधु आत्मज्ञानकर विषयवासनाकू रोकें। लक्ष्मणके शस्त्रनिकरि विद्याधरनिके सिर रत्ननिके आभरणकर मडित, कुण्डलनिकरि शोभित आकाशसे धरतीपर परे, मानो अम्बररूप सरोवरके कमल ही है। योधानिसहित पवत समान हाथी पडे, अर अश्वनिसहित सामत पडे। भयानक शब्द करते होठ डसते ऊधगामी बाणनिकर वासुदेव बाहनसहित योधानिकू पीटता भया। ताही समय पुष्पकविमानविषै बठ्या रावण आया। सम्बूकके मारणहारे पुरुषनिपर उपज्या है महाक्रोध जाकू सो मागमें रामके समीप सीता महा सतीकू तिष्ठती देखता भया। सो देखकर महा मोहकू प्राप्त भया। कसी है सीता? जाहि लखि रतिका रूपभी या समान न भास, मानो साक्षात लक्ष्मीही है। चन्द्रमा समान सुन्दर वदन, निभन्याके फूलसमान अधर, केसरीकी कटिके समान कटि लहलहात करते चचल कमलपत्र समान लोचन, अर महा गजराजके कुम्भस्थलके शिखर समान कुच, नवयौवन, सब गुणनिकर पूण कातिके समूहकरि सयुक्त है शरीरजाका, मानो कामके धनुषकी पिणच ही है, अर नेत्र जाके कामके बाण ही है, मानो नामकमरूप चतेरेने अपनी चपलता निवाहनेके निमित्त स्थिरताकर सखसू जसी चाहिए तसी बनाई है। जाहि लखे रावणकी बुद्धि हरगई। महारूपके अतिशयकू धरे जो सीता ताके अवलोकनसे सम्बूकके मारवेवारेपर जो क्रोध हुता सो जाता रह्या। अर सीता पर रागभाव उपज्या। चित्तकी विचित्रगति है। मनमें चितवता भया या विना मेरा जीतव्य कहा? अर जो विभूति मेरे घरमें है ताकरि कहा? यह अदभुतरूप, अनुपम महासुन्दर नवयौवन। मोहि खरदूषणकी सेना में आया कोई न जाने। ता पहिले याहि हरकर घर लेजाऊ। मेरी कीर्ति चन्द्रमा समान निमल सकल लोकमें विस्तर रही है सो छिपकर लेजानेमें मलिन न होय। हे श्रेणिक!

अर्थी दोषकू न गिन, तात गोप्य लेजाइवेका यत्न किया। या लोकमें लोभ समान और अनथ नाहीं, अर लोभमें परस्त्रीके लोभसमान महा अनथ नाहीं। रावणने अवलोकनी विद्यासू वत्तान्त पूछ्या सो वाके कहेसे याके नाम कुल सब जाने—लक्ष्मण अनेकनिसू लडनहारा एक युद्धमें गया, अर यह राम ह। यह इनकी स्त्री सीता ह, अर जब लक्ष्मण गया तब रामसू ऐसा कह गया—जो मोप भीड पडेगी तब सिहनाद करूगा, तब तुम मेरी सहाय करियो। सो वह सिहनाद म करू तब यह राम धनुषवाण लेय भाईप जावगे अर म सीताकू लेजाऊगा, जस पक्षी मासकी डलीकू लेजाय। अर खरदूषण का पुत्र तो इनने माराही हुता अर ताकी स्त्री का अपमान किया। सो वह शक्ति आदि शस्त्रनिकर दोऊ भाइनिकू मारेहोगा, जस महाप्रवल नदीका प्रवाह दोऊ ढाहे पाडे। नदीके प्रवाहकी शक्ति छिपी नाहीं ह तस खरदूषणकी शक्ति काहूत छिपी नाहीं, सब कोऊ जान ह। ऐसा विचारकर मूढमति कामकर पीडित रावण मरणके अथ सीताके हरणका उपाय करता भया। जस दुरबुद्धि बालक विषके लेनेका उपाय कर।

अथानन्तर लक्ष्मण अर कटकसहित खरदूषण दोऊमे महायुद्ध होय रहा ह, शस्त्रनिका प्रहार होय रहा ह। अर इधर कपटकर रावणने सिहनाद किया, ताम बारम्बार रामराम यह शब्द किया। तब राम जानी कि यह सिहनाद लक्ष्मण किया। सुनकर व्याकुल चित्त भए। जानी भाईप भीड पडी। तब रामने जानकीकू कह्या—हे प्रिये! भय मत करहु, क्षण एक तिष्ठ, ऐसा कह निमल पुष्पविष ताही छिपाई अर जटायूकू कहा—हे मित्र! यह स्त्री अबला जाति ह, याकी रक्षा करियो। तुम हमारे मित्र हो, सहधर्मी हो। ऐसा कहकर आप धनुषबाण लेय चाले, सो अपशकुन भए, सो न गिने, महासतीकू अकेली वनविष छोड शीघ्र ही भाइप गए। महारणमें भाईके आग जाय ठाढे रहे, ता समय रावण सीताकू उठायबेकू आया, जसा माता हाथी कमलिनीकू लेब आव। कामरूप दाहकर प्रज्वलित है मन जाका, भूल गई ह समस्त धमकी बुद्धि जाकी, सीताकू उठाय पुष्पक विमान पर धरने लाग्या।

तब जटायुपक्षी स्वामीकी स्त्रीकू हरता देख क्रोधरूप अग्निकर प्रज्ज्वलित भया। उठकर अतिवेगत रावणपर पड्या, तीक्ष्ण नखनिकी अणी अर चूंचस रावणका उरस्थल रुधिरसयुक्त किया, अर अपनी कठोर पाखनिकर रावणके वस्त्र फाड डाले। रावणका सब शरीर खेदखिन्न भया, तब रावण ने जानी यह सीताकू छुडावेगा, झझट करेगा, तेत याका धनी आन पहुँचेगा। सो याहि मनोहर वस्तु का अवरोधक जान महाक्रोधकर हाथकी चपेटसे मारया सो अति कठोर हाथकी घातसे पक्षी विह्वल होय पुकारता सता पृथ्वीमें पडा मूर्छाकू प्राप्त भया। तब रावण जनकसुताकू पुष्पक विमानमें धर अपने स्थान ले चाल्या। श्रेणिक! यद्यपि रावण जान ह यह काय योग्य नाहीं। तथापि कामके वशीभूत हुवा सब विचार भूल गया। सीता महासती आपकू परपुरुषकर हरी जान, रामके अनुराग से भीज रहा ह चित्त जाका, महा शोकवती होय, आर्रति रूप विलाप करती भई। तब रावण याहि निज भरतारविष अनुरक्त जान, रुदन करती देख कछुइक उदास होय विचारता भया—जो यह निरतर रोव ह, अर विरहकर व्याकुल ह। अपने भरतारके गुण गाव ह, अन्य पुरुषके सयोगकी अभिलाषा नाहीं। सो स्त्री अवध्य ह, तात म मार न सकू, अर कोऊ मेरी आज्ञा उलघ तो ताहि मारू। अर म साधुनिके निकट व्रत लिया हुता जो परस्त्री मोहि न इच्छ ताहि म न सेऊ। सो मोहि व्रत दृढ राखना, याहि कोऊ उपायकर प्रसन्न करू। उपाय किए प्रसन्न होयगी। जस क्रोधवत राजा शीघ्र ही प्रसन्न न किया जाय तस हठवती स्त्री भी वश न करी जाय। जो कुछ वस्तु ह सो यत्नत सिद्ध होय ह। मनवाछितविद्या, परलोककी क्रिया, अर मनभावती स्त्री ये यत्नसे सिद्ध होय। यह विचारकर रावण सीताके प्रसन्न होयवेका समय हेर। कसा ह रावण? मरण आया ह निकट जाके।

अथानन्तर श्रीरामने बाणरूप जलकी धाराकर पूर्ण जो रणमडल तामें प्रवेश किया। सो लक्ष्मण देखकर कहता भया। हाय! हाय! एते दूर आप क्यों आए—हे देव! जानकीकू अकेली वनविषै मेल आए। यह वन अनेक विग्रहका भरया ह। तब राम कह्या मैं तेरा सिहनाद सुन शीघ्र ही आया। तब लक्ष्मण कहा आप भली न करी, अब शीघ्र जहा जानकी ह वहा जाहु। तब राम जानी वीर तो

महाधीर है, याहि शत्रु का भय नाहीं। तब याकू कही—तू परम उत्साह रूप है, बलवान बैरीकू जीत, ऐसा कहकर आप, सीताकी उपजी है शंका जिनको सो चंचल चित्त होय जानकीकी दिशि चाले। क्षण मात्रमें आय देखे तो जानकी नाहीं! तदि प्रथम तो विचारी कदाचित सुरतिभंग भया है। बहुरि निर्धारण देखो तो सीता नाहीं। तब आप हाय सीता! ऐसा कह मूर्छा खाय धरती पर पडे। सो धरती रामके विलापसे ऐसी सोहती भई जैसे भरतारके मिलापसे भार्या सोहै। बहुरि सचेत होय वृक्षनिकी ओर दृष्टि धर प्रेमके भरे अत्यन्त आकुल होय कहते भए—हे देवी! तू कहा गई? क्यो न बोलहु? बहुत हास्यकरि कहा? वृक्षनिके आश्रय बैठी होय तो शीघ्र ही आवहु! कोपकर कहा? मैं तो शीघ्र ही तिहारे निकट आया। हे प्राणबल्लभे! यह तिहारा कोप हमें सुखका कारण नाही। या भांति विलाप करते फिर है। सो एक नीची भूमिमें जटायुकू कंठगत प्राण देख्या। तब आप पक्षीकू देख अत्यन्त खेदखिन्न होय याके समीप बैठ नमोकार मंत्र दिया। अर दर्शन ज्ञान चारित्र तप ये चार आराधना सुनाई, अरहंत सिद्ध साधु केवली प्रणीत धर्मका शरण लिवाया। पक्षी श्रावकके ब्रतका धरणहारा श्रीरामके अनुग्रह करि समाधिमरण कर स्वर्गविषै देव भया परम्पराय मोक्ष जायगा। पक्षीके मरणके पीछे आप यद्यपि ज्ञानरूप है तथापि चारित्रमोहके वश होय महाशोकवन्त अकेले वनविषै प्रियाके वियोगके दाहकर मूर्छा खाय पडे। बहुरि सचेत होय महाव्याकुल महासती सीताकू ढूंढते फिरै। निराश भए दीन वचन कहै, जैसे भूतके आवेशकर युक्त पुरुष वृथा अलाप करै। छिद्र पाय महाभीम वनमें काहू पापीने जानकी हरी सो बहुत विपरीत करी, मोहि मारया, अब जो कोई मोहि प्रिया मिलावै, अर मेरा शोक हरै, ता समान मेरा परम बांधव नाहीं। हो वनके वृक्ष हो! तुम जनकसुता देखी? चम्पाके पुष्प समान रंग, कमलदल लोचन, सुकुमार चरण, निर्मल स्वभाव, उत्तम चाल, चित्तको उत्सव करणहारी, कमलके मकरंद समान सुगन्ध मुखका स्वास, स्त्रीनिके मध्य श्रेष्ठ, तुमने पूर्व देखी होय तो कहो। या भांति वनके वृक्षनिसूं पूछै है, सो वे एकेन्द्री वृक्ष कहा उत्तर देवें। तब राम सीताके गुणनिकरि हरया

है मन जाका, बहुरि मूर्छा खाय धरतीपर पडे। बहुरि सचेत होय महा क्रोधायमान वजावत धनुष हाथमें लिया, पिणच चढाई, टकोर किया सो दशो दिशा शब्दायमान भई। सिंहनिकूं भयका उपजावनहारा नरसिंहने धनुषका नाद किया। सो सिंह भाग गए, गजनिके मद उतर गए। तब धनुष उतार अत्यन्त विषादकूं प्राप्त होय बैठकर अपनी भूलका सोच करते भए। हाय हाय मैं मिथ्या सिंहनादके श्रवणकर विश्वास मान, वृथा जाय प्रिया खोई। जैसे मूढ जीव कुश्रुतका श्रवण सुन विश्वास मान, अविवेकी होय शुभगतिकूं खोवे। सो मूढके खोयवेका आश्चर्य नाहीं, परन्तु मैं धर्मबुद्धि, वीतरागके मार्गका श्रद्धानी, असमझ होय असुरकी मायामें मोहित हुवा यह आश्चर्यकी बात है। जैसे या भव वनविषै अत्यन्त दुर्लभ मनुष्यकी देह महापुण्य कर्मकर पाई, ताहि वृथा खोवे, सो बहुरि कब पावे? अर त्रैलोक्यविषै दुर्लभ महारत्न ताहि समुद्रमें डारे, बहुरि कहां पावे? तैसे वनितारूप अमृत मेरे हाथसूं गया? बहुरि कौन उपायकरि पाइये। या निर्जन वनविषै कौनकूं दोष दूं। मैं ताहि तजकर भाईपै गया सो कदाचित कोपकर आर्या भई होय। अरण्य वनविषै मनुष्य नाहीं कौनकूं जाय पूछें, जो हमकूं स्त्रीकी वार्ता कहे। ऐसा कोई या लोकविषै दयावान श्रेष्ठ पुरुष है? जो मोहि सीता दिखावे। वह महासती शीलवन्ती, सर्व पापरहित, मेरे हृदयकूं वल्लभ, मेरा मनरूप मंदिर ताके विरहरूप अग्निकर जरै है सो ताकी वार्तारूप जलके दानकर कौन बुझावै? ऐसा कहकर परम उदास, धरती की ओर है दृष्टि जाकी, बारम्बार कछुइक विचार कर निश्चल होय तिष्ठे। एक चकवीका शब्द निकट ही सुन्या सो सुनकर ताकी ओर निरखा। बहुरि विचारी या गिरिका तट अत्यन्त सुगन्ध होय रहा है सो याही ओर गई होय अथवा यह कमलनिका वन है यहां कौतूहलके अर्थ गई होय? आगे याने यह वन देखा हुता सो स्थानक मनोहर है, नानाप्रकार पुष्पनिकर पूर्ण है, कदाचित तहां क्षणमात्र गई होय? सो यह विचार आप वहां गए। वहां हू सीताकूं न देख्या, चकवी देखी। तब विचारी वह पतिव्रता मेरे बिना अकेली कहां जाय। बहुरि व्याकुलताकूं प्राप्त होय, जायकर पर्वतसूं पूछते भए—हे

गिरिराज ! तू अनेक धातुनिकरि भरया है, मैं राजा दशरथका पुत्र रामचन्द्र तोहि पूछूं हूं, कमल सारिखे नेत्र हैं जाके, सो सीता मेरे मनकी प्यारी, हंसगामिनी, सुन्दर स्तनके भारकरि नमीभूत है अंग जाका, किंदूरा समान अधर, सुन्दर नितम्ब, सो तुम कहूं देखी ? वह कहां है ? तब पहाड कहा जवाब देय, इनके शब्दसे गूंजा। तब आप जानी कछु याने स्पष्ट न कही, जानिए है याने न देखी, वह महासती काल प्राप्त भई। यह नदी प्रचंड तरंगनिकी धरनहारी अत्यन्त वेगकूं धरे बहै है, अविवेकवती, ताने मेरी कांता हरी, जैसे पापकी इच्छा विद्याकूं हरै। अथवा कोई क्रूर सिंह क्षुधातुर भख गया होय, वह धर्मात्मा साधुवर्गनिकी सेवक सिंहादिकके देखते ही नखादिक स्पर्श बिना ही प्राण देय। मेरा भाई भयानक रणविषै संग्राममें है सो जीवनेका संशय ही है। यह संसार असार है। अर सब जीवराशि संशय रूप ही है। अहो ! यह बडा आश्चर्य है ! जो मैं संसारका स्वरूप जानूं हूं अर दुखत शून्य होय रहा हूं। एक दुख पूरा नहीं परै है अर दूजा और आवै है। तातैं जानिए है यह संसार दुखका सागर ही है—जैसे खोडे पगकूं खंडित करना, अर दाह मारेको भस्म करना, अर डिगेकूं गर्तमें डारना। रामचन्द्रजीने वनविषै भ्रमणकर मृग सिंहादिक अनेक जन्तु देखे परन्त सीता न देखी। तब अपने आश्रम आय अत्यन्त दीन वदन, धनुष उतार पृथ्वीमें तिष्ठे। बारम्बार अनेक विकल्प करते क्षणएक निश्चल होय मुखसे पुकारते भए। हे श्रेणिक ! ऐसे महापुरुषनिकूं भी पूर्वोपार्जित अशुभके उदयसूं दुख होय है। ऐसा जानकर अहो भव्यजीव हो ! सदा जिनवरके धर्ममें बुद्धि लगावो, संसारतैं ममता तजो। जे पुरुष संसारके विकारसूं पराङ्मुख होय अर जिनवचनकूं नाहीं आराधै, वे संसारके विषै शरण रहित पापरूप वृक्षके कटुक फल भोगवै है, कर्मरूप शत्रुके आतापसे खेदखिन्न है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै सीताहरण वर्णन करनेवाला चवालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४४ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणके समीप युद्धविषै खरदूषणका शत्रु विराधितनामा विद्याधर अपने मन्त्री अर शूरवीरनिसहित शस्त्रनिकर पूर्ण आया, सो लक्ष्मणकूं अकेला युद्ध करता देख महा नरोत्तम जान, अपने स्वार्थकी सिद्धि इनसे जान प्रसन्न भया। महा तेजकर देदीप्यमान शोभता भया। वाहनतै उतर, गोडे धरती लगाय, हाथ जोड, सीस निवाय, अति नमीभूत होय परम विनयसूं कहता भया। हे नाथ! मैं आपका भक्त हूं, कछुइक मेरी विनती सुनो। तुम सारिखेनिका संसर्ग हम सारिखेनिके दुखका क्षय करनहारा है। वाने आधी कही आप सारी समझ गए। ताके मस्तकपर हाथ धर कहते भए तू डरे मत, हमारे पीछे खडा रह। तब वह नमस्कारकर अति आश्चर्यकूं प्राप्त होय कहता भया—हे प्रभो! यह खरदूषण शत्रु महाशक्तिकूं धरै है, याहि आप निवारहु, अर सेनाके योधानिकरि मैं लडूंगा। ऐसा कह खरदूषणके योद्धानिसूं विराधित लडने लाग्या। दौडकर तिनके कटकपर पर्या, अपनी सेनासहित झलझलाट करै है आयुधनिके समूह ताके। विराधित तिनकूं प्रकट कहता भया—मैं राजा चन्द्रोदय का पुत्र विराधित, घने दिननिविषै पिताका वैर लेवे आया हूं, युद्धका अभिलाषी अब तुम कहां जावो हो? जो युद्धमें प्रवीण हो तो खडे रहो। मैं ऐसा भयंकर फल दूंगा जैसा यम देय। ऐसा कहा तब तिन योद्धानिके अर इनके महा संग्राम भया। अनेक सुभट दोऊ सेनानिके मारे गए। पियादे प्यादे-निसूं, घोडनिके असवार घोडनिके असवारनिसूं, हाथिनिके असवार हाथिनिके असवारनिसूं, रथी रथीनिसूं परस्पर हर्षित होय युद्ध करते भए। वह वाहि बुलावे, वह वाहि बुलावे या भांति परस्पर युद्ध कर दशों दिशानिकूं बाणनिकरि आच्छादित करते भए।

अथानन्तर लक्ष्मण अर खरदूषणका महायुद्ध भया, जैसे इन्द्र असुरेन्द्रके युद्ध होय। ता समय खरदूषण क्रोधकर मंडित लक्ष्मणसूं लाल नेत्रकर कहता भया—मेरा पुत्र निर्वैर सो तूने हत्या, अर हे चपल! तूने मेरी कांताके कुच मर्दन किए, सो पापी अब मेरी दृष्टिसूं कहां जायगा। आज तीक्ष्ण बाणनिकरि तेरे प्राण हरूंगा, तैं जैसे कर्म किए हैं तैसा फल भोगवेगा। हे क्षुद्र, निर्लज्ज, परस्त्रीसंग

लोलुपी ! मेरे सन्मुख आयकर परलोक जाहु । तब ताके कठोर वचननिकर प्रज्वलित भया है मन जाका सो लक्ष्मण, वचनकर सकल आकाशकू पूरता संता कहता भया—अरे क्षुद्र ! वृथा काहे गाजै है ? जहा तेरा पुत्र गया वहा तोहि पठाऊगा । ऐसा कहकर आकाशके विषै तिष्ठता जो खरदूषण ताहि लक्ष्मणने रथरहित किया, अर ताका धनुष तोड्या, अर ध्वजा उडाय दई, अर प्रभारहित किया । तब वह क्रोधकर भर्या पृथ्वीके विषै पड्या, जैसे क्षीणपुण्य भया देव स्वर्गतै पडै । बहुरि महा सुभट खडग लये लक्ष्मण पर आया । तब लक्ष्मण सूर्यहास खडग लये ताके सन्मुख भया । इन दोऊनिमैं नानाप्रकार महायुद्ध भया । देव पुष्पवृष्टि करते भए, अर धन्य धन्य शब्द कहते भए । बहुरि महा युद्ध के विषै सूर्यहास खडगकर लक्ष्मणने खरदूषणका सिर काट्या सो निर्जीव होय खरदूषण पृथ्वीविषै पर्या, मानो स्वर्गसू देव पर्या, सूर्यमान है तेज जाका मानो रत्न पर्वतका शिखर दिग्गजने ढाहा ।

अथानन्तर खरदूषण का सेनापति दूषण विराधितकू रथ रहित करवेकू आरम्भता भया । तदि लक्ष्मण बाणकरि मर्मस्थलविषै घायल किया सो घूमता भूमिमैं पर्या । अर लक्ष्मणने खरदूषणका समुदाय, अर कटक, अर पाताल लकापुरी विराधितकू दीनी । अर लक्ष्मण अतिस्नेहका भर्या जहा राम तिष्ठे है तहा आया । आकर देखै तो आप भूमिमैं पडे है, अर स्थानकमैं सीता नाहीं । तब लक्ष्मण ने कही—हे नाथ ! कहा सोवो हो ? जानकी कहा गई ? तब राम उठकर लक्ष्मणकू घावरहित देख कछु इक हर्षकू प्राप्त भए । लक्ष्मणकू उरसे लगाया अर कहते भए—हे भाई ! मैं न जानू जानकी कहा गई ? कोई हर लेगया अथवा सिंह भखगया । बहुत हेरी सो न पाई । अतिसुकुमार शरीर उद्वेग कर विलय गई । तब लक्ष्मण विषादरूप होय क्रोधकर कहता भया । हे देव ! सोचके प्रबन्धकर कहा ? यह निश्चय करो, कोई दुष्ट दैत्य हर लेगया है । जहा तिष्ठै है सो लावेंगे, आप सदेह न करो । नानाप्रकारके प्रिय वचननिकरि रामकू धीर्य बधाया, अर निर्मल जलकरि सुबुद्धिने रामका मुख धुवाया । ताही समय विशेष शब्द सुन राम पूछी यह शब्द काहेका है ? तब लक्ष्मणने कहा—हे नाथ ! यह चन्द्रोदय विद्याधर

का पुत्र विराधित, याने रणमें मेरा बहुत उपकार किया, सो आपके निकट आया है। याकी सेनाका शब्द है। भांति दोऊ वीर वार्त्ता करै है अर वह बडी सेना सहित हाथ जोड नमस्कारकर जय जय शब्द कहै अपने मंत्रीनि सहित विनती करता भया। आप हमारे स्वामी हो, हम सेवक हैं। जो कार्य होय ताकी आज्ञा देहु। तदि लक्ष्मण कहता भया, हे मित्र! काहू दुराचारीने ये मेरे प्रभु तिनकी स्त्री हरी है। ता बिना रामचन्द्र जो शोकके वशी होय कदाचित प्राणकूं तजे तो मैं भी अग्निमें प्रवेश करूंगा। इनके प्राणनिके आधार मेरे प्राण हैं, यह तू निश्चय जान। तात यह कार्य कर्तव्य है, भले जाने सो कर। तब यह बात सुन वह अति दुखित होय नीचा मुख कर रहा। अर मनमें विचारता भया—एते दिन मोहि स्थानक भ्रष्ट हुए भए, नानाप्रकार बन विहार किया। अर इनने मेरा शत्रु हना, स्थानक दिया, तिनकी यह दशा है। मैं जो २ विकल्प करूं हूं सो योंही वृथा जाय है। यह समस्त जगत कर्माधीन है तथापि मैं कछु उद्यम कर इनका कार्य सिद्ध करूं। ऐसा विचार अपने मंत्रीनसूं कहा—पुरुषोत्तमकी स्त्रीरत्न पृथ्वीविषै जहां होय तहां जल स्थल आकाश पुर बन गिरि ग्रामादिकमैं यत्नकर हेरहु। यह कार्य भए मनवांछित फल पावोगे। ऐसी राजा विराधितकी आज्ञा सुन यशके अर्थी सब दिशाकूं विद्याधर दौडे।

अथानन्तर एक अर्क जटीका पुत्र रत्नजटी, सो आकाशमार्गमें जाता हुता। तानै सीताके रुदन की 'हाय राम हाय लक्ष्मण' यह ध्वनि समुद्रके ऊपर आकाशमें सुनी। तब रत्नजटी वहां आय देखे तो रावणके विमानमें सीता बैठी विलाप करै है। तब सीताको विलाप करती देख रत्नजटी क्रोधका भरया रावणसो कहता भया—हे पापी दुष्ट विद्याधर! ऐसा अपराध कर कहां जायगा? यह भामंडल की बहन है, रामदेवकी राणी है। मैं भामण्डलका सेवक हूं, हे दुर्बुद्धे! जिया चाहै तो याहि छोड। तब रावण अति क्रोधकर युद्धकूं उद्यमी भया। बहुरि विचारी कदाचित युद्धके होते अति विह्वल जो सीता सो मरजावै तो भला नाहीं। तातै यद्यपि यह विद्याधर रंक है तथापि उपाय करि मारना। ऐसा विचार रावण महाबलीने रत्नजटीकी विद्या हर लीनी, अर आकाशतै पृथ्वीविषै परया। मंत्र

के प्रभावकरि धीरा धीरा स्फुलिग की न्याई समुद्रके मध्य कम्पद्वीपमें आय पर्या । आयु कर्मके योग त जीवता बचा । जस बणिकका जहाज फटजाय अर जीवता बच । सो रत्नजटी विद्या खोय जीवता बच्या । सो विद्या तो जाती रही जाकरि विमान विष बठ घर पहुँचे । सो अत्यन्त स्वास लेता कम्पूपवतपर चढ दिशाका अवलोकन करता भया । समद्रकी शीतल पवनकरि खेद मिट्या सो वन-फल खाय कम्पूपवत पर रहे । अर जे विराधितके सेवक विद्याधर सब दिशा नाना भेषकर दौडे हुते ते सीताकू न देख पाछे आए । सो उनका मलिनमुख देख रामने जानी सीता इनकी दृष्टि न आई, तब राम दीघ स्वास नाख कहते भए—

हे भले विद्याधर हो ! तुमने हमारे कायक अथ अपनी शक्ति प्रमाण अति यत्न किया, परन्तु हमारे अशुभका उदय, तात अब तुम सुखसू अपनें स्थानक जाहु । हाथत बडवानलमें गया रत्न बहुरि कहा दीख ? कमका फल ह सो अवश्य भोगना, हमारा तिहारा निवार्या न निवर । हम कुटुम्बत छूटे, बनमे पठें, तो हू कमशत्रुकू दया न उपजी । तात हम जानी हमारे असाताका उदय ह । सीता हू गई या समान और दुख कहा होयगा ? या भाति कहकर राम रोवने लागे, महाधीर नरनिके अधि-पति । तब विराधित धीय बधायवे विष पडित, नमस्कारकर हाथजोड कहता भया—हे दव ! आप एता विषाद काहे करो, थोडे ही दिनमे आप जनकसुताकू देखोग । कसी ह जनकसुता ? नि पाप ह देह जाकी । हे प्रभो ! यह शोक महाशत्रु ह, शरीर का नाशकर और वस्तुकी कहा बात ? तात आप धीर अगीकार करहु । यह धीय ही महापुरुषनिका सवस्व ह । आप सरिखे पुरुष विवेकके निवास हं । धीयवन्त प्राणी अनेक कल्याण देख । अर आतुर अत्यन्त कष्ट कर तो हू इष्ट वस्तुकू न देख । अर यह समय विषादका नाहीं, आप मन लगाय सुनहु । विद्याधरनिका महाराजा खरदूषण मार्या सो अब याका पारिपाक महाविषम ह । सुग्रीव किहकधापुरका धनी, अर इन्द्रजीत, कुम्भकण, त्रिशिर, अक्षोभ, भीम, क्रूरकर्मा, महोदर, इनकू आदिदे अनेक विद्याधर महा योधा बलवन्त याके परम मित्र

है। सो याके मरणके दुःखत क्रोधकूं प्राप्त भए होंगे। ये समस्त नाना प्रकार युद्धमें प्रवीण हैं, हजारां ठौर रणविषै कीर्ति पाय चुके हैं। अर वैताड पर्वतके अनेक विद्याधर खरदूषणके मित्र हैं। अर पवनञ्जयका पुत्र हनुमान, जाहि लखे सुभट दूरहीतैं डरैं, ताके सन्मुख देव हू न आवे, सो खरदूषणका जमाई है, तातैं वह हू याके मरणका रोष करेगा। तातैं यहां वनविषै न रहना। अलंकारोदय नगर जो पाताललंका ताविषै विराजिये। अर भामंडलकूं सीताके समाचार पठाइये वह नगर महादुर्गम है। तहां निश्चल होय कार्यका उपाय सर्वथा करेंगे। या भांति विराधित विनती करी, तब दोऊ भाई चार घोडनिका रथ तापर चढकर पाताललंकाकूं चाले। सो दोऊ पुरुष सीता विना न शोभते भए, जैसे सम्यकदृष्टि विना ज्ञानचारित्र न सोहैं। चतुरंग सेनारूप सागरकरि मंडित दंडकवनतैं चाले। विराधित अगाऊ गया, तहां चन्द्रनखाका पुत्र सुन्दर सो लडवेकूं नगरके बाहिर निकस्या। तानें युद्ध किया, सो ताकूं जीत नगरमें प्रवेश किया। देवनिके नगर समान वह नगर रत्नमई। तहां खरदूषणके मंदिरविषै विराजे। सो महामनोहर सुरमंदिर समान वह मंदिर। तहां सीता विना रंचमात्र हू विश्रामकूं न पावते भए। सीतामें है मन रामका, सो रामकूं प्रियाके समीपकर वनहू मनोग्य भासता हुवा अब कांताके वियोगकर दग्ध जो राम तिनकूं नगर मंदिर विन्ध्याचलके वन समान भासै।

अथानन्तर खरदूषणके मन्दिरमें जिनमन्दिर देखकर रघुनाथ प्रवेश किया। वहां अरहंतकी प्रतिमा देखकर रत्नमई पुष्पनिकर अर्चा करी। क्षण एक सीताका संताप भूल गए। जहां जहां भगवानके चैत्यालय हुते तहां तहां दर्शन किया। प्रशांत भई है दुःखकी लहर जिनके, रामचन्द्र खरदूषणके महल विषै तिष्ठे हैं। अर सुन्दर, अपनी माता चन्द्रनखा सहित पिता अर भाईके शोक कर महाशोक सहित लंका गया। यह परिग्रह विनाशीक है अर महा दुःखका कारण है, विघ्न कर युक्त है। तातैं हे भव्य जीव हो ! तिनविषै इच्छा निवारहु। यद्यपि जीवनिके पूर्व कर्मके सम्बन्धसूं परिग्रहकी अभिलाषा होय है तथापि साधुवर्गके उपदेशकरि यह तृष्णा निवृत्त होय है, जैसे सूर्यके उदयतैं रात्रि निवृत्त होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रामको सीताका वियोग पाताल लंकाविषै निवास वर्णन करनेवाला पैतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४५ ॥

अथानन्तर रावण सीताकू लेय ऊंचे विमानके शिखर पर तिष्ठा धीरे धीरे चालता भया, जैसे आकाश विषै सूर्य चाले। शोक कर तप्तायमान जो सीता, ताका मुखकमल कुमलाय गया देखा, रतिके रागकर मूढ भया है मन जाका। ऐसा जो रावण सो सीताके चौगिर्द फिरै, अर दीन वचन कहै—हे देवी! कामके बाण कर मैं हता जाऊं हूं, सो तोहि मनुष्यकी हत्या होगी। हे सुंदरी! यह तेरा मुखरूप कमल सर्वथा कोप संयुक्त है तो हू मनोग्यते अधिक मनोग्य भासै है। प्रसन्न हो एक वेर मेरी ओर दृष्टि धर। देख, नेत्रानकी कांतिरूप जलकर मोहि स्नान कराय, अर जो कृपादृष्टि कर नाहीं निहारै, तो अपने चरण कमलकरि मेरा मस्तक तोड। हाय हाय! तेरी क्रीडाके वनविषै मैं अशोक वृक्ष ही क्यो न भया जो तेरे चरणकमलकी पगतलीकी घात, अत्यंत प्रशंसा योग्य, सो मोहि सुलभ होती। भावार्थ—अशोक वृक्ष स्त्रीके पगतलीके घातसे फूलै। हे कृशोदरी! विमानके शिखर पर तिष्ठी सर्व दिशा देख, मैं सूर्यके ऊपर आकाशविषै आया हूं। मेरु कुलाचल अर समुद्र सहित पृथ्वी देख, मानो काहू सिलावटने रची है। ऐसे वचन रावणने कहे तब वह महा सती, शीलका सुमेरु, पटके अंतर अरुचिके अक्षर कहती भई। हे अधम! दूर रह, मेरे अंगका स्पर्श मत कर, अर ऐसे निंद्य वचन कभी मत कहै। रे पापी! अल्प आयु! कुगतिगामी! अपयशी! तेरे यह दुराचार तोहिकू भयकारी है। परदाराकी अभिलाषा करता तू महादुःख पावेगा। जैसे कोई भस्म कर दबी अग्निपर पाव धरै तो जरै तैसे तू इन कर्मनिकर बहुत पछतावेगा। तू मोहरूप कीचकरि मलिन चित्त है। तोहि धर्मका उपदेश देना वृथा है, जैसे अंधके निकट नृत्य करै। हे क्षुद्र! जे पर स्त्रीकी अभिलाषा करै है वे इच्छा मात्र ही पापको बांधकर नरकविषै महाकष्टकू भोगै है। इत्यादि रूक्ष वचन सीता रावणसू कहे। तथापि

कामकर हता ह चित्त जाका सो अविवेकसू पाछा न भया। अर खरदूषणकी जे मदद गए हुते परम हितु शुक हस्त प्रहस्तादिक वे खरदूषणक मुवे पीछे उदास होय लका आए। सो रावण काहूकी ओर देखे नाहीं, जानकीकू नानाप्रकारके वचनकर प्रसन्न कर, सो कहा प्रसन्न होय? जसे अग्निकी ज्वाला कू कोई पाय न सक अर नागके माथेकी मणिको न लेय सक, तस सीताकू कोऊ मोह न उपजाय सक। बहुरि रावण हाथ जोड सीस निवाय नमस्कार कर नानाप्रकारके दीनताके वचन कहे, सो सीता याके वचन कछू न सुने। अर मत्री आदि सन्मुख आए सब दिशानित सामत आए। राक्षसनिके पति जो रावण सो अनेक लोकनिकर मडित होता भया, लोक जय जयकार शब्द करते भए। मनोहर गीत नत्य वादित्र होते भए। रावण इन्द्रकी न्याई लकाविष प्रवेश किया। सीता चित्तमें चितवती भई, ऐसा राजा अमर्यादाकी रीति कर, तब पथ्वी कौनके शरण रह? जबलग रामचन्द्रकी कुशल क्षेमकी वार्ता म न सनू तब लग खान पानका मेर त्याग ह। रावण देवारण्य नामा उपवन, स्वगसमान परम सुन्दर, जहा कल्पवक्ष वहा सीताको मेलकर अपने मन्दिर गया। ताही समय खरदूषणके मरणके समाचार आए सो महाशोककर रावणकी अठारा हजार राणी ऊचे स्वरकर विलाप करती भई। अर चन्द्रनखा रावणकी गोदविष लोटकर अति रुदन करती भई। हाय म अभागिनी हती गई, मेरा धनी मारा गया। मेहके झरने समान रुदन किया, अश्रुपातका प्रवाह बहा, पति अर पुत्र दोऊके मरण शोक रूप अग्निकर दग्धायमान ह हृदय जाका। सो याहि विलाप करती देख याका भाई रावण कहता भया— हे वत्स! रोयवकर कहा? या जगतके प्रसिद्ध चरित्रको कहा जानेह? विना काल कोऊ वज्रसे भी हता न मरे, अर जब मत्युकाल आवे तब सहजही मरजाय। कहा वे भूमिगोचरी राम, अर कहा तेरा भरतार, विद्याधर दत्यनिका अधिपति खरदूषण? ताहि वे मारें यह कालहीका कारण ह। जाने तेरा पति मारा ताको म मारूगा। या भाति बहिनकू धीय बधाय कहता भया—अब तू भगवानका अर्चनकर, श्राविकाके व्रत धार। चन्द्रनखाकू ऐसा कहकर रावण महलविष गया। सपकी न्याई निश्वास नाखता

सेजपर पडा। वहां पटराणी मन्दोदरी आयकर भरतारकूं व्याकुल देख कहती भई—हे नाथ! खरदूषणके मरणकर अति व्याकुल भए हो सो तिहारे सुभट कुलविषै यह बात उचित नाहीं। जे शूरवीर हैं तिनके मोटी आपदा विषय हू विषाद नाहीं। तुम वीराधिवीर क्षत्री हो। तिहारे कुलमें तिहारे पुरुष अर तिहारे मित्र रण संग्रामविषै अनेक क्षय भये, सो कौन कौनका शोक करोगे? तुम कबहू काहूका शोक न किया, अब खरदूषणका एता सोच क्यों करो हो? पूर्वे इन्द्रके संग्रामविषै तिहारा काका श्रीमाली मरणकूं प्राप्त भया, अर अनेक बांधव रणमें हते गए, तुम काहूका कभी शोक न किया। आज ऐसा सोच दृष्टि क्यों पडा है जैसा पूर्वे कबहू हमारी दृष्टि न पडा? तब रावण निश्वास नाख बोला हे सुन्दरी! सुन, मेरे अन्तःकरणका रहस्य तोहि कहूं हूं। तू मेरे प्राणनिकी स्वामिनी है अर सदा मेरी वांछा पूर्ण करे है। जो तू मेरा जीतव्य चाहे है तो कोप मतकर, मैं कहूं सो कर। सब वस्तु का मूल प्राण हैं। तब मन्दोदरी कही—जो आप कहो सो मैं करूं। रावण याकी सलाह लेय विलखा होय कहता भया—हे प्रिये! एक सीता नामा स्त्री, स्त्रीनिकी सृष्टिविषै ऐसी और नाहीं, सो वह मोहि न इच्छै तो मेरा जीवन नाहीं। मेरी लावण्यता, रूप, माधुर्यता, सुन्दरता ता सुन्दरीकूं पायकर सफल होय तब मन्दोदरी याकी दशा कष्टरूप जान हंसकर दांतनिकी कांतिरूपी चांदनीकूं प्रकाशतीसती कहती भई—हे नाथ! यह बडा आश्चर्य है? तुम सारिखे प्रार्थना करें अर वह तुमको न इच्छै सो मंदभागिनी है। या संसारमें ऐसी कौन परम सुन्दरी है जाका मन तिहारे देखे खंडित न होय अर मन मोहित न होय? अथवा वह सीता कोई परम उदयरूप अद्भुत त्रैलोक्य सुन्दरी है जाको तुम इच्छो हो अर वह तुमको नाहीं इच्छै है! ये तिहारे कर हस्तीकी सूंडसमान, रत्नजडित बाजूनिकरि युक्त तिन करि उरसे लगाय बलात्कार क्यों न सेवहु? तब रावण कही कि—या सर्वांगसुन्दरीकूं मैं बलात्कार नाहीं गहूं। ताका कारण सुन—अनन्तवीर्य केवलीके निकट मैं एक व्रत लिया है। वे भगवान देव इन्द्रादिक कर वंदनीक ऐसा व्याख्यान करते भए—या संसारविषै भ्रमण करते जे जीव दुखी तिनको पापनि

की निवृत्ति निर्वाणका कारण है। एक भी नियम महा फलकू देय है। अर जिनके एक भी व्रत नाहीं वे नर जजर कलशसमान निगुण हैं। जिनके मोक्षका कारण कोई नियम नाहीं तिन मनुष्यनिमें अर पशुनिमें कछू अंतर नाहीं। तातें अपनी शक्तिप्रमाण पापनिको तजहु, सुकृतरूप धनको अंगीकार करहु जातें जन्मके आंधेकी न्याईं संसाररूप अंधकूपमें न परो। या भांति भगवानके मुखरूप कमलतें निकसे वचनरूप अमृत पीकर कईएक मनुष्य तो मुनि भए कईएक अल्पशक्ति अणुव्रतकू धारणकर श्रावक भए। कर्मके सम्बन्धतें सबकी एक तुल्य शक्ति नाहीं। वहां भगवान केवलीके समीप एक साधु मोसे कृपा कर कहता भया—हे दशानन! कछू नियम तुमहू लेहू, तू दया धर्मरूप रत्नद्वीप विषै आया है। सो गुणरूप रत्ननिके संग्रह विना खाली मति जाहु। ऐसा कही तब मैं प्रणामकर देव असुर विद्याधर मुनि सबकी साक्षी व्रत लिया कि जो परनारी मोहि न इच्छै ताहि मैं बलात्कार न सेऊं। हे प्राण प्रिये! मैं विचारी जो मोसे रूपवान नरको देख ऐसी कौन नारी है जो मान करै? तातें मैं बलात्कार न सेऊं। राजानिकी यही रीति है जो वचन कहे सो निवाहै, अन्यथा महादोष लागै। तातें मैं प्राण तजूं, ता पहिले सीताको प्रसन्न करो। घरके भस्म भए पीछे कुवा खोदना वृथा है। तब मन्दोदरी रावणकू विह्वल जान कहती भई—हे नाथ! तिहारी आज्ञाप्रमाण ही होयगा। ऐसा कह वह देवारण्यनामा उद्यान विषै गई। अर ताकी आज्ञा पाय रावणकी अठारह हजार राणी गईं। मंदोदरी जायकर सीताकूं या भांति कहती भई—हे सुन्दरी! हर्षके स्थानकविषै कहा विषाद कर रही है? जा स्त्रीके रावण पति सो जगतविषै धन्य। सब विद्याधरनिका अधिपति, सुरपतिका जीतनहारा, तीनलोकविषै सुन्दर, ताहि क्यों न इच्छै? निर्जन वनके निवासी, निर्धन, शक्तिहीन भूमिगोचरी तिनके अर्थ कहा दुःख करै है? सब लोकविषै श्रेष्ठ ताहि अंगीकार करि क्यों न सुख करै? अपने सुखका साधनकर या विषै दोष कहा? जो कछु करिए है सो अपने सुखके निमित्त करिए है। अर मेरा कहा जो न करेगी तो कुछ तेरा होनहार है सो होगा। रावण महा बलवान है, कदाचित प्रार्थना भंगतें कोपकर तो तेरा या बातमें अकारज ही है।

अर राम लक्ष्मण तेरे सहाई हैं सो रावणके कोप किए उनका भी जीवना नाहीं। तात शीघ ही विद्याधरनिका जो ईश्वर ताहि अंगीकार कर। जाके प्रसादत परम ऐश्वयको पायकर देवनकेसे सुख भोगव। जब ऐसा कहा तब जानकी अश्रुपातकर पूण है नेत्र जाके, गदगद वाणीकर कहती भई—

हे नारी! यह वचन तूने सबही विरुद्ध कहे। तू पतिव्रता कहावे ह। पतिव्रतानिके मुखत ऐसे वचन कस निकस? यह शरीर मेरा छिद जावे, भिदजावे हत जावे परन्तु अन्य पुरुषकू म न इच्छू। रूपकर सनत्कुमार समान होव अथवा इन्द्र समान होवे तो मेरे कौन अथ? म सवथा अन्य पुरुषकू न इच्छू। तुम सब अठारह हजार राणी भेली होयकर आई हो सो तिहारा कहा म न करू। तिहारी इच्छा होय सो करो। ताही समय रावण आया, मदनके आतापकरि पीडित। जस तषातुर माता हाथी गगाके तीर आवे तस सीताके समीप आय मधुर वाणीकर आदरसू कहता भया—हे देवी! तू भय मत कर। म तेरा भक्त हू! हे सुन्दरी। चित्त लगाय एक विनती सुन। म तीन लोकमें कौन वस्तुकर हीन जो तू मोहि न इच्छ। ऐसा कहकर स्पशकी इच्छा चाहता भया। तब सीता क्रोधकर कहती भई—पापी! परे जा, मेरा अग मत स्पर्शे। तदि रावण कहता भया—कोप अर अभिमान तज, प्रसन्न हो, शची इन्द्राणी समान दिव्य भोगनिकी स्वामिनी होहू। तब सीता बोली—कुशीले परुषका विभव मलसमान ह। अर शीलवत ह तिनके दरिद्र ही आभषण ह। जे उत्तम वशविष उपजे हैं तिनके शीलकी हानिकरि दोऊ लोक बिगरै ह। तात मेरे तो मरण ही शरण ह। तू परस्त्रीकी अभिलाषा राख ह सो तेरा जीतव्य वथा ह। जो शील पालता जीव ह ताहीका जीतव्य सफल ह। या भाति जब सीता तिरस्कार किया तब रावण क्रोधकर मायाकी प्रवत्ति करता भया। राणी अठारह हजार सब जाती रहीं, अर रावणकी मायाके भयत सूय अस्त होयगया। मद झरती मायामई हाथिनिकी घटा आई। यद्यपि सीता भयभीत भई तथापि रावणके शरण न गई। बहुरि अग्निके स्फुलिंगे बरसते भए, अर लबलबाट कर ह जीभ जिनकी ऐसे सप आए, तथापि सीता रावणके शरण न गई। बहुरि महा क्रूर वानर फारे ह मुख जिन्होने उछल उछल

आए, अतिभयानक शब्द करते भए तथापि सीता रावणके शरण न गई। अर अग्निके ज्वाला समान चपल है जिह्वा जिनकी, ऐसे मायामई अजगर तिनने भय उपजाया तथापि सीता रावणके शरण न गई। बहुरि अंधकार समान श्याम ऊंचे व्यंतर हुंकार शब्द करते आए, भय उपजावते भए तथापि सीता रावणके शरण न गई। या भांति नानाप्रकारकी चेष्टाकर रावणने उपसर्ग किए तथापि सीता न डरी। रात्रि पूर्ण भई जिनमंदिरनि विषै वादित्रनिके शब्द होते भए, द्वारनिके कपाट उघरे, मानो लोकनिके लोचन ही उघरे। प्रातसंध्याकर पूर्वदिशा आरक्त भई, मानो कुंकुमके रंगकरि रंगी ही है। निशाका अंधकार सब दूरकर चन्द्रमाको प्रभारहित कर सूर्यका उदय भया। कमल फूले, पक्षी विचरने लगे, प्रभात भया। तब प्रातक्रिया कर विभीषणादि रावणके भाई खरदूषणके शोककर रावणपै आए। सो नीचा मुख किए आंसू डारते भूमिविषै तिष्ठे। ता समय पटके अंतर शोककी भरी जो सीता ताके रुदनके शब्द विभीषणने सुने। अर सुनकर कहता भया यह कौन स्त्री रुदन करै है? अपने स्वामीतै विछुरी है याका शोकसंयुक्त शब्द दुखको प्रकट दिखावै है। ये विभीषणके शब्द सुन सीता अधिक रोवने लगी, सज्जनको देख शोक बढै ही है। विभीषण पूछता भया—हे बहिन! तू कौन है? तब सीता कहती भई—मैं राजा जनककी पुत्री, भामंडलकी बहिन, रामकी राणी, दशरथ मेरा सुसरा, लक्ष्मण मेरा देवर, सो खरदूषणतैं लडने गया। ताके पीछे मेरा स्वामी भाईकी मदद गया। मैं वनविषै अकेली रही सो छिद्र देख या दुष्टचित्तने हरी। सो मेरा भरतार मो विना प्राण तजेगा। तात हे भाई! मोहि मेरे भरतारपै शीघ्र ही पठाय देहु। ये वचन सीताके सुन विभीषण रावणसे विनय कर कहता भया—हे देव! यह परनारी अग्निकी ज्वाला है, आशीविष सर्पके फण समान भयंकर है, आप काहेकूं लाए? अब शीघ्रही पठाय देहु। हे स्वामी! मैं बालबुद्धि हूं, परन्तु मेरी विनती सुनो। मोहि आपने आज्ञा करी हुती जो तू उचित वार्ता हमसों कहिवो कर। तातैं आपकी आज्ञातैं मैं कहूं हूं। तिहारी कीर्तिरूप बेलिके समूह कर सब दिशा व्याप्त होय रही है। ऐसा न होय जो अपयशरूप अग्निकर यह कीर्तिलता

भस्म होय। यह परदाराका अभिलाष अयुक्त, अति भयकर, महानिंद्य, दोऊ लोकका नाश करणहारा जाकर जगतविषै लज्जा उपजे, उत्तम जननिकरि धिक्कार शब्द पाइए है। जे उत्तम जन हैं तिनके हृदयकू अप्रिय। ऐसा अनीतिकार्य कदाचित न कर्तव्य। आप सकल वार्ता जानो हो, सब मर्यादा आपही ते रहे, आप विद्याधरनिके महेश्वर, यह बलता अगारा काहेकू हृदयमें लगावो? जो पापबुद्धि परदारा सेवे है सो नरकविषै प्रवेश करे है। जैसे लोहेका ताता गोला जलमें प्रवेश करे तैसे पापी नरकमें पडे है। ये वचन विभीषणके सुनकर रावण बोला हे भाई! पृथ्वीपर जो सुन्दरवस्तु है ताका मैं स्वामी हूं, सब मेरीही वस्तु है, परवस्तु कहासे आई? ऐसा कहकर और बात करने लगा। बहुरि महानीतिकाधारी मारीच मंत्री क्षणएक पीछे कहता भया—देखो! यह मोहकर्मकी चेष्टा, रावणसारिखे विवेकी, सर्वरीतिको जानै ऐसे कर्म करे! सर्वथा जे सुबुद्धि पुरुष हैं तिनकू प्रभातही उठकर अपना कुशल अकुशल चितवनी, विवेकसे न चूकना। या भांति निरपेक्ष भया महाबुद्धिमान मारीच कहता भया। तब रावणने कछू पाछा जवाब न दिया, उठकर खडा हो गया। त्रैलोक्य मंडन हाथीपर चढि सब सामंतनिसहित उपवनते नगरकू चाल्या। बरछी, खडग, तोमर, चमर, छत्र, ध्वजा आदि अनेक वस्तु हैं हाथनिमें जिनके, ऐसे पुरुष आगे चले जाय हैं। अनेक प्रकार शब्द होय है। चंचल है ग्रीवा जिनकी, ऐसे हजारां तुरंगनिपर चढे सुभट चले जाय हैं। अर कारीघटासमान मद झरते गाजते गजराज चले जाय हैं। अर नानाप्रकारकी चेष्टा करते उछलते पयादे चले जाय हैं। हजारां वादित्र बाजे। या भांति रावणने लंकामें प्रवेश किया। रावणके चक्रवर्ती सम्पदा, तथापि सीता तृणसे हू जघन्य जाने। सीताका मन निष्कलंक, यह लुभायवेकू समर्थ न भया। जैसे जलविषै कमल अलिप्त रहे, तैसे सीता अलिप्त रहे। सर्व ऋतुके पुष्पनिकरि शोभित, नानाप्रकारके वृक्ष अर लतानिकरि पूर्ण, ऐसा प्रमद नामा बन, तहां सीताकू राखी। वह वन नन्दन समान सुन्दर, जाहि लखे नेत्र प्रसन्न होय, फुल्लगिरिके ऊपर यह बन सो देखे पीछे और ठौर दृष्टि न लगे। जाहि लख देवनिका मन उन्मादकू प्राप्त होय मनुष्यनिकी कहा बात?

वह फुल्लगिरि सप्तवनकरिवेष्टित सौहै, जसे भद्रशालादि बनकर सुमेरु सौहै है ।

हे श्रेणिक ! सात ही वन अदभुत है उनके नाम सुन—प्रकीणक, जनानन्द, सुखसेव्य, समुच्चय, चारणप्रिय, निबोध, प्रमद । तिनमें प्रकीणक पथ्वीविषे, ताके ऊपर जनानन्द, तहा चतुर जन क्रीडा करै। अर तीजा सुखसेव्य अति मनोग्य, सुन्दर वक्ष, अर वेल, कारीघटा समान सघन सरोवर, सरिता वापिका, अतिमनोहर। अर समुच्चयविषे सूयका आताप नाहीं, वृक्ष ऊचे, कहू ठौर स्त्री क्रीडा करै, कहु ठौर पुरुष। अर चारणप्रिय वनविषे चारण मुनि ध्यान करै। अर निबोध ज्ञानका निवास। सबनिके ऊपर अति सुन्दर प्रमद नामा वन ताके ऊपर जहा ताबूलका बेल, केतकीनिके बीडे, जहा स्नानक्रीडा करवेको उचित रमणीक वापिका कमलनिकर शोभित हैं, अर अनेक खणके महल, अर जहा नारगी, विजोरा, नारियल, छुहारे, ताडवक्ष इत्यादि अनेक जातिके वक्ष सब ही पुष्पनिके गुच्छनि कर शोभै है, जिनपर भमर गुजार करै है, अर जहा वेलिनके पल्लव मन्द पवन कर हालै है, जा वनविषै सघन वृक्ष समस्त ऋतुनिके फल फूलनिकर कारीघटा समान सघन है, मोरनके युगलकर शोभित है। ता बनकी विभूति मनोहर वापी, सहसदल कमल है मुख जिनके, सो नीलकमल नेत्रनिकर निरखे है, अर सरोवरविषे मन्द मन्द पवनकर कल्लोल उठै है। सो मानो सरोवरी नत्य ही करै है। अर कोयल बोलै है सो मानो वचनालाप ही करै है। अर राजहंसनीके समूहकर मानो सरोवरी हंसेही है। बहुत कहिवे कर कहा ? वह प्रमदनामा उद्यान सब उत्सवका मूल, भोगिनिका निवास, नन्दन बनहूत अधिक। ता वनमें एक अशोकमालिनी नामा वापी कमलादि कर शोभित, जाके मणि स्वर्णके सिवाण, विचित्र आकारकू धरै है द्वार जाके, जहा मनोहर महल, जाके सुन्दर झरोखे, तिनकर शोभित जहा नीझरने झरै है। वहा अशोक वक्षके तले सीता राखी। कसी है सीता ? श्रीरामजीके वियोगकर महा शोकक‍ू धरै है, जसे इन्द्रते विछुरी इन्द्राणी। रावणकी आज्ञात अनेक स्त्री विद्याधरी खडी ही रहैं। नाना प्रकारके वस्त्र सुगन्ध आभूषण जिनके हाथमें, भाति भातिकी चेष्टाकर सीताकू प्रसन्न

किया चाहें। दिव्यगीत दिव्यनत्य, दिव्यवादित्र, अमत सारिखे दिव्यवचन तिनकर सीताकू हर्षित किया चाहें, परन्तु यह कहा हर्षित होय ? जस मोक्ष सपदाकू अभव्य जीव सिद्ध न कर सक तैस रावण की दूती सीताकू प्रसन्न न कर सकीं। ऊपरा ऊपरि रावण दूती भेजे, कामरूप दावानलकी प्रज्ज्वलित ज्वाला, ताकर व्याकुल, महाउन्मत्त, भाति भातिके अनुरागके वचन सीताकू कह पठावे। यह कुछ जवाब नहीं देय। दूती जाय रावणसो कह—हे देव ! वह तो आहार पानी तज बठी ह, तुमको कसे इच्छ ? वह काहूसो बात न कर। निश्चल अगकर तिष्ठ ह। हमारी ओर दृष्टिही नाहीं धर। अमत हूते अति स्वादु दुग्धादि कर मिश्रित बहुत भाति नानाप्रकारके व्यजन ताके मुख आगे धरे ह, सो स्पर्शं नाहीं। यह दूतीनिकी बात सन रावण खेदखिन्न होय, मदनाग्निकी ज्वाला कर व्याप्त अग जाका महा आरतरूप चिन्ताके सागरमें डूबा। कबहू निश्वास नाखे, कबहू सोच करे। सूख गया ह मुख जाका, कबहू कछूइक गाव। कामरूप अग्निकर दग्ध भया हृदय जाका, कछुइक विचार२निश्चल होय ह। अपना अग भूमिमें डार देय फिर उठे, सूनासा होय रहे, विना समझे उठिचले, बहुरि पीछा आवे। जसे हस्ती सू ड पटके तसे भूमिमें हाथ पटके। सीताको बराबर चितारता आखनित आसू डारे, कबहु शब्द कर बलावे, कबहु हुकार शब्द करे, कबहु चुप होय रहे, कबहु वथा बकवाद कर, कबहु सीता २ बार २ बक, कबहु नीचा मुख कर नखनिकरि धरती कुचर कबहु हाथ अपने हिय लगावे, कबहु बाहू ऊचा कर, कबहु सेजपर पडे, कबहु उठ बठे, कबहु कमल हिये लगावे, कबहु दूर डार देय, कबहु शृगारका काव्य पढे, कबहु आकाशकी ओर देखे कबहु हाथसे हाथ मसले, कबहु पगसे पथ्वी हण। निश्वास रूप अग्निकर अधर श्याम होय गए। कबहु कह २ शब्द कर, कबहु अपने केश बखेर, कबहु बाधे, कबहु जभाई लय, कबहु मुखपर अचल डारे, कबहु वस्त्र सब पहिर लेय, सीताके चित्राम बनावे, कबहु अश्रुपात कर आर्द्रा कर, दीनभया हाहाकार शब्द करे, मदन ग्रहकर पीडित अनेक चेष्टाकर आशा रूप ईधन कर प्रज्ज्वलित जो कामरूप अग्नि उसकर उसका हृदय जरे और शरीर जले। कभी मनमें चितवे

कि मै कौन अवस्थाकूं प्राप्त भया जिसकर अपना शरीर भी नहीं धार सकूं हूं। मैं अनेक गढ और सागरके मध्य तिष्ठे बडे बडे विद्याधर युद्धविषै हजारां जीते, और लोकविषै प्रसिद्ध जो इन्द्र नामा विद्याधर सो बंदीगृह विषै डारा, अनेक युद्धविषै जीते राजाओंके समूह। अब मोहकर उन्मत्त भया मैं प्रमादके वश प्रवर्ता हूं। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कहै हैं—हे राजन! रावण तो कामके वश भया और विभीषण महाबुद्धिमान मंत्रविषै निपुण ने सबमंत्रियोंको इकट्ठाकर मंत्र विचारचा। कैसा है विभीषण? रावणके राज्यका भार जिसके शिरपर पड्या है, समस्त शास्त्रवोंके ज्ञानरूप जलकर धोया है मन रूप मल जिसने, रावणके उस समान और हितू नहीं। विभीषणको सर्वथा रावणके हित हीका चिंतवन है। सो मंत्रियों से कहता भया अहो वृद्ध हो! राजाकी तो यह दशा, अब अपने ताई क्या कर्त्तव्य? सो कहो। तब विभीषणके वचन सुन संभिन्नमति मंत्री कहता भया—हम क्या कहें? सर्वकार्य बिगडा। रावणकी दाहिनी भुजा खरदूषण था सो मुवा। और विराधित क्या पदार्थ? सो स्यालसे सिंह भया, लक्ष्मणके युद्धविषै सहाई भया और वानरवंशी जोरसे बस रहे हैं। इनका आकार तो कुछ औरही और इनके चित्तमें कछु और ही। जैसे सर्प ऊपर तो नरम, माहीं विष। और पवन का पुत्र जो हनुमान सो खरदूषणकी पुत्री अनंगकुसमाका पति सो सुग्रीवकी पुत्री परणा है। सुग्रीव की पक्ष विशेष है। यह वचन संभिन्नमतिके सुन पंचमुख मंत्री मुसकाय बोल्या—तुम खरदूषणके मरण कर सोच किया। सो शूरवीरनिकी यही रीति है संग्रामविषै शरीर तजैं। अर एक खरदूषणके मरण कर रावणका क्या घट गया? जैसे पवनके योगसे समुद्रसे एक जलकी कणिका गई तो समुद्रका क्या न्यून भया? और तुम औरोंकी प्रशंसा करो हो सो मेरे चित्तमें लज्जा उपजै है। कहां रावण जगत का स्वामी और कहां वे बनवासी भूमिगोचरी? लक्ष्मणके साथ सूर्यहास खड्ग आया तो क्या और विराधित आय मिला तो क्या? जैसे पहाड विषम है और सिंहकर संयुक्त है तो भी क्या दावानल न दहै? सर्वथा दहै। तब सहसमति मंत्री माथा हलाय कहता भया—कहा ये अर्थहीन बात कहो हो?

जिसमें स्वामीका हित हो सो करना। दूसरा स्वल्प है और हम बडे हैं—यह विचार बुद्धिमानका नाहीं। समय पाय एक अग्निका किणका सकलमंडलको दहै। अर अश्वग्रीवके महासेना थी और सब पृथ्वी विषै प्रसिद्ध हुवा था सो छोटे से त्रिपृष्ठने रणमें मार लिया। इसलिए और यत्न तज लंकाकी रक्षा का यत्न करो। नगरी परम दुर्गम करो, कोई प्रवेश न कर सकै, महाभयानक मायामई यंत्र सब दिशामें विस्तारो, और नगरमें परचक्रका मनुष्य न आवने पावै। अर लोकको धीर बधाओ अर सब उपायकर रक्षा करो जिसकर रावण सुखकूं प्राप्त होय, और मधुर बचनकर नाना वस्तुओंकी भेंट कर सीताकूं प्रसन्न करो। जैसे दुग्ध पायवेसे नागनी प्रसन्न करिए। और वानर वंशी योधाओंकी नगरके बाहिर चौकी राखो। ऐसे किए कोऊ परचक्रका धनी न आय सकै और यहांकी बात परचक्र में न जाय। या भांति गढका यत्न कीये, तब कौन जाने सीता कौनने हरी और कहां है? सीता बिना राम निश्चय सेती प्राण तजेगा। जिसकी स्त्री जाय सो कैसे जीवै? अर राम मूवा तब अकेला लक्ष्मण क्या करेगा? अथवा रामके शोककर लक्ष्मण अवश्य मरै, न जीवै, जैसे दीपकके गए प्रकाश न रहै। अर यह दोनों भाई मूए तब अपराधरूप समुद्रमें डूबा जो विराधित सो क्या करेगा? और सुग्रीवका रूपकर विद्याधर उसके घरमें आया सो रावण टार सुग्रीवका दुख कौन हरै? मायामई यंत्रकी रखवारी सुग्रीवको सौंपी जिससे वह प्रसन्न होय। रावण इसके शत्रुका नाश करै। लंकाकी रक्षाका उपाय मायामई यंत्र कर करना। यह मंत्रकर हर्षित होय सब अपने अपने घर गए। विभीषिणने मायामई यंत्रकर लंकाका यत्न किया। अर अध ऊर्ध तिर्यकसे कोऊ न आय सकै, नानाप्रकारकी विद्याकरि लंका अगम्य करी गौतम गणधर कहे हैं—हे श्रेणिक! संसारी जीव सब ही लौकिककार्यमें प्रवर्त्ते हैं व्याकुलचित्त हैं, अर जे व्याकुलतारहित निर्मलचित्त हैं तिनकूं जिनवचनके अभ्यास टाल और कर्तव्य नाहीं। अर जो जिनेश्वरने भाषा है सो पुरुषार्थ बिना सिद्ध नाहीं। अर भले भवितव्यके बिना पुरुषार्थकी सिद्धि नाहीं। इसलिए जे भव्यजीव हैं वे सर्वथा संसारमें विरक्त होय मोक्षका यत्नकरो। नर

नारक देव तियच ये चार ही गति दु खरूप ह । अनादिकालसे ये प्राणी कमके उदयकर युक्त रागादि में प्रवर्त्ते ह इसलिए इनके चित्तमें कल्यानरूप वचन न आव । अशुभका उदय मेट शुभकी प्रवृत्ति कर तब शोकरूप अग्निकर तप्तायमान न होय ।

इति श्रीरविषेण चायविरचित मह पद्मपु ाण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचानकाविष नत्राके मायाम को रा वणन करनेवाला छियालीसवां पव पूण भया ॥ ४६ ॥

अथान तर किहकधापुरका स्वामी जो सुग्रीव, सो उसका रूप बनाय विद्याधर इसके पुरमें आया। और सुग्रीव कांताके विरहकर दुखी भमता सता वहा आया जहा खरदूषणकी सेनाके सामत मुए पडे थे । बिखरे रथ, मूए हाथी, मूए घोडे, छिन्न भिन्न होय रहे ह शरीर जिनके, कईएक राजावो का दाह होय ह, कईएक एसके ह, कईएकनिकी भुजा कटगई है कईएकनिकी जघा कटगई ह, कईयोकी आत गिरपडी ह, कईओके मस्तक पडे ह । कइयोको स्याल भख ह, कईयोको पक्षी चूथे ह, कईयोके परिवार रोव ह, कईयकोको टागि राखे ह । यह रणखेत का वत्तात देख सुग्रीव किसीकू पूछता भया। तव उसने कही खरदूषण मारा गया । तब सुग्रीवने खरदूषणका मरण सुन अति दु ख किया । मनमें चितवे ह बडा अनथ भया । वह महाबलवान था जिससे मेरा सवदु ख निवत्त होता सो कालरूप दिग्गजने मेरा आशारूप वक्ष तोडा । म हीन पुण्य, अब मेरा दु ख कसे शात होय ? यद्यपि बिन उद्यम जीवकू सुख नाहीं तात दु ख दूर करवेका उद्यम अगीकार करू । तब हनुमानप गया । हनुमान दोनो का समानरूप देख पीछ गया । तब सुग्रीवने विचारो कौन उपायकरू जिससे चित्तकी प्रसन्नता होय, जसे नवा चाद निरखे हष होय । जो रावणके शरणे जाऊ तो रावण मेरा और शत्रुका एकरूप जान शायद मुझे ही मारे, अथवा दोनोको मार स्त्री हर लेय । वह कामाध ह । कामाधका विश्वास नाहीं । मत्र, दोष, अपमान, दान–पुण्य, वित्त, शूरवीरता, कुशील, मनका दाह, यह सब कुमित्रकू न कहिए, जो कहे

खता पाव । तात संग्राममे खरदूषणकू मारचा ताहीके शरणे जाऊ, वह मेरा दु ख हर । और जिसपै दु ख पडा होय सो दुखीके दु खको जान । जिनकी तुल्य अवस्था होय तिनही विष स्नेह होय। सीताके वियोगका सीतापतिहीको दु ख उपजा ह । ऐसा विचारकर विराधितके निकट अति प्रीतिकर दूत पठाया । सो दूत जाय सुग्रीवके आगमका वत्तात विराधितसू कहता भया । सो विराधित सुनकर मनमें हर्षित भया । विचारी बडा आश्चय ह सुग्रीव जसे महाराज मुझसू प्रीति करवकी इच्छा कर । सो बडोके आश्रयसे क्या न होय ? म श्रीराम लक्ष्मणका आश्रय किया । इसलिए सुग्रीवसे पुरुष मोसे दभ किया चाह ह, सुग्रीव आया । मेघकी गाज समान वादित्रनिके शब्द होते आए । सो पाताललकाके लोग सनकर व्याकुल भए । तब लक्ष्मणने विराधितसू पूछा—वादित्रनिका शब्द कौनका सुनिए ह ? तब अनुराधाका पुत्र विराधित कहता भया—ह नाथ ! यह बानरवशियोका अधिपति प्रेमका भरा तिहारे निकट आया ह । किहकधापुरके राजा सूयरजके पुत्र पथ्वी पर प्रसिद्ध बडा बाली, छोटा सुग्रीव । सो बालीने तो रावणकू सिर न नवाया, सुग्रीवकू राज्य देय वरागी भया । सब परिग्रह तज सुग्रीव निहकटक राज्य कर । ताके सुतारा स्त्री । जस शची सयुक्त इन्द्र रम तसें सुग्रीव सुतारा सहित रम । जिनके अगद नामा पुत्र गुण रत्नो कर शोभायमान, जिसकी पथ्वी पर कीर्ति फलरही ह । यह बात विराधित कह ह । अर सुग्रीव आया ही, राम और सग्रीव मिले । रामकू देख फूलगया ह मुखकमल जाका, सुवणके आगन में बठे, अमत समान वाणी कर योग्य सभाषण करत भए । सुग्रीवके सग जे वद्ध विद्याधर ह व रामसू कहते भए—ह दव ! यह राजा सुग्रीव किहकधापुरका पति, महाबली, गुणवान पुरुषनिकू प्रिय सो कोई एक दुष्ट विद्याधर माया कर इनका रूप बनाय इनकी स्त्री सुतारा और राज्य लेयवेका उद्यमी भया ह । ये बचन सुन राम मनमे चितवते भए—यह कोई मुझसे अधिक दुखिया ह, इसके बठे ही दूजा पुरुष इसके घरमें आय धसा ह । इसके राज्य विभव ह, परन्तु कोई शत्रुको निवारिवे समथ नाहीं । लक्ष्मणने समस्त कारण सुग्रीवके मन्त्री जामवतको पूछया । जामवत सुग्रीवके मन तुल्य ह । तब वह मुख्य मत्री महा

विनय सयुक्त कहता भया—हे नाथ ! कामकी फासी कर बेढ्या वह पापी सुताराके रूपपर मोहित भया । मायामई सुग्रीवका रूप बनाय राजमदिर आया, सो सुताराके महिल में गया । सुतारा महा सती अपने सेवकनिसू कहती भई—यह कोई दुष्ट विद्याधर विद्यासे मेरे पतिका रूप बनाय आव ह, पाप कर पूण, सो इसका आदर सत्कार कोई मत करो । वह पापी शकारहित जायकर सुग्रीवके सिहासनपर बैंठ्या और ताही समय सुग्रीव भी आया । अर अपने लोकनिकू चितावान देख तब विचारी मेरे घरमें काहेका विषाद ह ? लोक मलिन वदन, ठौर ठौर भेले होय रह ह । कदाचित अगद मेरुके चत्यालयों की वन्दनाके अथ सुमेरु गया न आया होय, अथवा रानीने काहू पर रोष किया होय, अथवा जन्म जरा मरण कर भयभीत विभीषण वराग्यकू प्राप्त भया होय, उसका सोच होय । ऐसा विचारकर द्वारे आया । रत्नमई द्वार गीत गान रहित देख्या लोक सचित देखे । मनमें विचारी यह मनुष्य और ही होगये । मन्दिरके भीतर स्त्री जनोके मध्य अपनासा रूप किए दुष्ट विद्याधर बैंठ्या देखा । दिव्य हार पहिरे, सुन्दर वस्त्र, मुकुटकी कातिमें प्रकाशरूप । तब सुग्रीव क्रोधकर गाजा जसे वर्षा कालका मेघ गाज, और नेत्रनिकी आरक्ततासू दशोदिशा आरक्त होय गई जसै साझफूल । तब वह पापी कत्रिम सुग्रीव भी गाजा । जसे माता हाथी मदकर विह्वल होय तसा काम कर विह्वल सुग्रीवसू लडवेकू उठ्या । दोऊ होठ डसते भकुटी चढाय युद्धकू उद्यमी भए । तब श्रीरामचन्द्रादि मन्त्रियोने मनकिए और सुतारा पटराणी प्रकट कहती भई—यह कोई दुष्ट विद्याधर मेरे पतिका रूप बनाय आया ह, देह और बल और तचनोकी काति से तुल्य भया ह, परन्तु मेरे भरतारमें महापुरुषोके लक्षण ह सो इसमें नाहीं । जसै तुरग और खरकी तुल्यता नाहीं तस मेरे पतिकी और इसकी तुल्यता नाहीं । या भाति राणी सुताराके वचन सुनकर भी कईएक मन्त्रीने न मानी, जैसे निधनका वचन धनवान न माने । सादृश्य-रूप देखकर हरागया ह चित्त जिनका । सो सब मन्त्रियोने भेले होय मन्त्रकिया—पडितनिकू इतनोके वचनोका विश्वास न करना—बालक, अतिवद्ध, स्त्री, मद्यपायी, वेश्यासक्त इनके वचन प्रमाण नाहीं ।

और स्त्रीनिकू शीलकी शुद्धि राखनी। शीलकी शुद्धि बिना गोत्रकी शुद्धि नाहीं। स्त्रियोको शील ही प्रयोजन है इसलिए राजलोकमें दोनो ही न जाने पावें, बाहिर रहें। तब इनका पुत्र अंगद तो माता के बचनसे इनकी पक्ष आया और जाबूनद कहे है—हम भी इन्हींके संग रहें। अर इनका पुत्र, सो शत्रुमई। सुग्रीवकी पक्ष अंगद है और सात अक्षोहणी दल इनके हैं और सात उसपें हैं। नगरकी दक्षिणके ओर वह राखा, उत्तरकी ओर यह राखे। अर बालीकापुत्र चन्द्ररश्मि उसने यह प्रतिज्ञाकरी जो सुताराके महिल आवेगा उसे खडग कर मारूंगा। तब यह साचा सुग्रीव स्त्रीके विरह कर व्याकुल शोकके निवारवे निमित्त खरदूषण पै गया। सो खरदूषण तो लक्ष्मणके खडगकर हता गया। फिर यह हनुमानपें गया, जाय प्रार्थना करी, मैं दुःख कर पीडित हूं मेरी सहाय करो। मेरा रूपकर कोई पापी मेरे घरमें बैठ्या है, सो मोहि महा बाधा है, जायकर उसे मारो। तब सुग्रीवके वचन सुन हनुमान बडवानल समान क्रोधकर प्रज्ज्वलित होय अपने मंत्रियन सहित अप्रतीघात नामा विमानमें बैठ किहकधापुर आया। सो हनुमानकूं आया सुन वह मायामई सुग्रीव हाथी चढ लडिवेकू आया। सो हनुमान दोनोका सादृश्य रूप देख आश्चर्यकू प्राप्त भया। मनमें चितवता भया ये दोनो समानरूप सुग्रीव ही हैं। इनमेंसे कौनको मारूं, कछु विशेष जाना न पडे। विना जाने सुग्रीव ही को मारूं तो बडा अनर्थ होय। एक मुहूर्त अपने मंत्रिनिसूं विचारकर उदासीन होय हनुमान पीछा निजपुर गया। सो हनुमानकू गए सुन सुग्रीव बहुत व्याकुल भया। मनमें विचारता भया—हजारां विद्या अर माया, तिनसे मंडित, महाबली महाप्रताप रूप वायुपुत्र, सो भी सन्देहकू प्राप्त भया सो बडा कष्ट। अब कौन सहाय करे? अतिव्याकुल होय, दुःख निवारवे अर्थ, स्त्रीके वियोगरूप दावानलकर तप्तायमान, आपके शरण आया है। आप शरणागत प्रतिपालक हो। यह सुग्रीव अनेक गुणनिकर शोभित है। हे रघुनाथ! प्रसन्न होहु, याहि अपना करहु। तुमसारिखे पुरुषनिका शरीर परदुःखका नाशक है। ऐसे जाबूनदके वचन सुन राम, लक्ष्मण और विराधित कहते भए—धिक्कार होवे परदारा-रत पापी जीवनिकूं। रामने विचारी—मेरा और इसका

दु खसमान है। सो यह मेरा मित्र होयगा। म इसका उपकार करू अर यह पाछा मेरा उपकार करेगा। नहीं तो म निग्रथ मुनि होय मोक्षका साधन करू गा। ऐसा विचारकर राम सुग्रीवसू कहते भए, हे सुग्रीव! म सवथा तुझे मित्र किया, जो तेरा स्वरूप बनाय आया ह उसे जीत तेरा राज्य तुझे निह कटक कराय दू गा, और तेरी स्त्री तोहि मिलाय दू गा। अर तेरा काम होय पीछे तू सीता की सुध हमें आन देना कि कहा ह। तब सुग्रीव कहता भया-हे प्रभो! मेरा काय भए पीछे जो सात दिनमें सीताकी सुध न लाऊ तो अग्निमें प्रवेश करू यह बात सुन राम प्रसन्न भए, जसे च द्रमाकी किरण करि कुमुद प्रफुल्लित होय। रामका मुखरूप कमल फूलगया। सुग्रीवके अमतरूप वचन सुनिकर रोमाच खडे होय आए। जिनराजके चत्यालयमें दोनो धममित्र भए। यह वचन किया परस्पर कोई द्रोह न करे। बहुरि राम लक्ष्मण रथ चढ अनेक सामन्तनि सहित सुग्रीवके साथ किहकधापुर आए। नगरके समीप डेराकर सुग्रीवने मायामयी सुग्रीवप दूत भेज्या। सो दूतकू ताने खेद दिया, अर मायामई सुग्रीव रथमें बठ बडी सेना सहित युद्धके निमित्त निकस्या। सो दोऊ सुग्रीव परस्पर लडे। मायामई सुग्रीव और साचे सुग्रीवके नानाप्रकारका युद्ध भया, अधकार होय गया, दोऊ ही खेदकू प्राप्तभए। घनी देरमें मायामई सुग्रीवने साचे सुग्रीवके गदाकी दोनी सा गिरपडया। तव वह मायामई सुग्रीव इसकू मूवा जान हर्षित होय नगरमें गया। अर साचा सुग्रीव मूर्छित होय परचा सो परिवारके लोक डेरामें लाये। तब सचेत होय रामसू कहता भया, हे प्रभो! मेरा चोर हाथमें आया हुता सो नगरमें क्यो जाने दिया? जो रामच द्रकू पायकर मेरा दु ख नाहीं मिट तो या समान दु ख कहा? तब राम कही तेरा और उसका रूप देखकर हम भेद न जा या। तात तेरा शत्रु न ह या। कदाचित विना जाने तेरा ही अगर नाश होय तो योग्य नाहीं। तू हमारा परम मित्र ह। तेरे और हमारे जिनमन्दिरमें बचन हुवा ह।

अथान तर रामने मायामई सुग्रीवकू बहुरि युद्धके निमित्त बुलाया। सो वह बलवान क्रोधरूप अग्नि कर जलता आया। राम स मुख भए। वह समुद्रतुल्य अनेक शस्त्रोंके धारक सुभट, तेई भए

ग्राह्, उनकर पूण। ता समय लक्ष्मणने साचा सुग्रीव पकड राख्या कि कभी स्त्रीके बैरसे शत्रुके सन्मुख न जाय। अर श्रीरामकू देखकर मायामई सुग्रीवके शरीरमें जो वताली विद्या हुती सो ताकू पूछ कर ताके शरीरत निकसी। तब सुग्रीवका आकार मिट वह साहसगति विद्याधर इन्द्रनीलके पवत समान भासता भया। जसे सापकी काचली दूर होय तसे सुग्रीवका रूप दूर होगया। तब जो आधी सेना बानरवशीनिकी यामें भेली भई थी, यात जुदा होय, युद्धकू उद्यमी भई। सब बानरवशी एक होय नानाप्रकारके आयुधनिकरि साहसगतिसू युद्ध करते भए। सो साहसगति महा तेजस्वी, प्रबल शक्तिका स्वामी सब बानरवशीनिकू दशोदिशाकू भजाये, जस पवन धूलकू उडाव। बहुरि साहसगति धनुष बाण लेय रामपै आया। सो मेघमडल समान बाणनिकी वर्षा करता भया। उद्धत ह पराक्रम जाका। साहसगतिके और श्रीरामके महा युद्ध भया। प्रबल ह पराक्रम जिनका ऐसे राम रणक्रीडामें प्रवीण, क्षुद्रबाणनिकरि साहसगतिका वक्तर छेद्या और तीक्ष्ण बाणनिकरि साहसगतिका शरीर चालिनी समान कर डारया। सो प्राणरहित होय भूमिमें परया। सबनि निरख निश्चय किया जो यह प्राणरहित ह। तब सुग्रीव राम लक्ष्मणकी महास्तुति कर इनकू नगरमें लाया, नगरकी शोभा करी सुग्रीवको सुताराका सयोग भया सो भोगसागरमें मग्न होय गया। रात दिनकी सुध नाहीं, सुतारा बहुत दिननिमे देखी सो मोहित होय गया। अर नन्दनवनकी शोभाकू ऊलघे ह ऐसा आनन्दनामा वन वहा श्रीरामकू राखे। ता वनकी रमणीकताका वणन कौन कर सक? जहा महा मनोग्य श्रीचन्द्रप्रभका चत्यालय, वहाँ राम लक्ष्मण पूजा करी। अर विराधितकू आदि दे सब कटक का डेरा वनमे गया, खदरहित तिष्ठ। सुग्रीवकी तेरह पुत्री रामचन्द्रके गुण श्रवण कर? अति अनुराग भरी वरिवेकी बुद्धि करती भई। चन्द्रमा समान मुख जिनका तिनके नाम सुनो—चन्द्राभा, हृदयावली हृदयधर्म्मा, अनुधरी, श्रीकाता, सुन्दरी, सुरवती, देवागना समान ह विभ्रम जाका, मनोवाहिनी मनमे बसनहारी, चारुश्री, मदनोत्सवा, गुणवती अनेक गुणनिकरि शोभित, अर पद्मावती

फूले कमल समान ह मुख जाका, तथा जिनपती सदा जिनपूजामे तत्पर । ये त्रयोदश कन्या लेकर सुग्रीव राम पै आया । नमस्कारकर कहता भया—हे नाथ ! ये इच्छाकरि आपकू वर है, हे लोकेश ! इन कन्यानिके पति होवो । इनका चित्त जन्महीत यह भया जो हम विद्याधरनिकू न वरें । आपके गुण श्रवणकर अनुरागरूप भई ह । यह कहकर रामको परणाई । ये कन्या अति लज्जाकी भरी नमीभूत हैं मुख जिनके, रामका आश्रय करती भई । महासुन्दर नवयौवन, जिनके गुण वणनमें न आव, विजुरी समान, सुवणसमान कमल के गभ समान शरीरकी काति जिनकी, ताकर आकाशविषै उद्योत भया । वे विनयरूप लावण्यताकर मडित रामके समीप तिष्ठीं । सुन्दर ह चष्टा जिनकी । यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह—हे मगधाधिपति पुरुषनिमे सूयसमान श्रीराम सारिखे पुरुष तिनका चित्त विषयवासनात विरक्त ह, परन्तु पूव जन्मके सम्बन्धसू कईएक दिन विरक्तरूप गहमें रह बहुरि त्याग करेंग ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष सुग्रीवका व्याख्यान
वर्णन करनेवाला सन्तालीसवां पर्व पर्ण भया ॥ ४७ ॥

अथानन्तर ते सुग्रीवकी कन्या रामके मनमोहिवेके अथ अनेक प्रकारकी चेष्टा करती भई, मानो देवलोकहीत उतरी ह । वीणादिकका बजावना, मनोहर गीतका गावना इत्यादि अनेक सुन्दर लीला करती भई तथापि रामचन्द्रका मन न मोहा । सव प्रकारके विस्तीण विभव प्राप्त भए परन्तु रामने भोगनिविषै मन न किया । सीताविषै अत्यन्त दत्तचित्त, समस्त चेष्टारहित, महाआदरकरि सीताकू ध्यावते तिष्ठे, जसे मुनिराज मुक्तिको ध्याव । वे विद्याधरकी पुत्री गान कर, सो उनकी ध्वनि न सुन, अर देवागना समान तिनका रूप सो न देखें । रामकू सब दिशा जानकी मई भासे, अर कछू भासै नाहीं । और कथा न कर । ए सुग्रीवकी पुत्री परणी, सो पास बठीं । तिनकू हे जनकसुते ! ऐसा कह बतलाव ।

काकसे प्रीतिकर पूछे—अरे काक ! तू देश २ भ्रमण कर है तने जानकी हू देखी ? अर सरोवरविष कमल फूल रहे है, तिनकी मकरन्द कर जल सुगन्ध होय रहा है, तहां चकवा चकवीके युगल कलोल करते देख चितारे । सीता विन रामकू सव शोभा फीकी लागै । सीताके शरीरके सयोगकी शकाकरि पवनसू आलिगन करै, कदाचित पवन सीताजीके निकटत आई होय, जा भूमिमें सीताजी तिष्ठे है ता भूमिकू धन्य गिनै । अर सीता बिना चन्द्रमाकी चादनीकू अग्नि समान जाने । मनमे चितव कदाचित सीता मरे वियोगरूप अग्निकर भस्म भई होय । अर मद मद पवनकर लतानिकू हालती देख जाने है यह जानकी ही है । अर वेलपत्र हालते देख जाने जानकीके वस्त्र फरहरे है । अर भ्रमरसयुक्त फूल देख जाने ये जानकीके लोचन ही है । अर कोपल देख जाने ये जानकीके करपल्लव ही है । अर श्वेत श्याम आरक्त तीनो जातिके कमल देख जाने सीताके नेत्र तीनरगकू धरै है । अर पुष्पनिके गुच्छे देख जाने जानकीके शोभायमान स्तन ही है । अर कदलीके स्तभविष जघानिकी शोभा जाने, अर लाल कमलनिविष चरणनिकी शोभा जाने सम्पूर्ण शोभा जानकीरूप ही जाने ।

अथानन्तर सुग्रीव सुताराके महिलविष ही रहा, रामपै आए बहुत दिन भए । तब रामने विचारी, ताने सीता न देखी । मेरे वियोगकर तप्तायमान भई वह शीलवती मर गई । तातै सुग्रीव मेरे पास नाहीं आवै ? अथवा वह अपना राज्य पाय निश्चिंत भया, हमारा दुःख भूल गया । यह चितवनकरि रामकी आखनितै आसू पडे । तब लक्ष्मण रामकू सचित देख कोपकर लाल भए है नेत्र जाके, आकुलित है मन जाका, नागी तलवार हाथमें लेय सुग्रीव ऊपर चाल्या सो नगर कम्पायमान भया । सम्पूर्ण राज्यका अधिकारी तिनकू उलघ सुग्रीवके महलमे जाय ताकू कहा रे पापी ! अपने परमेश्वर राम तो स्त्रीके दुखकर दुखी अर तू दुर्बुद्धि स्त्रीसहित सुखसो राज्य करै ? रे विद्याधरवायस विषयलुब्ध दुष्ट ! जहां रघुनाथने तेरा शत्रु पठाया है तहां मैं तोहि पठाऊंगा । या भांति अनेक क्रोधके उग्रवचन लक्ष्मण कहे तब वह हाथ जोड नमस्कारकर लक्ष्मणका क्रोध शात करता भया । सुग्रीव कहै है—हे देव ! मेरी भूल

माफ करहु, म करार भूल गया । हम सारिखे क्षुद्र मनुष्यनिके खोटी चेष्टा होय ह । अर सुग्रीवकी सम्पूण स्त्री कापती हुई लक्ष्मणकू अर्घदेय आरती करती भई । हाथ जोड नमस्कारकर पतिकी भिक्षा मागती भई । तब आप उत्तमपुरुष तिनकू दीन जान कपा करते भए । यह महन्तपुरुष प्रणाम मात्र ही करि प्रसन्न होय, अर दुजन महादान लेकर हू प्रसन्न न होय । लक्ष्मणने सुग्रीवकू प्रतिज्ञा चिताय उपकार किया, जसैं यक्षदत्तकू माताका स्मरण कराय मुनि उपकार करते भए ।

यह वार्ता सुन राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसू पूछे ह—ह नाथ ! यक्षदत्तका वत्तात म नीका जानना चाहू हू । तब गौतम स्वामी कहते भए—हे श्रेणिक ! एक कौंचपुर नगर तहा राजा यक्ष, राणी राजिलता, ताके पुत्र यक्षदत्त, सो एक दिन एक स्त्रीकू नगरके बाहर कुटीमें तिष्ठती देख कामबाण कर पीडित भया । ताकी ओर चाल्या रात्रिविष, तब ऐननामा मुनि याकू मना करते भए । यह यक्षदत्त, खडग ह जाके हाथमें सो विजुरीके उद्योतकरि मुनिकू देखकर तिनके निकट जाय विनय सयुक्त पूछता भया—हे भगवन ! काहेको मोहि मने किया ? तब मुनि कहा—जाको देख तू कामवश भया ह सो स्त्री तेरी माता ह । तात यद्यपि सूत्रमें रात्रिको बोलना उचित नाहीं तथापि करुणाकर अशुभ कायत मन किया । तब यक्षदत्तने पूछा हे स्वामी ! मेरी माता कसे ह ? तब मुनि कही सुन—एक मत्यकावती नगरी तहा कणिक नामा वणिक, ताके धू नामा स्त्री, ताके बन्धुदत्त नामा पुत्र, ताकी स्त्री मित्रवती लतादत्तकी पुत्री, सो स्त्रीकू छाने गभ, राखि बधुदत्त जहाज बठि देशातर गया । ताकू गए पीछे याकी स्त्रीके गभ जान सासू ससरने वुराचारणी जान घरसे निकाल दई । सो उत्पलका दासीको लार लेय बडे सारथीकी लार पिताके घर चाली । सो उत्पलकाको सपने डसी, वनमें मुई । अर यह मित्रवती शीलमात्र ही ह सहाय जाके सो कोचपुरविष आई । अर महाशोककी भरी—ताके उपवन विष पुत्रका जन्म भया । तब यह तो सरोवरविष वस्त्र धोयवे गई अर पुत्ररत्न कबलमें बेढा सो कबल सयुक्त पुत्रकू स्वान लेय गया । सो काहूने छुडाया, राजा यक्षकू दिया, ताके राणी राजिलता अपुत्र

वती, सो राजाने पुत्र राणीको सौंप्या। ताका यक्षदत्त नाम धरया सो तू। अर वह तेरी माता वस्त्र धोय आई, सो ताहि न देखि विलाप करती भई। एक देवपुजारीने ताहि दया कर धय बधाया। तू मेरी बहिन ह ऐसा कह राखी। सो यह मित्रवती सहायरहित लज्जाकर अकीर्तिके भय थकी बापके घर न गई। अत्यन्त शीलकी भरी जिनधमविष तत्पर, दरिद्रीकी कुटीविष रह। सो त भमण करता देख कुभाव किया। अर याका पति बधुदत्त रत्नकबल दे गया हुता, ताविष ताहि लपेट सो सरोवर गई हुती, सो रत्नकबल राजाके घरमें ह अर वस बालक तू ह। या भाति मुनि कही तब यह नमस्कार कर खडग हाथमें लेय राजा यक्षप गया। अर कहता भया या खडग कर तेरा सिर काटू गा। नातर मेरे जन्मका वत्तात कहो। तब राजा यक्ष यथावत वत्तात कहा। अर वह रत्नकम्बल दिखाया, सो लेय कर यक्षदत्त अपनी माता कुटीमें तिष्ठे थी तासू मिला। अर अपना बधुदत्त पिता ताकू बुलाया, महाउत्सव अर महा विभवकर मडित माता पितासू मिला, यह यक्षदत्तकी कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कही—जसे यक्षदत्तको मुनिने माताका वत्तात जनाया तसै लक्ष्मणने सुग्रीवको प्रतिज्ञा विस्मरण होय गया हुता सो जनाया। सुग्रीव लक्ष्मणके सग शीघ ही रामचन्द्रप आया, नमस्कार किया, अर अपने सब विद्याधर सेवक महाकुलके उपजे बुलाए। वे या वत्तातको जानते हुते, अर स्वामी काय विष तत्पर तिनकू समझायकर कहा सो सब ही सुनो, राममे मेरा बडा उपकार किया। अब सीताके खबर इनकू लाय दो। तात तुम दिशानिकू जाओ। अर सीता कहा ह यह खबर लावो, समस्त पृथ्वी पर जल स्थल आकाशविष हेरो। जम्बूद्वीप, लवण समुद्र, धातकीखण्ड, कुलाचल, वन, सुमेरु, नाना-प्रकारके विद्याधरनिके नगर समस्त अस्थानक, सवदिशा ढू ढो।

अथानन्तर ये सब विद्याधर सुग्रीवकी आज्ञा सिर पर धारकर हर्षित भए, सब ही दिशानिकू शीघ ही दौडे। सब ही विचारे—हम पहिलो सुध लावें तासो राजा अति प्रसन्न होय। अर भामण्डलकू हू खबर पठाई जो सीता हरी गई ताकी सुध लेवो। तब भामण्डल बहिनके दु खकर अतिही दु खी भया।

हेरनेका उद्यम किया । अर सुग्रीव आपभी ढूंढनेकू निकसा । सो ज्योतिषचक्रके ऊपर होय विमानमें बैठ्या देखता भया । दुष्ट विद्याधरनिके नगर सब देखे, सो समुद्रके मध्य जम्बूद्वीप देखा । वहां महेन्द्र पर्वतपर आकाशसे सुग्रीव उतरा । तहां रत्नजटी तिष्ठे था सो डरा, जैसे गरुडतैं सर्प डरै । बहुरि विमान नजीक आया तब रत्नजटी जाना कि यह सुग्रीव है, लंकापतिने क्रोधकर मोपर भेजा सो मोहि मारेगा । हाय मैं समुद्रमें क्यों न डूब मूया ? ? अंतर द्वीपविषै मारा जाऊंगा । विद्या तो रावण मेरी हर लेय गया अब प्राण हरने याहि पठाया । मेरी वांछा हुती जैसे तैसे भामण्डल पर पहुंचू तो सब कार्य होय, सो न पहुंच सक्या । यह चितवन कर है इतनेमें ही सुग्रीव आया, मानो दूसरा सूर्य ही है, द्वीपका उद्योत करता आया । सो याको बनकी रजकर धूसरा देख दया कर पूछता भया, हे रत्नजटी ! पहिले तू विद्या कर संयुक्त हुता । अब हे भाई ! तेरी कहा अवस्था भई ? या भांति सुग्रीव दया कर पूछा सो रत्नजटी अत्यन्त कम्पायमान कछु कह न सकै । तब सुग्रीव कही—भय मत कर, अपना वृत्तांत कह । बार-बार धैर्य बंधाया । तब रत्नजटी नमस्कार कर कहता भया—रावण दुष्ट सीताकू हरण कर ले जाता हुता, सो ताके अर मेरे परस्पर विरोध भया । मेरी विद्या छेद डारी । अब विद्यारहित जीवित विषै संदेह चिंतावान तिष्ठे था सो हे कपिवंशके तिलक ! मेरे भागते तुम आए । ये वचन रत्नजटीके सुन सुग्रीव हर्षित होय ताहि संग लेय अपने नगरमें श्रीराम पै लाया । सो रत्नजटी रामलक्ष्मणसो सबके समीप हाथ जोड नमस्कार कर कहता भया । हे देव ! सीता महासती है, ताकू दुष्ट निर्दई लंकापति रावण हर ले गया । सो रुदन करती विलाप करती विमानमें बैठी मृगी समान व्याकुल मैं देखी । वह बलवान बलात्कार लिए जाता हुता । सो मैने क्रोधकर कहा—यह महासती मेरे स्वामी भामण्डलकी बहिन है, तू छोड दे । सो वाने कोपकर मेरी विद्या छेदी । वह महा प्रबल, जाने युद्धमें इन्द्रकू जीता पकड लिया अर कैलाश उठाया, तीन खण्डका स्वामी, सागरांत पृथ्वी जाकी दासी, जो देवनिहू करि न जीती जाय सो ताहि मैं कैसे जीतूं ? ताने मोहि विद्यारहित किया । यह सकल वृत्तांत राम देवने

सुनकर ताकू उरसे लगाया अर बारम्बार ताहि पूछते भए। बहुरि राम पूछते भए—हे विद्याधरो! कहो लका कितनी दूर ह? तब वे विद्याधर निश्चल होय रहे, नीचा मुख किया, मुख की छाया और ही होयगई, कछु जुवाब न दिया। तब रामने उनका अभिप्राय जाना—जो यह हृदयविष रावणत भय रूप ह। मन्दवष्टिकर तिनकी ओर निहारे। तब वे जानते भए हमकू आप कायर जानो हो। लज्जा वान होय हाथ जोड सिर निवाय कहते भये—हे देव! जाके नाम सुन हमकू भय उपज ह ताकी बात हम कस कहें? कहा हम अल्प शक्तिके धनी अर कहा वह लकाका ईश्वर? तात तुम यह हठ छोडो। अर वस्तु गई जानो। अथवा तुम सुनो हो तो हम सब वत्तात कहे सो नीके उरमें धारो। लवणसमुद्र विष राक्षसद्वीप प्रसिद्ध ह, अदभुत सम्पदाका भरा। सो सातसौ योजन चौडा ह, अर प्रदक्षिणाकर किचित अधिक इक्कीस सौ योजन वाकी परिधि ह। ताके मध्य सुमेरु तुल्य त्रिकूटाचल पवत ह। सो नवयौवन ऊचा, पचास योजनके विस्ताररूप, नानाप्रकारके मणि अर सुवण कर मण्डित। आग मेघ बाहनको राक्षसनिके इन्द्रने दिया हुता, ता त्रिकुटाचलके शिखरपर लका नाम नगरी, शोभायमान, रत्नमई, जहा विमान समान घर, अर अनेक क्रीडा करनेके निवास, तीस योजन विस्तार लकापुरी महाकोट खाईकर मण्डित, मानो दूजी वसुधरा हो ह। अर लकाके चौगिरद बडे बडे रमणीक स्थानक ह। अति मनोहर मणि सुवणमई जहा राक्षसनिके स्थानक ह, तिनविष रावणके बन्धुजन बस ह। सध्याकार सुवेल काचन ल्हादन पोधन हस हर सागर घोष अधस्वग इत्यादि मनोहर स्थानक वन उपवन आदिकरि शोभित देवलोक समान ह। जिनविष भात, पुत्र, मित्र, स्त्री, बाधव, सेवकजन सहित लकापति रम ह। सो विद्याधरनि सहित क्रीडा करता देख लोकनिकू ऐसी शका उपज ह मानो देवनि सहित इन्द्र ही रम ह। जाका महाबली विभीषणसा भाई, औरनिकरि युद्धमें न जीता जाय, ता समान बुद्धि देवनिमें नाहीं, अर ता समान मनुष्य नाहीं। ताहिकरि रावणका राज्य पूण ह। अर रावणका भाई कुम्भकण त्रिशूलका धारक, जाकी युद्धमें टेढी भौंह देव भी देख सकें नाहीं तो मनुष्यनिकी कहा बात

अर रावणका पुत्र इन्द्रजीत पृथ्वीविष प्रसिद्ध ह। अर जाके बडे २ सामन्त सेवक है। नानाप्रकार विद्या क धारक, शत्रुनिके जीतनहारे, अर जाका छत्र पूण चन्द्रमा समान, जाहि देखकर वैरी गवकू तज ह। तानै सदा रण सग्राममें जीतिही जीति सुभटपनेका विरद प्रकट किया ह। सो रावणके छत्रकू देख तिनका सब गव जाता रह। अर रावणका चित्रपट दखे अथवा नाम सुने शत्रु भयकू प्राप्त होय, जो एसा रावण तासो युद्ध कौन कर सक? तात यह कथा ही न करना और बात करो। यह बात विद्याधरनिके मुखत सुनकर लक्ष्मण बोला, मानो मेघ गाजा--तुम एती प्रशसा करो हो सो सब मिथ्या ह। जो वह बलवान हुता तो अपना नाम छिपाय स्त्रीकू चुराकर काहे लेगया? वह पाखण्डी, अतिकायर, अज्ञानी, पापी नीच, राक्षस। ताके रच मात्र भी शूरवीरता नाहीं। अर राम कहते भए--बहुत कहने करि कहा? सीताकी सुध ही कठिन हुती। अब सुध आई तब सीता आय चुकी। अर तुम कही और बात करो और चिन्तवन करो सो हमारे और कछु बात नाहीं, और कछ चितवन नाहीं। सीताकू लावना यही उपाय ह। रामके वचन सुनकर वद्ध विद्याधर क्षण एक विचारकर बोले, हे देव! शोक तजो, हमारे स्वामी होवो, अर अनेक विद्याधरनिकी पुत्री, गुणनिकरि देवागना समान, तिनके भरतार होवो। अर समस्त दुखकी बुद्धि छोडो। तब राम कहते भए--हमारे और स्त्रीनिका प्रयोजन नाहीं। जो शची समान स्त्री होय तो भी हमारे अभिलाषा नाहीं। जो तिहारी हममें प्रीति ह तो सीता हमें शीघ्र ही दिखावो। जाबूनद कहता भया, हे प्रभो! या हठको तजो। एक क्षुद्र पुरुषने कत्रिम मयूरका हठ किया ताकी न्याई स्त्रीका हठकर दुखी मत होवो। यह कथा सुनो--

एक बेणातटग्राम, तहा सवरुचि नामा गृहस्थी, ताके विनयदत्त नामा पुत्र, ताकी माता गुणपूर्णा। अर विनयदत्तका मित्र विशालभूत, सो पापी विनयदत्तकी स्त्रीसो आसक्त भया। स्त्रीके वचनकरि विनयदत्तकू कपटकरि वनविष लेगया, सो एक वक्षके ऊपर बाध वह दुष्ट घर उठि आया। कोई विनयदत्तके समाचार पूछे तो ताहि कछु मिथ्या उत्तर देय साचा होय रहै। जहा विनयदत्त

बाधा हुता तहा एक क्षुद्र नामा पुरुष आया, वक्षके तले बठा, वक्ष महा सघन। विनयदत्त कुरलावता हुता, सो क्षुद्र देखे तो दढ़बधनकर मनुष्य वक्षकी शाखाके अग्रभाग बधा ह। तब क्षुद्र दयाकर ऊपर चढा, विनयदत्ताको बधनत निवत किया। विनयदत्त द्रव्यवान, सो क्षुद्रकू उपकारी जान अपने घर लेगया। भाईत हू अधिक हित राखे, विनयदत्ताके घर उत्साह भया, अर वह विशालभूत कुमित्र दूर भाग गया। क्षुद्र विनयदत्तका परम मित्र भया। सो क्षुद्रका एक रमने (खेलने) का पत्रमयी मयूर, सो पवनकर उडचा, राजपुत्रके घर जाय पडचा। सो ताने राख मेल्या, ताके निमित्त क्षद्र महा शोककर मित्रकू कहता भया—मोहि जीवता इच्छ ह तो मेरा वही मयूर लाव। विनयदत्त कहा—म तोहि रत्न-मई मयूर कराय दू, अर साचे मोर मगाय दू, वह पत्रमई मयूर पवनत उडगया सो राजपुत्रने राखा, म कसे लाऊ? तब क्षुद्र कही म वही—लेऊ, रत्ननिक न लू, न साचे लू। विनयदत्त कहे—जो चाहो सो लेहु, वह मेरे हाथ नाहीं। क्षुद्र बारम्बार वही मागे। सो वह तो मूढ हुता, तुम पुरुषोत्तम होय ऐसे क्यो भूलो हो? वह पत्रनिका मयूर राजपुत्रके हाथ गया विनयदत्त कसे लाव? तात अनेक विद्याधरनिकी पुत्री, सुवण समान वण जिनका, श्वेत श्याम आरक्त तीन वणकू धार ह नेत्र कमल जिनके, सुदर पीवर ह स्तन जिनके, कदली समान जघा जिनकी, अर मुखकी कातिकर शरदकी पूणमासीके चद्रमाकू जीते, मनोहर गुणनिकी धरणहारी, तिनके पति होऊ। हे रघुनाथ! महाभाग्य! हमपर कपा करहु। यह दुखका बढावनहारा शोक सताप छोडहु। तदि लक्ष्मण बोले—हे जाम्बूनद! त यह दष्टात यथाथ न दिया। हम कह ह सो सुनहु—एक कुसुमपुर नामा नगर, तहा एक प्रभव नामा गहस्थ, जाके यमुना नामा स्त्री, ताके धनपाल, बधुपाल, गहपाल, पशुपाल, क्षेत्रपाल ये पाच पुत्र। सो यह पाचो ही पुत्र यथाथ गुणनिके धारक, धनके कमाऊ, कुटुम्बके पालिवेविषै उद्यमी। सदा लौकिक धधे कर। क्षणमात्र आलस नाही। अर इन सबनित छोटा आत्मश्रेय नामा कुमार सो पुण्यके योग करि देवनि कसे भोग भोगव। सो याको माता पिता अर बडे भाई कटुक वचन कहें। एक दिन यह

मानो नगर बाहिर भम था सो कोमल शरार खदकू प्राप्त भया । उद्यम करवेकू असमथ, सो आपका मरण बाछता हुता । ता समय याके पूव पुण्यकमके उदयकरि एक राजपुत्र याहि कहता भया—हे मनुष्य ! म पथुस्थान नगरके राजाका पुत्र भानुकुमार हू, सो देशातर भमणकू गया हुता, सो अनेक देश देखे, पथ्वीविष भमण करता दवयोगत कमपुर गया, सो एक निमित्तज्ञानी पुरुषकी सगतिविष रहा । ताने मोहि दुखी जान करुणाकर यह मत्रमई लोहका कडा दिया अर कही—यह सब रोगका नाशक ह, बुद्धिवद्धक ह । ग्रह सप पिशाचादिकका वश करणहारा ह, इत्यादि अनेक गुण ह । सो तू राख, ऐसे कह मोहि दिया, अर अब मेरे राज्यका उदय आया । म राज्य करवेकू अपने नगर जाऊ हू, यह कडा म तोहि दू हू तू मरे मत । जो वस्तु आपप आई, अपना काय कर काहूकू दे डारो तो यह महाफल ह । सो लोकविषै ऐसे पुरुषनिकू मनुष्य पूज ह । आत्मश्रेयको एसा कह राजकुमार अपना कडा देय, अपने नगर गया । अर यह कडा लेय अपने घर आया । ताही दिन ता नगरके राजाकी राणीकू सपने डसी हुती सो चेष्टा रहित होय गई । ताहि मतक जान जरायवेकू लाए हुते, सो आत्मश्रेयने मगलमई लोहेके कडेक प्रसादकरि विषरहित करी । तब राजा अति दान देय बहुत सत्कार किया, आत्मश्रेयके कडक प्रसादकरि महाभोग सामग्री भई । सब भाइनविष यह मुख्य ठहरा । पुण्यकमके प्रभाव करि पृथ्वीविष प्रसिद्ध भया । एक दिन कडेकू वस्त्रविष बाध सरोवर गया । सो गोह आय कडेकू लेय, महावक्षके तले ऊ डा बिल ह ताविष पठ गई । बिल शिलानिकरि आच्छादित । सो गोह बिल विष बठी भयानक शब्द कर । आत्मश्रेयने जाना कडेकू गोह बिलविष लेगई, गजना कर ह । तब आत्मश्रेय वृक्ष जडते उखाड, शिला दूर कर, गोहका बिल चूर कर डारा, अर बहुत धन लिया । सो राम तो आत्मश्रेय ह, अर सीता कड समान ह, लका बिल समान ह, रावण गोह समान ह । तात हो विद्याधरो ! तुम निभय होवो । ये लक्ष्मणके वचन जाबूनदके वचननिकू खडन करनहारे सुनकर विद्याधर आश्चयकू प्राप्त भए ।

अथानन्तर जाबूनद आदि सब रामसू कहते भए—हे देव ! अनन्तवीर्य योगींद्रकू रावणने नमस्कार कर अपने मृत्युका कारण पूछ्या । तब अनन्तवीर्यकी आज्ञा भई जो कोटिशिलाकू उठावेगा ताकरि तेरी मृत्यु है । तब ये सर्वज्ञके वचन सुन रावणने विचारी ऐसा कौन पुरुष है जो कोटिशिलाकू उठावे । ये वचन विद्याधरनिके सुन लक्ष्मण बोले मैं अबही यात्राकू वहां चालूंगा, तब सबही प्रमाद तज इनके लार भए । जाबूनद, महाबुद्धि, सुग्रीव, विराधित, अर्कमाली नल, नील इत्यादि नामी पुरुष विमान विषै राम लक्ष्मणकू चढाय कोटिशिलाकी ओर चाले । अंधेरी रात्रिविषै शीघ्र ही जाय पहुँचे, शिलाके समीप उतरे । शिला महा मनोहर, सुर नर असुरनिकरि नमस्कार करने योग्य, ये सब दिशाविषै सामंतनिकू रखवारे राख, शिलाकी यात्राकू गए । हाथ जोड सीस निवाय नमस्कार किया । सुगंध कमलनिकरि तथा अन्य पुष्पनिकरि शिलाकी अर्चा करी । चन्दनकर चरची, सो शिला कैसी शोभती भई मानो साक्षात शची ही है । ताविषै जे सिद्ध भए तिनकू नमस्कारकर, हाथ जोड, भक्तिकर शिलाकी तीन प्रदक्षिणा दई । सब विधिविषै प्रवीण लक्ष्मण कमर बांध, महा विनयकू धरता संता, नमोकारमंत्रमें तत्पर, महा भक्तिकरि स्तुति करवेकू उद्यमी भया । अर सुग्रीवादि वानरवंशी सबही जय जयकार शब्द कर महा स्तोत्र पढते भए । एकाग्रचित्तकर सिद्धनिकी स्तुति करे है, जो भगवान सिद्ध त्रैलोक्यके शिखर महादेदीप्यमान हैं । अर वे सिद्ध स्वरूप मात्र सत्ताकर अविनश्वर हैं । तिनका बहुरि जन्म नाहीं । अनन्तवीर्यकर संयुक्त, अपने स्वभावमें लीन, महा समीचीनता युक्त, समस्त कर्मरहित, संसार समुद्रके पारगामी कल्याणमूर्ति, आनन्द—पिंड, केवलज्ञान—केवलदर्शनके आधार, पुरुषाकार, परमसूक्ष्म अमूर्ति, अगुरुलघु, असंख्यात—प्रदेशी, अनन्तगुणरूप, सबकू एकसमयमें जानें, सब सिद्ध समान, कृतकृत्य, जिनके कोई कार्य करना रहा नाहीं । सर्वथा शुद्धभाव, सर्वद्रव्य, सर्वक्षेत्र, सर्वकाल, सर्वभावके ज्ञाता, निरंजन, आत्मज्ञानरूप, शुक्लध्यान अग्निकर अष्टकर्म वनके भस्म करणहारे, अर महाप्रकाशरूप प्रतापके पुंज, जिनकू इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादि पृथ्वीके नाथ सब ही सेवें, महास्तुति

कर, ते भगवान ससारके प्रपचत रहित, अपने ज्ञान दस्वभाव तिनमई, अनन्त सिद्ध भए अर अनत होहिंगे। अढाईद्वीपके विष मोक्षका माग प्रवत्त ह। एकसौ साठ महाविदेह, अर पाच भरत, पाच ऐरावत, एकसौ सत्तर क्षेत्र, तिनके आयखडविष जे सिद्ध भए, अर होहिगे, तिन सबनिकू हमारा नमस्कार होहु। भरतक्षेत्रविष यह कोटिशिला, यहात सिद्धशिलाकू प्राप्त भए ते हमकू कल्याण के कर्त्ता होहु। जीवनिकू महामगलरूप। या भाति चिरकाल स्तुतिकर चित्तविष सिद्धनिका ध्यान कर सब ही लक्ष्मणकू आशीर्वाद देते भए।

या कोटिशिलात जे सिद्ध भए वे सव तिहारा विघ्न हर। अरहन्त, सिद्ध, साधु, जिनशासन, ये सव तुमकू मगलके करता होहु। या भाति शब्द करते भए। अर लक्ष्मण सिद्धनिका ध्यान कर शिलाकू गोडे प्रमाण उठावता भया। अनेक आभूषण पहिरे, भुज बधन कर शोभायमान ह भुजा जाकी, सो भुजानि करि कोटिशिला उठाई। तब आकाशविष देव जय जय शब्द करते भए। सुग्रीवादिक आश्चयकू प्राप्त भए। कोटिशिलाकी यात्राकर बहुरि सम्मेदशिखर गए। अर कलाशकी यात्रा कर भरतक्षेत्रके सव तीथ वदे, प्रदक्षिणा करी। साझ समय विमान बठ जयजयकार करते सते राम लक्ष्मणके लार किहु कधापुर आए। आप अपने अपने स्थानक सुखत शयन किया। बहुरि प्रभात भया। सब एकत्र होय परस्पर वार्ता करते भए। देखो अब थोडेही दिनमे इन दोऊ भाईनिका निष्कटकराज्य होयगा, ये परम शक्तिकू घर है। वह निर्वाणशिला इनने उठाई सो यह सामान्य मनुष्य नाहीं। यह लक्ष्मण रावणकू नि सदेह मारेगा। तब कईएक कहते भए रावणने कलाश उठाया सो बाहुका पराक्रम घाट नाही। तब और कहते भए ताने कलाश विद्याके बलत उठाया सो आश्चय नाहीं। तब कईएक कहते भए—काहेकू विवाद करौ, जगतके कल्याण अथ इनका उनकाहित कराय देवो। या समान और नाही। रावणत प्राथना कर सीता लाय रामकू सौंपो। युद्धत कहा प्रयोजन ह? आगे तारक, मेरुक बलवान भए सो सग्राम विष मारे गए। वे तीनखडके अधिपति, महाभाग्य, महापराक्रमी हुते, अर और हू अनेक राजा रण

विष हते गए। तातै साम कहिए परस्पर मित्रता श्रेष्ठ ह। तब ये विद्याकी विधिमें प्रवीण परस्पर मत्रकर श्रीरामप आए। अति भक्तित रामके समीप नमस्कारकर बैठे। कसे शोभते भए? जस इन्द्र के समीप देव सोह। कसे ह राम? नेत्रनिकू आनन्दके कारण, सो कहते भए—अब तुम काहे ढील करो हो, मो बिना जानकी लकाविष महादुखकरि तिष्ठ ह। तात दीघ सोच छाडि अवार ही लकाकी तरफ गमनका उद्यम करहु। तब जे सुग्रीवके जाबूनदादि मत्री राजनीतिम प्रवीन ह ते रामसू विनती करते भए—हे देव! हमारे ढील नाहीं, परन्तु यह निश्चय कहो सीताके लायवे हीका प्रयोजन ह, अक राक्षसनित युद्ध करना ह? यह सामान्य युद्ध नाहीं विजय पावना अति कठिन ह। वह भरत क्षेत्रके तीन खडका निष्कटक राज कर ह। द्वीप समद्रनिकेविष रावण प्रसिद्ध ह, जासू धातुकीखड द्वीपके शका माने। जम्बूद्वीपविष जाकी अधिक महिमा, अद्भुतकायका करणहारा, सबके उरका शल्य ह, सो युद्ध योग्य नाहीं। तात रणकी बुद्धि छाडि हम जो कह सो करहु। हे दव! ताहि युद्ध सन्मुख करिवेमे जगतकू महाक्लेश उपज ह। प्राणीनिके समूहका विध्वस होय ह। समस्त उत्तमक्रिया जगतत जाय ह। तात विभीषण रावणका भाई, सौ पापकम रहित श्रावकव्रतका धारक ह, रावण ताके वचनकू उलघ नाही। तिन दोऊ भाईनिमे अतरायरहित परमप्रीति ह। सो विभीषण चातुयतात समझावेगा अर रावणहू अपयशत शकेगा। लज्जाकरि सीताकू पठाय देगा। तात विचारकर रावणप ऐसा पुरष भेजना जो बातें करनेमें प्रवीण होय, अर राजनीतिमें कुशल होय, अनेक नय जाने, अर रावणका कपापात्र हो ऐसा हेरहु। तब महोदधि नामा विद्याधर कहता भया—तुम कछु सुनी ह? लकाकी चौगिरद मायामई यत्र रचा ह, सो आकाशके मागत कोऊ जाय सक नाहीं पथ्वीके मागत जाय सक नाहीं। लका अगम्य ह, महाभयानक देख्या न जाय ऐसा मायामई यत्र बनाया ह। सो इतने बठे ह तिनमें तो ऐसा कोऊ नाही जो लकाविष प्रवेश कर। तात पवनजयका पुत्र श्रीशल जाहि हनुमान कह ह सो महा विद्याबलवान पराक्रमी प्रतापरूप ह ताहि जाचो। वह रावणका परममित्र ह, अर पुरुषोत्तम ह,

सो रावणकू समझाय विघ्न टारेगा। तब यह बात सबने प्रमाण करी। हनुमानके निकट श्रीभूत नामा दूत शीघ्र पठाया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकत कह ह-हे राजन! महा बुद्धिमान होय, अर महाशक्तिकू धरे होय, अर उपाय कर, तो भी होनहार होय सो ही होय। जस उदयकालमें सूयका उदय होय ही तस जो होनहार सो होय ही।

इति श्रीरविषेण चार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष कोटिशिला उठावनेका व्याख्यान वणन करनवाला अडतालीसवा पव पूण भया ॥ ४८ ॥

अथानन्तर श्रीभूतनामा दूत, पवनके वेगत शीघ्रही आकाशसे मागसो लक्ष्मीका निवास जो श्रीपुर नगर अनेक जिन भवन तिनकरि शोभित, तहा गया। जहा मन्दिर सुवण रत्नमई, सो तिनकी माला करि मण्डित कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल सुन्दर झरोखानिकरि शोभित, मनोहर उपवनकर रमणीक। सो दूत नगरकी शोभा अर नगरके अपूव लोग देख आश्चयकू प्राप्त भया। बहुरि इन्द्रके महल समान राजमन्दिर, तहाकी अदभुत रचना देख थकित होय रहा हनुमान खरदूषणकी बटी अनगकुसुमा, रावणकी भानजी, ताके खरदूषणका शोक। कमके उदयकरि शुभ अशुभ फल पाव, ताहि काई निवारिवे शक्त नाहीं। मनुष्यनिकी कहा शक्ति देवनहूकरि अन्यथा न होय। दूतने द्वारे आय अपने आगमनका वत्तात कहा। सो अनगकुसुमाकी मर्यादा नामा द्वारपाली दूतकू भीतर लेयगई। अनगकुसुमा ने सकल वत्तात पूछ्या सो श्रीभूतने नमस्कारकर विस्तारसू कहा। दडकवनमें श्रीराम लक्ष्मणका आवना, सम्बूकका बध, खरदूषणत युद्ध, बहुरि भले भले सुभटनिसहित खरदूषणका मरण। यह वार्ता सुन अनगकुसुमा मूर्छाकू प्राप्त भई। तब चन्दनके जलकरि सींच सचेत करी। अनगकुसुमा अश्रुपात डारती विलाप करती भई-हाय पिता हाय भाई! तुम कहा गए? एकबार मोहि दशन देवो। वचनालाप कर-महा भयानक वनमें भूमिगोचरीनि तुमकू कसे हते? या भाति पिता अर भाईके दुखकरि

चन्द्रनखाकी पुत्री दुखी भई। सो महा कष्टकरि सखिनिने शातिताकू प्राप्तकरी। अर जे प्रवीण उत्तम जन हुते तिन बहुत सबोधी। तब यह जिनमार्गविषै प्रवीण, समस्त ससारके स्वरूपकू जान, लोकाचारकी रीति प्रमाण पिताके मरणकी क्रिया करती भई। बहुरि दूतकू हनुमान महाशोकके भरे सकल वृत्तात पूछते भए। तब इनकू सकल वत्तात कहा सो हनुमान खरदूषणके मरणकरि अति क्रोधकू प्राप्त भया। भौंह टेढी होय गई, मुख अर नेत्र आरक्त भए, तब दूतने कोप निवारिवेके निमित्त मधुर स्वरनिकरि विनती करी। हे देव! किहकधापुरके स्वामी सुग्रीव तिनकू दुख उपजा, सोतो आप जानो ही हो। साहसगति विद्याधर सुग्रीवका रूप बनाय आया। तात पीडित भया सुग्रीव श्रीरामके शरणे गया। सो राम सुग्रीवका दुख दूर करवे निमित्त किहकधापुर आए। प्रथम तो सुग्रीव अर वाके युद्ध भया। सो सुग्रीवकरि वह जीता न गया। बहुरि श्रीरामके अर वाके युद्ध भया सो रामकू देख बेताली विद्या भाग गई। तब वह साहसगति सुग्रीवके रूपरहित जसा हुता तसा होय गया। महायुद्धविषै राम ने ताहि मारचा, सुग्रीवका दुख दूर किया। यह बात सुन हनुमानका क्रोध दूर भया। मुखकमल फूला, हर्षित होय कहते भए—

अहो श्रीरामने हमारा बडा उपकार किया। सुग्रीवका कुल अकीर्तिरूप सागरमें डूबे था सो शीघ्र ही उधारा। सुवणकलश समान सुग्रीवका गोत्र सो अपयशरूप ऊड कूपमें डूबता हुता। श्रीराम सन्मति के धारकनें गुणरूप हस्तकरि काढ्या। या भाति हनुमान बहुत प्रशसा करी अर सुख—सागरविषै मग्न भए। हनुमानकी दूजी स्त्री सुग्रीवकी पुत्री पदमरागा पिताके शोकका अभावसुन हर्षित भई। ताके बडा उत्साह भया। दान पूजा आदि अनेक शुभ काय किए। हनुमानके घरविषै अनगकुसुमाके घर खरदूषणका शोक भया अर पदमरागाके सुग्रीवका हष भया। या भाति विषमताकू प्राप्त भए घरके लोग तिनको समाधानकर हनुमान किहकधापुरकू सन्मुख भए। महा ऋद्धिकर युक्त बडी सेना सू हनुमान चाल्या। आकाशविषै अधिक शोभा भई। महारत्नमई हनुमानका विमान ताकी किरणनि

निकरि सूयकी प्रभा मद होय गई हनुमानकू चालता सुन अनेक राजा लार भए। जसे इन्द्र की लार बडे बडे देव गमन करे। आगे पीछे दाहिनी बाई ओर अनेक राजा चाले जाय है। विद्याधरनिके शब्द करि आकाश शब्दमई होयगया। आकाशगामी अश्व, अर गज, तिनके समूहकरि आकाश चित्रामरूप होय गया। महातुरगनिकरि सयुक्त, ध्वजानि कर शोभित सुन्दर रथ, तिनकर आकाश शोभायमान भासता भया। अर उज्ज्वल छत्रनिके समूहकर शोभित आकाश ऐसा भासै मानो कुमुदनिका वन ही है। अर गम्भीर दुदुभिनिके शब्दनिकरि दशोदिशा ध्वनि रूप (प्रतिध्वनिरूप) होय गई, मानो, मेघ गाजै है। अर अनेकवणके आभूषण तिनकी ज्योतिके समूहकरि आकाश नाना रगरूप होय गया, मानो काहू चतुर रगरेजाका रगावस्त्र है। हनुमानके वादित्रनिका नाद सुन कपिवशी हर्षित भए, जसे मेघ की ध्वनि सुन मोर हर्षित होय। सुग्रीवने सब नगरकी शोभा कराई, हाट बाजार उजाले, मन्दिरनिपर ध्वजा चढाई, रत्ननिके तोरणनिकर द्वार शोभित किए, हनुमानके सब सन्मुख गए। सबका पूज्य देवनिकी न्याई नगरविष प्रवेश किया। सुग्रीवके मन्दिर आए। सुग्रीवने बहुत आदर किया, अर श्रीराम का समस्त वृत्तात कहा। तब ही सुग्रीवादिक हनुमान सहित परम हषकू धरते श्रीरामके निकट आए। सो हनुमान रामकू देखता भया—महासुन्दर, सूक्ष्म, स्निग्धश्याम, सगन्ध, वक्र, लम्बे महामनोहर हैं केश जिनके सो लक्ष्मीरूप बल इनकर मडित महासुकुमार है अग जिनका, सूय समान प्रतापी, चन्द्र-समान कातिकारी, अपनी कातिकर प्रकाशके करणहारे, नेत्रनिको आनन्दके कारण, महा मनोहर, अतिप्रवीण आश्चयके करणहारे, मानो स्वगलोकते देवही आए है। देदीप्यमान निमल स्वणके कमल के गभ समान है प्रभा जिनकी, सुन्दर श्रवण, सुन्दर नासिका, सर्वांग सुन्दर, मानो साक्षात कामदेव ही है। कमलनयन, नवयौवन, चढे धनुष समान भौंह जिनकी, पूणमासीके चन्द्रमा समान वदन, महा मनोहर मूगा समान लाल होठ, कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल दन्त, शख समान कठ, मृगेन्द्र समान साहस, सुन्दरकटि, सुन्दर वक्षस्थल, महाबाहु, श्रीवत्सलक्षण दक्षिणावत गम्भीरनाभि, आरक्त कमल

समान कर चरण, महा कोमल गोल पुष्ट दोऊ जघा, अर कछुवेकी पीठ समान चरणके अग्रभाग, महा कातिकू धर अरुण नख, अतुल बल, महायोधा, महागम्भीर, महाउदार, समचतुरस्रसस्थान बज्रवृषभनाराच सहनन, मानो सब जगत्रयकी सुन्दरता एकत्रकर बनाये हैं। महाप्रभाव सयुक्त, परतु सीताके वियोगकरि व्याकुल चित्त, मानो शचीरहित इन्द्र विराजे ह, अथवा रोहिणी रहित चन्द्रमा तिष्ठ ह। रूप सौभाग्य कर मडित, सब शास्त्रनिके वक्ता, महाशूरवीर, जिनकी सबत्र कीर्ति फल रही ह, महा बुद्धिमान, गुणवान ऐसे श्रीराम तिनकू देखकर हनुमान आश्चयकू प्राप्त भया। तिनके शरीरकी काति हनुमान पर जा पडी, प्रभाव देखकर वशीभूत भया। पवनका पुत्र मनमें विचारता भया—ये श्रीराम दशरथके पुत्र, भाई लक्ष्मण लोक श्रेष्ठ, याका आज्ञाकारी, सग्रामविष जाके चन्द्रमा समान उज्ज्वल छत्र देख साहसगतिकी विद्या वसाली ताके शरीरत निकस गई। अर इन्द्रहूकू म देख्या ह परन्तु इनकू देखकर परम आनन्दसयुक्त हृदय मेरा नमीभूत भया। या भाति आश्चयकू प्राप्त भया। अजनीका पुत्र, श्रीराम कमललोचन ताके दशनकू आगे आया। अर लक्ष्मणने पहिले ही रामते कह राखी हुती सो हनुमानकू दूरहीत देख उठे, उरसे लगाय मिले, परस्पर अतिस्नेह भया। हनुमान अति विनयकर बठा, आप श्रीराम सिंहासन पर विराजे, भुज बधनकरि शोभित ह भुजा जिनकी, महा निमल नीलाम्बर मडित, राजनिके चूडामणि, महा सुन्दर हार पहिरे, ऐसे सोहैं मानो नक्षत्रनि सहित चन्द्रमा ही ह। अर दिव्य पीताम्बर धारे हार कुण्डल कपूरादि सयुक्त सुमित्राके पुत्र श्रीलक्ष्मण कसे सोह ह ? मानो बिजुरी सहित मेघ ही ह। अर बानरवशिनिका मुकुट, देवनिसमान पराक्रम जाका, राजा सुग्रीव कसा सोह ? मानो लोकपाल ही ह। अर लक्ष्मणके पीछे बठा विराधित विद्याधर कसा सोह ? मानो लक्ष्मण नरसिंहका चक्ररत्न ही ह। रामके समीप हनुमान कसा शोभता भया ? जसे पूण चन्द्रके समीप बुध सोह ह। अर सुग्रीवके दोय पुत्र एक अगज दूजा अगद, सो सुगध माला अर वस्त्र आभूषणादिकर मडित ऐसे सोहैं मानो यह कुवेर ही ह। अर नल नील अर सकडो राजा श्रीरामकी सभाविष

ऐसे सोहैं जसे इन्द्रकी सभाविषै देव सोहै। अनेक प्रकार की सुगन्ध अर आभूषणनिका उद्योत ताकरि सभा ऐसी सोहै मानो इन्द्रकी सभा है। तब हनुमान आश्चर्यकूं पाय अतिप्रीतिकूं प्राप्त भया, श्रीराम को कहता भया—

हे देव शास्त्रमें ऐसा कहा है प्रशंसा परोक्ष करिए, प्रत्यक्ष न करिए। परन्तु आपके गुणनिकरि यह मन वशीभूत भया प्रत्यक्ष स्तुतिकरै है। अर यह रीति है कि आप जिनके आश्रय होय तिनके गुण वर्णन करै, सो जैसी महिमा आपकी हमने सुनी हुती तैसी प्रत्यक्ष देखी। आप जीवनिके दयालु, महा पराक्रमी, परम हितू, गुणनिके समूह, जिनके निर्मल यशकर जगत शोभायमान है। हे नाथ! सीताके स्वयम्बर विधानविषै हजारो देव जाकी रक्षा करैं ऐसा वजावर्त धनुष आपने चढाया। सो वह हम सब पराक्रम सुने। जिनका पिता दशरथ, माता कौशल्या, भाई लक्ष्मण—भरत—शत्रुघन, स्त्रीका भाई भामंडल, सो राम जगत्पति तुम धन्य हो! तिहारी शक्ति धन्य। तिहारा रूप धन्य, सागरावर्त धनुषका धारक लक्ष्मण सो सदा आज्ञाकारी धन्य यह धीर्य, धन्य यह त्याग, जो पिताके वचन पालिवे अर्थ राज्यका त्यागकर महा भयानक दंडकवनमें प्रवेश किया। अर आप हमारा जैसा उपकार किया तैसा इन्द्र हू न करै। सुग्रीवका रूपकर साहसगति आया हुता सुग्रीवके घरमें, सो आप कपिवंशका कलंक दूर किया। आपके दर्शनकर वैताली विद्या साहसगतिके शरीरतैं निकस गई। आप युद्धविषै ताहि हत्या सो आपने तो हमारा बडा उपकार किया। अब हम कहा सेवा करैं? शास्त्रकी यह आज्ञा है जो आपसो उपकार करै अर ताकी सेवा न करै ताके भावशुद्धता नाहीं। अर जो कृतघ्न उपकार भूलै सो न्यायधर्मतैं बहिर्मुख है, पापीनिविषै महापापी है, अर पराधीनमें पारधी है, निर्दई है, सो वात सत्पुरुष संभाषण न करैं। तातैं हम अपना शरीरहू तजकर तिहारे कामकूं उद्यमी हैं। मैं जाय लंकापतिकूं समझाय तिहारी स्त्री तिहारे लाऊंगा। हे राघव! महाबाहु! सीताका मुखरूप कमल पूर्णमासीके चन्द्रमा समान कांतिका पुंज, आप निस्संदेह शीघ्र ही सीता देखोगे। तब जाम्बूनद मंत्री हनुमानकूं परम हित

के वचन कहता भया। हे वत्स वायुपुत्र! हमारे सबनके एक तूही आश्रय है, सावधान लंकाकू जाना अर काहूसो कदाचित विरोध न करना। तब हनुमान कही आपकी आज्ञा प्रमाण ही होयगा।

अथानन्तर हनुमान लंका चलिबेकू उद्यमी भया। तब राम अति प्रीतिकू प्राप्त भए। एकांतमें कहते भए—हे वायुपुत्र! सीताकू ऐसे कहियो कि हे महासती! तिहारे वियोगकरि रामका मन एक क्षण भी सातारूप नाहीं। अर रामने यो कही—ज्यो लग तुम पराए वश हो त्यो लग हम अपना पुरुषार्थ नाहीं जाने हैं। अर तुम महानिर्मल शील करि पूर्ण हो, अर हमारे वियोगकरि प्राण तजा चाहो हौ, सो प्राण तजो मति। अपना चित्त समाधान रूप राखहु। विवेकी जीवनिकू आर्त्त रौद्रत प्राण न तजने। मनुष्यदेह अति दुर्लभ है। ताविषै जिनेंद्रका धर्म दुर्लभ है। ताविषै समाधिमरण दुर्लभ है। जो समाधिमरण न होय तो यह मनुष्य देह तुषवत असार है। अर यह मेरे हाथकी मुद्रिका जाकर ताहि विश्वास उपजै सो लेजावहु। अर उनका चूडामणि महा प्रभावरूप हमपै ले आइयो। तब हनुमान कही जो आप आज्ञा करोगे सो ही होयगा। ऐसा कहकर हाथ जोड नमस्कार कर, बहुरि लक्ष्मणतै नमीभूत होय बाहिर निकस्या। विभूतिकर परिपूर्ण, अपने तेजकरि सर्वदिशाकू उद्योत करता सुग्रीवके मंदिर आया। अर सुग्रीवसो कही—जौलग मेरा आवना न होय तौलग तुम बहुत सावधान यहां ही रहियो। या भांति कहकर सुंदर है शिखर जाके ऐसा जो विमान तापर चढ्या। ऐसा शोभता भया जैसा सुमेरुके ऊपर जिनमंदिर शोभै। परमज्योति करि मंडित, उज्ज्वल छत्रकर शोभित, हंससमान उज्ज्वल चमर जापर ढुरै हैं, अर पवनसमान अश्व चालते, पर्वतसमान गज, अर देवनिकी सेना समान सेना ताकरि संयुक्त। या भांति महा विभूतिकरि युक्त आकाशविषै गमन करता रामादिक सबने देख्या। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतै कहै हैं—हे राजन! यह जगत नानाप्रकारके जीवनिकरि भर्या है, तिनमें जो कोई परमार्थके निमित्त उद्यम करै है सो प्रशंसायोग्य है, अर स्वार्थतै जगतही भरा है। जे पराया उपकार करै ते कृतज्ञ हैं, प्रशंसायोग्य हैं। अर जे निःकारण उपकार करै हैं उनके

तुल्य इन्द्रचन्द्र कुवेर भी नाही । अर ज पापी कतघ्नी पराया उपकार लोप ह वे नरक निगोदके पात्र ह अर लोक निंद्य ह ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै हनुमानका लकाकी दिशा गमन वर्णन करनेवाला उनचालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४९ ॥

अथानन्तर अजनीका पुत्र आकाशविषै गमन करता परम उदयकू धर कसा शोभता भया ? मानो बहिन समान जानकी, ताहि लायवेकू भाई भामडल जाय ह । कसे ह हनुमान ? श्रीरामकी आज्ञाविषै प्रवर्तै है, महा विनयरूप, ज्ञानवत शुद्धभाव, रामके कामका चित्तमें उत्साह । सो दिशा मडल अवलोकते, लकाके मार्गविषै राजा महेन्द्रका नगर देखते भये, मानो इन्द्रका नगर ह । पर्वतके शिखरपर नगर बस है । जहा चन्द्रमा समान उज्ज्वल मदिर ह । सो नगर दूरहीत नजर आया । तब हनुमानने देखकरि मनमें चितया यह दुर्बुद्धि महेन्द्रका नगर ह, वह यहा तिष्ठ ह, मेरा काहेका नाना ? मेरी माताको जाने सताप उपजाया था । पिता होयकर पुत्रीका एसा अपमान करे, जो जान नगरमें न राखी । तब माता बनमें गई जहा अनतगति मुनि तिष्ठे हुते । तिनने अमृतरूप वचन कहकर समाधान करी, सो मेरा उद्यानविषै जन्म भया, जहा कोई बन्धु नाहीं । मेरी माता शरणे आवे अर यह न राखे, यह क्षत्रीका धर्म नाहीं । तात याका गर्व हरू । तब क्रोधकर रणके नगारे बजाए अर ढोल बजाते भए, शखनिकी ध्वनि भई, योधानिके आयुध झलकने लगे । राजा महेन्द्र परचक्र आया सुनकर सब सेना सहित बाहर निकस्या । दोऊ सेनाविषै महायुद्ध भया । महेन्द्र रथमें चढा । माथे छत्र फिरता धनुष चढाय हनुमानपर आया । सो हनुमानने तीन बाणनिकरि ताका धनुष छेद्या, जसे योगीश्वर तीन गुप्ति कर मानकू छेदें । बहुरि महेन्द्रने दूजा धनुष लेवेका उद्यम किया ताके पहिलेही बाणनिकरि ताके घोडे छुटाय दिए सो रथके समीप भ्रमे, जसे मनके प्रेरे इन्द्रिय विषयनिमें भ्रमे । बहुरि

महेन्द्रका पुत्र विमानमें बैठ हनुमानपर आया। सो हनुमानके अर वाके बाण, चक्र, कनक इत्यादि अनेक आयुधनिकरि परस्पर महा युद्ध भया। हनुमानने अपनी विद्याकरि वाके शस्त्र निवारे, जैसे योगीश्वर आत्मचिन्तवनकर परीषहके समूहकू निवार। ताने अनेक शस्त्र चलाये सो हनुमानक एकहू न लाग्या, जैसे मुनिको कामका एक भी बाण न लाग। जैसे तृणनिके समूह अग्निमें भस्म होय तैसे महेन्द्रके पुत्रके सब शस्त्र हनुमानपर विफल गए। अर हनुमानने ताहि पकडा, जैसे सर्पको गरुड पकडे। तब राजा महेन्द्र महारथी पुत्रकू पकडा देख महा क्रोधायमान भया, हनुमानपर आया, जैसे साहसगति रामपर आया हुता। हनुमानहू महा धनुषधारी, सूर्यके रथ समान रथपर चढा, मनोहर है उरविषे हार जाके, शूरवीरनिमें महाशूरवीर, नानाके सन्मुख भया। सो दोऊनिमें करोत कुठार खडग बाण आदि अनेक शस्त्रनिकरि पवन अर मेघकी न्याई महा युद्ध भया। दोऊ सिंह समान महा उद्धत, महा कोपके भरे, बलवंत, अग्निके कणसमान रक्तनेत्र, दोऊ अजगर समान भयानक शब्द करते परस्पर शस्त्र चलावत, गर्वहास संयुक्त प्रकट हैं शब्द जिनके, परस्पर ऐसे शब्द कर हैं धिक्कार तेरे शूरपने को, तू कहा युद्ध कर जाने? इत्यादि वचन परस्पर कहते भए। दोऊ विद्याबलकरि युक्त, परम युद्ध करते बारम्बार अपने लोगनिकरि हाकार जय जयकारादिक शब्द करावते भए। राजा महेन्द्र महा विक्रिया शक्तिका धारक, क्रोधकर प्रज्ज्वलित है शरीर जाका, सो हनुमानपर आयुधनिके समूह डारता भया। भुषुण्डी, फरसा, बाण, शतघ्नी, मुदगर, गदा, पर्वतनिके शिखर, शालवृक्ष बटवृक्ष इत्यादि अनेक आयुध हनुमानपर महेन्द्र चलाए, सो हनुमान व्याकुलताकू प्राप्त न भया, जैसे गिरिराज महा मेघके समूह करि कम्पायमान न होय। जेते महेन्द्रने बाण चलाए सो हनुमानने उनको विद्याके प्रभावकरि सब चूर डारे। बहुरि अपने रथतें उछल महेन्द्रके रथमें जाय पडे। दिग्गजकी सूंड समान अपने जे हाथ तिनकरि महेन्द्रक पकड लिया अर अपने रथमें आए। शूरवीरनिकरि पाया है जीतका शब्द जाने, सबही लोक प्रशंसा करते भए। राजा महेन्द्र हनुमानकू महाबलवान परम उदयरूप देख महा सौम्य

वाणीकर प्रशंसा करता भया—रे पुत्र ! तेरी महिमा जो हमने सुनी हुती सो प्रत्यक्ष देखी। मेरा पुत्र प्रसन्नकीर्ति जो अब तक काहूने न जीता, रथनूपुरका स्वामी राजा इन्द्र ताकरि न जीता गया, विजियार्ध-गिरिके निवासी विद्याधर तिनमें महाप्रभाव संयुक्त, सदा महिमाकूं धरै मेरा पुत्र सो तैने जीता, अर पकडा। धन्य पराक्रम तेरा। महा धीर्यको धरे तेरे समान और पुरुष नाहीं। अर अनुपमरूप तेरा अर संग्राम विषै अद्भुत पराक्रम। हे पुत्र हनुमान ! तूने हमारे सब कुल उद्योत किये। तू चरमशरीरी अवश्य योगीश्वर होयगा। विनय आदि गुणनिकरि युक्त, परम तेजकी राशि, कल्याणमूर्ति कल्पवृक्ष प्रकट भया है। तू जगतविषै गुरुकुलका आश्रय, अर दुःखरूप सूर्यकर जे तप्तायमान हैं तिनकूं मेघ समान। या भांति नाना महेन्द्रने अति प्रशंसा करी, अर आंख भर आई, अर रोमांच होय आए, मस्तक चूमा, छातीसे लगाया। तब हनुमान नमस्कार कर हाथ जोड अति विनयकर क्षमा करावते भए। एकक्षणमें और ही होय गए। हनुमान कहे है—हे नाथ ! मैं बाल बुद्धिकर जो तिहारा अविनय किया सो क्षमा करहु। अर श्रीरामका किहकंधापुर आवनेका सकल वृत्तांत कहा। आप लंकाकी ओर जावनेका वृत्तांत कहा। अर कही मैं लंका होय कार्यकर आऊं हूं। तुम किहकंधापुर जावो, रामकी सेवा करो। ऐसा कहिकर हनुमान आकाशके मार्ग लंकाकूं चाले, जैसे स्वर्गलोकको देव जाय। अर राजा महेन्द्र राणी सहित तथा अपने प्रसन्नकीर्ति पुत्र सहित अंजनी पुत्रीके गया, अंजनीको माता पिता अर भाईका मिलाप भया सो अति हर्षित भई। बहुरि महेन्द्र किहकंधापुर आए सो राजा सुग्रीव विराधित आदि सन्मुख गए, श्रीरामके निकट लाए। राम बहुत आदरसे मिले। जे राम सारिखे महंत पुरुष महातेज प्रतापरूप निर्मलचित्त हैं, अर जिनके पूर्वजन्म विषै दान व्रत तप आदि पुण्य उपार्जे हैं, तिनकी देव विद्याधर भूमिगोचरी सब ही सेवा करैं। जे महा गर्ववंत बलवंत पुरुष हैं, ते सब तिनके वश होवें तातैं सब प्रकार अपने मनको जीत सत्कर्ममें यत्नकरै। हे भव्यजीव हो ! ता सत्कर्मके फल कर सूर्य समान दीप्तिकूं प्राप्त होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कत ग्रथ ताकी भाषावचनिका वष म ट्का ग्रर ग्रजनीका मिलाप बहुरि श्रीरामके निकट आवनेका यारुयानवर्णन करनेवाला पचासवां पर्व पर्ण भया ॥५ ॥

ग्रथानन्तर हनुमान ग्राकाशविष विमानमे बठ जाय ह, ग्रर मागमे दधिमुख नामा द्वीप ग्राया। तामे दधिमुख नामा नगर, जहा दधि समान उज्ज्वल मन्दिर, सुन्दर सुवरणके तोरण, कालो घटा समान सघन उद्यान, पुष्पनि करि युक्त स्फटिक मणि समान उज्ज्वल जलकी भरी वापिका, सोपानिनि कर शोभित, कमलादिक कर भरी। गौतमस्वामी राजा श्रणिकसू कहे ह—हे राजन! या नगरतै दूर वन, तहा तण बेल वक्ष काटनिके समूह, सूखे वक्ष दुष्ट सिहादिक जीवनिके नाद, महाभयानक प्रचण्ड पवन, जाकरि वक्ष गिरपडे, सूख गये ह सरोवर जहा, ग्रर गद्ध उल्लूक ग्रादि दुष्ट पक्षी विचर, ता वनविष दोय चारणमुनि ग्रष्टदिनका कायोत्सग धरे खडे थे। ग्रर तहाते चारकोस तीन कन्या महामनोग्य नेत्र जिनके जटा धरें, सफेद वस्त्र पहरे, विधिपूवक महा तपकर निर्मल चित्त जिनका। मानो कन्या तीन लोकको ग्राभूषण ही ह।

ग्रथानन्तर बनमे ग्रग्नि लागी। सो दोऊ मुनि धीर वीर वक्षकी न्याई खडे। समस्त वन दावानल करि जरे। ते दोऊ निग्रथ योगयुक्त, मोक्षाभिलाषी, रागादिकके त्यागी, प्रशातवदन, शान्तचित्त, निष्पाप, ग्रवाछक, नासादष्टि, लम्बी ह भुजा जिनकी, कायोत्सग धरे। जिनके जीवना मरना तुल्य, शत्रु मित्र समान, काचन पाषाण समान। सो दोऊ मुनि जरते देख हनुमान कम्पायमान भया। वात्सल्य गुणकरि मडित, महाभक्ति सयुक्त, वयावत करिवेको उद्यमी भया। समुद्रका जल लेयकर मूसलाधार मेह बरसाया। सो क्षणमात्रविष पथ्वी जलरूप होय गई। वह ग्रग्नि ता जलकरि हनुमानने ऐसे बुझाई जसे मुनि क्षमाभाव रूप जलकरि क्रोधरूप ग्रग्निकू बुझाव। मुनिनका उपसग दूर कर तिनकी पूजा करता भया। ग्रर वे तीनो कन्या विद्या साधतीं हुतीं, सो दावानलके दाहकर व्याकुलताका कारण

भया हुता सो हनुमानके मेघकर वनका उपद्रव मिटा, सो विद्या सिद्धि भई । सुमेरुकी तीन प्रदक्षिणा करि मुनिनके निकट आयकर नमस्कार करती भई । अर हनुमानकी स्तुति करती भई –अहो तात ! धन्य तिहारो जिनेश्वरविषै भक्ति ! तुम काहू तरफ जाते हुते सो साधुनिकी रक्षा करी । हमारे कारण करि वनमें उपद्रव भया सो मुनि ध्यानारूढ ध्यानतें न डिगे । तब हनुमानने पूछी तुम कौन अर निर्जन स्थानकमें कौन कारण रहो हो ? तब सबनिमें बडी बहिन कहती भई–यह दधिमुख नामा नगर, जहां राजा गंधर्व, ताकी हम तीन पुत्री–बडी चन्द्ररेखा, दूजी विद्युतप्रभा, तीजी तरंगमाला, सबगोत्रकूं वल्लभ । सो जेते विजयार्ध विद्याधर राजकुमार हैं वे सब हमारे विवाहके अर्थ हमारे पितासूं याचना करते भए । अर एक दुष्ट अंगारक सो अति अभिलाषी निरंतर कामके दाहकर आतापरूप तिष्ठै । एक दिन हमारे पिताने अष्टांग निमित्तके वेत्ता जे मुनि तिनकूं पूछी–हे भगवान ! मेरी पुत्रिनिका वर कौन होयगा ? तब मुनि कही जो रणसंग्रामविषै साहसगतिकूं मारेगा, सो तेरी पुत्रिनिका वर होयगा । तब मुनिके अमोघ वचन सुनकर हमारे पिताने विचारी, विजयार्धकी उत्तर श्रेणीविषै जो साहसगति ताहि कौन मार सकै । जो ताहि मारै सो मनुष्य या लोकविषै इन्द्रके समान है । अर मुनिके वचन अन्यथा नाहीं । सो हमारे माता पिता अर सकल कुटुम्ब मुनिके वचनपर दृढ भए । अर अंगारक निरंतर हमारे पितासूं याचना करै सो पिता हमकूं न देय । तब वह अति चिंतावान दुःखरूप वरकै प्राप्त भया । अर हमारे यही मनोरथ उपजा जो वह दिन कब होय हम साहसगतिके हनिवे वारेकूं देखें । सो मनोनुगामिनी नाम विद्या साधिवेकूं या भयानक वनविषै आई । सो मनोनुगामिनी नामा विद्या साधतें हमकूं बारवां दिन है, अर मुनिनिको आठमा दिन है । आज अंगारकने हमको देख क्रोधकर वनविषै अग्नि लगाई । जो छहवर्ष कछु इक अधिक दिननिविषै विद्या सिद्ध होय । हमको उपसर्गतें भय न करवेकर बारह ही दिनविषै विद्या सिद्ध भई । या आपदाविषै हे महाभाग ! जो तुम सहाय न करते तो हमारा अग्निकर नाश होता, अर मुनि भस्म होते । तात तुम धन्य हो । तब हनु-

मान कहते भए तिहारा उद्यम सफल भया। जिनके निश्चय होय तिनकू सिद्ध होय ही। धन्य निर्मल बुद्धि, तिहारी बडे स्थानकविषै मनोरथ, धन्य तिहारा भाग्य। ऐसा कहकर श्रीरामके किह्कधापुर आवनेका सकल वृत्तांत कहा अर आपनै रामकी आज्ञा प्रमाण लंका जायवेका वृत्तांत कहा। ताही समय वनके दाह शांति होयवेका अर मुनि उपसर्ग दूर होनेका वृत्तांत राजा गन्धर्व सुन हनुमानपै आया। विद्याधरनिके योगकरि वह वन नन्दनवन जैसा शोभता भया। अर राजा गन्धर्व हनुमानके मुखकरि श्रीरामका किह्कधापुर विराजनेका हाल सुन अपनी पुत्रीनिसहित श्रीरामके निकट आया। पुत्री महा विभूतिकर रामकू परणाई। राम महा विवेकी, ये विद्याधरनिकी पुत्री, अर महाराज विभूतिकर युक्त हैं तोहू सीता बिना दशो दिशा शून्य देखते भए। समस्त पृथ्वी गुणवान जीवनितैं शोभित होय है। अर गुणवंतनि बिना नगर गहन वन तुल्य भासै है। कैसे है गुणवान जीव? महा मनोहर है चेष्टा जिनकी। अर अति सुन्दर हैं भाव जिनके। ये प्राणी पूर्वोपार्जित कर्मके फलकरि सुख दुख भोगवै है। तातैं जो सुखके अर्थी हैं वे जिनरूप सूर्यकरि प्रकाशित जो पवित्र जिनमार्ग ताविषै प्रवर्त्तै है।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रामको राजा गन्धर्वकी कन्यानिका लाभ वर्णन करनेवाला इक्यावनवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५१ ॥

अथानन्तर महा प्रतापकर पूर्ण महाबली हनुमान जैसे सुमेरुको सौधर्म जाय तैसे त्रिकूटाचलको चला। सो आकाशविषै जाती जो हनुमानकी सेना ताका महाधनुषके आकार मायामई यंत्रकर निरोध भया। तब हनुमान अपने समीपी लोकनितैं पूछी जो मेरी सेना कौन कारण आगे चल न सकै। यहां गर्वका पर्वत असुरनिका नाथ चमरेन्द्र है अथवा इन्द्र है। तथा या पर्वतके शिखिरविषै जिनमंदिर है अथवा चरमशरीरी मुनि है। तब हनुमानके ये वचन सुनकर पृथुमति मंत्री कहता भया—हे देव! यह क्रूरतासंयुक्त मायामई यंत्र है। तब आप दृष्टिधर देखा कोटिविषै प्रवेश कठिन जाना। मानो यह कोट विरक्त

स्त्रीके मन समान दु प्रवेश ह । अनेक आकारकू धरे, वक्रताकरि पूर्ण, महा भयानक, सर्वभक्षी, पूतली, जहा देव भी प्रवेश न कर सक । जाज्वल्यमान तीक्ष्ण ह अग्रभाग जिनके ऐसे करोतनिके समूहकर मण्डित, जिह्वाके अग्रभाग करि रुधिरकू उगलते ऐसे हजारा सप तिनकरि भयानक फण, ते विक राल शब्द कर ह अर विषरूप अग्निके कण बरसे ह, विषरूप धूमकरि अंधकार होय रहा है । जो कोई मूख साम तपणाके मानकरि उद्धत भया प्रवश कर ताहि मायामई सप ऐसे निगल जसे सप मेंढकको निगलें । लकाके कोटका मडल जोतिष चक्रत हू ऊचा, सव दिशानिविष दुलघ, अर देखा न जाय । प्रलयकालके मेघ समान भयानक शब्द कर सयुक्त, अर हिंसारूप ग्र थनिकी याई अत्यन्त पाप कमनिकरि निरमापा । ताहि देख कर हनुमान विचारता भया—यह मायामई कोट राक्षसनिके नाथने रचा ह सो अपनी विद्याकी चातयता विखाई ह । अर अब मैं विद्याबलकरि याहि उपाडता सता राक्षस निका मद हरू, जसे आत्मध्यानी मुनि मोह मदकू हरे । तब हनुमान युद्धविष मन कर समुद्र समान जो अपनी सेना सो आकाशविष राखी । अर आप विद्यामई वक्तर पहिन हाथविष गदा लेकर माया मई पूतलीके मुखविष प्रवेश किया । जसे राहुके मुखविष सूय प्रवेश कर । अर वा मायामई पूतलीकी कक्षि सोई भई पवतकी गुफा, अंधकारकर भरी, सो आप नरसिंहरूप तीक्ष्ण नखनिकर बिदारी अर गदाक घातकरि कोट चूरण किया, जस शक्लध्यानी मुनि निर्मल भावनिकरि घातिया कमकी स्थिति चूरण कर ।

अथानन्तर यह विद्या महा भयकर भगकू प्राप्त भई । तब मेघकी ध्वनि समान भई, विद्या भाग गई, कोट विघट गया, जसे जिनेन्द्रके स्तोत्रकरि पापकम विघट जाय । तब प्रलयकालके मेघ समान भयकर शब्द भया । मायामई कोट बिखरा देख कोटका अधिकारी वज्रमुख महा क्रोधायमान होय शीघ्र ही रथपर चढ हनुमान पर विना विचारे मारवेकू दौडया । जस सिंह अग्निकी ओर दौडे । जब वाहि आया देख पवनका पुत्र महा योधा युद्ध करिवेकू उद्यमी भया । तब दोऊ सेनाके योधा प्रचण्ड नाना

प्रकारके वाहननिपर चढे, अनेक प्रकारके आयुध धरे परस्पर लडने लगे। बहुत कहने करि कहा ? स्वामी के काय ऐसा युद्ध भया जैसा मानके अर मार्दवके युद्ध होय। अपने २ स्वामीकी दृष्टिविषै योधा गाज गाज युद्ध करत भए जीवनविषै नाहीं है स्नेह जिनके। फिर हनुमानके सुभटनि कर वज्रमुखके योधा क्षणमात्रविषै दशोंदिशाकूं भाजे। अर हनुमानने सूर्यहूते अधिक है ज्योति जाकी, ऐसे चक्र शस्त्रकरि वज्रमुखका सिर पृथ्वीपर डारा। यह सामान्य चक्र है। चक्री अर्धचक्रिनिके सुदर्शनचक्र होय है। युद्ध विषै पिताका मरण देख लंकासुंदरी, वज्रमुखकी पुत्री पिताका जो शोक उपजा हुता ताहि कष्टतें निवार, क्रोधरूप विषकी भरी तेज तुरंग जुते हैं जाके, ऐसे रथपर चढी। कुण्डलनिके उद्योतकरि प्रकाशरूप है मुख जाका वक्र है भौंह जाकी, उल्कापातका स्वरूप, सूर्य मंडल समान तेजधारी, क्रोध के वश कर लाल हैं नेत्र जाके, क्रूरताकर डसे हैं किंदूरी समान होठ जानें, मानो क्रोधायमान शची ही है। सो हनुमानपर दौडी, अर कहती भई—रे दुष्ट ! मैं तोहि देखा, जो तोमें शक्ति है तो मोतें युद्धकर। जो क्रोधायमान भया रावण न करै सो मैं करूंगी। हे पापी ! तोहि यममंदिर पठाऊंगी। तू दिशाकूं भूल अर अनिष्ट स्थानकूं प्राप्त भया। ऐसे शब्द कहती वह शीघ्रही आई। सो आवतीका हनुमानने छत्र उडाय दिया तब वानें बाणनिकर इनका धनुष तोड डारा। अर वह शक्तिलेय चलावता पहिले हनुमान बीच ही शक्तिकूं तोड डारी। तब वह विद्याबल कर गम्भीर, वज्रदंडसमान बाण अर फरसी, बरछी चक्र शतघ्नी मूसल शिला इत्यादि वायुपुत्रके रथपर बरसावती भई जैसे मेघमाला पर्वतपर जलकी धारा बरसावै। नानाप्रकारके आयुधनिके समूहकरि वानें हनुमानकूं बेढा जैसे मेघपटल सूर्यकूं आच्छादै। तब हनुमान विद्याकी सब विधिविषै प्रवीण महापराक्रमी, तानें शत्रुनिके समूह अपने शस्त्रनिकर आप तक न आवने दिये। तोमरादिके बाणनिकरि तोमरादिक बाण निवारे अर शक्तितैं शक्ति निवारी। या भांति परस्पर अतियुद्ध भया। याके बाण वानें निवारे, वाके बाण यानें निवारे। बहुत देरतक युद्ध भया, कोई नाहीं हारै। सो गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं—

हे राजन ! हनुमानको लकासुन्दरी बाणशक्ति इत्यादि अनेक आयुधनिकरि जीतती भई, अर कामके बाणनिकरि पीडित भई । कसे ह कामके बाण ? ममके विदारण हारे । कसी ह लकासुन्दरी ? साक्षात लक्ष्मीसमान रूपवती, कमलोचन, सौभाग्य गुणनिकरि गर्वित, सो हनुमानके हृदयविष प्रवेश करती भई । जाके कण पयत बाणरूप तीक्ष्ण कटाक्ष नेत्ररूप धनुष त चढे, ज्ञान धीयके हरणहारे, महा सुन्दर, दुद्धर मनके भेदनहारे, प्रवीण, अपनी लावण्यताकरि हरी ह सुन्दरताई जिनने । तब हनुमान मोहित होय मनमे चितवता भया—जो यह मनोहर आकार, महाललित, बाहिर तो विद्याबाण अर सामान्य बाणतिनकरि मोहि भेद ह, और आभ्यतर मरे मनकू कामके बाणकरि बींध ह । यह मोहि बाह्याभ्यतर हण ह, तन मनको पीडे ह । या युद्धविष याके बाणनिकरि मत्यु होय तो भली परन्तु याके बिना स्वगविष जीवना भला नाहीं । या भाति पवनपुत्र मोहित भया, अर वह लकासुन्दरी याके रूपकू देख मोहित भई । क्रूरतारहित करुणाविष आया ह चित्त जाका, तब जो हनुमानके मारिवेकू शक्ति हाथमे लीनी हुती सो शीघही हाथत भूमिमे डार दई, हनुमानपर न चलाई । कसे ह हनुमान ? प्रफुल्लित ह तन अर मन जिनका, अर कमलदलसमान ह नेत्र जिनके, अर पूणमासीके चन्द्रमा समान ह मुख जिनका, नवयौवन, मुकुटविष वानर का चिह्न, साक्षात कामदेव ह । लकासुन्दरी मनमे चितवती भई—याने मेरा पिता मारचा, सो बडा अपराध किया । यद्यपि द्वेषी ह तथापि अनुपम रूपकर मेरे मनकू हर ह । जो या सहित कामभोग न सेऊ तो मेरा जन्म निष्फल ह तब विह्वल होय एक पत्र तामे अपना नाम सो बाणकू लगाय चलाया, ताम ये समाचार हुते—हे नाथ ! देवनिके समूहकरि न जीती जाऊ ऐसी म, सो तुमने कामके बाणनिकरि जीती । यह पत्र बाच हनुमान प्रसन्न होय । रथत उतर जायकर तासू मिले, जस काम रतिसे मिल । वह प्रशातवर भई सती आसू ढारती तातके मरणकर शोकरत । तब हनुमान कहते भए—हे चन्द्रवदनी ! रुदन मत कर, तेरे शोकको निवत्ति होहु । तेरे पिता परम क्षत्री, महा शूरवीर तिनकी यही रीति, जो स्वामीकायके अथ युद्धमे प्राण तज ।

अर तुम शास्त्रविष प्रवीण हो सो सब नीके जान हो । या राज्यविष यह प्राणी कर्मनिके उदयकर पिता पुत्र बाधवादिक सबको हणे ह । तात तुम आर्तध्यान तजो । ये सकल प्राणी अपना उपार्जा कर्म भोगव ह । निश्चय मरणका कारण आयुका अत ह अर परजीवनिमित्त मात्र ह । इन वचननिकरि लकासुन्दरी शोकरहित भई । या भाति या सहित कसी सोहती भई ? जस पूर्णचन्द्रसे निशा सोह । प्रेमके समूहकर पूर्ण दोऊ मिलकर सग्रामका खेद विस्मरण होय गए, दोऊनिका चित्त परस्पर प्रीतिरूप होय गया । तब आकाशविष स्तम्भिनी विद्याकर कटक थाभा । अर सुन्दर मायामई नगर बसाया, जसी साझकी आरक्तता होय ता समान लाल, देवनके नगरसमान मनोहर, जामे राजमहल अत्यन्त सुन्दर, सो हाथी घोडे विमान रथोपर चढे बडे बडे राजा नगरमे प्रवेश करते भए । नगर ध्वजानिकी पक्ति कर शोभित, सो यथायोग्य नगरमें तिष्ठ । महाउत्साहस सयुक्त रात्रिमें शूरवीरनिके युद्धका वर्णन जसा भया तसा सामत करते भए । हनुमान लकासुन्दरीके सग रमता भया ।

अथानन्तर प्रभात ही हनुमान चलवेकू उद्यमी भए । तब लकासुन्दरी महाप्रेमकी भरी ऐसें कहती भई—हे कत ! तुम्हारे पराक्रम न सहे जाय ऐसे अनेक मनुष्योके मुख रावणने सुने होवेंगे । सो सुनकर अतिखेदखिन्न भया होयगा । तात तुम लका काहेको जावो । तब हनुमानने इसे सकल वृत्तात कहा । जो रामने वानरवशियोका उपकार किया सो सबोका प्रेरा रामके प्रति उपकार निमित्त जाऊ हू । हे प्रिये ! रामका सीतासे मिलाप कराऊ, राक्षसनिका इन्द्र अन्याय मार्गसे हर ले गया ह, सो सर्वथा म लाऊगा । तब ताने कहा—तुम्हारा और रावणका वह स्नेह नाहीं, स्नेह नष्ट भया । सो जस स्नेह कहिए तल ताके नष्ट होयवेकरि दीपककी शिखा नाहीं रहे ह तस स्नेहके नष्ट होयवेकरि सम्बन्ध का व्यवहार नाही रहे ह । अब तक तम्हारा यह व्यवहार था—तुम जब लका आवते तब नगर उछाव त गली गलीमें हर्ष होता, मन्दिर ध्वजानिकी पक्तिसे शोभित होते, जस स्वर्गमें देव प्रवेश कर तस तुम प्रवेश करते । अब रावण प्रचड दशानन तुमविष द्वेषरूप ह सो निसदेह तुमकू पकडेगा । तात

जब तिहारे उनके सधि होय तब मिलना योग्य है। तब हनुमान बोले हे विचक्षणे! जायकर ताका अभिप्राय जानना चाहू हू। और वह सीता सती जगतमे प्रसिद्ध है, अर रूपकर अद्वितीय है। जाहि देखकर रावणका सुमेरुसमान अचल मन चला है। वह महा पतिव्रता हमारे नाथकी स्त्री, हमारी माता समान ताका दर्शन किया चाहू हू। या भाति हनुमानने कही और सब सेना लकासुन्दरीके समीप राखी और आप तो विवकिनीसे विदा होयकर लकाको सन्मुख भए। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकत कहे है—हे राजन! या लोकविषै यह बडा आश्चर्य है जो यह प्राणी क्षणमात्रमें एक रसको छोडकर दूजे रसमे आ जाय। कभी विरसको छोडकर रसमे आ जाय, कबहू रसको छोडकर विरसमें आ जाय। या जगतविषै इन कर्मनिकी अद्भुत चेष्टा है। ससारी सब जीव कर्मोंके अधीन है। जसे सूर्य दक्षिणायनसे उत्तरायण आवे तैसे प्राणी एक अवस्थासे दूजी अवस्थामे आवे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै हनुमान लकाम् रीका लाभ वर्णन करनेवाला अन्तालीसवा पर्व पूर्ण भया ॥ ५२ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकत कहे है—हे श्रेणिक! यह पवनका पुत्र महाप्रभावके उदय कर सयुक्त, थोडे ही सवकनि सहित नि शक लकाविषै प्रवेश करता भया। बहुरि प्रथमही विभीषण के मदिरमे गया। विभीषणने बहुत सन्मान किया। फिर क्षणएक तिष्ठकर परस्पर वार्ता कर हनुमान कहता भया—जो रावण आधे भरतक्षेत्रका पति, सबका स्वामी, ताहि यह कहा उचित जो दरिद्र मनुष्य की न्याई चोरी कर परस्त्री लावे। जे राजा है सो मर्यादाके मूल है, जैसे नदीका मूल पर्वत। राजा ही अनाचारी होय तो सबलोकमे अन्यायकी प्रवृत्ति होई। ऐसे चरित्र किए राजाकी सबलोकमें निंदा होय। तातै जगतके कल्याण निमित्त रावणकू शीघ्रही कहो—न्यायको न उलघे। यह कहो हे नाथ! जगतमे अपयशका कारण यह कर्म है। जिससे लोक नष्ट होय सो न करना। तुम्हारे कुल

का निर्मलचरित्र केवल पृथ्वीपर ही प्रशंसा योग्य नाहीं, स्वर्गमें भी देव हाथ जोड नमस्कारकर तिहारे बडोंकी प्रशंसा करें हैं। तिहारा यश सर्वत्र प्रसिद्ध है। तब विभीषण कहता भया—मैं बहुत बार भाईकूं समझाया, परन्तु मानें नाहीं। अर जिस दिनसे सीता ले आया उस दिनसे हमसे बात भी न करें। तथापि तिहारे वचनसे मैं बहुरि दबाय कर कहूंगा। परन्तु यह हठ उससे छूटना कठिन है। अर आज ग्यारवां दिन है, सीता निराहार है जलहू नाहीं लेय है, तो भी रावणकूं दया नाहीं उपजी, या कामतें विरक्त नाहीं होय है। ए बात सुन कर हनुमानकूं अति दया उपजी। प्रमद नामा उद्यान जहां सीता विराजे है, तहां हनुमान गया। ता वनकी सुन्दरता देखता भया नवीन जे बेलनिके समूह तिनकरि पूर्ण, अर तिनके लाल पल्लव सोहैं, मानों सुन्दर स्त्रीके करपल्लव ही हैं। अर पुष्पनिके गुच्छों पर भ्रमर गुंजार करें हैं। और फलनिकरि शाखा नमीभूत होय रही हैं, अर पवनसे हालें हैं। कमलोंकर जहां सरोवर शोभित हैं, और देदीप्यमान बेलनिकरि वृक्ष वेष्टित हैं। मानो वह वन देववन समान है अथवा भोगभूमि समान है। पुष्पनिकी मकरन्दसे मंडित मानों साक्षात नन्दनवन है। अनेक अद्भुतता करि पूर्ण हनुमान कमललोचन वनकी लीला देखता संता सीताके दर्शन निमित्त आगे गया। चारों तरफ वनमें अवलोकन किया सो दूर हीतें सीताकूं देखा। सम्यक दर्शन सहित महासती, ताहि देखकर हनुमान मनमें चिंतवता भया—यह रामदेवकी परम सुन्दरी महासती निर्धूम अग्नि समान असुवनसे भर रहे हैं नेत्र जाके, सोच सहित बैठी मुखसे हाथ लगाय, सिरके केश बिखर रहे हैं, कृश है शरीर जिसका। सो देखकर हनुमान विचारता भया। धन्य रूप या माताका लोकविषै, जीते हैं सर्वलोक जिसने, मानों यह कमलसे निकसी लक्ष्मी ही विराजे है। दुखके समुद्रमें डूब रही है तोहू या समान और कोई नारी नाहीं। मैं जैसे होय तैसे इसे श्रीरामसे मिलाऊं। इसके और रामके काज अपना तन दूं, याका और रामका विरह न देखूं। यह चिंतवनकर अपना रूप फेर, मंद मंद पांव धरता हनुमान आगे जाय श्रीरामकी मुद्रिका सीताके पास डारी। सो शीघ्रही उसे देख रोमांच होय आए

और कछूइक मुख हर्षित भया। सो समीप बठी थी जो नारिया वे इसकी प्रसन्नताके समाचार जायकर रावणकू कहती भई। सो वह तुष्टायमान होय इनकू वस्त्र रत्नादिक देता भया। और सीताकू प्रसन्नवदन जान कायकी सिद्धि चितता भया। सो मदोदरीकू सव अत पुरसहित सीताप पठाई। सो अपने नाथके वचनसे सव अ त पुर सहित सीताप आई। सो सीताकू म दोदरी कहती भई—

हे बाले! आज तू प्रसन्न भई सुनी सो तने हमपर बडी कपा करी। अब लोकका स्वामी रावण उसे अगीकार कर, जसे देवलोककी लक्ष्मी इ द्रकू भज। ये वचन सुन सीता कोपकर मन्दोदरीसे कहती भई-हे खेचरी! आज मेर पतिकी वार्ता आई ह। मेर पति आन दसे ह इसलिये मोहि हष उपजा ह। तब म दोदरीने जानी इसे अन्न जल किये ग्यारह दिन भए सो वायसे बक ह। तब सीता मुद्रिका ल्यावनहारासू कहती भई, हे भाई! म इस समुद्रके अतर्द्वीपविष भयानक वनमें पडी हू सो कोऊ उत्तम जीव मेरा भाई समान अतिवात्सल्य धारणहारा मेरे पतिकी मुद्रिका लेय आया ह सो प्रकट दशन देहु। तब हनुमान महा भव्य जीव सीताका अभिप्राय जान मनमे विचारता भया जो पहिले पराया उपकार विचारे, बहुरि अतिकायर होय छिप रहे सो अधम पुरुष ह। अर जे परजीवको आपदाविष खेद खिन्न देख पराई सहाय कर तिन दयाव तोका ज म सफल ह। तब समस्त रावणकी स्त्री म दोदरी आदि देख ह। अर दूरहीसे सीताकू देख हाथ जोड सीस निवाय नमस्कार करता भया। कसा ह हनुमान? महा निशक, कातिकर च द्रमासमान, दीप्तिकर सूयसमान, वस्त्र आभूषणकर मडित, रूपकर अतुल्य, मुकुटमे बानरका चिह्न, च दनकर चर्चित ह सव अग जाका, महा बलवान, बजवषभनाराच सहनन, सन्दर केश, रक्त होठ, कुण्डलके उद्योतकरि महा प्रकाशरूप मनोहर मुख, गुणवान, महाप्रताप सयुक्त सीताके निकट आवता कसा सोभता भया? मानो भामडल भाई लेयवेकू आया ह। प्रथम ही अपना कुल गोत्र माता पिताका नाम सुनायकर बहुरि अपना नाम कहा। बहुरि श्रीरामने जो कहा हुता सो सव कहा। अर हाथ जोड विनती करी—हे साध्वी! स्वर्गविमानसमान महलोमें श्रीराम विराजे ह।

परन्तु तिहारे विरहरूप समुद्रमे मग्न काहू ठौर रतिकू नाही पावे है। समस्त भोगोपभोग तजे मौन धरे तिहारा ध्यान करे है जैसे मुनि शुद्धताकू ध्यावे, एकाग्रचित्त तिष्ठे है। वे वीणाका नाद अर सुन्दर स्त्रियोके गीत कदापि नाही सुने है। अर सदा तिहारी ही कथा करे है। तिहारे देखवेके अर्थ केवल प्राणो को धरे है। यह वचन हनुमानके सुन सीता आनन्दकू प्राप्त भई। बहुरि सजल नेत्र होय कहती भई (सीताके निकट हनुमान महा विनयवान हाथ जोड खडा है) जानकी बोली—

हे भाई! दुःखके सागरविषै पडी हू अशुभके उदयकरि। पतिके समाचार सुन तुष्टायमान भई। तोहि कहा दू? तब हनुमान प्रणामकर कहता भया, हे जगतपूज्य! तिहारे दर्शन ही से मोहि महा लाभ भया। तब सीता मोती समान आसुनिकी बूद नाखती हनुमानसे पूछती भई—हे भाई! यह नगर ग्राह आदि अनेक जलचरोकर भरा महा भयानक समुद्र ताहि उलघकर तू कैसे आया? अर साचे कहो मेरा प्राणनाथ तैने कहा देख्या? अर लक्ष्मण युद्धविषै गया हुता सो कुशल क्षेमसू है। अर मेरा नाथ कदाचित तोहि यह सदेशा कहकर परलोक प्राप्त हुवा होय अथवा जिन मार्गविषै महा प्रवीण सकल परिग्रहका त्यागकर तप करता होय अथवा मेरे वियोगते शरीर शिथिल होय गया, अर अगरीते मुद्रिका गिर पडी होय यह मेरे विकल्प है। अब तक मेरे प्रभुका तोसो परिचय न हुता सो कौन भाति मित्रता भई। सो सब मोसू विशेषता कर कहो। तब हनुमान हाथ जोड सिर निवाय कहता भया—हे देवि! सूर्यहास खड्ग लक्ष्मणकू सिद्ध भया अर चन्द्रनखाने धनीपै जाय धनीकू क्रोध उपजाया। सो खरदूषण दडकवनविषै युद्ध करवेकू आया। अर लक्ष्मण उससे युद्ध करवेकू गये। सो तो सब वृत्तात तुम जानो हो? बहुरि रावण आया अर आप श्रीरामके पास विराजती हुती। सो रावण यद्यपि सब शास्त्रका वेत्ता हुता, अर धर्म अधर्मका स्वरूप जाने हुता, परन्तु आपकू देखकर अविवेकी होय गया। समस्त नीति भूल गया, बुद्धि जाती रही, तिहारे हरिवेके कारण कपटकर सिहनाद किया सो सुनकर राम लक्ष्मणपै गये। अर यह पापी तुमकू हर ले आया। बहुरि लक्ष्मण रामसो कही—तुम क्यो आये,

शीघ्र जानकीप जावहु । तब आप स्थानक आए । तुमकू न देखकर महा खेदखिन्न भए । तिहारे ढूंढनेके कारण वनविष बहुत भ्रमे । बहुरि जटायुको मरता देखा तब ताहि णमोकार मन्त्र दिया । अर चार आराधना सुनाय सन्यास देय पक्षीका परलोक सुधारा । बहुरि तिहारे विरहकर महादुखी सोचमें पडे । अर लक्ष्मण खरदूषणकू हन रामप आया, धीय बधाया, अर चन्द्रोदयका पुत्र विराधित लक्ष्मण से युद्ध ही विष आय मिला हुता । बहुरि सुग्रीव रामप आया । अर साहसगति विद्याधर जो सुग्रीव का रूपकर सुग्रीवकी स्त्रीका अर्थी भया हुता सो रामकू देख साहसगतिकी विद्या जाती रही । सुग्रीव का रूप मिट गया । अर साहसगति रामसू लडा सो साहसगतिकू रामने मारा । सुग्रीवका उपकार किया । तब सबने मोहि बुलाय रामसू मिलाया । अब म श्रीरामका पठाया तिहारे छुडाइवे अर्थ यहाँ आया हू । परस्पर युद्ध करना निःप्रयोजन ह । कार्यकी सिद्धि सवथा नयकर करना । अर लंकापुरीका नाथ दयावान ह, विनयवान ह, धम अर्थ कामका वेत्ता ह, कोमल हृदय ह, सौम्य ह, वक्रतारहित ह,सत्यवादी महाधीरवीर ह, सो मेरा वचन मानेगा । तोहि रामप पठावेगा । याकी कीर्ति महा निर्मल पृथ्वीविष प्रसिद्ध ह, अर यह लोकापवादत डर ह । तब सीता हर्षित होय हनुमानसे कहती भई—हे कपिध्वज ! तो सरीखे पराक्रमी धीरवीर विनयवान मेरे पतिके निकट केतेके ह ? तब मन्दोदरी कहती भई—हे जानकी ! तै यह कहा समझ कर कही । तू याहि न जाने ह तात ऐसा पूछ ह । या सरीखा भरतक्षेत्रमें कौनह ? या क्षेत्र में यह एक ही ह । यह महा सुभट युद्धमें कई बार रावणका सहाई भया है । यह पवनका पुत्र अंजनी का सुत रावणका भानजा जमाई ह । चन्द्रनखाकी पुत्री अनंगकुसुमा परणी है या एकने अनेक जीते ह । सदा लोक याके दर्शनकू बाछ ह । चन्द्रमाकी किरणवत याकी कीर्ति जगतमे फल रही ह । लंका का धनी याहि भाईनित भी अधिक गिन ह । यह हनुमान पृथ्वीविष प्रसिद्ध गुणनिकर पूर्ण ह । परंतु यह बडा आश्चर्य ह कि भूमिगोचरियोका दूत होय आया ह । तब हनुमान कही तुम राजा मयकी पुत्री अर रावणकी पटराणी दूती होयकर आई हो । जापतिके प्रसादत देवनिकेसे सुख भोगे, ताहि अकार्यविष प्रवर्तते

मन नाहीं करो हो ? और ऐसे कायकी अनुमोदना करो हो ! अपना वल्लभ विषका भरा भोजन कर ताहि नाहीं निवारो हो। जो अपना भला बुरा न जाने ताका जीतव्य पशु समान है। अर तिहारा सौभाग्यरूप सबतें अधिक, अर पति परस्त्रीरत भया ताका दूतीपना करौ हो ! तुम सब बातनिविषै प्रवीण, परमबुद्धिमती हुती सो प्राकृत जीवनिसमान अविधि कार्य करो हो। तुम अर्धचक्रीकी महिषी कहिए पटराणी हो, सो अब मैं महिषी कहिए भैंस समान जानू हूं। यह वचन हनुमानके मुखतें सुन मंदोदरी क्रोधरूप होय बोली–अहो ! तू दोषरूप है, तेरा वाचालपना निरर्थक है। जो कदाचित रावण यह बात जाने कि यह रामका दूत होय सीतापै आया है, तो जो काहूसे न करै ऐसी तोसों करै। अर जाने रावणका बहनेऊ चन्द्रनखाका पति मारा ताके सुग्रीवादिक सेवक भए, रावणकी सेवा छाडी सो वे मंदबुद्धि हैं रंक कहा करेंगे ? इनकी मृत्यु निकट आई है, तातें भूमिगोचरीके सेवक भए हैं। ते अतिमूढ, निर्लज्ज, तुच्छवृत्ति, कृतघ्नी, वृथा गर्वरूप होय मृत्युके समीप तिष्ठै हैं।

ये वचन मंदोदरीके सुनकर सीता क्रोधरूप होय कहती भई–हे मंदोदरी ! तू मंदबुद्धि है जो वृथा ऐसे कहै है। तैं मेरा पति अद्भुत पराक्रमका धनी कहा नाहीं सुना है ? शूरवीर अर पंडितनिकी गोष्ठीविषै मेरा पति मुख्य गाइए है। जाके वजावत धनुषका शब्द रण संग्रामविषै सुनकर महा रणधीर योधा धीर्य नाहीं धारे हैं भयसे कम्पायमान होयकर दूर भागै हैं। अर जाका लक्ष्मण छोटा भाई लक्ष्मीका निवास, शत्रुपक्षके क्षय करवेकूं समर्थ, जाके देखते ही शत्रु दूर भाग जावें। बहुत कहिवे करि कहा ? मेरा पति राम लक्ष्मणसहित समुद्र तरकर शीघ्र ही आवै है। सो युद्ध विषै थोडे ही दिननिविषै तू अपने पतिकूं मूवा देखेगी। मेरा पति प्रबल पराक्रमका धारी है। तू पापी भरतारकी आज्ञारूप दूती होय आई है सो शिताब ही विधवा होयगी, अर बहुत रुदन करेगी।

ये वचन सीताके मुखतें सुनकर मंदोदरी राजा मयकी पुत्री अतिक्रोधकूं प्राप्त भई। अठारा हजार राणी हाथाकर सीताके मारवेकूं उद्यमी भई और अति क्रूरवचन कहती सीता पर आई। तब

हनुमान बीच ग्रानकर तिनकू थाभी जस पहाड नदीके प्रवाहकू थाभ। ते सब सीताको दुखका कारण वेदनारूप होय हनिवेकू उद्यमी भई थी सो हनुमानने वद्यरूप होय निवारा। तब ये सब मन्दोदरी ग्रादि रावणकी राणी मानभग होय रावणप गई। क्रूर है चित्त जिनके। तिनकू गए पीछे हनुमान सीतासू नमस्कार करि ग्राहारके निमित्त विनती करता भया—हे देवि! यह सागरात पृथ्वी श्रीरामचन्द्रकी ह तात यहाका ग्रन्न उनहीका ह, वरिनिका न जानो। या भाति हनुमानने सम्बोधी ग्रर प्रतिज्ञा भी यही हुती कि जो पतिके समाचार सुनू तब भोजन करू। सो समाचार ग्राए ही। तब सीता सब ग्राचारमें विचक्षण, महा साध्वी, शीलवती दयावती, देशकालकी जाननेवारी, ग्राहार लेना ग्रगीकार करती भई। तब हनुमानने एक ईरा नामकी स्त्री कुलपालिकाकू ग्राज्ञा करी जो शीघ्र ही श्रेष्ठ ग्रन्न लावो। ग्रर हनुमान विभीषणके पास गया, ताहीके भोजन किया, ग्रर तासू कही सीताको भोजनकी तयारी कराय ग्राया हू। ग्रर ईरा जहा डेरे हुते वहा गई। सो चार महूतमें सब सामग्री लेकर ग्राई। दपण समान पृथ्वीकू चन्दनसू लीपा ग्रौर महा सुगध विस्तीण निमल सामग्री ग्रौर सुवर्णादिकके भाजन में भोजन धराय लाई। कईएक पात्र घृतके भरे है, कईएक चावलनिकरि भरे ह, चावल कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल, ग्रौर कईएक पात्र दालसो भरे ह। ग्रौर ग्रनेक रस नाना प्रकारके व्यजन दूध दही महा स्वादरूप भाति भातिका ग्राहार। सो सीता बहुत क्रिया सयुक्त रसोई कर, ईरा ग्रादि समीप वर्तियोको यहा ही योते। हनुमानसे भाईका भाव कर ग्रति वात्सल्य किया। महा श्रद्धासयुक्त ह ग्रत करण जाका ऐसी सीता महा पतिव्रता भगवानकू नमस्कारकर ग्रपना नियम समाप्तकर, त्रिविध पात्रनिकू भोजन करावनेका ग्रभिलाषकर महा सुदर श्रीराम तिनकू हृदयविष धार, पवित्र ह ग्रग जाका, दिनविष शुद्ध ग्राहार करती भई। सूयका उद्योत होय तबही पवित्र मनोहर पुण्यका बढावन हारा ग्राहार योग्य ह। रात्रिकू योग्य नाहीं? सीता भोजन कर चुकी ग्रर कछु इक विश्रामकू प्राप्त भई, तब हनुमानने नमस्कारकर विनती करी—हे पतिव्रते! हे पवित्रे! हे गुणभूषणे! मेरे काधे चढहु

अर समुद्र उलघ क्षण मात्रमें रामके निकट ले जाऊ। तिहारे ध्यानमें तत्पर महाविभवसयुक्त जे राम तिनकू शीघ्र ही देखहु। तिहारे मिलापकर सबहीकू आनन्द होई। तब सीता रुदन करती कहती भई—हे भाई! पतिकी आज्ञा विना मेरा गमन योग्य नाहीं। जो पूछी कि तू बिना बुलाए क्यो आई तो म कहा उत्तर दूगी। तात रावणने उपद्रव तो सुना होयगा सो अब तुम जावो, तोहि यहा विलम्ब उचित नाही। मर प्राणनाथक समीप जाय मेरी तरफसे हाथ जोड नमस्कारकर मेरे मुखके वचन या भाति कहियो—हे देव! एक दिन मो सहित आपने चारण मुनिकी बन्दना करी, महा स्तुति करी, अर निमलजलकी भरी सरोवरी कमलनिकर शोभित जहा जलक्रीडा करी। ता समय महा भयकर एक वनका हाथी आया सो वह हाथी महाप्रबल आपने क्षण मात्रमे वशकर सुन्दर क्रीडा करी। हाथी गवरहित निश्चल किया। अर एक दिन नन्दन वन समान वनविष म वक्षकी शाखाकू नवाती क्रीडा करती हुती सो भमर मेरे शरीरकू आय लगे। सो आपने अति शीघताकर मुझे भुजासे उठाय लई, अर आकुलता रहित करी। अर एक दिन सूय उद्योत समय आपक समीप सरोवरके तट तिष्ठती थी तब आप शिक्षा देयवेके काज कछू इक मिसकर कोमल कमल नालकी मेरे मधुरसी दीनी। अर एक दिन पवतपर अनक जातिके वक्ष देखे। म आपकू पूछी—हे प्रभो! यह कौन जातिके वक्ष है, महा मनोहर? तब आप प्रसन्न मुखकर कही—हे देवी! ये नन्दनी वक्ष ह। अर एक दिन करणकुण्डल नामा नदीके तीर आप विराजे हुते, अर मेह हुता, ता समय मध्याह्न समय चारण मुनि आए सो तुम उठ कर महा भक्तिकर मुनिकू आहार दिया। तहा पचाश्चय भए, रत्नवर्षा, कल्प वक्षोके पुष्पनिकी वर्षा, सुगन्धजलकी वर्षा, शीतल मन्द सगन्ध पवन, दुन्दुभी बाजे, अर आकाशविष देवनिने यह ध्वनि करी—धन्य य पात्र, धन्य ये दाता, धन्य य दान। ये सब रहस्यकी बातें कही अर चूडामणि सिरत उतार दिया जो याके दिखानेस उनकू विश्वास आवेगा। अर यह कहियो—म जानू हू आपकी कपा मोप अत्यन्त है तथापि तुम अपने प्राण यत्नसू राखियो। तिहारेसे मरा वियोग भया। अब तिहार यत्न

से मिलाप होयगा। ऐसा कह सीता रुदन करती भई। तब हनुमानने धीर्य बधाया अर कही—हे माता! जो तुम आज्ञा करोगी सो ही होयगा और शीघ्र ही स्वामीसो मिलाप होयगा। यह कह हनुमान सीतासे विदा भया। अर सीताने पतिकी मुद्रिका अगुरीमें पहिर ऐसा सुख माना मानो पतिका समागम भया।

अथानन्तर वनकी नारी हनुमानकू देखकर आश्चर्यकू प्राप्त भई। अर परस्पर ऐसी बात करती भई—यह कोई साक्षात कामदेव है अथवा देव है सो वनकी शोभा देखवेकू आया है? तिनमें कोई एक काम कर व्याकुल होय बीन बजावती भई किन्नरी देवियोकेसे है स्वर जिनके, कोई इक चन्द्र वदनी बामे हस्तविषै दर्पण राख अर याका प्रतिबिम्ब दर्पणमें देखती भई। देखकर आसक्त मन भई। या भाति समस्त स्त्रियोको संभ्रम उपजाया, हार माला सुन्दर वस्त्र धर, देदीप्यमान अग्निकुमार देववत सोहता भया।

इनके वनविषै अनेक वार्ता रावणने सुनी। तब क्रोधरूप होय रावण महानिर्दयी किंकर युद्धविषै जे प्रवीण हुते, ते पठाए। अर तिनकू यह आज्ञा करी कि मेरी क्रीडाका जो पुष्पोद्यान तहा मेरा कोई एक द्रोही आया है सो अवश्य मार डारियो। तब ये जायकर वनके रक्षकनिकू कहते भए—हो वनके रक्षक हो! तुम कहा प्रमादरूप होय रहे हो? कोउ उद्यानविषै दुष्ट विद्याधर आया है सो शीघ्र ही मारना अथवा पकडना। वह महा अविनयी है। वह कौन है, कहा है? ऐसे किंकरनिके मुखतै ध्वनि निकसी सो हनुमानने सुनी। अर धनुषके धरणहारे, शक्तिके धरणहारे, गदाके धरणहारे, खडगके बरछीके धरणहारे अनेक लोग आवते हनुमानने देखे। तब पवनका पूत सिंहहूतै अधिक है पराक्रम जाका मुकुटविषै रत्नजडित बानरका चिह्न, ताकर प्रकाश किया है आकाश जाने, आप उनकू अपनारूप दिखाया, उगते सूर्य समान क्रोध होठ डसता लाल नेत्र। तब याके भयकरि सब किंकर भागे, तब और क्रूर सुभट आए। शक्ति तोमर खडग चक्र गदा धनुष इत्यादि आयुध करविषै धर अर अनेक शस्त्र चलावते आए। तब अंजनीका पुत्र शस्त्ररहित हुता सो वनके जे वृक्ष ऊचे ऊचे थे उनके समूह

१४
पुरा ।
५७८

उपाडे अर पवतनिकी शिला उपाडी सो रावणके सुभटनिपर अपनी भुजानिकर वक्ष अर शिला चलाई, मानो काल ही ह, सो बहुत सामत मारे। कसी ह हनुमानकी भुजा ? महा भयकर जो सप ताके फण समान ह आकार जिनका। शाल वक्ष, पीपल, बड, चम्पा, नीव, अशोक, कदम्ब, कुन्द, नाग अजुन, धव, आम, लोध, कटहल बडे२ वक्ष उपार२ अनेक योधा मारे। कईएक शिलावोसे मारे, कई एक मुक्को अर लातोसे पीस डारे। समुद्रसमान रावणके सुभटोकी सेना क्षणमात्रविष बखेर डारी। कईएक मारे, कईएक भागे। हे श्रेणिक! मगनिके जीतवेकू मगराजका कौन सहाई होय अर शरीर बलहीन होय तो घनोकी सहायकर कहा ? ता वनके सबही भवन अर वापिका अर विमान सारिखे उत्तम मदिर सब चूर डारे। केवल भूमि रही गई। वनके मन्दिर अर वक्ष विध्वस किए, सो माग होय गया जसे समुद्र सूख जाय अर माग होय जाय। फोरि डारी ह हाटोकी पक्ति, अर मारे ह अनेक किकर, सो बाजार ऐसा होय गया मानो सग्राम की भूमि ह। उत्तुग जे तोरण सो पडे, अर ध्वजावो की पक्ति पडी, सो आकाशसे मानो इन्द्रधनुष पडा ह। अर अपनी जघात अनेक वणके रत्ननिके महिल ढाहे सो अनेक वणके रत्ननिकी रजकर मानो आकाशविष हजारो इन्द्रधनुष चढे ह। अर पायनिकी लातनकरि पवतसमान ऊचे घर फोर डारे। तिनका भयानक शब्द होता भया। अर कई एक तो हाथनिसे मारे, अर पगोसे मारे, अर छातीसे अर काधेसे। या भाति रावणके हजारो सुभट मारे। सो नगरविष हाहाकार भया। अर रत्नोके महिल गिर पडे, तिनका शब्द भया। अर हाथिनिके थम्भ उपार डारे, अर घोडे पवन मडल, पानोकी न्याई उडे २ फिरे ह। अर वापी फोर डारीं। सो कीचड रह गया। समस्त लका व्याकुल भई मानो चाक चढाई ह। लकारूप सरोवर राक्षसरूप मीनोसे भरा, सो हनुमानरूप हाथीने गाह डारा। तब मेघवाहन बक्तर पहिर बडी फौज लेय आया अर ताके पीछे ही इन्द्रजीत आया सो हनुमान उनसे युद्ध करने लगा। लकाकी वाह्यभूमिविष महायुद्ध भया, जसा खरदूषणके अर लक्ष्मणके युद्ध भया हुता। अर हनुमान चार घोडोके रथपर चढ धनुषबाण

लेय राक्षसनिकी सेना पर दौडा।

तब इन्द्रजीतने बहुत बर तक युद्धकर हनुमानकू नागफाससे पकड्या अर नगरमें ले आया। सो याके आयबे पहिलही रावणके निकट हनुमानकी पुकार होरही थी। अनेक लोग नानाप्रकारकरि पुकार कर रहे हुते कि सुग्रीव का बुलाया यह अपने नगरत किहकधापुर आया, रामसो मिला अर तहाते या ओर आया सो महेन्द्रकू जीता अर साधवोके उपसग निवारे, दधिमुखकी कन्या रामप पठाई, अर वज्रमई कोट विध्वसा, बजमुखकू मारा, अर ताकी पुत्री लकासुन्दरो अभिलाषवती भई सो परनी, अर ता सग रमा, अर पुष्पनामा वन विध्वसा, वनपालक विह्वल करे, अर बहुत सुभट मारे, अर घटरूप जे स्तन तिनकर सींच २ मालियोकी स्त्रियोने पुत्रोकी नाई जे वृक्ष बढाए हुते ते उपार डारे, अर वृक्षोसे बेल दूरकरी, सो विधवा स्त्रियोकी न्याई भूमि विष पडी, तिनके पल्लव सूख गए, अर फल फूलोसे नम्रीभूत नानाप्रकारके वृक्ष मसानकसे वृक्ष करडारे। सो यह अपराध सुन रावणकू अतिकोप भया हुता इतनेमे इन्द्रजीत हनुमानकू लेकर आया। सो रावणने याकू लोहकी साकलनिकर बधाया अर कहता भया–यह पापी निलज्ज दुराचारी ह। अब याके देखवेकर कहा ? यह नाना अपराधका करणहारा। ऐसे दुष्टको क्यो न मारिये ? तब सभाके लोक सबही माथा धुनकर कहते भए–हे हनुमान ! जाके प्रसाद त पृथ्वीविष तू प्रभुताकू प्राप्त भया, ऐसे स्वामीके प्रतिकूल होय भूमिगोचरीका दूत भया। रावण की ऐती कृपा पीठ पीछे डार दई। एसे स्वामीकू तज, जे भिखारी निधन पृथ्वीमें भ्रमते फिरते दोनो वीर तिनका तू सवक भया। अर रावणने कहा कि तू पवनका पुत्र नाहीं काहू औरकर उपजा है। तेरी चेष्टा अकुलीनकी प्रत्यक्ष दीख ह। जे जार जात ह तिनके चिह्न अगमें नाहीं दीखै हैं, जब अनाचारको आचर तब जानिए। यह जारजात ह। कहा केशरी सिहका बालक स्यालका आश्रय करे ? नीचका आश्रयकर कुलवत पुरुष न जीवें। अब तू राजद्वारका द्रोही ह, निग्रह करवे योग्य ह। तब हनुमान यह वचन सुन हसा अर कहता भया–न जानिए कौनका निग्रह होय। या दुर्बुद्धिकर तेरी

मत्यु नजीक आई, कईएक दिनविष दष्टि परगी । लक्ष्मणसहित श्रीराम बडी सेनासे आव ह सो किसी से रोके न जाय जस पवतनित मेघ न रुक । अर जस कोऊ नानाप्रकारके अमत समान आहार कर तप्त न भया अर विषकी एक बूद भखे नाशकू प्राप्त होय तस हजारा स्त्रीनिकर तू तप्तायमान न होय अर परस्त्रीकी तष्णाकर नाशकू प्राप्त होयगा । जो शुभ अर अशुभकर प्रेरी बुद्धि होनहार माफिक होय ह सो इन्द्रादिकर भी अन्यथा न होय । दुबुद्धि विष सकडा प्रियवचनकर उपदेश दीजिये तौहु न लग, जसा भवितव्य होय सोही होय । विनाशकाल आव तब बुद्धिका नाश होय । जस कोऊ प्रमादी विष का भरा सुगन्ध मधुरजल पीव तो मरणकू पाव तस हे रावण ! तू परस्त्रीका लोलुपी नाशकू प्राप्त होयगा । तू गुरु परिजन वद्ध मित्र प्रिय बाधव मत्री सबनिक वचन उलघकर पापकमविष प्रवृत्ते ह, सो दुराचाररूप समुद्रविष कामरूप भमरके मध्य आय नरकके दुख भोगेगा । हे रावण ! तू रत्नश्रवा राजाके कुलक्षय नीचपुत्र भया । तोकर राक्षसवशिनिका क्षय होयबा । आग तेरे वशमें बडे बडे मर्यादा के पालनहारे, पथ्वीविष पूज्य, मक्तिके गमन करणहारे भए अर तू उनके कुलविष पुलाक कहिए न्यून पुरुष भया । दुबुद्धि मित्रकू कहता निरथक ह । जब हनुमानने यह वचन कहे तब रावण क्रोधकर आरक्त होय दुवचन कहता भया—यह पापी मत्युसे नाहीं डर ह, वाचाल ह । तात शीघ्र ही याके हाथ पाव ग्रीवा साकलनिसू बाधकर अर कुवचन कहते ग्रामविष फेरो । क्रूर किकर लार घर घर यह वचन कहो—भूमिगोचरियोका दूत आया ह याहि देखहु, अर श्वान बालक लार सो नगरकी लुगाई धिक्कार देव । अर बालक धूर उडाव, अर स्वान भौंक । सव नगरी विष या भाति इसे फेरो, दुख देवो । तब वे रावणकी आज्ञाप्रमाण कुवचन बोलते ले निकसे । सो यह बन्धन तुडाय ऊचा चल्या जस यत्ति मोहफास तोड मोक्षपुरीकू जाय । आकाशत उछल अपने पगोकी लातोकर लकाका बडा द्वार ढाया तथा और एक छोटे दरवाजे ढाहे । इन्द्रके महिलके तुल्य रावणके महिल हनुमानके चरणनिके घातसे बिखर गए जिनक बडे बडे स्तम्भ हते । अर महलके आस पास रत्न सुवणका कोट हुता सो चूर

डारा। जस वजपातके मारे पवत चूण होजाय तस रावणके घर हनुमानरूप वज्रके मारे चूण होय गए। यह हनुमानके पराक्रम सुन सीताने प्रमोद किया अर हनुमानकू बधा सुन विषाद कियो हुता तब वज्रोदरी पास बठी हुती ताने कहा—हे देवी! वथा काहेकू रुदन कर? यह साकल तुडाय आकाश में चला जाय ह सो देख। तब सीता अति प्रसन्न भई। अर चित्तमें चितवती भई यह हनुमान मेरे समाचार पतिप जाय कहेगा सो आसीस देती भई, अर पुष्पाजलि नाखती भई कि तू कल्याणसे पहुँ-चियो, समस्त ग्रह तुझे सुखदाई होय, तेरे विघ्न सकल नाशकू प्राप्त होय, तू चिरजीव हो। या भाति परोक्ष असीस देती भई। जे पुण्याधिकारी हनुमान सारिखे पुरुष ह वे अदभुत आश्चयकू उपजाव ह। कसे ह वे परुष? जिन्होने पूवजन्ममें उत्कष्ट तपवत आचरे ह, अर सकलभवमें विस्तर ह ऐसी कीर्तिके धारक ह, अर जो काम किसासे न बन सो करवे समथ ह, अर चितवनमें न आव ऐसा जो आश्चय उसे उप जाव ह। इसलिए सव तजकर जे पडितजन ह वे धमकू भजो। अर जे नीचकम ह वे खोटेफलके दाता है, इसलिए अशुभकम तजो। अर परमसुखका आस्वाद तामें आसक्त जे प्राणी, सुन्दर लीलाके धारक वे सूयके तेजकू जीत ऐस होय ह।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष हनुमानका लकास पाछा आवनेका वणन करनेवाला तिरपनवाँ पव पूण भया ॥ ५ ॥

अथानन्तर हनुमान अपने कटकमें आय, किहकन्धापुरकू आया, लकापुरीमें विघ्नकर आया, ध्वजा छत्रादि नगरीकी मनोग्यता हर आया। किहकन्धापुरके लोग हनुमानकू आया जान बाहिर निकसे। नगरम उत्साह भया, यह धीर उदार ह पराक्रम जाका, नगरमें प्रवेश करता भया। सो नगरके नर नारियोको याके देखवेका अतिसभ्रम भया। अपना जहा निवास तहा जाय सेनाके यथायोग्य डेरे कराए। राजा सुग्रीवने सब वत्तात पूछा, सो ताहि कहा। बहुरि रामके समीप गए। राम यह चितवन

कर रहे है कि हनुमान आया है सो यह कहेगा कि तिहारी प्रिया सुखसू जीव है। हनुमानने ताही समय आय रामकू देखा—महाक्षीण, वियोगरूप अग्निसे तप्तायमान, जसे हाथी दावानल कर व्याकुल होय महाशोकरूप गतविष पडे। तिनकू नमस्कारकर हाथ जोड हर्षित वदन होय सीताकी वार्ता कहता भया। जत रहस्यक समाचार कहे हुते ते सब वरणन किये, अर सिरका चूडामणि सौंप निश्चित भया। चिन्ता कर बदनकी और ही छाया होय रही है, आसू पडे है। सो राम याहि देखकर रुदन करने लग गए अर उठकर मिले। श्रीराम यों पूछे है—हे हनुमान! सत्य कहो, मेरी स्त्री जीव है? तब हनमान नमस्कार कर कहता भया। हे नाथ! जीव है, आपका ध्यान कर है। हे पृथ्वीपते! आप सुखी होवो, आपके विरह कर वह सत्यवती निरतर रुदन कर है, नत्रनिके जलकर चतुरमास कर राखा है। गुणके समूहकी नदी सीता, ताके केश विखर रहे है, अत्यन्त दुखी है, अर बारम्बार निश्वास नाखती चिताके सागरमे डूब रही है। स्वभावहीकरि दुबल शरीर है, अर विशेष दुबल होय गई है। रावणकी स्त्री आराधे है परन्तु उनसे सभाषण कर नाही। निरतर तिहारा ही ध्यान कर है। शरीरका सस्कार सब तज बठी है। हे देव! तिहारी राणी बहुत दुखसे जीवे है। अब तुमकू जो करना होय सो करो। ये हनुमानके वचन सुन श्रीराम चितावान भए। मुखकमल कुमलाय गया। दीघ निश्वास नाखत भए। अर अपने जीतव्यकू अनेक प्रकार निदते भए। तब लक्ष्मणने धीर्य बधाया। हे महाबुद्धि! कहा सोच करो हो? कर्तव्यविषे मन धरो। अर लक्ष्मण सुग्रीवसू कहता भया—हे किहकधाधिपते! तू दीघसूत्री है। अब सीताके भाई भामडलकू शीघ्र ही बुलावहु। रावणकी नगरी हमकू अवश्य ही जाना है। के तो जहाजनिकरि समुद्र तिर अथवा भुजानित। ये बात सुन सिहनाद नामा विद्याधर बोला—आप चतुर महाप्रवीण होयकर ऐसी बात मत कहो। अर हम तो आपके सग है परन्तु ऐसा करना जाविषे सबका हित होय। हनुमानने जाय लकाके वन विध्वसे, अर लकाविषे उपद्रव किया सो रावणकू क्रोध भया है, सो हमारी तो मृत्यु आई है। तब जामवत बोला तू

नाहर होयकर मगकी न्याई कहा कायर होय ह ? अब रावण हू भयरूप ह अर वह अन्यायमार्गी ह । बाको मत्यु निकट आई ह । अर अपनी सेनामे भी बडे बडे योधा महारथी ह, विद्या विभवकर पूण है, हजारा आश्चयके काय जिन्होने किये ह, तिनके नाम धनगति, एकभूत, गजस्वन, क्रूरकेलि, किलभोम, कुण्ड, गोरवि, अगद, नल, नील, तडिदवक्र, मन्दर, अशनी, अणव, चन्द्रज्योति, मगेन्द्र, बजदष्टि, दिवाकर, अर इल्काविद्या, लागूलविद्या, दिव्यशस्त्र विष प्रवीण, जिनके पुरुषाथमें विघ्न नाहीं ऐसे हनुमान महाविद्यावान, अर भामडल विद्याधरोका ईश्वर, महेन्द्रकेतु अति उग्र ह पराक्रम जाका, प्रसन्नकीर्ति उपवति, अर ताके पुत्र महा बलवान, तथा राजा सुग्रीवके अनेक सामत महा बलवान ह, परम तेजके धारक वरत ह, अनेक कायके करणहारे, आज्ञाके पालनहारे । ये वचन सुनकर विद्याधर लक्ष्मणकी ओर देखते भए । अर श्रीरामकू देखा सो सौम्यतारहित महाविकरालरूप देखा अर भकुटी चढी महा भयकर मानो कालके धनुष ही ह । श्रीराम लक्ष्मण लकाकी दिशा, क्रोधके भरे लाल नेत्रकर चौंके मानो राक्षसनिके क्षय करनेके कारण ही ह । बहुरि वही दष्टि धनुषकी ओर धरी । अर दोनो भाईयोका मुख महा क्रोधरूप हो गया । कोप कर मडित भये, सिरके केश ढीले होय गये मानो कमलके स्वरूप ही ह, जगतकू तामसरूप तमकर व्याप्त किया चाहे ह—ऐसा दोऊनिका मुख ज्योतिके मडल मध्य देख सब विद्याधर गमनकू उद्यमी भए । सभ्रमरूप ह चित्त जिनका, राघवका अभिप्राय जानकर सुग्रीव हनुमानादि सव नानाप्रकारके आयुध अर सम्पदा कर मडित चलवेकू उद्यमी भए । राम लक्ष्मण दोनो भाईनिके प्रयाण होनेके वादित्रनिसे समूहके नादकर पूरित ह दशोदिशा, सो मागसिर वदी पचमीके दिन सूय उदयके समय महा उत्साह सहित भले २ शकुन भए । ता समय प्रयाण करते भए । कहा कहा शकुन भए कहिए ह—निधूम अग्निकी ज्वाला दक्षिणावत देखी, अर मनोहर शब्द करते मोर, अर वस्त्राभूषण सयुक्त सौभाग्यवती नारी, सुगन्ध पवन, निग्रथ मुनि, छत्र, तुरगोका गम्भीर हींसना, घटाका शब्द, दहीका भरा कलश, काग पाख फलाए मधुर शब्द करता, भेरी अर शख

का शब्द, अर तिहारी जय होवे, सिद्धि होवे, नन्दो बधो ऐसे वचन इत्यादि शुभ शकुन भए। राजा सुग्रीव श्रीरामके सग चलवेकू उद्यमी भए। सुग्रीवके ठौर २ सुविद्याधरोके समूह आए। कसा ह सुग्रीव ? शुक्ल पक्षके चन्द्रमा समान ह प्रकाश जागा। नानाप्रकारके विमान नानाप्रकारकी ध्वजा, नानाप्रकारके वाहन, नानाप्रकारके आयुध उन सहित बड २ विद्याधर आकाशविष जाते शोभते भए। राजा सुग्रीव, हनुमान शल्य, दुमषण, नल, नील, काल सुषेण, कुमुद इत्यादि अनेक राजा श्रीरामके लार भए। तिनके ध्वजावो पर देदीप्यमान रत्नमई बानरोके चिह्न मानो आकाशके ग्रसवेकू प्रवरते ह। अर विराधितकी ध्वजापर नाहरका चिह्न नीझरनो समान ददीप्यमान, अर जाबूकी ध्वजापर वक्ष, अर सिहरवकी ध्वजामे व्याघ अर मेघकातकी ध्वजामे हाथीका चिह्न इत्यादि राजानिकी ध्वजामें नानाप्रकारके चिह्न। इनमे भूतनाद महातेजस्वी लोकपाल समान सो फौजका अग्रसर भया। लोकपाल समान हनुमान भूतनादक पीछ सामतनिक चक्र सहित परम तेजकू धरे लकापर चढे। सो अति हषके भर शोभते भए। जसे पूव रावणके बडे सुकेशीके पुत्र माली लकापर चढे हुत, अर अमल किया हुता तसे। श्रीरामक सन्मुख विराधित बठा अर पीछे जामवत बठा, बाई भुजा सुषेण बठा, दाहिनी भुजा सुग्रीव बठा, सो एक निमिषमे बेलधरपुर पहुँचे। तहाका समुद्रनामा राजा सो उसके अर नलके परम युद्ध भया। सो समुद्रके बहुत लोक मारे गए। अर नलने समुद्रको बाधा बहुरि श्रीरामसे मिलाया। अर तहाही डरा भए। श्रीरामने समुद्रपर कपा करी, ताका राज्य ताको दिया। सा राजाने अति हर्षित होय अपनी कन्या सत्यश्री, कमला, गुणमाला, रत्नचूडा, स्त्रियोके गुणकर मडित देवागना समान सो लक्ष्मणस परणाई। तहा एकरात्रि रह। बहुरि यहासे प्रयाणकर सुवेल पवतपर सुवेल नगर गए। वहा राजा सुवेल नाम विद्याधर, ताकू सग्राममे जीत रामके अनुत्रर विद्याधर क्रीडा करते भए, जस नन्दनवनविष देव क्रीडा कर। तहा अक्षय नाम वनमे आनन्दसे रात्रि पूण करी। बहुरि प्रयाणकर लका जायवेकू उद्यमी भए। कसी ह लका ? ऊचे कोटसे युक्त, सुवणके मन्दिरनिकर पूण, कलाशके

शिखर समान हैं आकार जिनके, अर नानाप्रकारके रत्ननिके उद्योतकर प्रकाशरूप, अर कमलनिके जे वन तिनसे युक्त, वापी कूप सरोवरादिक कर शोभित, नानाप्रकार रत्नोके ऊंचे जे चैत्यालय तिनकर मण्डित महापवित्र इन्द्रको नगरीसमान। ऐसी लंकाकूं दूरते देखकर समस्त विद्याधर रामके अनुचर आश्चर्यकूं प्राप्त भए, अर हंसद्वीपविषै डेरे किये। तहां हंसपुर नगर, राजा हंसरथ, ताहि युद्धविषैं जीत, हंसपुरमें क्रीडा करते भए। तहांतै भामण्डलपर बहुरि दूत भेजा, अर भामंडलके आयवेकी वांछा कर तहां निवास किया। जा जा देशमें पुण्याधिकारी गमन कर तहां तहां शत्रुनिको जीत, महाभोग उपभोगको भजें। इन पुण्याधिकारी उद्यमवंतोसे कोई परे नाहीं है। सब आज्ञाकारी है। जो जो उनके मनमें अभिलाषा होय सो सब इनकी मूठीमें है। तातै सब उपायकर त्रैलोक्यमें सार ऐसा जो जिन-राजाका धर्म सो प्रशंसा योग्य है। जो कोई जगजीत भया चाहै वह जिनधर्मकूं आराधो। ये भोग क्षणभंगुर है। इनकी कहा बात ? यह वीतरागका धर्म निर्वाण देनेहारा है। अर कोई जन्म लेय तो इन्द्र चक्रवर्त्यादिक पदका देनहारा है। ता धर्मके प्रभावतै ये भव्य जीव सूर्यसे अधिक प्रकाशको धरै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणका लंकागमन वर्णन करनेवाला चौवनवां पर्व पूर्ण भया ॥५४॥

अथानंतर रामका कटक समीप आया जान प्रलयकालके तरंग समान लंका क्षोभकूं प्राप्त भई। अर रावण कोपरूप भया, अर सामंत लोक रणकथा करते भए। जैसा समुद्रका शब्द होय तैसै वादित्रनिके नाद भए। सब दिशा शब्दायमान भई। अर रणभेरी के नादतै सुभट महाहर्षकूं प्राप्त भए। सब साजबाज सज स्वामीके हित स्वामीके निकट आए। तिनके नाम मारीच अमलचंद, भास्कर, सिंहप्रभ(स्यंदनविभु), हस्त, प्रहस्त इत्यादि अनेक योधानिकरि पूर्ण स्वामीके समीप आए।

अथानन्तर लंकापति महायोधा संग्रामके निमित्त उद्यमी भया। तब विभीषण रावणपै आए।

प्रणामकर शास्त्रमार्गके अनुसार अति प्रशंसायोग्य, सबकू सुखदाई, आगामी कालमें कल्याणरूप, वर्तमान कल्याणरूप, ऐसे वचन विभीषण रावण से कहता भया। कैसा है विभीषण ? शास्त्रविषै प्रवीण, महा चतुर, नय प्रमाणका वेत्ता, भाईको शान्त वचन कहता भया—हे प्रभो ! तिहारी कीर्ति कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल, महाविस्तीर्ण, महाश्रेष्ठ, इन्द्र समान पृथ्वीपर विस्तार रही है, सो परस्त्रीके निमित्त यह कीर्ति क्षणमात्र में क्षय होयगी, जैसे सांझके बादलकी रेखा। तातैं हे स्वामी ! हे परमेश्वर ! हम पर प्रसन्न होवो। शीघ्र ही सीताकू रामके समीप पठावो। यामें दोष नाहीं, केवल गुण ही है। सुखरूप समुद्रमें आप निश्चय तिष्ठो। हे विचक्षण ! जे न्यायरूप ! महाभोग हैं वे सब तुम्हारे स्वाधीन हैं। अर श्रीराम यहां आए हैं सो बड़े पुरुष हैं, तिहारे तुल्य हैं, सो जानकी तिनकू पठाय देवहु। सब प्रकार अपनी वस्तु ही प्रशंसा योग्य है। परवस्तु प्रशंसा योग्य नाहीं। यह वचन विभीषणके सुन इन्द्रजीत रावणका पुत्र पिताके चित्तकी वृत्ति जान विभीषणकू कहता भया। अत्यन्त मानका भरा, अर जिनशासनसे विमुख है। साधो ! तुमकू कौनने पूछा, अर कौनने अधिकार दिया जाकरि या भांति उन्मत्तकी नाईं वचन कहो हो ? तुम अत्यन्त कायर हो, अर दीन लोकनिकी नाईं युद्धसे डरो हो, अपने घरके विवरमें बैठो ? कहा ऐसी बातनिकर, ऐसा दुर्लभ स्त्रीरत्न पायकर मूढोंकी न्याईं कौन तजै ? तुम काहेकू वृथा वचन कहो ? जा स्त्रीके अर्थ सुभट पुरुष संग्रामविषै तीक्ष्ण खड्गकी धारा करि महाशत्रुनिकू जीत कर वीर लक्ष्मी भुजानिकरि उपार्जे हैं तिनके कायरता कहा ? कैसा है संग्राम ? मानो हाथिनिके समूहसे जहां अंधकार होय रहा है। अर नानाप्रकारके शस्त्रनिके समूह चलैं हैं, जहां अति भयानक है। यह वचन इन्द्रजीतके सुनकर इन्द्रजीतकू तिरस्कार करता संता विभीषण बोला—रे पापी ! अन्यायमार्गी कहा तू पुत्रनामा शत्रु है ? तोकू शीत वायु उपजी है, अपना हित नाहीं जानै है, शीतवायुकी पीड़ा अर उपाय छांड शीतल जलविषै प्रवेश करै तो अपने प्राण खोवै। अर घरविषै आग लागै अर ता अग्निविषै सूखे ईंधन डारे तो कुशल कहांसे होय ? अहो ! मोहरूप

ग्राहकर तू पीडित है। तेरी चेष्टा विपरीत है। यह स्वर्णमई लंका जहां देवविमानसे घर, लक्ष्मणके तीक्ष्ण बाणोसे चूर्ण न होहि जाई, तापहिले जनकसुता पतिव्रताकू रामपै पठाय देहु। सबलोकके कल्याण के अर्थ शीघ्र ही सीताको पठाना योग्य है। तेरे बाप कुबुद्धिने यह सीता नाहीं आनी है, राक्षसरूप सर्पों का बिल जो यह लंका ताविषै विषनाशक जडी आनी है। सुमित्राका पुत्र लक्ष्मण सोई भया क्रोधायमान सिंह, ताहि तुम गज समान निवारवे समर्थ नाहीं। जाके हाथ सागरावर्त धनुष अर आदित्यमुख अमोघ बाण अर जिनके भामंडलसा सहाई सो लोकोंसे कैसे जीता जाय? अर बडे बडे विद्याधरनिके अधिपति जिनसे जाय मिले, महेन्द्र मलय हनुमान, सुग्रीव, त्रिपुर इत्यादि अनेक राजा और रत्नद्वीप का पति, वेल -धरका पति, संध्या हर द्वीप, हहयद्वीप, आकाशतिलक, केलीकिल, दधिवक्र अर महाबलवान विद्याके विभवकरि पूर्ण अनेक विद्याधर आय मिलें। या भांतिके कठोर वचन कहता जो विभीषण तापर महाक्रोधायमान होय खडग काढ रावण मारवेकू उद्यमी भया। तब विभीषण भी महाक्रोधके वश होय रावणसू युद्ध करवेकू वज्रमई स्तम्भ उपारचा। ये दोनो भाई उग्रतेजके धारक युद्धकू उद्यमी भए, सो मन्त्रियोंने समझाय मने किए। विभीषण अपने घर गया, रावण महिल गया।

बहुरि रावणने कुम्भकरण इन्द्रजीतको कठोरचित्त होय कहा जो यह विभीषण मेरे अहितमें तत्पर है, अर दुरात्मा है, वाहि मेरी नगरीसे निकासो। या अनर्थीके रहिवेकरि क्या? मेरा अंग ही मोसे प्रतिकूल होय तो मोहि न रुचै। जो यह लंकाविषै रहै अर मैं याहि न मारू तो मेरा जीवना नाहीं। ऐसी वार्ता विभीशण सुनकर कही—मैं हू कहा रत्नश्रवाका पुत्र नाहीं? ऐसा कह लंकातै निकसा। महासामंतनि सहित तीस अक्षौहिणी दल लेयकर रामपै चाल्या। (तीस अक्षौहिणी केतेक भए ताका वर्णन) छहलाख छप्पनहजार एकसौ हाथी, अर एते ही रथ, अर उगणीसलाख अडसठ हजार तीनसौ तुरंग, अर बत्तीसलाख अस्सीहजार पांचसौ पयादा। विद्युतघन, इन्द्रवज, इन्द्रप्रचंड, चपल, उद्धत, एक अशनि, सम्पातकाल महाकाल ये विभीषण सम्बन्धी परम सामंत अपने कुटुम्ब अर सब समुदाय सहित,

नानाप्रकार शस्त्रनिकरि मडित, रामकी सेनाकी तरफ चाले। नानाप्रकारके बाहनानकर युक्त आकाशकू आच्छावित कर सव परिवारसहित विभीषण हसद्वीप आया। सो उस द्वीपके समीप मनोग्यस्थल देख जलके तीर सेनासहित तिष्ठा, जसे नन्दीश्वर द्वीपकेविष देव तिष्ठ। विभीषणकू आया सुन बानर-वशिनिकी सेना कम्पायमान भई जस शीतकालविष दलिद्री काप। लक्ष्मणने सागरावत धनुष अर सूयहास खडगकी तरफ दष्टि धरी। अर रामने वजावत धनुष हाथ लिया। अर सब मत्री भेले होय मत्र करते भए। जसे सिंहसे गज डरे तस विभीषणसे बानरवशी डरे। ताही समय विभीषणने श्रीराम के निकट विचक्षण द्वारपाल भेजा। सो रामप आय नमस्कार कर मधुर वचन कहता भया–हे देव! इन दोनो भाईनिविष जबते रावण सीता लाया तबहीसे विरोध पडा, अर आज सवथा बिगड गई। तात आपके पायन आया ह, आपक चरणारविदकू नमस्कार पूवक बिनती कर ह। कसा ह विभीषण? धमकायविष उद्यमी ह। यह प्राथना करी ह कि आप शरणागत प्रतिपाल हो, म तिहारा भक्त शरणे आया हू, जो आज्ञा होय सोही करू। आप कपा करनेयोग्य ह। यह द्वारपालके वचन सुन रामने मत्रीनिसू मत्र किया। तब रामसे सुमतिकात मत्री कहता भया कदाचित रावणने कपटकर भेजा होय तो याका विश्वास कहा? राजानिकी अनेक चेष्टा ह। अर कदाचित कोई बातकर आपसमें कलुष होय बहुरि मिलि जाय। कुल अर जल इनके मिलनेका अचरज नाहीं। तब महाबुद्धिवान मतिसमुद्र बोला–इनमें विरोध तो भया, यह बात सबसे सुनिए ह। अर विभीषण महा धर्मात्मा नीतिवान है, शास्त्ररूप जलकर धोया ह चित्त जाका, महा दयावान ह, दीन लोकनि पर अनुग्रह कर है, अर मित्र निर्मे वृढ ह। अर भाईपनेकी बात कहो सो भाईपनेका कारण नाहीं, कमका उदय जीवनिके जुदा जुदा होय ह। इन कमनिके प्रभावकर या जगतविष जीवनिकी विचित्रता ह। या प्रस्तावविष एक कथा ह सो सुनहु–एक गिरि एक गौभूत ये दोऊ भाई ब्राह्मण हुते। सो एक राजा सूयमेघ हुता। ताके राणी मतिक्रिया, ताने दोनोकू पुण्यकी वाछाकर भातमें छिपाय सुवण दिया। सो गिरिकपटीने भात-

विष स्वण जान गोभूतकू छलकर मारचा दोनोका स्वण हर लिया। सो लोभसे प्रीतिभग होय ह। और भी कथा सुनो—कौशाबी नगरीविष एक वहद्धन नामा गहस्थी, ताके पुरविदा नामा स्त्री, ताके पुत्र अहिदेव महीदेव। सो इनका पिता मूवा तब ये दोऊ भाई धनके उपारजने निमित्त समुद्रमें जहाज में बठ गए। सो सवद्रव्य देय एक रत्न मोल लिया। सो वह रत्नकू जो भाई हाथमें लेय ताके भाव होय कि म दूजे भाईकू मारू। सो परस्पर दोऊ भाईनिके खोटे भाव भए। तब घर आये, वह रत्न माताकू सौंपा। सो माताके ये भाव भए कि दोऊ पुत्रनिकू विष देय मारू। तब माता अर दोनो भाइयो ने वा रत्नसे विरक्त होय कालिन्द्री नदीमें डारा। सो रत्नकू मछली निगल गई। सो मछलीकू धीवरने पकरी, अर अहिदेव महीदेवहीके बेची। सो अहिदेव महीदेवकी बहिन मछलीकू विदारती हुती सो रत्न निकस्या। याहूके भाव भए कि माताकू और दोऊ भाइनिकू मारू। तब याने सकल वत्तात कह्या कि या रत्नके योगसे मेरे ऐसे भाव होय ह जो तुमकू मारू। तब रत्नकू चूर डारचा। माता बहिन अर दोऊ भाई ससारके भावसे विरक्त होय जिनदीक्षा धरते भए। तात द्रव्यके लोभकर भाइनिमें वर होय ह, अर ज्ञानके उदयकर वर मिट ह। अर गिरिने तो लोभके उदयसे गोभूतकू मारचा। अर अहिदेवके महीदेवके वर मिट गया। सो महाबुद्धि विभीषणका द्वारपाल आया ह ताकू मधुर वचनकर विभीषणकू बुलाओ। तब द्वारपालसो स्नेह जताया अर विभीषणकू अति आदरसू बुलाया। विभीषण रामके समीप आया। सो राम विभीषणका अति आदरकर मिले। विभीषण बिनती करता भया—

हे देव! हे प्रभो! निश्चयकर मेरे इस जन्मविष तुम ही प्रभु हो। श्रीजिननाथ तो या भव परभवके स्वामी, अर रघुनाथ या लोकके स्वामी। या भाति प्रतिज्ञा करी। तब श्रीराम कहते भये तुझे नि सदेह लकाका धनी करू गा। सेनामें विभीषणके आवनेका उत्साह भया। अर ताही समय भामडल भी आया। कसा ह भामण्डल? अनेक विद्या सिद्ध भई है जाकू। सब विजियाधका अधिपति जब भामण्डल आया तब राम लक्ष्मण आदि सकल हर्षित भए। भामण्डलका अति सन्मान किया। आठ

दिन हंसद्वीपविषै रहे। बहुरि लंकाकूं सन्मुख भए। नानाप्रकारके अनेक रथ, अर पवनसे भी अधिक तेजकूं धरे बहुत तुरंग, अर मेघमालासे गयदोंके समूह, अर अनेक सुभटनि सहित श्रीरामने लंकाकूं पयान किया। समस्त विद्याधर सामंत आकाशकूं आच्छादते हुते रामके संग चाले। सबमें अग्रेसर वानरवंशी भए। जहां रणक्षेत्र थापा है तहां गए। संग्रामभूमि बीस योजन चौडी है, अर लम्बाईका विस्तार विशेष है। वह युद्धभूमि मानो मृत्युकी भूमि है। या सेनाके हाथी गाजे अर अश्व हींसे। अर विद्याधरनिके वाहन सिंह हैं तिनके शब्द हुए, अर वादित्र बाजे। तब सुनकर रावण अति हर्षकूं प्राप्त भया। मनविषै विचारी बहुत दिननिमें मेरे रणका उत्साह भया, समस्त सामन्तनिकूं आज्ञा दई जो युद्धके उद्यमी होवो। सो समस्त ही सामंत आज्ञा प्रमाण आनन्दकर युद्धकूं उद्यमी भए। कैसा है रावण ? युद्धविषै है हर्ष जाकूं, जाने कबहु सामंतनिकूं अप्रसन्न न किया, सदा प्रसन्न ही राखे। सो अब युद्धके समय सबही एकचित्त भए। भास्कर नामा पुर तथा पयोरपुर, कांचनपुर, व्योम, वल्लभपुर, गंधर्वगीतपुर शिवमंदिर, कंपतपुर, सूर्योदयपुर, अमृतपुर, शोभासिंहपुर, सत्यगीतपुर, लक्ष्मीगतिपुर, किन्नरपुर, बहुनागपुर, महाशैलपुर, चक्रपुर, स्वर्णपुर, सीमंतपुर, मलयानन्दपुर, श्रीगृहपुर, श्रीमनोहरपुर, रिपुजयपुर, शशिस्थानपुर, मार्तंडप्रभपुर, विशालपुर, ज्योतिदंडपुर, परिष्योधपुर, अश्वपुर, रत्नपुर इत्यादि अनेक नगरोंके स्वामी बडे २ विद्याधर मंत्रिनिसहित महा प्रीतिके भरे रावणपै आए। सो रावण राजावोंका सम्मान करता भया, जैसे इन्द्र देवनिका करै है। शस्त्र वाहन वक्तर आदि युद्धकी सामग्री सब राजावोंकूं देता भया। चारहजार अक्षौहणी रावणके होती भई अर दो हजार अक्षौहणी रामके होती भई, सो कौन भांति ? हजार अक्षौहणीदल तो भामंडलका अर हजार सुग्रीवादिका। या भांति सुग्रीव अर भामंडलका ये दोऊ मुख्य अपने मंत्रीनि सहित तिनसों मंत्रकर राम लक्ष्मण युद्धकूं उद्यमी भए। अनेक वंशके उपजे, अनेक आचरणके धरणहारे, नाना जातिनिसे युक्त, नाना प्रकार गुण क्रियासूं प्रसिद्ध, नाना प्रकार भाषाके बोलनहारे विद्याधर श्रीराम रावणपै भेले भए।

गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह—हे राजन ! पुण्यके प्रभावकरि मोटे पुरुषनिके बरी भी अपने मित्र होय ह, अर पुण्यहीनोके चिरकालके सेवक अर अतिविश्वासके भाजन ते भी विनाशकालमें शत्रुरूप होय परणव ह। या असार ससारविष जीवनिकी विचित्रगति जानकर यह चितवन करना ह कि मेरे भाई सदा सुखदाई नाहीं, तथा मित्र बाधव सबही सुखदाई नाहीं। कबहु मित्र शत्रु होजाय, कबहु शत्रु मित्र हो जाय। ऐसे विवेकरूप सूयके उदयसे उरविष प्रकाशकर बुद्धिवतोको सदा धमही चितवना।

इति श्रारविषणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष विभीषणका रामसू मिलाप अर भामण्डलका आगमन वणन करनेवाला पचपनवा पव पूण भया ॥ ५५ ॥

——

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीकू पूछता भया—हे प्रभो ! अक्षौहिणीका परिमाण आप कहो। तब गौतमका दूजा नाम इन्द्रभूत ह सो इन्द्रभूत कहते भए—हे मगधाधिपति। अक्षौहिणीका प्रमाण तोहि सक्षेपसे कह ह सुन। आगमविष आठ भेद कहे ह ते सुन। प्रथम भेद पत्ति, दूजा भेद सेना, तीजा भेद सेनामुख, चौथा गुल्म, पाचवा वाहिनी, छटा पतना, सातवा चमू, आठवा अनीकिनी। सो अब इनके यथाथ भेद सुन। एक रथ, एक गज, पाच पयादे, तीन तुरग, इसका नाम पत्ति ह। अर तीन रथ, तीन गज, पन्द्रह पयादे, नव तुरग याकू सेना कहिए। अर नव रथ, नव गज, पतालीस पयादा, सत्ताइस तुरग, याहि सेना मुख कहिए। अर सत्ताइस रथ, सत्ताइस गज, एकसौ पतिस पयादा, इक्कासी अश्व इसे गुल्म कहिए। अर इक्यासी रथ, इक्यासी गज, चारस पाच पयादे, दोसौ ततालिस अश्व, इसे वाहिनी कहिए। अर दोयस तियालिस रथ, दोयसौ तियालिस गज, बारासौ पन्द्रह पयादे, सात सौ उनतीस घोडे, याहि पतना कहिए। अर सातसो गुणतीस रथ, सातस गुणतीस गज, छत्तीसस पतालिस पयावे, इक्कीससौ सतासी तुरग इसे चमू कहिए। अर इक्कीसस सतासी रथ, इक्कीसस सत्तासी गज, दशहजार नौसै पैतीस पयादे अर पसठसौ इकसठ तुरग, इसे अनीकिनी कहिए। सो

पत्तिसे लेय अनीकिनी तक आठ भेद भए। सो यहालो तो तिगुने २ बढे। अर दश अनीकिनीकी एक अक्षौहिणी होय है, ताका वर्णन—रथ इक्कीसहजार आठसै सत्तर, अर गज इक्कीसहजार आठसै सत्तर, पयादे एक लाख नौ हजार तीनसै पचास, अर घोडे पैंसठ हजार छहसौ दश, यह एक अक्षौहिणीका प्रमाण भया। ऐसी चार हजार अक्षौहिणी कर युक्त जो रावण, ताहि अति बलवान जानकर भी किहकंधापुरका स्वामी सुग्रीवकी सेना श्रीरामके प्रसादसू निर्भय रावणके सन्मुख होती भई। श्रीरामकी सेनाकू अतिनिकट आए हुए, नानापक्षकू धरैं जो लोक सो परस्पर या भान्ति वार्ता करते भए—देखो रावणरूप चन्द्रमा विमानरूप जे नक्षत्र तिनके समूहका स्वामी, अर शास्त्रमें प्रवीण, सो परस्त्रीकी इच्छा रूप जे बादल तिनसू आच्छादित भया है। जिसके महाकान्तिकी धरणहारी अठारह हजार राणी, तिनसे तो तृप्त न भया अर देखहु एक सीताके अर्थ शोककरि व्याप्त भया है। अब देखिये राक्षसवंशी अर वानरवंशी इनमें कौनका क्षय होय। रामकी सेनामें पवनका पुत्र हनुमान, महा भयंकर देदीप्यमान जो शूरता सोई भई उष्णकिरण उनसे सूर्य तुल्य है। या भान्ति कईएक तो रामके पक्षके योधावोंके यश वर्णन करते भए। अर कईएक समुद्रसे भी अतिगम्भीर जो रावणकी सेना ताका वर्णन करत भये। अर कईएक जो दण्डकवनमें खरदूषणका अर लक्ष्मणका युद्ध भया था उसका वर्णन करते भये, अर कहते भए—चन्द्रोदयका पुत्र विराधित सो है शरीर तुल्य जिनके, ऐसे लक्ष्मण तिननें खरदूषण हत्या, अतिबलके स्वामी लक्ष्मण तिनका बल क्या तुमने न जान्या? कईएक ऐसे कहते भए। अर कईएक कहते भए कि राम लक्ष्मणकी क्या बात? वे तो बडे पुरुष हैं। एक हनुमानने केते काम किए, मन्दोदरीका तिरस्कार कर सीताकू धीर्य बंधाया, अर रावणकी सेना जीत लंकामें विघ्न किया, कोट दरवाजे ढाहे। या भान्ति नानाप्रकारके वचन कहते भए। तब एक सुवक्त्रनामा विद्याधर हँसकर कहता भया कि कहा समुद्र समान रावणकी सेना और कहा गायके खोज समान वानरवंशियो का बल? जो रावण इन्द्रकू पकड लाया और सबोंका जीतनहारा सो वानरवंशियो से कैसे जीता

जाय ? सव तेजस्वियोके सिरपर तिष्ठे ह, मनुष्यनिमें चक्रवर्तीके नामकू सुन कौन धीर्य धरै ? अर जिसके भाई कुम्भकरण महाबलवान त्रिशूलका धारक युद्धमें प्रलयकालकी अग्नि समान भास ह सो जगतमे प्रबल पराक्रमका धारक कौनकरि जीता जाय ? चन्द्रमासमान जाके छत्रकू देखकर शत्रुओका सेनारूप अधकार नाशकू प्राप्त होय ह—सो उदार तेजका धनी उसके आगे कौन ठहर सक। जो जीतव्यकी बाछा तज सो ही उसके सन्मुख होय। या भाति अनेक प्रकारके रागद्वेषरूप वचन सेनाके लोग परस्पर कहते भए। दोनो सेनामें नानाप्रकारकी वार्ता लोकनिके मुख होती भई। जीवनिके भाव नानाप्रकारके है, रागद्वेषके प्रभावसे जीव निजकम उपार्जे ह। सो जसा उदय होय ह तसे ही काय में प्रवत्ते ह। जस सूयका उदय उद्यमी जीवोको नाना कायमें प्रवताव ह तसे कमका उदय जीवनिके नानाप्रकारके भाव उपजावे ह।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष दऊ कटक क सख्याका प्रमाण वणन करनवाला छप्पपनवां पव पूण भया ॥ ५६ ॥

अथानन्तर हर सेनाके समीपकू न सह सक ऐसे मनुष्य, वे शूरापनेके प्रकट होनेकरि अति प्रसन्न होय, लडवेकू उद्यमी भए। योधा अपने घरोसें विदा होय सिह सारिखे लकासे निकसे। कोईएक सुभटकी नारी रणसग्रामका वत्तात जान अपने भरतारके उरसे लग ऐसे कहती भई—हे नाथ ! तिहारे कुलकी यही रीति ह जो रणसग्रामसे पीछे न होय। अर जो कदाचित तुम युद्धत पीछे होवोगे तो मै सुनते ही प्राणत्याग करूगी। योधाओके किकरोकी स्त्रियें कायरोकी स्त्रियोको धिक्कार शब्द कहें—या समान और कष्ट क्या। जो तुम छाती घाव खाय भले दिखाय पीछे आवोगे तो घाव ही आभूषण है। अर टूट गया ह वक्तर, अर कर ह अनेक योधास्तुति, या भाति तुमकू म देखूगी तो अपना जन्म धन्य गिनूगी। अर सुवणके कमलनिसो जिनेश्वरकी पूजा कराऊगी। जे महायोधा रणमें सन्मुख

होय मरणकू प्राप्त होय तिनका ही मरण धन्य है । अर जे युद्धमें पराङमुख होय, धिक्कार शब्दसे मलिन भये जीवे हैं, तिनके जीवनेसे क्या ? अर कोईयक सुभटानी पतिसे लिपट या भांति कहती भई जो तुम भले दिखाय कर आवोगे तो हमारे पति हो, अर भागकर आवोगे तो हमारे तुम्हारे सम्बन्ध नाहीं । अर कोईइक स्त्री पतिसू कहती भई—हे प्रभो ! तिहारे पुराने घाव अब विघट गए, इसलिए नवे घाव लगें शरीर अति शोभै । वह दिन होय जो तुम वीरलक्ष्मीको वर प्रफुल्लित वदन हमारे आवो, अर हम तुमकू हर्षसयुक्त देखें । तुम्हारी हार हम क्रीडामें भी न देख सकें तो युद्धमें हार कैसे देख सकें ? अर कोईयक कहती भई कि हे देव ! जैसे हम प्रेमकर तिहारा वदन कमल स्पर्श करे हैं तैसे वक्षस्थलमें लगे घाव हम देखें तब अति हर्ष पावें ! और कईएक रोताणी अति नवोढा हैं परन्तु संग्राममें पतिकू उद्यमी देख प्रौढाके भावकू प्राप्त भई । अर कोईयक मानवती घने दिननिसू मान कर रही थीं सो पतिकू रणमें उद्यमी जान मान तज पतिके गले लागी, अर अति स्नेह जनाया, रण योग्य शिक्षा देती भई । और कोईयक कमलनयनी भरतारके वदनकू ऊंचाकर स्नेहकी दृष्टिकर देखती भई, अर युद्धमे दृढ करती भई । अर कईएक सामंतनी पतिके वक्षस्थलमे अपने नखका चिह्नकर होनहार शस्त्रोंके घावकू मानो स्थानक करती भई । या भांति उपजी है चेष्टा जिनके, ऐसे राणी रौताणी अपने प्रीतमोंसे नानाप्रकारके स्नेह कर वीररसमें दृढ करती भई । तब महासंग्रामके करण-हारे योधा तिनसू कहते भए—हे प्राणवल्लभे ! नर वेई हैं जे रणमे प्रशंसा पावें तथा युद्धके सन्मुख जीव तजें तिनकी शत्रु कीर्ति करें । हाथिनिके दांतनिमें पग देय शत्रुवोंके घावकर तिनकी शत्रु कीर्ति करें । पुण्यके उदयविना ऐसा सुभटपना नाहीं । हाथियोंके कुम्भस्थल विदारणहारे नरसिंह तिनकू जो हर्ष होय है सो कहिवेकू कौन समर्थ है ? हे प्राणप्रिये क्षत्रीका यही धर्म है जो कायरनिकू न मारें, शरणागतकू न मारें, न मारिवे देय, ज्यो पीठ देय उसपर चोट न करें, जिसपै आयुध न होय वासो युद्ध न करें । सो बाल वृद्ध दीनकू तज हम योधाओंके मस्तकपर पड़ेंगे । तुम हर्षित रहियो । हम

युद्धमे विजयकर तुमसे आय मिलेंगे। या भाति अनेक वचन कर अपनी अपनी रौतणियोंको धीय बधाय योधा सग्रामके उद्यमी घरस रणभूमिकू निकसे। कोई एक सभटानी चलते पतिके कठमे दोनो भुजासे लिपट गई अर होंदती भई, जसे गज द्रके कठमे कमलनी लटके। अर कोईयक रौताणी वक्तर पहिरे पतिक अगसे लग, अगका स्पश न पाया सो खेद खिन्न होती भई। अर कोईयक अद्ध बाहुलिका कहिए पेटी, सो बल्लभके अगसे लगी देख ईर्षाके रससे स्पश करती भई कि हम टार दूजी इनके उरसे कौन लगे। यह जान लोचन सकोचे। तब पति प्रियाकू अप्रसन्न जान कहते भए—हे प्रिये! यह आधा वक्तर ह स्त्री वाची शब्द नाहीं, तब पुरुषका शब्द सुन हषकू प्राप्त भई। कोईयक अपने पतिकू ताम्बूल चबावती भई, अर आप ताम्बूल चाबती भई। कोइयक पतिने रुखसत करी तो भी केतीक दूर पतिके पीछे पीछे जाती भई। पतिके रणकी अभिलाषा सो इनकी ओर निहारे नाहीं, अर रण की भेरी बाजी सो योधावोका चित्त रणभूमिमे, अर स्त्रीनिसे विदा होना, सो दोनो कारण पाय योधावोका चित्त मानो हिडोले होंदता भया। रौतानियोको तज रावत चले तिन रौतानियोने आसू न डारे। आसू अमगल ह। अर कईयक योधा युद्धमे जायवेकी शीघताकर वक्तरभी न पहिर सके। जो हथियार हाथ आया सो ही लेकर गवके भरे निकसे। रणभेरी सुन उपजा ह हष जिनकू, शरीर पुष्ट होय गया सो वक्तर अग में न आवे। अर कईयक योधावोके रणभेरीका शब्द सुन हष उपजा सो पुराने घाव फटगए तिनमे सू रुधिर निकसता भया। अर किसीने नवा वक्तर बनाय पहिरा सो हषके होने सो टूट गया सो मानो नया वक्तर पुराने वक्तरके भावकू प्राप्त भया। अर काहूके सिर का टोप ढीला होय गया सो प्राणवल्लभा दृढ कर देती भई। अर कोईयक सुभट सग्रामका लालसी उसके स्त्री सुग ध लगायबेकी अभिलाषा करती भई सो सुगधमे चित्त न दिया, युद्धकू निकसा। अर वे स्त्रिया व्याकुलतारूप अपनी अपनी सेजपर पड रहीं। प्रथमही लकासे हस्त प्रहस्त राजा युद्धकू निकसे। कसे ह दोनो? सबमें मुख्य जो कीर्ति, सोइ भया अमृत, उसके आस्वादमें लालसी और

हाथियोके रथ पर चढे, नहीं सह सके हैं वैरियो का शब्द, अर महाप्रतापके धारक, शूरवीर सो रावणकू विना पूछे ही निकसे। यद्यपि स्वामीकी आज्ञाकरी बिना कार्य करना दोष है तथापि धनीके कार्यकू विना आज्ञा जाय तो दोष नाहीं, गुणके भावकू भजै है। मारीच, सिंह जघन्य, स्वयभू, शम्भू, प्रथम विस्तीर्ण बलसे मंडित शुक, अर सारस, चाद सूर्यसारिखे गज, अर वीभत्स तथा वज्राक्ष वज्रभूति गम्भीरनाद नक्र मकर वज्रघोष उग्रनाद सुन्द निकुम्भ कुम्भ सध्याक्ष विभ्रमक्रूर माल्यवान खर निश्चर जम्बूस्वामी शिखीवीर उद्धक महाबल यह सामन्त नाहरनिके रथ चढे निकसे। अर वज्रोदर शकप्रभ, कृतान्त, विघटोधर, महामणि, असणिघोष, चन्द्र, चन्द्रनख, मृत्युभीषण, वज्रोदर, धूमाक्ष, मुदित, विद्युज्जिह्व, महामारीच कनक, क्रोधनु क्षोभणद्वंध, उद्दाम, डिंडी डिंडम, डिंभव, प्रचण्ड डमर, चण्ड कुण्ड हलाहल इत्यादि अनेक राजा व्याघ्रोके रथ चढे निकसे। वह कहे मैं आगे रहू, वह कहे मैं आगे रहू, शत्रुके विध्वंस करनेकू है प्रवर्त्त बुद्धि जिनकी। विद्या कौशिक, विद्याविख्यात, सर्पवाहु, महाद्युति, शख, प्रशंख, राजभिन्न, अंजनप्रभ पुष्पक्रूर, महारक्त घटाश्र पुष्पखेचर अनगकुसुम, कामवर्त्त, स्मरायण, कामाग्नि, कामराशि, कनकप्रभ, शशिमुख, सौम्यवक्र, महाकाम, हेमगौर, यह पवन सारिखे तेज तुरगनिके रथ चढे निकसे। अर कदम्ब विटप भीमनाद भयानाद भयानक शार्दूल सिंह बलाग विद्युदग ल्हादन चपल चाल चचल इत्यादि हाथीनिके रथ चढ निकसे। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहै है—हे मगधाधिपति! कहा लग सामंतोके नाम कहें? सबमें अग्रेसर अढाई कोडि निर्मलवशके उपजे राक्षसनिके कुमार देवकुमार तुल्य पराक्रमी, प्रसिद्ध है यश जिनके, सकल गुणनिके मंडन, युद्धकू निकसे। महा बलवान मेघवाहन कुमार इन्द्रके समान रावणका पुत्र अतिप्रिय इन्द्रजीत सो भी निकसा। जयन्तसमान धीरबुद्धि कुम्भकर्ण सूर्यके विमान तुल्य ज्योतिप्रभव नामा विमान उसमें आरूढ त्रिशूलका आयुध धरे निकसा। अर रावण भी सुमेरुके शिखर तुल्य पुष्पकनाम अपने विमानपर चढे इन्द्रतुल्य पराक्रम जिसका, सेनाकर आकाश भूमिकू आछादित करता हुवा, दैदीप्यमान आयुधनिकू धरे, सूर्यसमान

ज्योति जिसकी, सो भी अनेक सामंतनि सहित लंकासे बाहिर निकसा। वे सामंत शीघ्रगामी बहुरूप के धरणहारे वाहनोपर चढे, कईएकनिके रथ, कईएकनिके तुरग, कईएकनिके हाथी, कईएकनिके सिंह, तथा शूर साभर बलध, भैंसा, उष्ट्र, मीढा, मग, अष्टापद इत्यादि स्थलके जीव, अर मगरमच्छ आदि अनेक जलके जीव, अर नानाप्रकारके पक्षी तिनका रूप धरे देवरूपी वाहन तिनपर चढे अनेक योधा रावणके साथी निकसे। भामंडल अर सुग्रीवपर रावणका अतिक्रोध सो राक्षसवंशी इससे युद्धकू उद्यमी भए। रावणकू पयान करते अनेक अपशकुन भए तिनका वर्णन सुनो। दाहिनी तरफ शल्यकी कहिए सेह मंडलकू बांधे भयानक शब्द करते प्रयाणका निवारण कर है। अर गृद्ध पक्षी भयंकर अपशब्द करते आकाशमें भ्रमते मानो रावणका क्षय ही कहे है। और अन्य भी अनेक अपशकुन भए। स्थलके जीव आकाशके जीव अति व्याकुल भए। क्रूरशब्द करते भए, रुदन करते भए। सो यद्यपि राक्षनिके समूह में सबही पंडित है, शास्त्रका विचार जाने है तथापि शूरवीरताके गर्वसे मूढ भए, महा सेनासहित संग्रामके अर्थी निकसे। कर्मके उदयसे जीवनिका जब काल आवे है तब अवश्य ऐसाही कारण होय है। कालको इन्द्रके भी निवारिवे शक्ति नाहीं औरनिकी क्या बात ? वे राक्षसवंशी योधा, बडे बडे बलवान युद्धमें दिया है चित्त जिन्होंने, अनेक वाहनोपर चढे, नानाप्रकारके आयुध धरं, अनेक अपशकुन भए तो भी न गिने, निर्भय भए रामकी सेनाके सन्मुख आए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रावणकी सेना लंकातै निकसि युद्धके अर्थ आवनेका व्याख्यान करनेवाला सत्तावनवां पर्व पूर्ण भया॥ ५७॥

अथानन्तर समुद्रसमान रावणकी सेनाकू देख नल नील हनुमान जाम्बवन्त आदि अनेक विद्याधर रामके हित, रामके कार्यकू तत्पर, महा उदार, शूरवीर अनेक प्रकार हाथियोके रथ चढे कटकसे निकसे। जामित्र, चन्द्रप्रभ, रतिवर्द्धन, कुमुदावत, महेन्द्र, भानुमण्डल, अनुधर, दृढरथ, प्रीतिकंठ, महा

बल, समुन्नतबल, सवज्याति सवप्रिय, बल, सवसार, सव शरभभग, आभष्टि, निर्विष्ठ, सत्रास, विघ्न सूबन, नाव, बरबरक, कलोट पाटन–मडल, सग्राम–चपल, इत्यादि विद्याधर नाहरोके रथ चढे निकसे। विस्तीण ह तेज जिनका, नानाप्रकारके आयुध धरे अर महासामतपनाका स्वरूप लिए, प्रस्तार, हिम वान, गगप्रिय, लव इत्यादि सुभट हाथियोके रथ चढे निकसे। दुप्रष्ट, पूणचन्द्र, विधिसागर, घोष, प्रिय विगह स्कध चदन पादा चन्द्रकिरण, अरप्रतिघात महाभैरव, कीतन, दुष्ट सिहकटि, कुष्ट, समाधि, बहुल, हल, इन्द्रायुध गतत्रास सकट–प्रहार ये नाहरनिके रथ चढे निकसे। विद्युतकण बलशील सुपक्षरचन, घन, सम्मेद विचल साल काल, क्षत्रवर, अगज विकाल, लोलक, कालि, भग, भागोर्मि उरचित उतरग, तिलक कील सुखेण चरल करत बलि भीमरव, धम, मनोहर मुख, सुख, प्रमत, मदक मत्त सार रत्नजटी, शिवभूषण दूषण कौल, विघट, विराधित, मनू, रणखनि, शेम वेला, आक्षपी महाधर नक्षत्र लब्ध, सग्राम–विजय जय, नक्षत्रमाल क्षोद, अतिविजय इत्याबि घोडोके रथ चढे निकसे। कसे ह रथ ? मनाहर समान शीघवेगकू धर। अर विद्युतवाह मरूद्वाह स्थाणु, मेघवाहन रथियाण प्रचन्डालि इत्यादि नानाप्रकारके वाहनोपर चढे युद्धकी श्रद्धाकू धर हनुमानके सग निकसे। अर विभीषण रावणका भाई रत्नप्रभ नामा विमानपर चढा, श्रीरामका पक्षी अति शोभता भया। अर युधावत, वमत, कान्त, कोमुदिनन्दन भूरि, कोलाहल, हेड, भावित, साधुवत्सल, अधचन्द्र, जिनप्रेमा, सागर, सागरोपम, मनोज, जिन, जिनपति इत्यादि योधा नानावणके विमानोपर चढे महाप्रबल सन्नाह कहिए बखतर पहिरे युद्धको निकसे। राम लक्ष्मण सुग्रीव हनुमान ये हस विमान चढे, और आकाशविष शोभत भए। रामके सुभट महामेघमाला सारिखे नानाप्रकारके वाहनचढे लकाके सुभट-निसू लडवकू उद्यमी भए। प्रलयकालके मेघसमान भयकर शब्द, शख आदि वादित्रनिके शब्द होते भए। झझा, भेरी, मदग, कम्पाल, धुन्धु मडुक, आमलातक हक्कार ढु ढु कान, उरवर, हेमगुज, काहल वीणा, इत्यादि अनेक बाजे बाजते भए। अर सिहके तथा हाथियो, घोडोके, भैसोके, रथोके, ऊटो,

मगो पक्षियोके शब्द होते भए। तिनसे दशोदिशा व्याप्त भई। जब राम रावणकी सेनाका सघट्ट भया तब लोक समस्त जीवनके सवेहकू प्राप्त भए। पथ्वी कम्पायमान भई, पहाड कापे, योधा गव के भरे निगवसे निकसे। दोनो कटक अति प्रबल, लखिवे न आव। इन दोनो सेनामें युद्ध होने लगा। सामान्यचक्र, करोत कुठार, सेल खडग गदा शक्ति, बाण, भिडिमाल इत्यादि अनेक आयुधनिकरि परस्पर युद्ध होता भया। योधा हेलाकर योधाओको बुलावते भए। कसे है योधा ? शस्त्रोसे शोभित है भुजा जिनकी, अर युद्धका ह सवसाज जिनके, ऐसे योधावोपर पडते भए। अतिवेगसे दौडे, परसेना में प्रवेश करते भए। परस्पर अतियुद्ध भया। लकाके योधावोने वानरवशी योधा दबाए जस सिंह गजोको दबावै। फिर बानरवशियोके प्रबल योधा अपने योधावोका भग देखकर राक्षसोके योधावो को हणते भए अर अपने योधावोको धीय बधाया। बानर वशियोके आग लकाके लोकोको चिगते देख बडे २ स्वामीभक्त, रावणके अनुरागी, महाबलसे मडित हाथियोके चिह्नकी ह ध्वजा जिनके, हाथियोके रथ चढे, महायोधा हस्त प्रहस्त वानरवशियो पर दौडे, अर अपने लोगोको धीय बधाया— हो सामत हो ! भय मत करो। हस्त प्रहस्त दोनो महा तेजस्वी वानरवशियोके योधाओको भगावते भए तब वानरवशियोके नायक महा प्रतापी हाथियोके रथ चढे, महा शूरवीर, परम तेजके धारक सुग्रीवके काकाके पुत्र, नल नील महा भयकर क्रोधायमान होय नानाप्रकार शस्त्रनिके युद्ध करवेकू उद्यमी भए। अनेक प्रकारके शस्त्रनिसे घनी वर युद्ध भया। दोनो तरफके अनेक योधा मुवे। नलने उछलकर हस्तको हता अर नीलने प्रहस्तकू हता। जब यह दोनो पडे तब राक्षनिकी सेना पराडग-मुख भई। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहे ह—हे मगधाधिपति ! सेनाके लोक सेनापतिकू जबलग देखें तबलग ही ठहरें, अर सेनापति नाश भए सेना बिखर जाय, जस मालके टूटे अरहटकी घडी बिखर जाय, अर सिर विना शरीर भी न रह। यद्यपि पुण्याधिकारी बडे राजा सब बातमें पूण ह तथापि विना प्रधान कायकी सिद्धि नाहो। प्रधान पुरुषनिका सम्बधकर मनवाछित कायकी सिद्धि होय ह।

अर प्रधान पुरुषनिके सम्बन्ध बिना मवताक भजे ह जसे राहुके योगसे सूयको आच्छादित भए किरणो का समूह म द होय ह ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष हस्त प्रहस्तका मरण वणन करनेवाला अठावनवा पव पूण भया ॥ ५८ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसू पूछता भया—हे प्रभो ! हस्त प्रहस्त जसे सामत महा विद्यामें प्रवीण हुते, बडा आश्चय ह नल नीलने कसे मारे ? इनके पूवभवका विरोध ह क याही भवका ? तब गणधर देव कहते भए हे राजन ! कमनिकर बधे जीव तिनकी नानागति ह । पूवकम के प्रभावकर जीवनिकी यही रीति ह । जान जाकू मारा सो वहहू ताकू मारनहारा ह, अर जाने जाकू छुडाया सो ताका छुडावनहारा ह । या लोकमें यही मर्यादा ह । एक कुशस्थलनामा नगर वहा दोय भाई निधन एक माताके पुत्र, इन्धक अर पल्लव ब्राह्मण खेतीका कम कर, पुत्र स्त्री आदि जिनके कुटुम्ब बहुत, स्वभावहीसे दयावान, साधुनिकी निदात पराङमुख । सो एक जनी मित्रके प्रसगत दानादि धमके धारक भए । अर एक दूजा निधन युगल सो महा निदई मिथ्यामार्गी हुते राजाने दान बांटा सो विप्रनिमें परस्पर कलह भया, सो इधक पल्लवको इन दुष्टोने मारा । सो दानके प्रसादत भोगभूमिमें उपजे, दोय पल्यकी आयु पाय मूए सो देव भए । अर वे क्रूर इनके मरणहारे अधम परणामनिकर मूवे सो कालिजर नामा वनमें सूस्या भए । मिथ्यादष्टि साधुनिके निदक पापी कपटी तिनकी यही गति ह । बहुरि तिर्यचगतिमें चिरकाल भमण कर मनुष्य भए सो तापसी भए । बढी ह जटा जिनके, फल पत्रादिके आहारी, तीव्रतप कर शरीर कश किया, कुज्ञानके अधिकारी, दोनो मूए सो विजयाधकी दक्षिणश्रेणीमें अरिंजयपुर तहाका राजा अग्निकुमार, राणी अश्विनी, ताके ये दोय पुत्र, जगत प्रसिद्ध रावणके सेनापति भए । अर ते दोऊ भाई इन्धक अर पल्लव देवलोकत चयकर

मनुष्य भए। बहुरि श्रावकके व्रतपाल स्वर्गमे उत्तम देव भए। अर स्वर्गतै चयकर किहकंधापुरविषै नल नील दोनो भाई भए। पहिले हस्त प्रहस्तके जीवने नल नीलके जीव मारे हुते सो नल नीलने हस्त प्रहस्त मारे। जो पूर्वभवमें काहूकू मारे है सो ताकर मारा जाय है अर जो काहूकू पाल है सो ताकर पालिए है। अर जो जासू उदासीन रहे है सो भी तासू उदासीन रहे। जाहि देख नि कारण क्रोध उपजे सो जानिए परभवका शत्रु है, अर जाहि देख चित्त हर्षित होय सो नि सदेह परभवका मित्र है। जो जलविषै जहाज फट जाय है अर मगर मच्छादि बाधा कर है, अर थलविषै म्लेच्छ बाधा कर है सो सब पापका फल है। पहाड समान माते हाथी अर नानाप्रकारके आयुध धरे अनेक योधा, अर महा तेजकू धरे अनेक तुरग, अर बक्तर पहिरे बडे बडे सामत इत्यादि जो अपार सेनासू युक्त जो राजा अर नि प्रमाद तो भी पुण्यके उदयविना युद्धमें शरीरकी रक्षा न होय सक। अर जहा तहा तिष्ठता, अर जाके कोऊ सहाई नाहीं, ताकी तप अर दान रक्षा करे। न देव सहाई, न बाधव सहाई। अर प्रत्यक्ष देखिए है, धनवान शूरवीर कुटुम्बका धनी सब कटुम्बके मध्य मरण करे है कोऊ रक्षा करने समर्थ नाहीं। पात्रदानसे व्रत अर शील अर सम्यक्त्व अर जीवनिकी रक्षा होय है। दयादानसे जाने धर्म न उपार्जा अर बहुत काल जीया चाहे सो कसे बन ? इन जीवनिके कर्म तप विना न विनशें। ऐसा जानकर जो पडित है तिनकू वरियो पर भी क्षमा करनी। क्षमा समान और तप नाहीं। जे विचक्षण पुरुष हैं वे ऐसी बुद्धि न करें कि यह दुष्ट बिगाड कर है। या जीवका उपकार अर बिगाड केवल कर्माधीन है, कर्म ही सुख दु खका कारण है। ऐसा जानकर जे विचक्षण पुरुष है ते बाह्य सुख दु खके निमित्त कारण अन्य पुरुषनि पर रागद्वेषभाव न धरें। अन्धकारसे आच्छादित जो पथ तामें नेत्रवान पथ्थीपर पडे सर्प पर पग धर अर सूर्यके प्रकाशसे मार्ग प्रकट होय तब नेत्रवान सुखसे गमन कर। तसे जौलग मिथ्यारूप अन्धकारसे मार्ग नाहीं अवलोके तौलक नरकादि विवरमें पडे, अर जब ज्ञान सूर्यका उद्योत होय तब सुखसे अविनाशपुर जाय पहुँचे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै हस्त प्रहस्त नल नीलके पूर्वभवका वर्णन करनेवाला उनसठवां पर्व पूर्ण भया ॥५९॥

अथानन्तर हस्त प्रहस्त, नल नीलने हते सुन बहुत योधा क्रोधकर युद्धकू उद्यमी भए। मारीच सिंह-जघन शम्भु स्वयम्भू, ऊर्जित शुक सारण चन्द्र अर्क जगतवीभत्स निस्वन ज्वर उग्र क्रमकर वज्राक्ष उद्दाम निष्ठुर गम्भीरनाद सनद सवद्ध वाहू अनुसिदन इत्यादि राक्षस पक्षके योधा वानरवशियोकी सेनाकू क्षोभ उपजावते भए। तिनकू प्रबल जान वानरवशियोके योधा युद्धकू उद्यमी भए। मदन मदनाकुर सताप प्रक्षित आक्रोश नन्दन दुरित अनघ पुष्पास्त्र विघ्न प्रियकर इत्यादि अनेक वानरवशी योधा राक्षसनिसे लडते भए। याने वाकू ऊचे स्वर से बुलाया, वाने याकू बुलाया। इनके परस्पर सग्राम भया। नाना प्रकारके शस्त्रनिकरि आकाश व्याप्त होय गया। सताप तो मारीचसे लडता भया, अर अप्रथित सिहजघनसे, अर विघ्न उद्यामसे, अर आक्रोश सारणसे, ज्वर नन्दनसे। इन समान योधावोमें अद्भुत युद्ध भया। तब मारीचने सतापका निपात किया, अर नन्दनने ज्वरके वक्षस्थलमे बरछी दई, अर सिहकटिने प्रथितके, अर उद्दामकीर्तिने विघ्नकू हणा। ता समय सूर्य अस्त भया। अपने २ पतिकू प्राणरहित भए सुन इनकी स्त्री शोकके सागरमें मग्न भई, सो उनका रात्रि दीर्घ होती भई।

दूजे दिन महा क्रोधके भरे सामन्त युद्धकू उद्यमी भए। वज्राक्ष अर क्षुभितार, मगेन्द्रदमन अर विधि, शम्भू स्वयम्भू, चन्द्राक अर वज्रोदर इत्यादि राक्षस पक्षके बडे २ सामत अर वानरवशियोके सामत परस्पर जन्मातरके उपार्जित वैर तिनसे महा क्रोधरूप होय युद्ध करते भए। अपने जीवनमें निस्पृह सक्रोधने महाक्रोधकर खिपितारिको महा ऊचा स्वरकर बुलाया। अर बाहुबलीने मगारिदमनकू बुलाया। अर वितापीके विधिकू बुलाया, इत्यादि अनेक योधा परस्पर युद्ध करते भए। अर योधा अनेक मूए। शार्दूलने वज्रोदरकू घायल किया, अर खिपितार सक्रोधको मारता भया,

अर शम्भूने विशालद्युति मारा, अर स्वयम्भूने विजयकू लोहयष्टिसे मारा, अर विधिने वितापीकू गदासे मारया, बहुत कष्टसे। या भांति योधावोंने युद्धमें अनेक योधा हते सो बहुत बेर तक युद्ध भया।

राजा सुग्रीव अपनी सेनाकू राक्षसनिकी सेनासे खेदखिन्न देख आप महा क्रोधका भरा युद्ध करवेकू उद्यमी भया। तब अंजनीका पुत्र हनुमान हाथिनिके रथपर चढा राक्षसनिसू युद्ध करता भया। सो राक्षसनिके सामंतनिके समूह पवनपुत्रकू देखकर जसे नाहरकू देख गाय डरें तसे डरते भए। अर राक्षस परस्पर बात करते भए कि यह हनुमान बानरध्वज आज घनोंकी स्त्रीनिकू विधवा करेगा। तब याके सन्मुख माली आया। ताहि आया देख हनुमान धनुषविषै बाण तान सन्मुख भए। तिनमें महायुद्ध भया। मंत्री मंत्रीनिसे लडने लगे, रथी रथीनिसू लगे, घोडानिके असवार घोडानिके असवारनिसू लडते भए, हाथिनिके असवार हाथिनिके असवारनिसू लडते भए। सो हनुमानकी शक्ति करि माली पराङमुख भया तब वज्रोदर महा पराक्रमी हनुमानपर दौडा, युद्ध करता भया। चिरकाल युद्ध भया सो हनुमानने वज्रोदरकू रथरहित किया। तब वह और दूजे रथपर चढ हनुमान पर दौडा। तब हनुमानने बहुरि ताकू रथरहित किया। तब बहुरि पवनसे हू अधिक वेग है जाका ऐसे रथपर चढ हनुमानपर दौडा तब हनुमानने ताहि हता सो प्राणरहित भया। तब हनुमानके सन्मुख महाबलवान रावणका पुत्र जम्बूमाली आया। सौ आवते ही हनुमानकी ध्वजा छेद करता भया। तब हनुमानने क्रोधसे जम्बूमालीका बक्तर भेद्या, धनुष तोड डारया, जसे तणको तोडै। तब मंदोदरीका पुत्र नवा बक्तर पहिर हनुमानके वक्षस्थलविषै तीक्ष्ण बाणनिसे घाव करता भया, सो हनुमानने ऐसा जाना मानो नवीनकमलकी नालिकाका स्पर्श भया। कसा है हनुमान ? पर्वत समान निश्चल है बुद्धि जाकी, बहुरि हनुमानने चन्द्रवक्र नामा बाण चलाया सो जम्बूमालीके रथके अनेक सिंह जुते सो छूट गए, तिनहीके कटकविषै पडे। तिनकी विकराल दाढ, विकराल बदन, भयंकर नेत्र, तिनकरि सकल सेना विह्वल भई। मानो सेनारूप समुद्रविषै ते सिंह कल्लोलरूप भए उछलते फिरै है, अथवा दुष्ट जलचर जीवनिसमान विचरै

ह । अथवा सेनारूप मेघविषै बिजलीसमान चमक हैं, अथवा संग्रामही भया संसारचक्र ताविषै सेनाके लोक, तेई भए जीव, तिनकूं ये रथके छुटे सिंह कर्मरूपहोय महादुखी कर ह । इनसे सबसेना दु खरूप भई । तुरंग गजरथ पियादे सब ही विह्वल भए, रणका उद्यम तज दशोदिशाकूं भाजे । तब पवनका पुत्र सबो को पेल रावण तक जाय पहुँचा, दूरसे रावणको देखा । सिंहके रथपर चढा हनुमान धनुषबाण लेय रावणपर गया । रावण सिंहोसे सेनाकूं भयरूप देख अर हनुमानकूं काल समान महाबुद्ध र जान आप युद्ध करवेकूं उद्यमी भया । तब महोदर रावणकूं प्रणामकर हनुमानपर महाक्रोधसे लडवेकूं आया । सो याके अर हनुमानके महायुद्ध भया । ता समयविषै वे सिंह योधावोने वश किए, सो सिंहो को वशीभूत भए देख महाक्रोधकर समस्त राक्षस हनुमानपर पडे । तब अंजनीका पुत्र महाभट पुण्याधिकारी तिन सबकूं अनेक बाणनिसे थाभता भया । अर अनेक राक्षसनिने अनेक बाण हनुमानपर चलाए, परंतु हनुमानको चलायमान न करते भए । जैसे दुर्जन अनेक कुवचनरूप बाण संयमी के लगावै, परन्तु तिनके एक न लागे, तैसे हनुमानके राक्षसनिका एक बाण भी न लाग्या । अनेक राक्षस निकरि अकेला हनुमानकूं बेढा देख वानरवंशी विद्याधर युद्धके निमित्त उद्यमी भए । सुषेण नल नील प्रीतिकर विराधित सन्त्रासित हरिकट सूर्यज्योति महाबल जाम्बूनदके पुत्र, कई नाहरनिके रथ, कई गजनिके रथ, कई तुरंगनिके रथ चढे रावणकी सेनापर दौडे, सो वानरवंशियोने रावणकी सेना सब दिशाविषै विध्वंस करी, जैसे क्षुधादि परीषह तुच्छ व्रतियोके व्रतोको भंग करें । तब रावण अपनी सेनाकूं व्याकुल देख आप युद्ध करवेकूं उद्यमी भया । तब कुम्भकरण रावणकूं नमस्कारकर आप युद्धकूं चला । तब याहि महाप्रबल योधा रणमें अग्रगामी जान सुषेण आदि सबही वानरवंशी व्याकुल भए । जब वे चन्द्ररश्मि जयस्कंध चंद्राहु रतिवर्धन अंग अंगद, सम्मेद, कुमुद, कशमंडल, बलि, चण्ड तरंग सार रत्नजटी जय वेलक्षिपी वसंत कोलाहल इत्यादि अनेक योधा रामके पक्षी कुम्भकरणसे युद्ध करने लगे तो कुम्भकरणने सबको निद्रा नामा विद्यासे निद्राके वश किए । जैसे दर्शनावरणीय कर्म

दर्शनके प्रकाशकू रोक तस कुम्भकरणकी विद्या वानरवंशिनिके नेत्रनिके प्रकाशकू रोकती भई। सब ही कपिध्वज निद्रासे घूमने लगे अर तिनके हाथनिसे हथियार गिर पडे। तब इन सबोको निद्रावश अचेतन समान देख सुग्रीवने प्रतिबोधिनी विद्या प्रकाशी। सो सब वानरवंशी प्रतिबोध भए, अर हनुमानादि युद्धकू प्रवर्ते। वानरवंशीनिके बलमें उत्साह भया अर युद्धमें उद्यमी भए, अर राक्षसनिकी सेना दबी। तब रावण आप युद्धकू उद्यमी भए, तब बडा बेटा इन्द्रजीत हाथ जोड शिर निवाय विनती करता भया—हे तात! हे नाथ! यदि मेरे होते आप युद्धकू प्रवर्त्ते तो हमारा जनम निष्फल है, जो तृण नखहीसे उपड आवे उसपर फरसी उठावना कहा? तात आप निश्चिन्त होवे, मै आपकी आज्ञाप्रमाण करूंगा। ऐसा कहकर महाहर्षित भया पर्वतसमान त्रैलोक्यकंटक नामा गजेन्द्रपर चढ युद्धकू उद्यमी भया। कैसा है गजेन्द्र? इन्द्रके गज समान अर इन्द्रजीतकू अतिप्रिय, अपना सब साज लेय मन्त्रीनिसहित ऋद्धिसे इन्द्र समान रावणका पुत्र कपिनपर क्रूर भया। सो महाबलका स्वामी मानी आवत प्रमाण ही वानर वंशीनिका बल अनेक प्रकारके आयुधनिकरि जो पूर्ण हुता सब विह्वल किया। सुग्रीवकी सेनामें ऐसा सुभट कोई न रहा जो इन्द्रजीतके बाणनिकरि घायल न भया। लोक जानते भए जो यह इन्द्रजीत कुमार नाही, अग्निकुमारोका इन्द्र है अथवा सूर्य है। सुग्रीव अर भामंडल ये दोऊ अपनी सेनाकू इन्द्रजीत कर दबी देख युद्धकू उद्यमी भए। इनके योधा इन्द्रजीतके योधानिसे अर ये दोनो इन्द्रजीतसे युद्ध करने लगे सो परस्पर योधा योधावोको हकार हकार बुलावते भए। शस्त्रोसे आकाशमे अंधकार होय गया, योधानिके जीवनेकी आशा नाही। गजसे गज, रथसे रथ, तुरगसे तुरग, सामंतोसे सामंत उत्साहकर युद्ध करते भए। अपने अपने नाथके अनुरागविषै योधा परस्पर अनेक आयुधनिकर प्रहार करते भए। ताही समय इन्द्रजीत सुग्रीवकू समीप आया देख ऊँचे स्वरकर अपूर्व शस्त्ररूप दुर्वचननिकर छेदता भया अरे वानरवंशी, पापी स्वामीद्रोह! रावण स्वामीको तज स्वामीके शत्रुका किंकर भया। अब मुझसे कहा जायगा तेरे शिरको तीक्ष्ण बाणनिकरि

तत्काल छेदूं गा । वे दोनो भाई भूमिगोचरी तेरे रक्षा करें । तब सुग्रीव कहता भया ऐसे वथा गवके वचन कर कहा तू मानशिखर पर चढा है ? सो अबारही तेरा मानभंग करूंगा । जब ऐसा कहा तब इन्द्रजीतने कोपकर धनुष चढाय बाण चलाया, अर सुग्रीवने इन्द्रजीत पर चलाया । दोनो महा योधा परस्पर बाणनिकर लडते भए । आकाश वाणनिसे आच्छादित होय गया । मेघवाहनने भामण्डलको हकारा सो दोनो भिडे । अर विराधित अर वजनक्र युद्ध करते भए । सो विराधितने वजनक्रके उर-स्थलमें चक्रनामा शस्त्रकी दई अर वजनक्रने विराधितके दई । शूरवीर घात पाय शत्रुके घाव न करै तो लज्जा है, चक्रनिकरि वक्तर पीसे गए तिनके अग्निकी कणका उछली सो मानो आकाशसे उलका ओंके समूह पडे हैं । लंकानाथके पुत्रने सुग्रीवप अनेक शस्त्र चलाए । लंकेश्वरके पुत्र संग्राममें अटल है जा समान दूजा योधा नाहीं । तब सुग्रीवने वजदंडसै इन्द्रजीतके शस्त्र निराकरण किए जिनके पुण्य का उदय है तिनका घात न होय । फिर क्रोधकर इन्द्रजीत हाथीसे उतर सिंहके रथ चढा । समाधान रूप है बुद्धि जाकी, नानाप्रकारके दिव्य शस्त्र अर सामान्य शस्त्र इनमें प्रवीण । सुग्रीव पर मेघबाण चलाया, सो सम्पूर्ण दिशा जलरूप होय गई । तब सुग्रीवने पवनबाण चलाया, सो मेघवाण बिलाय गया । अर इन्द्रजीतका छत्र उडाया, अर ध्वजा उडाई । अर मेघवाहनने भामंडल पर अग्निवाण चलाया, सो भामंडलका धनुष भस्म होय गया अर सेनामें अग्नि प्रज्ज्वलित भई । तब भामण्डलने मेघवाहनपर मेघ-बाण चलाया सो अग्निवाण बिलाय गया अर अपनी सेनाकी बहुरि रक्षा करी । मेघवाहनने भामण्डलकूं रथ रहित किया तब भामण्डल दूजे रथ चढ युद्ध करवे लगा । मेघवाहनने तामसबाण चलाया सो भामण्डलकी सेनामें अंधकार होय गया, अपना पराया कुछ सूझे नाही, मानो मूर्छाकूं प्राप्त भए । तब मेघवाहनने भामण्डलकूं नागपाससे पकडा, मायामई सर्प सब अंगमें लिपट गए, जसे चन्दनके वृक्षके नाग लिपट जाय । कसै है नाग ? भयंकर जे फण तिनकर महा विकराल । भामण्डल पृथ्वीपर पडा अर याही भांति इन्द्रजीतने सुग्रीवको नागपाशकर पकडा सो धरतीपर पडा । तब बिभीषण जो विद्या

बलमें महाप्रवीण श्रीराम लक्ष्मणसू दोऊ हाथ जोड सीस निवाय कहता भया—हे राम महाबाहु ! हे लक्ष्मण महावीर ! इन्द्रजीतके बाणनिसे व्याप्तभई सब दिशा देखहु । धरती अर आकाश बाणनिकर आच्छादित है । उल्कापातके स्वरूप नागबाण तिनकरि सुग्रीव अर भामण्डल दोऊ भूमिविषे बधे पडे है । मन्दोदरीके दोनो पुत्रोने अपने दोनो महाभट पकडे, अपनी सेनाके जे दोनो मूल थे वे पकडे गए। तब हमारे जीवनकरि कहा ? इन विना सेना शिथिल होय गई ह । देखो दशो दिशाकू लोक भागे हैं, अर कुम्भकरणने महायुद्धविषे हनुमानकू पकडा ह । कुम्भकरणके बाणनिकरि हनुमान जरजरे भए, छत्र उड गये, ध्वजा उडगई, धनुष टूटा, वक्तर टूटा । रावणके पुत्र इन्द्रजीत अर मेघवाहन युद्ध विषै लग रहे ह । अब वे आयकर सुग्रीव भामडलकू ले जायगे, सौ वे न ले जावें तो पहिले ही आप उनकू ले आवें । वे दोनो चेष्टारहित ह सो म उनके लेवेकू जाऊ हू । अर आप भामण्डल सुग्रीवकी सेना निर्नाथ होय सो उसे थाभहु । या भाति विभीषण राम लक्ष्मणसे कहे ह ताही समय सुग्रीवका पुत्र अगद छानेछाने कम्भकरण पर गया, अर उसका उत्तरासनवस्त्र परे किया, सो लज्जाके भारकर व्याकुल भया । वस्त्रको थाभे तो लग, हनुमान इसकी भुजाफाससे निकस गया । जसे नवा पकडा पक्षी पिजरे से निकस जाय । हनुमान नवीन ज्योतिकू धरे अर अगद दोनो एक विमान बठे ऐसे शोभते भए मानो देव ही ह । अर अगदका भाई अग अर चद्रोदयका पुत्र विराधित इन सहित लक्ष्मण सुग्रीवकी अर भामडलकी सेनाकू धय बधाय थाभते भए । अर विभीषण इन्द्रजीत मेघवाहनपर गया सो विभीषणकू आवता देख इन्द्रजीत मनमें विचारता भया—जो न्याय विचारिए तो हमारे पितामें अर यामें कहा भेद ह ? तात याके सन्मुख लडना उचित नाहीं । सो याके सन्मुख खडा न रहना यही योग्य ह । अर ये दोनो भामडल सुग्रीव नागपाशमें बधे सो नि सन्देह मृत्युकू प्राप्त भए । अर काकात भाजिए तो दोष नाहीं । ऐसा विचार दोनो भाई महा अभिमानी, न्यायके वेत्ता विभीषणसे टरि गए । अर विभीषण त्रिशूलका ह आयुध जाक, रथसे उतर सुग्रीव भामडलके समीप गया । सो दोनोको नागपाशसे मूछित देख खेद खिन्न

होता भया । तब लक्ष्मण रामसू कही हे नाथ ! ये दोनो विद्याधरनिके अधिपति, महासेनाके स्वामी, महा शक्तिके धनी, भामण्डल सुग्रीव रावणके पुत्रनि शस्त्र रहित कीए, मूर्छित होय पडे ह । सो इन बगर आप रावणकू कस जीतेंगे । तब रामकू पुण्यके उदयसे गरुडेद्रने वर दिया था सो चितार लक्ष्मणसे राम कहते भए–हे भाई ! वशस्थल गिरिपर देशभूषण कुलभूषण मुनिका उपसग निवारा उस समय गरुडेद्रने वर दिया था–ऐसा कह महा लोचन रामने गरुडेद्रको चितारा, सो सुख अवस्था मे तिष्ठ था । सिहासन कम्पायमान भया । तब अवधि कर राम लक्ष्मणका काम जान चितावेग नामा देवकू दोय विद्या देय पठाया, सो आयकर बहुत आदरसू राम लक्ष्मणसे मिल्या । अर दोऊ विद्या तिनक दई । श्रीरामको सिहवाहिनी विद्या दई, अर लक्ष्मणकू गरुडवाहिनी विद्या दई । तब यह दोनो धीर विद्या लेय चिन्तावेगको बहुत सन्मान कर जिनेन्द्रकी पूजा करते भए अर गरुडेद्रकी बहुत प्रशसा करी। वह देव इनको जलबाण, अग्निबाण, पवनबाण इत्यादि अनेक दिव्य शस्त्र देता भया । अर चाद सूय सारिखे दोनो भाइयोको छत्र दिए, अर चमर दिए, नानाप्रकारके रत्न दिए, कातिके समूह अर विद्युद्वक्र नाम गदा लक्ष्मणको दई, अर हल मूसल दुष्टोको भयके कारण रामकू दिए । या भाति वह देव इनको देवोपनीत शस्त्र देय अर सकडो आशिष देय अपने स्थानक गया । यह सब धमका फल जानो जो समयमें योग्य वस्तुकी प्राप्ति होय, विधि पूवक निर्दोष धम आराधा होय, उसके ये अनुपम फल ह । जिनकू पाय करि दु खकी निवृत्ति होय, महावीयके धनी आप कुशलरूप, अर औरनिकू कुशल कर । मनुष्यलोकको सम्पदाकी कहा बात, पुण्याधिकारियोकू देवलोकको वस्तु भी सुलभ होय ह । तात निरतर पुण्य करहु। अहो प्राणि हो ! जो सुख चाहो तो प्राणियोको सुख देवो । जिस धमके प्रसादसे सूय समान तेजके धारक होवो अर आश्चयकारी वस्तुनिका सयोग होय ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषा वचनिकाविषै राम लक्ष्मणक अनेक विद्याका लाभ वणन करनेवाला साठवा पव पूण भया ॥ ६ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण दोऊ वीर तेजके मंडलमें मध्यवर्ती, लक्ष्मीके निवास, श्रीवत्स लक्षण कू धरे, महामनोज्ञ कवच पहिरे, सिंहवाहन गरुडवाहन पर चढे, महासुन्दर सेना सागरके मध्य, सिंह की अर गरुडकी ध्वजा धरें, परपक्षके क्षय करवेकू उद्यमी, महासमर्थ सुभटोके ईश्वर, संग्राम भूमि के मध्य प्रवेश करते भए। आगे आगे लक्ष्मण चला जाय है। दिव्य शस्त्रके तेजसे सूर्यके तेजकू आछा-दित करता हुआ हनुमान आदि बडे बडे योधा वानरवंशी तिनकर मंडित। वर्णन में न आवे ऐसा देवोका सा रूप धरे, बारह सूर्यकीसी ज्योतिलिये, लक्ष्मणको विभीषणने देखा। सो जगतकू आश्चर्य उपजावे ऐसे तेजकर मंडित, सो गरुडवाहनके प्रतापकर नागपासका बंधन भामण्डल सुग्रीवका दूर भया। गरुड के पक्षोकी पवन क्षीरसागरके जलकू क्षोभ रूप करे, उससे वे सर्प विलाय गये जैसे साधुवोके प्रतापसे कुभाव मिट जाय। पक्षनकी कांतिकर लोक ऐसे होय गए मानो सुवर्णके रस कर निरमापे हैं। तब भामण्डल सुग्रीव नागपाससे छूट विश्रामकू प्राप्त भए, मानो सुख निद्रा लेय जागे अधिक शोभते भए। तब इनकू देख श्रीवृक्ष प्रथादिक सब विद्याधर विस्मयकू प्राप्त भए अर तब ही श्रीराम लक्ष्मणकी पूजाकर वीनती करते भए—हे नाथ! आजकीसी विभूति हम अब तक कभी न देखी—वाहन, वस्त्र, सम्पदा, छत्र ध्वजामें अद्भुत शोभा दीखे है। तब श्रीरामने जबसे अयोध्यासे चले तबसे लेय सब वृत्तांत कहा, कुलभूषण, देशभूषणका उपसर्ग दूर किया सो सब वृत्तांत कहा। तिन्होको केवल उपजा अर कही—हमसे गरुडेन्द्र तुष्टायमान भया। सो अबार उसका चिन्तवन किया उससे यह विद्याकी प्राप्ति भई। तब वे यह कथा सुन परम हर्षकू प्राप्त भए, अर कहते भए इस ही भव में साधु सेवासे परम यश पाइए है, अर अति उदार चेष्टा होय है, अर पुण्यकी विधि प्राप्ति होय है। अर जैसा साधु सेवा से कल्याण होय है वैसा न माता पिता, न मित्र, न भाई, कोई जीवोको न करे। साधु या प्राणी सेवाकी प्रशंसामें लगाया है चित्त जिन्होने, जिनेन्द्रके मार्गकी उन्नतिमें उपजी है श्रद्धा जिनके, वे राजा बलभद्र नारायणका आश्रयसे महा विभूतिसे शोभते भए। भव्यजीवरूप कमल तिनकू प्रफुल्लित करन-

[illegible] के समुद्रमें मग्न भए । अर श्रीराम लक्ष्मणकी सेवामें

[illegible] र्छा रूप निद्रासे रहित भए हैं नेत्र कमल जिनके श्री

[illegible] वो सारिखे सवथा प्रकार धममें श्रद्धा करते भए । जो

[illegible] नके योगकू प्राप्त होय ह । यह प्राणी अपने स्वाथसे

[illegible] महिमा होय है । जसा सूय पर पदाथको प्रकाश वसे

[illegible] महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष सुग्रीव भामडलका नाग पासत छूटना अर हनुमानकी [illegible] सूना राम लक्ष्मणकू सिंहविमान गरुडविमानकी प्राप्ति निरूपण वणनक नेवाला इकसठवां पव पूण भया ।६१।

अथानन्तर श्रीरामके पक्षके योधा महा पराक्रमी, रणरीतिके वत्ता शूरवीर, युद्धकू उद्यमी भए । बानरवशियो की सेनासे आकाश व्याप्त भया, अर शख आदि वादित्रनिके शब्द अर गजोकी गजना अर तुरगनिके हींसिवेका शब्द सुनकर कैलाशका उठावनहारा जो रावण, अति प्रचड है बुद्धि जाकी, महामानी, देवन सारिखी ह विभूति जाके, महा प्रतापी, बलवान, सेनारूप समुद्रकर सयुक्त, शस्त्रनिके तेजकर पृथ्वीमें प्रकाश करता, पुत्र भातादिक सहित लकासे निकसा, युद्धकू उद्यमी भया । दोनो सेनाके योधा बखतर पहिर सग्रामके अभिलाषी नानाप्रकार वाहननिविष आरूढ, अनेक आयुधनिके धरणहारे पूर्वोपार्जित कमसे महाक्रोधरूप परस्पर युद्ध करते भए । चक्र, करोत, कुठार, धनुष बाण, खडग, लोहयष्टि, वज, मुदगर, कनक, परिध इत्यादि अनेक आयुधनि से परस्पर युद्ध भया । घोडेके असवार घोडेके असवारो से लडने लगे, हाथियोके असवार हाथियोके असवारोसे, रथोके रथियोसे महाधीर लडने लगे । सिंहों के असवार सिहोके असवारोसे, पयादे पयादोंसे भिडते भए । बहुत देरमें कपिध्वजोकी [illegible] योधावोसे दबी । तब नल नील सग्राम करने लगे । सो इनके युद्धसे राक्षसों [illegible] श्वरक योधा समुद्रकी कल्लोल सारिखे चचल, अपनी सेनाकू कम्पायमा [illegible]

हारी यह पवित्र कथा, उसे सुनकर वे सब ही हर्षके समुद्रमें मग्न भए। अर श्रीराम लक्ष्मणकी सेवामें अति प्रीति करते भए। अर भामण्डल सुग्रीव, मूर्छा रूप निद्रासे रहित भए हैं नेत्र कमल जिनके श्री भगवानकी पूजा करते भए। वे विद्याधर श्रेष्ठ देवो सारिखे सर्वथा प्रकार धर्ममें श्रद्धा करते भए। जो पुण्याधिकारी जीव हैं सो इस लोकमें परम उत्सवके योगकूं प्राप्त होय हैं। यह प्राणी अपने स्वार्थसे संसारमें महिमा नाहीं पावे है, केवल परमार्थसे महिमा होय है। जैसा सूर्य पर पदार्थको प्रकाश करे शोभा पावे है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै सुग्रीव भामंडलका नाग पासतें छूटना अर हनुमानको कुम्भकरणकी भुजापासित छूटना राम लक्ष्मणकूं सिंहविमान गरुडविमानका प्राप्ति निरूपण वर्णनकरनेवाला इकसठवां पर्व पूर्ण भया।६१।

अथानन्तर श्रीरामके पक्षके योधा महा पराक्रमी, रणरीतिके वेत्ता, शूरवीर, युद्धकूं उद्यमी भए। बानरवंशियो की सेनासे आकाश व्याप्त भया, अर शंख आदि वादित्रनिके शब्द अर गजोकी गर्जना अर तुरगनिके हींसिवेका शब्द सुनकर कैलाशका उठावनहारा जो रावण, अति प्रचंड है बुद्धि जाकी, महामानी, देवन सारिखी है विभूति जाके, महा प्रतापी, बलवान, सेनारूप समुद्रकर संयुक्त, शस्त्रनिके तेजकर पृथ्वीमें प्रकाश करता, पुत्र भ्राताादिक सहित लंकासे निकसा, युद्धकूं उद्यमी भया। दोनो सेनाके योधा बख्तर पहिर संग्रामके अभिलाषी नानाप्रकार वाहननिविषै आरूढ, अनेक आयुधनिके धरणहारे पूर्वोपार्जित कर्मसे महाक्रोधरूप परस्पर युद्ध करते भए। चक्र, करोत, कुठार, धनुष बाण, खड्ग, लोहयष्टि, वज्र, मुद्गर, कनक, परिध इत्यादि अनेक आयुधनि से परस्पर युद्ध भया। घोडेके असवार घोडेके असवारोसे लडने लगे, हाथियोके असवार हाथियोके असवारोसे, रथोके रथियोसे महाधीर लडने लगे। सिंहोके असवार सिंहोके असवारोसे, पयादे पयादोंसे भिडते भए। बहुत देरमें कपिध्वजोकी सेना राक्षसोके योधावोसे दबी। तब नल नील संग्राम करने लगे। सो इनके युद्धसे राक्षसोकी सेना चिगी। तब लंकेश्वरके योधा समुद्रकी कल्लोल सारिखे चंचल, अपनी सेनाकूं कम्पायमान देख, विद्युद्वचन मारीच,

चन्द्राक, सुखसारण, कतातमत्यु, भूतनाद, सक्रोधन इत्यादि महा सामन्त अपनी सेनाकू धीय बधायकर कपिध्वजोकी सेनाकू दबावते भए। तब मकटवशी योद्धा अपनी सेनाकू चिगा जान हजारो युद्धको उठे। सो उठते ही नानाप्रकारके आयुधनिकरि राक्षसनिकी सेनाकू हणते भए, अति उदार ह चेष्टा जिनकी। तब रावण अपनी सेनारूप समुद्रकू कपिध्वज रूप प्रलय कालकी अग्निसे सूखता देख आप कोपकर युद्ध करवेकू उद्यमी भया। सो रावणरूप प्रलयकालकी पवनसे बानरवशी सूखे पात उडने लगे। तब विभीषण महायोधा बानर वशियोकू धीय बधाय तिनकी रक्षा करवेकू आप रावणसे युद्धकू सम्मुख भया। तब रावण लहुरे भाईकू युद्धमे उद्यमी देख क्रोधकर निरादर वचन कहता भया, रे बालक ! तू लघुभ्राता है, सो मारवे योग्य नाहीं। मेरे सन्मुखसे दूर हो। म तुझे देखे प्रसन्न नाहीं। तब विभीषणने रावणसे कही—कालक योगसे तू मरी दष्टि पडा। अब मोस कहाँ जायगा। तब रावण अति क्रोधमें कहता भया—रे पुरुषत्वरहित क्लिष्ट धष्ट पापिष्ट कुचेष्टि नरकाधिकार ! तोकू तो सारिखे दीनकू मारे मुझे हष नाहीं। तू निबल रक अवध्य ह। अर तो सारिखा मूख और कौन जो विद्याधरोकी सन्तानोमें होयकर भूमिगोचरियोका आश्रय कर, जसे कोई दुबुद्धि पाप कमके उदयसे जिनधमको तज मिथ्यात्वका सेवन कर। तब विभीषण बोला हे रावण ! बहुत कहनेकरि कहा ? तेरे कल्याणकी बात तुझे कहू हूँ सो सुन। एती भई तो भी कुछ बिगडा नाहीं। जो तू अपना कल्याण चाहै ह तो रामसू प्रीतिकर, सीता रामकू सौंप, अर अभिमान तज रामकू प्रसन्न कर। स्त्रीके निमित्त अपने कुलको कलक मत लगाव। अथवा तू मेरे वचन नहीं मान ह सो जानिए ह तेरी मत्यु नजीक आई ह। समस्त वलवन्तनिमें मोह महा बलवान ह। तू मोहसे उन्मत्त भया ह। ये वचन भाईके सुन कर रावण अति क्रोधरूप भया। तीक्ष्णबाण लेय विभीषणपर दौडया। और भी रथ घोडे हाथिनके असवार स्वामी भक्तिमें तत्पर महायुद्ध करते भए। विभीषणने भी रावणकू आवता देख अर्धचन्द्र बाणसे रावणकी ध्वजा उडाई, अर रावणने क्रोधकर बाण चलाया सो विभीषणका धनुष तोडया,

अर हाथसू बाण गिरा। तब विभीषणने दूजा धनुष लेय बाण चलाया सो रावणका धनुष तोड्या। या भाति दोनो भाई महायोधा परस्पर जोरसू युद्ध करते भए, अर अनेक सामतनिका क्षय भया। तदि इन्द्रजीत महायोधा पिताभक्त पिताकी पक्ष विभीषणपर आया। तब ताहि लक्ष्मणने रोक्या जैसे पर्वत सागरकू रोके। अर श्रीरामने कुम्भकरणकू घेर्या, अर सिंहकटिसे नील, अर शम्भूसे नल अर स्वयम्भूसे दुर्मती, अर घटोदरसे दुर्मुख, शक्रासनसे दुष्ट, चन्द्रनखसे काली, भिन्नाञ्जनसे स्कन्ध, विघ्नसे विराधित, अर मयसे अगद, अर कुम्भकरणका पुत्र जो कुम्भ उससे हनुमानका पुत्र, अर सुमालीसे सुग्रीव, अर केतुसे भामण्डल, कामसे दृढरथ, क्षोभसे बुध इत्यादि बडे बडे राजा परस्पर युद्ध करते भए। अर समस्त ही योधा परस्पर रण रचते भए। वह वाहि बुलावे। बराबरके सुभट कोई कहै है—मेरा शस्त्र आवै है उसे झेलो। कोई कहै है तू हमसे युद्ध योग्य नाहीं, बालक है वृद्ध है रोगी है, निर्बल है, तू जा। फलाने सुभट युद्ध योग्य है सो आवो। या भातिके वचनालाप होय रहे है। कोई कहै है याही छेदो। कोई कहे है बाण चलाओ कोई कहै है मार लेवो, पकड लेवो, बाध लेवो, ग्रहण करो, छोडो, चूर्ण करो, घाव लगे ताहि सहो, घाव देहु, आगे होवो, मूर्छित मत होवो सावधान होवो, तू कहा डरै है? मै तुझे न मारू, कायरनिकू न मारना, भागेको न मारना, पडेको न मारना, आयुधरहितपर चोट न करनी, तथा रोगसे ग्रसा मूर्छित दीन बाल वृद्ध यति व्रती स्त्री शरणागत तपस्वी पागल पशु पक्षी इत्यादिकू सुभट न मारै। यह सामन्तनिकी वृत्ति है। कोई अपने वशियोको भागते देख धिक्कार शब्द कहै है और कहै है—तू कायर है, नष्ट है मति, कापै कहा जाय है, धीरा रहो, अपने समूहमें खडा रहू, तोसू क्या होय है, तोसू कौन डरै, तू काहेका क्षत्री? शूर और कायरनिके परखनेका यह समय है। मीठा मीठा अन्न तो बहुत खाते यथेष्ट भोजन करते अब युद्धमें पीछे क्यो होवो? या भाति धीरोकी गर्जना और वादित्रनिका बाजना तिनसू दशो दिशा शब्दरूप भई। और तुरगनिके खुरकी रजसे अंधकार होय गया। चक्र शक्ति गदा लोहयष्टि कनक इत्यादि शस्त्रनिसे युद्ध भया,

मानो ये शस्त्र कालकी डाढही ह । लोग घायल भए । दोनो सेना ऐसी दीख मानो लाल अशोकका वन ह, अथवा केसूका वन ह, अर अथवा पारिभद्रजातिके वक्षोका वन ह । कोई योधा अपने बखतर को टूटा देख दूजा बखतर पहरता भया, जसै साधु व्रतमें दूषण उपजा देख फिर पीछे दोष स्थापना करै । और कोई दातोसे तरवार थाम्भ कमर गाढी कर फिर युद्धकू प्रवत्ता । कोई यक सामन्त माते हाथियोके दातोके अग्रभागसे बिदारा गया ह वक्षस्थल जाका, सो हाथीके चालते जे कान, वेई भए बीजना, उससे मानो हवासे सुख रूप कर रहे ह । और कोईइक सुभट निराकुल बुद्धि हुआ, हाथीके दातनिपर दोनो भुजा पसार सोव ह, मानो स्वामी कायरूप समुद्रसे उतरा । अर कईएक योधा युद्धसे रुधिरका नाला बहावते भए जस पवतमें गेरुकी खानसे लाल नीझरने बह । अर कईएक योधा पथ्वीमें साम्हने मुहसे पडे होठ डसते, शस्त्र जिनके करमें, टेढी भौंह, विकराल वदन, इसरीतिसे प्राण तजै है । अर कईएक भव्यजीव महा सग्रामसू अत्यत घायल होय, कषायका त्याग कर, सन्यास धर, अविनाशी पदका ध्यान करते देहकू तज उत्तम लोककू पाव ह । कईएक धीरवीर हाथिनिके दात निकू हाथसे पकडकर ही देह रुधिर की छटा शरीरसे पडे ह, शस्त्र ह हाथनिमें जिनके, अर कईएक काम आय गए तिनके मस्तक गिर पडे, अर सकडो धड नाचे है । कईएक शस्त्ररहित भए अर घावोसे जरजरे भये तषातुर होय जल पीवनेको बठे ह, जीवनकी आशा नाहीं । ऐसे भयकर सग्रामके होते परस्पर अनेक योधावोका क्षय भया । इन्द्रजीत तीक्ष्ण बाणनिसे लक्ष्मणकू आच्छादने लगा, अर लक्ष्मण उसको । सो इन्द्रजीतने लक्ष्मण पर तामस बाण चलाया सो अधकार होय गया । तब लक्ष्मणने सूयबाण चलाया उससे अधकार दूर भया । फिर इन्द्रजीतने आशीविष जातिके नागबाण चलाये सो लक्ष्मण अर लक्ष्मणका रथ नागोसे वेष्टित होने लगा । तब लक्ष्मणने गरुडबाणके योगसे नागबाण का निराकरण किया, जसे योगी महातपसे पूर्वोपार्जित पापोके समूहकू निराकरण कर । अर लक्ष्मणने इन्द्रजीतकू रथरहित किया । कसा ह इन्द्रजीत ? मन्त्रियोके मध्य तिष्ठ ह, अर हाथियोको घटावो-

से वष्टित ह। सो इन्द्रजीत दूजे रथ चढि अपनी सेनाकू वचनकरि, क्रियाकरि रक्षा करता संता लक्ष्मण पर तप्त बाण चलावता भया। उसे लक्ष्मणने अपने विद्यासे निवार इन्द्रजीतपर आशीविष जातिका नागबाण चलाया, सो इन्द्रजीत नागवाणसे अचेत होय भूमिमें पडा, जसे भामण्डल पडा था। और रामने कुम्भकरणकू रथरहित किया। बहुरि कुम्भकरणने सूयवाण रामपर चलाया सो रामने ताका बाण निराकरणकर नागवाणकर ताहि बेढा सो कुम्भकरण भी नागोका बेढा थका धरती पर पडा।

यह कथा गौतमगणधर राजा श्रेणिकत कह ह—हे श्रेणिक! बडा आश्चय ह ते नागबाण धनुषके लगे उल्कापातस्वरूप होय जाय ह, अर शत्रुओके शरीरके लग नागरूप होय उसको बेढ ह। यह दिब्य शस्त्र देवोपनीत ह, मनवाछित रूप कर ह, एक क्षणमे बाण एक क्षणमे दड, क्षण एकमें पाश रूप होय परणव ह। जस कर्म—पाशकर जीव बधे तस नागपाश कर कुम्भकरण बांधा? सो रामकी आज्ञा पाय भामण्डलने अपने रथ मे राखा। कुम्भकरणकू रामने भामडलके हवाले किया अर इन्द्र जीतको लक्ष्मणने पकडा सो विराधितके हवाले किया। सो विराधितने अपने रथ में राखा, खेदखिन्न ह शरीर जाका। ता समय युद्धमे रावण विभीषणको कहता भया जो यदि तू आपको योधा मान ह तो एक मेरा घाव सह, जाकरि रणकी खाज बुझे। यह रावणने कही। कसा ह विभीषण? क्रोधकर रावणके सन्मुख ह, अर विकराल करी ह रणक्रीडा जाने। रावणने कोपकर विभीषणपर त्रिशूल चलाया, कसा ह त्रिशूल? प्रज्ज्वलित अग्निके स्फुलिगोकर प्रकाश किया ह आकाशमे जाने, सो त्रिशूल लक्ष्मण ने विभीषणतक आवने न दिया, अपने वाणकर बीचही भस्म किया। तब रावण अपने त्रिशूलको भस्म किया देख अति क्रोधायमान भया अर नागेन्द्रकी दई शक्ति महादारुण सो ग्रही। अर आगें देखे तो इन्दीवर कहिए नीलकमल ता समान श्याम सुन्दर, महा ददीप्यमान पुरुषोत्तम, गरुडध्वज लक्ष्मण खडे ह। तब कालो घटासमान गम्भीर उदार ह शब्द जाका ऐसा दशमुख सो लक्ष्मणकू ऊचे स्वरकर कहता भया—मानो ताडना ही कर ह, तेरा बल कहा? जो मत्युके कारण मरे शस्त्र तू झेल। तू औरनिकी

पद्म
पुराण
६१५

तरह मोहि मत जाने। हे दुर्बुद्धि लक्ष्मण! जो तू मूवा चाहे है तो मेरा यह शस्त्र झेल। तब लक्ष्मण यद्यपि चिरकाल संग्रामकर अति खेदखिन्न भया है तथापि विभीषणको पीछेकर आप आगे होय रावण की तरफ दौडे। तब रावणने महाक्रोध करि लक्ष्मणपर शक्ति चलाई। कैसी है शक्ति? निकसे है तारावोंके आकार स्फुलिंगनिके समूह जाविषे। सो लक्ष्मणका वक्षस्थल महा पर्वतके तट समान ता शक्तिका विदारा गया। कैसी है शक्ति? महा दिव्य, अति देदीप्यमान, अमोघक्षेपा कहिए वृथा नाहीं है लगना जाका। सो शक्ति लक्ष्मणके अंगसो लगी। कैसी सोहती भई? मानो प्रेमकी भरी वधू ही है। सो लक्ष्मण शक्तिके प्रहारकर पराधीन भया है शरीर जाका सो भूमिपर पडा, जैसैं वज्रका मारा पहाड पडे। सो ताहि भूमिपर पडा देख श्रीराम कमललोचन शोकको दबाय शत्रुके घात करिवेनिमित्त उद्यमी भए। सिंहोंके रथ चढे क्रोधके भरे शत्रुको तत्काल ही रथरहित किया। तब रावण और रथ चढा। तब रामने रावणका धनुष तोडा। बहुरि रावण और धनुष लिया तितने रामने रावणका दूजा रथ भी तोडा। सो रामके बाणनिकर विह्वल रावण धनुषबाण लेयवे असमर्थ भया। तीव्र बाणनिकर राम रावणका रथ तोड डारे, वह बहुरि रथ चढे, सो अत्यन्त खेदखिन्न भया, छेदा है बक्तर जाका। सो छह बार रामने रथरहित किया तथापि रावण अद्भुतपराक्रमका धारी रामकर हता न गया। तब राम आश्चर्य पाय रावणसे कहते भए—तू अल्प आयु नाहीं, कोईयक दिन आयु बाकी है। तातै मेरे बाणनिकर न मूवा। मेरी भुजाकर चलाए बाण महा तीक्ष्ण तिनकर पहाड भी भिद जाय, मनुष्यकी तो कहा बात? तथापि आयुकर्मने तोकूं बचाया। अब मैं तोहि कहूं सो सुन—हे विद्याधरोंके अधिपति! मेरा भाई संग्राममें शक्तिकर तैंने हना, सो याकी मृत्युक्रिया कर मैं तोसों प्रभात ही युद्ध करूंगा। तब रावणने कही ऐसे ही करो। यह कह रावण इन्द्रतुल्य पराक्रमी लंकामें गया। कैसा है रावण? प्रार्थनाभंग करिवेकूं असमर्थ है। रावण मनमें विचारै है इन दोनों भाइयोंमें एक यह मेरा शत्रु अति प्रबल था। सो तो मैं हत्या। यह विचार कछुइक हर्षित होय महलविषै गया। कई एक जो योधा युद्ध

से जीवते आए तिनकू देख हर्षित भया। कसा ह रावण ? योद्धाओ में ह वात्सल्य जाके। बहुरि सुनी इन्द्रजीत मेघनाद पकडे गए अर भाई कुम्भकरण पकडा गया सो या वत्तातकर रावण अति खेदखिन्न भया। तिनके जीवनेकी आशा नाहीं। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह—हे भव्योत्तम! अनेकरूप अपने उपार्जे कर्मोके कारणसे जीवनिके नानाप्रकारकी साता असाता होय ह। देख! या जगत विष नानाप्रकारके कम तिनके उदयकर जीवनिके नानाप्रकारके शुभाशुभ होय ह, अर नानाप्रकारके फल होय ह। कईएक तो कमके उदयकर रणविष नाशकू प्राप्त होय ह, अर कइ एक बरियोको जीत अपने स्थानककू प्राप्त होय ह। अर काहूकी विस्तीण शक्ति विफल होय जाय ह, अर बन्धनकू पाव ह। सो जस सूय पदार्थोके प्रकाशनमे प्रवीण ह तस कम जीवनिको नानाप्रकारके फल देनेमे प्रवीण है।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष लक्ष्मणक रावण के हाथकी शक्तिका लगना और भूमिविष अचेत होय पडना वणन करनेवाला बासठवा पव पूण भया॥ ६२॥

— —

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मणके शोककरि व्याकुल भए। जहा लक्ष्मण पडा हुता तहा आय पृथ्वी मण्डलका मडन जो भाई ताहि चेष्टारहित शक्तिसे आलिगित देख मूर्छित होय पडे। बहुरि घनी बेर मे सचेत होयकर महाशोकसे सयुक्त, दुखरूप अग्निसे प्रज्ज्वलित, अत्यन्त विलाप करते भए—हा वत्स! कमके योग कर तेरी यह दारुण अवस्था भई। आप दुलघ्य समुद्र तर यहा आए, तू मेरी भक्तिमें सदा सावधान, मेरे काय निमित्त सदा उद्यमी, शीघ ही मेरेसे वचनालाप कर। कहा मौन धरे तिष्ठ ह ? तू न जाने म तेरे वियोगकू एक क्षणमात्र भी सहिवे सक्त नाहीं, उठ, मेरे उरसे लग। तेरा विनय कहा गया ? तेरे भुज गजके सूड समान दीघ भुजबन्धननिकर शोभित सो ये क्रियारहित प्रयोजनरहित होय गए, भावमात्र ही रह गए। अर तू माता पिताने मोहि धरोहर सौंपा हुता सो अब म महानिलज्ज तिनकू कहा उत्तर दूगा ? अत्यन्त प्रेमक भरे अति अभिलाषी राम—हा लक्ष्मण! हा

लक्ष्मण ! ऐसा जगतमे हितु तो समान नाहीं, या भातिके वचन कहते भए। लोक समस्त देख ह। अर महादीन भए भाईसू कह ह, तू सुभटनिमें रत्न ह, तो विना म कसे जीऊंगा ? म अपना जीतव्य पुरुषाथ तेरे विना विफल मानू हू। पापोके उदयका चरित्र मने प्रत्यक्ष देखा। मोहि तेरे बिना सीता कर कहा ? अर अन्य पदार्थनिकर कहा ? जा सीताके निमित्त तेरे सारिखे भाईकू निदय शक्तिकर पथ्वीपर पडा देखू हू, सो तो समान भाई कहा ? काम अथ पुरुषोको सब सुलभ ह, अर और और सम्बन्धी पथ्वीपर जहा जाइये वहा सब मिलें। परन्तु माता, पिता अर भाई न मिलें। हे सुग्रीव ! तने अपना मित्रपणा मुझे अति दिखाया। अब तुम अपने स्थानक जावो। अर हे भामण्डल ! तुम भी जावो। अब म सीताकी भी आशा तजी, अर जीवनेकी भी आशा तजी। अब म भाईके साथ निसदेह अग्निमें प्रवेश करूगा। हे विभीषण ! मोहि सीताका भी सोच नाहीं, अर भाईका सोच नाहीं, परन्तु तिहारा उपकार हमसे कछु न बना सो यह मेरे मनमें महा बाधा ह। जे उत्तम पुरुष ह ते पहिले ही उपकार करें। अर जे मध्यम पुरुष ह ते उपकार पीछे उपकार करें। अर जो पीछे भी न करें वे अधम पुरुष ह। सो तुम उत्तम पुरुष हो, हमारा प्रथम उपकार किया। ऐसे भाईसे विरोध कर हमप आये। अर हमसे तिहारा कछु उपकार न बना। तात म अति आतापरूप हू। हो भामडल सुग्रीव चिता रचो, म भाईके साथ अग्निमें प्रवेश करूगा। तुम जो योग्य हो सो करियो। यह कहकर लक्ष्मणकू राम स्पशने लगे तब जाबूनद महा बुद्धिमान मना करता भया—हे देव ! यह दिव्यास्त्रसे मूछित भया ह तिहारा भाई, सो स्पश मत करो। यह अच्छा हो जायगा। ऐसे होय ह। तुम धीरताकू धरो, कायरता तजो आपदामें उपाय ही कायकारी ह। यह विलाप उपाय नाहीं, सुभट जन हो, तुमको विलाप उचित नाहीं। यह विलाप करना क्षुद्र लोगोका काम ह। तात अपना चित्त धीर करो, कोई यक उपाय अब ही बन ह। यह तिहारा भाइ नारायण ह सो अवश्य जीवेगा। अबार याकी मृत्यु नाहीं। यह कह सब विद्याधर विषादी भए, अर लक्ष्मणके अगसे शक्ति निकसनेका उपाय अपने मन

में सब ही चितवते भए । यह दिव्य शक्ति ह याहि औषधकर कोऊ निवारवे समथ नाहीं । अर कदापि सूय उगा तो लक्ष्मणका जीवना कठिन ह । यह विद्याधर बारम्बार विचारते हुए उपजी ह चिन्ता जिनके, कमरबध आदि सब दूर कर, आध निमिषमें धरती शुद्धकर कपडके डेरे खडे किए । अर कटक की सात चौकी मेली । सो बडे २ योधा बक्तर पहिरे, धनुष बाण धारे, बहुत सावधानीसे चौकी बठे । प्रथम चौकी नील बठे, धनुषबाण हाथमे धरे ह । अर दूजी चौकी नल बठे गदा करमें लिए । अर तीजी चौकी विभीषण बठे महा उदार मन, त्रिशूल थाभे, अर कल्पवक्षोकी माला रत्ननिके आभूषण पहिरे ईशान इन्द्र समान । अर चौथी चौकी तरकश बाधे कुमुद बठे, महा साहस धरे । पाचवीं चौकी बरछी सभारे सुषेण बठे, महा प्रतापी । अर छठी चौकी महा दढभज आप सुग्रीव इन्द्र सारिखा शोभायमान भिडिमाल लिए बठे । सातवी चौकी महा शस्त्रका निकन्दक तलवार सम्हाले आप भामडल बठा । पूवके द्वार अष्टापदकी ह ध्वजा जाके सो शरभ ऐसा सोहता भया मानो महाबली अष्टापद ही ह । अर पश्चिमके द्वार जाम्बुकुमार विराजता भया । अर उत्तरके द्वार मन्त्रियोके समूह सहित बालीका पुत्र महा बलवान चन्द्र मरीच बठा । या भाति विद्याधर चौकी बठे । सो कसे सोहते भए ? जसे आकाशमे नक्षत्रमण्डल भासे । अर वानरवशी महाभट वे सब दक्षिण दिशाकी तरफ चौकी बठे । या भाति चौकीका यत्नकर विद्याधर तिष्ठे । लक्ष्मणके जीनेमें ह सदह जिनके, प्रबल ह शोक जिनका । जीवनिके कमरूप सूयके उदयकर फल का प्रकाश होय ह ताहि न मनुष्य, न देव, न नाग, न असुर, कोई भी निवारवे समथ नाहीं । यह जीव अपना उपार्जा कम आपही भोगव ह ।

इति श्रीरविषेणाचाय विरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष लक्ष्मणके शक्ति लगना अर रामका विलाप वणन करनेवाला त्रेसठवा पव पण भया ।। ६३ ।।

अथानन्तर रावण लक्ष्मणका निश्चयसे मरण जान अर अपने भाई दोऊ पुत्रनिको बुद्धिमें मरण रूप ही जान अत्यन्त दुखी भया । रावण विलाप कर है—हाय भाई कुम्भकरण ! परम उदार अत्यत

हितु ! कहा ऐसी ब धन अवस्थाकू प्राप्त भया ? हाय इन्द्रजीत, मेघनाद महा पराक्रमके धारी हो ! मेरी भुजा समान ! दृढकर्मके योगकर बधको प्राप्त भए। ऐसी अवस्था अबतक न भई। मैं शत्रुका भाई हना ह सो न जानिए शत्रु व्याकुल भया कहा कर ? तुम सारिखे उत्तम पुरुष मेरे प्राणवल्लभ दुख अवस्थाकू प्राप्त भए। या समान मोको अति कष्ट कहा ? ऐसे रावण गोप्य भाई अर पुत्रनिका शोक करता भया। अर जानकी लक्ष्मणके शक्ति लगी सुन अति रुदन करती भई—हाय लक्ष्मण ! विनयवान गुणभूषण ! तू मो मदभागिनीके निमित्त ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भया। म तोहि ऐसी अवस्थाविष ह दखा चाहू हू, सो वियोगसे देखने नाहीं पाऊ हू। तो सारिखे योधाको पापी शत्रुने हना सो कहा मेर मरणका सदेह न किया ? तो समान पुरुष या ससारमें और नाहीं, जो बडे भाईकी सेवामे आसक्त ह चित्त जाका, समस्त कुटुम्बकू तज, भाईके साथ निकसा। अर समुद्र तिर यहा आया। ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भया तोहि म कब देखू ? कसा ह तू ? बालक्रीडामें प्रवीण अर महा विनयवान, महा मिष्टवाक्य, वा अदभुत कायका करणहारा। एसा दिन कब होयगा जो तुझे मैं देखू ? सव देव सवथा प्रकार तेरी सहाय करहु। हे सवलोकके मनके हरणहारे ! तू शक्तिकी शल्यसे रहित होय। या भाति महा कष्टत शोकरूप जानकी विलाप कर। ताहि भावनिकरि अति प्रीतिरूप जो विद्याधरी तिनने धीय बधाय शातचित्त करी—हे देवि ! तेरे देवरके अबतक मरवेका निश्चय नाहीं, तात तू रुदन मत कर। अर महा धीर सामन्तोकी यही गति ह। अर या पथ्वीविष उपाय भी नाना प्रकारके ह। ऐसे विद्याधरियोके वचन सुन सीता किंचित निराकुल भई। अब गौतमस्वामी राजा श्रेणिकत कह ह—हे राजन ! अब जो लक्ष्मणका वत्तात भया सो सुन। एक योधा सुन्दर ह मूर्ति जाकी, सो डेरोके द्वारपर प्रवेश करता भामण्डलने देख्या, अर पूछा कि तू कौन, अर कहासे आया, अर कौन अथ यहा प्रवेश कर है ? यहा ही रह, आगे मत जावो। तव वह कहता भया मोहि महीने ऊपर कई दिन गए ह, मेरे अभिलाषा रामके दशनकी ह, सो रामका दशन करूगा। अर जो तुम

लक्ष्मणके जीवनेकी बाछा करो हो तो म जीवनेका उपाय कहूगा। जब वाने ऐसा कहा तब भामडल अति प्रसन्न होय, द्वार आप समान अन्य सुभट मेल, ताहि लार लेय, श्रीरामप आया। सो विद्याधर श्रीरामसे नमस्कार कर कहता भया—हे देव! तुम खेद मत करो, लक्ष्मणकुमार निश्चयसेती जीवेगा। देवगतिनामा नगर, तहा राजा शशिमडल, राणी सुप्रभा, तिनका पुत्र म चन्द्रप्रीतम। सो एक दिन आकाशविष विचरता हुता। सो राजा वेलाध्यक्षका पुत्र सहसविजय, सो वास मेरा यह वर कि म वाकी माग परणी। सो वह मेरा शत्रु, ताके अर मेरे महा युद्ध भया। सो तान चण्डरवा नाम शक्ति मेरे लगाई। सो म आकाशसे अयोध्याके महेन्द्रनामा उद्यानमे पडा। सो मोहि पडता देख अयोध्याके धनी राजा भरत आय ठाढे भए। शक्तिसे विदारा मेरा वक्षस्थल देख, वे महा दयावान उत्तम पुरुष, जीवदाता मुझे चन्दनके जलकर छाटा। सो शक्ति निकल गई। मेरा जसा रूप हुता वसा होय गया। अर कुछ अधिक भया। वा नरेन्द्र भरतनें मोहि नवा जन्म दिया जा कर तिहारा दशन भया।

यह वचन सुन श्रीरामचन्द्र पूछते भए कि वा गन्धोदककी उत्पत्ति तू जान ह। तब ताने कहा—हे देव! जानू हू, तुम सुनो। म राजा भरतको पूछी अर ताने मोहि कही—जो यह हमारा समस्त देश रोगनिकर पीडित भया। सो काहू इलाजसे अच्छा न होय। पथ्वीविष कौन कौन रोग उपजे सो सुनो—उरोघात महादाहज्वर, लालपरिश्राव सवशूल, अर छर्दि, सोई, फोडे इत्यादि अनेक रोग सवदेशके प्राणियोको भए, मानो क्रोधकर रोगनिकी धाड ही देशविष आई। अर राजा द्रोणमेघ प्रजासहित नीरोग। तब म ताको बुलाया अर कही-हे माम! तुम जस नीरोग हो तसा शीघ मोहि अर मेरी प्रजाको करो। तब राजा द्रोणमेघने जाकी सुगन्धतासे दशोदिशा सुगन्ध होय ता जलकर मोहि सींचा सो म चगा भया। अर ता जलकर मेरा राजलोक भी चगा अर नगर तथा देश चगा भया, सव रोग-निवत्त भए। सो हजारो रोगोकी करणहारी, अत्यन्त दुस्सह वायु, ममकी भेदनहारी ता जलसे जाती रही। तब मने द्रोणमेघको पूछा—यह जल कहाका ह ? जाकर सवरोगका विनाश होय। तब द्रोण-

मेघने कही—हे राजन ! मेरे विशिल्यानामा पुत्री सर्वविद्याविषै प्रवीण, महागुणवती । सो जब गर्भ विषै आई तब मेरे देशविषै अनेक व्याधि हुतीं, सो पुत्रीके गर्भविषै आवते ही सब रोग गए । पुत्री जिनशासनविषै प्रवीण है, भगवानकी पूजाविषै तत्पर है, सब कुटुम्बकी पूजनीक है । ताके स्नानका यह जल है । ताके शरीरकी सुगंधतासे जल महा सुगंध है, क्षणमात्रविषै सब रोगका विनाश करै है । ये वचन द्रोणमेघके सुनकर मैं अचिरजको प्राप्त भया । ताके नगरविषै जाय ताकी पुत्रीकी स्तुति करी । अर नगरीसे निकस सत्वरहित नामा मुनिको प्रणामकर पूछा—हे प्रभो ! द्रोणमेघकी पुत्री विशल्याका चरित्र कहो । तब चार ज्ञानके धारक मुनि महावात्सल्यके धरणहारे कहते भए—हे भरत ! महाविदेहक्षेत्रविषै स्वर्गसमान पुण्डरीक देश, तहां त्रिभुवनानन्द नामा नगर, तहां चक्रधर नामा चक्रवर्ती राजा राज्य करै । ताके पुत्री अनंगशरा, गुण ही हैं आभूषण जाके, स्त्रीनिविषै ता समान अद्भुत रूप औरका नाहीं । सो एक प्रतिष्ठितपुरका धनी राजा पुनर्वसु विद्याधर चक्रवर्तीका सामन्त, सो कन्याकूं देख कामबाणकर पीडित होय, विमानमें बैठाय लेय गया । सो चक्रवर्तीने क्रोधायमान होय किंकर भेजे सो तासूं युद्ध करते भए । ताका विमान चूर डारा । तब ताने व्याकुल होय कन्या आकाशतैं डारी सो शरदके चन्द्रमाकी ज्योति समान पुनर्वसुकी पर्ण लघुविद्याकर अटवीविषै आय पडी । सो अटवी दुष्ट जीवनिकर महा भयानक, जाका नाम श्वापद रौरव, जहां विद्याधरोंका भी प्रवेश नाहीं, वृक्षनिके समूहकर महा अंधकाररूप, नाना प्रकारकी बेलनिकर बेढे नानाप्रकारके ऊंचे वृक्षनिकी सघनतासे जहां सूर्यकी किरणका भी प्रवेश नाहीं, अर चीता, व्याघ्र, सिंह, अष्टापद, गैंडा, रीछ इत्यादि अनेक वनचर विचरै । अर नीची ऊंची विषम भूमि, जहां बडे बडे गर्त (गढे), सो यह चक्रवर्तीकी कन्या अनंगशरा बालिका अकेली ता बनमें महा भयंकर युक्त अति खेदखिन्न होती भई । नदीके तीर जाय दिशा अवलोकनकर माता पिताकूं चितार रुदन करती भई—हाय ! मैं चक्रवर्तीकी पुत्री, मेरा पिता इन्द्रसमान, ताके मैं अति लाडली, दैवयोगकर या अवस्थाकूं प्राप्त भई । अब कहा करूं ?

या बनका छोर नाहीं, यह बन देख दु ख उपजे। हाय पिता! महा पराक्रमी! सकल लोक प्रसिद्ध! मै या वनमें असहाय पडी। मेरी दया कौन करै? हाय माता! ऐसे महादु खकर मोहि गभमें राखी, अब काहेसे मेरी दया न करो। हाय परिवारके उत्तम मनुष्य हो! एक क्षणमात्र मोहि न छोडते सो अब क्यो तज दीनी। अर म होती ही क्यो न मर गई, काहेसे दु खकी भूमिका भई। चाही मत्यु भी न मिल, कहा करू? कहा जाऊ? म पापिनी कस तिष्ठू? यह स्वप्न ह कि साक्षात ह। या भाति चिरकाल विलाप कर महा विह्वल भई। ऐस विलाप किए जिनकू सुन महादुष्ट पशुका चित्त कोमल होय। यह दीनचित्त, क्षुधा तषासे दग्ध शाकके सागरमें मग्न, फल पत्रादिकसे कीनी ह आजीविका जाने, कमके योग ता वनमें कई शीतकाल पूण किए। कस ह शीतकाल? कमलनिके वनकी शोभा का जो सवस्व ताक हरणहारे, अर जिनने अनक ग्रीष्मके आताप सहे। कसे ह ग्रीष्म आताप? सूखे ह जलोके समूह, अर जले ह दावानलोसे अनेक वनवक्ष अर जर ह मरे ह अनक ज त जहा, अर जाने ता वनमे वर्षाकाल भी बहुत व्यतीत किए। ता समय जलधाराव अ धकारकर दब गई ह सयकी ज्योति, अर ताका शरीर वर्षाका धोया चित्रामके समान होय गया। कातिरहित दुबल, बिखरे केश, मलयक्त शरीर, लावण्यरहित ऐसा होय गया जसे सूयक प्रकाशकर च द्रमाकी कलाका प्रकाश क्षीण होय जाय। कथका वन फलनिकर नमीभूत वहा बठी पिताकी चितार या भातिके वचन कहकर रुदन कर कि म जो चक्रवर्तीके तो ज म पाया अर पूव ज मक पापकर बनविष एसी दु ख अवस्थाको प्राप्त भई। या भाति आसुओकी वर्षा कर चातुर्मासिक क्रिया। अर जे वक्षोसे टट फल सूख जाय तिनका भक्षण कर अर बेला तेला आदि अनेक उपवासनिकर क्षीण होय गया ह शरीर जाका। सो केवल फल अर जल कर पारणा करती भई। अर एक ही बार जल ताही समय फल। वह चक्रवर्तीकी पत्री पष्पनिकी सेजपर सोवती अर अपने केश भी जाको चुभते सो विषम भूमिपर खेदसहित शयन करती भई। अर पिताके अनेक गुणीजन राग करते, तिनके शब्द सुन प्रबोधकू पावती, सो अब स्याल आदि अनेक वनचरोके भयानक शब्दनिकरि रात्रि व्यतीत करती

भई। या भांति तीन हजार वर्ष तप किया। सूखे फल तथा सूखे पत्र अर पवित्र जल आहार किए अर महा वैराग्यको प्राप्त होय खान पानका त्यागकर धीरता धर सलेखणा मरण आरम्भा। एक सौ हाथ भूमि पावोसे पर न जाऊ–यह नियम धारे तिष्ठी! आयुमें छह दिन बाकी हुते। अर एक अरहदास नामा विद्याधर सुमेरु की वन्दना करके जावे था सो आय निकसा। सो चक्रवर्तीकी पुत्री को देख पिताके स्थानक ले जाना विचारा, सलेखणाके योगकर कन्याने मने किया।

तब अरहदास शीघ्र ही चक्रवर्तीपर जाय चक्रवर्तीको लेय कन्याप आया। सो जा समय चक्रवर्ती आया ता समय एक सर्प कन्याको भखे था। सो कन्याने पिताको देख अजगरको अभयदान दिवाया। अर आप समाधि धारणकर शरीर तज तीजे स्वर्ग गई। पिता पुत्रीकी यह अवस्था देखकर बाईस हजार पुत्रनिसहित वैराग्यको प्राप्त होय मुनि भया। कन्याने अजगरसे क्षमा कर अजगरको पीडा न होने दई सो ऐसी दृढता ताहीसू बन। अर वह पुनर्वसु विद्याधर अनगशराको देखता भया सो न पाई। तब खेद खिन्न होय द्रुमसेन मुनिके निकट मुनि होय महातप किया। सो स्वर्गमे देव होय महासुन्दर लक्ष्मण भया। अर वह अनगशरा चक्रवर्तीकी पुत्री स्वर्गलोकत चयकर द्रोणमेघके विशल्या भई। अर पुनर्वसुने ताके निमित्त निदान किया हुता सो अब लक्ष्मण याहि वरेगा। यह विशल्या या नगरविष, या देशविष तथा भरतक्षेत्रमें महागुणवती है। पूर्वभवके तपके प्रभावकर महा पवित्र है। ताके स्नानका यह जल है सो सकल विकारको हर है। याने उपसर्ग सहा, महा तप किया ताका फल है। याके स्नानके जलकर जो तेरे देशमें वायु विषम विकार उपजा हुता सो नाश भया। ये मुनिके वचन सुन भरतने मुनिसे पूछी–हे प्रभो! मेरे देशमें सब लोकोको रोगविकार कौन कारणसे उपजा। तब मुनिने कहा–गजपुर नगरत एक व्यापारी, महा धनवन्त विन्ध्य नामा, सो रासभ (गधा) ऊंट, भैंसा लादे अयोध्यामें आया। अर ग्यारह महीना अयोध्यामें रहा। ताके एक भैंसा सो बहुत बोझके लगनेसे घायल हुआ, तीव्र रोगके भारसे पीडित या नगरमें मूवा। सो अकामनिजराके योगकर अश्वकेतुनामा वायुकुमार देव भया।

जाका विद्यावत नाम। सो अवधिज्ञानसे पूर्वभवको चितारा कि पूर्वभवविषै मैं भैसा था, पीठ कट रही हुती, अर महा रोगोकर पीडित मार्गविषै कीचमे पडा हुता सो लोक मेरे सिरपर पांव देय देय गए। यह लोक महा निर्दई। अब मै देव भया सो मैं इनका निग्रह न करूं तो मैं देव काहेका? ऐसा विचार अयोध्या नगरविषै अर सुकौशल देशमे वायु रोग विस्तारा। सो समस्त रोग विशल्याके चरणोदकके प्रभावसे विलय गया। बलवानसे अधिक बलवान है। सो यह पूर्ण कथा मुनिने भरतसे कही, अर भरतने मोसे कही? सो मैं समस्त तुमको कही। विशल्याका स्नानजल शीघ्र ही मगावो, लक्ष्मणके जीवनेका अन्य यत्न नाहीं। या भांति विद्याधरने श्रीरामसे कह्या सो सुनके प्रसन्न भये। गौतम स्वामी कहै है कि हे श्रेणिक! जे पुण्याधिकारी हैं तिनको पुण्यके उदय करि अनेक उपाय मिलै हैं। अहो महतजन हो! तिन्हें आपदाविषै अनेक उपाय सिद्ध होय हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै विशल्याका पूर्वभव वर्णनकरनेवाला चौसठवां पर्व पूर्ण भया॥ ६४॥

———

अथानन्तर ये विद्याधरके वचन सुनकर रामने समस्त विद्याधरनिसहित ताकी अति प्रशंसा करी। अर हनुमान भामण्डल तथा अंगद इनकूं मंत्रकर अयोध्याकी तरफ विदा किए। ये क्षणमात्रमे गए जहां महाप्रतापी भरत विराजै है। सो भरत शयन करते हुते, तिनकूं रागकर जगावनेका उद्यम किया सो भरत जागते भए। तब ये मिले। सीताका हरण, रावणसे युद्ध, अर लक्ष्मणके शक्तिका लगना ये समाचार सुन भरतको शोक अर क्रोध उपजा। अर ताहीं समय युद्ध भेरी दिवाई सो सम्पूर्ण अयोध्याके लोक व्याकुल भए। अर विचार करते भए यह राजमंदिरमे कहा कलकलाट शब्द है? आधीरातके समय कहा अतिवीर्यका पुत्र आय पड्या? कोईयक सुभट अपनी स्त्रीसहित सोता हुता, ताहि तजकर अपने वक्तर पहिरे, अर खड्ग हाथमें सम्हारा। अर कोईएक मृगननी भोरे बालककी

गोद लेय अर कुचोपर हाथ धर दिशावलोकन करती भई। अर कोईएक स्त्री निद्रारहित भई सोते कतको जगावती भई। अर कोईएक भरतजीका सेवक जानकर अपनी स्त्रीको कहता भया—हे प्रिया! कहा सोव ह? आज अयोध्यामे कछु भला नाहीं, राजमदिरमें प्रकाश होय रह्या ह। अर रथ, हाथी घोडे, प्यादे, राजद्वारकी तरफ जाय ह। जो सयाने मनुष्य हुते ते सब सावधान होय उठ खड हुए। अर कईएक पुरुष स्त्रीसे कहते भए—ये सुवणकलश अर मणि रत्नोके पिटारे तहखानोमें, अर सुन्दर वस्त्रोकी पेटी भूमिगहमें धरो और भी द्रव्य ठिकाने धरो। अर शत्रुघन भाई निद्रा तज, हाथी चढ मन्त्रियो सहित शस्त्रधारक योधावोको लेय राजद्वार आया। और भी अनेक राजा राजद्वार आए। सो भरत सबकू युद्धका आदेश देय उद्यमी भया। तब भामण्डल हनुमान अगद भरतकू नमस्कार कर कहते भए—हे देव! लकापुरी यहासे दूर ह, अर बीच समुद्र ह। तब भरतने कही कहा करना? तब उन्होने विशल्याका वत्तात कहा—हे प्रभो! राजा द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या ताके स्नानका उदक देवहु, शीघ्र ही कपा करहु, जो हम ले जाय। सूयका उदय भए लक्ष्मणका जीवना कठिन ह। तब भरतने कही ताके स्नानका जल क्या, वाही ले जावो। मोहि मुनिने कही हुती यह विशल्या लक्ष्मणकी स्त्री होयगी। तब द्रोणमेघके निकट एक निज मनुष्य ताही समय पठाया। सो द्रोणमेघने लक्ष्मणके शक्ति लगी सुन अति कोप किया अर युद्धकू उद्यमी भया। अर ताके पुत्र मन्त्रिनि सहित युद्धकू उद्यमी भए। तब भरत अर माता केकईने आप द्रोणमेघको जायकर ताको समझाय विशल्याको पठावना ठहराया। तब भामण्डल, हनुमान, अगद विशल्याकू विमानमें बठाय, एक हजार अधिक राजाकी कन्या साथ लेय रामकटकमें आए। एक क्षणमात्रमें सग्रामभूमि आय पहुँचे। विमानसे कन्या उतरी। ऊपर चमर ढुर ह। कन्याके कमल सारिखे नेत्र। सो हाथी, घोडे बडे बडे योधानिको देखती भई। ज्यो ज्यो विशल्या कटकमें प्रवेश कर त्यो त्यो लक्ष्मणके शरीरमें साता होती भई। वह शक्ति देवरूपिणी लक्ष्मणके अग से निकसी, ज्योतिके समूहसे युक्त, मानो दुष्ट स्त्री घरसे निकसी। दवीप्यमान अग्निके स्फुलिगो

के समूह आकाशमें उछलते। सो वह शक्ति हनुमानने पकडी। दिव्य स्त्रीका रूपधर तब हनुमानको हाथ जोड कहती भई—हे नाथ! प्रसन्न होवो, मोहि छाडो। मेरा अपराध नाहीं। हमारी यही रीति है कि हमको जो साधे हम ताके वशीभूत हैं। मैं अमोघविजिया नामा शक्ति विद्या तीन लोकविषै प्रसिद्ध हूं। सो कलाशपर्वतविषै बालमुनि प्रतिमा जोग धरि तिष्ठ हुते। अर रावणने भगवानके चैत्यालयमें गान किया। अर अपने हाथनिकी नस बजाई, अर जिनेन्द्रके चरित्र गाए। तब धरणेंद्रका आसन कम्पायमान भया। सो धरणेन्द्र परमहर्ष धर आए। रावणसूं अति प्रसन्न होय मोहि सौंपी। रावण याचनाविषै कायर मोहि न इच्छै। तब धरणेन्द्रने हठकर दई। सो मैं महाविकरालस्वरूप जाके लागू ताके प्राण हरू, कोई मोहि निवारवे समर्थ नाही। एक या विशल्या सुन्दरीको टार, मैं देवोकी जीतनहारी, सो मैं याके दर्शनहीत भाग जाऊं। याके प्रभावकर मैं शक्तिरहित भई। तपका ऐसा प्रभाव है जो चाहे तो सूर्यको शीतल करै, अर चन्द्रमाको उष्ण करै। याने पूर्व जन्मविषै अति उग्र तप किए। सिरीसनाके फूल समान याका सुकुमार शरीर सो यानें तपविषै लगाया। ऐसा उग्र तप किया जो मुनि-हूंत न बनै। मेरे मनमें संसारविषै यही भास है—जो ऐसे तप प्राणी करै। वर्षा, शीतल, आताप, अर महा दुस्सह पवन, तिनसे यह सुमेरुकी चूलिका समान न कांपी। धन्य रूप याका, धन्य याका साहस, धन्य याका धर्मविषै दृढ मन। याकासा तप और स्त्रीजन करनें समर्थ नाहीं। सर्वथा जिनेन्द्रचन्द्रके मतके अनुसार जे तपको धारण करै हैं ते तीनलोकको जीतै हैं। अथवा या बातका कहा आश्चर्य? जो तप कर मोक्ष पाइए ताकर और कहा कठिन? मैं पराए आधीन जो मोहि चलावै ताके शत्रुका मैं नाश करू। सो याने मोहि जीती। अब मैं अपने स्थानक जाऊं हूं। सो तुम तो मेरा अपराध क्षमा करहु।

या भांति शक्ति देवीने कहा तब तत्वका जाननहारा हनुमान ताहि विदाकर अपनी सेनामें आया। अर द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या अति लज्जाकी भरी, रामके चरणारविंदकू नमस्कारकर हाथ जोड ठाढी भई। विद्याधर लोक प्रशंसा करते भए, अर नमस्कार करते भए, अर आशीर्वाद देते भए। जैसे

इन्द्रके समीप शची जाय तिष्ठ तस वह विशल्या सुलक्षणा, महा भाग्यवती, सखियोके वचनसे लक्ष्मण के समीप तिष्ठी। वह नव यौवन, जाके मगीकेसे नेत्र, पूणमासीके चन्द्रमा समान मुख जाका, अर महा अनुरागकी भरी, उदार मन। पथ्वीविष सुखसे सूते जो लक्ष्मण जिनको एकातविष स्पश कर अर अपने सुकमार करकमल सुन्दर तिनकर पतिके पाव पलोटने लगीं। अर मलयागिरि चन्दनसे पतिका सव अग लिप्त किया। अर याकी लार हजार कन्या आई थीं—तिनने याके करसे चन्दन लेय विद्याधर- निके शरीर छाटे। सो सब घायल आछे भए। अर इन्द्रजीत कुम्भकरण मेघनाद घायल भए हुते सो उनको हू चन्दनके लेपसे नीके किये। सो परम आनन्दको प्राप्त भए। जसे कमरोगरहित सिद्धपरमेष्ठी परम आनन्दको पाव। और भी जे योधा घायल भए हुते, हाथी, घोडे, पियादे सो सब नीके भए, घावो की शल्य जाती रही। सब कटक अच्छा भया। अर लक्ष्मण जसे सूता जाग तसे वीणके नाद सुन अति प्रसन्न भए। अर लक्ष्मण मोहशय्या छोडते भए। स्वास लिए, आख उघडी। उठकर क्रोधके भरे दशो दिशा निरखि ऐसे वचन कहते भए—कहा गया रावण, कहा गया वो रावण ? ये वचन सुन राम अति हर्षित भए। फूल गए ह नत्र कमल तिनके, महा आनन्दके भर बडे भाई, रोमाच होय गया ह शरीरमें जिनके, अर अपनी भुजानिकर भाईसे मिलते भए, अर कहते भए—हे भाई! वह पापी तोहि शक्ति से अचेत कर आपको कताथ मान घर गया। अर या राजकन्याके प्रसादत तू नीका भया। अर जामवत को आदि देय सब विद्याधरनिने शक्तिके लागवे, ताहि निकसवे पर्यंत सव वृत्तात कहा। अर लक्ष्मणने विशल्या अनुरागकी दष्टिकरि देखी। कसी ह विशल्या ? श्वेत श्याम आरक्त तीन वर्ण कमल तिन समान नेत्र जाके, अर शरदकी पूर्णिमाके चन्द्रसमान ह मुख जाका, अर कोमल शरीर, क्षीण कटि, दिग्गजके कुम्भस्थल समान स्तन ह जाके, नव यौवन, मानो साक्षात मूर्तिवन्ती कामकी क्रीडा ही ह, मानो तीन लोकको शोभा एकत्रकर नामकमने याहि रचा ह। ताहि लक्ष्मण देख आश्चयको प्राप्त होय मनमे विचारता भया, यह लक्ष्मी ह, अक इन्द्रकी इन्द्राणी ह, अथवा चन्द्रकी काति ह। यह

विचार कर ह । अर विशल्याकी लारकी स्त्री कहती भई—हे स्वामी ! तिहारा यासू विवाहका उत्सव हम चाह ह । तब लक्ष्मण मुलके, अर विशल्याका पाणिग्रहण किया, अर विशल्याकी सब जगतमे कीर्ति विस्तरी । या भाति जे उत्तम पुरुष ह अर पूवजन्ममे महा शुभ चेष्टा करी ह तिनको मनोग्य वस्तुका सबध होय ह । अर चाद सूयकीसो उनकी काति होय ह ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष विशल्याका समागम वणन करनेवाला पसठवा पव पूण भया ॥ ६५ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणका विशल्यासू विवाह, अर शक्तिका निकासना, यह सब समाचार रावणने हलकारनिके मुख सुने । अर सुनकर मुलकि कर मदबुद्धि कर कहता भया—शक्ति निकसी तो कहा ? अर विशल्या ब्याहा तो कहा ? तब मारीच आदि मन्त्री मन्त्रमे प्रवीण कहते भए—हे देव ! तिहारे कल्याण की बात यथाथ कहेंगे। तुम कोप करो अथवा प्रसन्न होवो । सिंहवाहनी, गरुडवाहनी विद्या राम लक्ष्मणको यत्न विना सिद्ध भई , सो तुम देखी। अर तिहारे दोऊ पुत्र अर भाई कुम्भकरणको जिन्होने बाध लिए सो तुम देख । अर तिहारी दिव्य शक्ति सो निरथक भई । तिहारे शत्रु महाप्रबल ह । उन कर जो कदाचित तुम जीते भी तो भाता पुत्रोका निश्चय नाश ह । तात ऐसा जानकर हम पर कपा करो । हमारी विनती अब तक आपने कदापि भग न करी । तात सीताको तजो, अर जो तिहारे धम बुद्धि सदा रही ह सो राखहु । सव लोकक कुशल होय । राघवसे सधि करो । यह बात करनेमे दोष नाहीं । महागुण ह । तुम ही कर सव लोकविष मर्यादा चल ह । धर्मकी उत्पत्ति तुमसे ह, जसे समुद्र त रत्ननिकी उत्पत्ति होय । ऐसा कहकर बडे मत्री हाथ जोड नमस्कार करते भए, अर हाथ जोड विनती करते भए । सबसे यह मत्र किया जो एक सामत दूतविद्याविष प्रवीण, सधिके अर्थि रामप पठाइये । सो एकबुद्धिसे शुक्रसमान महा तेजस्वी, प्रतापवान, मिष्टवादी ताहि बुलाया । सो मन्त्रिनिने

महासुन्दर महा अमृत औषधि समान वचन कहे। परन्तु रावणने नेत्रकी समस्या कर मन्त्रिनिका अर्थ दूषित कर डाला। जैसे कोई विषसे महा औषधिको विषरूप कर डारे। तैसे रावण सन्धिकी बात विग्रह रूप जताई। सो दूत स्वामीको नमस्कारकर जायवेकू उद्यमी भया। कैसा है दूत? बुद्धिके गर्वकर लोकको गोपद समान निरखै है। आकाशके मार्ग जाता रामके कटकको भयानक देख दूतको भय न उपजा। याके वादित्र सुन वानरवंशियोकी सेना क्षोभको प्राप्त भई। रावणके आगमकी शंका करी। जब नजीक आया तब जानी यह रावण नाहीं कोई और पुरुष है। तब वानरवंशियोकी सेनाको विश्वास उपजा। दूत द्वारे आय पहुँचा। तब द्वारपालने भामण्डलसो कही। भामण्डलने रामसे बिनती कर कहा। केतेक लोकनि सहित निकट बुलाया अर ताकी सेना कटकमें उतरी।

रामसे नमस्कार कर दूत वचन कहता भया—हे रघुचन्द्र! मेरे वचननिकर मेरे स्वामीने तुमको कुछ कहा है सो चित्त लगाय सुनहु—युद्धकर कछु प्रयोजन नाही। आगे युद्धके अभिमानी बहुत नाशको प्राप्त भए। तातै प्रीति ही योग्य है। युद्धकर लोकनिका क्षय होय है। अर महा दोष उपजै है, अपवाद होय है। आगे संग्रामकी रुचिकर राजा दुर्वतक, शंख, धवलांग, असुर, सम्वरादि अनेक राजा नाशको प्राप्त भए। तातै मेरे सहित तुमको प्रीति ही योग्य है। और जैसे सिंह महा पर्वतकी गुफाको पायकर सुखी होय है तैसे अपने मिलापकर सुख होय है। मैं रावण जगत प्रसिद्ध कहा तुमने न सुना। जाने इन्द्रसे राजा बन्दीगृहविषै किए। जैसे कोई स्त्रीनिको अर सामान्य लोकोको पकडे तैसे इन्द्र पकडा। अर जाकी आज्ञा सुर असुरनिकर न रोकी जाय। न पातालविषै, न जलविषै, न आकाशविषै, आज्ञाको कोई न रोक सके। नाना प्रकारके अनेक युद्धोका जीतनहारा, वीर लक्ष्मी जाको धरै, ऐसा मैं सो तुमको सागरांत पृथ्वी विद्याधरोसे मंडित दूं हूं। अर लंकाके दोय भागकर बांट दूं हूं। भावार्थ समस्त राज्य अर आधी लंका दूं हूं। तुम मेरा भाई, अर दोनो पुत्र मोपै पठावो, अर सीता मोहि देवो जाकर सब कुशल होय। अर जो तुम यो न करोगे तो जो मेरे पुत्र भाई बन्धनमें है तिनको तो

बलात्कार छटाय लूगा अर तुमको कुशल नाही। तब राम बोले मोहि राज्यसे प्रयोजन नाहीं, अर और स्त्रियोसे प्रयोजन नाहीं। सीता हमारे पठावो, हम तिहारे दोऊ पुत्र अर भाईको पठावें। अर तिहारी लका तिहारे ही रहो। अर समस्त राज्य तुम ही करो। मै सीतासहित दुष्ट जीवनि सयुक्त जो वन ताविष सुखसू विचरू गा। हे दूत ! तू लकाक धनीसे जाय कह–याही बातमे तिहारा कल्याण ह, और भाति नाही। ऐसे श्रीरामके सब पूज्य वचन, सुख साताकर सयुक्त, तिनको सुनकर दूत कहता भया–हे नपति ! तुम राज काज विष समझते नाहीं, म तुमकू बहुरि कल्याणकी बात कहू हू। निभय होय समद्र उलघ आए हो सो नीक न करी। अर यह जानकीकी आशा तुमको भली नाही। यदि लकेश्वर कोप भया तब जानकीकी कहा बात ? तिहारा जीवना भी कठिन ह। अर राजनीति-विष ऐसा कहा ह जे बुद्धिवान ह तिनको निरतर अपने शरीरकी रक्षा करनी, स्त्री अर धन इनपर दष्टि न धरनी। अर जो गरुडेन्द्रने सिहबाहन, गरुडवाहन तुमप भेजे तो कहा ? अर तुम छल छिद्र कर मेरे पुत्र अर सहोदर बाधे तो कहा ? जोलग मै जीवू हू तोलग इन बातोका गव तुमको वथा ह। जो तुम युद्ध करोग तो न जानकीका न तिहारा जीवन। तात दोऊ मत खोबहु, सीताका हठ छाडहु। अर रावण यह कही ह जे बड बड राजा विद्याधर इन्द्रतुल्य पराक्रम तिनके, सो समस्त शास्त्रविष प्रवीण, अनक युद्धनिके जीतनहार, ते मै नाशको प्राप्त किए ह। तिनके कलाशपवतके शिखर हाडनके समूह देखो। जब ऐसा दूतन कहा–तब भामण्डल क्रोधायमान भया, ज्वाला समान महा विकराल मुख, ताकी ज्योतिसे प्रकाश किया ह आकाशविष जान। भामण्डलने कही–रे पापी दूत ! स्याल ! चातुयता रहित। दुबुद्धि ! वथा शकारहित कहा भाष ह ? सीताकी कहा वार्ता ? सीता तो राम लेहींगे। यदि श्रीराम कोपे तब रावण राक्षस कुचेष्टि पश कहा ? ऐसा कह ताके मारवेकू खडग सम्हारचा। तब लक्ष्मणने हाथ पकड अर मने किया। कसे ह लक्ष्मण ? नीति ही ह नेत्र जिनके, भामण्डलके क्रोधकर रक्त नेत्र होय गए, वक्र होय गये, जसी साझकी लालकी होय तसा लाल वदन होय गया। तब

मन्त्रिनिने योग्य उपदेश कहे, समताकू प्राप्त किया। जैसे विषका भरा सर्प मन्त्रसे वश कीजिए है। हे नरेन्द्र! क्रोध तजो, यह दीन तिहारे योग्य नाही। यह तो पराया किंकर है जो वह कहावै सो कहै। याके मारवेकर कहा? स्त्री, बालक, दूत, पशु, पक्षी, वृद्ध, रोगी, सोता, आयुधरहित, शरणागत, तपस्वी, गाय ये सर्वथा अबध्य हैं। जैसे सिंह कारी घटा समान गाजते जे गज तिनका मर्दन करनहारा सो मींडकनिपर कोप न करै तैसे तुमसे नपति दूतपर कोप न करैं। यह तो वाके शब्दानुसार है। जैसे छायापुरुष है (छायापुरुषकी अनुगामिनी है) अर सूवाको ज्यों पढावै तैसे पढै, अर यन्त्रको ज्यों बजावै त्यों बजै, तैसे यह दीन वह बकावै त्यों बकै। ऐसे शब्द लक्ष्मणने कहे तब सीताका भाई भामण्डल शांतचित्त भया।

श्रीराम दूतको प्रकट कहते भए—रे मूढ दूत! तू शीघ्र ही जा अर रावणको ऐसे कहियो—तू ऐसे मूढ मन्त्रियोंका बहकाया, खोटे उपायकर आपा ठगावैगा। तू अपनी बुद्धि कर विचार, किसी कुबुद्धिको पूछ मत, सीताका प्रसंग तज, सर्व पृथ्वीका इन्द्र हो पुष्पक विमानमें बैठा जैसे भ्रमै था तैसे विभव सहित भ्रम। यह मिथ्या हठ छोड दे, क्षुद्रनिकी बात मत सुनहु, करने योग्य कार्य विषैं चित्त धर जो सुखकी प्राप्ति होय। ये वचन कह श्रीराम तो चुप होय रहे अर और पुरुषनिने दूतको बहुरि बात न करने दई निकाल दिया। दूत रामके अनुचरनिने तीक्ष्ण बाणरूप वचननिकर बींधा अर अति निरादर किया। तब रावणके निकट गया, मनविषैं पीडा थका। सो जायकर रावणसूं कहता भया—हे नाथ! मैं तिहारे आदेश प्रमाण रामसों कही—जो या पृथ्वी नाना देशनिकर पूर्ण, समुद्रांत महा रत्ननिकी भरी, विद्याधरोंके समस्त पट्टनसहित मैं तुमको दूं हूं, अर बडे बडे हाथी रथ तुरंग दूं हूं, अर यह पुष्पक विमान लेवहु जो देवोंसे न निवारा जाय याविषैं बैठ विचरो। अर तीन हजार कन्या ये अपने परवारकी तुमको परणाय दूं। अर सिंहासन सूर्य समान अर चन्द्रमा समान छत्र वे लेहु, अर निःकंटक राज करो, एती बात मुझे प्रमाण है जो तिहारी आज्ञाकर सीता मोहि इच्छे। यह धन अर धरा लेवो, अर मैं अल्प

विभूति राखि वतहीके सिंहासन पर रहूंगा। विचक्षण हो तो एक वचन मेरा मानहु—सीता मोहि देवहु। ए वचन म बार बार कहे सो रघुनन्दन सीताका हठ न छोडे। केवल वाके सीताका अनुराग ह और वस्तुको इच्छा नाही। हे देव ! जस मुनि महा शांतचित्त अठाईस मूलगुणोकी क्रिया न तजे, वह क्रिया मुनिव्रतका मूल ह तस राम सीताकूं न तज। सीता ही रामके सर्वस्व ह। कसी ह सीता ? त्रलोक्यविष ऐसी सुन्दरी नाहीं। अर रामने तुमसूं यह कही ह कि–हे दशानन ! ऐसे सर्वलोकनिंद्य वचन तमसे पुरुषनिकूं कहना योग्य नाहीं। ऐसे वचन पापी कह ह। उनकी जीभके सौ टूक क्यो न होय ? मेरे या सीता विना इन्द्रके भोगनिकर काय नाहीं। यह सब पृथ्वी तू भोग, म बनवास ही करूंगा। अर तू परदारा हरकर मरवेको उद्यमी भया ह तो म अपनी स्त्रीके अर्थ क्यो न मारूंगा ? अर मुझे तीन हजार कन्या देह, सो मेरे अर्थ नाहीं। म वनके फल अर पत्रादिक ही भोजन करूंगा, अर सीता सहित वनमे विहार करूंगा। अर कपिध्वजोका स्वामी सुग्रीव ताने हसकर मोहि कही—जो कहा तेरा स्वामी आग्रहरूप ग्रहके वश भया ह ? कोऊ वायुका विकार उपजा ह जो ऐसी विपरीति वार्त्ता रक हूवा बक ह। अर कहा लंकामे काऊ वद्य नाहीं, अक मंत्रवादी नाहीं, वायके तलादिककर यत्न क्यो न कर ? नातर संग्रामविष लक्ष्मण सवरोग निवारेगा। भावार्थ—मारेगा।

तब यह वचन सुन म क्रोधरूप अग्निकर प्रज्वलित भया अर सुग्रीवसूं कही—रे वानरध्वज ! तू ऐसे बक ह जसे गजके लार स्वान बक। तू रामके गर्वकर मूवा चाह ह जो चक्रवर्तीकूं निन्दाके वचन कह है। सो मेरे अर सुग्रीवके बहुत बात भई। अर रामसो कहा—हे राम ! तुम महारणविष रावणका पराक्रम न देखा। कोऊ तिहारे पुण्यके योग कर वह वीर विकराल क्षमामें आया ह। वह कलाशका उठावनहारा, तीन जगतमे प्रसिद्ध प्रतापी तुमसे हित किया चाह ह, अर राज्य देय ह, ता समान और कहा ? तुम अपनी भुजानिकर दशमुखरूपसमुद्रकूं कस तरौगे ? कसा ह दशमुखरूपसमुद्र ? प्रचण्ड सेना, सोई भई तरंगनिकी माला, तिनकर पूर्ण ह, अर शस्त्ररूप जलचरनिके समूहकर भरा ह। ह राम ! तुम कसे रावणरूप भयंकर

वनविषै प्रवेश करोगे ? कैसा है रावणरूप वन ? दुर्गम कहिए जाविषै प्रवेश करना कठिन है। अर व्याल कहिए दुष्ट गज, तेई भए नाग तिनकर पूर्ण है। अर सेनारूप वृक्षनिके समूह कर महा विषम है। हे राम ! जैसे कमलपत्रकी पवनकर सुमेरु न डिगै, अर सूर्यकी किरण कर समुद्र न सूकै, अर बलद के सींगोसे धरती न उठाई जाय, तैसे तुम सारिखे नरनिकर नरपति दशानन जीता न जाय। ऐसे प्रचंड वचन मैं कहे तब भामण्डलने महाक्रोधरूप होय मोहि मारिवेकूं खडग काढ्या। तब लक्ष्मणने मनै किया जो दूतकूं मारना न्यायमें नहीं कह्या। स्यालपर सिंह कोप न करै, जो सिंह गजेन्द्रके कुम्भस्थल अपने नखनिसे विदारै। तात हे भामण्डल ! प्रसन्न होहु, क्रोध तजहु। जे शूरवीर नृपति हैं, महा तेजस्वी, ते दीननिपर प्रहार न करैं। जो भयकर कम्पायमान होय ताहि न हनैं, श्रमण कहिए मुनि, अर ब्राह्मण कहिए व्रतधारी गृहस्थी, अर शून्य कहिए सूना, अर स्त्री, बालक, वृद्ध, पशु, पक्षी, दूत ये अबध्य हैं। इनको शूरवीर सर्वथा न हनैं। इत्यादि वचननिके समूहकर लक्ष्मण महापंडित ताने समझाय भामण्डलकूं प्रसन्न किया। अर कपिध्वजनिके कुमार महाक्रूर तिन वज्र समान वचननिकर मोहि बींध्या। तब मैं उनके असार वचन सुन, आकाशमें गमनकर, आयु कर्मके योगसे आपके निकट आया हूं। हे देव ! जो लक्ष्मण न होय तो आज मेरा मरण ही होता। जो शत्रुनिके अर मेरे विवाद भया सो मैं सब आपसूं कह्या, मैं कछु शंका न राखी ! अब आपके मनमें जो होय सो करो, हम सारिखे किंकर तो वचन कर हैं जो कहो सो करैं। या भांति दूत दशमुखसे कहता भया। यह कथा गौतम गणधर श्रेणिकसे कहै हैं—हे श्रेणिक ! जो अनेक शास्त्रनिके समूह जाने, अर अनेक नयविषै प्रवीण होय, अर जाके मंत्री भी निपुण होय, अर सूर्य सारिखा तेजस्वी होय तथापि मोहरूप मेघपटलकर आच्छादित भया प्रकाश रहित होय है। यह मोह महा अज्ञानका मूल विवेकियोंको तजना योग्य है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै रावण के दूतका आगमन बहुरि पाछा रावण पास गमन वर्णन करनेवाला छियासठवां पर्व पूर्ण भया ॥ ६६ ॥

अथानन्तर लंकेश्वर अपने दूतके वचन सुन, क्षण एक मन्त्रके ज्ञाता मन्त्रियोसे मन्त्रकर कपोलपर हाथ धर, अधोमुख होय कछुएक चितारूप तिष्ठा। अपने मनमें विचार है जो शत्रुकू युद्धविषै जीतू हू तो भाता पुत्रनिकी अकुशल दीखै है। अर जो कदाचित वैरिनिके कटकमें मैं रतिहावकर कुमार-निकू ले आऊ तो या शूरतामें न्यूनता है। रतिहाव क्षत्रियोके योग्य नाहीं। कहा करू ? कैसे मोहि सुख होय ? यह विचार करते रावणकू यह बुद्धि उपजी जो मैं बहुरूपिणी विद्या साधू। कैसी है बहु रूपिणी ? जो कदाचित देव युद्ध करे तो भी न जीती जाय। ऐसा विचारकर सब सेवकनिकू आज्ञा करी—श्रीशांतिनाथके मन्दिरमें समीचीन तोरणादिकनिकर अति शोभा करहु। सो सब चैत्यालयनिमें विशेष पूजा करहु। सब भार पूजा प्रभावनाका मंदोदरीके सिरपर धरचा। गौतम गणधर कहै है—हे श्रेणिक ! वह श्रीमुनिसुव्रतनाथ बीसमा तीर्थंकरका समय, ता समय या भरतक्षेत्रविषै सब ठौर जिनमन्दिर हुते। यह पृथ्वी जिनमंदिरनिकर मंडित हुती। चतुरविध संघकी विशेष प्रवृत्ति, राजा, श्रेष्ठि, ग्रामपति अर प्रजाकेलोग सकल जैनी हुते। सो महारमणीक जिनमन्दिर रचते। जिनमन्दिर जिनशासनके भक्त जो देव तिनसे शोभायमान। वे देव धर्मकी रक्षामें प्रवीण, शुभकार्यके करणहारे। ता समय पृथ्वी भव्य जीवनिकरि भरी ऐसी सोहती मानो स्वर्गविमान ही है। ठौर २ पूजा, ठौर २ प्रभावना, ठौर २ दान। हे मगधाधिपति ! पर्वत पर्वतविषै, गाव गावविषै, नगर नगरविषै, वन २ विषै, मन्दिर २ विषै, जिन-मंदिर हुते। महा शोभाकर संयुक्त, शरदके पूनोंकी चन्द्रमासमान उज्ज्वल, गीतोंकी ध्वनिकर मनोहर, नानाप्रकारके वादित्रनिके शब्दकर मानो समुद्र गाजै है। अर तीनों संध्या वंदनाकू लोग आवै। सो साधुवोंके संगसे पूर्ण, नानाप्रकारके आश्चर्यकर संयुक्त, नानाप्रकारके चित्रामको धरें, अगर चंदनका धूप अर पुष्पनिकी सुगंधताकर महा सुगंधमई महा विभूतिकरि युक्त, नानाप्रकारकर शोभित, महा विस्तीर्ण, महा उतंग, महा ध्वजानिकर विराजित, तिनमें रत्नमई तथा स्वर्णमई पंचवर्णकी प्रतिमा विराजै। विद्याधरनिके स्थानविषै अति सुन्दर जिनमंदिरनिके शिखर तिनकर अति शोभा होय रही

६३४

है। ता समय नाना प्रकारके रत्नमई उपवनादिसे शोभित जे जिनभवन तिनकर यह जगत व्याप्त। अर इन्द्रके नगर समान लंकाका अंतर बाहिर जिनेन्द्रके मंदिरनिकर मनोग्य था। सो रावणने विशेष शोभा कराई। अर आप रावण, अठारह हजार राणी, तेई भई कमलनिके वन, तिनको प्रफुल्लित कर्ता वर्षाके मेघ समान है स्वरूप जाका, सो महा नागसमान है भुजा जाकी, पूणमासीके चन्द्रमा समान बदन, सुन्दर केतकीके फूल समान लाल होठ, विस्तीर्ण नेत्र, स्त्रीनिका मन हरणहारा लक्ष्मण समान श्याम सुन्दर, दिव्यरूपका धरणहारा, सो अपने मंदिरनिविषै तथा सब क्षेत्रविषै जिनमंदिरनिकीशोभा करावता भया। कैसा है रावणका घर ? लग रहे हैं लोगनिके नेत्र जहां, अर जिनमंदिरनिकी पंक्तिकर मंडित, नानाप्रकारके रत्नमई मंदिरके मध्य उतंग श्रीशांतिनाथका चैत्यालय, जहां भगवान शांतिनाथजिनकी प्रतिमा विराजै। जे भव्य जीव हैं तें सकल लोकचरित्रको असार अशास्वता जानकर धर्मविषै बुद्धि धर, जिनमंदिरनिकी महिमा करैं। कैसे हैं जिनमंदिर ? जगतकर वंदनीक हैं, अर इन्द्रके मुकुटके शिखरविषै लगे जे रत्न तिनकी ज्योतिको अपने चरणनिके नखोंकी ज्योतिकर बढावनहारे हैं। धन पावनेका यही फल जो धर्म करिए सो गृहस्थका धर्म दान पूजारूप, अर यतिका धर्म शांतभावरूप। या जगतविषै यह जिनधर्म मनवांछित फलका देनहार है। जैसे सूर्यके प्रकाशकर नेत्रनिके धारक पदार्थनिका अवलोकन करैं हैं तैसे जिनधर्मके प्रकाशकर भव्यजीव निज भावका अवलोकन करैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै श्रीशांतिनाथके चैत्यालयका वर्णन करनेवाला सरसठवां पर्व पूर्ण भया।। ६७।।

अथानन्तर फाल्गुण सुदी अष्टमीसूं लेय पूर्णमासी पर्यंत सिद्धचक्रका व्रत है, जाहि अष्टाह्निका कहै हैं। सो इन आठ दिननिमें लंकाके लोग अर लशकरके लोग नियम ग्रहणको उद्यमी भए। सब सेनाके

उत्तम लोक मनमें यह धारणा करते भए जो यह आठ दिन धर्मके हैं सो इन दिननिमें न युद्ध करें, न और आरम्भ करें, यथाशक्ति कल्याणके अर्थ भगवानकी पूजा करेंगे, अर उपवासादि नियम करेंगे। इन दिननि विषै देव भी पूजा प्रभावनाविषै तत्पर होय हैं। क्षीरसागरके जे सुवर्णके कलश जलकर भरे तिनकर देव भगवानका अभिषेक करै हैं। कैसा है जल ? सत्पुरुषनिके यशसमान उज्ज्वल। अरु और भी जे मनुष्यादिक हैं तिनकूं भी अपनी शक्तिप्रमाण पूजा अभिषेक करना। इन्द्रादिक देव नन्दीश्वर द्वीप जायकर जिनेश्वरका अर्चन करै हैं, तो कहा ये मनुष्य अपनी शक्तिप्रमाण यहांके चैत्यालयनिका पूजन न करें ? करें ही करें। देव स्वर्णरत्ननिके कलशनिकरि अभिषेक करै हैं अर मनुष्य अपनी सम्पदा प्रमाण करें। महा निर्धन मनुष्य होय तो पलाशपत्रनिके पुटहीसे अभिषेक करें। देव रत्न स्वर्णके कमलनिसे पूजा करै हैं, निर्धन मनुष्य चित्तही रूप कमलनिसे पूजा करै हैं। लंकाके लोक यह विचार कर भगवानके चैत्यालयनिकूं उत्साहसहित ध्वजा पताकादिकर शोभित करते भए। वस्त्र स्वर्ण रत्नादि कर अति शोभा करी। रत्ननिकी रज अर कनकरज तिनके मंडल मांडे, अर देवालयनिके द्वार अति सिंगारे, अर मणि सुवर्णके कलश कमलनिसे ढके दधि दुग्ध घृतादिसे पूर्ण, मोतियोंकी माला हैं कंठमें जिनके, रत्ननिकी कांतिकर शोभित जिनबिंबोंके अभिषेकके अर्थ भक्तिवंत लोक लाये। जहां भोगी पुरुषोंके घरमें सैकड़ो हजारों मणिसुवर्णोंके कलश हैं, नन्दनवनके पुष्प, अर लंकाके वननिके नानाप्रकार के पुष्प कर्णिकार अतिमुक्त कदम्ब सहकार चम्पक पारिजात मन्दार जिनकी सुगन्धताकर भ्रमरनिके समूह गुंजार करै हैं, अर मणि सुवर्णादिकके कमल तिनकर पूजा करते भए। अर ढोल, मृदंग, ताल, शंख इत्यादि अनेक वादित्रनिके नाद होत भए। लंकापुरके निवासी वैर तज आनन्दरूप होय आठ दिनमें भगवानकी अति महिमाकर पूजा करते भए। जैसैं नंदीश्वर द्वीपविषै देव पूजाके उद्यमी होय तैसे लंका के लोक लंकाविषै पूजाके उद्यमी भए। अर रावण विस्तीर्ण प्रतापका धारक श्रीशांतिनाथके मन्दिरविषै जाय पवित्र होय भक्तिकर महा मनोहर पूजा करता भया, जैसे पहिले प्रतिवासुदेव करें। गौतमगण

घर कह ह—हे श्रेणिक ! जे महा विभवकर युक्त भगवानके भक्त महाविभूतिवत अति महिमाकर प्रभु का पूजन कर ह तिनिके पुण्यके समूहका व्याख्यान कौन कर सक ? वे उत्तम पुरुष देवगतिक सुख भाग, बहुरि चक्रवर्तियोके भोग पाव बहुरि राज्य तज जनमतके व्रत धार महा तपकर परम मुक्ति पाव । कसा ह तप ? सूयहूत अधिक ह तेज जाका ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष श्र शातिनाथके चत्यालयविष अष्टाह्निकाका उत्सव वणन करने वाला अरसठवा पव पूण भया ॥ ॥

अथानन्तर महाशातिका कारण श्रीशातिनाथका मन्दिर, कलाशके शिखर अर शरदके मेघ समान उज्ज्वल महा देदीप्यमान मन्दिरोकी पक्तिकर मडित जस जम्बूद्वीपके मध्य महा उतग सुमेरु पवत सोह तस रावणके मदिरके मध्य जिनमदिर सोहता भया । तहा रावण जाय विद्याके साधनमें आसक्त ह चित्त जाका, अर स्थिर निश्चय जाका परम अदभुत पूजा करता भया । भगवानका अभिषेक कर अनेक वादित्र बजावता अति मनोहर द्रव्यनिकर, महासुगन्ध धूपकर, नानाप्रकारकी सामग्री कर(अत्यन्त मनोहर मालाओ, धूपो, नवेद्यो के उपहारो-और उत्तम वण के विलेपनो से) शातचित्त भया शातिनाथकी पूजा करता भया, मानो दूजा इन्द्र ही ह । शुक्ल वस्त्र पहिरे महासुन्दर जे भुजबध तिनकर शोभित ह भुजा जाकी, सिरके कश भली भाति बाध, तिनपर मुकुट धर, तापर चूडामणि लहलहाट करतो महाज्योतिकू धरे, रावण दोनो हाथ जोड गोडोसें धरतीकू स्पशता, मन वचन कायकर शातिनाथकू प्रणाम करता भया । श्रीशातिनाथक सन्मुख निमल भूमिमें खडा अत्यन्त शोभता भया । कसी ह भूमि ? पद्मराग मणिकी ह फश जाविष । अर रावण स्फटिकमणिकी माला हाथविष अर उरविष धरे कसा सोहता भया ? मानो बकपक्तिकर सयुक्त कारी घटाका समूह ही ह । वह राक्षसनिका अधिपति महा

१ प्राभषेक सवादित्रर्मान्यरतिमनोहर । धूपत्र पुपहारश्च सद्वर्णरनुलेपन ॥ ४ ॥
(पद्मपुराण ततीय भाग उनहत्तरवा पव । ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित)

धीर विद्याका साधन आरम्भता भया । जब शातिनाथके चत्यालय गया ता पहिले मदोदरीको यह आज्ञा करी, जो तुम मत्रिनिकू अर कोटपालकू बुलायकर यह घोषणा नगरमें फेरियो जो सवलोक दयाविष तत्पर नियम धमके धारक होव । समस्त व्यापार तज जिनेद्रकी पूजा करहु । अर अर्थी लोग निकू मनवाछित धन देवहु, अहकार तजहु । जौलग मेरा नियम न पूरा होय तौलग समस्त लोग श्रद्धा विष तत्पर सयमरूप रहो । जो कदाचित कोई बाधा कर तो निश्चयसेती सहियो । महाबलवान होय सो बलका गव न करियो । इन दिवसनिविष जो कोऊ क्रोधकर विकार करेगा सो अवश्य सजा पावेगा। जो मरे पितासमान पूज्य होय अर इन दिननिविष कषाय कर, कलह कर ताहि म मारू । जो पुरुष समाधिमरणकर युक्त न होय सा ससारसमुद्रको न तिर । जस अधपुरुष पदार्थनिकू न परखे तस अविवेकी धमकू न निरखें । तात सब विवेकरूप रहियो, कोऊ पापक्रिया न करने पाव । यह आज्ञा मदोदरी मत्रियोको अर यमदण्डनामा कोटपालकू द्वारे बुलाय पतिकी आज्ञा प्रमाण आज्ञा करती भई । तब सबने कही जो आज्ञा होयगी सो ही करगे । यह कह आज्ञा सिरपर धर घर गए, अर सयमसहित नियम धमके उद्यमी होय नपकी आज्ञा प्रमाण करते भए । समस्त प्रजाके लोग जिनपूजाविष अनुरागी होते भए । अर समस्त काय तज सूयकी कातितें हू अधिक ह काति जिनकी ऐसे जे जिनमदिर तिनविष तिष्ठे, निमल भावकर युक्त सयम नियमका साधन करते भये ।

इति श्री त्रिषेणाचार्यविरचित म ।पद्मपू ।ण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष लकाके लोगनिका अनेकानेक नियम धारण वणन कर वाला उनत्तरवा पव पूण भया ॥ ६९ ॥

अथानतर श्रीरामके कटकमे हलकारोके मुख यह समाचार आए कि रावण बहुरूपिणी विद्याके साधनको उद्यमी भया श्रीशातिनाथके मदिरमे विद्या साधे ह । चौबीस दिनमें यह बहुरूपणी विद्या सिद्ध होयगी । यह विद्या ऐसी प्रवल ह जो देवनिका मद हर । सो समस्त कपिध्वजनिने यह विचार

किया कि जो वह नियममें बठा विद्या साध ह सो ताको क्रोध उपजावें, जो ताको यह विद्या सिद्ध न होय। तात रावणको कोप उपजावनेका यत्न करना, जो वाने विद्या सिद्ध कर पाई तो इन्द्रादिक देवनि करहू न जीता जाय, हम सारिखे रकनिकी कहा बात ? तब विभीषण कही—जो कोप उपजावनेका उपाय करो शीघ्रही करो। तब सबने मत्र कर रामसू कहा कि लका लेनेका यह समय ह। रावणके कायमें विघ्न करिए अर अपनेकू जो करना होय सो करिए। तब कपिध्वजनिके यह वचन सुन श्री रामचन्द्र महाधीर महा पुरषनिकी ह चेष्टा जिनकी, सो कहते भए-हो विद्याधर हो ! तुम महामूढता के वचन कहो हो, क्षत्रिनिके कुलका यह धम नाहीं जा ऐसे काय करें। अपने कुलकी यह रीति ह जो भयकर भाजे ताका वध न करना। तो जे नियमधारी जिनमन्दिरमें बठे ह तिनसे उपद्रव कसे करिए ? यह नीचनिके कम ह, सो कुलवतनिको योग्य नाहीं। यह अन्याय प्रवत्ति क्षत्रियनिकी नाहीं। कसे हैं क्षत्री ? महामान्यभाव अर शस्त्रकर्मविष प्रवीण। यह वचन रामके सुन सबने विचारी जो हमारा प्रभु श्रीराम महा धमधारी ह, उत्तम भावका धारक ह सो इनकी कदाचित हू अधमविष प्रवृत्ति न होयगी। तब लक्ष्मणकी जानमे इन विद्याधरनिने अपने कुमार उपद्रवको विदा किए। अर सुग्रीवादिक बडे बड पुरुष आठ दिनका नियम धर तिष्ठे। अर पूण चन्द्रमा समान वदन जिनके, कमल समान नेत्र, नाना लक्षणके धरणहारे, सिह, व्याघ, वराह, गज, अष्टापद इनकर युक्त जे रथ तिनविष बठे, तथा विमाननिमें बठे, परम आयुधनिको धरे कपियोके कुमार रावणको कोप उपजायवेके ह अभिप्राय जिनके, मानो यह असुरकुमार देव ही ह। प्रीत कर दृढरथ, चन्द्राहु, रतिवधन, वातायन, गुरुभार सूयज्योति, महारथ सामत बल, नन्दन, सवदष्ट, सिह, सवप्रिय, नल, नील, सागर घोष पुत्र सहित पूण चन्द्रमा, स्कध चन्द्र मारीच जावत सकट समाधि बहुल सिहकट चन्द्रासन इन्द्रमणि बल तुरग सब इत्यादि अनेक कुमार तुरगनिके रथ चढे अर अन्य कईएक सिह, बराह, गज, व्याघ इत्यादि मनहूत चचल जे बाहन तिनपर चढे,पयादनिके पटल तिनके मध्यमहातेजको धरे नानाप्रकारके चिह्न तिनकरि

युक्त ह छत्र जिनके, अर नानाप्रकारकी ध्वजा फहर है जिनके, महा गम्भीर शब्द करते, दशोदिशाको आच्छादित करते, लकापुरीमें प्रवेश करते भए। मनविषै विचार करते भए बडा आश्चर्य ह जो लकाके लोक निश्चित तिष्ठ ह। जानिये ह कछू सग्रामका भय नाहीं ! अहो। लकेश्वरका बडा धीर्य महागम्भीरता देखहु जो कुम्भकरणसे भाई अर इन्द्रजीत मेघनादसे पुत्र पकडे गए है तो ह चिता नाहीं। अर अक्षादिक अनेक योधा युद्धविषै हते गए, हस्त प्रहस्त सेनापति मारे गए तथापि लकापतिको शका नाहीं। ऐसा चितवन करते परस्पर वार्तालाप करते नगरमें बठे। तथा विभीषणका पुत्र सुभूषण कपि कुमारनिकू कहता भया तुम निभय लकामें प्रवेश करहु। वाल वद्ध स्त्री इनसू तो कछु न कहना, अर सबकू व्याकल करेंगे। तब याका वचन मान विद्याधर कुमार महा उद्धत, कलहप्रिय, आशीविष समान प्रचण्ड, व्रतरहित, चपल, चचल, लकाविषै उपद्रव करते भए। सो तिनके महा भयानक शब्द सुन लोक अति व्याकुल भए। अर रावणके महल हू में व्याकुलता भई। जस तीव पवनकर समुद्र क्षोभकू प्राप्त होय तस लका कपि कुमारनिसू उद्वेगको प्राप्त भई। रावणके महिलविषै राजलोकनिकू चिता उपजी। कसा है रावणका मन्दिर ? रत्ननिकी कातिकर देदीप्यमान ह। अर जहा मगादिकके मगल शब्द होव ह, जहा निरन्तर स्त्रीजन नत्य कर ह, अर जिनपूजाविषै उद्यमी राजकन्या धम मार्गविषै आरूढ। सो शत्रुसेनाके क्रूर शब्द सुन आकुलता उपजी। स्त्रीनिके आभूषणनिके शब्द होते भए मानो बीणा बाज ह। सब मनमें विचारती भई—न जानिए कहा होय ? या भाति समस्त नगरीके लोग व्याकुलताकू प्राप्त होय विह्वल भए। तब मन्दोदरीका पिता राजा मय, विद्याधरनिविषै दत्य कहावै सो सब सेनासहित बक्तर पहिर आयध धार, महा पराक्रमी युद्धके अर्थ उद्यमी होय राजद्वार आया, जसे इन्द्रके भवन हिरण्यकशी देव आव। तब मन्दोदरी पितासे कहती भई—हे तात ! जा समय लकेश्वर मन्दिर पधारे ता समय आज्ञा करी जो सब लोक सम्बररूप रहियो, कोई कषाय मत करियो। तात तुम कषाय मत करहु। ये दिन धर्मध्यानके ह सो धर्म सेवो और भाति करोगे तो स्वामीकी आज्ञा

भग होयगी, अर तुम भला फल न पावोगे। ये वचन पुत्रीके सुन राजा मय उद्धतता तज, महा शांत होय, शस्त्र डारते भए, जसे अस्त समय सूय किरणोको तज। मणियोके कुण्डलनि कर मण्डित अर हार कर शोभ ह वक्षस्थल जाका, अपने जिनमन्दिरमें प्रवेश करता भया। अर ये वानरवशी विद्याधरनिके कुमारनिने निज मर्यादा तज नगरका कोट भग किया, बजके कपाट तोडे, दरवाजे तोडे।

अथानन्तर इनको देख नगरके वासियोको अति भय उपज्या। घर घरमें ये बात होय ह भजकर कहा जाइए। ये आए, बाहिर खडे मत रहो, भीतर धसो, हाय मात यह कहा भया? हे तात! देखो, हे भात हमारी रक्षा करो, हे आयपुत्र! महा भय उपजा ह, ठिकाने रहो। या भाति नगरीके लोक व्याकुलताक वचन कहते भए। लोक भाग रावणके महलबिष आए। अपने वस्त्र हाथनिमें लिए अति विह्वल, बालकनिको गोदमें लिए स्त्रीजन कापती भागी जाय ह। कईयक गिर पडी, सो गोडे फूट गए। कईएक चली जाय ह, हार टूट गए सो बडे बडे मोती बिखर ह। जसे मेघमाला शीघ जाय तसे जाय ह। त्रासको पाई जो हिरणी ता समान ह नेत्र जिनके, अर ढीले होय गए ह केशनिके बधन जिनके, अर कोई भयकर प्रीतमके उरसे लिपट गई। या भाति लोकनिको उद्वेगरूप महा भयभीत देख जिन शासनके देव, श्रीशातिनाथके मन्दिरके सेवक, अपनी पक्षके पालनेको उद्यमी, करुणावत जिनशासनके प्रभाव करनेकू उद्यमी भए। महाभरव आकार धरे शातिनाथके मन्दिरसे निकसे, नानाभेष धरे, विकराल ह दाढ जिनकी, भयकर ह मुख जिनका, मध्याह्नके सूय समान तेज ह नेत्र जिनके, होठ डसते, दीघ ह काया जिनकी, नाना वण, भयकर शब्द, महा विषम भेषको धरे, विकराल स्वरूप, तिनकू देख कर वानरवशियोके पुत्र महा भयकर अत्यन्त विह्वल भए। वे देव क्षणविषै सिंह, क्षणविषै मेघ, क्षणविषै हाथी, क्षणविषै सप, क्षणविषै वायु, क्षणविषै वृक्ष, क्षणविषै पवत, सो इनकर कपिलकुमारनिको पीडित देख कटकके देव मदद करते भए। देवनिमें परस्पर युद्ध भया। लकाके देव कटकके देवनिसे, अर कपिलकुमार लकाके सन्मुख भए। तब यक्षनिके स्वामी पूणभद्र महाभद्र महा क्रोधकू प्राप्त

भए। दोनो यक्षेश्वर परस्पर वार्ता करते भए, देखो ए निदई कपिनिके पुत्र महाविकारकू प्राप्त भए। रावण तो निराहार होय देहविषै निस्पृह सव जगतका काय तज पोसे बठा ह। सो ऐसे शातिचित्तकू यह छिद्र पाय पापी पीडा चाहे ह, सो यह योधावोकी चेष्टा नाही। यह वचन पूणभद्रके सुन मणिभद्र बोला—अहो पूणभद्र ! रावणका इन्द्र भी पराभव करिवे समथ नाहीं, रावण सुन्दर लक्षणनिकर पूण भात स्वभाव ह। तब पूणभद्रने कही—जो लकाको विघ्न उपजा ह सो आपा दूर करेंगे। यह वचन कह कर दोनो धीर सम्यकदृष्टि जिनधर्मी यक्षनिके ईश्वर युद्धकू उद्यमी भए। सो वानरवशिनिके कुमार और उनके पक्षी देव सब भागे। वे दोनो यक्षेश्वर महावायु चलाय, पाषाण बरसावते भए, अर प्रलय कालके मेघ समान गाजते भए। तिनके जाघोकी पवनकर कपिदल सूखे पानकी न्याई उडे, तत्काल भाग गए। तिनके लार ही ये दोनो यक्षेश्वर रामके निकट उलाहना देनेको आए। सो पूणभद्र सुबुद्धि रामकी स्तुति कर कहते भए—राजा दशरथ महाधर्मात्मा तिनके तुम पुत्र, अर अयोग्य कायके त्यागी, सदा योग्य कायनिके उद्यमी, शास्त्रसमुद्रके पारगामी, शुभ गुणनिकर सकलविषै ऊचे, तिहारी सेना लकाके लोकनिकू उपद्रव कर यह कहाकी बात ? जो जाका द्रव्य हर सो ताका प्राण हर ह, यह धन जीवनिके बाह्य प्राण ह। अमोलिक हीरे वडूय मणि मूगा मोती पदमराग मणि इत्यादि अनेक रत्ननिकरि भरी लका उद्वेगको प्राप्त करी। तब यह वचन पूणभद्रके सुन रामका सेवक गरुडकेतु कहिए लक्ष्मण नीलकमल समान, सो तेजसे विविधरूप वचन कहता भया। ये श्रीरघुचन्द तिनके राणी सीता प्राणहूत प्यारी। शीलरूप आभूषणकी धरणहारी, वह दुरात्मा रावण छलकर हर ले गया ताका पक्ष तुम कहा करो ? हे यक्षेन्द्र ! हमने तिहारा कहा अपराध किया ? अर तान कहा किया जो तुम भकुटी बाकी कर अर सध्याकी ललाई समान अरुण नेत्रकर उलहना देनेको आए। सो योग्य नाहीं। ऐती वार्ता लक्ष्मणने कही अर राजा सुग्रीव प्रति भयरूप होय पूणभद्रको अघ देय कहता भया—हे यक्षेन्द्र ! क्रोध तजो, अर हम लकाविष कछु उपद्रव न करें। परन्तु यह वार्ता ह रावण

बहुरूपिणी विद्या साध ह सो जो कदाचित ताकू विद्या सिद्ध होय तो वाके सन्मुख काई ठहर न सक, जस जिनधमक पाठकके सन्मुख वादी न टिक। तात वह क्षमावत होय विद्या साध ह, सो ताकू क्रोध उपजावेंगे जो विद्या साध न सक जस मिथ्यादृष्टि मोक्षकू साध न सक। तब पूणभद्र बोले—ऐसे ही करो, परन्तु लकाके एक जीण तनकू भी बाधा न कर सकोगे। अर तुम रावणके अगको बाधा मत करो, अर अन्य बातनिकर क्रोध उपजावो। परन्तु रावण अति दृढ ह ताहि क्रोध उपजना कठिन है। ऐसे कह वे दोनो यक्षेन्द्र भव्यजीवनिविषै ह वात्सल्य जिनका, प्रसन्न ह नेत्र जिनके, मुनिनिके समूहोके भक्त, वयावतविषै उद्यमी, जिनधर्मी, अपने स्थानक गए। रामको उलहना देने आए थे सो लक्ष्मणके वचननि कर लज्जावान भए, समभावकर अपने स्थानक गए सो जाय तिष्ठे। गौतमस्वामी कह ह—हे श्रेणिक! जौलग निर्दोषता होय तौलग परस्पर अति प्रीति होय, अर सदोषता भए प्रीतिभग होय, जस सूय उत्पात सहित होय तो नीका न लग।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष रावणका विद्या साधना अर कपिकुमारनिका लका गमन व रि पूणभद्र का काप क्रोधकी शाति वणन करनेवाला सत्तरवा पव पूण भया ॥ ७ ॥

———

अथान तर पूणभद्र मणिभद्रकू शातभाव जान सुग्रीवका पुत्र अगद तान लकाविषै प्रवेश किया। सो अगद किहकधनामा हाथी छढ्या, मोतिनिकी माला कर शोभित, उज्ज्वल चमरनिकर युक्त ऐसा सोहता भया जसा मेघमालाविषै पूणमासीका चन्द्रमा सोह। अति उदार, महा सामत, तथा स्कध इन्द्र नील आदि बडी ऋद्धिकर मडित तुरगनिपर चढे कुमार गमनको उद्यमी भए। अर अनेक पयादे चन्दन कर चर्चित ह अग जिनके, ताबूलनिकर लाल अधर, काधे ऊपर खडग धरे, सुन्दर वस्त्र पहिरे, स्वणके आभूषणकर शोभित सुन्दर चेष्टा धर आगे पीछे अगल बगल पयादे चले जाय ह। वीण वासुरी मृदगादि वादित्र वाज ह, नृत्य होता जाय ह। कपिवशियोके कुमार लकाविष ऐसे पठ जस स्वगपुरीविषै असुरकुमार

प्रवेश कर ह। अगदकू लकाविषै प्रवेश करता देख स्त्रीजन परस्पर वार्ता करती भई—देखहु! यह अगद रूप चन्द्रमा दशमुखकी नगरीविषै निर्भय चला जाय ह याने कहा आरम्भा ? आगे अब कहा होयगा ? या भाति लोक बात कर ह। ए चले चले रावणके मदिरविषै गए। सो मणियोका चौक देख इन्होने जानी ये सरोवर ह। त्रासको प्राप्त भए। बहुरि निश्चय देख मणियोका चौक जाना तब आगे गए। सुमेरुकी गुफा समान महारत्ननिकर निर्मापित मदिरका द्वार देख्या। मणियोके तोरणनिकर ददीप्यमान तहा अजन पर्वत सारिखे इन्द्रनीलमणिनिके गज देखे। महास्कध कुम्भस्थल, तिनके स्थूल दन्त अत्यन्त मनोज्ञ, अर तिनके मस्तकपर सिहनिके चिह्न, जिनके सिरपर पूछ, हाथिनिके कुम्भस्थलपर सिह, विकराल वदन, तीक्ष्ण दाढ, डरावने केश, तिनको देख पयादे डरे। जानिए साचे ही हाथी ह। तब भयकर भागे अति विह्वल भए। अगदने नीके समझाए तब आगे चले। रावणके महिलविषै कपिवशी ऐसे जाव जस सिहकी गुफाविषै मग जाय। अनेक द्वार उलघ आगे जायवेकू समर्थ भए। घरनिकी रचना गहन सो ऐसे भटके जस जन्मका अधा भ्रम। स्फटिकमणिके महिल, तहा आकाशकी आशकाकर भ्रमकू प्राप्त भए। अर इन्द्र नीलमणिकी भीति सो अधकारस्वरूप भास। मस्तकविषै शिलाकी लागी सो आकुल होय भूमिमें पडे। वेदनाकर व्याकुल ह नेत्र जिनके, काहूप्रकार मार्ग पाय आगे गए जहा स्फटिक मणिकी भीति। सो घननिके गोडे फूटे, ललाट फूटे, दुखी भए। तब उलटे फिरे सो मार्ग न पाव। आगे एक रत्नमई स्त्री देखी। साक्षात स्त्री जान तासू पूछते भए सो वह कहा कह ? तब महा शकाके भरे आगे गए। विह्वल होय स्फटिकमणिकी भूमिमें पडे। आगे शातिनाथके मदिरका शिखर नजर आया, परन्तु जाय सक नाही, स्फटिककी भीति आडी। तब वह स्त्री दष्टि पडी थी त्यो एक रत्नमई द्वारपाल दष्टि पर्या, हेमरूप बेतकी छडी, जाके हाथमें। ताहि कही—श्री शातिनाथके मदिरका मार्ग बताओ। सो वह कहा बताव ? तब वाहि हाथसू कूट्या सो कूटनहारेकी अगुरी चूर्ण होय गई। बहुरि आगे गए, जाना यह इन्द्रनीलमणिका द्वार ह, शातिनाथके चैत्यालयमें

जानेकी बुद्धि करी, कुटिल है भाव जिनके। आगे एक वचन बोलता मनुष्य देखा ताके केश पकडे अर कहा तू हमार आगे आगे चल। शांतिनाथका मंदिर दिखाय। जब वह अग्रगामी भया तब ए निराकुल भए। श्रीशांतिनाथके मंदिर जाय पहुँचे। पुष्पांजलि चढाय जयजय शब्द किए, स्फटिकके थम्भनिके ऊपर बडा विस्तार देख्या सो अचरजकूं प्राप्त भए। मनमें विचारते भए जैसे चक्रवर्तीके मंदिर में जिनमंदिर होय तैसे हैं। अंगद पहिले ही वाहनादिक तज भीतर गया। ललाट पर दोनो हाथ धर नमस्कार करि तीन प्रदक्षिणा देय स्तोत्र पाठ करता भया, सेना लार थी सो बाहिरले चौकविषै छाडी। कैसा है अंगद? फूल रहे हैं नेत्र जाके, रत्ननिके चित्रामकर मंडल लिखा सोलह स्वप्नेका भाव देखकर नमस्कार किया, आदि मंडपकी भीतिविषै वह धीर भगवानको नमस्कार कर शांतिनाथके मंदिर विषै गया। अति हर्षका भरा भगवानकी वंदना करता भया।

बहुरि देखे तो सन्मुख रावण पद्मासन धर तिष्ठै है। इन्द्रनीलमणिकी किरणनिके समूह समान है प्रभा जाकी। भगवानके सन्मुख कैसा बैठा है जैसे सूर्यके सन्मुख राहु बैठा होय। विद्याको ध्यावै जैसे भरत जिनदीक्षाको ध्यावै। सो रावणसूं अंगद कहता भया—हे रावण! कहो अब तेरी कहा वार्ता? तोसूं ऐसी करूं जैसी यम न करे। तैने कहा पाखण्ड रोप्या? भगवानके सन्मुख यह पाखण्ड कहा? धिक्कार तो पापकर्मीकूं वृथा शुभक्रियाका आरम्भ किया है। ऐसा कहकरि याका उत्तरासन उतारया। अर याकी रानीनिकूं याके आगे कूटता भया। कठोर वचन कहता भया। अर रावणके पास पुष्प पडे हुते सो उठाय लीए अर स्वर्णके कमलनिकर भगवानकी पूजा करी। बहुरि रावणसूं कुवचन कहता भया। अर रावणके हाथमें स्फटिककी माला छिनाय लई, सो मणिया बिखर गई। बहुरि मणियें चुनि, माला पोय, रावणके हाथविषै दई, बहुरि छिनाय लई। बहुरि पोय गलेविषै डाली, बहुरि मस्तक पर मेली। बहुरि रावणका राजलोक, सोई भया कमलनिका वन, ताविषै ग्रीषमकर तप्तायमान जो वनका हाथी ताकी न्याई प्रवेश किया। अर निःशंक भया राजलोकमें उपद्रव करता भया। जैसे चंचल

घोडा कूदता फिर तस चपलता करि भमण किया। काहूके कठविष कपडेका रस्सा बनाय बाध्या, अर काहूके कठविष उत्तरासन डार थम्भविष बाध बहुरि छोड दिया। काहूको पकड अपने मनुष्यनिसे कही याहि बेच आवो। ताने हसकर कही पाच दीनारनिको बेच आया। या भाति अनेक चेष्टा करीं। काहूके काननविषै घुगुरू घालें, अर केशनिविष कटिमेखला पहिराई, काहूके मस्तकका चूडामणि उतार चरणनिविष पहिराया। अर काहूको परस्पर केशनिकर बाधी, अर काहूके मस्तकविष शब्द करते मोर बठाए। या भाति जस साड गायनिके समूहविष प्रवेश कर अर तिनकू अति व्याकुल कर तस रावणके समीप सब राजलोकनिकू क्लेश उपजाया। अर अगद क्रोधकर रावणसु कहता भया—हे अधम राक्षस! तन कपटकर सीता हरी, अब हम तरी समस्त स्त्रीनिकू हर ह। तोम शक्ति होय तो यत्न कर। एसा कहकर याक आगे मदोदरीकू पकड ल्याया जस मगराज मगीकू पकड ल्याव, कम्पायमान ह नत्र जाके। चोटी पकड रावणके निकट खीचता भया जस भरत राज्यलक्ष्मीको खींच। अर रावणसू कहता भया—देख! यह पटरानी तेरे जीवहूत प्यारी मदोदरी गुणवती ताहि हम हर ले जाय ह। यह सुग्रीवक चमरग्राहिणी चरी होयगी। सो मदोदरी आखनित आसू डारती भई अर विलाप करने लगी रावणके पायनविषै प्रवेश कर, कभी भुजानिविषै प्रवश कर, अर भरतारसो कहती भई—हे नाथ! मेरी रक्षा करहु। ऐसी दशा मरी कहा न देखो हो, तम क्या और ह। होय गए? तुम रावण हो अक और हो हो। अहो जसी निरग्रथ मुनिकी वीतरागता होय तसी तुम वीतरागता पकडी। सो ऐसे दु खमे यह अवस्था कहा? धिक्कार तिहारे बलको, जो या पापीका सिर खडगसो न काटो। तुम महा बलवान चाव सूय समान पुरुषोका पराभव न सहो सो ऐसे रकका कसे सहो? हे लकेश्वर! ध्यानविषै चित्त लगाया, न काहूकी सुनो न देखो, अधपयकासन धर बठे, अहकार तज दिया। जसा सुमेरुका शिखर अचल होय, तस अचल होय तिष्ठे। सव इन्द्रियनिकी क्रिया तजी, विद्याके आराधनविष तत्पर निश्चल शरीर महाधीर एसे तिष्ठे हो मानो काष्ठके अथवा चित्रामके हो? जस राम सीता

को चितवें तस तुम विद्याको चितवौ हो, स्थिरता कर सुमेरुके तुल्य भए हो । जब या भाति मदोदरी रावणसे कहती भई ताही समय बहुरूपिणी विद्या दशोदिशाविष उद्योत करती जय जयकारका शब्द उचारती रावणके समीप आय ठाढी भई, अर कहती भई—हे देव! आज्ञामें उद्यमी म तुमको सिद्ध भई, मोहि आदेश देवहु । एक चक्री अधचक्रीको टार तिहारी आज्ञासे विमुख होय ताहि वश करू । या लोकविषै तिहारी आज्ञाकारिणी हू । हम सारिखनिकी यही रीति ह जो हम चक्रवर्तियोसे समथ नाहीं । जो तू कहे तो सव दत्यनिको जीतू, देवनिकू वश करू, जो तोस अप्रिय होय ताहि वशीभूत करू । अर विद्याधर तो मेरे तणसमान ह । यह विद्याके वचन सुन रावण योग पूण कर ज्योतिका धारक, उदार चेष्टाका धरणहारा शातिनाथके चत्यालयकी प्रदक्षिणा करता भया । ताही समय अगद मदोदरीको छाड आकाश गमन कर रामके समीप आया, कसा ह अगद? सूय समान ह तेज जाका ।

इति ओरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष श्रीशाति ाथके मदिरमे रावणको बहुरूपिणी विद्याके सिद्ध होनेका वणन करनेवाला इकहत्तरवा पव पूण भया ॥ ७१ ॥

अथान तर रावणको अठ्ठारह हजार स्त्री रावणके पास एक साथ सब ही रुदन करती भई, सुन्दर है वशन जिनका । हे स्वामिन! सव विद्याधरनिके अधीश! तुम हमारे प्रभु सो तुमको होते सते मूख अगदने आयकर हमारा अपमान किया । तुम परम तेजके धारक सूय समान सो ध्यानारूढ हुते, अर विद्याधर आगिया समान, सो तिहारे मुह आगिला छोहरा सुग्रीवका पुत्र पापी हमको उपद्रव कर । सुनकर तिनके वचन रावण सबकी दिलासा करता भया अर कहता भया—हे प्रिये! वह पापी ऐसी चेष्टा कर ह सो मृत्युके पाशकर बधा ह । तुम दुख तजो जस सदा आनन्दरूप रहो हो ताही भाति रहो । म सुग्रीवको निग्रीव कहिए मस्तकरहित भूमिपर प्रभात ही करूगा । अर वे दोनो भाई राम लक्ष्मण भूमिगोचरी कीट समान ह तिनपर कहा कोप? ये दुष्ट विद्याधर सब इनप भेले भए ह तिनका

क्षय करूंगा। हे प्रिये! मेरी भोंह टेढी करनेहीमें शत्रु विलाय जाय। अर अब तो बहुरूपिणी महा विद्या सिद्ध भई मोसे शत्रु कहा जीवें। या भांति सब स्त्रीनिकूं महा धीर्य बधाय मनमें जानता भया मैं शत्रु हते। भगवानके मंदिरसे बाहिर निकसा। नानाप्रकारके बादित्र बाजते भए, गीत नृत्य होते भए। रावणका अभिषेक भया। कामदेव समान है रूप जाका, स्वर्ण रत्ननिके कलशनिकर स्त्री स्नान करावती भई। कैसी है स्त्री? कांतिरूप चांदनीसे मंडित है शरीर जिनका, चन्द्रमा समान वदन, अर सुफेद मणिनिके कलशनिकर स्नान करावे। सो अदभुत ज्योति भासती भई। अर कई स्त्री कमल समान कांतिको धरे मानो सांझ फूल रही है। अर उगते सूर्य समान सुवर्णके कलशनिकर स्नान करावे सो मानो सांझ ही जल बरसे है। अर कई एक स्त्री हरितमणिके कलशनिकर स्नान करावती अति हर्षकी भरी शोभै है, मानो साक्षात लक्ष्मी ही है, कमलपत्र है कलशनिके मुखपर। अर कईएक केलेके गर्भ समान कोमल महासुगंध शरीर जिनपर भ्रमर गुंजार करै है, वे नानाप्रकारके सुगंध उबटनाकरि रावणको नानाप्रकारके रत्नजडित सिंहासनविषै स्नान करावती भई। सो रावणने स्नान कर आभूषण पहिरे महा सावधान भावनिकर पूर्ण शांतिनाथके मंदिरमें गया। वहां अरहंतदेवकी पूजाकर स्तुति करता भया, बारबार नमस्कार भया। बहुरि भोजनशालामें आया, चार प्रकारका उत्तम आहार किया—अशन पान खाद्य स्वाद्य। बहुरि भोजनकर विद्याकी परखै निमित्त क्रीडा भूमिविषै गया, वहां विद्याकर अनेकरूप बनाय नानाप्रकारके अदभुत कर्म विद्याधरनिसे न बनै सो बहुरूपिणी विद्यासे किए। अपने हाथको घातकरि भूकम्प किया। रामके कटकविषै कपियोको ऐसा भय उपजा मानो मृत्यु ही आई। अर रावणकूं मंत्री कहते भए—हे नाथ! तुम टार राघवका जीतनहारा और नाहीं। राम महा योधा है और क्रोधवान होवै तब कहा कहना? सो ताके सन्मुख तुम ही आवहु अर कोई रणविषै रामके सन्मुख आवनेको समर्थ नाहीं।

अथानन्तर रावणने बहुरूपिणी विद्यासे मायामई कटक बनाया। अर आप उद्यानविषै जहां सीता

तिष्ठे तहा गया। मन्त्रिनिकरि मडित जस देवनिकर सयुक्त इन्द्र होय, सो सूयसमान कातिकरि युक्त आवता भया। तब ताकू आवता देख विद्याधरी सीतासो कहती भई—हे शुभे! महाज्योतिवत रावण पुष्पक विमानसे उतरकर आया। जस ग्रीष्म ऋतुविष सूयकी किरणकरि आतापकू पाता गजेन्द्र सरोवरीकी ओर आव तस कामरूप अग्निसे तापरूप भया आव ह। यह प्रमदनामा उद्यान पुष्पनिकी शोभाकर शोभित, जहा भमर गु जार कर ह। तब सीता बहुरूपिणी विद्याकर सयुक्त रावणकू देख-कर भयभीत भई। मनमें विचार ह याके बलका पार नाहीं। सो राम लक्ष्मण हू याहि न जीतगे। म मदभागिनी रामकू अथवा लक्ष्मणकू अथवा अपने भाई भामडलकू मत हना सुनू। यह विचार कर व्याकुल है चित्त जाका, कापती चितारूप तिष्ठ ह। तहा रावण आया, सो कहता भया—हे देवी! म पापीने तुझे कपटकर हरी। सो यह बात क्षत्रीकुलविष उत्पन्न भए है जे धीर अतिवीर तिनको सवथा उचित नाही। पर तु कम की गति ऐसी ह। मोहकम बलवान ह। अर म पूव अन तवीय स्वामीके समीप वत लिया हुता जो परनारी मोहि न इच्छ ताहि म न ग्रहू। उवसी, रभा अथवा और मनोहर होय तो भी मरे प्रयोजन नाहीं। यह प्रतिज्ञा पालते सते म तेरी कपा ही की अभिलाषा करी, परन्तु बलात्कार रमी नाहीं। हे जगतविष उत्तम सुन्दरी! अब मेरी भुजानिकर चलाए जे बाण तिनसे तेरे अवलबन राम लक्ष्मण भिदे ही जान। अर तू मेरे सग पुष्पक विमानमे बठ आन दसे विहार कर। सुमेरुके शिखर, चत्य वक्ष, अनेक वन उपवन, नदी सरोवर अवलोकन करती विहार कर।

तब सीता दोऊ हाथ काननिपर धर गदगद वाणीसे दीन शब्द कहती भई—हे दशानन! तू बडे कुल-विष उपजा ह तो यह करियो—जो कदाचित सग्रामविष तेरे अर मेरे बल्लभके शस्त्रप्रहार होय, तो पहले यह सदेशा कहे बगर मेरे कथकू मत हतियो! यह कहियो—हे पदम! भामडलकी बहिनने तुमकू यह कहा है—जो तिहारे वियोगकरि महाशोकके भारकरि महा दुखी हू, मेरे प्राण तिहारे तक ही ह, मेरी दशा यह भई ह जैस पवनकी हती दीपककी शिखा। हे राजा दशरथके पुत्र! जनककी पुत्रीने तुमकू बारम्बार

स्तुतिकर यह कही है–तिहारे दर्शनकी अभिलाषाकर यह प्राण टिक रहे है। ऐसा कहकर मूर्छित होय भूमिमें पडी, जैसे माते हाथीते भग्न करी कल्पवृक्षकी बेल गिर पडे। यह अवस्था महासतीकी देख रावण का मन कोमल भया,परम दुःखी भया,यह चिंता करता भया अहो कर्मनिके योगकर इनका निःसंदेह स्नेहका क्षय नाहीं। अर धिक्कार मोकूं मैं अति अयोग्य कार्य किया जो ऐसे स्नेहवान युगलका वियोग किया। पापाचारी महा नीच जन समान मैं निःकारण अपयशरूप मलसे लिप्त भया। शुद्ध चन्द्रमा समान गोत्र हमारा, मैं मलिन किया। मेरे समान दुरात्मा मेरे वंशमें न भया। ऐसा कार्य काहूने न किया। जे पुरुषोमें इन्द्र हैं ते नारीको तुच्छ गिनें हैं। यह स्त्री साक्षात विष तुल्य है,क्लेशकी उत्पत्तिका स्थानक सर्पके मस्तक की मणि समान, अर महा मोहका कारण। प्रथम तो स्त्रीमात्र ही निषिद्ध है। अर परस्त्रीकी कहा बात? सर्वथा त्याज्य ही है। परस्त्री नदी समान कुटिल, महा भयंकर, धर्म अर्थका नाश करणहारी, सदा संतो को त्याज्य ही है। मैं महा पापकी खान, अब तक यह सीता मुझे देवांगनाहूतैं अति प्रिय भासती भई? सो अब विष के कुम्भतुल्य भासै है। यह तो केवल रामसूं अनुरागिनी है। अब लग यह न इच्छती थी परन्तु मेरे अभिलाषा हुती। अब जीर्ण तृणवत भासै है। यह तो केवल रामसे तन्मय है,मौसूं कदाचित न मिलै। मेरा भाई महापंडित विभीषण सब जानता हुता सो मोहि बहुत समझाया। मेरा मन विकार कूं प्राप्त भया सो न मानी, तासूं द्वेष किया। जब विभीषणके वचननिकरि मैत्री भाव करता तो नीक था। महा युद्ध भया, अनेक हते गए, अब कैसी मित्रता? यह मित्रता सुभटनिकूं योग्य नाहीं। अर युद्ध करके बहुरि दया पालनी यह बनै नाहीं। अहो? मैं सामान्य मनुष्यकी नाईं संकटमें पडा हूं। जो कदाचित जानकी रामपै पठावूं तौ लोग मोहि असमर्थ जानैं। अर युद्ध करिए तो महा हिंसा होय। कोई ऐसे हैं जिनके दया नाहीं केवल क्रूरतारूप हैं, ते भी कालक्षेप करैं हैं। अर कोईयक दयावान हैं, संसार कार्यसे रहित हैं ते सुखसे जीवैं हैं। मैं मानी युद्धाभिलाषी, अर कछू करुणाभाव नाहीं, सो हम सारिखे महा दुखी हैं। अर रामके सिंहवाहन अर लक्ष्मणके गरुडवाहन विद्या सो इनकर महा उद्योत है। सो

इनकू शस्त्ररहित करू अर जीवते पकडू । बहुरि बहुत धन दू तो मेरी बडी कीर्ति होय । अर मोहि पाप न होय यह न्याय है । तात यही करू । ऐसा मनमे धारे महा विभवसयुक्त रावण राजलोकविषै गया जस माता हाथी कमलनिके वनविष जाय । बहुरि विचारी अगदने बहुत अनीति क्रोध किया अर लाल नेत्र होय आए । रावण होठ डसता वचन कहता भया—वह पापी सुग्रीव नाहीं दुर्ग्रीव है । ताहि निग्रीव कहिए मस्तक रहित करूगा । ताके पुत्र अगद सहित चन्द्रहास खडगकर दोयटूक करूगा । अर तमोमडल को लोक भामडल कहै है सो वह महा दुष्ट है, ताहि दृढबन्धनसे बाधि लोहके मुगदरोसे कूट मारूगा । अर हनुमानकू तीक्ष्ण करोतकी धारसे काठके युगलमें बान्ध बिहराऊंगा । वह महा अनीति है । एक राम न्यायमार्गी है ताहि छोडूगा । अर समस्त अन्यायमार्गी है तिनकू शस्त्रनिकर चूर डारूगा । ऐसा विचारकर रावण तिष्ठा । अर उत्पात सकडो होने लगे, सूर्यका मण्डल आयुध समान तीक्ष्ण दृष्टि पडा । पूर्णमासीका चन्द्रमा अस्त होय गया । आसन पर भूकम्प भया । दशो दिशा कम्पायमान भई । उल्कापात भए । श्रगाली (गीदडी) विरस शब्द बोलती भई । तुरग नाड हिलाय विरस विरूप हींसते भए । हाथी रूक्ष शब्द करते भये, सूण्डसे धरती कूटते भए । यक्षनिकी मूर्तिके अश्रुपात पडे । सूर्यके सन्मुख काग कटुक शब्द करते भए, ढीले पाख किए महा व्याकुल भए । सरोवर जलकरि भरे हुते ते शोषको प्राप्त भए । अर गिरियोके शिखर गिर पडे । अर रुधिरकी वर्षा भई । थोडे ही दिनमें जानिए है लकेश्वरकी मृत्यु होय । ऐसे अपशकुन और प्रकार नाहीं । जब पुण्य क्षीण होय तब इन्द्र भी न बचे । पुरुषमें पौरुष पुण्यके उदयकरि होय है । जो कछू प्राप्त होना होय सोई पाइए है, हीनाधिक नाहीं । प्राणियोके शूरवीरता सुकृतके बलकर है ।

देखहु रावण नीतिशास्त्रके विषै प्रवीण, समस्त लौकिक नीति रीति जाने व्याकरणका पाठी महा गुणनिकर मडित, सो कर्मनिकर प्रेरा सता अनीतिमार्गकू प्राप्त भया, मूढबुद्धि भया । लोकविषै

मरण उपरात कोई दु ख नाहीं । सो याकू अत्यन्त गवकर विचार नाहीं । नक्षत्रनिके बलकरि रहित अर ग्रह सब ही क्रूर आए । सो यह अविवेकी रणक्षेत्रका अभिलाषी होता भया । प्रतापके भगका ह भय जाकू, अर महा शूरवीरताके रससे युक्त, यद्यपि अनेक शास्त्रनिका अभ्यास किया ह तथापि युक्त अयुक्तकू न देख । गौतम स्वामी राजा श्रेणिकत कह ह–हे मगधाधिपति ! रावण महामानी अपने मनविष विचार ह सो सुन–सुग्रीव भामण्डलादिक समस्तकू जीति अर कुम्भकरण इन्द्रजीत मेघनाद कू छुडाय लकामें लाऊगा । बहुरि वानरवशिनिका वश नाश अर भामण्डलका पराभव करू गा । अर भूमिगोचरिनिकू भूमिविष न रहने दू गा । अर शुद्ध विद्याधरनिकू धराविष थापू गा । तब तीन लोक के नाथ तीथङ्कर देव अर चक्रायुध बलभद्र नारायण हम सारिखे विद्याधर कुलहीविष उपजगे । ऐसा वथा विचार करता भया । हे मगधेश्वर ! जा मनुष्यने जसे सचित कम किए होय तसा ही फल भोगव । ऐस न होय तो शास्त्रोके पाठी कस भूल ? शास्त्र ह सो सूय समान ह, ताके प्रकाश होते अन्धकार कसे रह । परन्तु जे घूघूसमान मनुष्य ह तिनकू प्रकाश न होय ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष रावण के युद्धका निश्चय कथन वणन करनेवाला बहत्तरवा पव पूण भया ॥ ७२ ॥

अथानन्तर दूजे दिन प्रभातही रावण महादेदीप्यमान आस्थान मडपविष तिष्ठया । सूयके उदय होते सते सभाविष कुवेर वरुण ईशान यम सोम समान जे बडे बडे राजा तिनकरि सेवनीक, जस देवनिकर मडित इन्द्र विराजे तस राजानिकरि मडित सिहासन पर विराज्या । परम कातिकू धर, जसै ग्रह तारा नक्षत्रनिकर युक्त चन्द्रमा सोह । अत्यन्त सुगन्ध, मनोग्य वस्त्र, पुष्पमाला, अर महा मनोहर गजमोतिनिके हार तिनकरि शोभ ह उरस्थल जाका, महा सौभाग्यरूप, सौम्यदशन, सभाकू देखकर चिता करता भया–जो भाई कुम्भकरण इन्द्रजीत मघनाद यहा नाहीं दीख ह सो उन बिना यह

सभा सोह नाहीं। और पुरुष कुमुदरूप बहुत ह, पर वे पुरुष कमलरूप नाहीं। सो यद्यपि रावण महारूप वान सुन्दर वदन हुते, अर फूल रहे ह नेत्र कमल जाके, महामनोग्य तथापि पत्र भाईकी चितासे कुम लाया वदन नजर आवता भया। अर महा क्रोधरूप कुटिल ह भकुटी जाकी, मानो क्रोधका भरया आशीविष सप ही ह। महा भयकर होठ डसे। महा विकरालस्वरूप मत्री देखकर डरे। आज ऐसा कौनसा कोप भया, यह व्याकुलता भई। तब हाथ जोड सीस भूमिमें लगाय राजा मय उग्र शुक लोकाक्ष सारण इत्यादि धरतीकी ओर निरखते चलायमान ह कुण्डल जिनके विनती करते भए—हे नाथ! तिहारे निकटवर्ती योधा सबही यह प्राथना कर ह प्रसन्न होहु। अर कलाशके शिखरतुल्य ऊचे महिल, जिनके मणियोकी भीति, मणियोके झरोखा, तिनमें तिष्ठती भमररूप ह नेत्र जिनके, ऐसी सब राणियो सहित मदोदरी सो याहि देखती भई। कसा देख्या? लाल ह नेत्र जाके, प्रतापका भरा। ताहि देखकर मोहित भया ह मन जाका। रावण उठकर आयुधशालामें गया। कसी ह आयुधशाला? अनेक दिव्य शस्त्र अर सामा य शस्त्र तिनसे भरी, अमोघ बाण अर चक्रादिक अमोघ रत्ननिसू भरी, जैसे वज शालामें इन्द्र जाय। जा समय रावण आयुधशालामें गया ता समय अपशकुन भए। प्रथम ही छींक भई सो शकुनशास्त्रविष पूवदिशाकू छींक होय तो मत्यु, अर अग्निकोणविष शोक, दक्षिणमें हानि, नऋत्यमें शुभ, पश्चिमविष मिष्ट आहार, वायुकोणमें सव सम्पदा, उत्तरविष कलह, ईशानविष धनागम, आकाशविष सव सहार, पातालविष सव सम्पदा ये दशो दिशाविष छींकके फल कहे। सो रावणकू मत्युकी छींक भई। बहुरि आगे माग रोके महा नाग निरख्या। अर हा शब्द, ही शब्द, धिक शब्द, कहा जाय ह—यह वचन होते भए। अर पवनकर छत्रके वडूयमणिका दण्ड भग्न भया। अर उत्तरा सन गिर पडया। काग दाहिना बोला। इत्यादि और भी अपशकुन भए। ते युद्धत निवारते भए, वचनकर कमकर निवारते भए। जे नानाप्रकारके शकुनशास्त्रविष प्रवीण पुरुष हुते वे अत्य त आकुल भए। अर मदोदरी शुक सारण इत्यादि बडे बड मत्रिनकू बुलाय कहती भई—तुम स्वामीकू कल्याण

की बात काहेकू न कहो हो ? अब तक कहा अपनी अर उनकी चेष्टा न देखी ? कुम्भकरण इन्द्रजीत मेघनादसे बधनविषै आए, वे लोकपाल समान महातेजके धारक अदभुत कायके करणहारे। तब नमस्कारकर मन्त्री मदोदरीसे कहते भए—हे स्वामिनी ! रावण महामानी, यमराजसा क्रूर आप ही आप प्रधान है। ऐसा या लोकविषै कोई नाही जाके वचन रावण माने। जो कुछ होनहार है ता प्रमाण बुद्धि उपजै है। बुद्धि कर्मानुसारिणी है। सो इन्द्रादिककर तथा देवनिके समूहकर और भांति न होय। सम्पूर्ण न्यायशास्त्र अर धर्मशास्त्र तिहारा पति सब जानै है परन्तु मोहकरि उन्मत्त भया है। हम बहुत प्रकार कह्या, सो काहूप्रकार मानै नाही। जो हठ पकड्या है सो छाडै नाही। जैसे वर्षाकालके समागमविषै महाप्रवाहकर संयुक्त जो नदी ताका तिरना कठिन है, तैसे कर्मनिका प्रेरा जो जीव ताका सम्बोधना कठिन है। यद्यपि स्वामीका स्वभाव दुर्निवार है तथापि तिहारा कहा करै तो करै। तातैं तुम हितकी बात कहो, यामैं दोष नाही।

यह मन्त्रिनिने कही तब पटराणी साक्षात लक्ष्मी समान निर्मल है चित्त जाका, सो कम्पायमान पतिके समीप जायवेकू उद्यमी भई। महा निर्मल जलसमान वस्त्र पहिरे। जैसे रति कामके समीप जाय तैसे चाली। सिरपर छत्र फिरै है, अनेक सहेली चमर ढारै है। जैसे अनेक देवनिकर इन्द्राणी इन्द्रपै जाय तैसे यह सुन्दर वदनकी धरणहारी पतिपै गई। निश्वास नाखती, पांय डिगते, शिथिल होय गई है कटि मेखला जाकी भरतारके कार्यविषै सावधान, अनुरागकी भरी ताहि स्नेहकी दृष्टिकरि देखती भई। आपका चित्त शस्त्रनिविषै अर बक्तरविषै तिनकू आदरसे स्पर्शै है सो मदोदरीसे कहते भए—हे मनोहरे ! हंसनी समान चालकी चलनहारी हे देवी ! ऐसा कहा प्रयोजन है जो तुम शीघ्रतासे आवो हो। हे प्रिये ! मेरा मन काहेकू हरो हो, जैसे स्वप्नविषै निधान। तब वह पतिव्रता पूर्णचन्द्रसमान है वदन जाका, फूले कमलसमान नेत्र, स्वतः उत्तम चेष्टाकी धरणहारी, मनोहर जे कटाक्ष वेई भए बाण सो पतिकी ओर चलावनहारी, महाविचक्षण, मदनका निवास है अंग जाका, महा मधुर शब्दकी बोलनहारी, स्वर्णके

कुम्भसमान है स्तन जाके, तिनके भारकर नय गया है उदर जाका, दाडिमके बीज समान दांत, मूंगा समान लाल अधर, अत्यन्त सुकुमार, अति सुन्दरी, भरतारकी कृपाभूमि, सो नाथकूं प्रणाम कर कहती भई—हे देव! मोहि भरतारकी भीख देओ। आप महादयावंत धर्मात्माओंसे अधिक स्नेहवंत, मैं तिहारे वियोगरूप नदीविषै डूबूं हूं, सो महाराज मोहि निकासो। कैसी है नदी? दुःखरूप जलकी भरी, संकल्प विकल्परूप लहरकर पूर्ण है। हे महाबुद्धे! कुटुम्बरूप आकाशविषै सूर्यसमान प्रकाशके कर्त्ता एक मेरी विनती सुनहु। तिहारा कुलरूप कमलोंका वन महा विस्तीर्ण प्रलय हुआ जाय है सो क्यों न राखहु। हे प्रभो! तुम मोहि पटराणीका पद दिया हुता सो मेरे कठोर वचननिकूं क्षमा करो। जे अपने हितू हैं तिनका वचन औषध समान ग्राह्य है। परिणाम सुखदाई, विरोधरहित, स्वभावरूप आनन्दकारी है। मैं यह कहूं हूं तुम काहेकूं संदेहकी तुला चढो हो? यह तुला चढिवेकी नाहीं, काहेकूं आप संताप करो हो, अर हम सबनिकूं संताप करो हो, अब हू कहा गया? तिहारा सब राज, तुम सकल पृथ्वीके स्वामी, अर तिहारे भाई पुत्रनिकूं बुलाय लेहु। तुम अपना चित्त कुमार्गते निवारो, अपना मन वश करो। तिहारा मनोरथ अत्यन्त अकार्यविषै प्रवरता है सो इन्द्रियरूप तरल तुरगोंको विवेकरूप दृढ लगामकर वश करो। इन्द्रियनिके अर्थ कुमार्गविषै मनको कौन प्राप्त करै? तुम अपवादका देनहारा जो उद्यम ताविषै कहा प्रवर्तो हो? जैसे अष्टापद अपनी छाया कूपविषै देख क्रोधकर कूपविषै पडे तैसे तुम आपही क्लेश उपजाय आपदामें पडो हो। यह क्लेशका कारण जो अपयशरूप वृक्ष ताहि तजकर सुखसे तिष्ठो। केलिके थम्भसमान असार यह विषय ताहि कहा चाहो हो? यह तिहारा कुल समुद्र समान गम्भीर प्रशंसा योग्य, ताहि शोभित करो। यह भूमिगोचरोंकी स्त्री बडे कुलवंतनिकूं अग्निकी शिखा समान है ताहि तजो। हे स्वामी! जे सामंत सामंतसों युद्ध कर हैं वे मनविषै यह निश्चय कर हैं हम मरेंगे। हे नाथ! तुम कौन अर्थ मरो हो? पराई नारी ताके अर्थ कहा मरणा? या मरिवेविषै यश नाहीं। अर उनकूं मारो, तिहारी जीत होय तोहू यश नाहीं। क्षत्री

मर ह यशके अर्थ । तात सीतासम्बधी हठको छाडो । अर जे बडे बडे वत ह तिनकी महिमा तो कहा कही ? एक यह परदारपरित्याग हीं पुरुषके होय तो दोऊ जन्म सुधरें । शीलवत पुरुष भवसागर तिरे । जो सवथा स्त्रीका त्याग कर सो तो अति श्रेष्ठ ही ह । काजल समान कालिमाकी उपजावनहारी यह परनारी, तिनविष जे लोलुपी, तिनविष मेरु समान गुण होय तोहू तण समान लघु होय जाय । जो चक्रवर्तीका पुत्र होय अर देव जाका पक्ष होय अर परस्त्रीके सगरूप कीचविष डूब तो महा अपयशकू प्राप्त होय । जो मूढमति परस्त्रीसे रति कर ह सो पापी आशीविष भुजगनीसे रम ह । तिहारा कुल अत्यन्त निमल सो अपयशकर मलिन मत करो । दुबुद्धि तजो ! जे महाबलवान हुते अर दूसरोको निबल जानते अककीर्ति अशनघोषादिक अनेक नाशकू प्राप्त हुए । सो हे सुमुख ! तुम कहा न सुने ?

ये वचन मदोदरीके सुन रावण कमलनयन, कारी घटा समान ह वण जाका मलयागिरिचन्दन कर लिप्त मदोदरीसे कहता भया—हे काते ! तू काहेकू कायर भई । म अककीर्ति नाहीं जो जयकुमारसे हारा । अर म अशनघोष नाही जो अमिततेजसे हारा । अर और हू नाही, म दशमुख हू, तू काहेकू कायरताकी बात कह ह । म शत्रुरूप वक्षनिके समूहकू दावानलरूप हू । सीता कदाचित न दू । हे मदमानस ! तू भय मत कर । या कथा कर तोहि कहा ? तोको सीताकी रक्षा सौंपी ह सो रक्षा भली भाति कर । अर जो रक्षा करिवकू समथ नाही तो शीघ्र मोहि सौप देवो । तब मदोदरी कहती भई—तुम उससे रतिसुख बाछो हो तात यह कहो हो—मोहि सोप देवो । सो यह निलज्जताकी बात कुलवतोको उचित नाहीं । बहुरि कहती भई—तुमने सीताका कहा माहात्म्य देखा जो ताहि बारम्बार बाछो हो । वह ऐसी गुणवती नाहीं, ज्ञाता नाही, रूपवतियोका तिलक नाहीं, कलाविष प्रवीण नाहीं, मनमोहनी नाहीं, पतिके छाने (आज्ञा बिना) चलनेवारी नाहीं । ता सहित रतिविष बुद्धि करो हो, सो हे कत ! यह कहा वार्ता ? अपनी लघुता होय ह सो तम नाही जानो हो ? म अपने मुख अपनी प्रशसा कहा करू ? अपने मुख अपने गुण कहे गुणोकी गौणता होय ह । अर पराए मुख सुने प्रशसा होय ह । तात म कहा

कहू तुम सब नीके जानो हो। विचारी सीता कहा ? लक्ष्मी भी मेरे तुल्य नाहीं। तातै सीताकी अभिलाषा तजो। मेरा निरादरकर तुम भूमिगोचरिणीकू इच्छो हो, सो मंदमति हो। जैसे बालबुद्धि वडूर्य मणिको तज काचको इच्छे। ताका कछू दिव्यरूप नाहीं, तिहारे मनविषै क्या रुची यह ग्राम्य-जनकी नारी समान अल्पमति, ताकी कहा अभिलाषा ? अर मोहि आज्ञा देवो सोई रूप धरू, तिहारे चित्तकी हरणहारी मै लक्ष्मीरूप धरू। अर आज्ञा करो तो शची इन्द्राणीका रूप धरू। कहो तो रतिका रूप धरू। हे देव ! तुम इच्छा करो सोई रूप धरू। यह वार्ता मन्दोदरीकी सुन रावण ने नीचा मुख किया। अर लज्जावान भया। बहुरि मन्दोदरी कहती भई—तुम परस्त्री आसक्त होय अपनी आत्मा लघु किया। विषयरूप आमिषकी आसक्ती है जाके सो पापका भाजन है। धिक्कार है ऐसी क्षुद्र चेष्टाकू।

यह वचन सुन रावण मंदोदरीसे कहता भया—हे चन्द्रवदनी ! कमललोचने ! तुम यह कही—जो कहो जैसा रूप बहुरि धरू सो औरोके रूपसे तिहारा रूप कहा घटती है ? तिहारा स्वत ही रूप मोहि अति वल्लभ है। हे उत्तमे ! मेरे अन्य स्त्रीनि कर कहा ? तब हर्षितचित्त होय कहती भई—हे देव ! सूर्यको दीपका उद्योत कहा दिखाइये ? मै जो हितके वचन आपको कहे सो औरोसे पूछ देखो। मै स्त्री हू मेरेमें ऐसी बुद्धि नाहीं। शास्त्रमें कही है जो धनी सबही नय जाने है परन्तु दैवयोग थकी प्रमादरूप भया होय तो जे हितु है ते समझावै। जैसे विष्णुकुमार स्वामीको विक्रियाऋद्धिका विस्मरण भया तो औरोके कहे कर जाना। यह पुरुष, यह स्त्री ऐसा विकल्प मंदबुद्धिनिकै होय है। जे बुद्धिमान है हितकारी वचन सबहीका मान लेय। आपका कृपाभाव मो ऊपर है तो मै कहू हू। तुम परस्त्रीका प्रेम तजो, मै जानकीकू लेकर राम पै जाऊ, अर रामकू तिहारे पास ल्याऊ। अर कुम्भकरण, इन्द्रजीत, मेघनादकू लाऊ। अनेक जीवनिकी हिंसा कर कहा ? ऐसे वचन मंदोदरीने कहे तब रावण अति क्रोधकर कहता भया—शीघ्र ही जावो जावो, जहा तेरा मुख न देखू तहा जावो। अहो तू आपको

वथा पडित मान ह । आपकी ऊचता तज परपक्षको प्रशसामें प्रवरती । तू दीनचित्त ह, योधावोंकी माता, तेरे इन्द्रजीत मेघनादकेसे पुत्र, अर मेरी पटराणी, राजा मनकी पुत्री । तोमें एती कायरता कहासे आई ? ऐसा कहा तब मदोदरी बोली—हे पति ! सुनो जो ज्ञानियोंके मुख बलभद्र नारायण प्रतिनारायणका जन्म सुनिये ह । पहिला बलभद्र विजय नारायण त्रिपष्ठ, प्रतिनारायण अश्वग्रीव । दूजा बलभद्र अचल, नारायण द्विपष्ठ प्रतिहरि तारक इस भाति अबतक सात बलभद्र नारायण हो चुके । सो इनके शत्रु प्रतिनारायरण इन्होंने हते । अब तुम्हारे समय यह बलभद्र नारायण भए ह अर तुम प्रतिवासुदेव हो । आगे प्रतिवासुदेव हठ कर हते गए तस तुम नाशको इच्छो हो । जे बुद्धिमान ह तिनको यही काय करना जो या लोक परलोकमें सुख होय । अर दु खके अकुरकी उत्पत्ति न होय सो करना । यह जीव चिरकाल विषयसे तृप्त न भया, तीन लोकविष ऐसा कौन है जो विषयोसे तृप्त होय ? तुम पापकर मोहित भए हो सो वथा ह । अर उचित तो यह ह तुमने बहुकाल भोग किए, अब मुनिव्रत धरो अथवा श्रावकके व्रत धर दु ख नाश करो । अणुव्रतरूप खडगकर दीप्त ह अग जाका नियम रूप छत्रकर शोभित सम्यकदशनरूप बक्तर पहिरे, शीलरूप ध्वजा कर शोभित, अनित्यादि बारह भावना तेई चन्दन तिनकर चर्चित ह अग जाका, अर ज्ञानरूप धनुषको धरे, वश किया ह इन्द्रियनिका बल जान,शुभ ध्यान अर प्रतापकर युक्त, मर्यादारूप अकुशकर सयुक्त, निश्चलरूप हाथीपर चढा, जिन भक्ति कोंह महाभक्ति जाके,दुगतिरूप कुनदी सो महा कुटिल पापरूप ह वेग जाका, अतिदु सह पडितनिकर तिरिये ह,ताहि तिरकर सुखी होवो । अर हिमवान सुमेरु पवतविष जिनालयको पूजते सते मेरे सहित ढाई द्वीपमे विहार कर, अष्टापद सहस्त्रीनिके हस्तकमलपल्लव तिनकर लडाया सता सुमेरु पवतके वनविषै क्रीडा कर, अर गगाके तटपर क्रीडा कर, अर और भी मन वाछित प्रदेशनिविष रमणीक क्षेत्रनिविष हे नरेन्द्र ! सुखसे विहार कर । या युद्धकर कछू प्रयोजन नाहीं, प्रसन्न होवहु । मेरा वचन सवथा सुख का कारण ह । लोकापवाद मत करावहु । अपयशरूप समुद्रम काहेकू डूबौ हो ? यह अपवाद विषतुल्य

महानिन्द्य परम अनर्थका कारण भला नाहीं। दुर्जन लोक सहज ही परनिन्दा करें सो ऐसी बात सुन कर तो कर ही करें। या भांतिके शुभ वचन कह कर यह महासती हाथ जौड पतिका परमहित बांछती पतिके पायनि पडी।

तब रावण मन्दोदरीकूं उठायकर कहता भया—तू निःकारण क्यों भयकूं प्राप्त भई? सुन्दरवदनी! मोसे अधिक या संसारविषै कोई नाहीं। तू स्त्रीपर्यायके स्वभावकर वृथा काहेकूं भय करै है! तैंने कही जो यह बलदेव नारायण है सो नाम नारायण अर नाम बलदेव भया तो कहा? नाम भए कार्य की सिद्धि नाहीं। नाम नाहर भया तो कहा? नाहरके पराक्रम भए नाहर होय। कोई मनुष्य सिद्ध नाम कहाया तो कहा सिद्ध भया? हे कांते! तू कहा कायरताकी वार्ता करै? रथनूपुरका राजा इन्द्र कहावता सो कहा इन्द्र भया? तैसे यह भी नारायण नाहीं। या भांति रावण प्रतिनारायण ऐसे प्रबल वचन स्त्रीको कह महा प्रतापी क्रीडा भवनविषै मन्दोदरी सहित गया, जैसे इन्द्र इन्द्राणीसहित क्रीडा गृहविषै जाय। सांझके समय सांझ फूली, सूर्य अस्तसमय किरण संकोचने लगा, जैसे संयमी कषायोंको संकोचै। सूर्य आरक्त होय अस्तकूं प्राप्त भया, कमल मुद्रित भए। चकवा चकवी वियोगके भय कर दीन वचन रटते भए, मानो सूर्यकूं बुलावै है। अर सूर्यके अस्त होयवेकर ग्रह नक्षत्रनिकी सेना आकाशविषै बिस्तरी, मानो चन्द्रमाने पठाई। रात्रिके समय रत्नद्वीपोंका उद्योत भया। दीपोंकी प्रभाकर लंका नगरी ऐसी शोभती भई मानो सुमेरुकी शिखा ही है। कोऊ वल्लभा वल्लभसे मिलकर ऐसे कहती भई एक रात्रि तो तुम सहित व्यतीत करेंगे बहुरि देखिए कहा होय? अर कोई एक प्रिया नानाप्रकारके पुष्पनिकी सुगन्धताके मकरंदकर उन्मत्त भई स्वामीके अंगविषै मानो महा कोमल पुष्पनिकी वृष्टि ही पडी। कोई नारी कमल तुल्य हैं चरण जाके, अर कठिन हैं कुच जाके, महा सुन्दर शरीरकी धरणहारी, सुन्दरपतिके समीप गई। अर कोई सुन्दरी आभूषणनिकूं पहरती ऐसी शोभती भई मानों स्वर्ण रत्नोंको कृतार्थ करै है। भावार्थ—ता समान ज्योति रत्न स्वर्णनिविषै नाहीं। रात्रि

समय विद्याकरि विद्याधर मनवाछित क्रीडा करते भए। घर घर विषै भोगभूमिकीसी रचना होती भई। महा सु दर गीत, अर बीण बासुरियोका शब्द तिनकर लका हर्षित भई। मानो वचनालाप ही कर है। अर ताम्बूल सुग ध माल्यादिक भोग अर स्त्री आदि उपभोग सो भोगोपभोगनिकरि लोक देव निकी ज्याई रमते भए। अर कईएक उ मत्त भए स्त्रियोको नानाप्रकार रमावते भए। अर कईएक नारी अपने वदनकी प्रतिबिम्ब रत्ननिकी भीतिविषै देखकर जानती भई कि कोई दूजी स्त्री म दिरमें आई ह,सो ईर्षाकर नीलकमलसें पतिकू ताडना करती भई। स्त्रीनिके मुखकी सुग धताकर मदिरा सुग ध होय गई, अर मदिराके योगकर नारिनिके नेत्र लाल होय गए। अर कोईयक नायिका नवोढा हुती, अर प्रीतमनें मदिरा पिलाय उन्मत्त करी। सो म मथ कर्मविषै प्रवीण प्रौढाके भावकू प्राप्त भई। लज्जा रूप सखीकू दूरकर उन्मत्ततारूप सखीने क्रीडाविषै अत्य त तत्पर करी। अर घूमै ह नेत्र जाके अर स्खलित हैं वचन जाके स्त्री पुरुषनिकी चेष्टा उ मत्तताकर विकटरूप होती भई। नरनारिनिके अधर मू गा समान शोभायमाद दीखते भए। नर नारी मदो मत्त भए सो न कहनेकी बात कहते भये, अर न करनेकी बात करते भये। लज्जा छूट गई, च द्रमाके उदयकर मदनकी वद्धि भई। ऐसा ही तो इनका यौवन, ऐसे ही सु दर म दिर, अर ऐसा ही अमलका जोर सू सब ही उन्मत्त चेष्टाका कारण आय प्राप्त भया। ऐसी निशाविषै, प्रभातविषै होनहार ह युद्ध जिनकै सो स भोगका योग उत्सवरूप होता भया। अर राक्षसनिका इ द्र सु दर ह चेष्टा जाकी, सो समस्त ही राजलोककू रमावता भया, बारम्बार मदोदरीसू स्नेह जनावता भया। याका वदनरूप चन्द्र निरखते रावणके लोचन तप्त न भये। मदोदरी रावणकू कहती भई—म एक क्षणमात्र हू तमको न तजू गी। हे मनोहर ! सदा तिहारे स ग ही रहूगी। जस बेल बाहुबलिके सव अ गसू लगी तस रहूगी। आप युद्धविषै विजयकर वेग ही आवो। म रत्ननिकू चूणकर चौक पूरू गी। अर तिहारे अघपाद्य करू गी, प्रभुकी महामख पूजा कराऊगी। प्रेमकर कायर ह चित्त जाका, अत्य त प्रेमके वचन क‹ते निशा व्यतीत भई, अर कूकडा

बोलें, नक्षत्रनिकी ज्योति मिटी, सध्या लाल भई, अर भगवानके चत्यालयनिविष महा मनोहर गीत ध्वनि होती भई। अर सूयलोकका लोचन उदयकू सन्मुख भया, अपनी किरणनिकर सव दिशाविष उद्योत करता सता प्रलयकालके अग्निमण्डल समान ह आकार जाका प्रभात समय भया। तब सब्र राणी पतिकू छोडती उदास भई। तब रावणने सबकू दिलासा करी। गम्भीर वादित्र बाजे, शखो के शब्द भए। रावणकी आज्ञाकर जे युद्धविषै विचक्षण ह महाभट, महा अहकारकू धरते परम उद्धत अतिहषके भरे नगरसे निकसे। तुरग हस्ती रथोपर चढे, खडग धनुष गदा वरछी इत्यादि अनेक आयुधनिकू धरे, जिनपर चमर ढरते, छत्र फिरते, महा शोभायमान देवनि जसे स्वरूपवान, महा प्रतापी विद्याधरनिके अधिपति योधा, शीघ्र कायके करणहारे, श्रेष्ठ ऋद्धिके धारक युद्धकू उद्यमी भए। ता दिन नगरी स्त्री कमलनयनी करुणाभावकरि दुखरूप होती भई। सो तिनकू निरखे दुजनका चित्त भी दयाल होय। कोईयक सुभट घरसे युद्धकू निकसा अर स्त्री लार लगी आव ह ताहि कहता भया—हे मुग्धे! घर जावो। हम रुखसू जाय ह। अर कोईयक स्त्री भरतार चल ह तिनको पीछेसू जाय कहती भई—हे कत! तिहारा उत्तरासन लेवो, तब पति सन्मुख होय लेते भए! कसी ह मगनयनी? पतिके मुख देखवेकी ह लालसा जाके। अर कोईयक प्राणवल्लभा पतिकू दष्टिसे अगोचर होते सखियोसहित मूर्छा खाय पडी। अर कोईयक पतिसू पाछी आय मौन गह, सेजपर परी, मानो काठकी पुतली ही है। अर कोईयक शूरवीर श्रावणके वतका धारक पीठपीछे अपनी स्त्रीकू देखता भया अर आग देवागनाओकू देखता भया। भावाथ—जे सामत अणुवत धारक ह वे देवलोकके अधिकारी ह। अर जे सामत पहिले पूणमासीके चन्द्रमा समान सौम्यवदन हुते वे युद्धके आगमनविष कालसमान क्रूर आकार होय गए। सिरपर टोप धरे वक्तर पहिरे शस्त्र लीए तेज भासते भए।

अथानन्तर चतुरग सेना सयुक्त धनुष छत्रादिककर पूण मारीच महा तेजकू धरे युद्धका अभिलाषी आय प्राप्त भया। फिर विमलचन्द्र आया महा धनुषधारी। अर सुनन्द आनन्द नन्द इत्यादि हजारो

राजा आए। सो विद्याकर निरमापित दिव्यरथ तिनपर चढे अग्नि कीसी प्रभाकू धर मानो अग्नि कुमारदेव ही ह। कईएक तीक्ष्ण शस्त्रोकर सम्पूण हिमवान पवतसमान जे हाथी उनपर सवदिशावोकू आच्छादते हुए आए, जस विजुरीसे सयुक्त मेघमाला आव। अर कईएक श्रेष्ठ तुरगोपर चढे पाचो हथियारोकर सयुक्त शीघ्र ही ज्योतिष लोककू उलघ आवते भए। नाना प्रकारके बडे बडे वादित्र और तुरगोका हींसना। गजोका गजना, पयादोके शब्द, योधानिके सिहनाद, बन्दीजनोके जय जय शब्द, अर गुणीजनोके गीत वीररसके भरे इत्यादि और भी अनेक शब्द भले भए। धरती आकाश शब्दायमान भए। जस प्रलयकालके मेघपटल होव तस निकसे। मनुष्य हाथी घोडे रथ पियादे परस्पर अत्यन्त विभूतिकर देदीप्यमान, बडी भुजानिसे बख्तर पहिर उतग है उरस्थल जिनके, विजयके अभिलाषी और पयादे खडग सम्भाले ह महा चाचल आगे आगे चले जाय ह, स्वामीके हष उपजावनहारे तिनके समूहकर आकाश पथ्वी और सव दिशा व्याप्त भइ। ऐसे उपाय करते भी या जीवके पूव कमका जसा उदय ह तसा ही होय ह। यह प्राणी अनेक चेष्टा कर ह परन्तु अन्यथा न होय, जसा भवितव्य ह तसा ही होय। सूय हू और प्रकार करिवे समथ नाहीं।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष रावणका युद्धविष उद्यमी होनेका वणन करनेवाला तेहत्तरवा पव पूण भया ॥ ७३ ॥

अथानन्तर लकेश्वर मदोदरीसू कहता भया—हे प्रिये! न जानिये बहुरि तिहारा दशन होय वा न होय। तब मदोदरी कहती भई—हे नाथ! सदा वद्धिकू प्राप्त होवो, शत्रुवोकू जीत शीघ्र ही आय हमको देखोगे। अर सग्रामसे जीते आओगे। ऐसा कहा अर हजारो स्त्रियोकर अवलोकता साता राक्षसो का नाथ मदिरसे बाहिर गया। महा विकटताकू धरे विद्याकर निरमाप्या ऐन्द्रनामा रथ ताहि देखता भया। जाके हजार हाथी जुपें, मानो कारी घटाका मेघ ही ह। हे नाथ! मन्दोन्मत्त झरे ह मद

जिनके, मोतियोकी माला तिनकरि पूण, महा घटाके नादकर युक्त ऐरावत समान नानाप्रकारके रगो से शोभित, जिनका जीतना कठिन, अर विनयके धाम, अत्यन्त गजनाकर शोभित ऐसे सोहते भए मानो कारी घटाक समूह ही ह । मनोहर ह प्रभा जिनकी ऐसे हाथियोके रथ चढ्या रावण सोहता भया । भुज बध कर शोभायमान ह भुजा जाकी, मानो साक्षात इन्द्र ही ह । विस्तीण है नेत्र जाके, अनुपम ह आकार जाका, अर तेज कर सकल लोकविष श्रेष्ठ १० हजार आप समान विद्याधर तिनके मडलकर युक्त रणविष आया, सो वे महा बलवान देवो सारिखे अभिप्रायके वेत्ता रावणकू देखि सुग्रीव हनुमान क्रोधकू प्राप्त भए । अर जब रावण चढ्या तब अत्यन्त अपशकुन भए । भयानक शब्द भए, अर आकाश विष गध्र भ्रमते भए आच्छादित किया ह सूयका प्रकाश जिन्होने, सो ये क्षयके सूचक अपशकुन भए । परन्तु रावणके सुभट न मानते भए, युद्धकू आए ही । अर श्रीरामचन्द्र अपनी सेनाविष तिष्ठते सो लोक निसू पूछते भए—हे लोको ! या नगरीके समीप यह कौन पवत ह ? तब सुषेणादिक तो तत्कालही जवाब न देय सके अर जाबुवादिक कहते भए—यह बहुरूपिणी विद्यासे रचा पदमनागनामा रथ ह घनेनिकू मृत्यका कारण । अगदने नगरविष जायकर रावणकू क्रोध उपजाया सो अब बहुरूपिणी विद्या सिद्ध भई हमसे महाशत्रुता लिए ह । सो तिनके वचन सुनकर लक्ष्मण सारथीसे कहता भया मेरा रथ शीघ्र ही चलाय । तब सारथीने रथ चलाया अर जस समुद्र गाजै ऐसे वादित्र बाजे । वादित्रोके नाद सुनकर योधा विकट ह चेष्टा जिनकी, लक्ष्मणके समीप आए । कोईयक रामके कटकका सुभट अपनी स्त्रीको कहता भया—हे प्रिये ! तू शोक तज पाछी जावहु म लकेश्वरकू जीत तिहारे समीप आऊगा, या भाति गवकर प्रचड जे योधा वे अपनी स्त्रीनिकू धीय बधाय अन्त पुरसे निकसे । परस्पर स्पर्धा करते वेगसे प्रेरे ह वाहन रथादिक जिन्होने ऐसे महायोधा शस्त्रके धारण युद्धकू उद्यमी भए । भूतस्वननामा विद्याधरनिका अधिपति महा हाथियोके रथ चढा निकस्या, गम्भीर ह शब्द जाका । या विधि और भी विद्याधरनिके अधिपति हष सहित रामके सुभट क्रूर ह आकार जिनके, क्रोधायमान होय रावणके

योधानिसू जसा समुद्र गाज तसे गाजते, गगाकी उतग लहर समान उछलते, युद्धके अभिलाषी भए, अर राम लक्ष्मण डेरानिसू निकसे। कसे ह दोऊ भाई? पथ्वीविषे व्याप्त ह अनेक यश जिनके, क्रूर आकार कू धरे, सिहनिके रथ चढे बख्तर पहिरे। महा बलवान उगते सूर्यसमान श्रीराम शोभते भए। अर लक्ष्मण गरुडकी ह ध्वजा जाके अर गरुडके रथ चढया। कारी घटा समान ह रग जाका अपनो श्यामताकर श्याम करी ह दशोदिशा जाने मुकुटकू धरे कुण्डल पहिरे धनुष चढाय बख्तर पहिर बाण लिए जसा साझके समय अजनगिर सोह तसे शोभता भया। गौतम स्वामी कह ह-हे श्रेणिक! बडे २ विद्याधर नाना प्रकारके वाहन अर विमाननिपर चढे युद्ध करिवेकू कटकसू निकसे। जब श्रीराम चढे तब अनेक शुभ शकुन आनन्दक उपजावनहारे भए। रामको चढया जान रावण शीघ्र ही दावानल समान ह आकार जाका युद्धकू उद्यमी भया। दोनो ही कटकके योधा ज महा सामत तिनपर आकाशसे ग धर्व अर अप्सरा पुष्पवृष्टि करती भई। अजनगिरिसे हाथी महावतोके प्रेरे मदो मत्त चले। पियादो कर बेढे अर सूर्यके रथ समान रथ चचल ह तुरग जिनके सारथीनिकर युक्त। जिनपर महा योधा चढे युद्धको प्रवर्ते। अर घोडो पर चढे सामन्त गम्भीर ह नाद जिनके परम तेजकू धरे गाजते भए। अर अश्व हींसते भए। परम हर्षक भरे देदीप्यमान ह आयुध जिनके अर पियादे गर्वके भरे पथ्वीविषे उछलते भए। खड्ग खेट बरछी ह हाथविषे जिनके,युद्धकी पथ्वीविषे प्रवेश करत भये। परस्पर स्पर्धा कर ह दौड ह, योधानिविषे परस्पर अनेक आयुधनिकर तथा लाठी मूका लोहयष्टिनिकर युद्ध भया ह, परस्पर केशग्रहण भया। खडग कर विदारा गया ह। शरीर जिनका, कईएक बाणकर बींधे गए तथापि योधा युद्धके आगे ही भए, मार ह प्रहार कर ह गाज ह घोडे व्याकुल भए भ्रमै ह, कईएक आसन खाली होय गए असवार मारे गए मुष्टियुद्ध गदायुद्ध भया, कईएक बाणनिकर बहुत मारे गए, कईएक खडग कर, कईएक सेलोकर घाव खाए, बहुरि शत्रुकू घायल करते भए, कईएक मनवाछित भोगनिकर इन्द्रियनिकू रमावते सो युद्धविषे इन्द्रियें इनको छोडती भई। जसे काय परे कुमित्र तज, कईएकके बातनिके ढेर होय गए तथापि

खेद न मानते भए शत्रुनिपर जाय पडे, अर शत्रुसहित आप प्राणांत भए, डसे हैं होठ जिन्होंने। जे राज कुमार देवकुमार सारिखे सुकुमार रत्ननिके महिलोके शिखरविषै क्रीडा करते,महा भोगी पुरुष स्त्रीनिके स्तन कर रमाये सते वे खडग चक्र कनक इत्यादि आयुधनिकर विदारे सते संग्रामकी भूमिविषै पडे। विरूप आकार तिनको गृध्र पक्षी अर स्याल भखै हैं। अर जैसे रंगमहिलमें रंगकी रामा नखोकर चिह्न करती अर निकट आवर्ती, तैसे स्यालनी नख दंतनिकर चिह्न करै है, अर समीप आवै है। बहुरि श्वासके प्रकाशकर जीवते जानि वे डर जाय हैं, जैसे डाकनी मंत्रवादीसे दूर जाय। अर सामंत निकू जीवते जानि यक्षिणी डर कर उड जाती भई, जैसे दुष्ट नारी, चलायमान हैं नेत्र जिसके, पति के समीपसे जाती रहे। जीवोके शुभाशुभ प्रकृतिका उदय युद्धविषै लखिए है। दोनो बराबर, अर कोईकी हार होय कोईकी जीत होय। अर कबहू अल्प सेनाका स्वामी महा सेनाके स्वामीको जीते, अर कोईयक सुकृतके सामर्थ्यसे बहुतोको जीते, अर कोई बहुत भी पापके उदयसे हार जाय। जिन जीवोने पूर्व भवविषै तप किया ते राज्यके अधिकारी होय विजयको पावैं हैं। अर जिन्होंने तप न किया अथवा तप भंग किया तिनकी हार होय है। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहै हैं—हे श्रेणिक! यह धर्म मर्मकी रक्षा करै है, अर दुर्जयको जीतै है। धर्मही बडा सहाई है। बडा पक्ष धर्मका है। धर्म सब ठौर रक्षा करै है। घोडोकर युक्त रथ, पर्वत समान हाथी, पवन समान तुरंग, असुर कुमारसे पयादे इत्यादि सामग्री पूर्ण है, परन्तु पूर्वपुण्यके उदय विना कोई राखिवे समर्थ नाहीं। एक पुण्याधिकारी ही शत्रुवोकी जीत है। इस भांति राम रावणके युद्धकी प्रवृत्तिविषै योधावोकर योधा हते गए, तिनकर रणक्षेत्र भर गया, अवकाश नाहीं। आयुधोकर योधा उछलै हैं, परै हैं सो आकाश ऐसा दृष्टि पडता भया मानो उत्पातके बादलोकर मंडित है।

अथानन्तर मारीच, चन्द्रनिकर, वज्राक्ष, शुकसारण और भी राक्षसोके अधीश तिन्होंने रामका कटक दबाया। तब हनुमान चन्द्र मारीच नील मुकुंद भूतस्वन इत्यादि रामपक्षके योधा तिन्होंने राक्षसनि-

की सेना दबाई। तब रावणके योधा कुद, कुम्भ, निकुम्भ, विक्रम, क्रमाण, जम्बूमाली, काकबली सूर्यार, मकरध्वज, अशनिरथ इत्यादि राक्षसनिके बडे बडे राजा शीघ्रही युद्धकू उठे। तब भूधर, अचल, सम्मेद, निकाल, कुटिल, अगद, सुखेण, कालचन्द्र, उर्मितरग इत्यादि बानरवशी योधा तिनके सन्मुख भए। उनही समान ता समय कोई सुभट प्रतिपक्षी सुभट विना दृष्टि न पडया। भावाथ--दोनो पक्षके योधा परस्पर महा यद्ध करते भए। अर अजनीका पुत्र हाथिनिके रथपर चढकर रणमें क्रीडा करता भया, जस कमलनिकर भरे सरोवरमे महागज क्रीडा कर। गौतम गणधर कह ह--हे श्रेणिक! वा हनुमान शूरवीरने राक्षसनिकी बडी सेना चलायमान करी, उसे रुचा जो किया। तब राजा मय विद्याधर दत्य वशी मदोदरीका बाप, क्रोधके प्रसगकर लाल ह नेत्र जाके, सो हनुमानके सन्मुख आया। तब वह हनुमान कमल समान ह नेत्र जाके बाणवृष्टि करता भया, सो मयका रथ चकचूर किया। तब वह दूजे रथ चढकर युद्धको उद्यमी भया तब हनुमानने बहुरि रथ तोड डाला। तब मयको विह्वल देख रावणने बहुरूपिणी विद्याकर प्रज्वलित उत्तम रथ शीघ्र ही भेजा। सो राजा मयने वा रथपर चढ कर हनुमानसे युद्ध किया अर हनुमानका रथ तोडा। तब हनुमानको दबा देख भामडल मदद आया। सो मयने वाणवर्षाकर भामडलका भी रथ तोडा। तब राजा सुग्रीव इनके मदद आए। सो मयने ताकू शस्त्ररहित किया अर भूमिमें डारा। तब इनकी मदद विभीषण आया। तो विभीषणके अर मयके अत्यन्त युद्ध भया, परस्पर बाण चले। सो मयने विभीषणका वखतर तोडा। सो अशोकवृक्षके पुष्प समान लाल होय तसी लालरूप रुधिरकी धारा विभीषणके पडी। तब वानरवशियोकी सेना चलायमान भई--अर राम युद्धकू उद्यमी भए, विद्यामई सिहनिके रथ चढे शीघ्र ही मय पर आए। अर बानरवशीनिकू कहते भए--तुम भय मत करहु। रावणकी सेना विजुरी सहित कारी घटा समान तामें उगते सूय समान श्रीराम प्रवेश करते भए। अर परसेनाका विध्वस करवेकू उद्यमी भए। तब हनुमान भामडल सुग्रीव विभीषणकू धीय उपजा अर वानरवशिनिकी सेना युद्ध करवेकू उद्यमी भई।

रामका बल पाय रामके सेवकनिका भय मिटा। परस्पर दोनो सेनाके योधानिविषै शस्त्रोका प्रहार भया, सो देख देख देव आश्चर्यकू प्राप्त भए। अर दोनो सेनाविषै अंधकार होय गया। प्रकाशरहित लोक दृष्टि न पडे। श्रीराम राजा मयको बाणनिकर अत्यन्त आच्छादते भए। थोडे ही खेद कर मय कू विह्वल किया, जैसे इन्द्र चमरेन्द्रकू कर। तब रामके बाणोकर मयकू विह्वल देख, रावण काल समान क्रोधकर राम पर धाया। तब लक्ष्मण रामकी ओर रावणकू आवता देख महातेज कर कहता भया—हो विद्याधर! तू किधर जाय है, मैं तोहि आज देख्या, खडा रहो। हे रंक! पापी, चोर, पर स्त्रीरूप दीपकके पतंग, अधमपुरुष, दुराचारी! आज मैं तोसो ऐसी करू जैसी काल न करे। हे कुमानुष! श्रीराघवदेव समस्त पृथ्वीके पति तिन्होने मोहि आज्ञा करी है जो या चोरकू सजा देहु। तब दशमुख महा क्रोध कर लक्ष्मणसू कहता भया—रे मूढ! तैने कहा लोकप्रसिद्ध मेरा प्रताप न सुना? या पृथ्वीविषै जे सुन्दर शरीरी सार वस्तु है सो सब मेरी ही है। मैं राजा पृथ्वीपति, जो उत्कृष्ट वस्तु सो मेरी। घण्टा गजके कंठविषै सोहै, स्वानके न सोहै। तैसे योग्य वस्तु मेरे घर सोहै औरके नाहीं। तू मनुष्यमात्र वृथा विलाप करै तेरी कहा शक्ति? तू दीन मेरे समान नाहीं। मैं रंकसे क्या युद्ध करू? तू अशुभके उदयसे मोसे युद्ध किया चाहे है सो जीवनसे उदास भया है, मूवा चाहै है। तब लक्ष्मण बोले तू जैसा पृथ्वीपति है तैसा मैं नीके जानू हू। आज तेरा गाजना पूर्ण करू हू। जब ऐसा लक्ष्मण ने कहा तब रावणने अपने बाण लक्ष्मण पर चलाए, अर लक्ष्मणने रावण पर चलाए! जैसे वर्षाका मेघ जलवृष्टि कर गिरिकू आच्छादित करै, तैसे बाणवृष्टिकर वाने वाकू वेध्या अर वाने वाकू वेध्या। सो रावणके बाण लक्ष्मणने वज्रदंडकर बीचही तोड डारे, आप तक आवने न दिए, बाणोके समूह छेद भेद तोडे फोडे चूर कर डारे। सो धरती आकाश बाणखंडनिकर भर गए। लक्ष्मणने रावण कू सामान्य शस्त्रनिकर विह्वल किया। तऊ रावणने जानी यह सामान्य शस्त्रनिकर जीता न जाय, तब लक्ष्मण पर रावणने मेघबाण चलाया सो धरती आकाश जलरूप होय गए। तब लक्ष्मणने पवन

बाण चलाया, क्षणमात्रमें मघबाण विलय किया। बहुरि दशमुखने अग्निबाण चलाया सो दशो दिशा प्रज्ज्वलित भई। तब लक्ष्मणने वरुणशस्त्र चलाया सो एक निमिषमे अग्निबाण नाशकू प्राप्त भया। बहुरि लक्ष्मणने पापबाण चलाया सो धमबाणकर रावणने निवारचा। बहुरि लक्ष्मणने ईधनबाण चलाया सो रावणने अग्निबाण कर भस्म किया। बहुरि लक्ष्मणने तिमिरबाण चलाया सो अधकार होय गया, आकाश वक्षनिके समूहकर आच्छादित भया। कसे ह वक्ष ? आसार फलनिकू बरसावे ह आसार पुष्पनिके पटल छाय गए। तब रावणने सूयबाण कर तिमिरबाण निवारचा अर लक्ष्मण पर नागबाण चलाया। अनेक नाग चले, विकराल ह फण जिनक। तब लक्ष्मणने गरुडबाणकर नागबाण निवारचा। गरुडकी पाखोकर आकाश स्वणकी प्रभारूप प्रतिभासता भया। बहुरि रामके भाईने रावण पर सपबाण चलाया। प्रलयकालके मेघ समान ह शब्द जाका, अर विषरूप अग्निके कणनिकर महाविषम। तब रावणने मयूरबाणकर सपवाण निवारा, अर लक्ष्मणपर विघ्नबाण चलाया। सो विघ्नबाण दुर्निवार, ताका उपाय सिद्धबाण, सो लक्ष्मणकू याद न आया। तब वजदड आदि अनेक शस्त्र चलाए। रावण हू सामान्य शस्त्रनिकर युद्ध करता भया, दोनो योधानिमें समान युद्ध भया। जसा त्रिपष्ठ अर अश्वग्रीवक युद्ध भया हुता, तसा लक्ष्मण रावणके भया। जसा पूर्वोपार्जित कमका उदय होय तसा ही फल होय। तसी क्रिया कर जे महा क्रोधके वशमें ह अर जो काय आरम्भा ताविष उद्यमी ह, ते नर तीव्र शस्त्रकू न गिन, अर अग्निकू न गिने, सूयको न गिन, वायुकू न गिने।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष रावण लक्ष्मणका युद्ध वणन करने वाला चौहत्तरवा पव पूण भया ॥७४॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कह है—हे भव्योत्तम! दोनो ही सेनाविष तषावतनिकू शीतल मिष्ट जल प्याइये ह, अर क्षधावन्तोको अमत समान आहार दीजिए हैं, अर खेदवन्तोकू मलयागिरि

चन्दनसे छिडकिये हैं, ताडवृक्षके बीजनेसे पवन करिए है, बरफके वारिसे छाटिये है तथा और हू उपचार अनेक कीजिए है। अपना पराया कोई होऊ सबके यत्न कीजिए है। यही सग्रामकी रीति है। दश दिन युद्ध करते भए, दोऊ ही महावीर अभगचित्त। रावण लक्ष्मण दोनो समान, जैसा वह तसा वह। सो यक्ष गधर्व किन्नर अप्सरा आश्चर्यकू प्राप्त भए। अर दोऊनिका यश करते भए, दोऊनिपर पुष्प वर्षा करी। अर एक चन्द्रवर्धन नामा विद्याधर ताकी आठ पुत्री, सो आकाशविषै विमानविषै बैठी देख तिनकू कौतूहलसे अप्सरा पूछती भई—तुम देवियो सारिखी कौन हो? तिहारी लक्ष्मणविषै विशेष भक्ति दीख है, अर तुम सुन्दर सुकुमार शरीर हो। तब वे लज्जासहित कहती भई—तुमको कौतूहल है तो सुनो—जब सीताका स्वयम्बर हुआ तब हमारा पिता हम सहित तहा आया था। तहा लक्ष्मणको देख हमकू देनी करी अर हमारा भी मन लक्ष्मणविषै मोहित भया। सो अब यह सग्राम विषै वर्ते है, न जानिए कहा होय? यह मनुष्यनिविषै चन्द्रमा समान प्राणनाथ है। जो याकी दशा सो हमारी। ऐसे इनके मनोहर शब्द सुनकर लक्ष्मण ऊपरकू चौंके, तब वे आठो ही कन्या इनके देखवेकर परम हर्षकू प्राप्त भई—अर कहती भई—हे नाथ! सर्वथा तिहारा कार्य सिद्ध होहु। तब लक्ष्मणकू विघ्नबाणका उपाय सिद्धबाण याद आया, अर प्रसन्न वदन भया। सिद्धबाण चलाय विघ्न बाण विलय किया। अर आप महाप्रतापरूप युद्धकू उद्यमी भया। जो जो शस्त्र रावण चलावै सो रामका वीर महाधोर शस्त्रनिविषै प्रवीण छेद डारे, अर आप बाणनिके समूहकर सब दिशा पूर्ण करी, जसे मेघपटलकर पर्वत आच्छादित होय। रावण बहुरूपिणी विद्याके बलकरि रणक्रीडा करता भया। लक्ष्मणने रावणका एक सीस छेदा, तब दोय सीस भए, दोय छेदे तब चार भए, अर दोय भुजा छेदी तब चार भई, अर चार छेदी तब आठ भई। या भांति ज्यो ज्यो छेदी, त्यो त्यो दुगुनी भई। अर सीस दुगुणे भए। हजारो सिर अर हजारो भुजा भई रावणके कर हाथीके सूण्ड समान भुजबन्धन कर शोभित, अर सिर मुकुटोकर मंडित, तिनकर रणक्षेत्र पूर्ण किया। मानो रावणरूप समुद्र

महा भयकर ताके हजारो सिर वेई भए ग्राह, अर हजारो भुजा वई भई तरग तिनकर बढ़ता भया। अर रावणरूप मेघ, जाके बाहुरूप विजुरी, अर प्रचड ह शब्द, अर सिर ही भए शिखर तिनकर सोहता भया। रावण अकेला ही महासेना समान भया। अनेक मस्तक तिनके समूह, जिनपर छत्र फिर, मानो यह विचार लक्ष्मणन याहि बहुरूप किया। जो आगे म अकेले अनेकनिसू युद्ध किया अब या अकेले से कहा युद्ध करू? तात याहि बहुशरीर किया। रावण प्रज्ज्वलित बनसमान भासता भया। रत्ननिके आभूषण अर शस्त्रनिकी किरणनिके समूहकर प्रदीप्त रावण लक्ष्मणकू हजारो भुजानिकर, बाण शक्ति खडग वरछी सामा य चक्र इत्यादि शस्त्रनिकी वर्षाकर आच्छादता भया। सो सब बाण लक्ष्मण छेदे अर महाक्रोधरूप होय सूय समान तजरूप बाणनिकर रावणकू आच्छादनेकू उद्यमी भया। एक दोय तीन चार पाच छह दस बीस शत सहस मायामई रावणके सिर लक्ष्मणने छेदे। हजारो सिर भुजा भूमिविष पडे, सो रणभूमि उनकर आच्छादित भई। एसी सौह मानो सर्पादिके फणनि सहित कमलनिके बन ह। भुजोसहित सिर पडे वे उलकापातसे भासे। जेते रावणके बहुरूपिणी विद्याकर सिर अर भुज भए तेते सब सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणने छेदे, जस महामुनि कमनिके समूहको छेदै। रुधिरकी धारा निरन्तर पडी। तिनकर आकाशविष मानो साझ फूली। दोय भुजाका धारक लक्ष्मण ताने रावणकी असख्यात भुजा विफल करीं। कसे ह लक्ष्मण? महा प्रभावकर युक्त ह। रावण पसेवके समूह कर भर गया ह अग जाका, स्वास कर सयुक्त ह मुख जाका, यद्यपि महाबलवान हुता तथापि व्याकुलचित भया। गौतमस्वामी कह ह—श्रेणिक! बहुरूपिणी विद्याके बलकर रावणने महा भयकर युद्ध किया, पर लक्ष्मणके आग वहुरूपिणी विद्याका बल न चला। तब रावण मायाचार तज सहज रूप होय क्रोधका भरा युद्ध करता भया। अनेक दिव्यशस्त्रनिकर अर सामान्य शस्त्रनिकर युद्ध किया, परतु वासुदेवको जीत न सक्या। तब प्रलय कालके सूय समान ह प्रभा जाकी, परपक्षका क्षय करणहारा जो चक्ररत्न ताहि चिन्तता भया। कसा ह चक्ररत्न? अप्रमाण प्रभावके समूहकू धरे, मोतिनिको

झालरियोकर मंडित, महा देदीप्यमान, दिव्य, वज्रमई, महा अद्भुत, नाना प्रकारके रत्ननिकर मंडित हैं अंग जाका, दिव्यमाला अर सुगंधकर लिप्त, अग्निके समूह तुल्य धारानिके समूहकर महा प्रकाशवन्त, वडूर्य मणिके सहस्र आरे तिनकर युक्त, जिसका दर्शन सहा न जाय, सदा हजार यक्ष जाकी रक्षा करें, महा क्रोधका भरा, जसा कालका मुख होय ता समान वह चक्र चितवते ही कर विषै आया। जाकी ज्योतिकर ज्योतिष देवोंकी प्रभा मंद होय गई, अर सूर्यकी कांति ऐसी होय गई मानो चित्राम का सूर्य है। अर अप्सरा विश्वावसु तुंबरु नारद इत्यादि गंधर्वनिके भेद आकाशविषै रणका कौतुक देखते हुते सो भयंकर परे गए। अर लक्ष्मण अत्यन्त धीर शत्रुको चक्र संयुक्त देख कहता भया—हे अधम नर ! याहि कहा ले रहा है जसे कृपण कौडीको ले रहै। तेरी शक्ति है तो प्रहार कर। ऐसा कह्या तबवह महा क्रोधायमान होय, दांतनिकर डसे हैं होंठ जाने, लाल हैं नेत्र जाके, चक्रकूं फेर लक्ष्मणपर चलाया। कसा है चक्र ? मेघमंडल समान है शब्द जाका, अर महा शीघ्रताकूं लिए प्रलयकालके सूर्य समान मनुष्यानिकूं जीतव्यके संशयका कारण। ताहि सन्मुख आवता देख लक्ष्मण वज्रमई है मुख जिनका ऐसे बाणनिकर चक्रके निवारवेकूं उद्यमी भया। अर श्रीराम वज्रावर्त धनुष चढाय अमोघ बाणनिकर चक्र के निवारवेकूं उद्यमी भए। अर हल मूशलनकूं भ्रमावते चक्रके सन्मुख भए। अर सुग्रीव गदाकूं फिराय चक्रके सन्मुख भए। अर भामंडल खडगकूं लेकर निवारिवेकूं उद्यमी भए। अर विभीषण त्रिशूल ले ठाढे भए। अर हनुमान मुदगर लांगूल कनकादि लेकर उद्यमी भए। अर अंगद पारण नामा शस्त्र लेकर ठाढे भए। अर अंगदका भाई अंगकुठार लेकर महा तेजरूप खडे भए। और हू दूसरे श्रेष्ठ विद्याधर अनेक आयुधनिकर युक्त सब एक होयकर जीवनेकी आशा तज चक्रके निवारिवेकूं उद्यमी भए, परन्तु चक्र कूं निवार न सके। कसा है चक्र ? देव करे है सेवा जाकी। ताने आयकर लक्ष्मणकूं तीन प्रदक्षिणा देय अपना स्वरूप कर लक्ष्मणके करविषै तिष्ठा, सुखदाई शांत है आकार जाका। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे है—हे मगधाधिपति ! राम लक्ष्मणका महा ऋद्धिकूं धर यह महात्म्य तोहि

सक्षेपसे कहा । कसा ह इनका माहात्म्य ? जाहि सुने परम आश्चय उपज । अर लोकविष श्रेष्ठ ह । कईएकके पुण्यके उदयकर परम विभूति होय ह । अर कईएक पुण्यके क्षयकर नाश होय ह । जस सूयका अस्त चन्द्रमाका उदय होय ह तस लक्ष्मणके पुण्यका उदय जानना ।

इति श्रीरविषेणाचाय विरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविषलक्ष्मणके चक्ररत्नकी उत्पत्ति वणन करनेवाला पचहत्तरवा पव पण भया ॥ ७५ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणके हाथविष महासुन्दर चक्ररत्न आया देख सुग्रीव भामण्डलादि विद्याधरनिके अधिपति अति हर्षित भए अर परस्पर कहते भए—आग भगवान अनन्तवीय कवलीने आज्ञा करी जो लक्ष्मण आठवा वासुदेव ह, अर राम आठवा बलदेव ह,सो यह महाज्योति चक्रपाणि भया । अति उत्तम शरीरका धारक याके बलका कौन वणन कर सके । अर यह श्रीराम बलदेव जाके रथकू महा तेजवत सिंह चलाव, जाने राजा मयको पकडा, अर हल मूसल महारत्न देदीप्यमान जाके करविष सोह । ये बलभद्र नारायण दोऊ भाई पुरुषोत्तम प्रकट भए, पुण्यके प्रभावकर परमप्रेमके भरे । लक्ष्मण के हाथ-विष सुदशन चक्रकू देख राक्षसनिका अधिपति चित्तविष चितार ह जो भगवान अनन्तवीयने आज्ञा करी हुती सोई भई । निश्चय सेती कमरूप पवनका प्रेरा यह समय आया । जाका छत्र देख विद्याधर डरते, अर परकी महासेना भाग जाती, परसेनाकी ध्वजा अर छत्र मेरे प्रतापसे बहे बहे फिरते, हिमाचल विध्याचल ह स्तन जाके, समुद्र ह वस्त्र जाके, ऐसी यह पृथ्वी मरी दासी सयान आज्ञा कारिणी हुती, ऐसा म रावण सो रणविष भूमिगोचरनिने जीत्या, यह अदभुत बात ह । कष्टकी अवस्था आय प्राप्त भई । धिक्कार या राज्यलक्ष्मीकू । कुलटा स्त्रीसमान ह चेष्टा जाकी । पूज्य पुरुष या पापिनीकू तत्काल तज । यह इन्द्रियनिके भोग इन्द्रायणके फल समान, इनका परिपाक विरस ह, अनन्त दु ख सम्बन्धके कारण साधुनिकर निद्य ह । पृथ्वीविष उत्तम पुरुष भरत चक्रवर्त्यादि भए ते

धन्य हैं जिन्होने निःकंटक छहखंड पृथ्वीका राज्य किया अर विषके मिले अन्नकी न्याईं राज्यकूं तज जिनेन्द्र व्रत धार रत्नत्रयकूं आराधनकर परमपदकूं प्राप्त भए हैं। मैं रंक विषयाभिलाषी, मोह बलवानने मोहि जीत्या। यह मोह संसारभ्रमणका कारण। धिक्कार मोहि जो मोहके वश होय ऐसी चेष्टा करी। रावण तो यह चितवन करै है। अर आया है चक्र जाके ऐसा जो लक्ष्मण महा तेजका धारक सो विभीषणकी ओर निरख रावणसे कहता भया—हे विद्याधर! अब हू कछू न गया है, जानकीकूं लाय श्रीरामदेवकूं सौंप दे। अर यह वचन कह कि श्रीरामके प्रसादकर जीवूं हूं। हमको तेरा कछु चाहिए नाहीं। तेरी राज्यलक्ष्मी तेरे ही रहो। तब रावण मंद हास्यकर कहता भया—हे रंक! तेरे वृथा गर्व उपजा है। अबार ही अपने पराक्रम तोहि दिखावूं हूं। हे अधमनर! मैं तोहि जो अवस्था दिखाऊं सो भोग। मैं रावण पृथ्वीपति, विद्याधर, तू भूमिगोचरी रंक। तब लक्ष्मण बोले—बहुत कहिवेकर कहा? नारायण सर्वथा तेरा मारणहारा उपजा। तब रावणने कहा इच्छामात्र ही नारायण हूजिए है तो जो तू चाहे सो न हो, इन्द्र हो, तू कुपुत्र पिताने देशसे बाहिर किया, महा दुखी दलिद्री बनचारी भिखारी निलज्ज तेरी वासुदेव पदवी हमने जानी। तेरे मनविषै मत्सर है सो मैं तेरे मनोरथ भंग करूंगा। यह घेघली समान चक्र है ताकर तू गर्वा है। सो रंकोंकी यही रीति है खलिका टूक पाय मनविषै उत्सव करें। बहुत कहिवेकर कहा? ये पापी विद्याधर तोसूं मिले हैं तिनसहित अर या चक्रसहित बाहनसहित तेरा नाशकर तोहि पातालकूं प्राप्त कराऊंगा। ये रावणके वचन सुनकर लक्ष्मण ने कोपकर चक्रको भ्रमाय रावण पर चलाया। वज्रपातके शब्दसमान भयंकर है शब्द जाका, अर प्रलय कालके सूर्यसमान तेजकूं धरे चक्र रावणपर आया। तब रावण बाणनिकर चक्रके निवारवेकूं उद्यमी भया। बहुरि प्रचंड दंड अर शीघ्रगामी वज्रनागकर चक्रके निवारनेका यत्न किया तथापि रावणका पुण्य क्षीण भया सो चक्र न रुका, नजीक आया। तब रावण चन्द्रहास खड्ग लेकर चक्रके समीप आया। चक्रके खड्गकी दई सो अग्निके कणनिकर आकाश प्रज्ज्वलित भया। खड्गका जोर चक्रपर न चला।

सन्मुख तिष्ठता जो रावण महाशूरवीर, राक्षसनिका इन्द्र, ताका चक्रने उरस्थल भेदा सो पुण्य क्षयकर अजनगिरिसमान रावण भूमिविषै परया, मानो स्वर्गसे देव चया, अथवा रतिका पति पृथ्वीविषै परया। ऐसा सोहता भया मानो वीररसका स्वरूप ही है—चढ रही है भौंह जाकी, डसे हैं होठ जाने। स्वामीकू पडा देख समुद्र समान था शब्द जाका ऐसी सेना भागिवेकू उद्यमी भई। ध्वजा छत्र बहे बहे फिरे, समस्त लोक रावणके विह्वल भए, विलाप करते भागे जाय है। कोई कहे है रथकू दूरकर मार्ग देहु, पीछेसू हाथी आवे है। कोई कहे है विमानकू एकतरफ कर, अर पृथ्वीका पति पडा, अनर्थ भया, महा भयकर कम्पायमान। वह तापर पडे, वह तापर पडे। तब सबको शरणरहित देखि भामंडल सुग्रीव हनुमान रामकी आज्ञासे कहते भए—भय मत करो, भय मत करो! धीर्य बंधाया, अर वस्त्र फेरया, काहूको भय नाहीं। तब अमृत समान कानोंको प्रिय ऐसे वचन सुन सेनाकू विश्वास उपज्या। यह कथा गौतम गणधर राजा श्रेणिकसू कहे है—हे राजन! रावण ऐसी महा विभूतिकू भोग समुद्र पर्यन्त पृथ्वीका राज्यकर, पुण्य पूर्ण भए अन्तदशाकू प्राप्त भया। तातै ऐसी लक्ष्मीकू धिक्कार है। यह राजलक्ष्मी महा चंचल, पापका स्वरूप,सुकृतके समागमके आशाकर वर्जित। ऐसा मनविषै विचारकर हो बुद्धिजन हो! तप ही धन जिनके ऐसे मुनि होवो। कैसे हैं मुनि? तपोधन, सूर्यसे अधिक है तेज जिनका, मोह तिमिरकू हरै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रावणकावध वर्णन करनेवाला छिहत्तरवां पर्व पूर्ण भया॥ ७६॥

अथानन्तर विभीषणने बडे भाईकू पडा देख महा दुःखका भरया अपने घातके अर्थ छुरी विषै हाथ लगाया। सो याकू मरणकी हरणहारी मूर्छा आय गई। चेष्टाकर रहित शरीर हो गया। बहुरि सचेत होय महा दाहका भरया मरनेकू उद्यमी भया। तब श्रीरामने रथसे उतर हाथ पकडकर उरसे

लगाया, धीय बधाया। फिर मूर्छा खाय पड्या, अचेत होय गया। श्रीरामने सचेत किया। तब सचेत होय विलाप करता भया। जिसका विलाप सुन करुणा उपजे। हाय भाई, उदार क्रियावन्त सामतो के पति, महाशूरवीर, रणधीर, शरणागतपालक, महा मनोहर, ऐसी अवस्थाकू क्यो प्राप्त भए ? मै हित के वचन कहे सो क्यो न माने ? यह क्या अवस्था भई जो म तुमकू चक्रके विदारे पृथ्वीविषै पडे देखू हू ? हे देव विद्याधरोके महेश्वर ! हे लकेश्वर ! भोगोके भोक्ता। पृथ्वीविषै कहा पौढे ? महाभोगोकर लडाया है शरीर जिनका, यह सेज आपके शयन करने योग्य नाहीं। हे नाथ! उठो, सुन्दर वचनके वक्ता। मै तुम्हारा बालक, मुझे कृपाके वचन कहो। हे गुणाकर कृपाधार ! म शोकके समुद्रविषै डूबू हू सो मुझे हस्तावलबन कर क्यो न काढो ? इस भाति विभीषण विलाप कर है। डार दिये हैं शस्त्र अर बक्तर भूमिविषै जाने।

अथानन्तर रावणके मरणके समाचार रणवासविषै पहुँचे सो राणिया सब अश्रुपातकी धाराकर पृथ्वी तलको सींचती भई। अर सब ही अन्त पुर शोककर व्याकुल भया। सकल राणी रणभूमिविषै आई, गिरती पडती, गिरती पडती। डिगे है चरण जिनके। वे नारी पतिकू चेतनारहित देख शीघ्रही पृथ्वी विषै पडी। कसा ह पति ? पृथ्वीकी चूडामणि ह। मन्दोदरी, रभा, चन्द्रानना, चन्द्रमण्डला, प्रवरा, उवशी महादेवी, सुन्दरी, कमलानना, रूपिणी, रुक्मिणी, शीला, रत्नमाला, तनूदरी, श्रीकाता, श्रीमती, भद्रा कनकप्रभा, मृगावती, श्रीमाला, मानवी, लक्ष्मी, आनन्दा, अनगसुन्दरी, वसुधरा, तडिन्माला, पदमा, पदमावती, सुखादेवी, काति, प्रीति, सध्यावली, शुभा, प्रभावती, मनोवेगा, रतिकाता, मनोवती इत्यादि अष्टादशसहस राणी अपने अपने परिवारसहित अर सखिनिसहित महा शोककी भरी रुदन करती भई। कईएक मोहकी भरी मूर्छाकू प्राप्त भई सो चन्दनके जलकर छाटी। कुमलाई कमलिनी समान भासती भई। कईएक पतिके अगसे अत्यन्त लिपटकर परी, अजनगिरिसो लगी सध्याकी द्युतिको धरती भई। कईएक मूर्छासे सचेत होय उरस्थल कूटती भई, पतिके समीप मानो मेघके निकट विजुरी ही चमक

है। कईएक पतिका वदन अपने अगविषै लेयकर विह्वल होय मूर्छाकू प्राप्त भई। कईएक विलाप करै है—हाय नाथ! मै तिहारे विरहसे अतिकायर, मोहि तजकर तुम कहा गए? तिहारे जन दु खसागर विषै डूबें है सो क्यो न देखो? तुम महाबली, महासुन्दर, परम ज्योतिके धारक, विभूतिकर इन्द्र समान, मानो भरतक्षेत्रके भूपति, परुषोत्तम, महाराजनिके राजा, मनोरम विद्याधरनिके महेश्वर, कौन अर्थ पथ्वी मे पौढे, उठो। हे कान्त! करुणानिधे! स्वजनवत्सल! एक अमृत समान वचन हमसे कहो। हे प्राणेश्वर! प्राणवल्लभ! हम अपराध रहित तुमसे अनुरक्त चित्त हमपर तुम क्यो कोप भए? हमसे बोलो ही नाही। जसे पहिले परिहास कथा करते तसे क्यो न करो? तिहारा मुखरूपी चन्द्र कान्तिरूप चादनी कर मनोहर, प्रसन्नतारूप जसे पूर्व हमे दिखावते हुते तस हमें दिखावो। अर यह तिहारा वक्षस्थल स्त्रियोकी क्रीडाका स्थानक, महासुन्दर, ताविषै चक्रकी धाराने कसे पग धारा? अर विद्रुम समान तिहारे ये लाल अधर अब क्रीडारूप उत्तरके देनेको क्यो न स्फुटायमान होय है? अबतक बहुत देर लगाई। क्रोध कबहू न किया अब प्रसन्न होवो। हम मान करतीं तो आप प्रसन्न करते, मनावते। इन्द्रजीत मेघवाहन स्वर्गलोकसे चयकर तिहारे उपजे सो यहा भी स्वर्गलोककेसे भोग भोगे। अब दोऊ बन्धनविषै है, अर कुम्भकरण बन्धनविषै है, सो महा पुण्याधिकारी सुभट महा-गुणवन्त श्रीरामचन्द्र तिनसे प्रीतिकर भाई पुत्रको छुडावहु। हे प्राणवल्लभ! प्राणनाथ! उठो, हमसे हित की बात करो। हे देव! बहुत देर सोवना कहा? राजानिकू राजनीतिविषै सावधान रहना, सो आप राज्य काजविषै प्रवर्तो। हे सुन्दर! हे प्राणप्रिय! हमारे अग विरहरूप अग्निकर अत्यन्त जरे है सो स्नेहरूप जलकर बुझावो। हे स्नेहियोके प्यारे! तिहारा यह वदनकमल और ही अवस्थाकू प्राप्त भया है। सो याहि देख हमारे हृदयके टूक क्यो न हो जाव? यह हमारा पापी हृदय वज्रका है, दु खका भाजन जो तिहारी यह अवस्था जानकर विनस न जाय है। यह हृदय महा निर्दई है। हाय विधाता! हम तेरा कहा बुरा किया जो तन निर्दई होयकर हमारे सिरपर ऐसा दु ख डारचा। हे

प्रीतम! जब हम मान करती तब तुम उरसे लगाय हमारा मान दूर करते, अर वचनरूप अमृत हमको प्यावते, महा प्रेम जनावते। हमारा प्रेमरूप कोप ताके दूर करवेके अर्थ हमारे पायन पडते। सो हमारा हृदय वशीभूत होय जाता, अत्यन्त मनोहर क्रीडा करते, हे राजेश्वर! हमसे प्रीति करो। परम आनंद की करणहारी वे क्रीडा हमको याद आवे है। सो हमारा हृदय अत्यन्त दाहको प्राप्त होय है। तातैं अब उठो, हम तिहारे पायनि पडे है, नमस्कार करे है। जे अपने प्रियजन होय तिनसे बहुत कोप न करिए। प्रीतिविषै कोप न सोहे। हे श्रेणिक! या भांति रावणकी राणी ये विलाप करती भई जिनका विलाप सुनकर कौनका हृदय द्रवीभूत न होय?

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मण भामंडल सुग्रीवादिक सहित अति स्नेहके भरे विभीषणकूं उरसे लगाय आंसू डारते। महाकरुणावंत, धीर्य बंधावनेविषै प्रवीण, ऐसे वचन कहते भए—लोक वृत्तांतसे सहित हे राजन! बहुत रोयवे कर कहा? अब विषाद तजहु। यह कर्मकी चेष्टा तुम कहा प्रत्यक्ष नाहीं जानो हो? पूर्वकर्मके प्रभावकरि प्रमोदकूं धरते जे प्राणी तिनके अवश्य कष्टकी प्राप्ति होय है। ताका शोक कहा? अर तुम्हारा भाई सदा जगतके हितविषै सावधान, परम प्रीतिका भाजन, समाधानरूप बुद्धि जिसकी, राजकार्यविषै प्रवीण, प्रजाका पालक, सर्वशास्त्रनिके अर्थकर धोया है चित्त जाने, सो बलवान मोहकर दारुण अवस्थाकूं प्राप्त भया अर विनाशकूं प्राप्त भया। जब जीवनिका विनाशकाल आवै तब बुद्धि अज्ञानरूप होय जाय है। ऐसे शुभ वचन श्रीरामने कहे। बहुरि भामंडल अति माधुर्यताकूं धरे वचन कहते भए। हे विभीषण महाराज! तिहारा भाई रावण महा उदारचित्तकर रणविषै युद्ध करता सन्ता वीर मरणकर परलोककूं प्राप्त भया। जाका नाम न गया ताका कछुही न गया। ते धन्य है जिन सुभटता कर प्राण तजे। ते महा पराक्रमके धारक वीर तिनका कहा शोक? एक राजा अरिंदमकी कथा सुनो।

अक्षयकुमार नामा नगर, तहां राजा अरिंदम, जाके महाविभूति। सो एक दिन काहू तरफसे अपने

मन्दिर शीघ्र गामी घोडे चढा अकस्मात आया। सो राणीकू अ गाररूप देख अर महलकी अत्यन्त शोभा देखि राणीकू पूछ्या—तुम हमारा आगम कसे जाण्या ? तब राणीने कही कीर्तिधरनामा मुनि अवधि-ज्ञानी आज आहारको आए थे। तिनको मने पूछ्या राजा कब आवगे ? सो तिन्होने कह्या राजा आज अचानक आवेंगे। यह बात सुन राजा मुनिप गया अर ईर्ष्याकर पूछता भया—हे मुनि ! तुमकू ज्ञान ह तो कहो मेरे चित्तमें क्या ह। तब मुनिने कहा तेरे चित्तमें यह ह कि म कब मरू गा ? सो तू आज से सातवें दिन वज्रपातस मरेगा, अर विष्टामे कीट होगया। यह मुनिके वचन सुन राजा अरिंदम घर जाय अपने पत्र प्रीतिकरको कहता भया—म मरकर विष्टाके घरमें स्थूल कीट होऊगा ऐसा मेरा रगरूप होयगा, सो तू तत्काल मार डारियो। ये वचन पुत्रकू कह आप सातवें दिन मरकर विष्टामें कीडा भया। सो प्रीतिकर कीटके हनिवेक गया सो कीट मरनेके भयकरि विष्टामें पठि गया। तब प्रीतिकर मुनिप जाय पूछता भया, हे प्रभो ! मेरे पिताने कही थी जो म मलमें कीट होऊगा सो तू हनियो। अब वह कीट मरवेसू डरे ह अर भाग ह। तब मुनिने कही तू विषाद मत कर, यह जीव जिस गतिमें जाय ह वहा ही रम रहे ह। इसलिए तू आत्मकल्याण कर, जाकरि पापोसे छूटे। अर यह जीव सब ही अपने अपने कमका फल भोगव ह, कोई काहूका नाहीं। यह ससारका स्वरूप महा दुखका कारण जान प्रीतिकर मुनि भया, सव बाछा तजा। तात हे विभीषण ! यह नानाप्रकार जगत की अवस्था तम कहा न जानो हो ? तिहारा भाई महा शूरवीर, ववयोगसे नारायणने हता। सग्रामके सम्मुख महा प्रधान पुरुष ताका सोच क्या ? तम अपना चित्त कल्याणमें लगावो। यह शोक दुखका कारण ताको तजहु। यह वचन अर प्रीतिकरकी कथा भामडलके मुखसे विभीषणने सुनी। कसी ह प्रीतिकर मुनिकी कथा ? प्रतिबोध वेनेमें प्रवीण, अर नाना स्वभावकर सयुक्त, अर उत्तम पुरुषोकर कहिवे योग्य। सो सव विद्याधरनिने प्रशसा करी,सुनकर विभीषणरूप सूय शोकरूप मेघ पटलसे रहित

भया, लोकोत्तर आचारका जाननेवाला ।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै विभीषणका शोकनिवारण वर्णन करनेवाला सततरवा पर्व पूर्ण भया ॥ ७७ ॥

अथानन्तर श्रीरामचन्द्र भामण्डल, सुग्रीवादि सबनिसूं कहते भए—जो पंडितोंके वैर वैरीके मरण पर्यन्त ही है । अब लंकेश्वर परलोककूं प्राप्त भए, सो यह महा नर हुते, इनका उत्तम शरीर अग्नि-संस्कार करिए । तब सबनि प्रणाम करी । अर विभीषणसहित राम लक्ष्मण जहां मन्दोदरी आदि अठारह हजार राणीनि सहित जैसे कुरुचि पुकारे तैसे विलाप करती हुती, सो वाहनसे उतर समस्त विद्याधरनि सहित दोऊ वीर तहां गए । सो वे राम लक्ष्मणकूं देखि अति विलाप करती भई, तोड डारे हैं सब आभूषण जिन्होने, अर धूलकर धूसरा है अंग जिनका । तब श्रीराम महादयावन्त नानाप्रकार के शुभ वचननिकर सब राणीनिको दिलासा करी, धीर्य बंधाया । अर आप सब विद्याधरनिकूं लेकर रावणके लोकाचारकूं गए । कपूर अगर मलियागिरि चन्दन इत्यादि नानाप्रकारके सुगंध द्रव्यनिकर पद्मसरोवरपर प्रतिहरिका दाह भया । बहुरि सरोवरके तीर श्रीराम तिष्ठे, कैसे हैं राम ? महा कृपालु है चित्त जिनका । गृहस्थाश्रमविषैं ऐसे परिणाम कोई विरलेके होय है । बहुरि आज्ञा करी कुम्भकर्ण इन्द्रजीत मेघनादकूं सब सामंतनिसहित छोडहु । तब कईएक विद्याधर कहते भए—वे महाक्रूरचित्त हैं, अर शत्रु हैं, छोडवे योग्य नाहीं, बंधनहीविषै मरें । तब श्रीराम कहते भए—यह क्षत्रियनिका धर्म नाहीं । जिनशासनविषैं क्षत्रीनिकी कथा कहा तुमने नाहीं सुनी है ? सूतेको, बंधेको, डरतेको, शरणागतकूं, दंत-विषै तृण लेतेको, भागेको, बाल, वृद्ध, स्त्रीनिकूं न हनै । यह क्षत्रीका धर्म शास्त्रनिमें प्रसिद्ध है । तब सबनि कही आप जो आज्ञा करी सो प्रमाण । रामकी आज्ञा प्रमाण लडे बडे योधा नानाप्रकारके आयुधनिकूं धरे तिनके ल्यायवेकूं गए । कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत, मेघनाद, मारीच तथा मन्दोदरीका पिता

राजा मय इत्यादि पुरुषनिको स्थूल ब धनसहित सावधान योधा लिए आवे ह । सो माते हाथी समान चले आवे ह । तिनकू देख वानरवशी योधा परस्पर बात करते भए–जो कदाचित इन्द्रजीत, मेघनाद, कुम्भकण, रावणकी चिता जरती देख क्रोध करे तो कपिवशिनिमें इनके सन्मुख लडनेकू कोई समथ नाहीं । जो कपिवशी जहा बठा था तहासे उठ न सका । अर भामडलने अपने सब योधानिकू कहा जो इन्द्रजीत, मेघनादकू यहा तक बधेही अति यत्नसे लाइयो । अबार विभीषणका भी विश्वास नाहीं ह जो कदाचित भाई भतीजेनिको निधन देख भाईके बर चितार, सो याकू विकार उपजि आवे, भाईके दुख कर बहुत तप्तायमान ह । यह विचार भामडलादिक तिनकू अति यत्नकर राम लक्ष्मणके निकट लाये । सो वे महाविरक्त, राग द्वेषरहित, जिनके मुनि होयवेके भाव, महा सौम्य दृष्टिकर भूमि निरखते आव शभ ह आनन जिनके । वे महा धीर यह विचारे ह कि या असार ससार सागरविष कोई सार ताका लवलेश नाहीं । एक धमही सब जीवनका बाधव ह सोई सार ह । ये मनमें विचार ह जो आज बधनसू छूटे तो दिगम्बर होय पाणिपात्र आहार करें । यह प्रतिज्ञा धरते रामके समीप आए । इन्द्रजीत कुम्भकर्णादिक, विभीषणकी ओर आय तिष्ठे । यथायोग्य परस्पर सभाषण भया । बहुरि कुम्भकर्णान्कि श्रीराम लक्ष्मणसू कहते भए–अहो तिहारा परम धीय, परमगम्भीरता, अदभुत चेष्टा, देवनिहु कर न जीता जाय ऐसा राक्षसनिका इन्द्र रावण मत्युकू प्राप्त किया । पडितनिके अति श्रष्ठ गुणनिका धारक शत्रुहू प्रशसा योग्य ह । तब श्रीराम लक्ष्मण इनकू बहुत साता उपजा अति मनोहर वचन कहते भए–तुम पहिले महा भोगरूप जस तिष्ठ तस तिष्ठो । तब वह महाविरक्त कहते भए–अब इन भोगनिसू हमारे कछु प्रयोजन नाही । यह विषसमान महादारुण, महामोहके, कारण यहाभयकर, महा नरक निगोदादि दुखदाई जिनकरि कबहू जीवके साता नाहीं । विचक्षण ह ते भोगसम्बन्धकू कबहू न बाछे । राम लक्ष्मणने घना ही कहा तथापि तिनका चित्त भोगासक्त न भया । जस रात्रिविष दृष्टि अन्धकार रूप होय अर सूयके प्रकाश कर वही दृष्टि प्रकाश रूप होय जाय तस ही कुम्भकर्णा-

विककी दृष्टि पहिले भोगासक्त हुती सो ज्ञानके प्रकाशकर भोगनित्त विरक्त भई। श्रीरामने तिनके बधन छुडाए, अर इन सबनिसहित पदम सरोवरविष स्नान किया। कसा ह सरोवर ? सुगन्ध है जल जाका। ता सरोवर विष स्नानकर कपि अर राक्षस सब अपने स्थानक गए।

अथानन्तर कईएक सरोवरक तीर बठे विस्मयकर व्याप्त ह चित्त जिनका, शूरवीरोकी कथा करते भए। कईएक क्रूर कमको उलाहना देते भए। कईएक हथियार डारते भए। कईएक रावणके गुणोकर पूण ह चित्त जिनका सो पुकारकर रुदन करते भए। कईएक कमनिकी विचित्रगतिका वणन करते भए। अर कईएक ससारवनकू निदते भए। कसा ह ससारवन ? जा थकी निकसना अतिकठिन ह। कईएक मागविष अरुचिको प्राप्त भए राज्यलक्ष्मीकू महाचचल निरथक जानते भए। अर कई एक उत्तम बुद्धि अकायकी निदा करते भए। कईएक रावणकी गवकी भरी कथा करते भए, श्री रामके गुण गावते भए। कईएक लक्ष्मणकी शक्तिका गुण वणन करते भए। कईएक सुकृतके फल की प्रशसा करते भए, निमल ह चित्त जिनका। घर घर मतकोकी क्रिया होती भई। बाल वृद्ध सब के मुख यही कथा। लकाविष सब लोक रावणके शोककरि अश्रुपात डारते चातुर्मास्य करते भए, शोककर द्रवीभूत भया है हृदय जिनका। सकल लोकनिके नेत्रनिसू जलके प्रवाह बहे सो पृथ्वी जल रूप होयगई। अर तत्वोकी गौणता दृष्टि पडी मानो नेत्रोके जलके भयकर आताप घुसकर लोकोके हृदय विष पठा। सब लोकोके मुखसे यह शब्द निकसे धिक्कार धिक्कार ! अहो बडा कष्ट भया, हाय हाय यह क्या अदभुत भया ! या भाति लोक विलाप कर ह, आसू डार ह। कईएक भूमि विष शय्या करते भए, मौन धार मुख नीचा करते भये, निश्चल है शरीर जिनका मानो काष्ठके हैं। कईएक शस्त्रोकू तोड डारते भये। कईएकोने आभूषण डार दिए, अर स्त्रीके मुखकमलसे दृष्टि सकोची। कईएक अति दीघ उष्ण निस्वास नाखे हैं सो कलुष होय गए अधर जिनके, मानो दुखके अकुर हैं। अर कईएक ससारके भोगनिसे विरक्त होय मनविष जिनदीक्षाका उद्यम करते भए।

अथानन्तर पिछले पहिर महासघ सहित अनन्तवीय नामा मुनि लकाके कुसुमायुध नामा वनविष छप्पनहजार मुनिसहित आए । जस तारनिकर मडित चन्द्रमा सोह तस मुनिकर मडित सोहते भये । जो ये मुनि रावणके जीवते आते तो रावण मारा न जाता, लक्ष्मणके अर रावणके विशेष प्रीति होती । जहा ऋद्धिधारी मुनि तिष्ठे तहा सव मगल होवें । अर केवली विराज वहा चारो ही दिशाओ में दोयसौ योजन पृथ्वी स्वग तुल्य निरुपद्रव होय, अर जीवनके वरभाव मिट जाव । जस आकाशविष अमूतत्व अवकाश प्रदानता, निर्लेपता, अर पवनविष सुवीयता, निसगता, अग्निविष उष्णता, जलविष निमलता पृथ्वीविष सहनशीलता, तसे स्वत स्वभाव महामुनिके लोकक् आनन्द दायक होय ह । अनेक अदभत गुणोके धारक महामुनि तिनसहित स्वामी विराजे । गौतम स्वामी कह ह, हे श्रेणिक ! तिनक गुण कौन वणन कर सक ? जस स्वणका कुम्भ अमतका भरचा अति सोह तस महामुनि अनेक ऋद्धि के भरे सोहते भए । निजन्तु स्थानक वहा एक शिला, ताऊपर शुक्ल ध्यान धर तिष्ठे । सो ताही रात्रि विष केवलज्ञान उपज्या । जिनके परम अदभुत गण वणन किए पापनिका नाश होय । तब भवनवासी असुरकुमार, नागकुमार, गरुडकुमार, विद्युतकुमार, अग्निकमार पवनकुमार, मेघकुमार, दिक्कुमार, वीपकुमार, उदधिकुमार, ये दशप्रकार तथा अष्ट प्रकार व्यतर, किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गधव, यक्ष, राक्षस, भूत पिशाच तथा पच प्रकार ज्योतिषी चन्द्र सूय ग्रह तारा नक्षत्र, अर सोलह स्वगके सव ही स्वगवासी, ये चतुरनिकायके देव, सौधम, इन्द्रादिक सहित धातुकीखडद्वीपकविष श्रीतीथ कर देवका जन्म भया हुता सो सुमरु पवतविष क्षीरसागरके जलकरि स्नान कराए । जन्मकल्याणकका उत्सवकर प्रभुकू माता पिताकू सौंपि तहा उत्सवरहित ताडव नत्यकर प्रभुको बारबार स्तुति करते भए । कसे हैं प्रभु ? बाल अवस्थाकू धर ह,परन्तु बाल अवस्थाकी अज्ञान चेष्टासू रहित ह । तहा जन्मकल्याणक का समय साध कर सब देव लकाविष अनन्तवीर्य केवलीके दशनकू आए । कईएक विमान चढे आए, कईएक राजहसनिपर चढे आए । अर कईएक अश्व सिह व्याघ्रादिक अनेक वाहननिपर चढे आए,

ढोल, मृदग, नगारे, वीण, बासुरी, झाझ, मजीरे, शख इत्यादि नानाप्रकारके वादित्र बजावते, मनोहर गान करते, आकाशमडलकू आच्छादत, केवलीके निकट महाभक्तिरूप अर्ध रात्रिके समय आए। तिनके विमाननिकी ज्योतिकर प्रकाश होय गया, अर वादित्रनिके शब्दकर दशो दिशा व्याप्त होय गई। राम लक्ष्मण यह वृत्तात जान हर्षकू प्राप्त भए। समस्त वानरवशी अर राक्षसवशी विद्याधर इन्द्रजीत कुम्भकर्ण मेघनाद आदि सब राम लक्ष्मणके सग केवलीके दर्शनके लिए जायवेकू उद्यमी भए। श्रीराम लक्ष्मण हाथी चढे, अर कईएक राजा रथपर चढे, कईएक तुरगनिपर चढ, छत्र चमर ध्वजाकरि शोभायमान, महा भक्तिकर सयुक्त, देवनि सारिख महा सुगध है शरीर जिनके, अति उदार, अपने वाहननित उतर महाभक्तिकर प्रणाम करते, स्तोत्र पाठ पढते केवलीके निकट आए। अष्टाग दण्डवतकर भूमिविषै तिष्ठे, धर्म श्रवणकी है अभिलाषा जिनके, केवलीके मुखत धर्म श्रवण करते भए।

दिव्यध्वनिमे यह व्याख्यान भया जो ये प्राणी अष्टकर्मसे बधे महा दुखके कर्मपर चढे चतुर्गतिविषै भ्रमण करै हैं। आर्त्त रौद्र ध्यानकर युक्त, नाना प्रकारके शुभाशुभ कर्मनिकू करै है। महा मोहिनीकर्मने ये जीव बुद्धिरहित किये तात सदा हिसा करै है। असत्य वचन कहै है, पराए मर्म भेदका वचन कहै है, परनिंदा करै है, पर द्रव्य हरै है, परस्त्रीका सेवन करै है, प्रमाणरहित परिग्रहकू अगीकार करै है, बढ्या है महा लोभ जिनके। वे कसे है? महा निद्यकर्म कर शरीर तज, अधोलोकविषै जाय है। तहा महा दुखके कारण सप्त नरक तिनके नाम—रत्नप्रभा, शर्करा, बालुका, पकप्रभा, धूमप्रभा, तम, महातम। सदा महा दु खके कारण सप्त नरक अधकारकर युक्त, दुर्गंध सू घा न जाय, देख्या न जाय, स्पर्शा न जाय, महा भयकर, महा विकराल है भूमि जिनकी, सदा दुर्वचन त्रास, नाना प्रकारके छेदन भेदन तिनकर सदा पीडित। नारकी खोटे कर्मनित पापबधकर बहुत काल सागरनि पर्यंत महा तीव्र दु ख भोगवै है। ऐसा जानि पडित विवेकी पापबधतैं रहित होय धर्मविषै चित्त धरहु। कैसे है विवेकी? व्रत नियमके धरणहारे, नि कपट स्वभाव, अनेक गुणनिकर मडित वे नानाप्रकारके

तपकर स्वर्गलोककू प्राप्त होय है। बहुरि मनुष्यदेह पाय मोक्ष प्राप्त होय है। अर जे धर्मकी अभिलाषासे रहित हैं ते कल्याणके मार्गतैं रहित बारम्बार जन्म मरण करते महादुखी संसारविषै भ्रमण करै है। जे भव्यजीव सर्वज्ञ वीतरागके वचनकर धर्मविषै तिष्ठे हैं ते मोक्षमार्गी, शील सत्य शौच सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकर जबलग अष्टकर्मका नाश न करें, तबलग इन्द्र अहमिन्द्र पदके उत्तम सुखको भोगवे हैं। नानाप्रकारके अद्भुत सुख भोग, वहांसे चयकर महाराजाधिराज होय, बहुरि ज्ञान पाय, जिनमुद्रा धर, महा तपकर, केवलज्ञान उपाय, अष्टकर्म रहित सिद्ध होय हैं। अनन्त अविनाशी आत्मिक स्वभावमयी परम आनन्द भोगवे हैं।

यह व्याख्यान सुन इन्द्रजीत, मेघनाद अपने पूर्वभव पूछते भये। सो केवली कहै हैं—एक कौशाम्बी नामा नगरी, तहां दो भाई दलिद्री, एकका नाम प्रथम, दूजेका नाम पश्चिम। एक दिन विहार करते भवदत्तनामा मुनि वहां आए। सो ये दोनो भाई धर्म श्रवणकर ग्यारमी प्रतिमाके धारक क्षुल्लक श्रावक भए। सो मुनिके दर्शनकू कौशाम्बी नगरीका इन्द्र नामा राजा आया। सो मुनि महाज्ञानी राजाकू देख जान्या याके मिथ्यादर्शन दुर्निवार है। अर ताही समय नन्दीनामा श्रेष्ठी महाजिनभक्त मुनिके दर्शनकू आया। ताका राजाने आदर किया। ताकू देख प्रथम अर पश्चिम दोऊ भाईनिमें से छोटे भाई पश्चिमने निदान किया जो मैं या धर्मके प्रसादकरि नन्दी सेठके पुत्र होऊं। सो बडे भाईने अर गुरुन बहुत संबोध्या जो जिनशासनविषै निदान महानिंद्य है। सो यह न समझा। कुबुद्धि निदान कर दुखित भया। मरण कर नन्दीके इन्दुमुखी नामा स्त्री ताके गर्भविषै आया। सो गर्भविषै आवते ही बडे बडे राजानिके स्थानकनिविषै कोटका निपात, दरवाजेनिका निपात इत्यादि नानाप्रकारके चिह्न होते भए। तब बडे बडे राजा याकू नानाप्रकारके निमित्त कर महानर जान जन्महीसे अति आदर संयुक्त दूत भेज भेज कर द्रव्य पठाय सेवते भए। यह बडा भया। याका नाम रतिवर्धन, सो सब राजा याकू सेवैं। कौशाम्बी नगरीका राजा इन्दु भी सेवा करै। नित्य आय प्रणाम करै। या भांति यह रति-

वधन महाविभूति कर सयुक्त भया। अर बडा भाई प्रथम मरकर स्वर्गलोक गया, सो छोटे भाईके जीवकू सबोधवेके अर्थ क्षुल्लकका स्वरूप धर आया। सो यह मदोन्मत्त राजा मदकर अधा होय रह्या। सो क्षुल्लककू दुष्ट लोकनिकर द्वारविषै पठने न दिया। तब देवने क्षुल्लकका रूप दूरकर रतिवधनका रूप किया। तत्काल ताका नगर उजाड उद्यान कर दिया, अर कहता भया अब तेरी कहा वार्ता ? तब वह पायनि परि स्तुति करता भया तब ताकू सकल वृत्तात कह्या जो आपा दोऊ भाई हुते। मै बडा, तू छोटा। सो क्षुल्लकके व्रत धारे सो त नदीसेठकू देख निदान किया सो मरि नन्दीके घर उपज्या, राजविभूति पाई। अर म स्वर्गविषै देव भया। यह सब वार्ता सुनि रतिवधनकू सम्यक्त्व उपजा, मुनि भया, अर नदीकू आदि दे अनेक राजा रतिवधनके सग मुनि भए। रतिवधन, तपकरि जहा भाईका जीव देव हुता तहा ही देव भया। बहुरि दोऊ भाई स्वर्गत चयकर राजकुमार भए। एकका नाम उव, दूजेका नाम उवस, राजा नरेन्द्र राणी विजयाके पुत्र। बहुरि जिनधर्मका आराधनकरि स्वर्गविषै देव भए। वहासे चयकरि तुम दोऊ भाई रावणके राणी मदोदरी ताके इन्द्रजीत मेघनाद पुत्र भए। अर नदीसेठक इन्द्रमुखी रतिवधनकी माता सो जन्मातरविषै मदोदरी भई। पूर्व जन्मविषै स्नेह हुता सो अब हू माताका पुत्रसे अतिस्नेह भया। कसी है मदोदरी ? जिनधर्मविषै आसक्त है चित्त जाका यह अपने पूर्व भव सुन दोऊ भाई ससारकी मायात विरक्त भए। उपजा है महावैराग्य जिनकू, जनेश्वरी दीक्षा आदरी। अर कुम्भकरण, मारीच, राजा मय और हू बडे बडे राजा ससारतै महाविरक्त होय मुनि भए, तजे ह विषय कषाय जिन्होने। विद्याधर राजकी विभूति तृणवत तजी। महा योगीश्वर होय अनेक ऋद्धिके धारक भए, पृथ्वीविषै विहार करते भव्यनिकू प्रतिबोधते भए।

श्रीमुनिसुव्रतनाथके मुक्ति गए पीछे तिनके तीर्थविषै यह बडे बडे महापुरुष भए, परम तपके धारक अनेक ऋद्धिसयुक्त, ते भव्यजीवनिकू बारम्बार वदिवेयोग्य हैं। अर मदोदरी पति अर पुत्र दोऊनिके विरहकरि अतिव्याकुल भई महा शोककर मूर्छाकू प्राप्त भई। बहुरि सचेत होय कुरचिकी ज्याई

बिलाप करती भई । दुखरूप समुद्रविषै मग्न होय, हाय पुत्र, इन्द्रजीत मेघनाद ! यह कहा उद्यम किया, मैं तिहारी माता अतिदीन ताहि क्यो तजी ? यह तुमको कहा योग्य जो दुखकरि तप्तायमान माता ताका समाधान किए बगर चले गये । हाय पुत्र हो ! तुम कैसे मुनिव्रत धारोगे ? तुम देवनि-सारिखे महा भोगी, शरीरकू लडावनहारे, कठोर भूमिपर कैसे शयन करोगे ? समस्त विभव तजा, समस्त विद्या तजी, केवल अध्यात्मविद्याविषै तत्पर भए । अर राजा मय मुनि भया—ताका शोक करै है—हाय पिता ! यह कहा किया ? जगत तजि मुनिव्रत धारया । तुम मोते तत्काल ऐसा स्नेह क्यो तज्या ? मैं तिहारी बालिका, मोते दया क्यो न करी ? बाल्यावस्थाविषै मोपर तिहारी अतिकृपा हुती, मैं पिता अर पुत्र अर पति सबसे रहित भई, स्त्रीके यही रक्षक हैं । अब मैं कौनके शरण जाऊं ? मैं पुण्यहीन महा दुखकू प्राप्त भई । या भाति मदोदरी रुदन करै । ताका रुदन सुन सबहीकू दया उपजै । अश्रुपातकरि चातुर्मास कीया । ताहि शशिकांता आर्यिका उत्तम वचनकरि उपदेश देती भई—हे मूर्खणी ! कहा रोवै ? या संसारचक्रविषै जीवनिनै अनन्त भव धारे । तिनमें नारकी अर देवनिके तो संतान नाहीं । अर मनुष्य अर तिर्यचनिके है, सो तैं चतुरगति भ्रमण करते मनुष्य तिर्यचनिके भी अनन्त जन्म धारे । तिनविषै तेरे अनेक पिता पुत्र बांधव भए । तिनकू जन्म जन्ममें रुदन किया । अब कहा विलाप करै है ? निश्चलता भज । यह संसार असार है, एक जिनधर्म ही सार है । तू जिन-धर्मका आराधन कर, दुखसे निवृत्त होहु । ऐसे प्रतिबोधके कारण आर्यिकाके मनोहर वचन सुन मंदो-दरी महा विरक्त भई । उत्तम है गुण जाविषै, समस्त परिग्रह तजकरि, एक शुक्ल वस्त्र धारि आर्यिका भई । कैसी है मंदोदरी ? मनवचनकायकरि निर्मल जो जिनशासन, ताविषै अनुरागिणी है । अर चन्द्र-नखा रावणकी बहिन है याही आर्यिकाके निकट दीक्षा धरि आर्यिका भई । जा दिन मन्दोदरी आर्यिका भई ता दिन अडतालीस हजार आर्यिका भई ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै इन्द्रजीत मेघनाद कुम्भकर्णका वैराग्य अर मंदोदरी आदि रानीनिका वैराग्य वर्णन करने वाला अठत्तरवा पर्व पूर्ण भया ॥७८॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै है—हे राजन् ! अब श्रीराम लक्ष्मणका महाविभूतिसो लंकाविषै प्रवेश भया सो सुन। महा विमाननिके समूह, अर हाथीनिकी घटा, अर श्रेष्ठ तुरगनिके समूह, अर मंदिर समान रथ, अर विद्याधरनिके समूह, अर हजारां देव तिनकरि युक्त दोऊ भाई महाज्योति कूं धरे लंकामें प्रवेश करते भए। तिनकूं लोक देखि अति हर्षित भए, जन्मान्तरके धर्मके फल प्रत्यक्ष देखते भए। राजमार्गकेविषै जाते श्रीराम लक्ष्मण तिनकूं देख नगरके नर अर नारिनिको अपूर्व आनन्द भया। फूलि रहे हैं मुख जिनके, स्त्री झरोखानिविषै बैठी जालीनिमें होय देख हैं। कमल समान है मुख जिनके, महा कौतुककरि युक्त परस्पर वार्ता कर है—हे सखी ! देखहु ! यह राम राजा दशरथका पुत्र, गुणरूप रत्ननिकी राशि, पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है वदन जाका, कमल समान हैं नेत्र जाके, अद्भुत पुण्यकर यह पद पाया है, अतिप्रशंसा योग्य है आकार जाका। धन्य है वह कन्या जिन्होंने ऐसे वर पाए। जाने यह वर पाए ताने कीर्तिका थम्भ लोकविषै थाप्या। जानैं जन्मांतरविषै धर्म आचर्या होय सो ऐसा नाथ पावै। ता समान अन्य नारी कौन ? राजा जनककी पुत्री महा कल्याणरूपिणी जन्मांतरविषै महापुण्य उपार्जे है, तातैं ऐसे पति याहि मिले। जैसें शची इन्द्रके तैसें सीता रामके। अर यह लक्ष्मण वासुदेव चक्रपाणि शोभै है, जाने असुरेन्द्रसमान रावण रणविषै हता, नील-कमलसमान कांति जाकी। अर गौर कांतिकर संयुक्त जो बलदेव श्रीरामचन्द्र तिनसहित ऐसे सोहै जैसें प्रयागविषै गंगा यमुनाके प्रवाहका मिलाप सोहै। अर यह राजा चन्द्रोदयका पुत्र विराधित है जानै लक्ष्मणसूं प्रथम मिलापकर विस्तीर्ण विभूति पाई। अर यह राजा सुग्रीव किहकंधापुरका धनी, महा पराक्रमी जानैं श्रीरामदेवसूं परम प्रीति जनाई। अर यह सीताका भाई भामंडल, राजा जनकका पुत्र चन्द्र-गति विद्याधरकै पल्या सो विद्याधरनिका इन्द्र है। अर यह अंगदकुमार राजा सुग्रीवका पुत्र जो रावणकूं बहुरूपिणी विद्या साधते विघ्नकूं उद्यमी भया। अर हे सखी ! यह हनुमान महासुन्दर उतंग हाथनिके रथ चढ्या पवनकरि हाले है वानरके चिह्नकी ध्वजा जाके, ताहि देखि रणभूमिविषै शत्रु पलाय जाय।

सो राजा पवनका पुत्र अंजनीके उदरविषै उपज्या, जानै लंकाके कोट दरवाजे ढाहे। ऐसी वार्ता परस्पर स्त्रीजन करै है। तिनके वचनरूप पुष्पनिकी मालानिकरि पूजित जो राम सो राजमार्ग होय आगे आए। एक चमर ढारती जो स्त्री ताहि पूछ्या—हमारे विरहके दु:खकरि तप्तायमान जो भामंडलकी बहिन सो कहां तिष्ठै है? तब वह रत्ननिके चूडाकी ज्योतिकरि प्रकाशरूप है भुजा जाकी सो आंगुरी की समस्याकरि स्थानक दिखावती भई। हे देव! यह पुष्पप्रकीर्णनामा गिरि नीझरनानिके जलकरि मानो हास्यही करै है, तहां नन्दनवन समान महा मनोहर वन, ताविषै राजा जनककी पुत्री कीर्ति शील है परिवार जाके, सो तिष्ठै है।

या भांति रामजीसे चमर ढारती स्त्री कहती भई। अर सीताके समीप जो उर्मिका नाम सखी सब सखिनिविषै प्रीतिकी भाजनहारी सो अंगुरी पसार सीताकूं कहती भई—हे देवि! चन्द्रमा समान है छत्र जाका, अर चांद सूर्य समान है कुण्डल जाके, अर शरदके नीझरने समान है हार जाके, सो पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र तिहारे वल्लभ आए। तिहारे वियोगकरि मुखविषै अत्यन्त खेदकूं धरै, हे कमलनेत्रे! जैसे दिग्गज आवै तैसैं आवै है। यह वार्ता सुनि सीताने प्रथम तो स्वप्न समान वृत्तांत जाण्या। बहुरि आप अति आनन्दकी धरी, जैसे मेघपटलसे चन्द्र निकसै तैसे हाथीतैं उतरि आए, जैसे रोहिणीके निकट चन्द्रमा आवै तैसैं आए। तब सीता नाथकूं निकट आया जान अति हर्षकी भरी उठकरि सन्मुख आई। कैसी है सीता? धूरकरि धूसर है अंग, अर केश बिखर रहे हैं, श्याम परि गए हैं होंठ जाके, स्वभाव ही करि कृश हुती अर पतिके वियोगकरि अत्यन्त कृश भई। अब पतिके दर्शनकरि उपज्या है अति हर्ष जाकूं प्राणकी आशा बंधी, मानो स्नेहकी भरी शरीरकी कांतिकरि पतिसूं मिलाप ही करै है। अर मानो नेत्रनिकी ज्योतिरूप जलकरि पतिकूं स्नान ही करावै है। अर क्षणमात्रविषै बढ गई है शरीरकी लावण्यतारूप सम्पदा, अर हर्षके भरे जे निश्वास तिनकरि मानो अनुरागका बीज बोवै है। कैसी है सीता? रामके नेत्रनिकूं विश्रामकी भूमि, अर पल्लव समान जे हस्त तिनकरि जीते हैं लक्ष्मी

के करकमल जान, सौभाग्यरूप रत्ननिकी खान, सम्पूर्ण चन्द्रमा समान है वदन जाका, चन्द्र कलंकी यह निःकलंक, बिजुरी समान है कांति जाकी, वह चंचल यह निश्चल, प्रफुल्लित कमल समान हैं नेत्र जाके, मुखरूप चन्द्रकी चन्द्रिकाकरि अति शोभाकूं प्राप्त भई है। यह अद्भुत वार्ता है कि कमल तो चन्द्रकी ज्योतिकरि मुद्रित होय है अर याके नेत्रकमल मुखचन्द्रकी ज्योतिकरि प्रकाशरूप है। कलुषता रहित उन्नत हैं स्तन जाके, मानो कामके कलश ही है। सरल है चित्त जाका। सो कौशल्याका पुत्र राणी विदेहाकी पुत्रीकूं निकट आवती देखी, कथनविषै न आवै ऐसे हर्षकूं प्राप्त भया। अर यह रतिसमान सुन्दरी रमणकूं आवता देखि विनयकरि हाथ जोड खडी अश्रुपातकरि भरे हैं नेत्र जाके। जैसैं शची इन्द्रके निकट आवै, रति कामके निकट आवै, दया जिनधर्मके निकट आवै, सुभद्रा भरतके निकट आवै, तैसे ही सीता सती रामके समीप आई। सो घने दिननिका वियोग, ताकरि खेदखिन्न रामने मनोरथके सैंकडानिकर पाया है नवीन संगम जाने, सो महाज्योतिका धरणहारा, सजल है नेत्र जाके, भुजबंधनकरि शोभित जे भुजा, तिनकरि प्राणप्रियासूं मिलता भया। ताहि उरसूं लगाय सुखके सागरविषै मग्न भया। उरसूं जुदी न कर सकै, मानो विरहसे डरै है। अर वह निर्मल चित्तकी धरणहारी पतिके कंठविषै अपनी भुजपासि डारि ऐसी सोहती भई जैसे कल्पवृक्षनिसूं लिपटि कल्पवेलि सोहै, भया है रोमांच दोउनिके अंगविषै, परस्पर मिलापकरि दोऊ ही अति सोहते भये। ते देवनिके युगल समान है। जैसे देव देवांगना सोहैं तैसैं सोहते भये। सीता अर रामका समागम देखि देव प्रसन्न भये। सो आकाशतैं दोनोंनिपर पुष्पनिकी वर्षा करते भए, सुगन्ध जलकी वर्षा करते भए अर ऐसे वचन मुखतैं उचारते भए—अहो! अनुपम है शील सीताका, शुभ है चित्त, सीता धन्य है, याकी अचलता गंभीरता धन्य है, व्रत शीलकी मनोज्ञता भी धन्य है, निर्मलपना जाका धन्य है, सतीनिविषै उत्कृष्टता जाके, जानैं मनहूकरि द्वितीय पुरुष न इच्छ्या, शुद्ध है नियम व्रत जाका। या भांति देवनि प्रशंसा करी। ताही समय अतिभक्तिका भरया लक्ष्मण आय सीताके पायनि परया। विनयकरि संयुक्त सीता अश्रुपात डारती ताहि उरसूं लगाय कहती

भई—हे वत्स ! महाज्ञानी मुनि कहते जो यह वासुदेव पदका धारक ह सो प्रकट भया । अर अधचक्री पदका राज तेरे आया । निर्ग्रंथके वचन अन्यथा न होय । अर यह तेरे बडे भाई बलदेव पुरुषोत्तम जिन्होने विरहरूप अग्निविषै जरती जो म सो निकासी । बहुरि चन्द्रमा समान ह ज्योति जाकी,ऐसा भाई भामडल बहिनके समीप आया । ताहि देखि अति मोहकरि मिली । कसा ह भाई ? महा विनय वान ह, अर रणमें भला दिखाया ह । अर सुग्रीव वा हनुमान, नल, नील, अगद, विराधित, चन्द्र, सुषेण, जाबव इत्यादिक बडे बडे विद्याधर अपना नाम सुनाय वन्दना अर स्तुति करते भये । नाना प्रकारके वस्त्र आभूषण कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी माला सीताके चरणके समीप स्वणके पात्रविष मेल भेंट करते भए । अर स्तुति करते भए—हे देवि ! तुम तीन लोकविषै प्रसिद्ध हो, महा उदारताकू धरौ हो, गुण सम्पदाकर सबनिमें बडी हो,देवनिकरि स्तुति करने योग्य हो, अर मगलरूप ह दशन तिहारा, जैस सूयकी प्रभा सूयसहित प्रकाश कर नस तुम श्री रामचन्द्र सहित जयवत होहु ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण स स्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष राम और सीताका मिलाप होनेका वणन करनेवाला उन्यासीवा पव पूण भया ।। ७९ ।।

अथानन्तर सीताके मिलापरूप सूयके उदयकरि फूल गया ह मुख कमल जाका ऐस जो राम सो अपने हाथकरि सीताका हाथ गह उठे, ऐरावत गजसमान जो गज तापर सीतासहित आरोहण किया । मेघ समान वह गज ताको पीठपर जानकीरूप रोहिणीकरि युक्त रामरूप चन्द्रमा सोहते भए, समाधानरूप ह बुद्धि जिनकी । दोऊ अति प्रीतिके भरे, प्राणिनिके समूहकू आनन्दके करता, बडे बडे अनुरागी विद्याधर लार, स्वग विमान तुल्य रावणका महल, तहा श्रीराम पधारे । रावणके महिलके मध्य श्रीशातिनाथका मदिर अति सुन्दर, तहा स्वणके हजारो थम्भ, नानाप्रकारके रत्नोकरि मडित मदिर की मनोहर भीति, जस महाविदेहके मध्य सुमेरु गिरि सोह तस रावणके मदिरविषै श्रीशातिनाथका

मन्दिर मोहै। जाहि देखे नेत्र मोहित होय जाय। तहा घण्टा बाज है, ध्वजा फहर है। महा मनोहर वह शातिनाथका मन्दिर वर्णनविषै न आवै। श्रीराम हाथीतै उतरे। नागेन्द्र समान है पराक्रम जाका, प्रसन्न नेत्र, महालक्ष्मीवान, जानकीसहित किंचित काल कायोत्सर्गकी प्रतिज्ञा करी। प्रलबित है भुजा, महा प्रशात हृदय, सामायिककू अगीकार करि हाथ जोडि शातिनाथस्वामीका स्तोत्र, समस्त अशुभ कर्मका नाशक पढते भए—हे प्रभो! तिहारे गर्भावतारविषै शाति भई, महा कातिकी करणहारी, सव रोगकी हरणहारी, अर सकल जीवनकू आनन्द उपजै, अर तिहारे जन्मकल्याणकविषै इन्द्रादिक देव महाहर्षित होय आए। क्षीरसागरके जलकरि सुमेरुके पर्वतपर तिहारा जन्माभिषेक भया,अर तुमने चक्रवर्ती पद धर जगतका राज्य किया। बाह्य शत्रु बाह्यचक्रसे जीते, अर मुनि होय माहिले मोह रागादिक शत्रु ध्यानकरि जीते। केवलबोध लह्या, जन्म जरा मरणसे रहित जो शिवपुर कहिए मोक्ष ताका तुम अविनाशी राज्य लिया। कर्मरूप वरी ज्ञान शस्त्रत निराकरण किए। कैसे है कर्मशत्रु? सदा भव-भ्रमणके कारण, अर जन्म जरा मरण भयरूप आयुधनिकर युक्त, सदा शिवपुर पथके निरोधक। कैसा है वह शिवपुर? उपमारहित, नित्य, शुद्ध, जहा परभवका आश्रय नाहीं, केवल जिन भावका आश्रय है, अत्यन्त दुर्लभ, सो तुम आप निर्वाणरूप, औरनिकू निर्वाणपद सुलभ करोहो, सब जगतकू शाति के कारण हो। हे श्रीशातिनाथ! मन वचन कायकरि नमस्कार तुमकू। हे जिनेश! हे महेश! अत्यत शात दशाकू प्राप्त भए हो, स्थावर जगम सब जीवनिके नाथ हो। जो तिहारे शरण आवै तिनके रक्षक हो। समाधि बोधके देनहारे तुम एक परमेश्वर सबके गुरु, सबके बाधव हो। मोक्ष मार्गके प्ररूपणहारे, सब इन्द्रादिक देवनिकर पूज्य, धर्मतीर्थके कर्ता हो। तिहारे प्रसाद करि सब दुखसे रहित जो परम स्थानक ताहि मुनिराज पावै है। हे देवाधिदेव! नमस्कार है तुमकू। सब कर्म विलय किया है। हे कृतकृत्य! नमस्कार तुमकू। पाया है परम शातिपद जिन्होने, तीनलोककू शातिके कारण, सकल स्थावर जगम जीवनिके नाथ, शरणागतपालक, समाधि बोधके दाता, महा कातिके धारक हे प्रभो!

तुम ही गुरु, तुमही बांधव, तुमही मोक्षमार्गके नियता परमेश्वर, इन्द्रादिक देवनिकरि पूज्य, धर्मतीर्थ के कर्ता जिनकरि भव्य जीवनिकू सुख होय, सब दुखके हरणहारे, कर्मनिके अंतक ! नमस्कार तुमकू । हे लब्धलभ्य ! नमस्कार तमकू । लब्धलभ्य कहिए पाया है, पायवे योग्य पद जिन्होने, महाशांत स्व भावविषै विराजमान, सब दोष रहित हे भगवान ! कृपा करहु । वह अखंड अविनाशी पद हमें देवहु। इत्यादि महास्तोत्र पढते कमल-नयन श्रीराम प्रदिक्षणा देकर वंदना करते भए, महा विवेकी, पुण्य कर्मविषै सदा प्रवीण । अर रामके पीछे नम्रीभूत है अंग जाका, दोऊ कर जोड, महासमाधानरूप जानकी स्तुति करती भई । श्रीरामके शब्द महा दुंदुभी समान अर जानकी महा मिष्ट कोमल वीणा समान बोलती भई । अर विशल्या सहित लक्ष्मण स्तुति करते भए । अर भामंडल, सुग्रीव तथा हनुमान मंगल स्तोत्र पढते भए। जोडे है कर कमल, अर जिनराजविषै पूर्ण है भक्ति जिनकी, महा गान करते, मृदंग गावि बजावते महा ध्वनि करते भए । सो मयूर मेघकी ध्वनि जानि नृत्य करते भए। बारम्बार स्तुति प्रणाम करि जिनमन्दिरविषै यथायोग्य तिष्ठे । ता समय राजा विभीषण अपने दादा सुमाली, अर तिनके लघुवीर सुमाल्यवान, अर सुमालीके पुत्र रत्नश्रवा रावणके पिता तिनकू आदि दे अपने बडे तिनका समाधान करता भया । कैसा है विभीषण ? संसारकी अनित्यताके उपदेशविषै अत्यन्त प्रवीण । सो बडनिसू कहता भया-हे तात ! ए सकल जीव अपने उपार्जे कर्मनिकू भोगवे है । तातै शोक करना वृथा है । अर अपना चित्त समाधान करहु । आप जिन आगमके वेत्ता महा शांत चित्त, अर विचक्षण हो, औरनिकू उपदेश देयवे योग्य आपकू हम कहा कहें ? जो प्राणी उपज्या है सो अवश्य मरणकू प्राप्त होय है । अर यौवन पुष्पनिकी सुगंधता समान क्षणमात्रविषै और रूप होय है । अर लक्ष्मी पल्लवनिकी शोभासमान शीघ्र ही और रूप होय है । अर विजुरीके चमत्कार समान यह जीतव्य है। अर पानीके बुदबुदासमान बंधुनिका समागम है । अर सांझके बादरके रंग समान यह भोग है । अर यह जगतकी करणी स्वप्नकी क्रिया समान है । जो ये जीव पर्यायार्थिक नयकरि मरण न करै तो हम

भवातरत तिहारे वशवर्ती कसे आवते ? हे तात ! अपना ही शरीर विनाशीक है तो हितूजनका अत्यन्त शोक काहेकू करिए ? शोक करना मूढता है । सत्पुरुषनिको शोकके दूर करिवे अर्थि ससार का स्वरूप विचारणा योग्य है । देखे, सुने, अनुभवे जे पदार्थ वे उत्तम पुरुषनिकू शोक उपजावे हैं । परन्तु विशेष शोक न करना, क्षणमात्र भया तो भया । शोककरि बाधवका मिलाप नाहीं, बुद्धिभ्रष्ट होय है । तात शोक न करना । यह विचारणा—या ससार असारविषै कौन कौन सम्बन्ध भए, या जीव के कौन कौन बाधव भए—ऐसा जानि शोक तजना । अपनी शक्ति प्रमाण जिनधर्मका सेवन करना । यह वीतरागका मार्ग ससार सागरका पार करणहारा है । सो जिनशासनविषै चित्त धरि आत्मकल्याण करना । इत्यादि मनोहर मधुर वचननिकर विभीषण अपने बडेनिका समाधान किया ।

बहुरि अपने निवास गया । अर अपनी विदग्धनामा पटराणी, समस्त व्यवहारविषै प्रवीण हजारा राणीनिमें मुख्य, ताहि श्रीरामके नौतिवेकू भेज्या । सो आयकरि सीतासहित रामकू अर लक्ष्मणकू नमस्कारकरि कहती भई—हे देव ! मेरे पतिका घर आपके चरणारविन्दके प्रसगकरि पवित्र करहु, आप अनुग्रह करिवे योग्य हो । या भाति राणी वीनती करी तब ही विभीषण आया, अति आदरत कहता भया—हे देव ! उठिये, मेरा घर पवित्र करिए । तब आप याके लार ही याके घर जायवेकू उद्यमी भए । नानाप्रकारके वाहन, कारी घटा समान बाजे, अति उत्तग अर पवन समान चचल तुरग, अर मन्दिरसमान रथ इत्यादि नानाप्रकारके जे वाहन तिनपर आरूढ अनेक राजा तिन सहित विभीषण के घर पधारे । समस्त राजमार्ग सामतनिकरि आच्छादित भया । विभीषणने नगर उछाला, मेघकी ध्वनि समान वादित्र बाजते भए । शखनिके शब्दकरि गिरिकी गुफा नाद करती भई । झझा भेरी मृदग ढोल हजारो बाजते भए । लपाक काहला धधु अनेक बाजे अर दुदुभी बाजे, दशो दिशा वादित्र निके नादकरि पूरी गई । ऐसे ही तो वादित्रनिके शब्द, अर ऐसे ही नानाप्रकारके वाहननिके शब्द, ऐसे ही सामतनिके अट्टहास, तिनकर दशो दिशा पूरित भई । कईएक सिंह शार्दूल पर चढे हैं, कई

एक हाथीनपर, कईएक तुरगनिपर चढे है। नानाप्रकारके विद्यामई तथा सामान्य बाहन तिनपर चढे चाले। नत्यकारणी नत्य कर है, नट भाट अनेक कला अनेक चेष्टा कर ह। अति सुन्दर नत्य होय ह। बदीजन विरद बखान ह। ऊचे स्वरसे स्तुति कर ह। अर शरदकी पूणमासीके चन्द्रमा समान उज्ज्वल छत्रनिके मडल करि अम्बर छाय रहा ह। नाना प्रकारके आयुधनिकी काति करि सूयकी काति दबि गई ह। नगरके सकल नर नारीरूप कमलनिके वनकू आनद उपजावते, भानुसमान श्रीराम विभीषणके घर आए। गौतमस्वामी कह ह—हे श्रेणिक! ता समयकी विभूति कही न जाय। महा शुभ लक्षण, जसी देवनिके शोभा होय तसी भई। विभीषणने अघपाद्य किए अति शोभा करी। श्रीशाति नाथके मदिर त लेय अपने महिलतक महा मनोज्ञ ताडव किए। आप श्रीराम हाथीसे उतर सीता अर लक्ष्मण सहित विभीषणके घरमें प्रवेश करते भए। विभीषणके महिलके मध्य पदमप्रभु जिनेन्द्र का मन्दिर रत्ननिके तोरणनिकरि मडित, कनक मई, ताके चौगिद अनेक जिनमन्दिर। जसे पवतनिक मध्य सुमेरु सोह तस पदमप्रभुका मन्दिर सोह। सुवणके हजारा थम्भ, तिनके ऊपर अति ऊचे ददी-प्यमान अति विस्तार सयुक्त जिनमदिर सोह। नानाप्रकारके मणिनिके समूहकरि मडित अनेक रचना कू धर। अति सुन्दर पदमराग मणिमई पदमप्रभु जिनेन्द्रकी प्रतिमा, अति अनपम विराज जाकी कान्तिकरि मणिनिकी भूमिविष मानो कमलनिकर वन फूल रहे ह। सो राम लक्ष्मण सीतासहित वदनाकरि स्तुतिकरि यथायोग्य तिष्ठे।

अथानन्तर विद्याधरनिकी स्त्री राम लक्ष्मण सीताके स्नानकी तयारी करावती भई। अनेक प्रकारके सुगन्ध तेल तिनके उबटना किए। नासिकाकू सुगन्ध, अर देहकू अनुकूल पूव दिशाकू मुखकर स्नानकी चौकी पर विराजे, घणी ऋद्धिकर स्नानकू प्रवरते। सुवणके, मरकत मणिके हीरानिके, स्फटिक मणिके, इन्द्रनीलमणिके कलश सुगन्ध जलके भरे तिनकर स्नान भया। नानाप्रकारके वादित्र बाजे। गीत गान भए। जब स्नान होय चुका तब महापवित्र वस्त्र आभूषण पहिरे। बहुरि पदमप्रभु

के चैत्यालय जाय वंदना करी। विभीषणने रामकी मिजमानी करी, ताके विस्तार कहांलग कहिए—दुग्ध, दही, घी, शर्बतकी बावडी भरवाई। पकवान अर अन्नके पर्वत किए। अर जे अद्भुत वस्तु नन्दनादि वन विषै पाइए ते मगाई। मनकूं आनन्दकारी, नासिकाकूं सुगन्ध, नेत्रोकूं प्रिय, अति स्वादकूं धरे जिह्वाकूं वल्लभ, षट्रस सहित भोजनकी तयारी करी। सामग्री तो सब सुन्दर ही हुती अर सीताके मिलापकर रामकूं अति प्रिय लागी। रामके चित्तकी प्रसन्नता कथनविषै न आवै। जब इष्टका संयोग होय तब पांचो इन्द्रियनिके सब ही भोग प्यारे लागे, नातर नाहीं। जब अपने प्रीतमका संयोग होय तब भोजन भली भांति रुचै सुन्दर रुचै, सुन्दर वस्त्रका देखना रुचै, रागका सुनना रुचै, कोमल स्पर्श रुचै, मित्रके संयोगकर सब मनोहर लगै, अर जब मित्रका वियोग होय तब स्वर्ग तुल्य भी नरक तुल्य भासै। अर प्रियके समागमविषै महा विषम वन स्वर्ग तुल्य भासै। महा सुन्दर अमृतसारिखे रस, अर अनेक वर्णके अद्भुत भक्ष्य तिनकर राम लक्ष्मण सीताकूं तृप्त किए। अद्भुत भोजन क्रिया भई। भूमिगोचरी विद्याधर परिवारसहित अति सन्मानकर जिमाए। चन्दनादि सुगन्धके लेप किए, तिनपर भ्रमर गुंजार कर है, अर भद्रसाल नन्दनादिक बनके पुष्पनिसे शोभित किये। अर महा सुन्दर कोमल महीन वस्त्र पहिराए। नानाप्रकारके रत्ननिके आभूषण दिए। कैसे है आभूषण? जिनके रत्ननिकी ज्योतिके समूहकरि दशोदिशाविषै प्रकाश होय रहा है। जेते रामकी सेन के लोक हुते ते सब विभीषणने सन्मान कर प्रसन्न किये, सबके मनोरथ पूर्ण किये। रात्रि अर दिवस सब विभीषण हीका यश करे। अहो! यह विभीषण राक्षसवंशका आभूषण है, जाने राम लक्ष्मण की बडी सेवा करी। यह महा प्रशंसा योग्य है, मोटा पुरुष है, यह प्रभावका धारक जगतविषै उतंगता कूं प्राप्त भया— जाके मन्दिरविषै श्रीराम लक्ष्मण पधारे। या भांति विभीषणके गुणग्रहणविषै तत्पर विद्याधर होते भए। सब लोक सुखसूं तिष्ठे। राम लक्ष्मण सीता अर विभीषणकी कथा पृथ्वीविषै प्रवरती।

अथानन्तर विभीषणादिके सकल विद्याधर राम लक्ष्मणका अभिषेक करनेकू विनयकर उद्यमी भए। तब श्रीराम लक्ष्मणने कहा—अयोध्याविष हमारे पिताने भाई भरतकू अभिषेक कराया सो भरत ही हमारे प्रभु ह। तब सबने कही आपकू यही योग्य ह, परन्तु अब आप त्रिखडी भए तो यह मगल स्नान योग्य ही ह, यामें कहा दोष ह ? अर ऐसो सुननेविष आव ह-भरत महा धीर ह, अर मनवचन कायकरि आपकी सेवाविष प्रवर्तै ह, विक्रियाकू नाहीं प्राप्त होय ह। ऐसा कह सबने राम लक्ष्मणका अभिषेक किया। जगतविषै बलभद्र नारायणकी अति प्रशसा भई। जस स्वगविष इन्द्र प्रतिइन्द्रकी महिमा होय तस लकाविष राम लक्ष्मणकी महिमा भई। इन्द्रके नगर समान वह नगर महा भोगनि कर पूण, तहा राम लक्ष्मणकी आज्ञासू विभीषण राज्य कर ह। नदी सरोवरनिके तीर अर देश, पुर, ग्रामादिविष विद्याधर राम लक्ष्मणही का यश गावते भए। विद्याकरयुक्त अदभुत आभूषण पहिरे सुन्दर वस्त्र मनोहर हार, सुगन्धादिकके विलेपन उनकर युक्त क्रीडा करत भए, जस स्वगविषै देव क्रीडा कर। अर श्रीरामचन्द्र सीताका मुख देखते तप्तिकू न प्राप्त भए। कसा ह सीताका मुख ? सूयके किरणकरि प्रफल्लित भया जो कमल ता समान ह प्रभा जाकी। अत्यन्त मनकी हरणहारी जो सीता ता सहित राम निरन्तर रमणीय भूमिविष रमते भए। अर लक्ष्मण विशल्या सहित रतिकू प्राप्त भए। मनवाछित सकल वस्तुका ह समागम जिनके। उन दोऊ भाईनिके बहुत दिन भोगोपभोगयुक्त सुखसे एक दिवस समान गए।

एक दिन लक्ष्मण सुन्दर लक्षणनिका धरणहारा विराधितकू अपनी ज स्त्री तिनके लेयवे अथ पत्र लिख बडी ऋद्धिसे पठावता भया। सो जायकर कन्यानिके पितानिकू पत्र देता भया। माता पितानिने बहुत हर्षित होय कन्यानिकू पठाई। सो बडी विभूतिसू आई। देशाग नगरके स्वामी वज्रकणकी पुत्री रूपवती महारूपकी धरणहारी, अर कूवर स्थानके नाथ बालखिल्यकी पुत्री कल्याणमाला परम सुन्दरी, अर पृथ्वीपुर नगरके राजा पथ्वीधरकी पुत्री बनमाला, गुणरूपकर प्रसिद्ध, अर खेमाजलके

राजा जितशत्रुकी पुत्री जितपद्मा, अर उज्जन नगरीके राजा सिंहोदरकी पुत्री। यह सब लक्ष्मण के समीप आई। विराधित ले आया। जन्मांतरके पूर्व पुण्य, दया, मन इन्द्रियोंको वश करना, शील संयम, गुरुभक्ति, महा उत्तम तप, इन शुभ कर्मनिकर लक्ष्मणसा पति पाइए। इन पतिव्रतानिन पूर्व महा तप किए हुते। रात्रिभोजन तज्या, चतुर्विधसंघकी सेवा करी, तातं वासुदेव पति पाए। उनको लक्ष्मणही वर योग्य, अर लक्ष्मणके ऐसे ही स्त्री योग्य। तिनकरि लक्ष्मणकू, अर लक्ष्मणकर तिनकू अति सुख होता भया। परस्पर सुखी भए। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै है—हे श्रेणिक! जगत विषै ऐसी सम्पदा नाहीं, ऐसी शोभा नाहीं, ऐसी लीला नाहीं, ऐसी कला नाहीं जो इनके न भई। राम लक्ष्मण अर इनकी राणी तिनकी कथा कहा लग कहै? अर कहा कमल कहा चन्द्र इनके मुख की उपमा पावै? अर कहा लक्ष्मी अर कहा रति इनकी राणियोंकी उपमा पावै? राम लक्ष्मणकी ऐसी सम्पदा देख विद्याधरनिके समूहकू परम आश्चर्य होता भया। चन्द्रवर्धनकी पुत्री अर अनेक राजानिकी कन्या तिनसू श्रीराम लक्ष्मणका अति उत्सवसे विवाह होता भया। सब लोककू आनन्द के करणहारे वे दोऊ भाई महाभोगनिके भोक्ता, मनवांछित सुख भोगते भए। इन्द्र प्रत्येन्द्र समान आनन्दकरि पूर्ण लंकाविषै रमते भए। सीताविषै है अत्यन्तराग जिनका ऐसे श्रीराम तिन्होंने छह वर्ष लंकाविषै व्यतीत किए। सुखके सागरविषै मग्न, सुन्दर चेष्टाके धरणहारे रामचन्द्र सकल दुःख भूल गए।

अथानन्तर इन्द्रजीतमुनि सब पापनिके हरनहारे अनेक ऋद्धिसहित विराजमान पृथ्वीविषै विहार करते भए। वैराग्यरूप पवनकरि प्रेरी ध्यानरूप अग्निकरि कर्मरूप भस्म किए। कैसी है ध्यानरूप अग्नि? क्षायिक सम्यक्त्वरूप अरण्यकी लकड़ी, ताकरि करी है। अर मेघवाहन मुनि भी विषयरूप ईंधनको अग्निसमान आत्मध्यानकर भस्म करते भए, केवलज्ञानकू प्राप्त भए। केवलज्ञान जीवका निज-स्वभाव है। अर कुम्भकर्णमुनि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रके धारक, शुक्ल लेश्याकरि निर्मल जो शुक्लध्यान

ताके प्रभावकरि केवलज्ञानकू प्राप्त भए। लोक अर अलोक इनकू अवलोकन करते, मोहरजरहित इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण केवली आयु पूर्णकरि अनेक मुनिन सहित नर्मदाके तीर सिद्धपदकू प्राप्त भए। सुर असुर मनुष्यनिके अधिपतिकरि गाइए है उत्तमकीर्ति जिनकी, शुद्ध शीलके धरणहारे, महादेदीप्यमान, जगतबन्धु, समस्त, ज्ञेयके ज्ञाता, जिनके ज्ञानसमुद्रविषै लोकालोक गायके खुरसमान भासै, संसारका क्लेश महाविषम ताके जलसे निकसे, जा स्थानक गए बहुरि यत्न नाहीं—तहा प्राप्त भए, उपमारहित निर्विघ्न अखंड सुखकू प्राप्त भए। जे कुम्भकर्णादिक अनेक सिद्ध भए ते जिनशासनके श्रोतावोंकू आरोग्य पद देवें। नाश किए है कर्मशत्रु जिन्होंने, ते जिनस्थानकोंसे सिद्ध भए है मैं वे स्थानक अद्यापि देखिये है। वे तीर्थ भव्यनिकरि वंदवे योग्य है। विंध्याचलकी वनीविषै इन्द्रजीत मेघनाद तिष्ठे सो तीर्थ मेघरव कहावे है। अर जाम्बुमाली महा बलवान तूणीमतनामा पर्वतविषै अहमिंद्र पदकू प्राप्त भए सो पर्वत नानाप्रकारके वृक्ष अर लतानिकरि मंडित, अनेक पक्षिनिके समूहकरि तथा नानाप्रकारके वचननिकर भरया। अहो भव्यजीव हो! जीवदया आदि अनेक गुणनिकर पूर्ण ऐसा जो जिनधर्म ताके सेवनेसे कछु दुर्लभ नाहीं, जैनधर्मके प्रसादसे सिद्ध पद, अहमिंद्र पद इत्यादिके पद सब ही सुलभ है। जम्बूमालीका जीव अहमिंद्र पदसे ऐरावतक्षेत्रविषै मनुष्य होय, केवल उपाय, सिद्धपदकू प्राप्त होवेंगे। अर मंदोदरीका पिता चारण मुनि होय महा ज्योतिकू धरे अढाईद्वीपविषै कैलाश आदि निर्वाण क्षेत्रनिकी अर चैत्यालयनिकी वंदना करते भए। देवनिका है आगमन जहा। सो मय महामुनि, रत्नत्रयरूप आभूषण करि मंडित, महाधीर्यधारी पृथ्वीविषै विहार करे। अर मारीच मंत्री महामुनि स्वर्गविषै बडी ऋद्धिके धारी देव भये। जिनका जैसा तप तैसा फल पाया सीताके दृढ व्रतकरि पतिका मिलाप भया, जाकू रावण डिगाय सक्या नाहीं। सीताका अतुल धैर्य अद्भुत रूप, महानिर्मल बुद्धि, भरतारविषै अधिक स्नेह, जो कहनेविषै न आवे। सीता महा गुणनि करि पूर्ण, शीलके प्रसादतै जगतविषै प्रशंसा योग्य भई। कैसी है सीता? एक निजपतिविषै है संतोष

जाके, भवसागरको तरणहारी, परम्पराय मोक्षकी पात्र जाकी साधु प्रशसा करै। गौतम स्वामी कहै है— हे श्रेणिक! जो स्त्री विवाहही नहीं करै, बालब्रह्मचर्य धारै, सो तो महाभाग्य ही है, अर पतिव्रतका व्रत आदरे, मनवचनकायकरि पर पुरुषका त्याग करै, तो यह व्रत भी परम रत्न है। स्त्रीकूं स्वर्ग अर परम्पराय मोक्ष देवनेकूं समर्थ है। शीलव्रत समान और व्रत नाहीं। शील भवसागरकी नाव है। राजा मय मदोदरीका पिता राज्य अवस्थाविषै मायाचारी हुता, अर कठोर परणामी हुता तथापि जिनधर्मके प्रसादकरि रागद्वेष रहित हो अनेक ऋद्धिका धारक मुनि भया।

यह कथा सुन राजा श्रेणिक गौतमस्वामीकूं पूछते भए—हे नाथ! मैं इन्द्रजीतादिकका माहात्म्य सब सुन्या। अब राजा मयका माहात्म्य सुना चाहूं हूं। अर हे प्रभो! जो या पृथ्वीविषै प्रतिव्रता शीलवती हैं, निज भरतारविषै अनुरक्त हैं, वे निश्चयसे स्वर्ग मोक्षकी अधिकारिणी हैं, तिनकी महिमा मोहि विस्तारसूं कहो। तब गणधर कहते भए—जे निश्चयकरि सीता समान पतिव्रता शीलकूं धारण करै हैं ते अल्प भवनमें मोक्ष होय है। पतिव्रता स्वर्गही जाय परम्पराय मोक्ष पावै, अनेक गुणनिकर पूर्ण। हे राजन! जे मनवचनकायकरि शीलवती है, चित्तकी वृत्ति जिन्होने रोकी है, ते धन्य है। घोडनिमें, हाथीनिमें लोहेनिविषै, पाषाणविषै, वस्त्रनिविषै, जलविषै, वृक्षनिविषै, बेलनिविषै, स्त्रीनिविषै, पुरुषनिविषै बडा अन्तर है। सभी बेलनिमें न ककडी फल न कुम्हडा। वसे ही सबही नारियोमें पतिव्रता न पाइए, अर सबही पुरुषनिमें विवेकी नाहीं। जे शीलरूप अंकुशकरि मनरूप माते हाथीकूं वश करै ते पतिव्रता, सबही कुलविषै होय हैं। अर वृथा पतिव्रताका अभिमान किया तो कहा? जे जिनधर्मसे बहिर्मुख है ते मानरूप माते हाथीकूं वश करिवे समर्थ नाहीं। वीतरागकी वाणीकरि निर्मल भया है चित्त जिनका ते ही मनरूप हस्तीकूं विवेकरूप अंकुशकरि वशीभूत करि, दया शीलके मार्गविषै चलायवे समर्थ हैं। हे श्रेणिक! एक अभिमाना नामा स्त्री ताकी संक्षेपसे कथा कहिए है—सो सुन, यह प्राचीन कथा प्रसिद्ध है। एक धान्यग्रामनामा ग्राम, तहां नोदन नामा ब्राह्मण, ताके अभिमानानामा स्त्री, सो अग्निनामा ब्राह्मणकी पुत्री, माननी

नामा माताके उदरविषै उपजी, सो अति अभिमानकी धरहणहारी। सो नोदन नामा ब्राह्मण क्षुधा कर पीडित होय अभिमानाकू तज दई, सो गजवनविषै करूरुह नाम राजाकू प्राप्त भई। वह राजा पुष्पप्रकीण नगरका स्वामी, लपट, सो ब्राह्मणीकू रूपवती जान ले गया, स्नेहकर घरविष राखी। एक समय रातिविष तान राजाके मस्तकविषै चरणकी लात दई। प्रात समय सभाविष राजाने पडित निकू पूछ्या–जान मेरा सिर पाव कर हता होय ताका कहा करना ? सब मूर्ख पडित कहते भए–हे देव ! ताका पाव छेदना अथवा प्राण हरना। ता समय एक हेमाक नामा ब्राह्मण राजाके अभिप्राय का वेत्ता कहता भया–ताके पावकी आभूषणादिकरि पूजा करनी। तब राजाने हेमाककू पूछी–हे पडित ! तुमने रहस्य कस जाना ? तब तान कही–स्त्रीके दतनिके तिहारे अधरनिविषै चिह्न दीखे, तात यह जानी स्त्रीके पावकी लागी। तब राजाने हेमाकको अभिप्रायका वेत्ता जान अपना निकट कृपापात्र किया, बडी ऋद्धि दई। सो हेमाकके घरके पास एक मित्रयशानामा विधवा ब्राह्मणी महा दु खी अमोघसर नाम ब्राह्मणकी स्त्री ह सो रह। सो अपने पुत्रकू शिक्षा देती भई। भरतारके गुण चितार चितार कहती भई–हे पुत्र ! बालअवस्थाविषै जो विद्याका अभ्यास कर सो हेमाककी न्याई महाविभूतिकू प्राप्त होय। या हेमाकने बालअवस्थाविषै विद्याका अभ्यास किया सो अब याकी कीर्ति देख। अर तेरा बाप धनुषबाण विद्याविषै अति प्रवीण हुता ताके तुम सुपुत्र भए। आसू डार माताने ए कहे। ताके वचन सुन माताकू धीय बधाया, महा अभिमानका धारक यह श्रीवर्धित नामा पुत्र, विद्या सीखनके अर्थि व्याधपुर नगर गया। सो गुरुके निकट शस्त्र शास्त्र सब विद्या सीख्या। अर या नगरके राजा सुकातको शीला नामा पुत्री ताहि ले निकस्या। तब कन्याका भाई सिहचन्द्र या ऊपर चढ्या सो या अकेलने शस्त्रविद्याके प्रभावकरि सिहचन्द्रकू जीत्या अर स्त्रीसहित माताके निकट आया। माताकू हर्ष उपजाया। शस्त्रकलाकरि याकी पृथ्वीविषै प्रसिद्ध कीर्ति भई। सो शस्त्रके बलकरि पोदनापुरके राजा करूरुहकू जीत्या अर व्याघपुरका राजा शीलाका पिता मरणकू प्राप्त भया। ताका पुत्र सिह

चन्द्र शत्रुनिने दबाया। सो सुरगके मार्ग होय अपनी रानीकूं ले निकस्या, राज्यभ्रष्ट भया। पोदनापुरविषै अपनी बहिनका निवास जान तम्बोलीके लार पाननिकी झोली सिरपर धरे स्त्री सहित पोदनापुरके समीप आया। रात्रिकूं पोदनापुरके बनविषै रह्या। ताकी स्त्री सपने डसी। तब यह ताहि कांधे धर' जहां मय महा मुनि विराजे हुते—वे वज्रके थम्भ समान महा निश्चल कायोत्सर्ग धर, अनेक ऋद्धिके धारक, तिनकूं भी सब औषधि ऋद्धि उपजी हुती, सो तिनके चरणारविंदके समीप सिंहचन्द्रने अपनी राणी डारी। सो तिनके ऋद्धिके प्रभावकरि राणी निर्विष भई। स्त्रीसहित मुनिके समीप तिष्ठै था, ता मुनिके दर्शनकूं विनयदत्त नाम श्रावक आया ताहि सिंहचन्द्र मिल्या, अर अपना सब वृत्तांत कह्या। तब तान जायकरि पोदनापुरके राजा श्रीवर्धितकूं कह्या जो तिहारा स्त्रीका भाई सिंहचन्द्र आया है। तब वह शत्रु जान युद्धकूं उद्यमी भया। तब विनयदत्तने यथावत वृत्तांत कह्या जो तिहारे शरण आया है तब ताहि बहुत प्रीति ऊपजी अर महाविभूतिसूं सिंहचन्द्रके सन्मुख आया, दोऊ मिले, अति हर्ष उपज्या। बहुरि श्रीवर्धित मय मुनिकूं पूछता भया—हे भगवान! मैं मेरे अपने स्वजनोंके पूर्वभव सुना चाहूं हूं। तब मुनि कहते भए—एक शोभापुरनामा नगर वहां भद्राचार्य दिगम्बरने चौमासविषै निवास किया सो अमलनामा नगरका राजा निरंतर आचार्यके दर्शनको आवै। सो एक दिवस एक कोढिनी स्त्री, ताकी दुर्गंध आई। सो राजा पांव पयादा ही भाग अपने घर गया, ताकी दुर्गंध सह न सका। अर वह कोढिनी चैत्यालय दर्शनकरि भद्राचार्यके समीप श्राविकाके व्रत धारे, समाधिमरणकरि देवलोक गई। वहांतै चयकर तेरी स्त्री शीला भई। अर वह राजा अमल

१ ज्ञानपीठ काशी द्वारा प्रकाशित पद्मपुराणमें स्त्री को सर्प द्वारा डसनेके बजाय राजा सिंहेन्द्र को सर्प ने डसा—ऐसा संस्कृत और हिन्दीमें वर्णन है। रानी ने कंधेपर लाकर मुनिराज के चरणों में राजा को लिटाया तथा मुनिराज के चरणो का स्पर्शकर पतिके शरीरका स्पर्श किया जिससे वह पुनः जीवित हो गया। श्लोक निम्नप्रकार है—

१ महोरगेण सन्दष्टस्तं देवी परिदेविनी। कृत्वा स्कन्धे परिप्राप्ता देशं मन्त्रं मय स्थितं ॥ १८ ॥ [पर्व ८०]

२ पादौ मुनेः परामृश्य पस्पुर्गात्रं समास्पृशत। देवी ततः परिप्राप्तः सिंहेन्दुर्जीवितं पुनः ॥१८२॥ [पर्व ८०

अपने पुत्रकू राज्यभार सोप आप श्रावकके व्रत धारे, आठ ग्राम पुत्र प ले सतोष धरचा, शरीर तज देवलोक गया। वहासे चयकरि तू श्रीवर्धित भया।

अब तेरी माताके भव सुन—एक विदेशी क्षुधाकरि पीडित ग्रामविषै आय भोजन मागता भया। सो जब भोजन न मिला तब महा कोपकरि कहता भया कि म तिहारा ग्राम बालू गा। ऐसे कटुक शब्द कह निकस्या। दवयोगसे ग्रामविष आग लगी सो ग्रामके लोगनिने जानी ताने लगाई। तब क्रोधायमान होय दौडे अर ताहि ल्याय अग्निविष जराया सो महादुखकरि राजाकी रसोवणि भई। मरकरि नरकविष घोर वेदना पाई। तहासे निकसि तेरी माता मित्रयशा भई। अर पोदनापुरविषै एक गोवाणिज गहस्थ मरकरि तेरी स्त्रीका भाई सिहचन्द्र भया। अर वह भुजपत्रा ताकी स्त्री रतिवधना भई। पूर्व भवविष पशुओपर बोझ लादे थे सो या भवविष भार वह। ये सबके पूर्व जन्म कह करि मय महा मुनि आकाश माग विहारकर गए अर पोदनापुरका राजा श्रीवर्धित सिहचन्द्रसहित नगरविषै गया। गौतम स्वामी कह ह—हे श्रेणिक! यह ससारकी विचित्र गति ह। कोईयक तो निधन ते राजा होजाय अर कोईयक राजासे निधन हो जाय ह। श्रीवर्धित ब्राह्मणका पुत्र सो राज्यभ्रष्ट होय राजा होय गया। सिहचन्द्र राजाका पुत्र सो श्रीवर्धितके समीप आया। एक गुरुके निकट प्राणी धमका श्रवण कर, तिनविषै कोई समाधि मरणकरि सुगति पाव, कोई कुमरण करि दुगति पाव। कोई रत्ननिके भरे जहाज सहित समुद्र उलघ सुखसे स्थानक पहुँचे, कोउ समुद्रविष डूब, कोउकू चोर लूट लेय जावे। ऐसा जगतका स्वरूप विचित्र गति जान जे विवेकी ह ते दया, दान, विनय, वराग्य, जप, तप, इन्द्रियोका निरोध, शातता, आत्म—ध्यान तथा शास्त्राध्ययनकरि आत्म—कल्याण कर। ऐसे मय मुनिके वचन सुन राजा श्रीवर्धित अर पोदनापुरके बहुतलोक शातचित्त होय जिनधमका आराधन करते भए। यह मय मुनिका माहात्म्य जे चित्त लगाय पढ, सुन तिनकू बरियोकी पीडा न होय, सिंह

व्याघ्रादि न हते, सर्पादि न डसै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै सप्तमुनिका माहात्म्य वर्णन करनेवाला ब्यानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९२ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणके बडे भाई श्रीरामचन्द्र सर्वलोक समान लक्ष्मीकूं मध्यलोकविषै भोगते भए, चन्द्र सूर्य समान है कांति जिनकी। अर इनकी माता कौशिल्या भरतार अर पुत्रके वियोगरूप अग्निकी ज्वालाकर शोककूं प्राप्त भया है शरीर जाका। महिलके सातवें खण बैठी, सखियोंकरि मंडित अतिउदास आंसुनिकर पूर्ण हैं नेत्र जाके। जैसे गायको बच्चेका वियोग होय अर वह व्याकुल होय ता समान पुत्रके स्नेहविषै तत्पर, तीव्र शोकके सागरविषै मग्न, दशोंदिशाकी ओर देखै। महिलके शिखरविषै तिष्ठता जो काग ताहि कहै—हे वायस! मेरा पुत्र राम आवै तो तोहि खीरका भोजन दूं। ऐसे वचन कहकर विलाप करै। अश्रुपात करि किया है चातुर्मास जिसने। हाय वत्स! तू कहां गया? मैं तुझे निरंतर सुखसे लडाया था, तेरे विदेश भ्रमणकी प्रीति कहांसे उपजी? कहां पल्लव समान तेरे चरण कोमल कठोर पंथविषै पीडा न पावैं? महा गहन वनविषै कौन वृक्षके तले विश्राम करता होयगा? मैं मन्द भागिनी अत्यन्त दुखी, मुझे तजकर तू भाई लक्ष्मण सहित किस दिशाको गया? या भांति माता विलाप करै ता समय नारद ऋषि आकाश मार्ग विषै आए। पृथ्वीमें प्रसिद्ध, सदा अढाई द्वीप विषै भ्रमते ही रहैं, सिरपर जटा, शुक्ल वस्त्र पहिरे। ताकूं समीप आवता जान कौशिल्याने उठकर सन्मुख जाय नारदकूं आदरसहित सिंहासन बिछाय सन्मान किया। तब नारद उसे अश्रुपात सहित शोकवन्ती देख पूछते भए—हे कल्याणरूपिणी! तुम ऐसी दुखरूप क्यों? तुमकूं दुखका कारण कहा? सुकौशल महाराजकी पुत्री, लोकविषै प्रसिद्ध राजा दशरथकी राणी, प्रशंसा योग्य श्रीरामचन्द्र मनुष्यनिविषै रत्न तिनकी माता, महासुन्दर लक्षणकी धरणहारी, तुमकूं कौनने रुसाई? जो तिहारी आज्ञा

न माने सो दुरात्मा है। अबार ही ताका राजा दशरथ निग्रह करें। तब नारदकू माता कहती भई—हे देवर्षि! तुम हमारे घरका वृत्तांत नहीं जानो हो तातैं कहो हो। अर तिहारा जैसा वात्सल्य या घरसू था सो तुम विस्मरण किया, कठोर चित्त होय गए। अब यहां आवना ही तज्या, अब तुम बात ही न बूझो। हे भ्रमणप्रिय! बहुत दिननिविषै आए। तब नारदने कहा—हे माता! धातुकीखंड द्वीपविषै पूर्व विदेहक्षेत्र, वहां सुरेन्द्ररमण नामा नगर, वहां भगवान तीर्थङ्कर देवका जन्मकल्याण भया सो इन्द्रादिक देव आए। भगवानको सुमेरुगिरि लेगए, अद्भुत विभूतिकर जन्माभिषेक किया। सो देवाधिदेव सर्व पापके नाशनहारे तिनका अभिषेक मैं देख्या, जाहि देख धर्मकी बढवारी होय। वहां देवनिने आनन्दसू नृत्य किया। श्रीजिनेन्द्रके दर्शनविषै अनुरागरूप है बुद्धि मेरी, सो महामनोहर धातकीखण्डविषै तेईस वर्ष मैंने सुखसे व्यतीत किये। तुम मेरी मातासमान सो तुमकू चितार या जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै आया। अब कईएक दिन इस मंडलहीविषै रहूंगा। अब मोहि सब वृत्तांत कहो। तिहारे दर्शनकू आया हूं। तब कौशल्याने सर्व वृत्तांत कहा। भामंडलका यहां आवना, अर विद्याधरनिका यहां आवना, अर भामंडलकू विद्याधरनिका राज्य, अर राजा दशरथका अनेक राजानि सहित वैराग्य, अर रामचन्द्रका सीता सहित अर लक्ष्मणके लार विदेशको गमन, बहुरि सीताका वियोग, सुग्रीवादिकका रामसू मिलाप, रावणसे युद्ध, लंकेशकी शक्तिका लक्ष्मणके लगना, बहुरि द्रोणमेघकी कन्याका तहां गमन—एती खबर हमकू है। बहुरि क्या भया सो खबर नाहीं। ऐसा कह महादुःखित होय अश्रुपात डारती भई, अर विलाप किया—हाय हाय! पुत्र तू कहां गया? शीघ्र अब मोसे वचन कह, मैं शोकके सागरविषै मग्न ताहि निकास। मैं पुण्यहीन तेरे मुख देखे बिना महा दुःखरूप अग्निसे दाहकू प्राप्त भई। मोहि साता देवो। अर सीता बालक, पापी रावण तोहि बंदीगृहविषै डारी, महा दुःखसे तिष्ठती होयगी। निर्दई रावणने लक्ष्मणके शक्ति लगाई सो न जानिए जीवे है के नाहीं? हाय! दोनो दुर्लभ पुत्र हो, हाय सीता! तू पतिव्रता काहे दुःखकू प्राप्त भई?

यह वृत्तांत कौशल्याके मुख सुन नारद अति खेदखिन्न भया। बीण धरतीविषै डार दई, अर अचेत होय गया। बहुरि सचेत होय कहता भया—हे माता! तुम शोक तजहु, मै शीघ्रही तिहारे पुत्रनिकी वार्ता क्षेम कुशलकी लाऊ हू। मेरे सब बातविषे सामर्थ्य है। यह प्रतिज्ञाकर नारद बीणाकू उठाय काधे धरी, आकाश मार्ग गमन किया। पवन समान है वेग जाका। अनेक देश देखता लकाकी ओर चाल्या। सो लकाके समीप जाय विचारा—राम लक्ष्मणकी वार्ता कौन भाति जानिवेविषै आवै? जो राम लक्ष्मणकी वार्ता पूछिए तो रावणके लोकनिसे विरोध होय। तातै रावणकी वार्ता पूछिए तो योग्य है। रावणकी वार्ता कर उनकी वार्ता जानी जायगी। यह विचार नारद पद्म सरोवर गया। तहा अन्त पुर सहित अगद क्रीडा करता हुता। ताके सेवकनिको रावणकी कुशल पूछी। वे किंकर सुनकर क्रोधरूप होय कहते भए यह दुष्टतापस रावणका मिलापी है। याकू अगदके समीप ले गए जो रावणकी कुशल पूछे है। नारदने कहा मेरा रावणसे कछु प्रयोजन नाहीं। तब किंकरनिने कही तेरा कछु प्रयोजन नाहीं तो रावणकी कुशल क्यो पूछे था? तब अगदने हँसकर कहा इस तापसकू पद्मनाभिके निकट ले जावो। सो नारदको खींचकर लेचले। नारद विचारै है न जानिए कौन पद्मनाभि है? कौशल्याका पुत्र होय तो मोसे ऐसी क्यो होय? ये मोहि कहा लेजाय है, मै सशयविषै पडा हू, जिनशासनके भक्त देव मेरी सहाय करो। अगदके किंकर याहि विभीषणके मन्दिर श्रीराम विराजे हुते तहा ले गए। श्रीराम दूरसे देख याहि नारद जान सिंहासनसे उठे अति आदर किया। किंकरनिसे कहा इनसे दूर जावो। नारद श्रीराम लक्ष्मणकू देख अति हर्षित भया। आशीर्वाद देकर इनके समीप बैठा। तब राम बोले अहो क्षुल्लक! कहासे आए? बहुत दिननिविषै आए हो, नीके हो? तब नारदने कहा तिहारी माता कष्टके सागरविषै मग्न है। सो वार्ता कहिवेकू तिहारे निकट शीघ्र ही आया हू। कौशल्या माता महासती, जिनमती, निरन्तर अश्रुपात डारै है। अर तुम विना महा दुखी है। जैसे सिंही अपने बालकविना व्याकुल होय तैसै अति व्याकुल भई विलाप करै है। जाका विलाप

सुन पाषाण भी द्रवीभूत होय। तुमसे पुत्र माताके आज्ञाकारी, अर तुम होते माता ऐसो कष्टरूप रहै—यह आश्चर्यकी बात ! वह महागुणवती साक्षि सकारेविषै प्राणरहित होयगी। जो तुम ताहि न देखोगे तो तिहारे वियोगरूपसूर्यकर सूख जायगी। तात मोप कृपा कर उठहु, ताहि शीघ्र ही देखहु। या ससारविषै माता समान पदार्थ नाहीं। तिहारी दोनो मातानिके दुख करके ककई सुप्रभा सबही दुखी हैं। कौशल्या सुमित्रा दोनो मरणतुल्य होय रही है। आहार नींद सब गई। रातदिन आसू डारै है। तिनकी स्थिरता तिहारे दर्शन होसू होय। जस कुरुचि विलाप करै तस विलाप करै है। अर सिर अर उर हाथोते कूटै है। दोनो ही माता तिहारे वियोगरूप अग्निकी ज्वाला कर जरै है। तिहारे दर्शनरूप अमृतकी धारकर उनका आताप निवारो। नारदके वचन सुन दोनो भाई मातानिके दुखकर अति दुखी भए। शस्त्र डार दिए, अर रुदन करन लगे। तब सकल विद्याधरनिने धीर्य बधाया। राम लक्ष्मण नारदसू कहते भए—अहो नारद ! तुमने हमारा बडा उपकार किया। हम दुराचारी माताकू भूल गए, सो तुम स्मरण कराया। तुम समान हमारे और वल्लभ नाहीं। वही मनुष्य महा पुण्यवान है जो माताके विनयविषै तिष्ठै हैं, दास भए माताकी सेवा करें। जे माताका उपकार विस्मरण करै है वे महा कतघ्न हैं। या भांति माताके स्नेहकरि व्याकुल भया है चित्त जिनका, दोनो भाई नारदकी अति प्रशसा करते भए।

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मणने ताही समय अति विभ्रम चित्त होय विभीषणकू बुलाया। अर भामण्डल सुग्रीवादि पास बैठे है। दोऊ भाई विभीषणसू कहते भए—हे राजन ! इन्द्रके भवन समान तेरा भवन। तहा हम दिन जाते न जाने। अब हमारे माताके दर्शनकी अति वाछा हैं, हमारे अग अति तापरूप हैं, सो माताके दर्शनरूप अमृतकर शातताकू प्राप्त होवें। अब अयोध्या नगरीके देखिवेकू हमारा चित्त प्रवरत्या है। वह अयोध्या भी हमारी दूजी माता है। तब विभीषण कहता भया—हे स्वामिन ! जो आज्ञा करोगे सो ही होयगा। अबारही अयोध्याकू दूत पठावै जो तिहारी शुभवार्ता मातानिसू कहे अर तिहारे आगमकी वार्ता कहे जो मातावोके सुख होय अर तुम कृपाकर षोडश दिन

यहां ही विराजो। हे शरणागत प्रतिपालक! मोसे कृपा करो, ऐसा कह अपना मस्तक रामके चरण तले धरया। तब राम लक्ष्मणने प्रमाण करी।

अथानन्तर भले भले विद्याधर अयोध्याकू पठाए। सो दोनो माता महिलपर चढीं दक्षिण दिशा की ओर देख रही हुतीं। सो दूरसे विद्याधरनिकू देख कौशल्या सुमित्रासे कहती भई–हे सुमित्रा! देख, दोय यह विद्याधर पवनके प्रेरे मेघ तुल्य शीघ्र आव है। सो ये श्रावक! अवश्य कल्याणकी वार्ता कहेंगे। यह दोनो भाइयोके भेजे आव हैं। तब सुमित्रान कहा तुम जो कहो हो सो ही होय। यह वार्ता दोऊ मातानिमें होय है तब ही विद्याधर पुष्पनिकी वर्षा करते आकाशसे उतरे, अतिहर्षके भर भरत के निकट आए। राजा भरत अति प्रमोदका भरया इनका बहुत सन्मान करता भया, अर यह प्रणाम कर अपने योग्य आसनपर बठे, अति सुन्दर है चित्त जिनका यथावत वृत्तांत कहते भए।

हे प्रभु! राम लक्ष्मणने रावणकू हता, विभीषणकू लंकाका राज्य दीया, श्रीरामकू बलभद्रपद अर लक्ष्मणकू नारायणपद प्राप्त भया, चक्ररत्न हाथमें आया। तिन दोऊ भाइयोके तीन खंडका परम उत्कृष्ट स्वामित्व भया। रावणके पुत्र इन्द्रजीत मेघनाद, भाई कुम्भकर्ण जो बंदीगृहमें थे सो श्री रामने छोडे। तिन्होने जिनदीक्षा धर निर्वाण पद पाया। अर गरुडेन्द्र श्रीराम लक्ष्मणसे देशभूषण, कुलभूषण मुनिके उपसर्ग निवारिवेकरि प्रसन्न भए थे सो जब रावणत युद्ध भया उसही समय सिंह-बाण अर गरुडबाण दिये। इस भांति राम लक्ष्मणके प्रतापके समाचार सुन भरत भूप अति प्रसन्न भए, ताम्बूल सुगन्धादिक तिनको दिये अर तिनकू लेकर दोनो माताओंके समीप भरत गया। राम लक्ष्मण की माता पुत्रोकी विभूतिकी वार्ता विद्याधरोके मुखसे सुनि आनन्दकू प्राप्त भई। ताही समय आकाशके मार्ग हजारों वाहन विद्यामई स्वर्ण रत्नादिकके भर आए। अर मेघमालाके समान विद्याधरनिके समूह अयोध्यामें आये, जैसे देवनिके समूह आवे। ते आकाशविषं तिष्ठे नगरविषं नाना रत्नमई वृष्टि करते भए। रत्ननिके उद्योत कर दशो दिशाविष प्रकाश भया। अयोध्याविषे एक एक गृहस्थके घर पर्वत

समान सुवर्ण रत्ननिकी राशि करी। अयोध्याके निवासी समस्त लोक ऐसे अति लक्ष्मीवान किए मानो स्वर्गके देव ही हैं। अर नगर विषै यह घोषणा फेरी कि जाके जिस वस्तुकी इच्छा हो सो लेवो। तब सब लोक आय कर कहते भए—हमारे घरमें अटूट भण्डार भरे हैं, किसी वस्तकी बांछा नाहीं। अयोध्याविषै दरिद्रताका नाश भया। राम लक्ष्मणके प्रतापरूप सूर्य करि फूल गए हैं मुख कमल जिनके, ऐसे अयोध्याके नर नारी प्रशंसा करते भए। अर अनेक सिलावट विद्याधर महा चतुर आयकर रत्न स्वर्णमई मन्दिर बनावते भए। अर भगवानके चैत्यालय महामनोग्य अनेक बनाये मानो विंध्याचलके शिखर ही हैं। हजारनि स्तम्भनिकर मंडित नाना प्रकारके मंडप रचे, अर रत्ननिकरि जडित तिनके द्वार रचे। तिन मंदिरनि पर ध्वजानिकी पंक्ति फरहरे हैं। तोरणनिके समूह तिन कर शोभायमान जिन मंदिर रचे गिरिनिके शिखर समान ऊंचे, तिनविषै महा उत्सव होत भए। अनेक आश्चर्य कर भरी अयोध्या होती भई, लंकाकी शोभाकूं जीतनहारी। संगीतकी ध्वनि कर दशों दिशा शब्दायमान भई, कारी घटा समान वन उपवन सोहते भए। तिनविषै नाना प्रकारके फल फूल, तिन पर भ्रमर गुंजार करैं हैं। समस्त दिशानिविषै वन उपवन ऐसे सोहते भए मानो नन्दनवन ही है। अयोध्या नगरी बारह योजन लम्बी, नव योजन चौडी अतिशोभायमान भासती भई। सोलह दिनमें विद्याधर शिलावटनिने ऐसी बनाई जाका सौ वर्ष तक वर्णन भी न किया जाय। तहां वापीनिके रत्नस्वर्णके सिवान, अर सरोवरनिके रत्नके तट, तिनविषै कमल फूल रहे हैं, ग्रीष्मविषै सदा भरपूर ही रहें। तिनके तट, भगवानके मंदिर, अर वृक्षनिकी पंक्ति शोभाकूं धरं, स्वर्गपुरी समान नगरी निरमापी। सो बलभद्र नारायण लंकासूं अयोध्याकी ओर गमनकूं उद्यमी भए। गौतमस्वामी कहे हैं—हे श्रेणिक! जिस दिनसे नारदके मुखसे राम लक्ष्मणने मातानिकी वार्ता सुनी ताही दिनसे सब बात भूल गए। दोनों मातानिहीका ध्यान करते भए। पूर्व जन्मके पुण्य करि ऐसे पुत्र पाइये। पुण्यके प्रभाव करि सर्व स्तुतिकी सिद्धि होवै है। पुण्य कर क्या न होय? इसलिए हे प्राणी हो! पुण्यविषै तत्पर होहु, जाकरि

शोकरूप सूयका आताप न होय ।

इति श्रीरविषेणाचाय विरचित महापद्मपु ।ण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष अयोध्या नगरीका
वणन करनेवाला च्यासीवा पव पण भया ॥ ८१ ॥

अथानन्तर सूय उदय होते ही बलभद्र नारायण पुष्पकनामा विमानविष चढकर अयोध्याकू गमन करते भए । नानाप्रकारके वाहननिपर आरूढ विद्याधरनिके अधिपति, राम लक्ष्मणकी सेवाविषै तत्पर, परिवार सहित सग चाले । छत्र अर ध्वजानिकरि रोकी ह सूयकी प्रभा जिन्होने, आकाशमें गमन करते दूरसे पथ्वीकू देखते जाय है । पथ्वी गिरि नगर वन उपवनादि कर शोभित लवण समुद्र कू उलघनकरि विद्याधर हषके भरे लीला सहित गमन करते आगे आए। कसा ह लवण समुद्र ? नाना प्रकारके जलचरजीवनिके समूहकरि भरघा ह । रामके समीप सीता सती अनेक गुणनिकरि पूण मानो साक्षात लक्ष्मी ही ह सो सुमेरु पवतकू देखकरि रामकू पूछती भई–हे नाथ ! यह जम्बूद्वीपके मध्य अत्यन्त मनोज्ञ स्वण कमल समान कहा दीख ह ? तब राम कहते भए हे देवी ! यह सुमेरु पवत ह । जहा देवाधिदेव श्रीमनिसुव्रतनाथका जन्माभिषेक इन्द्रादिक देवनिने किया । कसे ह देव ? भगवानके पाचो कल्याणकविषै जिनके अति हष ह । यह सुमेरु रत्नमई ऊचे शिखरनिकरि शोभित जगतविष प्रसिद्ध है । अर बहुरि आगे आयकर कहते भए यह दडकबन ह जहा लकापतिने तुमकू हरी अर अपना अकाज किया । या वन विष चारण मुनिकू हमने पारणा कराया था । याके मध्य यह सुन्दर नदी है । अर हे सुलोचने ! यह वशस्थल पवत जहा देशभूषण कुल भूषणका दशन किया ताही समय मुनिन-कू केवल उपज्या । अर हे सौभाग्यवती ! कल्याणरूपिणी ! यह बालखिल्यका नगर जहा लक्ष्मणने कल्याणमाला पाई । अर यह दशाग नगर जहा रूपवतीका पिता वज्रकण परम श्रावक राज्य करे । बहुरि जानकी पृथ्वीपतिकू पूछती भई–हे कात ! यह नगरी कौन जहा विमान समान घर इन्द्रपुरी

से अधिक शोभ है ? अबतक यह पुरी मैंने कबहू न देखी। ऐसे जानकीके वचन सुन जानकीनाथ अवलोकनकरि कहते भए—हे प्रिये ! यह अयोध्यापुरी विद्याधर सिलावटोने बनाई है लंकापुरीकी ज्योतिकी जीतनहारी।

बहुरि आगे आए। तब रामका विमान सूर्यके विमान समान देख,भरत महा हस्ती पर चढ़े,अति आनंदके भरे, इन्द्र समान विभूतिकरि युक्त, सन्मुख आए। सबदिशा विमाननिकर आच्छादित देखी। भरतकू आवता देख राम लक्ष्मणने पुष्पक विमान भूमिविषै उतारा। भरत गजसे उतर निकट आया, स्नेहका भरा दोऊ भाईनिकू प्रणाम करि अर्घपाद्य करता भया। अर ये दोनो भाई विमानसे उतरि भरतसू मिले, उरसे लगाय लिया, परस्पर कुशल वार्ता पूछी। बहुरि भरतकू पुष्पक विमानविषै चढाय लीया, अर अयोध्याविषै प्रवेश किया। अयोध्या रामके आगमनकरि अति सिंगारी है, अर नाना प्रकारकी ध्वजा फरहरे है। नानाप्रकारके विमान अर नानाप्रकारके रथ, अनेक हाथी, अनेक घोडे तिनकरि मार्गमें अवकाश नाहीं। अनेक प्रकार वादित्रनिके समूह बाजते भए, शंख, झांझ, भेरी, ढोल, धूकल, इत्यादि वादित्रोंका कहा लग वर्णन करिए,महा मधुर शब्द होते भए। ऐसे ही वादित्रोंके शब्द, ऐसी ही तुरंगोकी हींस ऐसी ही गजोकी गर्जना, सामन्तोके अट्टहास, मायामई सिंह व्याघ्रादिकके शब्द,ऐसे ही वीणा बांसुरीनिके शब्द तिनकर दशोदिशा व्याप्त भई। बन्दीजन विरद बखाने हैं, नृत्यकारिणी नृत्य करे है, भांड नकल करे है,नट कला करे है। सूर्यके रथ समान रथ तिनके चित्राकार विद्याधर मनुष्य पशुनिके नाना शब्द, सो कहा लग वर्णन करिए ? विद्याधरनिके अधिपतिनिने परम शोभा करी। दोनो भाई महा मनोहर अयोध्याविषै प्रवेश करते भए। अयोध्या नगरी स्वर्गपुरी समान, राम लक्ष्मण इन्द्र प्रतीन्द्र समान, समस्त विद्याधर देव समान, तिनका कहा लग वर्णन करिए। श्रीरामचन्द्रकू देख प्रजारूप समुद्रविषै आनन्दकी ध्वनि बढती भई। भले २ पुरुष अर्घ्यपाद्य करते भए, सोई तरंग भई। पैड पैडविषै जगतकरि पूज्यमान दोनो वीर महाधीर तिनको समस्त जन आशीर्वाद देते भए—

हे देव ! जयवंत होवो, वृद्धिकू प्राप्त होवहु, चिरजीव होवहु। नादो, विरधो। या भाति आसीस देते भए। अर अति ऊँचे विमान समान मन्दिर तिनके शिखरविषै तिष्ठती सुन्दरी, फूल गए है नेत्रकमल जिनके, वे मोतिनिके अक्षत डारती भई। सम्पूर्ण पूर्णमासीके चन्द्रमासमान राम कमलनेत्र, अर वर्षाकी घटा समान लक्ष्मण, शुभ लक्षण तिनके देखिवेकू नर नारी अनुरागी भए। अर समस्त कार्य तजि झरोखोविषै बैठी नारीजन निरखे है सो मानो कमलोके वन फूल रहे है। अर स्त्रीनिके परस्पर संघट्टकर मोतिनके हार टूटे, सो मानो मोतिनकी वर्षा होय है। स्त्रीनिके मुखसे ऐसी ध्वनि निकसै—ये श्रीराम जाके समीप राजा जनककी पुत्री सीता बैठी, जाकी माता राणी विदेहा है, अर श्रीरामने साहसगति विद्याधर मारा—वह सुग्रीवका आकार धर आया हुता, विद्याधरनिविषै दैत्य कहावै। अर यह लक्ष्मण रामका लघुवीर, इन्द्र तुल्य पराक्रम, जानें लंकेश्वरकू चक्रकर हता। अर यह सुग्रीव जाने रामसू मित्रता करी। अर भामंडल सीताका भाई जिसको जन्मसू ही देव हर लेगया हुता, बहुरि दयाकर छाड्या सो राजा चन्द्रगतिके पल्या, आकाशसू वनविषै गिरा, राजाने लेकर राणी पुष्पवती कू सौंप्या। देवोने काननविषै कुण्डल पहिराकर आकाशसे डाल्या सो कुण्डलकी ज्योतिकर चन्द्रसमान भास्या तातै भामण्डल नाम धरया। अर राजा चन्द्रोदयका पुत्र विराधित, अर यह पवनका पुत्र हनुमान कपिध्वज। या भाति आश्चर्यकर युक्त नगरकी नारी वार्ता करती भई।

अथानन्तर राम लक्ष्मण राजमहिलविषै पधारे। मन्दिरके शिखर तिष्ठती दोनो माता पुत्रनिके स्नेहविषै तत्पर, जिनके स्तनसे दुग्ध झरे, महा गुणनिकी धरणहारी कौशिल्या, सुमित्रा अर केकई, सुप्रभा चारो माता मंगलविषै उद्यमी पुत्रोके समीप आई। राम लक्ष्मण पुष्पक विमानसे उतरि मातानि सू मिले। माताओकू देख हर्षकू प्राप्त भए, कमल समान नेत्र दोनो भाई लोकपालसमान हाथ जोड, नम्रीभूत होय, अपनी स्त्रियोसहित मातानिकू प्रणाम करते भए। वे चारो ही माता अनेक प्रकार आसीस देती भई। तिनकी असीस कल्याणकी करणहारी है। अर चारो ही माता राम लक्ष्मण

को उरसे लगाय परम सुखकू प्राप्त भई । उनका सुख वे ही जाने, कहिवेविषै न आवे । बारम्बार उरसे लगाय सिरपर हाथ धरती भई । आनन्दके अश्रुपात करि पूर्ण है नेत्र जिनके, परस्पर माता पुत्र कुशलक्षेम सुख दुखकी वार्ता पूछि परम सतोषकू प्राप्त भए । माता मनोरथ करती हुती । सो हे श्रेणिक ! वाछासे अधिक मनोरथ पूर्ण भए । वे माता योधावोकी जननहारी, साधुओकी भक्त, जिनधर्मविषै अनुरक्त, सुन्दरचित्त, बेटावोकी बहू सकडो तिनको देखि चारो ही अति हर्षित भई । अपने योधा पुत्र तिनके प्रभाव करि पूर्व पुण्यके उदयकरि अति महिमा सयुक्त जगतविषै पूज्य भई । राम लक्ष्मणका सागरापर्यंत कटक रहित पृथ्वीविषै एक छत्र राज्य भया । सबपर यथेष्ट आज्ञा करते भए । राम लक्ष्मणका अयोध्याविषै आगमन अर माताओसे तथा भाइयोसे मिलाप–यह अध्याय जो पढे, सुने, शुद्ध है बुद्धि जाकी, सो पुरुष मनवाछित सम्पदाकू पावे, पूर्ण पुण्य उपार्जे । शुभमति एक ही नियम दृढ होय भावनकी शुद्धतासे करे तो अतिप्रतापको प्राप्त होय, पृथ्वीमें सूर्य समान प्रकाशकू करे । तातै अव्रत तज नियमादिक धारण करो ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै अयोध्याविषै राम लक्ष्मण का आगमन वर्णन करनेवाला बियासीवा पर्व पूर्ण भया ॥ ८२ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक नमस्कार कर गौतम गणधरकू पूछता भया, हे देव ! श्रीराम लक्ष्मण की लक्ष्मीका विस्तार सुननेकी मेरे अभिलाषा है । तब गौतमस्वामी कहते भए–हे श्रेणिक ! राम लक्ष्मण भरत शत्रुघन इनका वर्णन कौन करि सके ? तथापि सक्षेपसे कहू हू । राम लक्ष्मणके विभव का वर्णन–हाथी घरके बियालीस लाख, अर रथ एते ही, घोडे नौ कोटि, प्यादे ब्यालीस कोटि, अर तीन खण्डके देव विद्याधर सेवक रामके रत्न चार–हल, मूशल, रत्नमाला गदा, अर लक्ष्मणके सात सख, चक्र, गदा, खड्ग, दण्ड, नागशय्या, कौस्तुभमणि । राम लक्ष्मण दोनो ही वीर महाधीर धनुष

धारी, अर तिनका घर लक्ष्मीका निवास, इन्द्रके भवन तुल्य ऊंचे दरवाजे, अर चतुश्शाल नामा कोट, महा पर्वतके शिखर समान ऊंचा, अर वैजयन्ती नामा सभा महामनोज्ञ, अर प्रसादकूटनामा अत्यन्त उत्तुंग दशो दिशाका अवलोकनका गृह, अर विंध्याचलपर्वत सारिखा वर्धमानक नामा नृत्य देखिवेका गृह, अर अनेक सामग्रीसहित कार्य करनेका गृह, अर कूकडेके अंडे समान महा अद्भुत शीतकालविषै सोवनेका गर्भगृह, अर ग्रीष्मविषै दुपहरीके विराजनेका धारा मंडपगृह, इकथम्भा, महामनोहर, अर राणियोंके घर रत्नमई, महा सुन्दर, दोनो भाइयोकी सोयवेकी शय्या, जिनके सिंहोंके आकार पाए, पद्मरागमणिके अति सुन्दर। अम्भोदकाड नामा विजुरीकासा चमत्कार धरे वर्षा ऋतुविषै पौढवेका महिल, अर महाश्रेष्ठ उगते सूर्य समान सिंहासन, अर चन्द्रमा तुल्य उज्ज्वल चमर, अर निशाकर समान उज्वल छत्र, अर महा सुन्दर विषमोचक नाम पावडी तिनके प्रभावसे सुखसे आकाशविषै गमन कर, अर अमोलिक वस्त्र, अर महा दिव्य आभरण, अभेद्य वक्तर, महामनोहर मणियोंके कुण्डल, अर अमोघ, गदा, खडग, कनक बाण अनेक शस्त्र, महासुन्दर महारणके जीतनहारे, अर पचास लाख हल, कोटिसे अधिक गाय, अक्षय भण्डार, अर अयोध्या आदि अनेक नगर जिनविषै न्यायकी प्रवृत्ति, प्रजा सब सुखी, सम्पदाकर पूर्ण, अर महा मनोहर वन उपवन नानाप्रकार फल पुष्पोकर शोभित, अर महा सुन्दर स्वर्ण रत्नमई सिवाणोकर शोभित क्रीडा करिवे योग्य वापिका, अर पुर तथा ग्रामो विषै लोक अति सुखी, जहां महिल अति सुन्दर। अर किसाणोको किसी भातिका दुख नाहीं, जिनके गाय, भैसोके समूह, सब भातिके सुख। अर लोकपालो जैसे सामंत अर इन्द्रतुल्य विभवके धरणहारे महातेजवंत अनेक राजा सेवक। अर रामके स्त्री आठहजार, अर लक्ष्मणके स्त्री देवांगना समान सोलह हजार, जिनके समस्त सामग्री समस्त उपकरण मनवांछित सुखके देनेहारे। श्रीरामने भगवान के हजारो चैत्यालय कराए जैसे हरिषेण चक्रवर्तीने कराए थे। वे भव्यजीव सदापूजित महाऋद्धिके निवास देश ग्राम नगर वन गृह गली सब ठौर ठौर जिनमन्दिर करावते भए, सदा सर्वत्र धर्मकी कथा,

लोक अतिसुखी, सुकोशल देशके मध्य इन्द्रपुरी तुल्य अयोध्या, जहा अति उतग जिनमदिर जिनका वणन किया न जाय। अर क्रीडा करवेके पवत मानो देवोके क्रीडा करिवेके पवत हैं,प्रकाशकर मडित मानो शरदके बादर ही हं। अयोध्याका कोट अति उतग,समुद्रकी वेदिकातुल्य, महा शिखरकर शोभित, स्वणरत्नोका समूह अपनी किरणोकर प्रकाश किया ह आकाशविष जिसने, जिसकी शोभा मनसे भी अगोचर, निश्चयसेती यह अयोध्या नगरी पवित्र मनुष्योकरि भरी सदा ही मनोग्य हुती। अब श्री रामचन्द्रने अति शोभित करी। जस कोई स्वग सुनिये ह जहा महा सम्पदा ह, मानो राम लक्ष्मण स्वगसे आए। सो मानो सव सम्पदा ले आए। आगे अयोध्या हुती तात रामके पधार अति शोभाय मान भई। पुण्यहीन जीवोको जहाका निवास दुलभ, अपने शरीरकर, तथा शुभ लोकोकर, तथा स्त्री धनादि कर रामचन्द्रने स्वग तुल्य करी। सव ठौर रामका यश, परन्तु सीताके पूर्व कमके दोषकर मूढ लोग यह अपवाद कर–देखो विद्याधरोका नाथ रावण उसने सीता हरी–सो राम बहुरि ल्याये, अर गहविष राखी। यह कहा योग्य? राम महा ज्ञानी, बडे कुलीन, चक्री, महा शूरवीर, तिनके घर विष जो यह रीति तो और लोकोकी क्या बात? इस भाति सब जन वार्ता कर।

अथानन्तर स्वग लोककू लज्जा उपजावें ऐसी अयोध्यापुरी तहा भरत इन्द्रसमान भोगनिकर भी रति न मानते भए। अनेक स्त्रीनिके प्राणवल्लभ सो निरन्तर राज्य लक्ष्मीसे उदास, सदा भोगोकी निंदा ही कर। भरतका मन्दिर अनेक मन्दिरनिकर मण्डित, नानाप्रकारके रत्ननिकर निर्मापित, मोतिनिकी मालाकर शोभित, फूल रहे ह वक्ष जहा, अनेक आश्चयका भरा, सब ऋतुके विलासकर युक्त, जहा वीण मदगादिक अनेक वादित्र बाज, देवागना समान अतिसुन्दर स्त्रीजनोकर पूण, जाके चौगिरद मदोन्मत्त हाथी गाज, श्रेष्ठ तुरग हींस, गीत नृत्य वादित्रनिकरि महामनोहर, रत्नोके उद्योत करि प्रकाशरूप, महारमणीक क्रीडाका स्थानक, जहा देवोको रुचि उपज, परन्तु भरत ससारसे भय-भीत, अति उदास, उसे तहा रुचि नाहीं–जसे पारधीकर भयभीत जो मग सो किसी ठौर विश्राम न

लहै। भरत ऐसा विचार कर कि म यह मनुष्य देह महा कष्टसे पाई सो पानीके बुदबुदावत क्षणभगुर, अर यह यौवन झागोके पु ज समान अति असार दोषोका भरा, अर ये भोग अति विरस। इनविष सुख नाहीं। यह जीतव्य स्वप्न समान, अर कुटुम्बका सम्बन्ध जस वृक्षनिपर पक्षियोका मिलाप रात्रि कू होय प्रभात ही दशो दिशाकू उड जावें ऐसा जान जो मोक्षका कारण धम न कर सो जराकर जजरा होय शोकरूप अग्निकर जर। यह नव यौवन मूढोकू वल्लभ, याविष कौन विवेकी राग करे? कदाचित न कर। यह अपवादके समूहका निवास, सध्याके उद्योत समान विनश्वर, अर यह शरीर-रूपी यन्त्र नाना व्याधिके समूहका घर पिताके वीय माताके रुधिरसे उपजा, याविष कहा रति? जसे ई धनकर अग्नि तप्त न होय, अर समुद्र जलसे तप्त न होय तस इन्द्रियनिके विषयनिकर तप्ति न होय। यह विषय अनादिसे अनन्तकाल सेये परन्तु तप्तिकारी नाहीं। यह मूढ जीव कामविषै आसक्त भला बुरा न जान पतग समान विषयरूप अग्निविष पडे, पापी महा भयकर दु खकू प्राप्त होय। यह स्त्रीनिके कुच मासके पिण्ड, महाबीभत्स गलगड समान तिनविष कहा रति? अर स्त्रीनिका मुखरूप बिल, दतरूप कोडोकर भरा, ताम्बूलके रसकरि लाल छुरीके घाव समान, ताविष कहा शोभा? अर स्त्रीनिकी चेष्टा वायु विकार समान विरूप, उन्मादकर उपजी, उसविष कहा प्रीति? अर भोग रोग समान ह, महा खेदरूप दु खके निवास, इनविष कहा विलास? अर यह गीत वादित्रोके नाद रुदन समान, तिनविष कहा प्रीति? रुदनकर भी महल गुमट अर गानकर भी गाजें। नारियोका शरीर मल मूत्रादिककरि पूण, चमकर वेष्टित। याके सेवनविष कहा सुख होय? विष्टाके कुम्भ तिनका सयोग अतिबीभत्स अति लज्जाकारी। महा दु खरूप नारियोके भोग उनविष मूढ सुख मानै। देवनिके भोग इच्छा उत्पन्न होते ही पूण होय तिनकरि भी जीव तप्त न भया तो मनुष्योके भोगोकरि कहा तृप्त होय? जसै दूभकी अणीपर जो ओसकी बू द ताकर कहा तष्णा बुझ? अर जसे ईंधनका बेचनहारा सिरपर भार लाय दुखी होय तसे राज्यके भारका धरणहारा दुखी होय। हमारे बडेनिविषै एक

राजा सौदास उत्तम भोजनकर तृप्त न भया। अर पापी अभक्ष्यका आहारकरि राज्यभ्रष्ट भया। जसे गगाके प्रवाहविषै मासका लोभी काग मतक हाथीके शरीर चूसता तप्त न भया, समुद्रविष डूब मुवा, तसे यह विषयाभिलाषी भवसमुद्रविष डूब ह। यह लोक मींडक समान मोहरूप कीचविष मग्न, लोभरूप सपके ग्रसे नरकविष पडे है। ऐसे चिन्तवन करते शातचित्त भरतको कईएक दिवस अति विरससे बीते। जसे सिह महा समथ पींजरेविष पडा खेदखिन्न रहे, ताके वनविष जायवेकी इच्छा, तस भरत महाराजके महाव्रत धारिवेकी इच्छा। सो घरविष सदा उदास ही रहै। महाव्रत सब दु ख का नाशक। एक दिवस वह शातचित्त घर तजिवेको उद्यमी भया। तब केकईके कहेसे राम लक्ष्मण ने थाम्भा, अर महा स्नेहकर कहते भए, हे भाई! पिता वराग्यकू प्राप्त भए, तब तोहि पथ्वीका राज्य दिया, सिहासन पर बठाया सो तू हमारा सब रघुवशियोका स्वामी ह, लोकका पालन कर। यह सुदशनचक्र, यह देव अर विद्याधर तेरी आज्ञाविष ह। या धराको नारी समान भोग। म तेरे सिर पर चन्द्रमा समान उज्ज्वल छत्र लिये खडा रहू। अर भाई शत्रुघ्न चमर ढारे, अर लक्ष्मण सा सुन्दर तेरे मत्री, अर तू हमारा वचन न मानेगा तो म बहुरि विदेश उठ जाऊगा, मगोकी न्याई वन उपवनविष रहूगा। म तो राक्षसोका तिलक जो रावण ताहि जीत तेरे दशनके अथ आया। अब तू निकटक राज्य कर। पीछे तेरे साथ म भी मुनिव्रत आदरू गा। इस भाति महा शुभचित्त श्रीराम भाई भरतसू कहते भए।

तब भरत महानिस्पृह विषयरूप विषसे अतिविरक्त कहता भया—हे देव! म राज्य सम्पदा तुरत ही तजा चाहू हू, जिसको तजकरि शूरवीर पुरुष मोक्ष प्राप्त भए। हे नरेन्द्र! अथ काम महा दु ख के कारण, जीवोके शत्रु, महापुरुष करि निंद्य है तिनको मूढ जन सेव ह। हे हलायुध! यह क्षणभगुर भोग तिनमें मेरी तष्णा नाहीं। यद्यपि स्वग लोक समान भोग तुम्हार प्रसाद करि अपने घरमें हैं, तथापि मुझे रुचि नाहीं। यह ससार सागर महा भयानक ह, जहा मत्युरूप पातालकुण्ड महा विषम है,

अर जन्मरूप कल्लोल उठ हैं, अर राग द्वेषरूप नाना प्रकारके भयकर जलचर ह, अर रति अरतिरूप क्षार जलकर पूर्ण ह । जहा शुभ अशुभ रूप चोर विचर है। सो मै मुनिव्रतरूप जहाजविषै बैठकरि ससारसमुद्रकू तिरा चाहू हू । हे राजेन्द्र! म नानाप्रकार योनिविषै अनन्त काल जन्म मरण किए, नरक निगोदविषै अनन्त कष्ट सहे, गर्भ वासादिविषै खेदखिन्न भया । यह वचन भरतके सुन बडे बडे राजा आखनिविषै आसू डारते भए । महा आश्चर्यकू प्राप्त होय गदगद वाणीसे कहते भए—हे महाराज ! पिताके वचन पालो, कईयक दिन राज्य करो । अर तुम इस राजलक्ष्मीकू चचल जान उदास भए हो तो कईएक दिन पीछे मुनि हूजियो । अबार तो तुम्हारे बडे भाई आए हैं तिनको साता देहु । तब भरतने कही मै तो पिताके वचन प्रमाण बहुत दिन राज्यसम्पदा भोगी, प्रजाके दुख हरे, पुत्रकी न्याई प्रजाका पालन किया, दान पूजा आदि गहस्थके धर्म आदरे, साधुवोकी सेवा करी। अब जो पिता ने किया सो मै किया चाहू हू । अब तुम इस वस्तुकी अनुमोदना क्यो न करो ? प्रशसायोग्य वस्तुविषै कहा विवाद ? हे श्रीराम ! हे लक्ष्मण ! तुमने महा भयकर युद्धमें शत्रुवोको जीत अगले बलभद्र वासुदेवकी न्याई लक्ष्मी उपार्जी, सो तुम्हारे लक्ष्मी और मनुष्योकसी नाहीं । तथापि राजलक्ष्मी मुझे न रुचै, तृप्ति न करै, जसे गगादि नदिया समुद्रकू तृप्त न करै । इसलिए म तत्वज्ञानके मार्गविषै प्रवरतूगा । ऐसा कहकरि अत्यन्त विरक्त होय राम लक्ष्मणकू विना पूछे ही वैराग्यकू उठया जैसै आगै भरत चक्रवर्ती उठे । यह मनोहर चालका चलनहारा मुनिराजके निकट जायवेकू उद्यमी भया । तब अति स्नेहकरि लक्ष्मणने थामा, भरतके करपल्लव ग्रहे । लक्ष्मण खडा, ताही समय माता केकई आसू डारती आई अर रामकी आज्ञासे दोऊ भाईनिकी राणी सबही आई । लक्ष्मी समान ह रूप जिनके, अर पवन कर चचल जो कमल ता समान हैं नेत्र जिनके, आय भरतको थामती भई तिनके नाम—

सीता, उर्वा, भानुमती, विशल्या, सुन्दरी ऐन्द्री, रत्नवती, लक्ष्मी, गुणमती, काता, बधुमती, भद्रा, कुबेरा, नलकूवरा, कल्याणमाला, चन्द्रकूणी, मदनोत्सवा, मनोरमा, प्रियनन्दा, चन्द्रकाता, कलावती,

रत्नस्थली, सरस्वती, श्रीकाता, गुणसागरा, पद्मावत, इत्यादि सब आई, जिनके रूप गुणका वर्णन किया न जाय, मनको हरें आकार जिनके, दिव्य वस्त्र, अर आभूषण पहिरे, बडे कुलविषै उपजीं, सत्यवादनी, शीलवन्ती, पुण्यकी भूमिका, समस्त कालविषै निपुण, सो भरतके चौगिर्द खडीं मानो चारो ओर कमलनिका वन ही फूल रहा है। भरतका चित्त राजसम्पदाविषै लगायवेकू उद्यमी अति आदर करि भरतकू मनोहर वचन कहती भई कि—हे देवर! हमारा कहा मानो, कृपा करहु, आज सरोवरनिविषै जलक्रीडा करहु, अर चिंता तजहु। जा बातकरि तिहारे भाईयोकू खेद न होय सो करहु। अर तिहारी माताके खेद न होय सो करहु। अर हम तिहारी भावज है सो हमारी विनती अवश्य मानिये। तुम विवेकी विनयवान हो। ऐसा कहि भरतकू सरोवर पर ले गई। भरतका चित्त जलक्रीडासे विरक्त यह सब सरोवरविषै पैठीं। वह विनयकरिसंयुक्त सरोवरके तीर ऊभा ऐसा सोहै मानो गिरिराज ही है। अर वे स्निग्ध सुगन्ध सुन्दर वस्तुनिकरि याके शरीरका विलेपन करती भई। अर नानाप्रकार जलकेलि करती भई। यह उत्तम चेष्टाका धारक काहूपर जल न डारता भया। बहुरि निर्मल जलसे स्नानकरि सरोवरके तीराजे जिनमंदिर वहां भगवानकी पूजा करता भया। उस समय त्रैलोक्यमण्डन हाथी, कारी घटा समान है आकार जाका, सो गजबंधन तुडाय भयंकर शब्द करता निज आवासथकी निकसा, अपने मदभरिवेकरि चौमासे कासा दिन करता संता। मेघ गर्जना समान ताका गाज सुनकर अयोध्यापुरीके लोग भयकरि कम्पायमान भए। अर अन्य हाथियोके महावत अपने २ हाथीको ले दूर भागे। अर त्रैलोक्यमंडन गिरिसमान नगरका दरवाजा भंग कर जहां भरत पूजा करते थे वहां आया। तब राम लक्ष्मणकी समस्त राणियें भयकरि कम्पायमान होय भरतके शरण आई, अर हाथी भरतके नजीक आया तब समस्त लोक हाहाकार करते भए। अर इनकी माता अति विह्वल भई, विलाप करती भई, पुत्रके स्नेहविषै तत्पर महा शंकावान भई। अर राम लक्ष्मण गजबन्धनविषै प्रवीण गजके पकडनेकू उद्यमी भए। गजराज महा प्रबल सामान्य जनोसे देखा न जाय, महा भयंकर शब्द करता अति तेजवान

नागफासि कर भी रोका न जाय । अर महा शोभायमान, कमल नयन भरत निभय स्त्रियोके आगे तिनके बचायवेकू खडे । सो हाथी भरतकू देखकर पूवभव चितार शातचित्त भया । अपनी सूण्ड शिथिल कर महा विनयवान भया । भरतके आगे ऊभा । भरत याकू मधुरवाणी कर कहते भए अहो गज ! तू कौन कारणकरि क्रोधकू प्राप्त भया ? ऐसे भरतके वचन सुन अत्यन्त शातचित्त, निश्चल भया । सौम्य है मुख जाका, ऊभा भरतकी ओर देख ह । भरत महाशूरवीर शरणागतप्रतिपालक ऐसे सोहैं जैसे स्वगविष देव सोह । हाथीकू जन्मातरका ज्ञान भया सो समस्त विकारसे रहित होय गया । दीर्घ निश्वास डारे । हाथी मनविषै विचार ह—यह भरत मेरा परममित्र ह, छठे स्वगविष हम दोनो एकत्र थे । यह तो पुण्यके प्रसाद करि वहासे चयकर उत्तम पुरुष भया, अर मैने कमके योगसे तिर्यंचकी योनि पाई । काय अकायके विवेकसे रहित महानिंद्य पशुका जन्म ह । 'म कौन योगसे हाथी भया, धिक्कार इस जन्मको । अब वथा क्या शोच ? ऐसा उपाय करू जिससे आत्मकल्याण होय अर बहुरि ससार भ्रमण न करू । शोच कीए कहा ? अब सव प्रकार उद्यमी होय भवदुखसे छूटिवेका उपाय करू । चितारे हैं पूवभव जाने, गजेन्द्र अत्यन्त विरक्त पापचेष्टासे पराङ्गमुख होय पुण्यके उपाजनविष एकाग्रचित्त भया । यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहे हैं—हे राजन ! पूव जीवने अशुभ कम किए वे सतापकू उपजावें । तात हे प्राणी हो ! अशुभ कमको तजि दुगतिके गमनसे छूटहु । जसे सूय होते नेत्रवान मागविष न अटके तसे जिनधमके होते विवेकी कुमागविष न पडे, प्रथम अधर्मको तज धमको आदरें, बहुरि शुभ अशुभसे निवत्त होय आत्म धमसे निर्वाणकू प्राप्त होवें ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै त्रलोक्यमंडन हाथीक जातिस्मरण होय उपशांत वर्णन करनेवाला तिरासीवां पव पूण भया ।। ८३ ।।

अथानन्तर वह गजराज महा विनयवान धमध्यानका चितवन करता राम लक्ष्मणने देखा, अर

धीरे धीरे इसके समीप आए, कारी घटा समान है आकार जाका। सो मिष्ट वचन बोल पकड्या अर निकटवर्ती लोकनिकू आज्ञा करि गजकू सब आभूषण पहिराए। हाथी शांतचित्त भया। तब नगरके लोगोकी आकुलता मिटी। हाथी ऐसा प्रबल जाकी प्रचण्ड गति विद्याधरोके अधिपतिसे न रुके। समस्त नगरविषै लोक हाथीकी वार्ता करें है। यह त्रैलोक्यमंडन रावणका पाट हस्ती है। याके बल समान और नाहीं। राम लक्ष्मणने पकडा। विकार चेष्टाकू प्राप्त भया था अब शांतचित भया। सो लोकोके महा पुण्यका उदय है। अर घने जीवोंकी दीर्घ आयु। भरत अर सीता बिशल्या हाथी पर चढे बडी विभूतिसे नगरविषै आये। अर अद्भुत वस्त्राभरणसे शोभित समस्त राणी नानाप्रकार वाहनो पर चढी भरतको ले नगरविषै आई। अर शत्रुघ्न भाई अश्व रथ पर आरूढ, महा विभूति सहित महा तेजस्वी, भरतके हाथीके आगे आगे चला। नानाप्रकारके वादित्रनिके शब्द होते नन्दनवन समान वनसे वे सब नगरविषै आए, जैसे देव सुरपुरविषै आवें। भरत हाथीसू उतरि भोजनशालाविषै गए। साधुवोकू भोजन देय मित्र बांधवादि सहित भोजन किया, अर भावजोकू भोजन कराया। फिर लोक अपने अपने स्थानकू गए। समस्त लोक आश्चर्यकू प्राप्त भए। हाथी रूठा, फिर भरतके समीप खडा होय रह्या—सो सबोको आश्चर्य उपजा। गौतम गणधर राजा श्रेणिकसे कहे है कि हे राजन! हाथीके समस्त महावत राम लक्ष्मणपै आय प्रणामकरि कहते भए—कि हे देव! आज गजराजको चौथा दिन है कछू खाय न पीवे न निद्रा करै। सब चेष्टा तजि निश्चल ऊभा है। जिसदिन क्रोध किया था अर शांत भया। उसही दिनसे ध्यानारूढ निश्चल वरते है। हम नानाप्रकारके स्तोत्रो कर स्तुति करें हैं, अनेक प्रिय वचन कहैं है, तथापि आहार पानी न लेय है। हमारे वचन कान न धरे। अपनी सूण्डको दांतोविषै लिये मुद्रित लोचन ऊभा है, मानो चित्रामका गज है, जिसे देख लोकोको ऐसा भ्रम होय हैं कि यह कृत्रिम गज है अथवा सांचा गज है। हम प्रिय वचन कहकर आहार दिया चाहे है सो न लेय। नानाप्रकारके गजोके योग्य सुन्दर आहार उसे न रुचे। चिन्तावान सा ऊभा है, निश्वास डारे है, समस्त

शत्रुवोके वेत्ता महा पडित प्रसिद्ध गजवद्योके हाथ भी हाथीका रोग न आया। गधर्व नानाप्रकारके गीत गावे हैं सो न सुने। अर नत्यकारिणी नत्य कर हैं सो न देखे। पहिले नत्य देखे था गीत सुने था, अनेक चेष्टा करे था, सो सब तज्या। नानाप्रकारके कौतुक होय हैं सो दृष्टि न धरै। मत्रविद्या, औषधादिक अनेक उपाय किए सो न लगे। आहार विहार निद्रा जलपानादिक सब तजे, हम अति विनती करे ह सो न माने। जसे रूठे मित्रको अनेक प्रकार मनाइये सो न माने। न जानिए इस हाथी के चित्तविष कहा ह ? काहू वस्तुसे काहू प्रकार रीझे नाहीं, काहू वस्तुपर लुभावे नाहीं। खिजाया सता क्रोध न कर, चित्राम कासा खडा है। यह त्रलोक्यमडन हाथी समस्त सेनाका शृगार है, जो आपकू उपाय करना होय सो करो। हम हाथीका सब वृत्तात आपसे निवेदन किया। तब राम लक्ष्मण गजराजकी चेष्टा सुन अति चितावान भए। मनमें विचारै ह यह गजबन्धन तुडाय निसरा कौन प्रकार से क्षमाकू प्राप्त भया। अर आहार पानी क्यो न लेय ? दोनो भाई हाथीका शोच करते भए।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष त्रिलोक्यमडन हाथी का कथन वर्णन करनेवाला चौरासीवा पव पूण भया॥ ८४॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कह है—हे नराधिपति ! ताही समय अनेक मुनिनि सहित देशभूषण कुलभूषण केवली, जिनका वशस्थल गिरि ऊपर राम लक्ष्मणने उपसग निवारा हुता, अर जिनकी सेवा करनेकरि गरुडेद्रने राम लक्ष्मणसे प्रसन्न होय उनको अनेक दिव्यशस्त्र दिए, जिनकर युद्धमें विजय पाई। ते भगवान केवली, सुर असुरनिकर पूज्य, लोक प्रसिद्ध अयोध्याके नन्दनवन समान महेद्रोदय नामा वनविषै महा सघ सहित आय विराजे। तब राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न दशनके अथ प्रभात ही हाथिनि पर चढ़ि जायवेकू उद्यमी भए। अर उपजा ह जातिस्मरण जाको ऐसा जो त्रैलोक्य मण्डन हाथी सो आगे आगे चला जाय है। जहा वे दोनो केवली कल्याणके पवत तिष्ठै हैं तहा देवनि

समान शुभचित्त नरोत्तम गये, अर कौशिलया सुमित्रा ककई सुप्रभा यह चारो ही माता साधु भक्ति विष तत्पर, जिनशासनकी सेवक, स्वगनिवासिनी देविनि समान सकडा राणीनिसे युक्त चलीं। अर सुग्रीवादि समस्त विद्याधर महाविभूति सयुक्त चले। केवलीके स्थानक दूरहीत देख रामादिक हाथीत उतर आगे गए। दोनो हाथ जोड प्रणामकर पूजा करी। आप योग्य भूमिविष विनयत बठे, तिनके वचन समाधान चित्त होय सुनते भए। ते वचन वराग्यके मूल रागादिक नाशक क्योंकि रागादिक ससारके कारण अर सम्यग्दशन ज्ञान चारित्र मोक्षका कारण ह। केवलीकी दिव्यध्वनिविषै यह व्याख्यान भया–अणुव्रतरूप श्रावकका धम अर महाव्रत यतिका धम यह दोनोही कल्याणके कारण ह। यतिका धम साक्षात निर्वाणका कारण अर श्रावकका धम परम्पराय मोक्षका कारण है। गहस्थका धम अल्पारम्भ अल्प परिग्रहको लीए कछु सुगम ह अर यतिका धम निरारम्भ निपरिग्रह अति कठिन, महा शूरवीरनिहो त सधें ह। यह लोक अनादिनिधन जाका आदिअन्त नाहीं, ताविष यह प्राणी लोभ कर मोहित नानाप्रकार कुयोनिविष महादु खकू पाव ह। ससारका तारक धम ही है। यह धम नामा परम मित्र जीवोका महा हितु ह। जिस धमका मूल जीवदयाकी महिमा कहिवेविषै न आवे ताके प्रसादसे प्राणी मनवाछित सुख पाव ह। धम ही पूज्य ह। जे धमका साधन करें ते ही पडित है। यह दयामूल धम कल्याणका कारण, जिनशासन बिना अन्यत्र नाही। जे प्राणी जिनप्रणीत धममें लगैं ते त्रैलोक्यके अग्र जो परम धाम ह वहा प्राप्त भये। यह जिनधम परम दुलभ है, या धमका मुख्यफल तो मोक्षही ह, अर गौण फल स्वगविष इन्द्रपद, अर पाताल विष नागेन्द्रपद, पृथ्वीविषै चक्रवर्त्यादि नरेन्द्रपद यह फल हैं। इस भाति केवलीने धमका निरूपण किया। तब प्रस्ताव पाय लक्ष्मण पूछते भए, हे प्रभो! त्रलोक्यमण्डन हाथी गज बन्धन उपाडि क्रोधकू प्राप्त भया, बहुरि तत्काल शात भाव कू प्राप्त भया। सो कौन कारण? तब केवली देशभूषण कहते भए प्रथम तो यह लोकनिकी भीड देख मदोन्मत्तता थकी क्षोभकू प्राप्त भया। बहुरि भरतकू देख पूवभव चितार शात भावकू प्राप्त

भया। चतुर्थ कालके आदि या अयोध्याविषे नाभिराजाके मरु देवीके गर्भविषे भगवान ऋषभ उपजे। पूर्वभवविषे षोडश कारण भावना भाय त्रैलोक्यकू आनन्दका कारण तीर्थंकर पद उपार्ज्या। पृथ्वीविषे प्रकट भए, इन्द्रादिक देवनिने जिनके गर्भ अर जन्मकल्याणक कीए। सो भगवान पुरुषोत्तम तीन लोक करि नमस्कार करिवे योग्य, पृथ्वीरूप पत्नीके पति भए। कैसी है पृथ्वी रूप पत्नी ? विन्ध्याचल गिरि वेई हैं स्तन जाके, अर समुद्र है कटिमेखला जाकी। सो बहुत दिन पृथ्वीका राज्य कीया तिनके गुण केवली विना और कोई जानवे समर्थ नाहीं। जिनका ऐश्वर्य देख इन्द्रादिक देव आश्चर्यकू प्राप्त भए।

एक समय नीलाजना नामा अप्सरा नृत्य करती हुती सो विलाय गई, ताहि देख प्रतिबुद्ध भए। ते भगवान स्वयं बुद्ध महामहेश्वर तिनकी लौकांतिक देवनिने स्तुति करी। ते जगत गुरु भरत पुत्रकू राज्य देय वैरागी भए। इन्द्रादिकदेवनिनें तप कल्याणक किया, तिलक नामा उद्यानविषे महाव्रत धरे तबसे यह स्थान प्रयाग कहाया। भगवानने एक हजार वर्ष तप किया। सुमेरु समान अचल सर्वपरिग्रहके त्यागी, महातप करते भए। तिनके संग चार हजार राजा निकसे ते परीषह न सह सकनेकरि व्रत—भ्रष्ट भए, स्वेच्छाविहारी होय वन फलादिक भखते भए। तिनके मध्य मारीच दण्डीका भेष धरता भया। ताके प्रसंगसे सूर्योदय चन्द्रोदय राजा सुप्रभाके पुत्र राणी प्रल्हादनाकी कुक्षीविषे उपजे ते भी चारित्र भ्रष्ट भए। मारीचके मार्ग लागे कुधर्मके आचरणसू चतुर्गति संसारमें भ्रमे अनेक भवोंविषै जन्म मरण किया। बहुरि चन्द्रोदयका जीव कर्मके उदयसू नागपुरनामा नगरविषै राजा हरिपतिके राणी मनोलताके गर्भविषै उपज्या कुलकर नामा कहाया। बहुरि राज्य पाया। अर सूर्योदयका जीव अनेक भव भ्रमण कर उसही नगरविषै विश्वनामा ब्राह्मण जिसके अग्निकुण्ड नामा स्त्री, उसके श्रुतिरति नामा पुत्र भया। सो पुरोहित पूर्व जन्मके स्नेहसे राजा कुलकरको अतिप्रिय भया। एक दिन राजा कुलकर तापसियोंके समीप जाय था सो मार्गविषै अभिनन्दन नामा मुनिका दर्शन भया। वे मुनि अवधिज्ञानी, सर्व लोकके हितू, तिन्होने राजासे कही-तेरा दादा सर्प भया, सो तपस्वियोंके काष्ठ

मध्य तिष्ठे हैं । सो तापसी काष्ठ विदारेंगे सो तू रक्षा करियो । तब यह तहा गया जो मुनिने कही थी त्योही दृष्टि पडी । इसनें सप बचाया अर तापसियोका माग हिंसारूप जाण्या, तिनसे उदास भया, मुनि व्रत धारिवेकू उद्यम किया । तब श्रुतिरति पुरोहित पापकर्मीने कही-हे राजन! तिहारे कुलविष वेदोक्त धम चला आया ह, अर तापसही तिहारें गुरु ह । सात तू राजा हरिपतिका पुत्र ह तो वेद मागका ही आचरण कर, जिनमाग मत आचर । पुत्रकू राज देय वेदोक्त विधि कर तू तापसका व्रत धर, मैं तेरे साथ तप धरू गा । या भाति पापी पुरोहित मूढमतिने कुलकरका मन जिनशासनसे फेरया, अर कुलकर की स्त्री श्रीदामा, सो पापिनी परपुरुषासक्ता । उसने विचारी कि मेरी कुक्रिया राजाने जानी इसलिए तप धार ह, सो न जानिए तपधर क न धर, कदाचित मोहि मारे । तात मैं ही उसे मारू । तब उसने विष देयकर राजा अर पुरोहित दोनो मारे । सो मरकर निकुंजिया नामा वनमें पशुघातक पाप से दोनो सुआ भए । बहुरि मींढक भए, मूसा भए, मोर भए, सप भए, कूकर भए, कमरूप पवनके प्रेरे तिर्यंच योनिविष भ्रम । बहुरि पुरोहित श्रुतिरतिका जीव हस्ती भया अर राजा कुलकरका जीव मींढक भया । सो हाथीके पगतले दब कर मुवा । बहुरि मींढक भया सो सूखे सरोवरविषै कागने भख्या सो कूकडा भया, हाथी मर कर मार्जार भया । उसने कुक्कुट भखा, कुलकरका जीव तीन जन्म कूकडा भया, सो पुरोहितके जीव मार्जारने भख्या । बहुरि ये दोनो मूसा, मार्जार, मच्छ भए सो धीवरने जालविषै पकड कुहाडनिसे काटे सो मुवे । दोनो मरकर राजगही नगरविषै वव्हासनामा ब्राह्मण उसकी उलका नामा स्त्रीके पुत्र भए । पुरोहितके जीवका नाम विनोद, राजा कुलकरके जीवका नाम रमण । सो महा दरिद्री अर विद्यारहित । तब रमणने विचारी देशातर जाय विद्या पढू, तब घरसे निकसा, पृथ्वीविषै भ्रमता चारो वेद अर वदोके अग पढ़े । बहुरि राजगृही नगरी आय पहुँचा । भाईके दर्शन की अभिलाषा, सो नगरके बाहिर सूय अस्त होय गया, आकाशविषै मेघपटलके योगसे अति अन्धकार भया, सो जीण उद्यानके मध्य एक यक्षका मन्दिर तहा बठा । अर याके भाई विनोदकी समिधा नामा

स्त्री सो महा कुशीला, एक अशोकदत्त नामा पुरुषसे आसक्त। सो तास यक्षके मन्दिरका संकेत किया हुता सो अशोकदत्तकू तो मागविषै कोटपालके किंकरने पकड्या अर विनोद खड्ग हाथविषै लिए अशोकदत्तके मारवेकू यक्षके मन्दिर आया। सो जार समझि खडगसे भाई रमणकू मारा, अन्धकार विषै दृष्टि न पड्या सो रमण मवा, विनोद घर गया। बहुरि विनोद भी मुवा सो दोनो अनेक भव धारते भए।

बहुरि विनोदका जीव तो सालवनविषै आरण भसा भया अर रमणका जीव अंधा रीछ भया। सो दोनो दावानलविषै जर, मरकर गिरिवनविषै भील भए। बहुरि मरकर हिरण भए। सो भीलने जीवते पकडे, दोनो अति सुन्दर सो तीसरा नारायण स्वयंभूति श्रीविमलनाथजीके दर्शनकू जायकर पीछा आवे था उसने दोनो हिरण लिए अर जिनमन्दिरके समीप राखे। सो राजद्वारसे इनकू मन वांछित आहार मिलं। अर मुनिनिके दर्शन कर, जिनवाणीका श्रवण करें। तिनविषै रमणका जीव जो मृग हुता सो समाधि मरणकर स्वर्गलोक गया अर विनोदका जीव जो मृग हुता वह आर्तध्यानसे तिर्यंचगतिविषै भ्रम्या। बहुरि जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै कम्पिल्यानगर तहां धनदत्त नामा वणिक बाईस कोटि दीनारका स्वामी भया। चार टाक स्वर्णकी एक दीनार होय है। ता वणिकके वारुणी नामा स्त्री उसके गर्भविषै दूजे भाई रमणका जीव मृग पर्यायसे देव भया था सो भूषण नाम पुत्र भया। निमित्तज्ञानीने इसके पितासे कहा कि यह सर्वथा जिनदीक्षा धरेगा। सुनकर पिता चिंतावान भया। पिताका पुत्रसे अधिक प्रेम, इसको घरहीविषै राख, बाहिर निकसने न देय, सब सामग्री वाके घर विषै विद्यमान। यह भूषण सुन्दर स्त्रीनिकर सेव्यमान वस्त्र आहार सुगन्धादि विलेपन कर घरविषै सुखसे रहे। याकू सूर्यके उदय अस्तकी गम्य नानाप्रकारके नाहीं, याके पिताने सकडो मनोरथकर यह पुत्र पाया, अर एकही पुत्र, सो पूर्ण जन्मके स्नेहसे पिताकू प्राणसे भी प्यारा। पिता तो विनोदका जीव अर पुत्र रमणका जीव आगे दोनो भाई हुते सो या जन्मविषै पिता पुत्र भए।

ससारकी विचित्रगति है ये प्राणी नटवत् नृत्य करैं है। ससारका चरित्र स्वप्नके राज्य समान असार है। एक समय यह धनदत्तका पुत्र भूषण प्रभात समय दुदुभी शब्द आकाशविषै देवनिका आगमन देख प्रतिबुद्ध भया। यह स्वभावहीसे कोमलचित्त, धर्मके आचार विषै तत्पर, महाहर्षका भरचा दोनो हाथ जोड नमस्कार करता श्रीधर केवलीकी वन्दनाकू शीघ्र ही जाय था सो सिवाणसे उतरते सपने डसा। देह तज महेन्द्र नाम जो चौथा स्वर्ग तहा देव भया। तहातै चयकर पहुकर द्वीपविषै चन्द्रादित्य नामा नगर तहा राजा प्रकाशयश ताके राणी माधवी ताकै जगद्युत नामा पुत्र भया। यौवनके उदयविषै राज्यलक्ष्मी पाई, परन्तु ससारसे अति उदास, राजविषै चित्त नाहीं। सो याके वृद्ध मन्त्रिनिने कही यह राज तिहारे कुलक्रमसे चला आवै है सो पालहु। तिहारे राज्यसे प्रजा सुख रूप होयगी। सो मन्त्रिनिके हठसे यह राज्य करै। राज्यविषैं तिष्ठता यह साधूनिकी सेवा करै। सो मुनि दानके प्रभावसे देवकुरु भोगभूमि गया, तहासे ईशान नाम दूजा स्वर्ग तहाँ देव भया। चार सागर दोय पल्य देवलोकके सुख भोग देवागनानिकर मडित नानाप्रकार भोग भोगि, तहासे चया सो जम्बूद्वीपके पश्चिम विदेह मध्य अचल नामा चक्रवर्तीके रत्नानामा राणीके अभिराम नामा पुत्र भया, सो महागुणनिका समूह, अति सुन्दर, जाहि देखि सब लोककू आनन्द होय। सो बाल अवस्थाहीसे अति विरक्त जिनदीक्षा धारचा चाहै, अर पिता चाहै यह घरविषै रहै, तीन हजार राणी इसे परणाई, सो वे नानाप्रकारके चरित्रकरैं, परन्तु यह विषय सुखकू विषसमान गिनै। केवल मुनि होयवेकी इच्छा, अति शातचित्त, परन्तु पिता घरसे निकसने न देय। यह महा भाग्य महाशीलवान महागुणवान महा त्यागी, स्त्रियोका अनुराग नहीं याकू, ते स्त्री भाति भातिके वचनकर अनुराग उपजावै, अतियत्नकर सेवा करैं, परन्तु याकू ससारकी माया गर्तरूप भासै। जैसे गर्तमें पडचा ताके पकडनहारे मनुष्य नाना भाति ललचावै तथापि गजको गर्त न रुचै ऐसे याहि जगतकी माया न रुचै। यह शात चित्त पिताके निरोधसे अति उदास भया घरविषै रहै। तिन स्त्रीनिके मध्य प्राप्त हुवा तीव्र असिधारा व्रतपालै।

स्त्रीनिके मध्य रहना अर शील पालना, तिनसे ससग न करना ताका नाम असिधारा व्रत कहिए। मोतिनके हार बाजूबद मुकुटादि अनेक आभूषण पहिरे तथापि आभूषणसू अनुराग नाहीं। यह महा भाग्य सिंहासनपर बैठा निरन्तर स्त्रीनिको जिनधमकी प्रशसाका उपदेश देय। त्रैलोक्यविष जिनधम समान और धम नाहीं। ये जीव अनादिकालसे ससार बनविष भ्रमण कर ह सो कोई पुण्य कमके योग से जीवोकू मनुष्यदेहकी प्राप्ति होय ह। यह बात जानता सता कौन मनुष्य ससार कूपविष पडे, अथवा कौन विवेकी विषकू पीव, अथवा गिरिके शिखरपर कौन बद्धिमान निद्रा कर, अथवा मणिकी वाछाकर कौन तडित नागका मस्तक हाथसे स्पर्शे, विनाशीक ये काम भोग तिनविष ज्ञानीकू कसै अनुराग उपजे ? एक जिनधमका अनुराग ही महा प्रशसा योग्य मोक्षके सुखका कारण हैं। यह जीवो का जीतव्य अत्यन्त चचल, याविषै स्थिरता कहा ? जो अवाछक निस्पह चित्त वश ह तिनके राज्यकाज अर इन्द्रियोके भोगोसें कौन काम ? इत्यादिक परमाथके उपदेशरूप याकी वाणी सुनकर स्त्रियें भी शातचित्त भई, नानाप्रकारके नियम धारती भई। यह शीलवान तिनकू भी शीलविषै दृढचित्त करता भया। यह राजकुमार अरने शरीरविषै भी रागरहित एकातर उपवास अथवा बेला तेला आदि अनेक उपवासोकर कम कलक खिपावता भया, नाना प्रकारके तपकर शरीरकू शोखता भया, जसै ग्रीष्म का सूय जलकू शोख। समाधान रूप ह मन जाका, मन इन्द्रियनिके जीतवेकू समथ यह सम्यकदृष्टि निश्चल चित्त महाधीर वीर चौंसठ हजार वर्षलग दुधर तप करता भया। बहुरि समाधिमरण कर पचनमोकार स्मरण करता देह त्यागकर छठा जो ब्रह्मोत्तर स्वग तहा महा ऋद्धिका धारक देव भया। अर जो भूषणके भवविषै याका पिता धनदत्त सेठ था, विनोद ब्राह्मणका जीव सो मोहके योगत अनेक कुयोनिविषै भ्रमणकरि जम्बूद्वीप भरत क्षेत्र, तहा वादम नाम नगर, ताविषै अग्निमुख नामा ब्राह्मण, ताके शकुना नाम स्त्री, मदुमतिनामा पुत्र भया। सो नामा तो मृदुमति परन्तु कठोर चित्त, अति दुष्ट महाजुवारी अविनयी अनेक अपराधोका भरा दुराचारी। सो लोकोके उराहनेसे माता पिता

ने घरसे निकास्या सो पृथ्वीविषै परिभ्रमण करता पोवनापुर गया। किसीके घर तृषातुर पानी पीवने को पैठा सो एक ब्राह्मणी आसू डारती हुई इसे शीतल जल प्यावती भई। यह शीतल मिष्टजलसे तृप्त हो ब्राह्मणीकू पूछता भया तू कौन कारण रुदन कर है ? तब ताने कही तेरे आकार एक मेरा पुत्र था सो म कठोरचित्त होय क्रोधकर घरसे निकास्या। सो तैने भ्रमण करते कहू देख्या होय तो कह। नील कमल समान तो सारिखा ही है। तब यह आसू डार कहता भया–हे माता ! तू रुदन तज, वह म ही हू, तोहि देखे बहुत दिन भए तात मोहि नाहीं पहिचाने ह। तू विश्वास गह म तेरा पुत्र हू। तब वह पुत्र जान राखती भई, अर मोहके योगतै ताके स्तनोसे दुग्ध झरा। यह मृदुमति तेजस्वी रूपवान स्त्रीनिके मनका हरणहारा, धूर्तोंका शिरोमणि, जुवाविषै सदा जीते, बहुत चतुर, अनेक कला जाने, काम भोगविषै आसक्त। एक वसतमाला नामा वेश्या सो ताके अति वल्लभ, अर याके माता पिताने यह काढा हुता सो इसके पीछे वे अति लक्ष्मीकू प्राप्त भए। पिता कुण्डलादिक अनेक भूषण करि मण्डित, अर माता काचीदामादिक अनेक आभरणोकर शोभित सुखसू तिष्ठै। अर एक दिन यह मदुमति ससाक नगरविषै राजमन्दिरविषै चोरीकू गया सो राजा नन्दीवधन शशाक मुख स्वामीके मुख धर्मोपदेश सुन विरक्त चित्त भया था सो अपनी राणीसू कहे था कि हे देवी ! मै मोक्ष सुखका देने हारा मुनिके मुख परम धम सुना। ये इन्द्रियनिके विषय विषसमान दारुण है, इनके फल नरक निगोद है, म जनेश्वरी दीक्षा धरू गा, तुम शोक मत करियो। या भाति स्त्रीकू शिक्षा देता हुता, सो मदुमति चोरने यह वचन सन अपने मनविषै विचारया देखो यह राजऋद्धि तज मुनिव्रत धारे ह अर म पापी चोरीकर पराया द्रव्य हरू हू, धिक्कार मोकू। ऐसे विचारकर निर्मलचित्तहोय सासारिक विषय भोगोसे उदासचित्त भया, स्वामी चन्द्रमुखके समीप सब परिग्रहका त्यागकर जिनदीक्षा आदरी, शास्त्रोक्त महादुधर तप करता महाक्षमावान महाप्रासुक आहार लेता भया।

अथानन्तर दुगनाम गिरिके शिखर एक गुणनिधि नाम मुनि चार महीनेके उपवास धर तिष्ठे थे।

वे सुर असुर मनुष्यनिकर स्तुति करिवे योग्य महा ऋद्धिधारी चारण मुनि थे। सो चौमासेका नियम पूर्णकर आकाशके मार्ग होय किसी तरफ चले गए, अर यह मृदुमति मुनि आहारके निमित्त दुर्गनामा गिरिके समीप आलोक नाम नगर वहां आहारकू आया। जूडाप्रमाण पृथ्वीकू निरखता जाय था। सो नगरके लोकोंने जानी यह वे ही मुनि हैं जो चारमहीना गिरिके शिखर रहे। यह जानकर अति भक्तिकर पूजाकरी, अर इसे अतिमनोहर आहार दिया। नगरके लोकोंने बहुत स्तुति करी। इसने जानी गिरिपर चार महीना रहे तिनके भरोसे मेरी अधिक प्रशंसा होय है। सो मानका भरया मौन पकड रहा, लोकोंसे यह न कही कि मैं और ही हूं। अर व मुनि और थे और गुरुके निकट माया शल्य दूर न करी, प्रायश्चित्त न लिया। तातैं तिर्यंचगतिका कारण भया। तप बहुत किए सो पर्याय पूरी कर छठे देव लोक जहां अभिरामका जीव देव भया था वहां ही यह गया। पूर्व जन्मके स्नेहकर उसके याके अति स्नेह भया। दोनों ही समान ऋद्धिके धारक अनेक देवांगनावोंकर मंडित, सुखके सागरविषै मग्न, दोनों ही सागरों पर्यंत सुखसू रमे। सो अभिरामका जीव तो भरत भया। अर यह मृदुमतिका जीव स्वर्गसे चय मायाचारके दोषसे इस जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै, उत्तंग है शिखर जिसके ऐसा जो निकुंज नामा गिरि, उस विषै महागहन शल्लकी नामा वन, वहां मेघकी घटा समान श्याम अति सुन्दर गज-राज भया, समुद्रकी गाज समान है गर्जना जिसकी, अर पवन समान है शीघ्र गमन जिसका, महा भयंकर आकारकू धरे, अति मदोन्मत्त, चन्द्रमा समान उज्ज्वल हैं दांत जिसके, गजराजोंके गुणोंकरि मंडित, विजयादिक महाहस्ती तिनके वंशविषै उपज्या। महा कांतिका धारक, ऐरावत समान अति स्वच्छंद सिंह व्याघ्रादिकका हननहारा, महा वृक्षोंका उपारनहारा, पर्वतोंके शिखरका ढाहनहारा, विद्याधरोंकर न ग्रहा जाय तो भूमिगोचरियोंकी क्या बात, जाके निवाससे सिंहादिक निवास तजि भाग जावें। ऐसा प्रबल गजराज गिरिके वनविषै नानाप्रकार पल्लवका आहार करता मानसरोवरविषै क्रीडा करता, अनेक गजोंसहित विचरै। कभी कैलाशविषै विलास करै कभी गंगाके मनोहरद्रहोंविषै क्रीडा करै, अर अनेक

वन गिरि नदी सरोवरविषै सुन्दर क्रीडा कर, अर हजारो हथनीनि सहित रमै। अनेक हाथियोके समूह का शिरोमणि यथेष्ट विचरता ऐसा सोहै जैसा पक्षियोके समूहकर गरुड सोहै। मेघसमान गर्जता अर नीझरने तिनके झरनेका पर्वत, सो एक दिन लकेश्वरने देखा, सो विद्याके पराक्रमकर महाउग्र उसने यह नीठि नीठि वश किया। इसका त्रैलोक्यमण्डन नाम धरया, सुन्दर है लक्षण जिसके। जैसे स्वर्गविषै चिरकाल अनेक अप्सरावो सहित क्रीडा करी तैस हाथियोकी पर्यायविषै हजारो हथिनियोसे क्रीडा करता भया। यह कथा देशभूषण केवली राम लक्ष्मणसू कहे हैं कि ये जीव सर्व योनिविषै रति मान लेय हैं निश्चय विचारिए तो सवही गति दुखरूप है। अभिरामका जीव भरत अर मदुमतिका जीव गजसूर्यो दय चन्द्रोदयके जन्मसे लेकर अनेक भवके मिलापी हैं तातै भरतकू देखि पूर्व भव चितारि गज उपशात चित्त भया। अर भरत भोगोसे पराङमुख, दूर भया है मोह जिसका, अब मुनिपद लिया चाहै है इस ही भवसू निर्वाण प्राप्त होवेंगे, बहुरि भव न धरेंगे। श्री ऋषभदेवके समय यह दोनो सूर्योदय चन्द्रोदय नामा भाई थे। मारीचके भरमाए मिथ्यात्वका सेवन कर बहुतकाल ससारविषै भ्रमण किया, त्रस स्थावर योनिविषै भ्रमे। चन्द्रोदयका जीव कईएकभव पीछे राजा कुलकर। बहुरि कईएक भवपीछे रमण ब्राह्मण, बहुरि कईएक भव धर समाधिमरण करणहारा मृग भया, बहुरि स्वर्गविषै देव, बहुरि भूषण नामा वैश्यका पुत्र, बहुरि स्वर्ग, बहुरि जगद्युति नाम राजा, वहासे भोगभूमि, बहुरि दूजे स्वर्ग देव, वहासे चयकर महाविदेह क्षेत्रविषै चक्रवर्तीका पुत्र अभिराम भए, वहासे छठे स्वर्ग देव, देवसे भरत नरेन्द्र सो चरमशरीरी है, बहुरि देह न धारेंगे। अर सूर्योदयका जीव बहुत काल भ्रमण कर राजा कुलकरका श्रुति नामी पुरोहित भया। बहुरि अनेक जन्म लेय विनोदनामा विप्र भया, बहुरि अनेक जन्म लेय आर्तध्यानसे मरणहारा मृग भया, बहुरि अनेक जन्म भ्रमणकर भूषणका पिता धन-दत्त नामा वणिक, बहुरि अनेक जन्म धर मदुमति नामा मुनि, उसने अपनी प्रशसा सुन राग किया, मायाचारसे शल्य दूर न करी, तपके प्रभावसे छठे स्वर्ग देव भया। वहासे चयकरि त्रैलोक्यमण्डन हाथी,

अब श्रावकके व्रत धर देव होयगा ये भी निकट भव्य हैं । या भांति जीवोंकी गति आगति जान अर इन्द्रियोंके सुख विनाशीक जान या विषम वनकूं तजकर ज्ञानी जीव धर्मविषैं रमहु, जे प्राणी मनुष्य देह पाय जिन भाषित धर्म नाहीं कर हैं वे अनन्त काल संसार भ्रमण करेंगे । आत्मकल्याणसे दूर हैं तातें जिनवरके मुखसे निकस्या दयामई धर्म मोक्ष प्राप्त करनेकूं समर्थ, याके तुल्य और नाहीं, मोह-तिमिरका दूर करणहारा, जीती है सूर्यकी कांति जान सो मनवचन कायकर अंगीकार करो जाते निर्मल पद पावो ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै भरतके अर हाथीके पूर्वभव वर्णन करनेवाला पच्चासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८५ ॥

अथानन्तर श्रीदेशभूषण केवलीके वचन महा पवित्र, मोह अंधकारके हरणहारे, संसार सागरके तारणहारे, नानाप्रकारके दुखके नाशक, उनविषै भरत अर हाथीके अनेक भवका वर्णन सुनकर राम लक्ष्मण आदि सकल भव्यजन आश्चर्यकूं प्राप्त भए, सकल सभा चेष्टारहित चित्राम कैसी होय गई । अर भरत नरेन्द्र, देवेन्द्र समान है प्रभा जाकी, अविनाशी पदके अर्थि मुनि होयवेकी है इच्छा जिसके, गुरुवोंके चरणविषै नम्रीभूत है सीस जिसका, महा शांतचित्त परम वैराग्यकूं प्राप्त हुवा । तत्काल उठ करि हाथ जोड केवलीकूं प्रणामकरि महा मनोहर वचन कहता भया—हे नाथ ! मैं संसारविषै अनन्त काल भ्रमण करता नानाप्रकार कुयोनियों के विषै संकट सहता दुखी भया । अब मैं संसार भ्रमण से थका । मुझे मुक्तिका कारण तिहारी दिगम्बरी दीक्षा देवहु । यह आकाशरूप नदी मरणरूप उग्ररूप तरंगकूं धरे उसविषै मैं डूबूं हूं, सो मुझे हस्तावलम्बन दे निकासो । ऐसा कहकर केवलीकी आज्ञा प्रमाण तज्या है समस्त परिग्रह जिसने, अपने हाथोंसे शिरके केश लोंच किये, परम सम्यक्ती महाव्रतकूं अंगीकार कर जिनदीक्षा धर दिगम्बर भया । तब आकाशविषै देव धन्य धन्य कहते भए अर कल्पवृक्षके

फूलों की वर्षा करते भए।

हजारसे अधिक राजा भरतके अनुरागसे राजऋद्धि तज जिनेन्द्री दीक्षा धरते भए। अर कईएक अल्प शक्ति हुते ते अणुव्रत धर श्रावक भये। अर माता केकई पुत्रके वैराग्य सुन आसुनिकी वर्षा करती भई, व्याकुल चित्त होय दौडी सो भूमिविषै पडी, महामोहकू प्राप्त भई। पुत्रकी प्रीतिकर मृतक समान होय गया है शरीर जाका सो चन्दनादिकके जलसे छांटी तो भी सचेत न भई, घनी बेर विषै सचेत भई। जैसैं वत्स बिना गाय पुकारै तसे विलाप करती भई हाय पुत्र! महा विनयवान, गुणनिकी खान, मनकू आह्लादका कारण, हाय तू कहा गया? हे अंगज! मेरा अंग शोकके सागर विषै डूबै है सो थाभ। तो सारिखे पुत्र बिना मैं दुखके सागरविषै मग्न शोककी भरी कसे जीऊंगी? हाय! हाय! यह कहा भया? या भांति विलाप करती माताको श्रीराम लक्ष्मणने सबोधकरि विश्रामकू प्राप्त करी, अति सुन्दर वचननिकर धीर्य बन्धाया—हे मात! भरत महा विवेकी ज्ञानवान है तुम शोक तजहु, हम कहा तिहारे पुत्र नाहीं? आज्ञाकारी किंकर हैं। अर कौशल्या सुमित्रा सुप्रभाने बहुत सम्बोधा तब शोकरहित होय प्रतिबोधकू प्राप्त भई। शुद्ध है मन जाका, अपने अज्ञानकी बहुत निंदा करती भई, धिक्कार या स्त्री पर्यायकू, यह पर्याय महा दोषनिकी खानि है, अत्यन्त अशुचि, बीभत्स नगरकी मोरी समान। अब ऐसा उपाय करू जाकर स्त्री पर्याय न धरू, ससार समुद्रकू तिरू। यह महा ज्ञानवान सदाही जिनशासनकी भक्तिवंत हुती अब महा वैराग्यकू प्राप्त होय पृथ्वीमती आर्यिकाके समीप आर्यिका भई। एक श्वेत वस्त्र धारया अर सब परिग्रह तज निर्मलसम्यक्त्वकू धरती सब आरम्भ टारती भई। याके साथ तीनसौ आर्यिका भई। यह विवेकिनी परिग्रह तज कर वैराग्य धार ऐसी सोहती भई जसी कलंकरहित चन्द्रमाकी कला मेघपटलरहित सोहै। श्रीदेशभूषण केवलीका उपदेश सुन अनेक मुनि भये, अनेक आर्यिका भई। तिनकर पृथ्वी ऐसी सोहती भई जैसे कमलनिकर सरोवरी सोहै। अर अनेक नर नारी पवित्र है चित्त जिनके, तिन्होंने नानाप्रकारके नियम धर्मरूप श्रावक श्राविकाके व्रत धारे। यह युक्त ही है जो सूर्यके प्रकाश कर नेत्रवान्

वस्तुका अवलोकन करै ही करैं।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषैं भरत अर केकईका वैराग्य वर्णन करनेवाला छियासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८६ ॥

अथानन्तर त्रैलोक्यमंडन हाथी अति प्रशान्तचित्त केवलीके निकट श्रावकके व्रत धारता भया। सम्यकदर्शन संयुक्त, महाज्ञानी, शुभक्रियाविषै उद्यमी हाथी धर्मविषैं तत्पर होता भया। पन्द्रह दिनके उपवास तथा मासोपवास करता भया, सूखे पत्रनिकर पारणा करता भया। हाथी संसारसूं भयभीत, उत्तम चेष्टाविषै परायण, लोकनिकर पूज्य, महाविशुद्धताकूं धरे, पृथ्वीविषै विहार करता भया। कभी मासोपवासके पारणा ग्रामादिकविषैं जाय तो श्रावक ताहि अति भक्तिकर शुद्ध अन्न शुद्धजलकर पारणा करावते भए। क्षीण होय गया है शरीर जाका, वैराग्यरूप खूंटेसे बन्धा, महा उग्र तप करता भया। यम नियमरूप है अंकुश जाके। बहुरि महा उग्रतपका करणहारा गज शनै शनै आहारका त्याग कर अंत सलेखणा धर, शरीर तज छठे स्वर्ग देव होता भया। अनेक देवांगनाकरि युक्त हारकुण्डलादिक आभूषणनिकरि मंडित पुण्यके प्रभावतैं देवगतिके सुख भोगता भया। छठे स्वर्गहीतैं आया हुता अर छठे ही स्वर्ग गया, परम्पराय मोक्ष पावेगा। अर भरत महामुनि महातपके धारक, पृथ्वीके गुरु निर्ग्रंथ, जाके शरीरका भी ममत्व नाहीं, वे महा धीर जहां पिछिला दिन रहै तहां ही बैठ रहैं, जिनकूं एक स्थान न रहना, पवन सारिखे असंगी, पृथ्वीसमान क्षमाकूं धरें, जलसमान निर्मल, अग्नि समान कर्म काष्ठके भस्म करनहारे, अर आकाश समान अलेप, चार आराधनाविषै उद्यमी, तेरह प्रकार चारित्र पालते विहार करते भए। निर्ममत्व, स्नेहके बंधनतैं रहित, मृगेन्द्र सारिखे निर्भय, समुद्र समान गम्भीर, सुमेरु समान निश्चल, यथाजात रूपके धारक, सत्यका वस्त्र पहिरे, क्षमारूप खड्गकूं धरे, बाईस परीषहके जीतनेहारे महातपस्वी, समान हैं शत्रु मित्र जिनके, अर समान हैं सुख दुख जिनके, अर समान है

गुण रत्न जिनके, महा उत्कष्ट मुनि शास्त्रोक्त मार्ग चलते भए। तपके प्रभावकरि अनेक ऋद्धि उपजी। सूई समान तीक्ष्ण तृणकी सली पावोंमें चुभै है परन्तु ताकी कछु सुध नाहीं। अर शत्रुनिके स्थानक विषै उपसर्ग सहिवे निमित्त विहार करते भए। तपके संयमके प्रभावकरि शुक्लध्यान उपजा। शुक्लध्यानके बलकर मोहका नाशकर ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय कर्म हर, लोकालोकक् प्रकाश करणहारा केवलज्ञान प्रकट भया। बहुरि अघातिया कर्म भी दूरकर सिद्धपदकू प्राप्त भए, जहांतै बहुरि संसार विषै भ्रमण नाहीं। यह केकईके पुत्र भरतका चरित्र जो भक्ति कर पढ़े, सुनै सो सब क्लेशसे रहित होय यश कीर्ति बल विभूति आरोग्यताकू पावै, अर स्वर्ग मोक्ष पावै। यह परम चरित्र महा उज्ज्वल श्रेष्ठ गुणनिकर युक्त, भव्यजीव सुनो, जातै शीघ्र ही सूर्यसे अधिक तेजके धारक होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै भरतका निर्वाण गमन वर्णन करनेवाला सत्यासीवां पर्व पूर्ण भया॥ ८७॥

अथानंतर भरतके साथ जे राजा महाधीर वीर अपने शरीरविषै भी जिनका अनुराग नाहीं घरतै निकसि जिनेश्वरी दीक्षा धरि दुर्लभ वस्तुकू प्राप्त भए, तिनविषै कईएकनिके नाम कहिए है–हे श्रेणिक! तू सुन–सिद्धार्थ, रति वर्धन, मेघरथ, जाबू, नन्द, शल्य, शशांक, निरसनन्दन, नन्द, आनन्द, सुमति, सदाश्रय महाबुद्धि, सूर्य, इन्द्रध्वज, जनवल्लभ, श्रुतिधर, सुचन्द, पृथ्वीधर, अलक, सुमति अक्रोध, कुंडर, सत्यवाहन, हरि, वासुमित्र, धर्ममित्र, पूर्णचन्द्र, प्रभाकर, नघोष, सुनन्द, शांति, प्रियधर्मा इत्यादि एक हजारतै अधिक राजा वैराग्य धारते भए। विशुद्धकुल विषै उपजे, सदा आचारविषै तत्पर, पृथ्वी विषै प्रसिद्ध है शुभ चेष्टा जिनकी, ये महाभाग्य हाथी घोड़े रथ पयादे स्वर्ण रत्न रणवास सब तज करि पंच महाव्रत धारते भए। राज्यकू जिनने तृणवत तज्या, महाशांत, नानाप्रकार योगीश्वर ऋद्धि के धारक भए। सो आत्मध्यान के ध्याता कईएक तो मोक्ष गए, कईएक अहमिंद्र भए, कईएक उत्कृष्ट देव भए।

अथानन्तर भरत चक्रवर्ती सारिखे दशरथके पुत्र भरत तिनकू घरसे निकसे पीछे लक्ष्मण तिनके गुण चितार चितार अतिशोकवत भया। अपना राज्य शून्य गिनता भया, शोककरि व्याकुल है चित्त जाका, अति दीर्घ आसू डारता भया, दीर्घ निश्वास नाखता भया, नील कमल समान है कांति जाकी सो कुमलाय गया। विराधितकी भुजानिपर हाथ धरे ताके सहारे बैठ्या मंद मंद वचन कहै, वे भरत महाराज, गुणही हैं आभूषण जिनके सो कहा गए? जिन तरुण अवस्था विषै शरीरसू प्रीति छाडी, इन्द्र समान राजा अर हम सब उनके सेवक वे रघुवंशके तिलक समस्त विभूति तजकरि मोक्षके अर्थी, महादुर्धर मुनिका धर्म धारते भए। शरीर तो अति कोमल, कैसे परीषह सहैंगे? धन्य वे। श्रीराम महा ज्ञानवान कहते भए—भरतकी महिमा कही न जाय, जिनका चित्त कभी संसारविषै न रच्या, जो शुद्ध बुद्धि है तो उनकी ही है, अर जन्म कृतार्थ है तो उनका ही है, जे विषके भरे अन्नकी न्याई राज्य कू तज करि जिनदीक्षा धरत भए। वे पूज्य, प्रशंसा योग्य, परम योगी, उनका वर्णन देवेन्द्र भी न कर सकें तो औरनिकी कहा शक्ति जो करें? वे राजा दशरथके पुत्र, केकईके नन्दन तिनकी महिमा हमतें न कही जाय। या भरतके गुण गाते एक मुहूर्त सभाविषै तिष्ठे, समस्त राजा भरत ही के गुण गाया करें। बहुरि श्रीराम लक्ष्मण दोऊ भाई भरतके अनुरागकरि अति उद्वेगरूप उठे। सब राजा अपने २ स्थानकू गए। घर २ भरतकी चर्चा। सब ही लोक आश्चर्यकू प्राप्त भए। यह तो उनकी यौवन अवस्था, अर यह राज्य, ऐसे भाई, सब सामग्री पूर्ण। ऐसे ही पुरुष तजे सोई परमपदकू प्राप्त होवे। या भांति सब ही प्रशंसा करते भए।

बहुरि दूजे दिन सब राजा मन्त्रकर रामपै आए। नमस्कारकरि अति प्रीतिसे वचन कहते भए। हे नाथ! जो हम असमझ हैं तो आपके, अर बुद्धिवंत हैं तो आपके। हमपर कृपाकर एक विनती सुनो—हे प्रभो! हम सब भूमिगोचरी अर विद्याधर आपका राज्याभिषेक करैं जैसे स्वर्ग विषै इन्द्रका होय। हमारे नेत्र अर हृदय सफल होवें। तिहारे अभिषेकके सुखकरि पृथ्वी सुखरूप होय। तब राम कहते

भए-तुम लक्ष्मणका राज्याभिषेक करो। वह पृथ्वीका स्तम्भ भूधर है, राजनिका गुरु, वासुदेव, राजानिका राजा, सब गुण ऐश्वर्यका स्वामी, सदा मेरे चरणनिकू नमै। या उपरांत मेरे राज्य कहा?

तब वे समस्त श्रीरामकी अतिप्रशंसा कर जय जयकार शब्द कर लक्ष्मणपै गए अर सब वृत्तांत कह्या। तब लक्ष्मण सबनिकू साथ लेय रामपै आया, अर हाथ जोड नमस्कार कर कहता भया—हे वीर! या राज्य के स्वामी आप ही हो। मैं तो आपका आज्ञाकारी अनुचर हूं। तब रामने कह्या, हे वत्स! तुम चक्र के धारी नारायण हो तातैं राज्याभिषेक तुम्हारा ही योग्य है। सो इत्यादि वार्तालाप से दोनो का राज्याभिषेक ठहरा। बहुरि जैसी मेघ की ध्वनि होय तैसी वादित्रनिकी ध्वनि होती भई। दुंदुभी बाजे, नगारे, ढोल, मृदंग, वीण, तमूरे, झालर, झांझ, मंजीरे, बांसुरी, शंख इत्यादि वादित्र बाजे, अर नानाप्रकारके मंगल गीत नृत्य होते भए। याचकनिकू मनवांछित दान दीये, सबनिकू अति हर्ष भया दोऊ भाई एक सिंहासन पर विराजे। स्वर्ण रत्नके कलश जिनके मुख कमल से ढके, पवित्र जलसे भरे, तिनकर विधिपूर्वक अभिषेक भया। दोऊ भाई मुकुट भुजबंध हार केयूर कुण्डलादिककर मंडित मनोग्य वस्त्र पहिरे, सुगन्धकरि चर्चित तिष्ठे। विद्याधर भूमिगोचरी तथा तीन खंडके देव जय जय शब्द कहते भए। यह बलभद्र श्रीराम हल मूसलके धारक, अर यह वासुदेव श्री लक्ष्मण चक्रका धारक जयवंत होहु। दोऊ राजेन्द्रनिका अभिषेककरि विद्याधर बडे उत्साहसे सीता अर विशल्याका अभिषेक करावते भए। सीता रामकी राणी अर विशल्याका लक्ष्मणकी, तिनका अभिषेक विधिपूर्वक होता भया।

अथानंतर विभीषणको लंका दई, सुग्रीवकू किहकंधापुर, हनुमानकू श्रीनगर अर हनूरुह द्वीप दिया। विराधितकू नागलोक समान अलकापुर दिया। नल नीलकू किहकंधूपुर दिया, समुद्रकी लहरोंके समूहकरि महाकौतुकरूप। अर भामण्डलकू वैताड्यकी दक्षिण श्रेणिविषै रथनूपुर दिया, समस्त विद्याधरनिका अधिपति किया। अर रत्नजटीकू देवोपनीत नगर दिया, और भी यथायोग्य सबनिकू स्थान

दिए। अपने पुण्यके उदय योग्य सबही राम लक्ष्मणके प्रतापते राज्य पावते भए। रामकी आज्ञाकरि यथायोग्य स्थानमें तिष्ठे। जे भव्यजीव पुण्यके प्रभावका जगतविषै प्रसिद्ध फल जान धर्मविषै रति करैं है वे मनुष्य सूर्यसे अधिक ज्योति पावै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणका राज्याभिषेक वर्णन करनेवाला अठासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८८ ॥

———

अथानन्तर राम लक्ष्मण महा प्रीतिकरि भाई शत्रुघ्नसू कहते भए, जो तुमको रुचै सो देश लेवहु। जो तुम आधी अयोध्या चाहो तो आधी अयोध्या लेवहु अथवा राजगृह अथवा पोदनापुर अथवा पौड सुन्दर इत्यादि सकडों राजधानी है। तिनविषै जो नीको सो तिहारी। तब शत्रुघ्न कहता भया—मोहि मथुराका राज्य देवो। तब राम बोले—रे भ्रात ! वहां राजा मधुका राज्य है अर वह रावणका जमाई है अनेक युद्धनिका जीतनहारा ताकूं चमरेन्द्रने त्रिशूल रत्न दिया है। ज्येष्ठके सूर्य समान दुस्सह है, अर देवनिसे दुर्निवार है। ताकी चिंता हमारे भी निरंतर रहै है, वह राजा मधु हरिवंशियोंके कुलरूप आकाशविषै सूर्य समान प्रतापी है जाने वंशविषै उद्योत किया है, अर जाका लवणार्णव नामा पुत्र विद्याधरनिहू कर असाध्य है। पिता पुत्र दोऊ महाशूरवीर हैं। तातै मथुरा टार और राज्य चाहो सोही लेवहु। तब शत्रुघ्न कहता भया बहुत कहिवेकरि कहा ? मोहि मथुरा ही देवहु जो मैं मधुके छातेकी न्याईं, मधुकूं रणसंग्रामविषै न तोड लूं तो दशरथका पुत्र शत्रुघ्न नाहीं। जैसे सिंहनिके समूहकूं अष्टापद तोड डारै तैसे ताके कटकसहित ताहि न चूर डारूं तो मैं तिहारा भाई नाहीं। जो मधुकूं मृत्यु प्राप्त न करूं तो मैं सुप्रभाकी कुक्षिविषै उपजा ही नाहीं। या भांति प्रचंड तेजका धरणहारा शत्रुघ्न कहता भया। तब समस्त विद्याधरनिके अधिपति आश्चर्यकूं प्राप्त भए, अर शत्रुघ्नकी बहुत प्रशंसा करते भए। शत्रुघ्न मथुरा जायवेकूं उद्यमी भया। तब श्रीराम कहते भए, हे भाई ! मैं एक याचना

करू हू । सो मोहि दक्षिणा देहु । तब शत्रुघ्न कहता भया—सबके दाता आप हो, सब आपके याचक है आप याचहु सो वस्तु कहा ? मेरे प्राणहीके नाथ आप हो तो और वस्तुकी कहा बात ? एक मधुसे युद्ध तो म न तजू , अर कहो सोही करू । तब श्रीरामने कही—हे वत्स ! तू मधुसे युद्ध कर तो जा समय वाके हाथ त्रिशूलरत्न न होय ता समय करियो । तब शत्रुघ्नने कही जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा । ऐसा कह भगवानकी पूजाकर नमोकार मत्र जप, सिद्धनिकू नमस्कारकरि, भोजनशालाविष जाय भोजनकरि माताके निकट आय आज्ञा मागी । तब वे माता अतिस्नेहत याके मस्तकपर हाथ धर कहती भई—हे वत्स ! तू तीक्ष्ण बाणनिकर शत्रुनिके समूहकू जीत । वह योधाकी माता अपने योधापुत्रसे कहती भई—हे पुत्र ! अब तक सग्रामविष शत्रुनिने तेरी पीठ नाहीं देखी ह अर अबहु न देखेंगे, तू रण जीत आवेगा, तब म स्वणके कमलनिकर श्रीजिनेन्द्रकी पूजा कराऊगी । वे भगवान त्रलोक्य मगलके कर्ता, आप महामगलरूप, सुर असुरनिकर नमस्कार करिवे योग्य, रागादिकके जीतनहारे तोहि मगल कर । वे परमेश्वर पुरुषोत्तम अरहत भगवत अत्यन्त दुजय मोहरिपु जीता वे तोहि कल्याण के दायक होहु । सवज्ञ त्रिकालदर्शी स्वयबुद्ध तिनके प्रसादत तेरी विजय होहु । जे केवलज्ञानकरि लोकालोककू हथेलीविष आवलाकी याई देख ह ते तोहि मगलरूप होहु । हे वत्स ! वे सिद्धपरमेष्ठी अष्टकमकर रहित, अष्टगुण आदि अनन्त गुणनिकर विराजमान, लोकके शिखर तिष्ठे, ते सिद्ध तोहि सिद्धिके कर्ता होहु । अर आचाय भव्यजीवनिके परम आधार तेरे विघ्न हर, जे कमल समान अलिप्त, सूयसमान तिमिर हर्ता, अर चन्द्रमा समान आल्हादके कर्त्ता, भूमिसमान क्षमावान, सुमेरु समान अचल, समुद्र समान गम्भीर, आकाश समान अखड इत्यादि अनेक गुणनिकर मडित ह । अर उपाध्याय जिनशासनके पारगामी तोहि कल्याणके कर्ता होह । अर कम शत्रुनिके जीतवेकू महा शूरवीर बारह प्रकार तपकरि जे निर्वाणको साध है ते साधु तोहि महावीयके दाता होहु । या भाति विघ्नकी हरणहारी, मगलकी करणहारी माता आशीस देतीभई सो शघ्रुन माथे चढाय माताकू प्रणामकरि बाहिर निकस्या !

स्वर्णकी साकलनिकर मंडित जो गज तापर चढ्या। सो ऐसा सोहता भया जैसे मेघमालाके ऊपर चंद्रमा सोहै, अर नाना प्रकारके बाहननिपर आरूढ अनेक राजा संग चाले सो तिनकरि ऐसा सोहता भया–जैसा देवनिकर मंडित देवेंद्र सोहै। राम लक्ष्मणकी भाईसू अधिक प्रीति सो तीन मंजिल भाईके संग गये तब भाई कहता भया–हे पूज्य पुरुषोत्तम! पीछे अयोध्या जावहु। मेरी चिंता न करो। मैं आपके प्रसादतें शत्रुनिको निस्संदेह जीतूंगा। तब लक्ष्मणने समुद्रावर्त नामा धनुष दिया। प्रज्ज्वलित हैं मुख जिनके, पवन सारिखे वेगकू धरे ऐसे बाण दिए। अर कृतांतवक्रकू लार दिया। अर लक्ष्मण सहित राम पीछे अयोध्या आए, परंतु भाईकी चिंता विशेष।

अथानंतर शत्रुघ्न महा धीरवीर बडी सेना कर संयुक्त मथुराकी तरफ गया। अनुक्रमसे यमुना नदीके तीर जाय डेरे दिये। जहां मंत्री महासूक्ष्मबुद्धि मंत्र करते भये। देखो, इस बालक शत्रुघ्नकी बुद्धि जो मधुकू जीतवेकी वांछा करी है। यह नयवर्जित केवल अभिमान कर प्रवर्त्या है, जा मधुने पूर्व राजा मांधाता रणविषै जीत्या, सो मधु देवनिकर विद्याधरनिकर न जीत्या जाय, ताहि यह कैसें जीतेगा? राजा मधु सागर समान है, उछलते पियादे तेई भये उतंग लहर, अर शत्रुनिके समूह तेई भये ग्राह तिनकर पूर्ण ऐसे मधुसमुद्रकू शत्रुघ्न भुजानिकर तिरघा चाहै है। सो कैसे तिरेगा? तथा मधुभूपति भयानक वन समान है ताविषै प्रवेशकर कौन जीवता निसरै? कैसा है राजा मधुरूप वन? पयादेके समूह तेई हैं वृक्ष जहां, अर माते हाथिनिकर महा भयंकर, अर घोडनिके समूह तेई हैं मृग जहां। ये वचन मंत्रिनिके सुन कृतांतवक्र कहता भया–तुम साहस छोड ऐसे कायरताके वचन क्यों कहो हो? यद्यपि वह राजा मधु चमरेंद्र कर दिया जो अमोघ त्रिशूल ताकर अति गर्वित है तथापि ता मधुको शत्रुघ्न संवर जीतेगा। जैसे हाथी महाबलवान है अर सूण्डकर वृक्षनिकू उपाडै है, मद झरै है तथापि ताहि सिंह जीते है। यह शत्रुघ्न लक्ष्मी अर प्रतापकरि मंडित है, महाबलवान है, शूरवीर है, महा पंडित प्रवीण है, अर याकै सहाई श्रीलक्ष्मण हैं। अर आप सबही भले मनुष्य याकै संग है, तातै यह शत्रुघ्न

अवश्य शत्रुकू जीतेगा। जब ऐसे वचन कृतांतवक्रने कहे तब सबही प्रसन्न भए, अर पहिलेही मंत्रीजननिने जो मथुरामें हलकारे पठाये हुते ते आयकर सब वृत्तांत शत्रुघ्नसू कहते भए। हे देव! मथुरा नगरीकी पूर्व दिशाकी ओर अत्यन्त मनोग्य उपवन है तहां रणवास सहित राजा मधु रमै है। राजा के जयन्ती नाम पटराणी है ता सहित वनक्रीडा करे है जैसे स्पर्श इन्द्रियके वश भया गजराज बन्धन विषै पडै है, तैसे राजा मोहित भया विषयनिके बन्धन विषै पड्या है, महा कामी। आज छठा दिन है कि सब राज्य काज तज प्रमादके वश भया वनविषै तिष्ठै है। कामान्ध मूर्ख तिहारे आगमकू नाहीं जाने है, अर तुम ताके जीतवेकू वांछा करी है ताकी ताहि सुध नाहीं। अर मंत्रिनिने बहुत समझाया सो काहूकी बात धारे नाहीं, जैसे मूढ़ रोगी वैद्यकी औषध न धारै। इस समय मथुरा हाथ आवे तो आवे। अर कदाचित मधु पुरीविषै धसा तो समुद्रसमान अथाह है। यह वचन हलकारोंके मुखसे शत्रुघ्न सुनकर कार्यविषै प्रवीण ताही समय बलवान योधानिके सहित दौडकर मथुरा गया, अर्धरात्रिके समय सब लोक प्रमादी हुते, अर नगरी राजा रहित हुती, सो शत्रुघ्न नगरविषै जाय पैठा। जैसै योगी कर्म नाश कर सिद्धपुरीविषै प्रवेश करे, तैसे शत्रुघ्न द्वारकू चूरकर मथुराविषै प्रवेश करता भया। मथुरा महामनोग्य है। तब बन्दीजननिके शब्द होते भये जो राजा दशरथका पुत्र शत्रुघ्न जयवंत होहु। ये शब्द सुनके नगरीके लोक परचक्रका आगम न जान अति व्याकुल भए। जैसे लंका अंगदके प्रवेशकर अति व्याकुल हुती तैसे मथुराविषै व्याकुलता भई। कईएक कायर हृदयकी धरनहारी स्त्री हुतीं तिनके भय कर गर्भपात होय गये, अर कईएक महाशूरवीर कलकलाट शब्द सुन तत्काल सिंहकी न्याई उठे, शत्रुघ्न राजमन्दिर गया, आयुधशाला अपने हाथ कर लीनी अर स्त्री बालक आदि जे नगरीके लोक अति त्रासकू प्राप्त भए तिनकू महामधुर वचनकर धीर्य बंधाया जो यह श्रीरामका राज्य है यहां काहूकू दुख नाहीं। तब नगरीके लोक त्रासरहित भए अर शत्रुघ्नको मथुराविषै आया सुन राजा मधु महाकोपकर उपवनतैं नगरकू आया, सो मथुराविषै शत्रुघ्नके सुभटोंकी रक्षाके कारण प्रवेश न कर

सक्या जैसै मुनिके हृदयविषै मोह प्रवेश न कर सके। नानाप्रकारके उपायकर प्रवेश न पाया, अर त्रिशूलहू ते रहित भया तथापि महाभिमानी मधुने शत्रुघ्नसे संधि न करी, युद्ध हीकूं उद्यमी भया। तब शत्रुघ्न के योधा युद्धकूं निकसे। दोनो सेना समुद्रसमान, तिनविषै परस्पर युद्ध भया। रथनिके तथा हाथिनके तथा घोडनिके असवार परस्पर युद्ध करते भए। पयादे भिडे। नानाप्रकारके आयुधनिके धारक, महा समर्थ नाना प्रकार आयुधनि कर युद्ध करते भये। ता समय परसेनाके गर्वकूं न सहता संता कृतांत वक्र सेनापति परसेनाविषै प्रवेश करता भया, नाहीं निवारी जाय है गति जाकी, तहां रणक्रीडा करै है जैसे स्वयंभूरमण उद्यानविषै इन्द्र क्रीडा करै। तब मधुका पुत्र लवणार्णवकुमार याहि देख युद्धके अर्थि आया। अपने बाणनिरूप मेघकर कृतांतवक्ररूप पर्वतकूं आच्छादित करता भया, अर कृतांत-वक्र भी आशीविष तुल्य बाणनिकर ताके बाण छेदता भया अर धरती आकाशकूं अपने बाणनिकर व्याप्त करता भया। दोऊ महायोधा सिंह समान बलवान, गजनिपर चढे, क्रोधसहित युद्ध करते भए। वानै वाकूं रथरहित किया अर वानै वाकूं। बहुरि कृतांतवक्रने लवणार्णवके वक्षस्थलविषै बाण लगाया अर ताका बक्तर भेदा। तब लवणार्णव कृतांतवक्र ऊपर तोमर जातिका शस्त्र चलावता भया, क्रोधकर लाल हैं नेत्र जाके। दोनो घायल भए, रुधिर कर रंग रहे हैं वस्त्र जिनके। महा सुभटता के स्वरूप दोनो क्रोध कर उद्धत फूले टेसूके वृक्ष समान सोहते भए। गदा खडग चक्र इत्यादि अनेक आयुधनिकर परस्पर दोऊ महा भयंकर युद्ध करते भए। बल उन्माद विषादके भरे बहुत बेर लग युद्ध भया। कृतांतवक्रने लवणार्णवके वक्षस्थलविषै घाव किया, सो पृथ्वीविषै पडया। जैसे पुण्यके क्षयतैं स्वर्गवासी देव मध्य लोकविषै आय पडे। लवणार्णव प्राणान्त भया। तब पुत्रकूं पडा देख मधु कृतान्तवक्र पर दौडा तब शत्रुघ्नने मधुकूं रोक्या, जैसे नदीके प्रवाहकूं पर्वत रोके। मधु महा दुस्सह शोक अर कोपका भरा युद्ध करता भया। सो आशीविषकी दृष्टि समान मधुकी दृष्टि शत्रुघ्नकी सेना के लोक न सहार सकते भए। जैसे उग्र पवनके योगतैं पत्रनिके समूह चलायमान होय तैसे लोक

चलायमान भए। बहुरि शत्रुघ्नकूं मधुके सन्मुख जाता देख धीर्यकूं प्राप्त भए। शत्रुके भयकर लोक तबलग ही डरें जबलग अपने स्वमीकूं प्रबल न देख, अर स्वामीकूं प्रसन्नवदन देख धीर्यकूं प्राप्त होय। शत्रुघ्न उत्तम रथपर आरूढ, मनोग्य धनुष हाथविषे, सुन्दर हारकर शोभे है वक्षस्थल जाका, सिरपर मुकुट धरे, मनोहर कुण्डल पहिरे, शरदके सूर्य समान महातेजस्वी, अखण्डित है गति जाकी शत्रुके सन्मुख जाता अति सोहता भया, जैसे गजराजपर जाता मृगराज सोहै। अर अग्नि सूखे पत्रनिको जलावै तैसे मधके अनेक योधा क्षणमात्रविषे विध्वंश किए। शत्रुघ्नके सन्मुख मधुका कोई योधा न ठहर सका, जैसे जिनशासनके पंडित स्याद्वादी तिनके सन्मुख एकांतवादी न ठहर सकै। जो मनुष्य शत्रुघ्नसूं युद्ध किया चाहै सो तत्काल विनाशकूं पावै, जैसे सिंहके आगे मृग। मधुकी समस्त सेनाके लोग अति व्याकुल होय मधुके शरण आये। सो मधु महा सुभट शत्रुघ्नकूं सन्मुख आवता देख शत्रुघ्न की ध्वजा छेदी अर शत्रुघ्नने बाणनिकर ताके रथके अश्व हते। तब मधु पर्वत समान जो वरुणेन्द्र गज तापर चढ्या, क्रोधकर प्रज्ज्वलित है शरीर जाका शत्रुघ्नकूं निरन्तर बाणनिकर आच्छादने लगा, जैसे महामेघ सूर्यकूं आच्छादै। सो शत्रुघ्न महा शूरवीरने ताके बाण छेद डारे, मधुका बखतर भेदा। जैसे अपने घर कोई पाहुना आवै अर ताकी भले मनुष्य भलीभांति पाहुनगति करै तैसे शत्रुघ्न मधुकी रणविषे शस्त्रनिकर पाहुनगति करता भया।

अथानन्तर मधु महा विवेकी शत्रुघ्नकूं दुर्जय जान, आपकूं त्रिशूल आयुधसे रहित जान, पुत्रकी मृत्यु देख, अर अपनी आयु हू अल्प जान मुनिका वचन चितारता भया—अहो जगतका समस्तही आरम्भ महा हिंसारूप दुखका देनहारा सर्वथा त्याज्य है। यह क्षणभंगुर संसारका चरित्र, तामें मूढ जन राचे। या संसारविषे धर्म ही प्रशंसा योग्य है, अर अधर्मका कारण अशुभ कर्म प्रशंसा योग्य नाहीं। यह प्राप्तकर्म नरक निगोदका कारण है। जो दुर्लभ मनुष्य देहकूं पाय धर्मविषे बुद्धि नहीं धरे है सो प्राणी मोह कर्मकरि ठग्या अनन्त भव भ्रमण करै है। पापीने संसार असारकूं सार, शरीरकूं ध्रुव जाना,

आत्महित न किया। प्रमादविषै प्रवरता, रोग समान ये इन्द्रियनिके भोग भले जान भोगे, जब मैं स्वाधीन हुता तब मोहि सुबुद्धि न आई, अब अंतकाल आया अब कहा करूं ? घरमें आग लागी ता समय तालाब खुदवाना कौन अर्थ ? अर सर्पने डसा ता समय देशांतरसे मंत्राधीश बुलवाने अर दूरदेशसे मणि औषधि मंगवाना कौन अर्थ ? तातैं अब सब चिंता तज निराकुल होय, अपना मन समाधानविषै ल्याऊं। यह विचार वह धीरवीर घावकर पूर्ण हाथी चढ्या ही भाव मुनि होता भया। अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधुनिकूं मनकरि वचनकरि कायकरि बारम्बार नमस्कार कर अर अरहंत सिद्ध साधु तथा केवली प्रणीत धर्म यही मंगल है, यही उत्तम हैं इनहींका मेरे शरण है। अढाई द्वीपविषै पन्द्रह कर्मभूमि तिनविषै भगवान अरहंत देव होय हैं वे त्रैलोक्यनाथ मेरे हृदयविषै तिष्ठो। मैं बारम्बार नमस्कार करूं हूं। अब मैं यावज्जीव सब पाप योग तजे, चारों आहार तजे। जे पूर्व पाप उपार्जे हुते तिनकी निन्दा करूं हूं अर सकल वस्तुका प्रत्याख्यान करूं हूं। अनादि कालतैं या संसार वनविषै जो कर्म उपार्जे हुते ते मेरे दुष्कृत मिथ्या होहु। भावार्थ—मुझे फल मत देहु, अब मैं तत्व ज्ञानविषै तिष्ठा, तजिवे योग्य जो रागादिक तिनकूं तजूं हूं अर लेयवे योग्य जो निजभाव तिनकूं लेऊं हूं। ज्ञान दर्शन मेरे स्वभाव ही है, सो मोसे अभेद्य है। अर जे शरीरादिके समस्त परपदार्थ कर्म के संयोग कर उपजे, ये मोसे न्यारे हैं। देह त्यागके समय संसारी लोक भूमिका तथा तृणका सांथरा करे हैं सो सांथरा नाहीं। यह जीव ही पाप बुद्धिरहित होय तब अपना आप ही सांथरा है। ऐसा विचारकर राजा मधु ने दोनों प्रकारके परिग्रह भावोंसे तजे अर हाथीकी पीठ पर बैठा ही सिरके केशलोंच करता भया, शरीर घावनिकर अतिव्याप्त है तथापि महा दुर्धर धीयकूं धर करि अध्यात्मयोगविषै आरूढ होय कायाका ममत्व तजता भया, विशुद्ध है बुद्धि जाकी। तब शत्रुघ्न मधुकी परम शांत दशा देखि नमस्कार करता भया अर कहता भया—हे साधो ! मो अपराधीके अपराध क्षमा करहु। देवनिकी अप्सरा मधुका संग्राम देखनेकूं आई हुतीं, आकाशसे कल्पवृक्षनिके पुष्पोंकी वर्षा करती भई। मधुका

वीररस शांतरस देख देव भी आश्चर्यकू प्राप्त भए । बहुरि मध महा धीर एक क्षणमात्रविषै समाधि मरण कर महासुखके सागरविषै तीजे सनतकुमार स्वर्गविषै उत्कृष्ट देव भया । अर शत्रुघ्न मधुकी स्तुति करता महा विवेकी मथुराविषै प्रवेश करता भया । जसे हस्तिनापुरविषै जयकुमार प्रवेश करता सोहता भया तैसा शत्रुघ्न मधुपुरीविषै प्रवेश करता सोहता भया । गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं हे नराधिपति श्रेणिक ! प्राणियोंके या संसारविषै कर्मोंके प्रसंगकरि नाना अवस्था होय है तातैं उत्तमजन सदा अशुभ कर्म तजकरि शुभकर्म करो, जाके प्रभाव करि सूर्य समान कांतिकूं प्राप्त होहु ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै मधुकायुद्ध अर वैराग्य अर लवणार्णवका मरण वर्णन करनेवाला नवासीवां पर्व पूर्ण भया ।। ८९ ।।

अथानंतर असुरकुमारोंके इन्द्र जो चमरेन्द्र महाप्रचंड तिनका दिया जो त्रिशूलरत्न मधुके हुता ताके अधिष्ठाता देव त्रिशूलकूं लेकर चमरेन्द्रके पास गए । अतिखेद खिन्न महा लज्जावान होय मधुके मरणका वृत्तांत असुरेन्द्रसूं कहते भए । तिनकी मधुसूं अतिमित्रता सो पातालसे निकसकरि महाक्रोध के भरे मथुरा आयवेकूं उद्यमी भए । ता समय गरुडेन्द्र असुरेन्द्रके निकट आये अर पूछते भए—हे दैत्येंद्र ! कौन तरफ गमनकूं उद्यमी भए हो ? तब चमरेन्द्रने कही—जाने मेरा मित्र मधु मारया है ताहि कष्ट देवेकूं उद्यमी भया हूं । तब गरुडेन्द्रने कही कहा विशिल्याका माहात्म्य तुमने न सुन्या है ? तब चमरेन्द्रने कही वह अद्भुत अवस्था विशिल्याकी कुमार अवस्थाविषै ही हुती अर अब तो निर्विष भुजंगी समान है । जौलग विशिल्याने वासुदेवका आश्रय न किया हुता तौलग ब्रह्मचर्यके प्रसादतैं असाधारण शक्ति हुती, अब वह शक्ति विशिल्याविषै नाहीं । जे निरतिचार बालब्रह्मचर्य धारैं तिनके गुणनि की महिमा कहिवेविषै न आवै । शीलके प्रसादकरि सुर असुर पिशाचादि सब डरैं । जौलग शीलरूप खड्गकूं धारैं तौलग सबकर जीत्या न जाय, महादुर्जय है । अब विशल्या पतिव्रता है, व्यभिचारिणी

नाहीं तात वह शक्ति नाहीं। मद्य मास मथुन यह महापाप ह। इनके सेवनसे शक्तिका नाश होय है। जिनका व्रतशील नियमरूप कोट भग्न न भया तिनकू कोई विघ्न करवे समथ नाहीं। एक कालाग्नि नाम रुद्र महा भयकर भया सो हे गरुडेन्द्र! तुम सुना ही होयगा। बहुरि वह स्त्रीसू आसक्त होय नाशकू प्राप्त भया। तात विषयका सेवन विषसे भी विषम ह। परम आश्चयका कारण एक अखड ब्रह्मचय है। अब म मित्रके शत्रुप जाऊगा, तुम तिहारे स्थानक जावहु। ऐसा गरुडेन्द्रसू कहकर चमरेन्द्र मथुरा आए, मित्रके मरणकरि कोपरूप मथुराविष वही उत्सव देख्या जो मधुके समय हुता। तब असुरेन्द्रने विचारी—ये लोक महादुष्ट कतघ्न ह, देशका धनी पुत्र सहित मरगया ह, अर अन्य आय बठ्या ह, इनकू शोक चाहिए कि हष? जाके भुजाकी छाया पाय बहुतकाल सुखसू बसे ता मधुकी मत्युका दुख इनकू क्यो न भया? ये महा कतघ्न ह, सो कतघ्नका मुख न देखिये। लोकनिकरि शूरवीर सेवायोग्य, शूरवीरनिकर पण्डित सेवा योग्य ह। सो पण्डित कौन? जो पराया गुण जान। सो ये कतघ्न महामूख ह। ऐसा विचारकर मथुराके लोकनिपर चमरेन्द्र कोप्या, इन लोकोका नाश करू। यह मथुरापरी या देशसहित क्षय करू। महाक्रोधके वश होय असुरेन्द्र लोकनिकू दुस्सह उपसग करता भया, अनेक रोग लोगनिकू लगाए। प्रलयकालकी अग्नि समान निदई होय लोकरूप वनकू भस्म करवेकू उद्यमी भया। जो जहा ऊभा हुता सो वहा ही मर गया, अर बठ्या हुता सो बठा ही रह गया। सूता था सो सूता ही रहगया। मरी पडी, लोककू उपसग दख, मित्र देव देवताके भयसे शत्रुघ्न अयोध्या आया। सो जीतकर महाशूरवीर भाई आया बलभद्र नारायण अति हर्षित भए, अर शत्रुघ्नकी माता सुप्रभा भगवानकी अदभुत पूजा करावती भई। अर दुखी जीवनिकू करुणाकर, अर धर्मात्मा जीवनिकू अति विनयकर अनेक प्रकार दान देती भई। यद्यपि अयोध्या महा सदर ह, स्वणरत्ननिके मदिरनिकर मडित है, कामधेनु समान सव कामना पूरणहारी देवपुरीसमान पुरी ह तथापि शत्रुघ्नका जीव मथुरासू अति आसक्त, सो अयोध्याविषै अनुरागी न होता भया। जैस कईएक दिन सीता विना राम

उदास रहे तस शत्रुघ्न मथुरा बिना अयोध्याविषै उदास रहे। जीवोंकूं सुन्दर वस्तुका सयोग स्वप्न समान क्षण भंगुर है, परम दाहकूं उपजावै है, ज्येष्ठके सूर्यसे हू अधिक आतापकारी है।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै मथुराके लोकनिकू असुरेन्द्रकृत उपसर्गका वर्णन करनेवाला नव्वबा पर्व पूर्ण भया ॥ ९० ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसूं पूछता भया—हे भगवन् ! कौन कारण कर शत्रुघ्न मथुरा हीकूं याचता भया। अयोध्याहूतै ताहि मथुराका निवास अधिक क्यों रुचा ? अनेक राजधानी स्वर्गलोक समान सो न वांछी अर मथुरा ही वांछी, ऐसी मथुरासूं कहा प्रीति ? तब गौतमस्वामी ज्ञानके समुद्र, सकल सभारूप नक्षत्रनिके चन्द्रमा, कहते भये—हे श्रेणिक ! इस शत्रुघ्नके अनेक भव मथुराविषै भए तातैं याकूं मधुपुरीसूं अधिक स्नेह भया। यह जीव कर्मनिके सम्बन्धत अनादिकालका संसार सागर विषै बसै है सो अनन्त भव धरै। यह शत्रुघ्नका जीव अनन्त भव भ्रमणकरि मथुराविषै एक यमन देव नामा मनुष्य भया। महा क्रूर, धर्मसे विमुख सो मरकरि शूकर खर काग ये जन्म धरि अज—पुत्र भया सो अग्नि विषै जल मूवा। भैंसा जलके लादनका भया सो छ वार भैंसा होय दुखसूं मूवा। नीच-कुलविषै निर्धन मनुष्य भया। हे श्रेणिक ! महा पापी तो नरककूं प्राप्त होय है अर पुण्यवान जीव स्वर्ग विषै देव होय है, अर शुभाशुभमिश्रित करि मनुष्य होय है। बहुरि यह कुलन्धरनामा ब्राह्मण भया, रूपवान अर शील रहित। सो एक समय नगरका स्वामी दिग्विजयनिमित्त देशांतर गया ताकी ललिता नाम राणी महलके झरोखा विषै तिष्ठे हुती सो पापिनी इस दुराचारी विप्रकूं देख कामबाणकर वेधी गई। सो याहि महलविषै बुलाया। एक आसनपर राणी अर यह रहे। ताही समय राजा दूरका चल्या अचानक आया अर याहि महलविषै देख्या सो राणी मायाचारकर कही—जो यह बंदीजन है, भिक्षुक है तथापि राजाने न मानी। राजाके किंकर ताहि पकडकर नृपकी आज्ञातै आठो अंग दूर करवे के अर्थ

नगरके बाहिर ले जाते हुते। सो कल्याणनामा साधुने देख कही जो तू मुनि होय तो तोहि छुडाव। तब याने मुनि होना कबूल किया। तब किंकरनिसे छुडाया सो मुनि होय महातपकरि स्वर्गविषै ऋजु विमानका स्वामी देव भया। हे श्रेणिक! धर्मसे कहा न होय?

अथानन्तर मथुराविषै चन्द्रभद्र राजा, ताके राणी धारा ताके भाई सूर्यदेव, अग्निदेव, यमुनादेव। अर आठपुत्र, तिनके नाम श्रीमुख, समुख, सुमुख, इन्द्रमुख, प्रमुख, उग्रमुख, अर्कमुख, परमुख। अर राजा चन्द्रभद्रके दूजी राणी कनकप्रभा ताकू वह कुलंधर नामा ब्राह्मणका जीव स्वर्गविषै देव होय तहांते चयकर अचल नाम पुत्र भया सो कलावान अर गुणनिकर पूर्ण, सब लोकके मनका हरण हारा, देव कुमार तुल्य क्रीडाविषै उद्यमी होता भया।

अथानन्तर एक अंकनामा मनुष्य धर्मकी अनुमोदनाकर श्रावस्ती नगरीविषै एक कम्पनाम पुरुष ताके अंगिका नामा स्त्री उसके अप नामा पुत्र भया सो अविनयी, तब कम्पने अपकू घरसे निकास दिया सो महादुखी भूमिविषै भ्रमण करै। अर अचलनामा कुमार पिताकू अतिवल्लभ, सो अचल कुमारकी बडी माता धरा उसके तीन भाई अर आठ पुत्र तिन्होंने एकांतमें अचलके मारणेका मन्त्र किया सो यह वार्ता अचलकुमारकी माताने जानी। तब पुत्रकू भगाय दिया। सो तिलकवनविषै उसके पांवविषै कांटा लाग्या सो कम्पका पुत्र अप काष्ठका भार लेकर आवे सो अचल कुमारकू कांटेके दुखसू करुणावत देख्या। तब अपने काष्ठका भार मेल छुरीसे कुमारका कांटा काढ कुमारकू दिखाया सो कुमार अति प्रसन्न भया अर अपकू कहा—तू मेरा अचलकुमार नाम याद रखियो। अर मोहि भूपति सुने वहां मेरे निकट आइयो। इस भांति कह अपकू विदा किया सो अप गया। अर राजपुत्र महादुखी कौशांबी नगरीके विषै आया, महापराक्रमी सो बाण विद्याका गुरु जो विशिषाचार्य उसे जीतकर प्रतिष्ठा पाई हुती सो राजाने अचल कुमारकू नगरविषै ल्यायकर अपनी इन्द्रदत्ता नामा पुत्री परणाई। अनुक्रमकरि पुण्यके प्रभावसे राज पाया, सो अंगदेश आदि अनेक देशनिकू जीतकर

से रहित है। जिन आज्ञा पालक होय तो वर्षाविषै विहार क्यो करै ? सो यह तो उठ गया अर याके पुत्रको बधूने अति भक्ति कर प्रासुक आहार दिया। सो मुनि आहार लेय भगवानके चैत्यालय आय जहा द्युतिभट्टारक विराजते हुते ये सप्तर्षि ऋद्धिके प्रभावकर धरतीस चार अगुल अलिप्त चले आए अर चैत्यालयविषै धरतीपर पग धरते आए। आचार्य उठ खडे भए अति आदरसे इनकू नमस्कार किया। अर जे द्युतिभट्टारकके शिष्य हुते तिन सबन नमस्कार किया। बहुरि ये सप्त तो जिन बदनाकरि आकाशके मार्ग मथुरा गए। इनके गए पीछे अर्हदत्त सेठ चैत्यालयविषै आया। तब द्युतिभट्टारकने कही सप्तमहर्षि महायोगीश्वर चारणमुनि यहा आए हुते, तुमने हू वह बदे है ? वे महा पुरुष महातपके धारक है, चार महिने मथुरा निवास किया है अर चाहे जहा आहार ले जाय। आज अयोध्याविषै आहार लिया, चैत्यालय दर्शन कर गए हमसे धर्मचर्चा करी वे महा तपोधन नगरगामी शुभ चेष्टाके धरणहार परम उदार,ते मुनि बदिवे योग्य है। तब वह श्रावकनिविषै अग्रणी आचार्यके मुखसू चारण मुनिनिकी महिमा सुनकर खेदखिन्न होय पश्चाताप करता भया। धिक्कार मोहि मै सम्यकदर्शन रहित वस्तुका स्वरूप न पिछान्या मै अत्याचारी मिथ्यादृष्टि मो समान और अधर्मी कौन ? वे महामुनि मेरे मन्दिर आहारकू आए अर मै नवधा भक्तिकर आहार न दिया। जो साधकू देख सन्मान न करै अर भक्तिकर अन्नजल न देय सो मिथ्यादृष्टि है। मै पापी पापात्मा पापका भाजन, महा निंद्य, मो समान और अज्ञानी कौन ? मै जिनवाणीसे विमुख। अब मै जोलग उनका दर्शन न करू तौलग मेरे मनका दाह न मिटै। चारण मुनिनिकी तो यही रीति है-चौमासे निवास तो एक स्थान करै अर आहार अनेक नगरीविषै कर आवै। चारण ऋद्धिके प्रभावकरि उनके अंगसे जीवनिकू बाधा न होय।

अथानन्तर कार्तिककी पूनो नजीक जान सेठ अर्हदत्त महासम्यकदृष्टि नृपतुल्य विभूति जाके, अयोध्यातै मथुराकू सवकुटुम्ब सहित सप्तऋषिके पूजन निमित्त चाल्या। जाना है मुनिनिका महात्म्य जाने, अर अपनी बारम्बार निन्दा करै है। रथ हाथी पियादे तुरगनिके असवार इत्यादि बडी सेना

सहित योगीश्वरनिकी पूजाकू शीघ्रही चाल्या। बडी विभूति कर यवत शभ ध्यानविष तत्पर कार्तिक सुदी सप्तमीके दिन मुनिनिके चरणनिविष जाय पहुँचा। वह उत्तम सम्यक्त्वका धारक विधिपूवक मुनि वन्दनाकर मथुराविषै अति शोभा करावता भया। मथुरा स्वग समान सोहती भई। यह वत्तात सन शत्रुघ्न शीघ्रही महा तुरग चढया सप्तऋषिनिके निकट आया अर शत्रुघ्नकी माता सुप्रभा भी मुनिनिकी भक्ति कर पत्रक पीछ ही आई। अर शत्रुघ्न नमस्कार कर मुनिनिके मुख धम श्रवण करता भया। मुनि कहते भए, हे नप! यह ससार असार ह, वीतरागका माग सार ह, जहा श्रावकके बारह व्रत कहे, मुनिके अठाईस मूल गुण कहे। मुनीनिक निर्दोष आहार लेना। अकत अकारित राग रहित प्रासुक आहार विधिपूवक लीये योगीश्वरोके तपकी बढबारी होय। तब वह शत्रुघ्न कहता भया—हे देव! आपके आय या नगरत मरी गई, रोग गए, दुर्भिक्ष गया, सब विघ्न गए, सुभिक्ष भया, सब साता भई, प्रजाके दुख गए, सब समद्धि भइ, जसे सूयके उदयत कमलनी फूल, कईएक दिन आप यहा ही तिष्ठो।

तब मुनि कहते भए—हे शत्रुघ्न! जिन आज्ञा सिवाय अधिक रहना उचित नाहीं। यह चतुथकाल धमके उद्योतका कारण ह। याविष मुनीन्द्रका धम भव्य जीव धार है, जिन आज्ञा पालै ह, महामुनिके कवलज्ञान प्रकट होय ह। मुनिसुव्रतनाथ तो मुक्त भए, अब नमि, नेमि,पाश्व, महावीर चार तीर्थंकर और होवेंगे। बहुरि पचमकाल जाहि दुखमाकाल कहिये सो धमकी न्यूनतारूप प्रवरतेगा। ता समय पाखडी जीवनिकर जिनशासन अति ऊचा ह तोहू आच्छादित होयगा, जस रजकर सूयका बिब आच्छादित होय। पाखडी निदई दया धमकू लोपकर हिसाका माग प्रवतन करग। ता समय मसान समान ग्राम, अर प्रेत समान लोक, कुचेष्टाके करणहारे होवेंगे, महाकुधमविष प्रवीण क्रूर चोर पाखण्डी, दुष्ट जीव तिनकर पृथ्वी पीडित होयगी। किसान दुखी होवेंगे, प्रजा निधन होयगी, महा हिसक जीव परजीवन के घातक होवेंगे, निरन्तर हिसाकी बढवारी होयगी, पुत्र माता पिताकी आज्ञा से विमुख

होवेंगे, अर माता पिता हू स्नेह रहित होवेंगे। अर कलिकालविषै राजा लूटेरे होवेंगे, कोई सुखी नजर न आवेगा। कहिवेके सुखी वे पापचित्त दुर्गतिकी दायक, कुकथा कर परस्पर पाप उपजावेंगे। हे शत्रुघ्न! कलिकालविषै कषायकी बहुलता होवेगी, अर अतिशय समस्त विलय जावेंगे। चारण मुनि देव विद्याधरनिका आवना न होयगा। अज्ञानी लोक नग्नमुद्रा के धारक मुनिनकू देख निन्दा करेंगे, मलिनचित्त मूढ जन अयोग्य को योग्य जानेंगे। जसे पतंग दीपककी शिखाविषै पडे तसे अज्ञानी पापपथविषै पड दुर्गतिके दुख भोगेंगे। अर जे महा शान्त स्वभाव तिनकी दुष्ट निन्दा करेंगे विषयी जीवनिकू भक्तिकर पूजेंगे। दीन अनाथ जीवनिकू दया भावकर कोई न देवेगा, सो वृथा जायगा। जसे शिलाविषै बीज बोय निरन्तर सींचे तो हू कुछ कार्यकारी नाहीं, तसे कुशील पुरुषनिकू विनय भक्तिकर दीया कल्याणकारी नहीं। जो कोई मुनिनकी अवज्ञा कर है अर मिथ्या मार्गियोकू भक्ति कर पूजै है सो मलयागिरिचन्दनकू तजकर कटकवृक्षकू अंगीकार कर है। ऐसा जानकर हे वत्स! तू दान पूजाकरि जन्म कृतार्थकर, गृहस्थोकू दान पूजा ही कल्याणकारी है अर समस्त मथुराके लोक धर्मविषै तत्पर होवो, दया पालो, साधर्मियोसे वात्सल्य धारो, जिनशासनकी प्रभावना करहु, घर-घर जिनबिंब थापहु, पूजा अभिषेककी प्रवृत्ति करहु, जाकरि सब शांत हो, जो जिन धर्मका आराधन न करेगा अर जाके घरविषै जिन पूजा न होयगी, दान न होवेगा ताहि आपदा पीडेगी। जसे मृगकू व्याघ्री भखै तसे धर्म रहितकू मरी भखेगी। अंगुष्ठ प्रमाण हू जिनेन्द्रकी प्रतिमा जिसके विराजेगी उसके घरविषै मरी यू भाजेगी जसे गरुडके भयसे नागिनी भागे। ये वचन मुनिनिके सुन शत्रुघ्नने कही—हे प्रभो! जो आप आज्ञा करी त्यो ही लोक धर्मविषै प्रवर्तेंगे।

अथानन्तर मुनि आकाश मार्ग विहार कर अनेक निर्वाण भूमि वंदकरि सीताके घर आहारकू आये। कसे है मुनि? तपही है धन जिनके। सीता महा हर्षकू प्राप्त होय श्रद्धा आदि गुणोकरि मंडित परम अन्नकर विधिपूर्वक पारणा करावती भई। मुनि आहार लेय आकाशके मार्ग विहार कर गए

शत्रुघ्नने नगरीके बाहिर अर भीतर अनेक जिनमन्दिर कराए। घर घर जिनप्रतिमा पधराई, नगरी सब उपद्रवरहित भई। वन उपवन फल पुष्पादिक कर शोभित भए, वापिका सरोवरी कमलों कर मंडित सोहती भई, पक्षी शब्द करते भए, कैलाशके तटसमान उज्ज्वल मन्दिर नेत्रोंकू आनन्दकारी विमान तुल्य सोहते भए, अर सब किसान लोक सम्पदाकर भरे सुखसू निवास करते भए। गिरिके शिखर समान ऊंचे अनाजोंके ढेर गावोविषै सोहते भए। स्वर्ण रत्नादिककी पृथ्वीविषै विस्तीर्णता होती भई। सकल लोक सुखी, रामके राज्यविषै देवो समान अतुल विभूतिके धारक, धर्म अर्थ कामविषै तत्पर होते भए। शत्रुघ्न मथुराविषै राज्य कर। रामके प्रतापसे अनेक राजावोपर आज्ञा करता सोहै, जैसे देवोविषै वरुण सोहै। या भांति मथुरापुरीका ऋद्धिके धारी मुनिनके प्रतापकरि उपद्रव दूर होता भया। जो यह अध्याय बाचे सुने सो पुरुष शुभनाम शुभगोत्र शुभ साता वेदनीयका बंध कर। जो साधुवों की भक्तिविषै अनुरागी होय अर साधुवोंका समागम चाहे वह मनवांछित फलकूं प्राप्त होय। या साधुवोंके संगकू पायकरि धर्मकू आराधकर प्राणी सूर्यसे भी अधिक दीप्तिकू प्राप्त होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै मथुरा का उपसर्ग निवारण वर्णन करनेवाला बानववां पर्व पूर्ण भया ॥ ९२ ॥

अथानन्तर विजयार्धका दक्षिण श्रेणिविषै रत्नपुर नामा नगर, वहां राजा रत्नरथ, उसकी राणी पूर्णचन्द्रानना, उसके पुत्री मनोरमा महा रूपवती। उसे यौवनवती देख राजा वर ढूंढवेकी बुद्धिकर व्याकुल भया। मंत्रियोंसू मंत्र किया कि यह कुमारी कौनकू परणाऊं? या भांति राजा चिंतायुक्त। कई एक दिन गए एक दिन राजाकी सभाविषै नारद आया। राजाने बहुत सन्मान किया। नारद सब ही लौकिक रीतियोविषै प्रवीण, उसे राजाने पुत्रीके विवाहनेका वृत्तांत पूछ्या। तब नारदने कही रामका भाई लक्ष्मण महा सुन्दर है, जगतविषै मुख्य है, चक्रके प्रभावकर नवाए हैं समस्त नरेन्द्र जिसने, ऐसो

कन्या उसके हृदयविषै आनन्ददायिनी होवे, जैसे कुमुदनीके वनकू चांदनी आनन्दायिनी होय। जब या भांति नारदने कही तब रत्नरथके पुत्र हरिवेग मनोवेग वायुवेगादि महामानी स्वजनोके घातकर उपज्या है वैर जिनके, प्रलयकालकी अग्नि समान प्रज्ज्वलित होय कहते भए—जो हमारा शत्रु जिसे हम मारा चाहें उसे कन्या कसै देव? यह नारद दुराचारी ह, इसे यहासे काढहु। ऐसे वचन राजपुत्रोके सुन किकर नारद पर दौडे तब नारद आकाशमाग विहारकर शीघ्र ही अयोध्या लक्ष्मणप आया। अनेक देशातरको वार्ता कह रत्नरथकी पुत्री मनोरमाका चित्राम दिखाया, सो वह कन्या तीनलोककी सुन्दरियोका रूप एकत्र कर मानो बनाई ह। सो लक्ष्मण चित्रपट देख अति मोहित होय कामके वश भया। यद्यपि महा धीर वीर ह तथापि वशीभूत होय गया। मनविषै विचारता भया जो यह स्त्रीरत्न मुझे न प्राप्त होय तो मेरा राज्य निष्फल अर जीतव्य वथा। लक्ष्मण नारदसू कहता भया—हे भगवन! आपने मेरे गणकीत्तन किये, अर उन दुष्टोने आपसू विरोध किया, सो वे पापी प्रचण्ड मानी, महा क्षुद्र, दुरात्मा, कायक विचारसू रहित ह, उनका मान म दूर करूगा। आप समाधानविषै चित्त लावो। तिहारे चरण मेरे सिर पर ह अर उन दुष्टनिकू तिहारे पायन पाडूगा। ऐसा कहकर विराधित विद्याधरकू बुलाया अर कही रत्नपुर ऊपर हमारी शीघ्र ही तयारी हो। तात पत्र लिख सब विद्याधरनिकू बुलावो, रणका सरजाम करावो।

तब विराधितने सबनिकू पत्र पठाये। वे महासेना सहित शीघ्र ही आए। लक्ष्मण राम सहित सब नपोकू लेकर रत्नपुरकी तरफ चाले, जसे लोकपालो सहित इन्द्र चाले। जीत जिसके सन्मुख है, नानाप्रकारके शस्त्रोके समूहकर आच्छादित करी ह सूयकी किरण जानें, सो रत्नपुर जाय पहुँचे, उज्ज्वल छत्रकर शोभित। तब राजा रत्नरथ परचक्र आया जान अपनी समस्त सेना सहित युद्धकू निकस्या महातेजकर, सो चक्र करोत कुठार बाण खडग बरछी पाश गदादि आयुधनिकर तिनके परस्पर महा युद्ध भया। अप्सराओके समूह युद्ध देख योधावो पर पुष्पवृष्टि करते भए। लक्ष्मण परसेना-

रूप समुद्रके सोखिवेकू बडवानल समान आप युद्ध करनेकू उद्यमी भया। परचक्रके योधारूप जलचरों के क्षयका कारण, सो लक्ष्मणके भयकर रथोके, तुरगोके, हाथियोके, असवार सब दशो दिशाओंकू भागे, अर इन्द्रसमान है शक्ति जिनकी, ऐसे श्रीराम अर सुग्रीव हनुमान इत्यादि सब ही युद्धकू प्रवरते। इन योधाओ कर विद्याधरोकी सेना ऐसे भागी जसे पवनकर मेघ पटल विलाय जाव। तब रत्नरथके पुत्रोकू भागते देख नारदने परम हर्षित होय ताली देय हसकर कहा अरे रत्नरथके पुत्र हो! तुम महा चपल, दुराचारी, मदबुद्धि, लक्ष्मणके गुणोकी उच्चता न सह सके तो अब अपमानकू पाय क्यो भागो हो? तब उन्होनें कुछ जवाब नहीं दिया। उसी समय मनोरमा कन्या अनेक सखियो सहित रथपर चढकर महा प्रेमकी भरी लक्ष्मणके समीप आई जसे इन्द्राणी इन्द्रके समीप आव। उसे देख कर लक्ष्मण क्रोधरहित भए भकुटी चढ रही थी सो शीतल वदन भए। कन्या आनन्दकी उपजावन-हारी। तब राजा रत्नरथ अपने पुत्रो सहित मान तज नानाप्रकारकी भेंट लकर श्रीराम लक्ष्मणके समीप आया। राजा देश कालकी विधिकू जान है अर देखा ह अपना अर इनका पुरुषाथ जिसने। तब नारद सबके बीच रत्नरथकू कहते भए। हे रत्नरथ! अब तेरी कहा वार्ता तू रत्नरथ है कि रजरथ ह? वृथा मान कर हुता सो नारायण बलदवोंसे मानकर कहा? अर ताली बजाय रत्नरथके पुत्रोसे हसकर कहता भया—हो रत्नरथके पुत्र हो? यह वासुदेव जिनकू तुम अपने घरविषै उद्धत चेष्टा रूप होय मनवि आया सो ही कही, अब पायन क्यो पडो हो? तब वे कहते भए—हे नारद! तिहारा कोप भी गुण करै, जो तुम हमसे कोप किया तो बडे पुरुषोका सम्बन्ध भया। इनका सम्बन्ध दुलभ ह। या भाति क्षणमात्र वार्ता करि सब नगरविषै गए। श्रीरामकू श्रीदामा परणाई रति समान ह रूप जाका। उसे पायकर राम आनन्दसे रमते भए। अर मनोरमा लक्ष्मणकू परणाई सो साक्षात मनोरमा ही ह। या भाति पुण्यके प्रभावकरि अद्भुत वस्तुकी प्राप्ति होय है। तातै भव्यजीव सूर्यसे अधिक प्रकाशरूप जो

वीतरागका मार्ग उसे जानकर वया धर्मकी आराधना करहु ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रामकू श्रीदामाका लाभ अर लक्ष्मणकू मनोरमाका लाभ वर्णन करने वाला तिराणवेवां पर्व पूर्ण भया ।।७८।।

अथानन्तर और भी विजयार्धके दक्षिण श्रेणीविषै विद्याधर हुते वे सब लक्ष्मणने युद्धकर जीते । कैसा है युद्ध ? जहां नानाप्रकारके शस्त्रोंके प्रहारकरि, अर सेनाके संघट्टकर अंधकार होय रहा है । गौतमस्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक ! वे विद्याधर अत्यन्त दुस्सह महा विषधर समान हुते सो सब राम लक्ष्मणके प्रतापकर मानरूप विषसे रहित होय गए, इनके सेवक भए । तिनकी राजधानी देवोंकी पुरी समान, तिनके नाम कईएक तुझे कहूं हूं—रविप्रभ, घनप्रभ, कांचनप्रभ, मेघप्रभ, शिवमन्दिर, गंधर्वगीत, अमृतपुर, लक्ष्मीधर, किन्नरपुर, मेघकूट, मर्त्यगति, चक्रपुर, रथनूपुर, बहुरव, श्रीमलय, श्रीगृह, अरिंजय भास्करप्रभ, ज्योतिपुर, चन्द्रपुर, गंधार, मलय, सिंहपुर, श्रीविजयपुर, भद्रपुर, यक्षपुर, तिलक, स्थानक इत्यादि बडे बडे नगर सो सब राम लक्ष्मणने वशमें किए । सब पृथ्वीकू जीत सप्त रत्नकर सहित लक्ष्मण नारायणके पदका भोक्ता होता भया । सप्तरत्नोंके नाम चक्र, शंख, धनुष, शक्ति, गदा, खड्ग, कौस्तुभमणि । अर रामके चार हल, मूसल, रत्नमाला, गदा । या भांति दोनों भाई अभेदभाव पृथ्वीका राज्य करैं । तब श्रेणिक गौतम स्वामीकू पूछता भया—हे भगवन ! तिहारे प्रसादसे मैं राम लक्ष्मणका माहात्म्य विधिपूर्वक सुन्या । अब लवण अंकुशकी उत्पत्ति अर लक्ष्मणके पुत्रोंका वर्णन सुना चाहूं हूं, सो आप कहो । तब गौतम गणधर कहते भए—हे राजन ! मैं कहूं हूं सुन—राम लक्ष्मण जगतविषै प्रधान पुरुष निःकंटक राज्य भोगते भए । तिनके दिन, पक्ष, मास वर्ष महा सुखसे व्यतीत होंय । जिनके बडे कुलकी उपजी देवांगना समान स्त्री, लक्ष्मणके सोलह हजार, तिनविषै आठ पटराणी, कीर्तिसमान, लक्ष्मीसमान, रति समान गुणवती, शीलवन्ती, अनेक कलाविषै निपुण,

महा-सौम्य, सुन्दराकार तिनके नाम-प्रथम पटराणी राजा द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या, दूजी रूपवती जिससमान और रूपवान नाहीं, तीजी वनमाला, चौथी कल्याणमाला, पाचमी रतिमाला, छठी जिन पद्मा जिसने अपने मुखकी शोभाकर कमल जीते, सातमी भगवती, आठमी मनोरमा। अर रामके राणी आठ हजार देवांगना समान तिनविषै चार पटराणी जगतविषै प्रसिद्ध है कीर्ति जिनकी। जिनविषै प्रथम जानकी, दूजी प्रभावती, तीजी रतिप्रभा, चौथी श्रीदामा। इन सबोंके मध्य सीता सुन्दर लक्षण ऐसी सोहै ज्यों तारानिविषै चन्द्रकला। अर लक्ष्मणके पुत्र अढाईसै तिनविषै कईयकोंके नाम कहूं हूं सो सुनो-

वृषभ, धरण, चन्द्र, शरभ, मकरध्वज हरिनाग, श्रीधर, मदन। वह महाप्रसिद्ध, सुन्दर चेष्टाके धारक जिनके गुणनिकर सब लोकनिके मन अनुरागी अर विशल्याका पुत्र श्रीधर अयोध्यामें ऐसा सोहै जैसा आकाशविषै चन्द्रमा अर रूपवतीका पुत्र पृथ्वीतिलक, सो पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, अर कल्याण मालाका पुत्र महाकल्याणका भाजन मंगल, अर पद्मावतीका पुत्र विमलप्रभ, अर वनमालाका पुत्र अर्जुनवृक्ष, अर अतिवीर्यकी पुत्रीका पुत्र श्रीकेशी, अर भगवतीकापुत्र सत्यकेशी, अर मनोरमाका पुत्र सुपार्श्वकीर्ति, ये सब ही महा बलवान पराक्रमके धारक,शस्त्र शास्त्र विद्यामें प्रवीण। इन सब भाईनि में परस्पर अधिक प्रीति। जैसे नख मांसमें दृढ, कभी भी जुदे न होवें, तैसे भाई जुदे नाहीं। योग्य है चेष्टा जिनकी, परस्पर प्रेमके भरे, वह उसके हृदयमें तिष्ठै, वह वाके हृदयमें तिष्ठै। जैसे स्वर्गविषै देव रमें तैसे ये कुमार अयोध्यापुरीमें रमते भए। जे प्राणी पुण्याधिकारी है, पूर्व पुण्य उपार्जे है, महा शुभ चित्त है, तिनके जन्मसे लेकर सकल मनोहर वस्तु ही आय मिलै है। रघुवंशिनिके साढे चार-कोटि कुमार महामनोज्ञ चेष्टाके धारक, नगरके वन उपवनादिमें महामनोग्य चेष्टासहित देवनिसमान रमते भए। अर राम लक्ष्मणके सोलह हजार मुकुटबन्ध राजा सूर्यहू तैं अधिक तेजके धारक सेवक होते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणकी ऋद्धि वर्णन करनेवाला चौरानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९४ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मणके दिन अति आनन्दसू व्यतीत होय हैं। धर्म अर्थ काम ये तीनो इनके अविरुद्ध होते भए। एक समय सीता सुखसू विमान समान जो महिल ताविषै शरदके मेघ समान उज्ज्वल सेजपर सोवती थी। सो पिछले पहिर वह कमलनयनी दोय स्वप्न देखती भई। बहुरि दिव्य वादित्रनिके नाद सुन प्रतिबोधकू प्राप्त भई। निर्मल प्रभात भए स्नानादि देहक्रियाकर सखिनसहित स्वामीप गई। जायकर पूछती भई-हे नाथ! मै आज रात्रिविषै स्वप्न देखे तिनका फल कहो। दोय उत्कृष्ट अष्टापद, शरदके चन्द्रमासमान उज्ज्वल, अर क्षोभकू प्राप्त भया जो समुद्र ताके शब्दसमान जिनके शब्द कलाशके शिखर समान सुन्दर, सब आभरणनिकरि मंडित, महामनोहर है केश जिनके, अर उज्ज्वल है दाढ जिनकी, सो मेरे मुखमें पैठे। अर पुष्पक विमानके शिखरसे प्रबल पवनके झकोर करि मैं पृथ्वीविषै पडी। तब श्रीरामचन्द्र कहते भए-हे सुन्दरी! दोय अष्टापद, मुखमें पैठे देख ताके फलकर तेरे दोय पुत्र होयेंगे। अर पुष्पक विमानसे पृथ्वीविषै पडना प्रशस्त नाहीं सो कछु चिंता न करो, दानके प्रभावसे क्रूर ग्रह शांत होवेंगे।

अथानन्तर बसंतसमयरूपी राजा आया, तिलक जातिके वृक्ष फूले, सोई उसके बख्तर, अर नीम जातिके वृक्ष फूले वेई गजराज तिनपर आरूढ, अर आम मौर आये सो मानो बसंतका धनुष, अर कमल फूले सो बसंतके बाण, अर केसरी फूले, वेई रतिराजके तरकश, अर भ्रमर गुंजार करै हैं सो मानो निर्मल श्लोकोकर बसंत नृपका यश गावै है। अर कदम्ब फूले, तिनकी सुगन्ध पवन आवै है, सोई मानो बसंत नृपके निवास भये। अर मालतीके फूल फूले, सो मानो बसंत शीतकालादिक अपने शत्रुनिको हसै है, अर कोयल मिष्ट वाणी बोलै है सो मानो बसंत राजाके वचन हैं। या भांति बसंत समय नृपतिकीसी लीला धरे आया। बसंतकी लीला लोकनिकू कामका उद्वेग उपजावनहारी है। बहुरि यह बसंत मानो सिंह ही है। अंकोट जाति वृक्षादिकके फूल वेई हैं नख जाके, अर कुरवक जातिके वृक्षनिके फूल आए तेई भए दाढ जाके, अर महारक्त अशोकके पुष्प वेई है नेत्र जाके, अर चंचल

पल्लव बेई है जिह्वा जिनकी, ऐसा बसत केसरी आय प्राप्त भया। लोकोंके मनकी वृत्ति, सोई भई गुफा, तिनमें पठा। महेन्द्र नामा उद्यान नन्दनवन समान सदा ही सुन्दर है। सो बसत समय अतिसुदर होता भया। नानाप्रकारके पुष्पनिकी पाखडी अर नानाप्रकारकी कूपल दक्षिणदिशिकी पवनकर हालती भई। सो मानो उन्मत्त भई घूम है। अर वापिका कमलादिककरि आच्छादित अर पक्षिनिके समूह नाद कर हैं। अर लोक सिवाणोपर तथा तीर पर बठे है। अर हस सारस चकवा क्रौंच मनोहर शब्द कर है अर कारड बोल रहे हैं। इत्यादि मनोहर पक्षिनिके मनोहर शब्दकरि रागी पुरुषनिकू राग उपजाव है। पक्षी जलविष पडे है, अर उठ है, तिनकर निमल जल कलोलरूप होय रह्या है। जल तो कमलादिक कर भरया है, अर स्थल जो है सो स्थल पद्मादिक पुष्पनिकर भरे हैं। अर आकाश पुष्पनिकी मकरदकरि मडित होय रह्या है। फूलनिके गुच्छे अर लता वक्ष अनेक प्रकारके फूल रहे हैं। वनस्पतिकी परमशोभा होय रही है। ता समय सीता कछु गभके भारकर दुबल शरीर भई। तब राम पूछते भए—हे काते! तेरे जो अभिलाषा होय सो पूण करू। तब सीता कहती भई—हे नाथ! अनेक चत्यालयनिक दशन करिवेकी मेरे वाछा है। भगवानके प्रतिबिंब पाचो वणके लोकविषै मगलरूप तिनकू नमस्कार करिवेकू मेरा मनोरथ है। स्वण रत्नमई पुष्पनिकर जिनेन्द्रकू पूजू—यह मेरे महा श्रद्धा है। अर कहा वाछू? य सीताके वचन सुनकर राम हर्षित भये, फूल गया है मुख कमल जिनका, राजलोक विष विराजते हुते सो द्वारपालीको बुलाय आज्ञा करी कि हे भद्रे! मत्रिनिकू आज्ञा पहुँचावो जो समस्त चत्यालयनिविष प्रभावना कर। अर महेन्द्रोदयनामा उद्यानविष जे चत्यालय हैं तिनकी शोभा करावें। अर सब लोककू आज्ञा पहुँचावो कि जिनमन्दिरविषै पूजा प्रभावना आदि अति उत्सव कर। अर तोरण ध्वजा घटा झालरी चन्दोवा सायवान महामनोहर वस्त्रनिके बनावें, तथा सुन्दर समस्त उपकरण बहुरा चढावें, लोक समस्त पथ्वीविष जिनपूजा कर। अर कलाश सम्मेदशिखर पावापुर चम्पापुर गिरनार शत्रुजय मागीतुगी आदि निर्वाण क्षेत्रनिविष विशेष शोभा करावो। कल्याणरूप दोहुला सीता

कू उपज्या है सो पृथ्वीविषै जिनपूजाकी प्रवृत्ति करहु । हम सीतासहित धर्मक्षेत्रनिविषै विहार करेंगे ।

यह रामकी आज्ञा सुन वह द्वारपाली अपने ठौर अन्यकू राखकर जाय मंत्रिनिकू आज्ञा पहुँचावती भई । अर वे स्वामीकी आज्ञा प्रमाण अपने किंकरनिकू आज्ञा करते भए । सब चैत्यालयनिविषै शोभा कराई, अर महा पर्वतोंकी गुफाके द्वार पूर्ण कलश थापे, मोतिनिके हारनिकर शोभित, अर विशाल स्वर्णकी भीतिविषै मणिनिके चित्राम रचे । महेन्द्रोदय नाम उद्यानकी शोभा नन्दन वनकी शोभा समानकर अत्यन्त निर्मल शुद्धमणिनिके दर्पण थम्भविषै थापे, अर झरोखनिके मुखविषै निर्मल मोतिनिके हार लटकाये । सो जल नीझरना समान सोहै । अर पांच प्रकारके रत्ननिकी चूर्णकरि भूमि मंडित करी । अर सहस्रदल कमल तथा नानाप्रकारके कमल तिनकर शोभा करी । अर पांच वर्णके मणिनिके दंड तिनविषै महा सुन्दर वस्त्रनिके ध्वजा लगाय मन्दिरनिके शिखर पर चढाई । अर नाना प्रकारके पुष्पनिकी माला जिनपर भ्रमर गुंजार करें, ठौर ठौर लुम्बाई हैं, अर विशाल वादित्रशाला नाट्यशाला अनेक रची हैं तिनकर वन अति शोभै है, मानो नन्दन वन ही है । तब श्री रामचन्द्र इन्द्रसमान सब नगरके लोकनिकर युक्त समस्त राजलोकनिसहित वनविषै पधारे । सीता अर आप गजपर आरूढ कैसे सोहैं जैसे शची सहित इन्द्र ऐरावत गजपर चढे सोहै । अर लक्ष्मण भी परम ऋद्धिकू धरे वनविषै जाते भए । अर और हू सब लोक आनन्दसू वनविषै गये । अर सबनिकू अन्नपान वनहीविषै भया, जहां महा मनोग्य लतानिकू मंडप अर कदलीके वृक्ष तहां राणी तिष्ठी, अर और हू लोक यथायोग्य वनविषै तिष्ठे । राम हाथीतैं उतरकर निर्मल जलका भरा जो सरोवर, नाना प्रकारके कमलनिकर संयुक्त उसविषै रमते भए, जैसे इन्द्र क्षीरसागरविषै रमै । तहां क्रीडाकर जलतैं बाहिर आये । दिव्य सामग्रीकर विधिपूर्वक सीता सहित जिनेन्द्रकी पूजा करते भए । राम महा सुन्दर,अर वनलक्ष्मी समान जे वल्लभा, तिनकर मंडित ऐसे सोहते भये मानो मूर्तिवन्त बसन्त ही है । आठ हजार राणी देवांगना समान तिनके सहित राम ऐसे सोहैं मानो ये तारानिकर मण्डित चन्द्र ही है ।

अमृतका आहार, अर सुगन्धका विलेपन, मनोहर सेज, मनोहर आसन, नानाप्रकारके सुगन्ध माल्यादिक स्पर्श रस गन्धरूप शब्द पाचो इन्द्रियनिके विषय अति मनोहर रामकू प्राप्त भए। जिनमन्दिरविषै भलीविधिसे नृत्य पूजा करो। पूजा प्रभवानाविष रामके अति अनुराग होता भया। सूर्यहूत अधिक तेजके धारक राम देवागना समान सुन्दर जे दारा तिनसहित कईएक दिन सुखसे वनविषै तिष्ठे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष जिनेन्द्रपूजाकी सीताक अभिलाषा गर्भका प्रादुर्भाव वर्णन करनेवाला छियानवेवा पर्व पूर्ण भया॥ ९५॥

अथानन्तर प्रजाके लोक रामके दर्शनकी अभिलाषा कर वनहीविष आए, जस तिसाए पुरुष सरोवर्रविष आव। तब बाहिरले दरवानने लोकोंके आवनेका वृत्तात द्वारपालियोसू कह्या। वे द्वारपाली भीतर राजलोकमें रामसू जायकर कहती भई कि—हे प्रभो! प्रजाके लोक आपके दर्शनकू आए है, अर सीताके दाहिनी आख फुरकी। तब सीता विचारती भई यह आख मुझे क्या कहै ह, कछू दुखका आगमन बताव ह। आगे अशुभके उदयकरि समुद्रके मध्यविष दुख पाए तौ हू दुष्ट कर्म सतुष्ट न भया। क्या और भी दुख दिया चाह ह। जो इस जीवने रागद्वेषके योगकर कर्म उपार्जे है तिनका फल ए प्राणी अवश्य पाव ह, काहूकर निवारा न जाय? सब सीता चितावती होय और राणीनिसू कहती भई—मेरी दाहिनी आख फरकनेका फल कहो। तब एक अनुमतिनामा राणी महा प्रवीण कहती भई—हे देवि! या जीवने जे कर्म शुभ अथवा अशुभ उपार्जे है वे या जीवके भले बुरे फलके दाता है। कर्महीकू काल कहिए, अर विधि कहिए, अर दव कहिए ईश्वर भी कहिए। सब ससारी जीव कर्मनिके आधीन ह। सिद्ध परमेष्ठी कर्मनिसू रहित ह।

बहुरि गुण दोषकी ज्ञाता राणी गुणमाला सीताकू रुदन करती देख धीय बधाय कहती भई—हे देवी! तुम पतिके सबनिविषै श्रेष्ठ हो, तुमकू काहू प्रकारका दु ख नाहीं। अर और राणी कहती

भई बहुत विचारकर कहा ? शांतिकर्म करो, जिनेन्द्रका अभिषेक अर पूजा करावो, अर किमिइच्छक दान देवो। जाकी जो इच्छा होय सो ले जावो। दान पूजाकर अशुभका निवारण होय है। तातें शुभ कार्यकर अशुभकूं निवारो। या भांति इन्होंने कही तब सीता प्रसन्न भई अर कही—योग्य है, दान पूजा अभिषेक अर तप ये अशुभके नाशक हैं। दान धर्म विघ्नका नाशक, वैरका नाशक है पुण्यका अर जशका मूल कारण है। यह विचारकर भद्रकलश नामा भंडारीकूं बुलायकर कही—मेरे प्रसूति होय तौलग किमिच्छा दान निरन्तर देवो। तब भद्रकलशने कही जो आप आज्ञा करोगी सो ही होयगा। यह कहकर भंडारी गया अर जिनपूजादि शुभक्रियाविषै प्रवर्ता। जितने भगवानके चैत्यालय हैं तिन विषै नाना प्रकारके उपकरण चढाये। अर सब चैत्यालयनिविषै अनेक प्रकारके वादित्र बजवाए। मानो मेघ ही गाजे हैं। अर भगवानके चरित्र पुराण आदि ग्रंथ जिनमंदिरनिविषै पधराए। अर दूध दही घृत जल मिष्टान्नके भरे कलश अभिषेककूं पठाए। अर खोजाओंविषै प्रधान जो खोजा सो वस्त्राभूषण पहरे हाथी चढा नगरविषै घोषणा फेरै—जाकूं जो इच्छा होय सो ही लेवो। या भांति विधिपूर्वक दान पूजा उत्सव कराए। लोक पूजा दान तप आदिविषै प्रवर्ते, पापबुद्धिरहित समाधानके प्राप्त भए। सीता शांतिचित्त धर्मविषै अनुरक्त भई, अर श्रीरामचन्द्र मण्डपविषै आय तिष्ठे। द्वारपालने जे नगरीके लोक आए हुते ते रामसे मिलाए। स्वर्ण रत्नकर निर्मापित अद्भुत सभाकूं देख प्रजाके लोक चकित होय गए। हृदयकूं आनन्दके उपजावनहारे राम तिनकूं देखकर नेत्र प्रसन्न भए। प्रजाके लोक हाथ जोड नमस्कार करते भए। कांपै हैं तन जिनका, अर डर है मन जिनका। तब राम कहते भए, हे लोको ! तिहारे आगमनका कारण कहो। तब विजय, सुराजी, मधुमानव, सुलोधर, काश्यप, पिंगल, कालोप इत्यादि नगरके मुखिया मनुष्य निश्चल होय चरणनिकी तरफ चोके। गल गया है गर्व जिनका राजतेजके प्रतापकरि कछु कह न सकें। यद्यपि चिरकालमें सोच सोच कहा चाहैं तथापि इनके मुखरूप मंदिरसे वाणीरूप वधू न निकसे। तब रामने बहुत दिलासा कर कही तुम कौन अर्थ आए हो सो

कहो। या भांति कही तो भी वे चित्राम कस होय रहे, कछु न कह। लज्जारूप फासकर बधा है कठ जिनका, अर चलायमान है नेत्र जिनके, जसे हिरणके बालकक् व्याकुल चित्त तसे देखे। तब तिनविषै मुख्य विजयनाम पुरुष, चलायमान ह शब्द जिसका, सो कहता भया, हे देव! अभयदानका प्रसाद होय। तब रामन कही तुम काहू बातका भय मत करहु, तिहारे चित्तविष जो होय सो कहो। तिहारा दु ख दूरकर तुमको साता उपजाऊगा, तिहारे औगुन न लू गा, गुण ही लू गा। जसे मिले हुए दूध जल तिनमें जलकू टार हस दूध ही पीव ह। श्रीरामने अभयदान दिया तो भी अतिकष्टसे विचार २ धीरे स्वरकर विजय हाथजोड सिर निवाय कहता भया कि–हे नाथ नरोत्तम! एक विनती सुनो। अब सकल प्रजा मर्यादा रहित प्रवर्ते ह। यह लोक स्वभाव ही से कुटिल ह। अर एक दृष्टात प्रकट पावें तब इनकू अकाय करनविष कहा भय ?

जसे बानर सहज ही चपल हैं अर महाचपल जो यन्त्र-पिंजरा उसपर चढा तब कहा कहना ? निबलो की यौवनवती स्त्री पापी बलवत छिद्र पाय बलात्कार हर ह। अर कोईएक शीलवती विरहकर पराये घर अत्यन्त दुखी होय ह तिनकू कईएक सहाय पाय अपने घर ले आव ह। सो धमकी मर्यादा जाय ह, यह न जाय सो यत्न करहु। प्रजाके हितकी वाच्छा करहु। जिस विधि प्रजाका दुख टरै सो करहु। या मनुष्य लोकविषै तुम बडे राजा हो। तुम समान अर कौन ? तुम ही जो प्रजाकी रक्षा न करोगे तो कौन करेगा ? नदियोके तट, तथा वन उपवन कूप वापिका सरोवरके तीर, ग्राम ग्रामवष, घर घरविष, सभाविष, एक यही अपवादकी कथा ह और नाहीं कि श्रीराम राजा दशरथके पुत्र, सब शास्त्रविष प्रवीण। सो रावण सीताकू हर लेगया, ताहि घरविष लेआये, तब औरनिकू कहा दोष है ? जो बडे पुरुष कर सो सब जगतकू प्रमाण। जिस रीति राजा प्रवर्तै उसी रीति प्रजा प्रवर्तै। "यथा राजा तथा प्रजा" यह वचन ह। या भांति दुष्टचित्त निरकुश भए पृथ्वीविष अपवाद कर ह तिनका निग्रह करहु। हे देव! आप मर्यादाके प्रवतक पुरुषोत्तम हो। एक यही अपवाद तिहारे राज्यविष न होता तो तिहारा यह

राज्य इन्द्रसे भी अधिक है। यह वचन विजयके सुनकर क्षणएक रामचन्द्र विषादरूप मुद्गर के मारे चलायमान चित्त होय गए। चित्तविषै चितवते भए यह कौन कष्ट उपज्या? मेरा यशरूप कमलोंका वन अपयशरूपी अग्निकर जलने लाग्या है। जिस सीताके निमित्त मैं विरहका कष्ट सहा सो मेरे कुलरूप चन्द्रमाकूं मलिन करै है। अयोध्याविषै मैं सुखके निमित्त आया। अर सुग्रीव हनुमानादिकसे मेरे सुभट सो मेरे गोत्ररूप कुमुदिनीकूं यह सीता मलिन करै है। जिसके निमित्त मैंने समुद्र तिरि रण-संग्रामकर रिपुकूं जीत्या सो जानकी मेरे कुलरूप दर्पणको कलुषित करै है। अर लोक कहै सो साच है। दुष्ट पुरुषके घरविषै तिष्ठी सीता मैं क्यों लाया? अर सीतासे मेरा अति प्रेम, जिसे क्षणमात्र न देखूं तो विरहकर आकुलता लहूं, अर वह पतिव्रता मोसे अनुरक्त, उसे कैसे तजूं? जो सदा मेरे नेत्र अर उरविषै बसै, महागुणवती निर्दोष सीता सती, उसे कैसे तजूं? अथवा स्त्रियोंके चित्तकी चेष्टा कौन जाने, जिनविषै सब दोषोंका नायक मन्मथ बसै है। धिक्कार स्त्रीके जन्मकूं। सर्वदोषोंकी खान, आतापका कारण, निर्मल कुलविषै उपजे पुरुषोंकूं कर्दम समान मलिनताका कारण है, अर जैसे कीचविषै फसा मनुष्य तथा पशु निकल न सकै स्त्रीके रागरूप पंकविषै फसा प्राणी निकस न सकै। यह स्त्री समस्त बलका नाश करणहारी है, अर रागका आश्रय है, अर बुद्धिकूं भ्रष्ट करै है, अर सत्यतैं पटवेकूं खाई समान है, निर्वाण सुखकी विघ्न करणहारी, ज्ञानकी उत्पत्तिकूं निवारणहारी, भवभ्रमणका कारण है, भस्मसे दबी अग्निके समान दाहक है, डाभकी सुई समान तीक्ष्ण है, देखवे मात्र मनोज्ञ परन्तु अपवादका कारण। ऐसी सीता उसे मैं दुख दूर करिवेनिमित्त तजूं, जैसै सर्प कांचिलीकूं तजै। फिर जिसकर मेरा हृदय तीव्रस्नेहके बन्धनकर वशीभूत सो कैसे तजी जाय, यद्यपि मैं स्थिर हूं, तथापि यह जानकी निकटवर्तिनी अग्निकी ज्वाला समान मेरे मनकूं आताप उपजावै है। अर यह दूर रही भी मेरे मनकूं मोह उपजावै, जैसे चन्द्ररेखा दूरही से कुमुदिनीकूं विकसित करै। एक ओर लोकापवादका भय, अर एक ओर सीताके दुर्निवार स्नेहका भय। अर रागकर विकल्पके सागर

विषै पड्या हूं। अर सीता सब प्रकार देवांगनासे भी श्रेष्ठ महापतिव्रता, सती शीलरूपिणी मोसूं सदा एकचित्त, उसे कैसें तजूं अर जो न तजूं तो अपकीर्ति प्रकट होय है। इस पृथ्वीविषै मोसमान और दीन नाहीं। स्नेह अर अपवादका भय उसविषै लाग्या है मन जिसका, दोनोंकी मित्रताका तीव्र विस्तार देखकर वशीभूत जो राम सो अपवादरूप तीव्र कष्टकूं प्राप्त भए। सिंहकी है ध्वजा जिसके ऐसे राम तिनकूं दोनो बातोंकी अति आकुलतारूप चिंता असाताका कारण दुस्सह आताप उपजावती भई, जैसे ज्येष्ठके मध्याह्नका सूर्य दुस्सह दाह उपजावै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रामके लोकापवादकी चिन्ताका वर्णन करनेवाला छियानवेवा पर्व पूर्ण भया ॥ ९६ ॥

अथानन्तर श्रीराम एकाग्र चित्त कर द्वारपालकूं लक्ष्मणके बुलावनेकी आज्ञा करते भये। सो द्वारपाल लक्ष्मणपै गया, आज्ञा प्रमाण तिनकूं कही। लक्ष्मण द्वारपालके वचन सुनकर तत्काल तेज तुरंगपर चढि रामके निकट आया। हाथ जोड नमस्कारकर सिंहासनके नीचे पृथ्वीपर बैठा, रामके चरणोंकी ओर है दृष्टि जाकी। राम उठकर आधे सिंहासन पर ले बैठे, शत्रुघ्न आदि सब ही राजा, अर विराधित आदि सब ही विद्याधर, यथायोग्य बैठे। पुरोहित श्रेष्ठी मन्त्री सेनापति सब ही सभा में तिष्ठे। तब क्षणएक विश्रामकर रामचन्द्रने लक्ष्मणसूं लोकापवादका वृत्तांत कहा। सुनकर लक्ष्मण क्रोधकर लालनेत्र भए अर योधावोंकूं आज्ञा करी—अबार मैं उन दुर्जनोंके अंत करिवेकूं जाऊंगा, पृथ्वीकूं मृषावादरहित करूंगा। जे मिथ्या वचन कहै हैं तिनकी जिह्वा छेद करूंगा। उपमा रहित जो शीलव्रतकी धारणहारी सीता ताकी जे निन्दा कर है तिनका क्षय करूंगा। या भांति लक्ष्मण महा क्रोधरूप भए, नेत्र अरुण होय गए। तब श्रीराम इन वचनोंसे शांत करते भए कि—हे सौम्य! यह पृथ्वी सागर पर्यन्त ताकी श्रीऋषभदेवने रक्षा करी। बहुरि भरतने प्रतिपालना करी। अर इक्ष्वाकु-वंशके तिलक बडे बडे राजा भए, जिनकी पीठ रणमें रिपुओंने न देखी, जिनकी कीर्तिरूप चान्दनी

से यह जगत् शोभित है, सो अपने वशविषै अनेक यशके उपजावनहारे भए। अब मैं क्षणभंगुर पाप रूप रागके निमित्त यशकूं कैसे मलिन करूं ? अल्प भी अकीर्ति जो न टारिए तो वृद्धिकूं प्राप्त होय, अर उन नीतिवान पुरुषोकी कीर्ति इन्द्रादिक देवोंसूं गाइए है। ये भोग विनाशीक तिनसे क्या ? जिनसे अकीर्तिरूप अग्निकीर्ति वनकूं बाले। यद्यपि सीता सती शीलवती निर्मल चित्त है तथापि इसको घरविषै राखै मेरा अपवाद न मिटै। यह अपवाद शस्त्रादिकसे हता न जाय। यद्यपि सूर्य कमलोंके वनका प्रफुल्लित करणहारा है, अति तिमिरका हरणहारा है तथापि रात्रिके होते सूर्य अस्त होय है। तैसे अपवादरूप रज महा विस्तारकूं प्राप्त भई तेजस्वी पुरुषोकी कांतिकी हानि करै है। सो यह रज निवारनी चाहिए। हे भ्रात ! चन्द्रमा समान निर्मल गोत्र हमारा अकीर्तिरूप मेघमालासूं आच्छादा जाय है, सो न आच्छादा जाय—यही मेरे यत्न है। जैसे सूखे इन्धनके समूहविषै लगी आग जलसूं बुझाए विना वद्धिकूं प्राप्त होय है तैसे अकीर्तिरूप अग्नि पृथ्वीविषै विस्तरै है सो निवारे विना न मिटै। यह तीर्थंकर देवोंका कुल महा उज्ज्वल प्रकाशरूप है याकूं कलंक न लगे। सो उपाय करहु। यद्यपि सीता महा निर्दोष शीलवती है तथापि मैं तजूंगा अपनी कीर्ति मलिन न करूंगा। तब लक्ष्मण कहता भया। कैसा है लक्ष्मण ? रामके स्नेहविषै तत्पर है बुद्धि जाकी। हे देव ! सीताकूं शोक उपजावना योग्य नाहीं। लोकतो मुनियोंका भी अपवाद करै है, जिनधर्मका अपवाद करै है। तो क्या लोकापवादसे धर्म तजिए है ? तैसे लोकापवादमात्रसूं जानकी कैसे तजिए, जो सब सतियोंके सीस विराजै है, काहू प्रकार निंदाके योग्य नाहीं। अर पापी जीव शीलवंत प्राणियोंकी निन्दा करै है। क्या तिनके वचनसे शीलवतोंकूं दोष लागै है ? वे निर्दोष ही है। ये लोक अविवेकी है। इनके वचनविषै परमार्थ नाहीं। विषकर दूषित हैं नेत्र जिनके, वे चन्द्रमाकूं श्यामरूप देखै है, परन्तु चन्द्रमा श्वेत ही है, श्याम नाहीं। तैसे लोकोंके कहें निकलंकियोंकूं कलंक नाहीं लागै है। जे शीलसे पूर्ण है तिनकूं अपना आत्मा ही साक्षी है, परजीवनिका प्रयोजन नाहीं। नीच जीवनिके अपवादकरि पण्डित विवेकी क्रोधकूं न प्राप्त होय, जैसे

श्वानके भोकनेत गजेन्द्र नाहीं कोप कर ह । ये लोक विचित्रगति ह, तरग समान ह चेष्टा जिनकी, परदोषकथिवे विष आसक्त । सो इन दुष्टोका स्वयमेव ही निग्रह होयगा । जसे कोई अज्ञानी शिलाकू उपाडकर चन्द्रमाकी ओर बगाय (फेंककरि) बहुरि मारा चाहे सो सहज ही आप नि सदेह नाशकू प्राप्त होय ह । जो दुष्ट पराए गुणनिकू न सहि सक अर सदा पराई निन्दा कर ह सो पापकर्मी निश्चय सेती दुर्गतिकू प्राप्त होय ह ।

जब एसे वचन लक्ष्मणने कहे तब श्रीरामचन्द्र कहते भये-हे लक्ष्मण ! तू कह ह सो सब सत्य ह । तेरी बुद्धि रागद्वेषरहित, अति मध्यस्थ, महा शोभायमान ह, परन्तु जे शुद्ध न्यायमार्गी मनुष्य हैं वे लोकविरुद्ध कार्यकू तज ह । जाकी दशो दिशामें अकीर्तिरूप दावानलकी ज्वाला प्रज्वलित है ताकू जगतमें कहा सुख अर कहा ताका जीतव्य ? अनर्थका करणहारा जो अर्थ ताकरि कहा, अर विषकर सयुक्त जो औषधि ताकरि कहा ? अर बलवान होय जीवनिकी रक्षा न कर शरणागतपालक न होय, ताके बलकर कहा ? अर जाकर आत्मकल्याण न होय ता आचरणकर कहा? चारित्र सोई जो आत्महित कर । अर जो अध्यात्मगोचर आत्माकू न जाने ताके ज्ञानकर कहा ? अर जाकी कीर्तिरूप वधू अपवाद रूप बलवान हर ताका जन्म प्रशस्त नाहीं, ऐसे जीवनत मरण भला । लोकापवादकी बात दूर ही रहो, मोहि यह महा दोष ह जो परपुरुषने हरी सीता म बहुरि घरमें ल्याया । राक्षसक भवनमें उद्यान तहा यह बहुत दिन रही, अर ताने दूती पठाय मनबाछित प्रार्थना करी, अर समीप आय दुष्ट दृष्टि करि देखी, अर मनमें आए सो वचन कहे । ऐसी सीता म घरमें ल्याया । या समान अर लज्जा कहा? सो मूढोसे कहा न होय ? या ससारकी मायाविष मैं हू मूढ भया । या भाति कहकर आज्ञा करी जो शीघ्र ही कृतान्तवक्र सेनापतिकू बुलावो । यद्यपि दो बालकनिके गर्भसहित सीता ह तौ हू याहि तत्काल मेरे घरत निकासो, यह आज्ञा करी । तब लक्ष्मण हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया—हे देव ! सीता कू तजना योग्य नाहीं । यह राजा जनककी पुत्री, महा शीलवती, जिनधर्मिणी, कोमल चरणकमल

जाके, महा सुकुमार, भोरी, सदा सुखिया, अकेली कहा जायगी ? गर्भके भारकर संयुक्त परम खेदकू धरे यह राजपुत्री तिहारे तजे कौनके शरण जायगी ? अर आपने देखवेकी कही सो देखवेकर कहा दोष भला ? जैसे जिनराजके निकट चढाया द्रव्य निर्माल्य होय है, ताहि देखिए है, परन्तु दोष नाहीं। अयोग्य अभक्ष्य वस्तु आखिनिसू देखिये है परन्तु देखे दोष नाहीं, अंगीकार कीये दोष है। तात हे नाथ ! मोपर प्रसन्न होहु, मेरी विनती सुनहु, महा निर्दोष सीता सती, तुमविषै एकाग्र है चित्त जाका, ताहि न तजो। तब राम अत्यन्त विरक्त होय क्रोधमें आए गए अर अप्रसन्न होय कही—लक्ष्मण ! अब कछू न कहना। मै यह अवश्य निश्चय किया, शुभ होव अथवा अशुभ होव, निमानुषवन जहां मनुष्यका नाम नाहीं सुनिए वहां द्वितीय सहायरहित अकेली सीताकू तजहु। अपने कर्मके योगकरि जीवो अथवा मरो। एक क्षणमात्र हू मेरे देशविषै, अथवा नगरविषै, काहूके मन्दिरविषै मत रहो। वह मेरी अपकीर्तिकी करणहारी है। कृतान्तवक्रकू बुलाया। सो चार घोडका रथ चढा बडी सेनासहित जाका बंदीजन विरद बखान है, लोक जय जयकार कर है सो राजमार्ग होय आया। जापर छत्र फिरता अर धनुष चढाय बखतर पहिरे कुण्डल पहिरें ताहि या विधि आवता देख नगरके नर नारी अनेक विकल्प की वार्ता करते भये। आज यह सेनापति शीघ्र दौडा जाय है कौन पर विदा होयगा ? आप कौन पर कोप भए हैं ? आज काहूका कछू बिगाड है ? ज्येष्ठके सूर्य समान ज्योति जाकी, काल समान भयंकर शस्त्रनिके समूहके मध्य चला जाय है सो आज न जानिए कौन पर कोप है ? या भांति नगरके नर नारी वार्ता करै हैं। अर सेनापति रामदेव समीप आया। स्वामीकू सीस निवाय नमस्कार कर कहता भया—हे देव ! जो आज्ञा होय सो ही करूं।

तब रामने कही, शीघ्रही सीताकू ले जावो। अर मार्गविषै जिनमन्दिरनिका दर्शन कराय सम्मेदशिखर अर निर्वाणभूमि तथा मार्गके चैत्यालय तहां दर्शन कराय वाकी आशा पूर्णकर, अर सिंहनाद नामा अटवी जहां मनुष्यका नाम नाहीं तहां अकेली मेल, उठ आवो। तब ताने कही जो आज्ञा होयगी

सोही होयगा, कछू वितर्क न करहु। अर जानकीप जाय कही—हे माता! उठो रथविषै चढो, चैत्यालयनिकी वाछा है सो करो। या भाति सेनापतिने मधुरस्वरकर हर्ष उपजाया। तब सीता रथ चढ़ी, चढ़ते समय भगवानकू नमस्कार किया अर यह शब्द कहा जो चतुर्विध संघ जयवंत होवें। श्रीरामचन्द्र महाजिनधर्मी उत्तम आचरणविषै तत्पर सो जयवंत होहु। अर मेरे प्रमादसे असुन्दर चेष्टा भई होय सो जिनधर्मके अधिष्ठाता देव क्षमा करहु। अर सखीजन लार भए तिनसू कही तुम सुखसे तिष्ठो, मैं शीघ्र ही जिनचैत्यालयनिके दर्शनकर आऊ हू, या भाति तिनसे कही। अर सिद्धनिकू नमस्कारकर सीता आनन्दसे रथ चढ़ी। सो रत्न स्वर्णका रथ तापर चढी ऐसी सोहती भई जैसी विमान चढ़ी देवागना सोहै। वह रथ कृतांतवक्रने चलाया सो ऐसा शीघ्र चलाया जैसा भरत चक्रवर्तीका चलाया बाण चले। सो चलते समय सीताकू अपशकुन भए, सूखे वृक्षपर काग बैठा, विरस शब्द करता भया, अर माथा धुनता भया। अर सन्मुख स्त्री महा शोककी भरी, शिरके बाल बखेरे रुदन करती भई। इत्यादि अनेक अपशकुन भए तो पुणि सीता जिनभक्तिविषै अनुरागिणी निश्चलचित्त चली गई, अपशकुन न गिने। पहाडनिके शिखर कन्दरा अनेक वन उपवन उलघकर शीघ्र ही रथ दूर गया। गरुड समान वेग जाका ऐसे अश्वनिकर युक्त सफेद ध्वजाकर विराजित सूर्यके रथ समान रथ शीघ्र चला। मनोरथ समान वह रथ तापर चढी रामकी राणी इन्द्राणीसमान सो अति सोहती भई। कृतांतवक्र सारथीने मार्गविषै सीताकू नानाप्रकारकी भूमि दिखाई, ग्राम नगर वन अर कमलसे फूल रहे हैं सरोवर, नानाप्रकारके वृक्ष, कहू सघन वृक्षनिकर वन अन्धकाररूप है, जैसे अंधेरी रात्रि मेघमालाकर मंडित महा अंधकाररूप भासै, कछू नजर न आवै। अर कहू विरले वृक्ष हैं सघनता नाहीं, तहा कैसा भासै है? जैसा पचमकालमें भरत ऐरावत क्षेत्रनिकी पृथ्वी विरले सत्पुरुषनिकरि सोहै। अर कहू वनी पतझर होय गई है सो पत्ररहित, पुष्प फलादिरहित छायारहित दीखै जैसै बडे कुलकी स्त्री विधवा। भावार्थ—विधवा हू पुत्ररूपी पुष्प फलादि रहित हैं अर आभरण तथा सुन्दर वस्त्रादिरहित, अर कांतिरहित है, शोभा

रहित है, सो तैसी वनी दीख है। अर कहूइक वनविषै सुन्दर माधुरीलता आम्रके वृक्षसे लगी ऐसी सोहै है जैसी चपल वेश्या, आम्रसू लगि अशोककी वाछा करै है। अर कईएक दावानलकर वृक्ष जर गए हैं सो नाहीं सोहै हैं, जैसे हृदय क्रोधरूप दावानलकरि जरा न सोहै। अर कहूइक सुन्दर पल्लवनि के समूह मंद पवनकर हालते सोहै हैं, मानो वसतराजके आयवेकर बनपंक्तिरूप नारी आनन्दसे नृत्य ही करै हैं। अर कहूइक भीलनिके समूह तिनके जे कलकलाट शब्दकर मृग दूर भाग गए हैं, अर पक्षी उड गए हैं। अर कहूइक वनी, अल्प है जल जिनमें ऐसी नदी तिनकर कैसी भासै है ? जैसी संतापकी भरी विरहिनी नायिका असुवनकर भरे नेत्र संयुक्त भासै। अर कहू इक वनी नाना पक्षिनिके नादकर मनोहर शब्द करै है। अर कहूइक नीझरनावोके नादकरि शब्द करती तीव्र हास्य करै है। अर कहू इक मकरंदमें अति लुब्ध जे भ्रमर तिनके गुंजारकरि मानो वनी वसंत नृपकी स्तुति ही करै है। अर कहूइक वनी फूलनिकर नम्रीभूत भई शोभाकू धरै है, जैसे सफल पुरुष दातार नम्रीभूत भए सोहैं हैं। कहूइक वायुकर हालते जे वृक्ष तिनकी शाखा हालै है अर पल्लव हालै है अर पुष्प पडै है सो मानो पुष्पवृष्टिही करै है। इत्यादि रीतिकू धरे वनी अनेक क्रूर जीवनिकर भरी ताहि देखती सीता चली जाय है, रामविषै है चित्त जाका, मधुर शब्द सुनकर विचारती भई मानो रामके दुदुभी बाजे बाजै है। या भांति चितवती सीता आगे गंगाका देखती भई। कैसी है गंगा ? अति सुंदर हैं शब्द जाके, अर जाके मध्य अनेक जलचर जीव मीन मकर ग्रहादिक विचरै है, तिनके विचरिवेकरि उद्धत लहर उठै हैं, तातै कम्पायमान भए हैं कमल जाविषै, अर मूलसे उपाडे हैं तीरके उतंग वृक्ष जाने, अर उखाडे हैं पर्वतनिके पाषाणोके समूह जाने, समुद्रकी ओर चली जाय है, अति गम्भीर है, उज्ज्वल फूलोकर शोभै है, झागोके समूह उठै है, अर भ्रमते जे भंवर तिनकर महा भयानक है। अर दोनो ढाहावोंपर बैठे पक्षी शब्द करै हैं सो परमतेजके धारक रथके तुरंग ता नदीको तिर पार भए, पवन समान है वेग जिनका, जैसे साधु संसार समुद्रके पार होय।

नदीके पार जाय सेनापति यद्यपि मेरुसमान अचलचित्त हुता तथापि दयाके योगकर अति विषाद कू प्राप्त भया। महा दुखका भरया कछू न कहि सके, आखनितै आसू निकल आए। रथकू थाभ ऊँचे स्वरकर रुदन करने लगा। ढीला होय गया ह अग जाका, जाती रही है काति जाकी। तब सीता सती कहती भई—हे कतातवक्र! तू काहेकू महादुखीकी न्याईं होवे है? आज जिनवन्दनाके उत्सव का दिन, तू हर्षमें विषाद क्यो करे है? या निर्जन वनमें क्यो रोवे ह? तब वह अति रुदनकर वृत्तात कहता भया। जो वचन विषसमान अग्नि समान शस्त्र समान है। हे मात! दुर्जननिके वचनत राम अकीर्तिके भयसे जो न तजा जाय तिहारा स्नेह ताहि तजकर चत्यालयनिके दर्शनकी तिहारे अभिलाषा उपजी हुती सो तुमकू चत्यालयोके अर निर्वाणक्षेत्रोके दर्शन कराय भयानक वनविष तजी ह। हे देवी! जस यति रागपरणतिकू तज तस रामने तुमकू तजी ह। अर लक्ष्मणने जो कहिवेकी हद थी सो कही, कछू कमी न राखी। तिहारे अर्थि अनेक न्यायके वचन कहे, परन्तु रामने हठ न छोडी। हे स्वामिनि! राम तुमसे निराग भए। अब तुमकू धम ही शरण है। सो या ससारविष न माता, न पिता, न भ्राता, न कुटुम्ब एक धम ही जीवका सहाई ह। अब तुमकू यह मगोका भरा वन ही आश्रय है। ये वचन सीता सुनकर वज्रपातकी मारी जसी होय गई। हृदयविष दुखके भारकर मूर्छाकू प्राप्त भई। बहुरि सचेत होय गदगद वाणीसू कहती भई—शीघ्र ही मोहि प्राणनाथसू मिलाओ। तब वाने कही—हे माता! नगरी दूर रही, अर रामका दर्शन दूर। तब अश्रुपातरूप जलकी धारासू मुखकमल प्रक्षालती हुई कहती भई कि हे सेनापति! तू मेरे वचन रामसू कहियो कि मेरे त्यागका विषाद आप न करणा, परम धीर्यकू अवलम्बनकर सदा प्रजाकी रक्षा करियो, जसे पिता पुत्रकी रक्षा कर। आप महान्यायवत हो अर समस्त कलाके पारगामी हो, राजाकू प्रजा ही आनन्दका कारण ह। राजा वही जाहि प्रजा शरदकी पूनोके चन्द्रमाकी न्याई चाहे। अर यह ससार असार ह, महा भयकर दुखरूप है। जा सम्यग् दर्शनकर भव्यजीव ससारसू मुक्त होवे है सो तिहारे आराधिवे योग्य ह। तुम राजतै सम्यग्दर्शनकू विशेष

भला जानियो। यह राज्य तो विनाशीक है अर सम्यग्दर्शन अविनाशी सुखका दाता है सो अभव्य जीव निंदा करै तो उनकी निंदाके भयसे हे पुरुषोत्तम! सम्यग्दर्शनकूं कदाचित न तजना। यह अत्यन्त दुर्लभ है। जैसैं हाथविषै आया रत्न समुद्रविषै डालिए तौ बहुरि कौन उपायसूं हाथ आवै। अर अमृतफल अंधकूपमें डारया बहुरि कैसे मिले? जैसे अमृतफलकूं डाल बालक पश्चात्ताप करै तैसे सम्यग्दर्शनसे रहित हुवा जीव विषाद करै है। यह जगत दुर्निवार है, जगतका मुख बन्द करवेकूं कौन समर्थ है? जाके मुखमें जो आवै सो ही कहै। तातैं जगतकी बात सुनकर जो योग्य होय सो करियो। लोक गडरिया प्रवाह है सो अपने हृदयविषै हे गुणभूषण! लौकिक वार्ता न धरणी, अर दानकरि, प्रीतिके योगकरि जनोंकूं प्रसन्न राखना। अर विमल स्वभावकर मित्रोंकूं वश करना अर साधु तथा आर्यिका आहारकूं आवैं तिनकूं प्रासुक अन्नसूं अति भक्तिकर निरंतर आहार देना। अर चतुर्विध संघकी सेवा करनी। मन वचन कायकरि मुनिकूं प्रणाम पूजन अर्चनादिकरि शुभ कर्म उपार्जना करना। अर क्रोधकूं क्षमाकरि, मानकूं निर्गवता करि, मायाकूं निष्कपटताकरि, लोभकूं संतोषकरि जीतना। आप सब शास्त्रविषै प्रवीण हो सो हम तुमकूं उपदेश देनेकूं समर्थ नाहीं, क्योंकि हम स्त्रीजन हैं। आपकी कृपाके योगकरि कभी कोई परिहास्यकरि अविनय भरा वचन कहा हो तो क्षमा करियो। ऐसा कहकर रथसूं उतरी अर तृण पाषाणकरि भरी जो पृथ्वी उसमें अचेत होय मूर्छा खाय पडी। सो जानकी भूमिविषै पडी ऐसी सोहती भई मानो रत्नोंकी राशिही पडी है।

कृतांतवक्र सीताकूं चेष्टारहित मूर्छित देख महा दुखी भया, अर चित्तविषै चितवता भया—हाय! यह महा भयानक वन अनेक दुष्ट जीवोंकरि भरया, जहां जे महा धीर शूरवीर होय तिनके भी जीवनेकी आशा नाहीं तो यह कैसे जीवेगी? इसके प्राण बचना कठिन है। इस महासती माताकूं मैं अकेली वनविषै तजकर जाऊं हूं सो मुझ समान निर्दई कौन? मुझे किसी प्रकार भी किसी ठौर शांति नाहीं। एक तरफ स्वामीकी आज्ञा, अर एक तरफ ऐसी निर्दयता! मैं पापी दुखके भंवर

विषै पडा हू। धिक्कार पराई सेवाकू, जगतविषै निंद्य पराधीनता, जो स्वामी कहे सो ही करना, जैसे यन्त्रकू यन्त्री बजाव त्योही बाजै। सो पराया सेवक यन्त्र तुल्य है। अर चाकरसू कूकर भला जो स्वाधीन आजीवका पूर्ण करै है। जैसे पिशाचके वश पुरुष ज्यो वह बकावै त्यो बकै, तैसे नरेन्द्रके वश नर, वह जो आज्ञा करै सो कर। चाकर क्या न कर अर क्या न कहै ? अर जैसे चित्रामका धनुष निष्प्रयोजन गुण कहिये फिणचकू धर ह, सदा नम्रीभूत है, तसे परकिंकर नि:प्रयोजन गुणकू धरे है, सदा नम्रीभूत ह। धिक्कार किंकरका जीवना। पराई सेवा करना तेजरहित होना है। जैसे निर्माल्य वस्तु निंद्य है, तसे परकिंकरता निंद्य ह। धिग २ पराधीनके प्राण धारणकू। यह पराधीन पराया किंकर टीकली समान ह। जस टीकली परतन्त्र होय कूपका जीव कहिए जल हर ह तैसे यह परतन्त्र होय पराए प्राण हर है। कभी भी चाकरका जन्म मत होवे। पराया चाकर काठकी पूतली समान है। ज्यो स्वामी नचाव त्यो नाच। उच्चता, उज्ज्वलता, लज्जा, अर काति, तिनसे परकिंकर रहित ह। जसै विमान पराये आधीन ह, चलाया चाले, थमाया थमें, ऊचा चढावे तो ऊचा चढे, नीचा उतारे तो नीचा उतरे। धिक्कार पराधीनके जीतव्यकू जो निबल, अपने मासकू बेचनहारा, महालघु, अपने अधीन नहीं, सदा परतन्त्र, धिक्कार किंकरके प्राण धारणकू। मै पराई चाकरी करी, अर परवश भया, तो ऐसे पाप कमकू करू हू, जो इस निर्दोष महासतीकू अकेली भयानक बनविषै तजकर जाऊ हू। हे श्रेणिक! जैसे कोई धमकी बुद्धिकू तज तैस वह सीताकू वनविषै तजकर अयोध्याकू सन्मुख भया। अतिलज्जावान होयकर चाल्या। सीता याके गए पाछे केतीक वारमें मूर्च्छासे सचेत होय महा दुखकी भरी यूथभ्रष्ट मृगीकी न्याई विलाप करती भई। सो याके रुदनकर मानो सबही वनस्पति रुदन करै ह। वृक्षनिके पुष्प पडे हैं सोई मानो आसू भए। स्वत स्वभाव महारमणीक याके स्वर तिनकर विलाप करती भई। महा शोककी भरी हाय कमलनयन राम! नरोत्तम! मेरी रक्षा करहु, मोसे वचनालाप करहु। अर तुम तो निरन्तर उत्तम चेष्टाके धारक हो, महागुणवत शातचित्त हो, तिहारा लेशमात्र हू दोष नाहीं।

तुम तो पुरुषोत्तम हो, मै पूर्वभवविषै जो अशुभकर्म कीए थे तिनके फल पाये। जैसा करना तैसा भोगना। कहा करे भर्तार अर कहा करे पुत्र ? तथा माता पिता बांधव कहा करे ? अपना कर्म अपने उदय आवै सो अवश्य भोगना। मै मन्दभागिनी पूर्व जन्मविषै अशुभ कर्म कीये ताके फलतै या निर्जन वनविषै दुखकू प्राप्त भई। मै पूर्व भवविषै काहूका अपवाद किया, परनिंदा करी होगी ताके पापकरि यह कष्ट पाया। तथा पूर्वभवविषै गुरुनिके समीप व्रत लेकर भग्न कीया ताका यह फल पाया। अथवा विषफल समान जो दुर्वचन तिनकर काहूकू अपमान कीया तातै यह फल पाये। अथवा मै परभवविषै कमलनिके वनविषै तिष्ठता चकवा चकवीका युगल विछोया तातै मोहि स्वामीका वियोग भया। अथवा मै परभवविषै कुचेष्टाकर हंस हंसिनीका युगल विछोहा जे कमलनिकर मंडित सरोवर में निवास करणहारे, अर बडे बडे पुरुषनिकू जिनकी चालकी उपमा दीजे, अर जिनके वचन अति सुन्दर, जिनके चरण, चोंच, लोचन, कमल समान अरुण, सो मै विछोहे, तिनके दोषकरि ऐसी दुख अवस्थाकू प्राप्त भई। अथवा मै पापिनी कबूतर कबूतरीके युगल बिछोहे है, जिनके लाल नेत्र आधी चिरम समान, अर परस्पर जिनविषै अतिस्नेह, अर कृष्णागुरु समान जिनका अंग अथवा श्याम घन समान अथवा धूम समान धूसरे, आरंभी है सुखसे क्रीडा जिन्होने, अर कंठविषै तिष्ठै है मनोहर शब्द जिनके सो मै पापनी जबे कीए, अथवा भले स्थानसू बुरे स्थानमें मेले अथवा बांधे, मारे, ताके पापकरि असाध्य दुःख मोहि प्राप्त भया। अथवा बसंतके समय फूले वृक्ष तिनविषै केलि करते कोकिल कोकिली के युगल महामिष्ट शब्दके करनहारे परस्पर भिन्न भिन्न कीये, ताका यह फल है। अथवा ज्ञानी जीवनि के वंदिवे योग्य महाव्रती जितेन्द्रिय महा मुनि तिनकी निंदा करी। अथवा पूजा दानविषै विघ्न किया, अर परोपकारविषै अन्तराय कीए, हिंसादिक पाप किए, ग्रामदाह, वनदाह, स्त्री बालक पशुहत्यादि पाप कीए तिनके यह फल है। अनछाना पानी पिया, रात्रीकू भोजन किया, बीधा अन्न भखा, अभक्ष्य वस्तुका भक्षण किया, न करिवे योग्य काम किए, तिनका यह फल है। मै बलभद्रकी पटराणी, स्वर्ग

समान महिलकी निवासिनी, हजारां सहेली मेरी सेवाकी करनहारी, सो अब पापके उदयकरि निर्जन वनविषै दुखके सागरविष डूबी कैसे तिष्ठू ? रत्ननिके मन्दिरविष महा रमणीक वस्त्र तिनकर शोभित सुन्दर सेजपर शयन करणहारी मैं कहां पडी हूं ? सब सामग्रीकरि पूर्ण महा रमणीक महिलविष रहणहारी मैं अब कैसे अकेली वनका निवास करूंगी ? महा मनोहर बीण, बांसुरी, मृदंगादिकके मधुर स्वर तिनकर सुख निद्राकी लेनहारी मैं कैसे भयंकर शब्दकर भयानक वनविष अकेली तिष्ठूंगी ? रामदेवकी पटराणी, अपयशरूपी दावानल कर जरी, महा दुःखिनी, एकाकिनी पापिनी कष्टका कारण जो वन, जहां अनेक जातिके कीट, अर करकश डाभकी अणी, अर कांकरनिसे भरी पृथ्वी, ताविष कैसे शयन करूंगी ? ऐसी अवस्था भी पायकर मेरे प्राण न जाय तो ये प्राण ही वज्रके हैं। अहा ऐसी अवस्था पायकरि मेरे हृदयके सौ टूक न होय हैं सो यह वज्रका हृदय है। कहा करूं ? कहां जाऊं ? कौनसूं कहा कहूं ? कौनके आश्रय तिष्ठूं ? हाय गुणसमुद्र राम ! मोहि क्यों तजी ? हे महा भक्त लक्ष्मण ! मेरी क्यों न सहाय करी ? हाय पिता जनक ! हाय माता विदेही ! यह कहा भया ? अहो विद्याधरनिके स्वामी भामण्डल ! मैं दुखके भंवरविष पडी कैसे तिष्ठूं ? मैं ऐसी पापिनी जो भोसहित पतिन परम सपदाकर जिनेन्द्रका दर्शन अर्चन चितया था सो मोहि इस वनीविष डारी।

हे श्रेणिक ! या भांति सीता सती विलाप करै है। अर राजा वज्रजंघ पुण्डरीकपुरका स्वामी, हाथी पकडिवे निमित्त वनमें आया था सो हाथी पकड बडी विभूतिसे पाछे जाय था। सो ताकी सेनाके प्यादे शूरवीर कटारी आदि नाना प्रकारके शस्त्र धरे कमर बांधे आय निकसे। सो याके रुदनके मनोहर शब्द सुनकर संशयकूं अर भयकूं प्राप्त भए, एक पैंड भी न जाय सके। अर तुरंगनिके सवार हू ताका रुदन सुन खडे होय रहे। उनको यह आशंका उपजी जो या वनविष अनेक दुष्ट जीव तहां यह सुन्दर स्त्रीके रुदनका नाद कहां होय है ? मृग, सुसा, रोझ, सांप, रीछ, ल्याली, बघेरा, आरणे भैंसे, चीता, गैंडा, शार्दूल, अष्टापद, वनशूकर, गज तिनकर विकराल यह वन ताविष यह चन्द्रकला

समान महामनोग्य कौन रोवै है ? यह कोई देवांगना सौधर्म स्वर्गसे पृथ्वीविषै आई है। यह विचारकर सेनाके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त होय खडे रहे। अर वह सेना समुद्र समान, जिसमें तुरंग ही मगर, अर पयादे मीन, अर हाथी ग्राह हैं। समुद्र भी गाजे, अर सेना भी गाजे है। अर समुद्रमें लहर उठै हैं, सेनामें सूर्यकी किरणकरि शस्त्रोंकी जोति उठै है। समुद्र भी भयंकर है, सेना भयंकर है। सो सकल सेना निश्चल होय रही।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै सीताका वनविषै विलाप अर वज्रजंघका आगमन वर्णन करनेवाला सत्तानवबां पर्व पूर्ण भया ॥ ९७ ॥

अथानन्तर जैसे महाविद्याकी थांभी गंगा थंभी रहै तैसे सेनाकूं थंभा देख राजा वज्रजंघ निकटवर्ती पुरुषोंकूं पूछता भया कि सेनाके थंभनेका कारण क्या है ? तब वह निश्चयकर राजपुत्रीके समाचार कहते भये। उससे पहिले राजाने भी रुदनके शब्द सुने, सुनकर कहता भया—जिसका यह मनोहर रुदनका शब्द सुनिये सो कहो कौन है ? तब कई एक अग्रेसर होय जायकर पूछते भये—हे देवि ! तू कौन है ? अर इस निर्जन वनविषै क्यों रुदन करै है ? तो समान कोऊ और नाहीं। तू देवी है अक नागकुमारी है, अक कोई उत्तम नारी है। तू महा कल्याणरूपिणी उत्तम शरीरकी धारणहारी, तोहि यह शोक कहा ? हमकूं यह बडा कौतुक है। तब यह शस्त्रधारक पुरुषकूं देख भयकूं प्राप्त भई, कांपै है शरीर जाका, सो भयकरि उनको अपने अपने आभरण उतारकरि देने लगी। तब वे स्वामीके भयकरि यह कहते भये—हे देवी ! तू क्यों डरै है, शोककूं तज, धीरता भज। आभूषण हमकूं काहेकूं देवे है ? तेरे ये आभूषण तेरे ही रहो, ये तोहि योग्य है। हे माता ! तू विह्वल क्यों होय है ? विश्वास गहु, यह राजा वज्रजंघ पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, महा नरोत्तम, राजनीतिकर युक्त है, अर सम्यग्दर्शनरूप रत्न भूषणकरि शोभित है। कैसा है सम्यग्दर्शन ? जिस समान और रत्न नाहीं। अविनाशी है, अमोलिक है,

काहूसे हरया न जाय, महा सुखका दायक, शकादिक मल रहित, सुमेरु सारिखा निश्चल है। हे माता! जाके सम्यग्दर्शन होवे उसके गुण हम कहा लग वर्णन करें? यह राजा जिनमार्गके रहस्यका ज्ञाता शरणागतप्रतिपालक है। परोपकारमें प्रवीण, महा दयावान, महा निर्मल, पवित्रात्मा, निंद्यकर्मसू निवृत्त, लोकोंका पिता समान रक्षक, महा दातार, जीवोंकी रक्षाविषै सावधान, दीन अनाथ दुर्बल देहधारियों कू माता समान पाल है, सिद्धि कार्यका करणहारा, शत्रुरूप पर्वतनिकू वज्रसमान है। शास्त्रविद्या का अभ्यासी, परधनका त्यागी, परस्त्रीकू माता बहिन बेटीके समान मानै है। अन्यायमार्गकू अजगर सहित अन्धकूप समान जानै है। धर्मविषै तत्पर, अनुरागी, संसारके भ्रमणसे भयभीत, सत्यवादी, जितेन्द्रिय है। याके समस्त गुण जो मुखसू कहा चाहै सो भुजानिकर समुद्रकू तिरा चाहै है। ये बात वज्रजंघके सेवक कहै है। इतनेविषै ही राजा आप आया। हाथीसे उतरि बहुत विनय करि सहज ही है सुन्दर दृष्टि जाकी, सो सीतातै कहता भया—हे बहिन! वह वज्रसमान कठोर महा असमझ है, जो तोहि ऐसे वनमें तजे, अर तोहि तजत जाका हृदय न फट जाय। हे पुण्यरूपिणी! अपनी अवस्थाका कारण कहि, विश्वासकू भजि, भय मत कर, अर गर्भका खेद मत कर। तब यह शोककरि पीडित-चित्त बहुरि रुदन करती भई। राजाने बहुत धीर्य बंधाया। तब यह हंसकी न्याई आसू डार गदगद वाणीतै कहती भई—हे राजन! मो मन्दभागिनीकी कथा अत्यन्त दीर्घ है। यदि तुम सुना चाहो हो तो चित्त लगाय सुनो। मैं राजा जनककी पुत्री, भामण्डलकी बहिन, राजा दशरथके पुत्रकी वधू, सीता मेरा नाम, रामकी राणी। राजा दशरथने केकईकू वरदान दिया हुता सो भरतकू राज्य देकर राजा वैरागी भए। अर राम लक्ष्मण वनकू गए सो मैं पतिके संग वनमें रही। रावण कपटसे मोहि हर ले गया। ग्यारहवें दिन मैंने पतिकी वार्ता सुन भोजन किया। पति सुग्रीवके घर रहै। बहुरि अनेक विद्याधरनिकू एकत्रकर आकाशके मार्ग होय समुद्रकू उलंघ लंका गये, रावणकू जीत मोहि ल्याये। बहुरि राजरूप कीचकू तज भरत तो वैरागी भये। कैसे है भरत? जैसे ऋषभदेवके भरत चक्रवर्ती

तिन समान हैं उपमा जिनकी। सो भरत तो कमकलक रहित परमधामकू प्राप्त भये। अर केकई शोकरूप अग्निकर आतापकू प्राप्त भई। बहुरि वीतरागका माग सार जानकर आर्यिका होय महा तपसे स्त्रीलिग छेद स्वगविषे देव भई, मनुष्य होय मोक्ष पावेगी। राम लक्ष्मण अयोध्याविषे इन्द्र समान राज्य कर। सो लोक दुष्टचित्त निशक होय अपवाद करते भए कि रावण हरकर सीताकू ले गया, बहुरि राम ल्याय घरमें राखी। सो राम महा विवेकी, धमशास्त्रके वेत्ता न्यायवन्त, ऐसी रीति क्यो आचरैं ? जिस रीति राजा प्रवर्तै उसी रीति प्रजा प्रवर्तै। सो लोक मर्यादारहित होने लगे, कहै रामहीके घर यह रीति तो हमकू कहा दोष ? अर म गभसहित दुबल शरीर यह चितवन करती हुती कि जिनेन्द्रके चत्यालयोकी अचना करू गी। अर भरतार भी मुझ सहित जिनेन्द्रके निर्वाण स्थानक अर अतिशय स्थानक तिनकू बदना करनेकू भावसहित उद्यमी भए हुते। अर मोहि ऐसे कहते थे कि प्रथम तो हम कलाश जाय श्री ऋषभदेवके निर्वाण क्षेत्र बदेंगे। बहुरि और निर्वाणक्षेत्रकू बद करि अयोध्याविषे ऋषभ आदि तीथकर देवनिका जन्मकल्याणक ह सो अयोध्याकी यात्रा करगे। जेते भगवानके चत्यालय ह तिनका दशन करगे। कम्पिल्या नगरीविषे विमलनाथका दशन करैंगे। अर रत्नपुर म धमनाथका दशन करगे। कसे ह धमनाथ ? धमका स्वरूप जीवनिकू यथाथ उपदेश है। बहुरि श्रावस्ती नगरी सभवनाथका दशन करगे। अर चम्पापुरमें बासुपूज्यका, अर काकदीपुरमें पुष्पदतका, चन्द्रपुरीविषे चन्द्रप्रभका, कौशाबीपुरीमें पदमप्रभका, भद्रलपरमें शीतलनाथका, अर मिथिलापुरीमें मल्लिनाथ स्वामीका दशन करेंगे। अर बाणारसीमें सुपार्श्वनाथ स्वामीका दशन करेंगे। अर सिहपुरीमें श्रेयासनाथका अर हस्तनागपुरमें शाति कुथु अरहनाथका पूजन करैंगे। अर हे देवि ! कुशाग्रनगरमें श्रीमुनिसुव्रतनाथका दशन करगे। जिनका धर्मचक्र अब प्रवर्तै ह, अर और हू जे भगवान के अतिशय स्थानक महापवित्र ह, पथ्वीमें प्रसिद्ध हैं, तहा पूजा करगे। भगवानके चैत्यालय, अर सुर असुर अर गधवनिकर स्तुति करिवे योग्य ह, नमस्कार योग्य हैं तिन सबनिकी बदना हम करगे। अर

पुष्पक विमानविषै चढ सुमेरुके शिखरपर जे चैत्यालय हैं तिनका दर्शनकरि भद्रशाल वन, नन्दन वन सोमनस वन, तहां जिनेन्द्रकी अर्चाकरि अर कृत्रिम अकृत्रिम अढाई द्वीपविषै जेते चैत्यालय हैं तिनकी वंदनाकरि हम अयोध्याकू आवेंगे।

हे प्रिये! भावसहित एक बार हू नमस्कार श्रीअरहंतदेवकू करै तो अनेक जन्मके पापनिसे छूटै है। हे कांते! धन्य तेरा भाग्य जो गर्भके प्रादुर्भावविष तेरे जिन बन्दनाकी वांछा उपजी। मेरे हू मन में यही है तो सहित महापवित्र जिनमन्दिरनिका दर्शन करू। हे प्रिये! पहिले भोगभूमिविषै धर्मकी प्रवृत्ति न हुती, लोक असमझ थे। सो भगवान ऋषभदेवने भव्योंकू मोक्षमार्गका उपदेश दिया। जिनकू संसारभ्रमणका भय होय तिनको भव्य कहिये। कैसे हैं भगवान ऋषभ? प्रजाके पति, जगतविषै श्रेष्ठ, त्रैलोक्यकरि वंदिवे योग्य, नानाप्रकार अतिशयकर संयुक्त, सुर नर असुरनिकू आश्चर्यकारी, ते भगवान भव्यनिकू जीवादिक तत्वोंका उपदेश देय अनेकनिकू तारि निर्वाण पधारे, सम्यक्त्वादि अष्ट गुणमंडित सिद्ध भए। जिनका चैत्यालय सब रत्नमई भरत चक्रवर्तीने कैलाश पर कराया। अर पांचसे धनुषकी रत्नमई प्रतिमा,सूर्यहूतें अधिक तेजकू धरे मन्दिरविषै पधराई सो विराजै हैं। जाकी अबहू देव विद्याधर गन्धर्व किन्नर नाग दैत्य पूजा करै हैं जहां अप्सरा नृत्य करै हैं। जो प्रभु स्वयंभू सर्वगति निर्मल त्रैलोक्यपूज्य जाका अन्त नाहीं, अनन्तरूप अनन्त ज्ञान विराजमान, परमात्मा सिद्ध शिव आदिनाम ऋषभ तिनकी कैलाश पर्वत पर हम चलकर पूजा कर स्तुति करेंगे? वह दिन कब होयगा, या भांति मोसू कृपा कर वार्ता करते थे। अर ताही समय नगरके लोक भेले होय आय लोकापवादकी दावानलसे दुस्सह वार्ता रामसू कही। सो राम बडे विचारके कर्ता चित्तमें यह चिंताई यह लोक स्वभावहीं कर वक्र हैं। सो और भांति अपवाद न मिटै या लोकापवादसे प्रिय जनकू तजना भला अथवा मरणा भला, लोकापवादतै यशका नाश होय, कल्पांतकाल पर्यंत अपयश जगतमें रहै सो भला नाहीं। ऐसा विचार महाप्रवीण मेरा पति ताने लोकापवादके भयतै मोहि महा अरण्यवनमें

तजा। मैं दोषरहित सो पति नीके जाने, अर लक्ष्मणने बहुत कहा सो न माना। मेरे ऐसा ही कर्मका उदय जे विशुद्ध कुलमें उपजे क्षत्री शुभचित्त, सब शास्त्रनिके ज्ञाता, तिनकी यही रीति है। अर काहूसे न डरें, एक लोकापवादसे डरैं। यह अपने निकासनेका वृत्तात कह बहुरि रुदन करने लगी, शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान है चित्त जाका। सो याकू रुदन करती अर रजकर धूसरा है अग जाका, महा दीन दुखी देख राजा वज्रजघ उत्तम धर्मका धरणहारा अति उद्वेगकू प्राप्त भया। अर याकू जनककी पुत्री जान समीप आय बहुत आदरसें धीर्य बधाया। अर कहता भया—हे शुभमते! तू जिनशासनमें प्रवीण है। शोक कर रुदन मत करै। यह आर्तध्यान दुखका बढावनहारा है। हे जानकी! या लोककी स्थिति तू जाने है। तू महा सुज्ञान अनित्य अशरण एकत्व अन्यत्व इत्यादि द्वादश अनुप्रेक्षावोंकी चितवन करण हारी, तेरा पति सम्यग्दृष्टि, अर तू सम्यत्वसहित विवेकवन्ती है मिथ्यादृष्टि जीवनिकी न्याई कहा बारम्बार शोक कर? तू जिनवाणीकी श्रोता, अनेक बार महा मुनिनिके मुख श्रुतिके अर्थ सुने, निरतर ज्ञान भावकू धरणहारी, तोहि शोक उचित नाहीं। अहो या ससारमें भ्रमता यह मूढ प्राणी याने मोक्षमार्गकू न जाना, यातै कहा कहा दुख न पाये। याकू अनिष्टसयोग इष्टवियोग अनेकबार भये। यह अनादिकालसू भवसागरके मध्य क्लेशरूप भवरमें पडा है। या जीवने तिर्यंच योनिविषै जलचर नभचरके शरीर धर वर्षा शीत आताप आदि अनेक दुख पाये। अर मनुष्य देहविषै अपवाद बिरह रुदन क्लेशादि अनेक दुख भोगे। अर नरकविषै शीत उष्ण छेदन भेदन शूलारोहण, परस्पर घात, महा दुर्गंध, क्षीरकुण्डविषै निपात, अनेक रोग, अनेक दुख लहे। अर कबहू अज्ञान तपकरि अल्प ऋद्धिका धारक देव हू भया, तहां हू उत्कृष्ट ऋद्धिके धारक देवनिकू देख दुखी भया। अर मरण समय महा दुखी होय विलापकर मूवा। अर कबहू महा तपकर इन्द्रतुल्य उत्कृष्ट देव भया, तोहू विषयानुरागकरि दुखी ही भया। या भांति चतुर्गतिविषै भ्रमण करते या जीवने भववनविषै आधि व्याधि सयोग वियोग रोग शोक जन्म मृत्यु दुख दाह दरिद्र हीनता नानाप्रकारकी वाछा, विकल्पताकर शोच

संतापरूप होय अनन्त दुख पाये। अधोलोक मध्यलोक ऊर्ध्वलोकविषै ऐसा स्थानक नाहीं जहां या जीवने जन्म मरण न किये। अपने कर्मरूप पवनके प्रसंगकर भवसागरविषै भ्रमण करता जो यह जीव ताने मनुष्य देहविषै स्त्रीका शरीर पाया। तहां अनेक दुख भोगे। तेरे शुभ कर्मके उदयकरि राम सारिखे सुन्दर पति भये, जिनके सदा शुभका उपार्जन सो पुण्यके उदयकरि पति सहित महा सुख भोगे। अर अशुभके उदयतें दुस्सह दुखकू प्राप्त भई। लंकाद्वीपविषै रावण हर कर ले गया तहां पतिकी वार्ता न सुन ग्यारह दिनतक भोजन विना रही। अर जबतक पतिका दर्शन न भया तब तक आभूषण सुगंध लेपनादि रहित रही। बहुरि शत्रुको हत पति ले आये तब पुण्यके उदयतें सुखकू प्राप्त भई। बहुरि अशुभका उदय आया तब विना दोष गर्भवतीकू पतिने लोकापवादके भयतैं घरतैं निकासी। लोकापवादरूप सर्पके डसिवेकर पति अचेत चित्त भया। सो विना समझे भयकर वनमें तजी। उत्तम प्राणी पुण्यरूप पुष्पनिका घर ताहि जो पापी कुवचनरूप अग्निकर दाहैं हैं सो आपही दोषरूप दहन करि दाहकू प्राप्त होय। हे देवि! तू परम उत्कृष्ट पतिव्रता महासती है, प्रशंसायोग्य है चेष्टा जाकी। जाके गर्भाधानविषै चैत्यालयनिके दर्शनकी बांछा उपजी अबहू तेरे पुण्यहीका उदय है। तू महा शीलवती जिनमती है। तेरे शीलके प्रसाद करि या निर्जन वनविषै हाथीके निमित्त मेरा आवना भया। मैं वज्रजंघ पुण्डरीकपुरका अधिपति राजा द्विरदवाह सोमवंशी, महाशुभ आचरणके धारक, तिनके सुबंधु, महिषी नामा राणी, ताका मैं पुत्र। तू मेरे धर्मके विधानकर बडी बहिन है। पुण्डरीकपुर चालहु। शोक तज। हे बहिन! शोकसे कछू कार्यसिद्धि नाहीं। वहां पुण्डरीकपुरतें राम तोहि हू ढू कृपाकर बुलावेंगे। राम हू तेरे वियोगसू पश्चातापकरि अति व्याकुल हैं। अपने प्रमादकरि अमोलिक महा गुणवान रत्न नष्ट भया, ताहि विवेकी महा आदरसे ढू ढै ही। तातैं हे पतिव्रते! निसंदेह राम तुझे आदरसू बुलावेंगे। या भांति वा धर्मात्माने सीताकू शांतता उपजाई। तब सीता धीर्यकू प्राप्त भई। मानो भाई भामण्डल ही मिला। तब वाकी अति प्रशंसा करती भई। तू मेरा अति उत्कृष्ट

भाई है । महा यशवत, शूरवीर, बुद्धिमान, शातचित्त, साधर्मिनिपर वात्सल्यका करणहारा, उत्तम जीव है । गौतम स्वामी कहे हैं–हे श्रेणिक ! राजा वज्रजघ अधिगमसम्यग्दष्टि, अधिगम कहिए गुरु-उपदेशकरि पाया है सम्यक्त जाने, अर ज्ञानी है, परम तत्वका स्वरूप जाननहारा पवित्र ह आत्मा जाको, साधु समान ह, जाके व्रत गुण शीलकर सयुक्त मोक्षमार्गका उद्यमी सो एसे सत्पुरुषनिके चरित्र दोषरहित पर–उपकारकरयुक्त कौनका शोक न निवारै ? कसे हैं सत्पुरुष ? जिनमतविष प्रति निश्चल ह चित्त जिनका। सीता कह ह–हे वज्रजघ ! तू मेरे पूवभवका सहोदर ह सो जो या भवविष तैन साचा भाईपना जनाया । मेरा शोक सतापरूप तिमिर हरा सूयसमान तू पवित्र आत्मा ह ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष सीताक वज्रजघका धीय बधावनेका वणन करनेवाला अठानवेवा पव पूण भया ।। ९८ ।।

अथानन्तर वज्रजघने सीताके चढिवेकू क्षणमात्रविष अदभुत पालकी मगाई । सो सीता तापर आरूढ भई । पालकी विमान समान महा मनोग्य समीचीन प्रमाणकर युक्त, सुन्दर है थभ जाके, श्रेष्ठ दपण थभोविष जडे हं । अर मोतिनिकी झालरीकरि पालकी मडित ह । अर चन्द्रमा समान उज्ज्वल चमर तिनकर शोभित ह, मोतिनके हार जलके बुदबुदे समान शोभ ह, अर विचित्र जे वस्त्र तिनकर मडित चित्रामकर शोभित ह, सुन्दर ह,झरोखा जाविष । ऐसी सुखपालकी पर चढ़ परम ऋद्धि कर युक्त बडी सेना मध्य सीता चली जाय ह, आश्चयकू प्राप्त भई कर्मोंकी विचित्रताक चितवे हं । तीन दिनविष भयकर वनकू उलघ पुण्डरीक देशविष आई । उत्तम ह चेष्टा जाकी, सब देशके लोक माताकू आय मिले ग्राम ग्रामविष भेट कर । कसा ह वज्रजघका देश ? समस्त जातिके अन्नकर जहा समस्त पृथ्वी आच्छादित होय रही ह । अर कूकडाउडान नजीक ह ग्राम जहा, रत्ननिकी खान, स्वण रूपादिककी खान, सुरपुर जसे पुर, सो देखती थकी सीता हषकू प्राप्त भई । वन उपवनकी शोभा

देखती चली जाय है। ग्रामके महत भेंटकर नानाप्रकार स्तुति कर ह । हे भगवती ! हे माता ! आपके दर्शनकर हम पापरहित भए, कृताथ भए। अर बारम्बार बन्दना करते भए, अघपाद्य किए। अर अनेक राजा देवनि समान आय मिले सो नानाप्रकार भेंट करते भए अर बारम्बार बदना करते भए। या भांति सीता सती पड २ पर राजा प्रजादिकर पूजी सती चली जाय ह। वज्रजघका देश अतिसुखी ठौर ठौर बन उपवनादिकरि शोभित, ठौर ठौर चत्यालय देख अति हर्षित भई। मन विष विचारै है जहा राजा धर्मात्मा होय वहा प्रजा सुखी होय ही। अनुक्रमकर पुण्डरीकपुरके समीप आए सो राजाकी आज्ञात सीताका आगमन सुन नगरके सब लोक सन्मुख आए अर भेंट करते भए। नगरकी अति शोभा करी। सगन्ध-कर पृथ्वी छाटी, गली बाजार सब सिगारे, अर इन्द्रधनुष समान तोरण चढाए, अर द्वारनिविष पूण कलश थापे, जिनके मख सुन्दर पल्लवयुक्त ह अर मदिरनिपर ध्वजा चढी, अर घर घर मगल गावै हैं। मानो वह नगर आनन्दकर नत्य ही कर ह। नगरके दरवाजेपर तथा कोटके कगूरनिपर लोक खडे देखे ह। हर्षकी वृद्धि होय रही ह ! नगरके बाहिर अर भीतर राजद्वारतक सीताके दर्शनकू लोक खडे ह। चलायमान जे लोकनिक समूह तिनकर नगर यद्यपि स्थावर है तथापि जानिए जगम होय रह्या है। नानाप्रकारके वादित्र बाज ह। तिनके नादकर दशो दिशा शब्दायमान होय रही ह, शख बाज ह, बदीजन विरद बखान ह। समस्त नगरके लोक आश्चर्यकू प्राप्त भए देख ह। अर सीताने नगरविष प्रवेश किया, जस लक्ष्मी देवलोकविष प्रवेश कर। वज्रजघके मदिरविष अति सुन्दर जिन मन्दिर ह। सब राजलोककी स्त्रीजन सीताके सन्मुख आई। सीता पालकीसू उतर जिनमन्दिरविषै गई। कैसा ह जिनमन्दिर ? महा सुन्दर उपवनकर वेष्टित है अर वापिका सरोवरी तिनकर शोभित है, सुमेरु शिखर समान सुन्दर स्वर्णमई ह। जस भाई भामण्डल सीताका सन्मान कर तसै वज्रजघ आदर करता भया। वज्रजघके समस्त परिवारके लोक अर राजलोककी समस्त राणी सीताकी सेवा करैं। अर ऐसे मनोहर शब्द निरन्तर कहै हैं, हे देवते ! हे पूज्ये ! हे स्वामिनी ! हे ईशानने ! सदा जयवत

होहु, बहुत दिन जीवो, आनन्दकू प्राप्त होहु, वृद्धिको प्राप्त होहु, आज्ञा करहु। या भांति स्तुति कर। अर जो आज्ञा करैं सो सीस चढावैं। अति हर्षसू दौडकर सेवा करैं। अर हाथ जोड सीस निवाय नमस्कार करैं। वहा सीता अति आनन्दतै जिनधर्मकी कथा करती तिष्ठै। अर जो सामतनिकी भेंट आवै अर राजा भेंट करे सो आनकी धर्मकार्यविषै लगावै। यह तो यहा धर्मकी आराधना करै है।

अर वह कृतान्तवक्र सेनापति तप्तायमान है चित्त जाका, रथके तुरग खेदकू प्राप्त भए हुते, तिनकू खेदरहित करता हुआ श्रीरामचन्द्रके समीप आया। याकू आवता सुन अनेक राजा सन्मुख आये। सो कृतान्तवक्र आयकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणनिकू नमस्कार कर कहता भया—हे प्रभो! म आज्ञाप्रमाण सीताकू भयानक वनविषै मेलकर आया हू। वाके गर्भमात्र ही सहाई ह। हे देव! वह बन नाना प्रकारके भयकर जीवनिकरि अति घोर शब्दकर महा भयकारी ह। अर जसा बताल कहिये प्रेतनिका बन, ताका आकार देखा न जाय तस सघन वक्षनिके समूह कर अधकाररूप है। जहा स्वत स्वभाव आरणे भैंसे अर सिंह द्वेषकर सदा युद्ध कर ह। अर जहा घूघू बस ह सो विरूप शब्द करै ह। अर गुफानिविषै सिंह गुंजार कर है सो गुफा गुजार रही ह। अर महाभयकर अजगर शब्द कर ह, अर चीतानिकर हते गये हैं मृग जहा, कालकू भी विकराल ऐसा वन ताविषै। हे प्रभो! सीता अश्रुपात करती महा दीनवचन आपकू जो शब्द कहती भई सो सुनो—आप आत्मकल्याण चाहो हो तो जस मोहि तजी तस जिनेन्द्रकी भक्ति न तजनी। जस लोकनिके अपवादकर मोस अति अनुराग हुता तोहू तजी, तसै काहूके कहिवेतै जिन-शासनकी श्रद्धा न तजनी। लोक विना विचार निर्दोषनिकू दोष लगावै है, जैसैं मोहि लगाया। सो आप न्याय करो, सो अपनी बुद्धिसे विचार यथाथ करना, काहूके कहेतैं काहू कू झूठा दोष न लगावना। अर सम्यग्दर्शनतैं विमुख मिथ्यादृष्टि जिनधर्मरूप रत्नका अपवाद करै ह सो उनके अपवादके भयतैं सम्यक्दर्शनकी शुद्धता न तजनी। वीतरागका मार्ग उरविषै दृढ़ धारणा। मेरे तजनेका या भवविषै किंचित्मात्र दुख ह अर सम्यग्दर्शनकी हानितै जन्म जन्मविषै दुख ह। या जीवकू लोकविषै निधि

रत्न स्त्री वाहन राज्य सबही सुलभ हैं एक सम्यग्दर्शन रत्न ही महा दुर्लभ है। राजविषै पापकर नरकविषै पड़ना है, एक ऊर्ध्वगमन सम्यकदर्शनके प्रतापहीसे होय। जाने अपना आत्मा सम्यग्दर्शन-रूप आभूषणकर मंडित किया सो कृतार्थ भया। ये शब्द जानकीने कहे हैं जिनकू सुनकर कौनके धर्म बुद्धि न उपजै? हे देव! एक तो वह सीता स्वभावही कर कायर, अर महा भयंकर वनके दुष्ट जीवनि-तैं कैसैं जीवैगी? जहां महा भयानक सर्पनिके समूह अर अल्पजल ऐसे सरोवर तिनविषै माते हाथी कर्दम करै हैं, अर जहां मृगनिके समूह मृगतृष्णाविषै जल जानि वृथा दौड़ व्याकुल होय हैं, जैसैं संसार की मायाविषै रागकर रागी जीव दुखी होय। अर जहां कौंछिकी रजके संगकर मर्कट अति चंचल होय रहे हैं अर जहां तृष्णासू सिंह व्याघ्र ल्यालियोके समूह तिनकी रसनारूप पल्लव लहलहाट करै हैं। अर चिरमसमान लालनेत्र जिनके ऐसे क्रोधायमान भुजंग फुंकार करै है। अर जहां तीव्र पवनके संचारकर क्षणमात्रविषै वृक्षनिके पत्रोंके ढेर होय हैं। अर महा अजगर तिनकी विषरूप अग्निकर अनेक वृक्ष भस्म होय गये हैं। अर माते हाथिनिकी महा भयंकर गर्जना ताकर वह वन अति विक-राल है। अर वनके शूकरनिकी सेनाकर सरोवर मलिनजल होय रहे हैं। अर जहां ठौर ठौर भूमि कांटे अर सांठे अर सांपोंकी बांमी अर कंकर पत्थर तिनकर भूमि महा संकटरूप है। अर डाभकी अणी सूईतैं अति पनी हैं, अर सूखे पान फूल पवनकर उड़े उड़े फिरै हैं। ऐसे महा अरण्यविषै, हे देव! जानकी कैसैं जीवैगी? मैं ऐसा जानू हूं क्षणमात्र हू वह प्राण राखिवेको समर्थ नाहीं।

हे श्रेणिक! सेनापतिके यह वचन सुन श्रीराम अति विषादकू प्राप्त भए। कैसे हैं वचन? जिन कर निर्दईका भी मन द्रवीभूत होय। श्रीरामचन्द्र चितवते भए, देखो मो मूढचित्तने दुष्टनिके वचननि-करि अत्यन्त निंद्यकार्य किया। कहां वह राजपुत्री अर कहां वह भयंकर वन? यह विचारकर मूर्छाकू प्राप्त भये। बहुरि शीतोपचारकरि सचेत होय विलाप करते भए। सीताविषै है चित्त जिनका, हाय श्वेत श्याम रक्त तीन वर्णके कमल समान नेत्रनिकी धरणहारी! हाय निर्मल गुणनिकी खान! मुखकर

जीता है चन्द्रमा जाने, कमलकी किरण समान कोमल, हाय! जानकी मोसूं वचनालाप कर। तू जाने ही है कि मेरा चित्त तो विना अति कायर है। हे उपमारहित शीलव्रतकी धारणहारी! मेरे मनकी हरणहारी! हितकारी है आलाप जिसके, हे पापवर्जिते, निरपराध, मेरे मनकी निवासनी! तू कौन अव स्थाकूं प्राप्त भई होयगी? हे देवी! वह महा भयंकर वन क्रूर जीवोंकर भरया, उसविषै सर्वसामग्री रहित कैसे तिष्ठेगी? हे मोविषै आसक्त चकोरनेत्र लावण्यरूप जलकी सरोवरी, महालज्जावती, विनयवती! तू कहां गई? तेरे श्वासकी सुगंधकर मुख पर गुंजार करते जे भ्रमर तिनकूं हस्तकमल कर निवारती अति खेदकूं प्राप्त होयगी। तू यूथसे विछुरी मृगीकी न्याईं अकेली भयंकर वनविषै कहां जायगी? जो वन चितवन करते भी दुस्सह, उसविषै तू अकेली कैसे तिष्ठेगी? कमलके गर्भ समान कोमल तेरे चरण महासुन्दर लक्षणके धारणहार, कर्कश भूमिका स्पर्श कैसे सहेंगे? अर वनके भील महा म्लेच्छ कृत्य अकृत्यके भेदसे रहित है मन जिनका, सो तुझे पाकर भयंकर पल्लीविषै ले गये होवेंगे। सो पहिले दुखसे भी यह अत्यन्त दुख है। तू भयानक वनविषै मो बिना महा दुःखकूं प्राप्त भई होयगी, अथवा तू खेदखिन्न महा अंधेरी रात्रिविषै बनकी रजकर मंडित कहीं पड़ी होयगी। सो कदाचित तुझ हाथियोंने दाबी होयगी। तो इस समान और अनर्थ कहा? अर गृध, रीछ, सिंह, व्याघ्र, अष्टापद इत्यादि दुष्ट जीवोंकर भरया जो वन ताविषै कैसे निवास करेगी? जहां मार्ग नाहीं, विकराल दाढके धरणहारे व्याघ्र महा क्षुधातुर तिनकरि अवस्थाकूं प्राप्त करी होयगी जो कहिवेविषै न आवै। अथवा अग्निकी ज्वालाके समूहकर जलता जो वन उसविषै अशुभ अवस्थानककूं प्राप्त भई होयगी, अथवा सूर्यकी अत्यन्त दुस्सह किरण तिनके आतापकर लाखकी न्याईं पिघल गई होयगी, छाया विषै जायवेकी नाहीं शक्ति जाकी अथवा शोभायमान शीलकी धरणहारी मो निर्दईविषै मनकर हृदय फटकर मृत्युकूं प्राप्त भई होयगी। पहिले जैसे रत्नजटीने मोहि सीताके कुशलकी वार्ता आय कही थी तैसै कोई अब भी कहै। हाय प्रिये! पतिव्रते विवेकवती, सुखरूपिणी, तू कहां गई? कहां तिष्ठेगी

क्या करेगो ? अहो कृतान्तवक्र ! कह, क्या तैने सचमुच वनहीविषै डारी ? जो कहूं शुभ ठौर मेली होय तो तेरे मुखरूप चन्द्रसे अमृतरूप वचन खिर । जब ऐसा कहा तब सेनापतिने लज्जाके भारकर नीचा मुख किया, प्रभारहित होय गया, कछु कह न सक्या, अति व्याकुल भया, मौन गह रह्या । तब रामने जानी सत्यही यह सीताकू भयकर वनविषै डार आया । तब मूर्च्छाकू प्राप्त होय राम गिरे । बहुरि बहुत बेर विषै नीठि नीठि सचेत भए तब लक्ष्मण आए । अन्त करणविषै सोचकू धरे कहते भए—हे देव ! क्यो व्याकुल भए हो, धीर्यको अगीकार करहु । जो पूर्वकर्म उपार्ज्या है उसका फल आय प्राप्त भया, अर सकल लोककू अशुभके उदयकर दु ख प्राप्त भया । केवल सीताहीकू दु ख न भया ।

सुख अथवा दुख जो प्राप्त होना होय सो स्वयमेव ही किसी निमित्तसू आय प्राप्त होय है, हे प्रभो ! जो कोई किसीकू आकाशविषै ले जाय अथवा क्रूर जीवोके भरे वनविषै डारे अथवा गिरिके शिखिर धरे तो भी पूर्व पुण्यकर प्राणीकी रक्षा होय है । सब ही प्रजा दुखकर तप्तायमान है, आसुओके प्रवाहकर मानो हृदय गल गया है सोई झर है । यह वचन कह लक्ष्मण भी अत्यन्त व्याकुल होय रुदन करने लगा । जसा दाहका मार्या कमल होय तसा होय गया है मुखकमल जाका । हाय माता ! तू कहा गई ! दुष्टजनोके वचनरूप अग्निकर प्रज्वलित है शरीर जिनका, हे गुणरूप धान्यके उपजावनेकी भूमि ? बारह अनुप्रेक्षाके चितवनकी करणहारी है, शीलरूप पर्वतकी पृथ्वी है, सीते ! सौम्य स्वभावकी धारक है । विवेकिनी, दुष्टोके वचन सोई भए तुषार तिनकर दाहा गया है हृदय कमल जाका, राजहस श्रीराम तिनके प्रसन्न करिवेकू मानसरोवर समान, सुभद्रा सारिखी कल्याणरूप, सब आचारविषै प्रवीण, लोककू मूर्तिवन्त सुखकी आशिखा, हे श्रेष्ठे ! तू कहा गई ? जसे सूर्य विना आकाशकी शोभा कहा अर चन्द्रमा विना निशाकी शोभा कहा ? तसे हे माता ! तो विना अयोध्याकी शोभा कहा ? इस भाति लक्ष्मण विलाप कर रामसू कहे है—हे देव ! समस्त नगर बीण बासुरी मृदगादिकी ध्वनिकर रहित भया है, अहर्निश रुदनकी ध्वनि कर पूर्ण है । गली गलीविषै, वन उपवनविषै, नदियो

के तटविषै चौहटेविषै, हाट हाटविष, घर घरविषै, समस्त लोक रुदन कर है । तिनके अश्रुपातकी धारा कर कीच होय रह्यो है । मानो अयोध्याविषै वर्षाकालही फिर आया है । समस्त लोक आसू डारते गदगद बाणीकर कष्टसू वचन उचारते, जानकी प्रत्यक्षनहीं है परोक्ष ही है, तो भी एकाग्र चित्त भए गुण कीर्तिरूप पुष्पोके समूह कर पूजे है । वह सीता पतिव्रता समस्त सतियोके सिरपर विराजे है, गुणोकर महा उज्ज्वल । उसके यहा आवने की अभिलाषा सबकू है । यह सब लोक माता ने ऐसे पाले है जैसे जननी पुत्रकू पाले । सो सब ही महा शोककर गुण चितार चितार रुदन करे है । ऐसा कौन है जाके जानकीका शोक न होय, तात हे प्रभो ! तुम सब बातोविष प्रवीण हो अब पश्चाताप तजहु । पश्चातापसू कछु कायकी सिद्धि नाहीं, जो आपका चित्त प्रसन्न है तो सीताकू हेरकर बुलाय लेंगे । अर उनकू पुण्यके प्रभावकर कोई विघ्न नहीं । आप धीर्य अवलम्बन करिवे योग्य हो । या भाति लक्ष्मणके वचनकर रामचन्द्र प्रसन्न भए । कछु एक शोक तज कर्तव्यविषै मन धरया । भद्रकलश भण्डारीकू बुलाय कर कही—तुम सीताकी आज्ञा सू जिस विधि किमिच्छा दान करते थे तैसे ही किया करो । सीताके नामसू दान बटे । तब भंडारीने कही जो आप आज्ञा करोगे सो ही होयगा । नव महीने अर्थियोकू किमिच्छा दान बटिवो किया । रामके आठ हजार स्त्री तिनकर सेवमान तौ भी एक क्षणमात्र भी मनकर सीताकू न विसारता भया । सीता सीता यह आलाप सदा होता भया । सीताके गुणोकर मोह्या है मन जाका, सवदिशा सीतामई देखता भया । स्वप्नविषै सीताकू या भाति देख—पर्वतकी गुफाविषै पडी है, पृथ्वीकी रजकरि मंडित है, अर नेत्रनिके अश्रुपात कर चौमासा कर राख्या है, महाशोककर व्याप्त है । या भाति स्वप्नविषै अवलोकन करता भया । सीताका शब्द करता राम ऐसा चिंतवन करे है—देखो, सीता सुन्दर चेष्टाकी धरणहारी, दूर देशान्तरविषै है तौ भी मेरे चित्तसू दूर न होय है । वह माधवी शीलवती मेरे हितविषै सदा उद्यमी । या भाति सदा चितारवो कर । अर लक्ष्मणके उपदेश कर, अर सूत्र सिद्धांतके श्रवण कर कछूइक रामकू शोक क्षीण भया,

धीयकू धरि धमध्यानविष तत्पर भया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै ह। वे दोनो भाई महा न्यायव्रत, अखण्ड प्रीतके धारक, प्रशसा योग्य गुणोके समुद्र, रामके हल मूसलका आयुध, लक्ष्मण के चक्रायुध, समुद्र पयत पृथ्वीकू भली भाति पालते सन्ते, सौधम ईशान इन्द्र सारिखे शोभते भए। वे दोनो धीरवीर स्वग समान जो अयोध्या ताविष देवो समान ऋद्धि भोगते, महा क्रातिके धारक, पुरुषोत्तम पुरुषोके इन्द्र देवेन्द्र समान राज्य करते भए। सुकतके उदयसू सकल प्राणियोकू आनन्द देयवेविषै चतुर, सुन्दर चरित्र जिनके, सुख सागरविषै मग्न, सूय समान तेजस्वी, पथ्वीविषै प्रकाश करते भए।

इति श्रीरविषेण चाय विरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष रामक सीताका शोक वणन करनेवाला निन्यानववा पव पण भया ॥ ९९ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी कह ह—रे नराधिप! राम लक्ष्मण तो अयोध्याविष तिष्ठ ह अर अब लवणाकुशका वतात कह ह सो सुनो। अयोध्याके सबही लोक सीताके शोकसू पाडुताकू प्राप्त भये, अर दुबल होय गये। अर पुण्डरीकपुरविषै सीता गभके भारकर कछूएक पाडुताकू प्राप्त भई, अर दुबल भई। मानू सकल प्रजा महा पवित्र उज्ज्वल इसके गुण वणन कर है, सो गुणोकी उज्ज्वलता कर श्वेत होय गई ह। अर कुचोकी बीटली श्यामताकू प्राप्त भई, सो मानू माताके कुच पुत्रोके पान करिवेके पयके घट ह सो मुदित कर राखे ह। अर दष्टि क्षीरसागर समान उज्ज्वल अत्यन्त मधुरताकू प्राप्त भई। अर सवमगलके समूहका आधार जिनका शरीर, सवमगलका स्थानक जो निमल रत्नमई आगण ताविषै मद मद विचरे सो चरणोके प्रतिबिब ऐसे भास मानू पृथ्वी कमलनिसू सीताकी सेवाही कर ह। अर रात्रिविषै चन्द्रमा याके मन्दिर ऊपर आय निकस सो ऐसा भास मानू सफेद छत्र ही ह। अर सुगन्धके महिलविषै सुन्दर सेज ऊपर सूती ऐसा स्वप्न देखती भई कि महागजेन्द्र कमलोके पुटविषै जल भरकर अभिषेक कराव ह, अर बारम्बार सखीजनोके मुख जय जयकार शब्द सुनकर

जाग्रत होय है, परिवारके लोक समस्त आज्ञारूप प्रवर्तें है। क्रीडाविषै भी यह आज्ञा भंग न सह सकें। सब आज्ञाकारी भए, शीघ्रही आज्ञाप्रमाण करे है तो भी सबों पर तेज करें हैं, काहेसूं ? कि तेजस्वी पुत्र गर्भविषै तिष्ठे है। अर मणियोंके दर्पण निकट हैं तौ भी खड्गविषैं मुख देखें है। अर बीणा, बांसुरी, मृदंगादि अनेक वादित्रोंका नाद होय है, सो न रुचे, अर धनुषके चढायवेकी ध्वनि रुचे है। अर सिंहोंके पिंजरे देख जिनके नेत्र प्रसन्न होय अर जिनका मस्तक जिनेन्द्र टार औरकूं न नमै।

अथानंतर नव महीना पूर्ण भये श्रावण सुदी पूर्णमासीके दिन, श्रवण नक्षत्रके विषै वह मंगलरूपिणी सर्व लक्षण पूर्ण शरदकी पूनोंके चन्द्रमा समान है वदन जिनका सुखसूं पुत्रयुगल जनती भई। सो पुत्रोंके जन्मविषै पुण्डरीकपुरकी सकल प्रजा अति हर्षित भई। मानूं नगरी नाच उठी, ढोल नगारे आदि अनेक प्रकारके वादित्र बाजने लगे, शंखोंके शब्द भये। राजा बज्रजंघने अति उत्साह किया, बहुत सम्पदा याचकनिकूं दई। अर एक का नाम अनंगलवण दूजे का नाम मदनांकुश ये यथार्थ नाम धरे। फिर ये बालक वृद्धिकूं प्राप्त भए। माताके हृदयकूं अति आनन्दके उपजावनहारे महाधीर शूरवीर ताके अंकुर उपजे। सरसूं के दाणे इनकी रक्षाके निमित्त इनके मस्तक डारे सो ऐसे सोहते भए मानूं प्रतापरूप अग्नि के कण ही है। जिनका शरीर ताये सुवर्ण समान अति देदीप्यमान, सहज स्वभाव तेजकर अति सोहता भया। अर जिनके नख दर्पणसमान भासते भए। प्रथम बालअवस्थाविषै अव्यक्त शब्द बोले सो सबलोकके मनकूं हरें। अर इनकी मंद मुसकान महामनोग्य पुष्पोंके विकसने समान लोकनके हृदयकूं मोहती भई। अर जैसे पुष्पनिकी सुगंधता भ्रमरोंके समूहकूं अनुरागी करें तैसें इनकी वासना सबके मनकूं अनुरागरूप करती भई। यह दोनों माताका दूध पान कर पुष्ट भए। अर जिनका मुख महासुंदर सुफेद दांतों कर अति सोहता भया। मानूं यह दांत दुग्ध समान उज्ज्वल हास्यरस समान शोभायमान दीखे है। धायकी आंगरी पकड आंगनविषै पांव धरते कौनका मन न हरते भए ? जानकी ऐसे सुन्दर क्रीडाके करणहारे कुमारोंकूं देखकर समस्त दुःख भूलि गई। बालक

बडे भए। अति मनोहर, सहज ही सुन्दर है नेत्र जिनके, विद्याके पढने योग्य भए। तब इनके पुण्यके योगकर एक सिद्धार्थनामा क्षुल्लक शुद्धात्मा पृथ्वीविषै प्रसिद्ध वज्रजंघके मन्दिर आया। सो महाविद्या के प्रभाव कर त्रिकाल संध्याविषै सुमेरुगिरिके चैत्यालय वंदि आवे। प्रशांतवदन, साधु समान है भावना जाके, अर खंडितवस्त्र मात्र है परिग्रह जाके, उत्तम अणुव्रतका धारक, नानाप्रकारके गुणनिकर शोभायमान, जिनशासनके रहस्यका वेत्ता, समस्त कलारूप समुद्रका पारगामी, तपकरि मंडित अति सोहै। सो आहारके निमित्त भ्रमता संता जहां जानकी तिष्ठै हुती वहां आया। सीता महासती मानो जिनशासनकी देवी पद्मावती ही है। सो क्षुल्लककूं देख अति आदरसे उठकर सन्मुख जाय इच्छाकार करती भई, अर उत्तम अन्नपानसे तृप्त किया। सीता जिनधर्मियोंकूं अपने भाई समान जानै है। सो क्षुल्लक अष्टांग निमित्तज्ञानका वेत्ता दोनो कुमारनिकूं देखकर अति संतुष्ट होयकर सीतासे कहता भया—हे देवि! तुम सोच न करो, जिनके ऐसे देवकुमार समान प्रशस्त पुत्र उसे कहा चिंता?

अथानन्तर यद्यपि क्षुल्लक महा विरक्तचित्त है तथापि दोनो कुमारनिके अनुरागसे कईएक दिन तिनके निकट रहा। थोडे दिनोमें कुमारनिकूं शस्त्रविद्याविषै निपुण किया। सो कुमार ज्ञान विज्ञान विषै पूर्ण, सर्व कलाके धारक, गुणनिके समूह, दिव्यास्त्रके चलायवे अर शत्रुओंके दिव्यास्त्र आवैं तिनके निराकरण करिवेकी विद्याविषै प्रवीण होते भए। महापुण्यके प्रभावसूं परम शोभाकूं धारैं, महालक्ष्मीवान, दूर भए हैं मति श्रुति आवरण जिनके, मानो उघडे निधिके कलश ही हैं। शिष्य बुद्धिमान होय तब गुरुकूं पढायवेका कछू खेद नाहीं। जैसे मंत्री बुद्धिमान होय तब राजाकूं राज्यकार्यका कछु खेद नाहीं अर जैसे नेत्रवान पुरुषनिकूं सूर्यके प्रभावकर घटपटादिक पदार्थ सुखसूं भासै, तैसे गुरुके प्रभावकर बुद्धिवंतकूं शब्द अर्थ सुखसूं भासै। जैसे हंसनिकूं मानसरोवरविषै आवते कछु खेद नाहीं तैसे विवेकवान विनयवान बुद्धिमानकूं गुरुभक्तिके प्रभावसूं ज्ञान आवत परिश्रम नाहीं। सुखसूं अति गुणनिकी वृद्धि होय है। अर बुद्धिमान शिष्यनिकूं उपदेश देय गुरु कृतार्थ होय है। अर कुबुद्धि-

कू उपदेश देना वथा है, जैसे सूर्यका उद्योत घूघूवोंकू वथा है। यह दोनों भाई देदीप्यमान हैं यश जिनका अति सुन्दर, महाप्रतापी सूर्यकी न्याई जिनकी ओर कोऊ विलोक न सके, दोऊ भाई चन्द्र सूर्य समान, दोनोंविषै अग्नि अर पवन समान प्रीति, मानू वह दोनो ही हिमाचल विध्याचल समान हैं, वज्रवृषभनाराचसंहनन है जिनके, सब तेजस्वीनिके जीतिवेकू समर्थ, सब राजावोंका उदय अर अस्त जिनके आधीन होयगा, महाधर्मात्मा, धर्मके धारी, अत्यन्त रमणीक, जगतकू सुखके कारण, सब जिनकी आज्ञाविषै। राजा ही आज्ञाकारी तो औरनिकी कहा बात? काहूकू आज्ञारहित न देख सक्या। अपने पावनिके नखनिविषै अपनाही प्रतिबिम्ब देख न सकें तो और कौनसे नम्रीभूत होय? अर जिनकू अपने नख अर केशोंका भंग न रुचै तो अपनी आज्ञाका भंग कैसे रुचै? अर अपने सिर पर चूड़ामणि धरिये अर सिरपर छत्र फिरे अर सूर्य ऊपर होय आय निकसे तो भी न सहार सकें तो औरनिकी ऊंचता कैसे सहारें? मेघका धनुष चढ़ा देख कोप करें तो शत्रुके धनुषकी प्रबलता कैसे देख सकें? चित्रामके नृप न नमैं तो भी सहार न सकें तो साक्षात नृपोंका गर्व कब देख सकें? अर सूर्य नित्य उदय अस्त होय उसे अल्प तेजस्वी गिनें। अर पवन महा बलवान है परन्तु चंचल सो उसे बलवान न गिनें, जो चलायमान सो बलवान काहेका? जो स्थिरभूत अचल सो बलवान। अर हिमवान पर्वत उच्च है स्थिरीभूत है, परन्तु जड़ अर कठोर कंटक सहित है तातें प्रशंसा योग्य न गिनें। अर समुद्र गम्भीर है, रत्नोंकी खान है परन्तु क्षार अर जलचर जीवोंको धरै, अर शंखोंकर युक्त तातैं समुद्र कू तुच्छ गिनें। महा गुणनिके निवास, अति अनुपम जेते प्रबल राजा हुते तेज रहित होय उनकी सेवा करते भये। ये महाराजाओंके राजा सदा प्रसन्नवदन मुखसू अमृत बचन बोलें, सबनिकर सेवने योग्य जे दूरवर्ती दुष्ट भूपाल हुते ते अपने तेजकर मलिन वदन किए सब मुरझाय गए। इनका तेज ये जब जन्मे तबसे इनके साथ ही उपज्या है। शस्त्रनिके धारणकर जिनके कर अर उदर श्यामताकू धरें हैं, अर मानू अनेक राजावोंके प्रतापरूप अग्निके बुझावनेसू श्याम हैं। समस्त दिशारूप स्त्री वशीभूत कर देनेवाली

भई, महा धीर धनषके धारक तिनके सब आज्ञाकारी भए। जैसा लवण तैसा ही अंकुश। दोनो भाइनि विषै कोई कमी नहीं। ऐसा शब्द पृथ्वीविषै सबके मुख। ये दोनो नवयौवन, महा सुन्दर, अद्भुत चेष्टाके धरणहारे, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, समस्त लोकनिकर स्तुति करिवे योग्य, जिनके देखिवेकी सबके अभिलाषा, पुण्य परमाणुनिकरि रचा है पिंड जिनका, सुखका कारण है दर्शन जिनका स्त्रियोंके मुख-रूप कुमुद तिनके प्रफुल्लित करनेको शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान सोहते भए। माताके हृदयकू आनन्दके चलते फिरते सुमेरु ही ये कुमार सूर्यसमान कमल नेत्र देवकुमार सारिखे, श्रीवत्स लक्षणकर मंडित है वक्षस्थल जिनका अनंत पराक्रमके धारक, संसार समुद्रके तट आए, चरम शरीर, परस्पर महाप्रेम के पात्र, सदा धर्मके मार्गमें तिष्ठे हैं, देवनिका अर मनुष्यनिका मन हरै हैं।

भावार्थ—जो धर्मात्मा होय सो काहूका कुछ न हरै। ये धर्मात्मा परधन परस्त्री तो न हरैं परन्तु पराया मन हरैं। इनकू देख सबनिका मन प्रसन्न होय। ये गुणनिकी हदकू प्राप्त भए हैं। गुण नाम डोरेका भी है, सो हदपर गांठकू प्राप्त होय है। अर इनके उरविषै गांठ नाहीं, महानिष्कपट हैं। अपने तेजकर सूर्यकू जीतै हैं, अर कांतिकर चन्द्रमाकू जीतै हैं। अर पराक्रमकर इन्द्रकू, अर गम्भीरता कर समुद्रकू, स्थिरताकर सुमेरुकू, अर क्षमाकर पृथ्वीकू, अर शूरवीरताकर सिंहकू, चालकर हंसकू जीतैं हैं। अर महा जलविषै मकर ग्राह नक्रादिक जलचरनिसू क्रीडा करै हैं। अर माते हाथियोंसू तथा सिंह अष्टापदोंसू क्रीडा करते खेद न गिनैं। अर महा सम्यकदृष्टि, उत्तम स्वभाव, अति उदार उज्ज्वलभाव, जिनसू कोई युद्ध न कर सकै, महायुद्धविषै उद्यमी जे कुमार सारिखे, मधुकैटभ सारिखे, इन्द्रजीत मेघनाद सारिखे योधा, जिनमार्गी, गुरुसेवाविषै तत्पर, जिनेश्वरकी कथाविषै रत, जिनका नाम सुने शत्रुवोंको त्रास उपजै। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहते भए—हे राजन! ते दोनों वीर महाधीर गुणरूप रत्नके पर्वत महा ज्ञानवान, लक्ष्मीवान, शोभा कांति कीर्तिके निवास, चित्त-रूप माते हाथीके वश करिवेकू अंकुश, महाराजरूप मन्दिरके दृढ स्तम्भ, पृथ्वीके सूर्य, उत्तम आच-

रणके धारक, लवण अंकुश नरपति विचित्र कार्यके करणहारे, पुण्डरीकनगरविषै यथेष्ट देवनिकी न्याईं रमै। महा उत्तम पुरुष जिनके निकट, जिनका तेज लख सूर्य भी लज्जावान होय। जैसे बलभद्र नारायण अयोध्याविषै रमै तैसे यह पुण्डरीकपुरविषै रमै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुशका पराक्रम वर्णन करनेवाला एकसौवा पर्व पूर्ण भया ॥ १ ॥

अथानन्तर अति उदार क्रियाविषै योग्य, अति सुन्दर तिनकूं देख वज्रजंघ इनके परणायवेविषै उद्यमी भया। तब अपनी शशिचूला नामा पुत्री लक्ष्मीराणीके उदरविषै उपजी बत्तीस कन्या सहित लवणकुमारकू देनी विचारी। अर अंकुशकुमारका भी विवाह लारही करना, सो अंकुशयोग्य कन्या ढूंढिवेकूं चिंतावान भया। फिर मनविषै विचारी पृथ्वीपुर नगरका राजा पृथु ताकी राणी अमृतवती, ताकी पुत्री कनकमाला, चन्द्रमाकी किरण समान निर्मल, अपने रूपकर लक्ष्मीकूं जीते है। वह मेरी पुत्री शशिचूला समान है। यह विचार ताप दूत भेज्या। सो दूत विचक्षण पृथ्वीपुर जाय पृथुसूं कही। जौं लग दूतने कन्यायाचनके शब्द न कहे तौंलग उसका अति सन्मान किया। अर जब याने याचनेका वृत्तांत कहा तब वह क्रोधायमान भया अर कहता भया—तू पराधीन है, अर पराई कहाई कहै है। तुम दूत लोग जलके धारा समान हो, जा दिशा चलावे वाही दिश चालो। तुमविषै तेज नाहीं, बुद्धि नाहीं। जो ऐसे पापके वचन कहै ताकूं निग्रह करूं। पर तू पराया प्रेरा यन्त्र समान है, यन्त्री यन्त्र बजावे है त्यो बाजै, तातै तू हनिवे योग्य नाहीं। हे दूत! १ कुल, २ शील, ३ धन, ४ रूप ५ समानता, ६ बल, ७ वय, ८ देश, ९ विद्या ये नव गुण वरके कहे हैं। तिनविषै कुल मुख्य है, सो जिनका कुल ही न जानिये, तिनकूं कन्या कैसे दीजिए? तातैं ऐसी निर्लज्ज बात कहै है सो राजा नीतिसूं प्रतिकूल है। सो कुमारी तो मैं न द्यूं अर कु कहिए खोटी मारी कहिये मृत्यु सो द्यूं। या भांति दूतकूं विदा किया। सो दूतने आयकर वज्रजंघकूं व्यौरा कह्या। सो वज्रजंघ आपही चढ़कर

आधी दूर आय डेरा किये। अर बडे पुरुषनिकू भेज बहुरि पथुसू कन्या याची। ताने न दई। तब राजा वजजघ पृथुका देश उजाडने लगा, अर देशका रक्षक राजा व्याघरथ ताहि युद्धविषै जीति बाध लिया। तब राजा पथुने सुना कि व्याघरथकू राजा वजजघ बाधा अर मेरा देश उजाडे है तब पथुने अपना परम मित्र पोवनापुरका पति परम सेनासू बुलाया। तब वजजघने पुण्डरीकपुरसू अपने पुत्र बुलाए। तब पिताकी आज्ञा पाय पुत्र शीघ्र ही चलिबे कू उद्यमी हुए। नगरविषै राजपुत्रनिके कूचका नगारा बाजा। तब सामन्त बखतर पहिरे आयुध सजकर युद्धके चलिबेकू उद्यमी भए। नगरविषै अति कोलाहल भया, पुण्डरीकपुरविषै जैसा समुद्र गाजै ऐसा शब्द भया। तब सामन्तनिके शब्द सुन लवण अर अकुश निकटवर्तीनिकू पूछते भए यह कोलाहल शब्द काहेका है? तब काहूने कही अकुशकुमारके परणायवे निमित्त वजजघ राजाने पथुकी पुत्री याची हुती, सो ताने न दई। तब राजा युद्धकू चढे। अर राजा अपनी सहायताके अर्थ अपने पुत्रनिकू बुलाया है, अर सेना बुलाई है सो यह सेनाका शब्द है। यह समाचार सुन कर दोऊ भाई आप युद्धके अर्थ अति शीघ्रही जायवेकू उद्यमी भए। कैसे है कुमार? आज्ञाभगकू नाहीं सह सकै है। तब राजा वजजघके पुत्र इनकू मने करते भए, अर सब राजलोक मने करते भए, तौ हू इन न मानी। तब सीता पुत्रनिके स्नेहकर द्रवीभूत हुवा है मन जाका सो पुत्रनिकू कहती भई—तुम बालक हो, तिहारा युद्धका समय नाहीं। तब कुमार कहते भए—हे माता! तू यह कहा कहो? बडा भया अर कायर भया तो कहा? यह पृथ्वी योधानिकर भोगवे योग्य है। अर अग्निका कण छोटा ही होय है अर महा बनकू भस्म करै है। या भांति कुमारने कही। तब माता इनकू सुभट जान आखोसे हर्ष अर शोकके किंचितमात्र अश्रुपात करती भई। ये दोऊ वीर महाधीर स्नान भोजन कर आभूषण पहिरे, मन वचन काय कर सिद्धनिकू नमस्कारकर बहुरि माताकू प्रणामकर, समस्त विधिविषै प्रवीण घरते बाहिर आए। तब भले भले शकुन भए। दोऊ रथ चढ सम्पूर्ण शस्त्रनिकर युक्त शीघ्रगामी तुरग जोड पथुपर चाले। महा सेनाकर मंडित,

धनुषबाण ही ह सहाय जिनके, महा पराक्रमी, परम उदारचित्त, सग्रामके अग्रेसर, पाच दिवसमें वज्रजघप जाय पहुँचे। तब राजा पथु शत्रुनिकी बडी सेना आई सुन आप भी बडी सेनासहित नगर से निकस्या। जाके भाई, मित्र, पुत्र, मामाके पुत्र, सबही परम प्रीतिपात्र, अर अगदेश, बगदेश, मगध देश आदि अनेक देशनिके बडे बडे राजा तिन सहित, रथ तुरग हाथी पयादे बडे कटक सहित, वज-जघके सामत परसेनाके शब्द सुन युद्धकू उद्यमी भए। दोऊ सेना समीप भई। तब दोऊ भाई लवणा-कुश महा उत्साहरूप परसेनाविष प्रवेश करते भए। वे दोऊ योधा महा कोपकू प्राप्त भए, अति शीघ्र ह परावत्त जिनका, परसेनारूप समुद्रविष क्रीडा करते सब ओर परसेनाका निपात करते भए। जैसे बिजलीका चमत्कार जिस ओर चमके उस ओर चमक उठ तस सब ओर मार मार करते भए। शत्रुनित न सहा जाय पराक्रम जिनका, धनुष पकडते बाण चलाते दृष्टि न पडे, अर बाणनि कर हते अनेक दृष्टि पडे। नाना प्रकारके क्रूर बाण तिनकरि वाहनसहित परसेनाके अनेक घोडा पोडे पृथ्वी दुगम्य होय गई। एक निमिषमें पृथुकी सेना भागी, जस सिहके त्राससू मदोन्मत्त गजनिके समूह भागे। एक क्षणमात्रमें पृथुकी सेनारूप नदी, लवणाकुशरूप सूय, तिनके बाणरूप किरणनिकरि शोककू प्राप्त भई। कईएक मारे पडे, कईएक भयत पीडित होय भागे, जस आकके फूले उडे उडे फिरे। राजा पृथु सहायरहित खिन्न होय भागवेकू उद्यमी भया। तब दोऊ भाई कहते भए—हे पृथु! हम अज्ञात-कुल शील, हमारा कुल कोऊ जाने नाहीं, तिनप भागता तू लज्जावान न होय ह? तू खडा रह, हमारा कुल शील तोहि बाणनिकर बताव। तब पथु भागता हुता सो पीछा फिर हाथ जोड नमस्कारकर स्तुति करता भया। तुम महा धीर वीर हो। मेरा अज्ञानताजनित दोष क्षमा करहु। म मूख तिहारा माहात्म्य अब तक न जाना हुता। महा धीरवीरनिका कुल या सामतताही त जा या जाय ह। कछु वाणीके कहे न जा या जाय ह। सो अब म नि सदेह भया। वनके दाहकू समथ जो अग्नि सो तेज ही तै जानी जाय ह। सो आप परम धीर महाकुलविष उपजे हमारे स्वामी हो। महा भाग्यके योग्य तिहारा

बशन भया। तुम सबकू मनबाछित सुखके दाता हो या भाति पथुने प्रशसा करी।

तब दोऊ भाई नीचे होय गए, अर क्रोध मिट गया, शात मन अर शात सुख होय गए। वजजघ कुमारनिके समीप आया, अर सब राजा आए। कुमारनिके अर पथुके प्रीति भई। जे उत्तम पुरुष है वे प्रणाममात्र ही करि प्रसन्नताकू प्राप्त होय ह। जस नदीका प्रवाह नमीभूत जे बेल तिनकू न उपाडे, अर जे महा वृक्ष नमीभूत नाहीं तिनकू उपाडे। फिर राजा वजजघकू अर दोऊ कुमारनिकू पथु नगरविषै ले गया। दोऊ कुमार आनन्दके कारण। मदनाकुशकू अपनी कन्या कनकमाला महाविभूति सहित पथुने परणाई। एक रात्रि यहा रहे। फिर ये दोऊ भाई विचक्षण दिग्विजय करिवेकू निकसे। सुहृधदेश मगधदेश, अगदेश, बगदश जीति पोदनापुरके राजाकू आदि दे अनेक राजा सग ले लोकाक्ष नगर गए। वा तरफक बहुत देश जीते। कुबरकात नामा राजा अतिमानी ताहि ऐसा वश किया जस गरुड नागकू जीतै। सत्याथपनेत दिन दिन इनक सेना बढी, हजारो राजा वश भए, अर सेवा करने लगे। फिर लपाक देश गए। वहा करण नामा राजा अति प्रबल, ताहि जीतकर विजयस्थलकू गए। वहाके राजा सौ भाई, तिनकू अवलोकनमात्रत ही जीति गगा उतर कलाश की उत्तर दिश गए। वहाके राजा नाना प्रकारकी भेंट ले आय मिले। झष कु तल नामा देश तथा सालाय नन्दि नन्दन स्यघल शलभ अनल चल भीम भूतरव इत्यादि अनेक देशाधिपतिनिकू वशकर सिंधु नदीके पार गये। समुद्रके तटके राजा अनेकनिकू नमाये। अनेक नगर, अनेक खेट, अनक अटम्ब, अनेक देश, वश कीये। भीरुदेश, यवन, कच्छ, चारव, त्रजट, नट, मक्र, केरल, नेपाल, मालव, अरल, सबर, त्रिशिर पार, शल, गोशाल, कुसीनर, सूरपाक, सनत विधि शूरसन, बाह्लीक, उलूक, कोशल, गाधार, सौवीर अन्ध्र काल, कलिंग इत्यादि अनेक देश वश किये। कसे ह देश ? जिनविषै नानाप्रकारकी भाषा अर वस्त्रनिका भिन्न भिन्न पहराव, अर जुदे जुदे गुण, नाना प्रकारके रत्न अनेक जातिके वृक्ष जिनविषै अर नानाप्रकार स्वण आदि धनके भरे।

कईएक देशनिके राजा प्रताप होत आय मिले। कईएक युद्धविषै जीति वश किये, कईएक भाग गये। बडे बडे राजा देशपति अति अनुरागी होय लवणाकुशके आज्ञाकारी होते भये। इनकी आज्ञा प्रमाण पृथ्वीविषै विचरे। वे दोनो भाई पुरुषोत्तम पृथ्वीकू जीत हजारो राजनिके शिरोमणि होते भए। सबनिकू वशकर लार लिए, नानाप्रकारकी सुन्दर कथा करते, सबका मन हरते पुण्डरीकपुरकू उद्यमी भए। बज्रजंघ लार ही है। अति हर्षके भरे अनेक राजनिकी अनेक प्रकार भेंट आई सो महाविभूतिकू लिए अति सेना कर मण्डित पुण्डरीकपुरके समीप आए। सीता सतखणे महिल चढी देखे है, राजलोककी अनेक राणी समीप है अर उत्तम सिंहासनपर तिष्ठे है। दूरसे अति सेनाकी रजके पटल उठे देख सखीजनकू पूछती भई—यह दिशाविषै रजका उडाव कैसा है। तब तिन कही—हे देवी! सेनाकी रज है जैसे जलविषै मकर किलोल करे तैसे सेनाविषै अश्व उछलते आवे है। हे स्वामिनि! ये दोनो कुमार पृथ्वी वशकर आए। या भांति सखीजन कहे है, अर बधाई देनहारे आए, नगरकी अति शोभा भई, लोकनिकू अति आनन्द भया, निर्मल ध्वजा चढाई, समस्त नगर सुगन्धकर छांटा, अर वस्त्र आभूषणनिकर शोभित किया, दरवाजेपर कलश थाप, सो कलश पल्लवनिकरि ढके, अर ठौर ठौर वन्दनमाला शोभायमान दिखती भई, अर हाट बाजार पाटवरादि वस्त्रकर शोभित भए। जैसी श्रीराम लक्ष्मणके आए अयोध्याकी शोभा भई हुती तैसे ही पुण्डरीकपुरकी शोभा कुमारनिके आएसू भई। जादिन महाविभूतिसू प्रवेश किया तादिन नगरके लोगनिकू जो हर्ष भया सो कहिवेविषै न आवे। दोऊ पुत्र कृतकृत्य, तिनकू देखकर सीता आनन्दके सागरविषै मग्न भई। दोऊ वीर महा धीर आयकर हाथ जोड माताकू नमस्कार करते भए। सेनाकी रजकरि धूसरा है अंग जिनका। सीताने पुत्रनिकू उरसू लगाय माथे हाथ धरा। माताकू अति आनन्द उपजाय दोऊ कुमार चांद सूर्यकी न्याई लोकविषै प्रकाश करते भये।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुश दिग्विजय वर्णन करनेवाला एकसौएकवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०१ ॥

अथानन्तर ये उत्तम मानव परम ऐश्वर्य धारक प्रबल राजानिपर आज्ञा करते सुखसू तिष्ठै। एक दिन नारदने कतातवक्रकू पूछी कि तू सीताकू कहा मेल आया। तब ताने कही कि सिंहनाद अटवीविषै मेती। सो यह सुनकर अति व्याकुल होय ढूंढता फिरै हुता सो दोऊ कुमार वनक्रीडा करते देखे। तब नारद इनके समीप आया। कुमार उठकर सन्मान करते भए। नारद इनकू विनयवान देख बहुत हर्षित भया अर असीस दई जसे राम लक्ष्मण नरनाथके लक्ष्मी है तैसी तुम्हारे होहु। तब ये पूछते भए कि देव! राम लक्ष्मण कौन है, अर कौन कुलविषै उपजे है, अर कहा उनविषै गुण है, अर कैसा तिनका आचरण ह? तब नारद क्षण एक मौन पकढ कहते भए, हे दोऊ कुमारो! कोई मनुष्य भुजानिकर पवतकू उखाडे अथवा समुद्रकू तिरै तौहू राम लक्ष्मणके गुण न कहि सक। अनेक वदनानकर दीर्घ कालतक तिनके गुण वणन कर तौ भी राम लक्ष्मणके गुण कह न सक, तथापि म तिहारे वचनसू किंचितमात्र वणन करू हू, तिनके गुण पुण्यके बढावनहारे ह।

अयोध्यापुरीविषै राजा दशरथ होते भए। दुराचाररूप ईंधनके भस्म करिवेकू अग्नि समान, अर इक्ष्वाकुवंशरूप आकाशविषै चन्द्रमा, महा तेजोमय सूय समान, सकल पृथ्वीविषै प्रकाश करते अयोध्या-विषै तिष्ठ। वे पुरुषरूप पवत तिनकरि कीर्तिरूप नदी निकसी, सो सकल जगतकू आनन्द उपजावती समुद्र पयन्त विस्तारकू धरती भई। ता दशरथ भूपतिके राज्यभारके धुरन्धरही चार पुत्र महा गुण-वान भए, एक राम, दूजा लक्ष्मण, तीजा भरत, चौथा शत्रुघ्न। तिनविषै राम अति मनोहर, सव शस्त्रके ज्ञाता पृथ्वीविषै प्रसिद्ध। सो छोटे भाई लक्ष्मण सहित अर जनककी पुत्री जो सीता ता सहित पिताकी आज्ञा पालिवे निमित्त अयोध्याकू तज पथ्वीविषै विहार करते दंडकवनविषै प्रवेश करते भए। सो स्थानक महाविषम, जहा विद्याधरनिके गम्यता नहीं, खरदूषणत सग्राम भया। रावणने सिंहनाद किया। ताहि सुनकर लक्ष्मणकी सहाय करिवेकू राम गया। पीछेसू सीताकू रावण हर ले गया। तब रामसू सुग्रीव हनुमान विराधित आदि अनेक विद्याधर भेले भये, रामके गुणनिके अनुरागकरि वशीभूत है हृदय जिनका। सो विद्याधरनिकू लेयकरि राम लंकाकू गए। रावणकू जीत, सीताकू लय अयोध्या

आए। स्वर्गपुरी समान अयोध्या विद्याधरनिने बनाई। तहां राम लक्ष्मण पुरुषोत्तम नागेन्द्र समान सुखसू राज्य करै। रामकूं तुम अब तक कैसे न जाना, जाके लक्ष्मणसा भाई, ताके हाथ सुदर्शन चक्र सो आयुध, जाके एक एक रत्नकी हजार हजार देव सेवा करैं। सात रत्न लक्ष्मणके, अर चार रत्न रामके जानें। प्रजाके हितनिमित्त जानकी तजी। ता रामकूं सकल लोक जानें। ऐसा कोई पृथ्वीविषै नाहीं जो रामकूं न जानै। या पृथ्वीकी कहा बात, स्वर्गविषै देवनिके समूह रामके गुण वर्णन करैं हैं।

तब अंकुशने कही—हे प्रभो! रामने जानकी काहे तजी सो वृत्तांत मैं सुना चाहूं। तब सीताके गुणनिकर धर्मानुरागमें है चित्त जाका ऐसा नारद सो आंसू डार कहता भया—हे कुमार हो! वह सीता सती महा कुलविषै उपजी शीलवती, गुणवती, पतिव्रता, श्रावकके आचारविषै प्रवीण, रामकी आठ हजार राणी तिनकी शिरोमणि, लक्ष्मी कीर्ति धृति लज्जा तिनकूं अपनी पवित्रतातैं जीतकर साक्षात जिनवाणीतुल्य। सो कोई पूर्वोपार्जित पापके प्रभावकर मूढ लोक अपवाद करते भए। तातैं रामने दुखित होय निर्जन वनविषै तजी। खोटे लोक तिनकी वाणी सोई भई जेठके सूर्यकी किरण, ताकर तप्तायमान वह सती कष्टकूं प्राप्त भई। महा सुकुमार, जाविषै अल्प भी खेद न सहारा पडै। मालतीकी माला दीपके आतापकरि मुरझाय सो दावानलका दाह कैसे सहार सकै? महा भीम बन जाविषै अनेक दुष्ट जीव तहां सीता कैसे प्राणनिकूं धरै? दुष्ट जीवनिकी जिह्वा भुजंग समान निरपराध प्राणिनिकूं क्यों डसै? शुभ जीवनिकी निन्दा करते दुष्टनिके जीभके सौ टूक क्यों न होवैं? वह महा सती पतिव्रतानिकी शिरोमणि पटुता आदि अनेक गुणनिकर प्रशंसा योग्य, अत्यंत निर्मल, महा सती, ताकी जो निंदा करै सो या भव अर परभवविषै दुखकूं प्राप्त होय। ऐसा कहकरि शोकके भारकर मौन गहि रहा, विशेष कछू न कहा सक्या। सुनकर अंकुश बोले—हे स्वामी! भयंकर बनविषै रामने सीताकूं तजते भला न किया। यह कुलवंतोंकी रीति नाहीं है। लोकापवाद निवारिवेके

ग्रौर ग्रनेक उपाय ह, ऐसा ग्रविवेकका काय ज्ञानवत क्यो कर ? ग्रकुशन तो यही कही ग्रर ग्रनगलवण बोल्या यहासू ग्रयोध्या केतीक दूर ह ?

तब नारव कही—यहासे एकसौ साठ योजन ह जहा राम विराजे ह । तब वोऊ कुमार बोले—हम राम लक्ष्मणपर जावग । या पथ्वीविष एसा कौन जाकी हम ग्रागे प्रबलता ? नारवसू यह कही ग्रर वजजघसू कही—हे मामा ! सूक्ष्मदेश, सिधदेश, कलिगदेश इत्यादि देशनिके राजानिकू ग्राज्ञापत्र पठा वहु जो सग्रामका सब सरजाम लेकर शीघ ही ग्राव । हमारा ग्रयोध्याकी तरफ कूच है । ग्रर हाथी सम्हारो, मदोन्मत्त केते ग्रर निमद केते ? ग्रर घोडे वायु समान ह वेग जिनका सो सग लेकर ग्रर जे योधा रणसग्रामविष विख्यात कभी पीठ न दिखाव तिनकू लार लेवहु । सब शस्त्र सम्हारो, वक्तरनिकी मरम्मत करावहु । ग्रर युद्धके नगाडे दिवावहु, ढोल बजावहु, शखनिके शब्द करावहु । सब सामतनिकू युद्धका विचार प्रकट करहु । यह ग्राज्ञाकर वोऊ वीर मनविष युद्धका निश्चयकरि तिष्ठे, मानो वोऊ भाई इन्द्र ही ह । वेवनि समान जे देशपति राजा तिनकू एकत्र करिवेकू उद्यमी भए । तब राम लक्ष्मणपर कुमारनिकी ग्रसवारी सुनि सीता रुवन करती भई । ग्रर सीताके समीप नारवकू सिद्धाथ कहता भया यह ग्रशोभन काय तुम कहा ग्रारम्भा ? रणविष उद्यम करिवेका ह उत्साह जिनके ऐसे तुम, सो पिता ग्रर पुत्रनिविष क्यो विरोधका उद्यम किया ? ग्रब काहू भाति यह विरोध निवारो, कुटुम्बभेद करना उचित नाहीं । तब नारव कही म तो ऐसा कछू जान्या नाहीं । इन विनय किया म ग्राशीस वई कि तुम राम लक्ष्मणसे होवहु । इनने सुनकर पूछी राम लक्ष्मण कौन ह ? म सब वत्तात कह्या । ग्रब भी तुम भय न करहु सब नीके ही होयगा । ग्रपना मन निश्चल करहु । कुमारनिने सुनी कि माता रुवन कर ह । तब वोऊ पुत्र माताके पास ग्राय कहते भए, हे मात ! तुम रुवन क्यो करो हो ? सो कारण कहहु । तिहारी ग्राज्ञाकू कौन लोप ? ग्रसुन्वर वचन कौन कह ता बुष्टके प्राण हर । ऐसा कौन है जो सपकी जीभतै क्रीडा कर ? एसा कौन मनुष्य ग्रर वेव जो तुमकू ग्रसाता उपजाव ? ह

मात ! तुम कौनपर कोप किया है ? जापर तुम कोप करहु ताकू जानिए आयुका अन्त आया है । हमपर कृपाकर कोपका कारण कहहु । या भांति पुत्रनि विनती करी तब माता आंसू डार कहती भई । हे पुत्र ! मैं काहूपर कोप न किया, न मुझे काहूने असाता दई । तिहारा पितासूं युद्धका आरम्भ सुनि मैं दुखित भई रुदन करूं हूं । गौतम स्वामी कहै है । हे श्रेणिक ! तब पुत्र मातासूं पूछते भए, हे माता ! हमारा पिता कौन ? तब सीता आदिसूं लेय सब वृत्तांत कह्या । रामका वंश, अर अपना वंश, विवाहका वृत्तांत, अर वनका गमन, अपना रावणकर हरण अर आगमन, जो नारदने वृत्तांत कह्या हुता सो सब विस्तारसूं कह्या, कछु छिपाय न राख्या । अर कही तुम गर्भविषै आए तब ही तिहारे पिताने लोकापवादका भयकर सिंहनाद अटवीविषै तजी । तहां मैं रुदन करती हुती, सो राजा वज्रजंघ हाथी पकडने गया हुता, सो हाथी पकड बाहुडे था, मोहि रुदन करती देखी सो यह महा धर्मात्मा शीलवंत श्रावक मोहि महा आदरसूं ल्याय बडी बहिनका आदर जनाया अर सत सन्मानतें यहां राखी । मैं भाई भामंडल समान याका घर जान्या । तिहारा यहां सन्मान भया । तुम श्रीरामके पुत्र हो । राम महाराजाधिराज हिमाचल पर्वतसूं लेय समुद्रांत पृथ्वीका राज्य करै हैं । जिनके लक्ष्मण सा भाई महा बलवान संग्रामविषै निपुण है । न जानिए नाथकी अशुभ वार्ता सूनूं, अक तिहारी अथवा देवरकी । तातैं आर्तचित्त भई रुदन करूं हूं । अर कोऊ कारण नाहीं । तब सुनकर पुत्र प्रसन्न वदन भए अर मातासूं कहते भये, हे माता ! हमारा पिता महा धनुषधारी लोकविषै श्रेष्ठ लक्ष्मीवान विशालकीर्तिका धारक है अर अनेक अद्भुत कार्य किए हैं, परन्तु तुमकूं वनविषै तजी सो भला न किया । तातैं हम शीघ्र ही राम लक्ष्मणका मानभंग करेंगे । तुम विषाद मत करहु । तब सीता कहती भई, हे पुत्र हो ! वे तिहारे गुरुजन हैं, उनसूं विरोध योग्य नाहीं, तुम चित्त सौम्य करहु । महा विनयवन्त होय जाकर पिताकूं प्रणाम करहु । यह ही नीतिका मार्ग है ।

तब पुत्र कहते भए, हे माता ! हमारा पिता शत्रुभावकूं प्राप्त भया । कैसे जाय प्रणाम करैं

अर दीनताके वचन कसे कहे ? हम तो माता तिहारे पुत्र हैं तात रणसंग्रामविषै हमारा मरण होय तो होवो परन्तु योधानिसे निंद्य कायर वचन तो हम न कहें। यह वचन पुत्रनिके सुन सीता मौन पकड रही, परन्तु चित्तमें अति चिन्ता है। दोऊ कुमार स्नानकर भगवानकी पूजाकरि मंगलपाठ पढ, सिद्धनिकूं नमस्कारकरि माताकूं धीय व धाय प्रणामकरि दोऊ महा मंगलरूप हाथीपर चढे, मानूं चाव सूर्य गिरिके शिखर तिष्ठे है। अयोध्या ऊपर युद्धकूं उद्यमी भए, जैसे राम लक्ष्मण लंका ऊपर उद्यमी भए हुते। इनका कूच सुन हजारो योधा पुण्डरीकपुरसूं निकसे, सब ही योधा अपना अपना हल्ला देते भए। वह जाने मेरी सेना अच्छी दीखे है वह जाने मेरी। महाकटक संयुक्त नित्य एक योजन कूच कर सो पृथ्वीकी रक्षा करते चले जाय हैं किसीका कुछ उजाडे नाहीं। पृथ्वी नानाप्रकार के धान्यकरि शोभायमान है। कुमारनिका प्रताप आगे आगे बढता जाय है। मार्गके राजा भेंट दे मिले है। दस हजार बेलदार कुदाल लिए आगे आगे चले जाय हैं, अर धरती ऊंची नीचीकूं सम करे है। अर कुल्हाडे है हाथविषै जिनके वे भी आगे आगे चले जाय है। अर हाथी, ऊंट, भैंसा, बलद, खच्चर खजानेके लदे जाय है। मंत्री आगे आगे चले जाय है। अर प्यादे हिरणकी न्याईं उछलते जाय है। अर तुरंगनिके असवार अति तेजीसे चले जाय है। तुरंगनिकी हींस होय रही है। अर गजराज चले जाय हैं जिनके स्वर्णकी सांकल, अर महा घण्टानिका शब्द होय है, अर जिनके कानोंपर चमर शोभे है। अर शंखनिकी ध्वनि होय रही है। अर मोतिनिकी झालरी पानीके बबुवा समान अत्यंत सोहै है। अर सुन्दर है आभूषण जिनके, महा उद्धत, जिनके उज्ज्वल दांतनिके स्वर्ण आदिक बंध बन्धे है, अर रत्न स्वर्ण आदिकको माला तिनकरि शोभायमान, चलते पर्वत समान नानाप्रकारके रंग सूं रंगे अर जिनके मद झरे है अर कारी घटा समान श्याम प्रचंड वेगकूं धरें जिनपर पाखर परी है नानाप्रकारके शस्त्रनिकरि शोभित है अर गर्जना करे है, अर जिनपर महादीप्तिके धारक सामंत लोक चढे हैं, अर महावतनिने अति सिखाये हैं, अपनी सेनाका अर परसेनाका शब्द पिछाने हैं, सुन्दर है चेष्टा

जिनकी । अर घोडानिके असवार बखतर पहिरे खेट नामा आयुधनिकू धरे, बरछी ह जिनक हाथविष, घोडानिके समूह तिनके खुरनिके घातकर उठी जो रज ताकरि आकाश व्याप्त होय रह्या ह, ऐसा सोहै ह मानो सुफेद बादलनिसू म डित ह । अर पियादे शस्त्रनिके समूहकरि शोभित अनेक चेष्टा करते गवसे चले जाय ह । वह जान म आगे चलू, वह जाने म । अर शयन आसन ताबूल सग ध माला महामनोहर वस्त्र आहार विलेपन नानाप्रकारकी सामग्री बटती जाय ह, ताकरि सबही सेनाके लोक सुखरूप ह । काहूकू काहू प्रकारका खेद नाही । अर मजल मजलत कुमारनिकी आज्ञाकरि भले भले मनुष्यनिकू लोक नानाप्रकारकी वस्तु दव ह । उनकू यही काय सौंप्या ह सो बहुत सावधान ह । नानाप्रकारके अन्न जल मिष्टान्न लवण घत, दुग्ध, दही, अनेक रस भाति भाति खानेकी वस्तु आदरसू देव ह । समस्त सेनाविष कोई दीन बुभुक्षित तषातुर कुवस्त्र मलिन चि तावान दष्टि नाहीं पड ह । सेनारूप समुद्रमें नर नारी नानाप्रकारके आभरण पहिरे सु दर वस्त्रनिकर शोभायमान महा रूपवान अति हर्षित दीख । या भाति महा विभूति कर मण्डित सीताके पुत्र चले चले अयोध्याके देशविष आये, मानो स्वग लोकविष इन्द्र आए । जा देशविष यव गेहू चावल आदि अनेक धा य फल रहे ह अर पौंडे साठेनि-के बाड ठौर ठौर शोभ ह । पथ्वी अन्न जल तण कर पूण ह । अर जहा नदीनिके तीर हू मुनिके समूह क्रीडा कर ह, अर सरोवर कमलनिके शोभायमान ह अर पवत नानाप्रकारके पुष्पनिकर सुग-न्धित होय रहे ह, अर गीतनिकी ध्वनि ठौर ठौर होय रही ह, अर गाय, भस, बलधनिके समूह विचर रहे ह । अर ग्वालणी बिलोवणा बिलोव ह, जहा नगरनि सारिखे नजीक नजीक ग्राम ह, अर नगर ऐसे शोभ है मानो सुरपुर ही ह । महा तेजकरि युक्त लवणाकुश देशकी शोभा देखते अति नीतिसे आये । काहूकू काहूही प्रकारका खद न भया । हाथिनिके मद झरिवेकरि पथविष रज दब गई, कीच होय गयी । अर चचल घोडनिके खुरनिके घातकरि पथ्वी जजरी होय गई । चले चले अयोध्याके समीप आए । दूरसे सध्याके बादलनिके रग समान अति सु दर अयोध्या देख वज्रजघकू पूछी—हे माम ! यह महा ज्योति

रूप कौनसी नगरी है ? तब वज्रजघने निश्चयकर कही, हे देव ! यह अयोध्या नगरी है। जाके स्वर्ण मई कोट तिनकी यह ज्योति भास है। या नगरीविषै तिहारा पिता बलदेव स्वामी विराजै है, जाके लक्ष्मण नर शत्रुघन भाई। या भाति वज्रजघने कही। अर दोऊ कुमार शूरवीरताकी कथा करते हुए सुखसू आय पहुंचे। कटकके अर अयोध्याके बीच सरयू नदी रही। दोऊ भाईनिके यह इच्छा कि शीघ्र ही नदीको उतर नगरी लेव। जस कोई मुनि शीघ्र ही मुक्त हुवा चाहे, ताहि मोक्षको आशारूप नदी यथाख्यातचारित्र होने न देय, आशारूप नदीकू तिर तब मनि मक्त होय। तस सरयू नदीके योगसे शीघ्र ही नदीत पार उतरि नगरीविषै न पहुंच सके। तब जस नन्दन वनविषै देवनिकी सेना उतरै तैस नदीक उपवनादिविषै ही कटकके डेरा कराए।

अथानन्तर परसेना निकट आई सुन राम लक्ष्मण आश्चर्यकू प्राप्त भए। अर दोनो भाई परस्पर बतलावै ये कोई युद्धके अर्थ हमारे निकट आए है सो मूवा चाहे है। बासदेवने विराधितकू आज्ञाकरी युद्धके निमित्त शीघ्र ही सेना भेली करो, ढील न होय। जिन विद्याधरनिके कवियोकी ध्वजा, अर हाथिनिकी ध्वजा, अर वलनिकी ध्वजा, सिहनिकी ध्वजा इत्यादि अनेक भातिकी ध्वजा तिनकू वेग बुलाओ। सो विराधितन कही जो आज्ञा होयगी सोई होयगा। उसही समय सुग्रीवादिक अनेक राजावो पर दूत पठाए सो दूतके दखिवेमात्र ही सव विद्याधर बडी सेनासू अयोध्या आए। भामडल भो आया। सो भामण्डलकू अत्यन्त आकुलता देख शीघ ही सिद्धाथ अर नारद जायकर कहते भए--यह सीताके पुत्र है। सीता पुण्डरीकपुरविषै है। तब यह बात सुनकर बहुत दुखित भया अर कुमारोके अयोध्या आयवेपर आश्चर्यकू प्राप्त भया, अर इनका प्रताप सुन हर्षित भया। मनके वेग समान जो विमान, उसपर चढकर परिवारसहित पुण्डरीकपुर गया, बहिनसू मिला। सीता भामडलकू देख अति मोहित भई आसू नाखती सती विलाप करती भई। अर अपने ताईं घरसू काढनेका अर पुण्डरीकपुर आयवेका सर्व वृत्तात कह्या। तब भामण्डल बहिनको धीर्य बधाय कहता भया--हे बहिन !

तेरे पुण्यके प्रभावसू सब भला होयगा । अर कुमार अयोध्या गए सो भला न कीया, जायकर बलभद्र नारायणकू क्रोध उपजाया । राम लक्ष्मण दोनो भाई पुरुषोत्तम देवोसे भी न जीते जाय, महा योधा है । अर कुमारोके अर उनके युद्ध न होय सो एसा उपाय कर इसलिए तुमहू चलो ।

तब सीता पुत्रोकी बधूसयुक्त भामण्डलके विमानविषै बैठि चाली । राम लक्ष्मण महा क्रोधकर रथ घोटक गज पियादे देव विद्याधर तिनकर मडित समुद्रसमान सेना लय बाहिर निकसे । अर घोडानि के रथ चढा शत्रुघ्न, महा प्रतापी, मोतिनके हारकर शोभायमान है वक्षस्थल जाका सो रामके सग भया । अर कतातवक्त्र सब सेनाका अग्रेसर भया, जैसे इन्द्रकी सेनाका अग्रगामी हृदयकेशी नामा देव होय । उसका रथ अत्यन्त सोहता भया । देवनिके विमान समान जिसका रथ सो सेनापति चतुरग सेना लिए अतुलबली, अतिप्रतापी महा ज्योतिकू धरे धनुष चढाय बाण लिए चला जाय है, जिसकी श्याम ध्वजा शत्रुवोसे देखी न जाय । उसके पीछे त्रिमूर्धन विह्ण शिखीसिंहविक्रम दीर्घभुज सिंहोदर सुमेरु बालखिल्य रौद्रभूत जिसके अष्टापदोके रथ, वज्रकर्ण पृथु मारदमन मृगेन्द्रदमन इत्यादि पाचहजार नृपति कतातवक्त्रके सग अग्रगामी भए । बन्दीजन बखाने है विरद जिनके, अर अनेक रघुवंशी कुमार देखे है अनेक रण जिन्होने, शस्त्रोपर है दृष्टि जिनकी, युद्धका है उत्साह जिनके, स्वामिभक्तिविषै तत्पर, महाबलवान धरतीकू कम्पाते शीघ्रही निकसे । कईएक नानाप्रकारके रथोपर चढे, कईएक पवन समान ऊचे कारी घटा समान हाथिनिपर चढे कईएक समुद्रकी तरग समान चचल तुरग तिन-पर चढे इत्यादि अनेक वाहनोपर चढे युद्धकू निकसे । वादित्रोके शब्दोकर करी है व्याप्त दशो दिशा जिन्होने । बखतर पहिरे, टोप धरे, क्रोधकर सयुक्त है चित्त जिनका । तब लव अकुश परसेनाका शब्द सुन युद्धकू उद्यमी भए । वज्रजघकू आज्ञा करी । कुमारकी सेनाके लोक युद्धके उद्यमी हुते ही । प्रलयकाल की अग्निसमान महाप्रचड अगदेश, बगदेश, नेपाल, बर्बर पौंड मागध पारसेल स्यघल कलिग इत्यादि अनेक देशनिके राजा रत्नाककू आदि दे महा बलवत ग्यारह हजार राजा उत्तम तेजके धारक युद्धके उद्यमी

भए। दोनो सेनानिका संघट्ट भया। दोनो सेनानिके संगमविषै देवनिकूं असुरनिकूं आश्चर्य उपजै ऐसा महा भयंकर शब्द भया, जैसा प्रलयकालका समुद्र गाजै। परस्पर यह शब्द होते भए—क्या देख रह्या है प्रथम प्रहार क्यों न करै? मेरा मन तोपर प्रथम प्रहार करिवेपर नाहीं, तातैं तू ही प्रथम प्रहारकर। अर कोई कहै है एक डिग आगे होवो जो शस्त्र चलाऊं। कोई अत्यन्त समीप होय गए तब कहै हैं खंजर तथा कटारी हाथ लेवो, निपट नजीक भए बाणका अवसर नाहीं। कोई कायरकूं देख कहै है तू क्यों कांपै है मैं कायरकूं न मारूं तू परे हो, आगे महायोधा खडा है उससे युद्ध करने दे। कोई वृथा गाजै है उसे सामंत कहै है—हे क्षुद्र! कहा वृथा गाजै है गाजतेविषै सामंतपना नाहीं। जो तोविषै सामर्थ्य है तो आगे आव, तेरी रणकी भूख भगाऊं। इस भांति योधानिविषै परस्पर वचनालाप होय रहे हैं, तरवार बहै हैं, भूमिगोचरी विद्याधर सब ही आए हैं। भामण्डल पवनवेग वीर मृगांक विद्युद्ध्वज इत्यादि बडे २ राजा विद्याधर बडी सेनाकरि युक्त महा रणविषै प्रवीण सो लवण अंकुशका समाचार सुन युद्धसे पराङ्मुख शिथिल होय गए, अर सब बातोविषै प्रवीण हनुमान सो भी सीताके पुत्र जान युद्धसूं शिथिल होय रह्या। विमानके शिखरविषै आरूढ जानकीकूं देख सब ही विद्याधर हाथ जोड शीस निवाय प्रणामकर मध्यस्थ होय रहे। सीता दोनो सेना देख रोमांच होय आई कांपै है अंग जाका। लवण अंकुश लहलहाट करै है ध्वजा जिनकी। राम लक्ष्मणसूं युद्धकूं उद्यमी भए। रामके सिंहकी ध्वजा, लक्ष्मणके गरुडकी सो दोनो कुमार महायोधा राम लक्ष्मणसूं युद्ध करते भए। लवण तौ रामसे लडै अर अंकुश लक्ष्मणसे लडै, सो लवनो आवते ही श्रीरामकी ध्वजा छेदी अर धनुष तोडा। तब राम हंसकर और धनुष लेयवेकूं उद्यमी भए। इतनेविषै लवने रामका रथ तोडा। तब राम और रथ चढे। प्रचण्ड है पराक्रम जिसका क्रोधकर भ्रकुटी चढाय ग्रीष्मके सूर्य समान तेजस्वी जैसे चमरेन्द्रपर इन्द्र जाय तैसैं गया। तब जानकीका नन्दन लवण युद्धकी पाहुनिगति करनेकूं रामके सन्मुख आया। रामकै अर लवकै परस्पर महा युद्ध भया। वाने वाके शस्त्र छेदे वाने वाके। जैसा युद्ध राम

अर लवका भया तसा ही अकुश अर लक्ष्मणका भया। या भाति परस्पर दोनो युगल बलवत। योधा भी परस्पर लडे। घोडोके समूह रणरूप समुद्रकी तरग समान उछलते भए। कोईएक योधा प्रतिपक्षीकू टूट बखतर देख दयाकर मौन गह रहया। अर कईएक योधा मनै करते परसेनाविषै पैठे सो स्वामीका नाम उचारते परचक्रस लडते भए। कइएक महाभट माते हाथियोसे भिडते भए। कईएक हाथियोके दातरूप सेजपर रणनिद्रा सुखसू लेते भए। काहू एक महाभटका तुरग काम आया सो पियादा ही लडनै लगा। काहूके शस्त्र टूट गए तो भी पीछे न होता भया, हाथोसे मुष्टिप्रहार करता भया। अर काईइक सामत बाण बाहनै चूक गया उसे प्रतिपक्षी कहता भया, बहुरि चलाय, सो लज्जाकर न चलावता भया। अर कोईएक निर्भयचित्त प्रतिपक्षीकू शस्त्ररहित देख आप भी शस्त्र तज भुजाओसे युद्ध करता भया। ते योधा बड दाता रणसग्रामविषै प्राण देते भए परन्तु पीठ न दते भए। जहा रुधिरकी कीच होय रही ह सो रथोक पहिए डूब गए ह, सारथी शीघ्र ही नहीं चला सक ह। परस्पर शास्त्रोके सम्पातकर अग्नि पड रही ह अर हाथियोकी सूण्डके छाटे उछले ह। अर सामन्तोने हाथियोके कुम्भस्थल विदारे ह अर सामतनिके उरस्थल विदारे ह। हाथी काम आय गए ह तिनकर माग रुक रहया ह। अर हाथियोके मोती बिखर रहे ह। वह युद्ध महा भयकर होता भया। जहा सामत अपना सिर देयकर यशरूप रत्न खरीदते भए, जहा मूर्छितपर कोई घात नहीं कर अर निबल पर घात न कर सामन्तोका ह युद्ध जहा महायुद्धके करणहार योधा जिनके जीवनेकी आशा नहीं, क्षोभकू प्राप्त भया समद्र गाज तसा होय रहया ह शब्दजहा, सो वह सग्राम समरस कहिए समान रस होता भया।

भावार्थ—न वह सेना हटी न वह सेना हटी योधानिविषै यूनाधिकता परस्पर दृष्टि न पडी। कसे ह योधा ? स्वामीविषै ह परमभक्ति जिनकी। अर स्वामीने आजीविका दई थी उसके बदले यह जीव दिया चाहे ह। प्रचण्ड रणकी ह खाज जिनके, सूर्य समान तेजकू धरे सग्रामके धुरधर होते भए।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महापद्मपराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै लवणाकशका राम लक्ष्मणस युद्ध वर्णन करनवाला एकसौ दोवा पर्व पूर्ण भया ।। १२ ।।

अथानन्तर गौतम स्वामी कहै है-हे श्रेणिक ! अब जो वृत्तात भया सो सुनो । अनगलवणके तो सारथी राजा वज्रजघ अर मदनाकुशके राजा पथु, अर लक्ष्मणके विराधित, अर रामके कृतातवक्र । तब श्रीराम वजावर्त धनुषकू चढायकर कृतातवक्रसू कहते भए—अब तुम शीघ्रही शत्रुवो पर रथ चलावो, ढील न करो । तब वह कहता भया, हे देव ! देखो यह घोडे नरवीरके बाणनिकर जरजरे होय रहे है, इनविषै तेज नाहीं, मानू निद्राकू प्राप्त भए है । यह तुरग लोहूकी धाराकर धरतीकू रगै है, मानू अपना अनुराग प्रभुकू दिखावै है । अर मेरी भुजा इसके बाणनिकर भेदी गई है, बक्तर टूट गया है । तब श्रीराम कहते भए मेरा भी धनुष युद्धकर्मरहित ऐसा होय गया है मानू चित्रामका धनुष है, अर यह मूसल भी कार्यरहित होय गया है, अर दुर्निवार जे शत्रुरूप गजराज तिनकू अकुश समान यह हल सो भी शिथिलताकू भजै है । शत्रुके पक्षकू भयकर मेरे अमोघशस्त्र जिनकी सहस्र यक्ष रक्षा करै वे शिथिल होय गए है । शस्त्रोकी सामर्थ्य नाहीं जो शत्रुपर चलै । गौतमस्वामी कहे है—हे श्रेणिक ! जैसे अनगलवण आगे रामके शस्त्र निरर्थक होय गये तैसे ही मदनाकुशके आगे लक्ष्मणके शस्त्र कार्यरहित होय गए । वे दोनो भाई तो जानै कि ये राम लक्ष्मण तो हमारे पिता अर पितृव्य (चचा) है सो वे तो इनका अग बचाय शर चलावै । अर ये उनको जानै नाहीं सो शत्रु जानकर शर चलावै । लक्ष्मण दिव्यास्त्रकी सामर्थ्य उनपर चलिवे की न जान शर शेल सामान्यचक्र खड्ग अकुश चलावता भया । सो अकुशने वज्रदण्डकर लक्ष्मणके आयुध निराकरण किए । अर रामके चलाए आयुध लवणने निराकरण किए । फिर लवणने रामकी ओर शेल चलाया अर अकुशने लक्ष्मणपर चलाया सो ऐसी निपुणतासे दोनोके मर्मकी ठौर न लागे, सामान्य चोट लगी । सो लक्ष्मणके नेत्र घूमने लगे । विराधितने अयोध्याकी ओर रथ फेरा । तब लक्ष्मण सचेत होय कोपकर विराधितसू कहता

भया–हे विराधित ! तैने क्या किया ? मेरा रथ फेरया । अब पीछे बाहुरि शत्रुका सन्मुख लेवो, रणविषै पीठ न दीजिये । जे शूरवीर हैं तिनकूं शत्रुके सन्मुख मरण भला, परन्तु यह पीठ देना महा निन्द्यकर्म शूरवीरोंकूं योग्य नाहीं । कैसे हैं शूरवीर ? युद्धविषै बाणनिकरि पूरित है अंग जिनके, जे देव मनुष्यनिकर प्रशंसाके योग्य वे कायरता कर्म भजैं ? मैं दशरथका पुत्र, रामका भाई वासुदेव पृथ्वीविषै प्रसिद्ध सो संग्राममें पीठ कैसे देऊं ? यह वचन लक्ष्मणने कहे तब विराधितने रथकूं युद्धके सन्मुख किया । सो लक्ष्मणके अर मदनांकुशके महा युद्ध भया । लक्ष्मणने क्रोधकर महाभयंकर चक्र हाथविषै लिया । महाज्वालारूप देख्या न जाय, ग्रीष्मके सूर्य समान । सो अंकुश पर चलाया सो अंकुशके समीप जाय प्रभावरहित होय गया अर उलटा लक्ष्मणके हाथविषै आया । बहुरि लक्ष्मणने चक्र चलाया सो पीछे आया । या भांति बारबार पाछे आया । बहुरि अंकुशने धनुष हाथविषै गह्या, तब अंकुशकूं महातेजरूप देख लक्ष्मणके पक्षके सब सामन्त आश्चर्यकूं प्राप्त भए । तिनकूं यह बुद्धि उपजी यह महापराक्रमी अर्धचक्री उपज्या, लक्ष्मणने कोटि शिला उठाई, अर मुनिके वचन जिनशासनका कथन और भांति कैसे होय ? अर लक्ष्मण भी मनविषै जानता भया कि ये बलभद्र नारायण उपजे । आप अति लज्जावान होय युद्धकी क्रियासे शिथिल भया ।

अथानन्तर लक्ष्मणकूं शिथिल देख, सिद्धार्थ नारदके कहेसूं लक्ष्मणके समीप आय कहता भया–वासुदेव तुम ही हो । जिनशासनके वचन सुमेरुसूं अति निश्चल हैं । यह कुमार जानकीके पुत्र हैं, गर्भविषै थे तब जानकीकूं वनविषै तजी । यह तिहारे अंग हैं । तातैं इनपर चक्रादिक शस्त्र न चलैं । तब लक्ष्मणने दोनों कुमारोंका वृत्तान्त सुनि हर्षित होय, हाथसे हथियार डार दिए, बक्तर दूर किया । सीताके दु:खकर अश्रुपात डारने लगा । अर नेत्र घूमने लगे । राम शस्त्र डार बक्तर उतार मोहकर मूर्छित भए, चन्दनसे छांटि सचेत किये । तब स्नेहके भरे पुत्रनिके समीप चाले । पुत्र रथसे उतर हाथ जोड सीस निवाय पिताके पायन पडे । श्रीराम स्नेहकर द्रवीभूत भया है मन जिनका, पुत्रोंकूं उरसे

लगाय विलाप करते भए। आसुनि कर मघकासा दिन किया। राम कहै हैं हाय पुत्र हो! मैं मन्द-बुद्धि गर्भविषै तिष्ठते तुमकूं सीता सहित भयकर वनविषै तजे। तिहारी माता निर्दोष। हाय पुत्र हो! मैं कोई विस्तीर्ण पुण्यकरि तुम सारिखे पुत्र पाए, सो उदरविषै तिष्ठते तुम भयकर वनविषै कष्टकूं प्राप्त भए। हाय वत्स! जो यह वज्रजंघ वनविषै न आवता तो तिहारा मुखरूप चन्द्रमा मैं कैसे देखता? हाय बालक हो! इन अमोघ दिव्यास्त्रोंकर तुम न हते गए सो पुण्यके उदयकर देवोंने सहाय करी। हाय मेरे अंगज हो! मेरे बाणनिकर बींधे तुम रणक्षेत्रविषै पडते तो न जानूं जानकी क्या करती। सब दुखोंविषै घरसे काढनेका बडा दुःख है। सो तिहारी माता महा गुणवन्ती, व्रतवन्ती पतिव्रता मैं वनविषै तजी। अर तुमसे पुत्र गर्भविषै, सो मैं यह काम बहुत विना समझे किया अर जो कदाचित तिहारा युद्धविषै अन्यथा भाव भया होता तो मैं निश्चयसे जानूं हूं शोकसे विह्वल जानकी न जीवती। या भांति रामने विलाप किया। बहुरि कुमार विनय कर लक्ष्मणकूं प्रणाम करते भए। लक्ष्मण सीताके शोकसे विह्वल, आंसू डारता स्नेहका भरया, दोनों कुमारनिकूं उरसे लगावता भया। शत्रुघ्न आदि यह वृत्तान्त सुन वहां आए। कुमार यथायोग्य विनय करते भये, ये उरसूं लगाय मिले। परस्पर अति प्रीति उपजी। दोनों सेनाके लोक अतिहित कर परस्पर मिले, क्योंकि जब स्वामीकूं स्नेह होय तब सेवकनिके भी होय। सीता पुत्रोंका माहात्म्य देख अति हर्षित होय, विमानके मार्ग होय पीछे पुण्डरीकपुरविषै गई। अर भामंडल विमानसे उतर स्नेहका भरया आंसू डारता भानजोंसे मिला, अति हर्षित भया। अर प्रीतिका भरया हनुमान उरसूं लगाय मिल्या। अर बारम्बार कहता भया–भली भई, भली भई। अर विभीषण सुग्रीव विराधित सब ही कुमारनिसूं मिले। परस्पर हित-सम्भाषण भया। भूमिगोचरी विद्याधर सबही मिले। अर देवनिका आगमन भया। सबोंकूं आनन्द उपज्या, राम पुत्रनिकूं पायकर अति आनन्दकूं प्राप्त भए। सकल पृथ्वीके राज्यसे पुत्रनिका लाभ अधिक मानते भए। जो रामके हर्ष भया सो कहिवेविषै न आवे। अर विद्याधरी आकाशविषै

आनन्दसू नृत्य करती भई । अर भूमिगोचरिनिकी स्त्री पृथ्वीविषै नृत्य करती भई । अर लक्ष्मण आपकू कृतार्थ मानता भया, मानो सब लोक जीत्या, हर्षसू फूल गए है लोचन जिनके । अर राम मनविषै जानता भया मै सगर चक्रवर्ती समान हू अर कुमार दोनो भीम अर भागीरथ समान है । राम वज्रजंघसे अति प्रीति करता भया जो तुम मेरे भामंडल समान हो । अयोध्यापुरी तो पहले ही स्वर्गपुरी समान थी तो बहुरि कुमारनिके आयवेकरि अति शोभायमान भई, जैसे सुन्दर स्त्री सहज ही शोभायमान होय अर शृंगारकरि अति शोभाकू पावै । श्रीराम लक्ष्मणसहित अर दोऊ पुत्रो सहित सूर्यकी ज्योति समान जो पुष्पक विमान उसविषै विराजे, सूर्यसमान है ज्योति जिनकी । राम लक्ष्मण अर दोऊ कुमार अद्भुत आभूषण पहिरे सो कैसी शोभा बनी है मानू सुमेरुके शिखरपर महामेघ बिजुरीके चमत्कार सहित तिष्ठा है ।

भावार्थ—विमान तो सुमेरुका शिखर भया, अर लक्ष्मण महामेघका स्वरूप भया, अर राम तथा रामके पुत्र विद्युत समान भए सो ए चढकर नगरके बाह्य उद्यानविषै जिनमन्दिर है तिनके दर्शनकू चाले । सो नगरके कोटपर ठौर ठौर ध्वजा चढी है, तिनकू देखते धीरे धीरे जाय है । लार अनेक राजा कई हाथियोपर चढे, कई घोडो पर, कई रथोपर चढे जाय है, अर पियादोके समूह जाय है । धनुष बाण इत्यादि अनेक आयुध अर ध्वजा छत्रनिकर सूर्यकी किरण नजर नाहीं पडे है । अर स्त्रीनिके समूह झरोखनिविषै बैठ देखै है । लव अंकुशके देखिवेका सबनिकू बहुत कौतूहल है । नेत्ररूप अंजुलिनिकर लवणांकुशके सुंदरतारूप अमृतका पान करै है सो तृप्त नाहीं होय है । एकाग्रचित्त भई उनकू देखै है । अर नगरविषै नर नारीनिकी ऐसी भीड भई कि काहूके हार कुण्डलकी गम्य नाहीं । अर नारीजन परस्पर वार्ता करै है । कोई कहै है—हे माता ! टूक मुख इधर कर मोहि कुमारनिके देखिबेका कौतुक है । हे अखण्डकौतुक ! तूने तो घनी बार लगि देखे अब हमें देखने देवो, अपना सिर नीचा कर ज्यो हमकू दीखै, कहा ऊंचा सिर कर रही है । कोई कहै है—हे सखि ! तेरे सिरके केश बिखर रहे है,

सो नीके सम्हार । अर कोई कह ह—हे क्षिप्तमानस कहिये एक ठोर नाहीं चित्त जाका सो तू कहा हमारे प्राणनिकू पीडे ह ? तू न देख, यह गभवती स्त्री खडी ह, पीडित ह । कोऊ कहे टुक परे होहु कहा अचेतन होय रहो ह । कुमारनिकू न देखने दे ह,यह दोनो रामदेवके कुमार रामदेवके समीप बठे अष्टमीके चन्द्रमा समान ह ललाट जिनका । कोई पूछे ह इनविष लवण कौन अर अकुश कौन ? यह तो दोनो तुल्यरूप भास है । तब कोई कह ह यह लाल वस्त्र पहिरे लवण ह अर यह हर वस्त्र पहिरे अकुश ह । अहो धन्य सीता महापुण्यवती जिनने ऐसे पुत्र जने । अर कोई कहे ह धन्य ह वह स्त्री जिसने ऐसे वर पाए है । एकाग्रचित्त भई स्त्री इत्यादि वार्ता करती भई , इनके दखिवेविष ह चित्त जिनका, अति भीड भई । सो भीडविष कर्णाभरणरूप सपकी डाढकर डस गए ह कपोल जिनके सो न जानती भई, तदगत ह चित्त जिनका । काहूकी काचीदाम जाती रही सो वाहि खबर नहीं । काहूके मोतिनके हार टूटे सो मोती बिखर रहे ह । मानू कुमार आय सो ये पष्पाजली बरस ह । अर कईएकोकू नेत्रोकी पलक नाहीं लग ह असवारी दूर गई ह तो भी उसी ओर देख ह । नगरकी उत्तम स्त्री वेई भई वेल सो पुष्पवष्टि करती भई सो पुष्पनिकी मकरदकर माग सुगध होय रह्या ह । श्रीराम अति शोभाकू प्राप्त भए पुत्रनि सहित बनके चत्यालयनिके दशनकर अपने मन्दिर आए । कसा ह मन्दिर ? महा मगलकर पूण ह ऐसे अपने प्यारे जनोके आगमका उत्साह सुखरूप, ताकू वणन कहा लग कहिए । पुण्यरूपी सूयका प्रकाश कर फूल्या ह मनकमल जिनका ऐसे मनुष्य वेई अदभुत सुखकू पावे ह ।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महापद्मपराण सम कतग्र थ ताकी भाषावचनिकाविष राम ल मणम लवणाकश मिलाप वणन करनवाला एकसौ तीन वा पर्व पर्ण भया ।। १ ३ ।।

———

अथानन्तर विभीषण, सुग्रीव, हनुमान मिलकर रामसे विनती करते भये, हे नाथ ! हमपर कपा करहु, हमारी विनती मानो, जानकी दुखसू तिष्ठ ह । इसलिए यहा लायवेकी आज्ञा करहु । तब राम दीघ उष्ण निश्वास नाख क्षणएक विचारकर बोले, म सीताकू शील दोषरहित जानू हू, वह उत्तम

चित्त है। परन्तु लोकापवादकर घरसे काढी है। अब कैसे बुलाऊं ? इसलिये लोकनिकू प्रतीति उपजाय कर जानकी आवै तब हमारा उसका सहवास होय, अन्यथा कैसे होय। इसलिये सब देशनिके राजानिकू बुलावो समस्त विद्याधर अर भूमिगोचरी आवै, सबनिके देखते सीता दिव्य लेकर शुद्ध होय मेरे घरविषै प्रवेश करै। जैसे शची इन्द्रके घरविषै प्रवेश करै। तब सबने कही जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा। तब सब देशनिके राजा बुलाये सो बाल वृद्ध स्त्री परिवार सहित अयोध्या नगरी आए। जे सूर्यकू भी न देखें, घर ही विषै रहैं, वे नारी भी आईं और लोकनिकी कहा बात ? जे वृद्ध बहुत वृत्तातके जाननहार देशविषै मुखिया, सब देशनिसू आए। कईएक तुरगनिपर चढे, कईएक रथनिपर चढे तथा पालकी अर अनेक प्रकार असवारिनिपर चढे बडी विभूतिसू आए। विद्याधर आकाशके मार्ग होय विमान बैठे आए अर भूमिगोचरी भूमिके मार्ग आए। मानो जगत जंगम होय गया। रामकी आज्ञासे जे अधिकारी हुते तिन्होंने नगरके बाहिर लोकनिके रहनेके लिए डेरे खडे कराए। अर महा विस्तीर्ण अनेक महिल बनाए तिनके दृढ स्तम्भके ऊंचे मंडप, उदार झरोखे, सुन्दर जाली, तिनविषै स्त्रियें भेली अर पुरुष भेले भए। पुरुष यथायोग्य बैठे दिव्यकू देखिवेकी है अभिलाषा जिनके जेते मनुष्य आए तिनकी सब भांति पाहुनगति राजद्वारके अधिकारियोंने करी। सबनिकू शय्या आसन भोजन तांबूल वस्त्र सुगंध मालादिक समस्त सामग्री राजद्वारसे पहुंची। सबनिकी स्थिरता करी। अर रामकी आज्ञासू भामण्डल, विभीषण, हनुमान, सुग्रीव विराधित रत्नजटी यह बडे २ राजा आकाशके मार्ग क्षणमात्रविषै पुण्डरीकपुर गए। सो सब सेना नगरके बाहिर राखि अपने समीप लोगनि सहित जहां जानकी थी वहां आए, जय जय शब्दकर पुष्पांजलि चढाय पायनकू प्रणामकर अति विनयसंयुक्त आंगणविषै बैठे। तब सीता आंसू डारती अपनी निंदा करती भई—दुर्जनोंके वचनरूप दावानलकरि दग्ध भए हैं अंग मेरे सो क्षीरसागरके जलकर भी सींचे शीतल न होय। तब वे कहते भए—हे देवि भगवति सौम्य उत्तमे ! अब शोक तजो, अर अपना मन समाधानविषै लावो। या

पथ्वीविषै ऐसा कौन प्राणी है जो तुम्हारा अपवाद करै ? ऐसा कौन जो पथ्वीकू चलायमान करै अर अग्निकी शिखाकू पीवै, अर सुमेरुके उठायवेका उद्यम करै, अर जीभकर चांद सूर्यकू चाटै ? ऐसा कोई नाहीं। तुम्हारा गुणरूप रत्ननिका पर्वत कोई चलाय न सकै। अर जो तुम सारखी महासतियों का अपवाद करै तिनकी जीभके हजार टूक क्यों न होवै ? हम सेवकोंके समूहकू भेजकर जो कोई भरतक्षेत्रविषै अपवाद करेंगे उन दुष्टोंका निपात करेंगे। अर जो विनयवान तुम्हारे गुणगायवेविषैं अनुरागी हैं उनके गहविषै रत्नवष्टि करेंगे। यह पुष्पक विमान श्रीरामचन्द्रने भेज्या है उसविषै आनन्द रूप हो अयोध्याकी तरफ गमन करहु। सब देश अर नगर अर श्रीरामका घर तुम विना न सोहै जैसे चन्द्रकला विना आकाश न सोहै, अर दीपक विना मन्दिर न सोहै, अर शाखाबिना वृक्ष न सोहै। हे राजा जनककी पुत्री ! आज रामका मुखचन्द्र देखो। हे पंडिते पतिव्रते ! तुमकू अवश्य पतिका वचन मानना। जब ऐसा कहा तब सीता मुख्य सहेलियोंको लेकर पुष्पकविमानविषै आरूढ होय शीघ्र ही संध्याके समय अयोध्या आई। सूर्य अस्त होय गया सो महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै रात्रि पूर्ण करी। आगे रामसहित यहां आवती हुती सो वन अति मनोहर देखती हुती सो अब राम बिना रमणीक न भासा।

अथानन्तर सूर्य उदय भया कमल प्रफुल्लित भए। जैसे राजाके किंकर पथ्वीविषै विचरै तैसे सूर्य की किरणें पृथ्वीविषै विस्तरीं। जैसे दिव्यकर अपवाद नश जाय तैसे सूर्यके प्रतापकर अंधकार दूर भया। तब सीता उत्तम नारियोंकर युक्त रामके समीप चाली, हथिनीपर चढी। मनकी उदासीनता कर हती गई है प्रभा जाकी तो भी भद्र परिणामकी धरणहारी अत्यन्त सोहती भई। जैसे चन्द्रमाकी कला ताराओंकर मंडित सोहै तैसे सीता सखियोंकरि मंडित सोहै। सब सभा विनय संयुक्त सीताकू देख वंदना करती भई। यह पापरहित धीरताकी धरणहारी रामकी रमा सभाविषै आई। राम समुद्र समान क्षोभकू प्राप्त भए। लोक सीताके जायबेकर विषादके भरे थे, अर कुमारोंका प्रताप देख

आश्चर्य भरे भए, अब सीताके आयवेकर हर्षके भरे ऐसे शब्द करते भए–हे माता ! सदा जयवंत होवो, नन्दो, वरधो, फूलो, फलो । धन्य यह रूप, धन्य यह धीर्य, धन्य यह सत्य, धन्य यह ज्योति, धन्य यह भावुकता, धन्य यह गम्भीरता, धन्य निर्मलता । ऐसे वचन समस्त ही नर नारीनिके मुखसे निकसे । आकाशविषै विद्याधर भूमिगोचरी महा कौतुक भरे पलक रहित सीताके दर्शन करते भए । अर परस्पर कहते भए–पृथ्वीके पुण्यके उदयसे जनकसुता पीछे आई । कईएक तो वहां श्रीरामकी ओर निरखै हैं जैसे इन्द्रकी ओर देव निरखे । कईएक रामके समीप बैठे लव अर अंकुश तिनकूं देख परस्पर कहै हैं ये कुमार रामके सदृश ही हैं । अर कईएक लक्ष्मणकी ओर देखै हैं । कैसे हैं लक्ष्मण ? शत्रुओंके पक्षके क्षय करिवेकूं समर्थ । अर केई शत्रुघ्नकी ओर, केईएक भामंडलकी ओर, केईएक हनुमानकी ओर केईएक विभीषणकी ओर, केईएक विराधितकी ओर, अर केईएक सुग्रीवकी ओर निरखे हैं अर कईएक आश्चर्यकूं प्राप्त भए सीताकी ओर देखै हैं ।

अथानन्तर जानकी जायकर रामकूं देख आपकूं वियोग सागरके अन्तकूं प्राप्त भई मानती भई । जब सीता सभाविषै आई तब लक्ष्मण अर्घ देय नमस्कार करता भया, अर सब राजा प्रणाम करते भए । सीता शीघ्रताकर निकट आवने लगी तब राघव यद्यपि क्षोभित है, तथापि सकोप होय मनमें विचारते भये इसे विषम वनविषै मेली थी सो मेरे मनकी हरणहारी फिर आई । देखो यह महा ढीठ है । मैं तजी तो भी मोसे अनुराग नाहीं छाडै है । यह रामकी चेष्टा जान महासती उदासचित्त होय विचारती भई–मेरे वियोगका अन्त नहीं आया, मेरा मनरूप जहाज विरहरूप समुद्रके तीर आय फटा चाहै है । ऐसी चिंतासे व्याकुलचित्त भई, पगके अंगूठेसूं पृथ्वी कुचरती भई, बलदेवके समीप भामण्डलकी बहिन कैसी सोहै है जैसी इन्द्रके आगे सम्पदा सोहै । तब राम बोले–हे सीते ! मेरे आगे कहा तिष्ठै है ? तू परे जा, मैं तेरे देखिवेका अनुरागी नाहीं । मेरी आंख मध्याह्नके सूर्य अर आशीविषसर्प तिनकूं देख सकै परन्तु तेरे तनकूं न देख सकै है । तू बहुत मास दशमुखके मन्दिरविषै रही

अब तोहि घरविषै राखना मोहि कहा उचित ? तब जानकी बोली—तुम महा निर्दईचित्त हो, तुमने महा पंडित होयकर भी मूढलोकनिकी न्याईं मेरा तिरस्कार किया सो कहा उचित ? मुझे गर्भवती कूं जिनदर्शनका अभिलाष उपजा हुता सो तुम कुटिलतासूं यात्राका नाम लेय विषम वनविषै डारी, यह कहा उचित ? मेरा कुमरण होता अर कुगति जाती याविषै तुमकूं कहा सिद्ध होता ? जो तिहारे मनविषै तजिवेकी हुती तो आर्यिकावोंके समीप मेली होती। जे अनाथ दीन दरिद्री, कुटुम्ब रहित महादुखी तिनकूं दुख हरिवेका उपाय जिनशासनका शरण है, या समान और उत्कृष्ट नाहीं। हे पद्मनाभ ! तुम करिवेविषै तो कछू कमी न करी, अब प्रसन्न होवो, आज्ञा करो सो करूं। यह कह कर दुखकी भरी रुदन करती भई। तब राम बोले—मैं जानूं हूं। तिहारा निर्दोष शील है, अर तुम निरतिचार अणुव्रतकी धरणहारी मेरी आज्ञाकारिणी हो, तिहारे भावनकी शुद्धता मैं भलीभांति जानूं हूं, परन्तु ये जगतके लोक कुटिलस्वभाव हैं। इन्होंने वृथा तेरा अपवाद उठाया सो इनकूं संदेह मिटै, अर इनकूं यथावत प्रतीत आवै, सो करहु। तब सीताने कहा आप आज्ञा करो सो ही प्रमाण। जगतविषै जेते प्रकारके दिव्य हैं सो सब करके पृथ्वीका संदेह हरूं। हे नाथ ! विषोंविषै महा विष कालकूट है, जिसे सूंघकर आशीविष सर्प भी भस्म होय जाय सो मैं पीऊं। अर अग्निकी विषम ज्वालाविषै प्रवेश करूं। अर जो आप आज्ञा करो सो करूं। तब क्षण एक विचारकर राम बोले अग्निकुण्डविषै प्रवेश करो। सीता महाहर्षकी भरी कहती भई—यही प्रमाण। तब नारद मनविषै विचारते भए यह तो महासती है, परन्तु अग्निका कहा विश्वास ? याने मृत्यु आदरी। अर भामण्डल हनुमानादिक महाकोपसे पीडित भए, अर लव अंकुश माताका अग्नि विषै प्रवेश करिवेका निश्चय जान अति व्याकुल भये। अर सिद्धार्थ दोनों भुजा ऊंचीकर कहता भया, हे राम ! देवोंसे भी सीताके शीलकी महिमा न कही जाय तो मनुष्य कहा कहैं ? कदाचित सुमेरु पातालविषै प्रवेश करै, अर समस्त समुद्र सूख जाय, तो भी सीताका शीलव्रत चलायमान न होय। जो कदाचित चन्द्रकिरण उष्ण होय, अर

सूर्यकिरण शीतल होय तो भी सीताकूं दूषण न लगे। मैं विद्याके बलसे पंच सुमेरुविषे तथा जे और अकृत्रिम चैत्यालय शास्वते वहां जिनवन्दना करी–हे पद्मनाभ ! सीताके व्रतकी महिमा मैं ठौर २ मुनियोंके मुखसे सुनी है। तातें तुम महा विचक्षण हो, महा सतीकूं अग्निप्रवेशकी आज्ञा न करो। अर आकाशविषे विद्याधर और पृथ्वीविषे भूमिगोचरी सब यही कहते भए–हे देव ! प्रसन्न होय सौम्यता भजहु। हे नाथ ! अग्नि समान कठोर चित्त न करो, सीता सती है, सीता अन्यथा नाहीं। अन्यथा जे महा पुरुषोंकी राणी होवें कदे ही विकार रूप न होवें। सब प्रजाके लोक यही वचन कहते भए, अर व्याकुल भए मोटी मोटी आसुवोंकी बूंद डारत भए।

तब रामने कहा तुम ऐसे दयावान हो तो पहिले अपवाद क्यों उठाया ? रामने किंकरोंकूं आज्ञा करी–एक तीनसै हाथ चौखूंटिया वापी खोदहु, अर सूखे ईंधन चंदन अर कृष्णागुरु तिनकर भरहु, अर अग्नि कर जाज्वल्यमान करहु, साक्षात् मृत्युका स्वरूप करहु। तब किंकरनिने आज्ञा प्रमाण कुदालनिसे खोद अग्निवापिका बनायी। अर ताही रात्रिकूं महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषे सकल भूषण मुनिकूं पूर्व वरके योगकर महा रौद्र विद्युद्वक्त्रनामा राक्षसीने अत्यन्त उपसर्ग किया सो मुनि अत्यन्त उपसर्गकूं जीति केवलज्ञानकूं प्राप्त भये। यह कथा सुनि गौतमस्वामीसूं श्रेणिकने पूछी, हे प्रभो ! राक्षसीके अर मुनिके पूर्व वैर कहा ? तब गौतमस्वामी कहते भये–हे श्रेणिक ! सुनो–विजियार्द्धगिरि की उत्तर श्रेणीविषे महा शोभायमान गुंजनामा नगर, तहां सिंहविक्रमराजा ताके श्रीराणी ताके पुत्र सकलभूषण, ताके स्त्री आठसै, तिनविषे मुख्य किरणमण्डला। सो एक दिन उसने अपनी सौतिनके कहेसूं अपने मामाके पुत्र हेमशिखका रूप चित्रपटविषे लिखा। सो सकलभूषणने देख कोप किया। तब सब स्त्रीनिने कही यह हमने लिखवाया है इसका कोई दोष नाहीं। तब सकलभूषण कोप तजि प्रसन्न भया। एक दिन यह किरणमण्डला पतिव्रता पतिसहित सूती थी। सो प्रमादथकी बरडिकर हेमशिख ऐसा नाम कहा, सो यह तो निर्दोष, याकें हेमशिखसे भाईकी बुद्धि, अर सकलभूषणने कछू और भाव विचारा। राणी

सू कोपकरि वैराग्यकू प्राप्त भए। अर राणी किरणमंडला भी आर्यिका भई, परन्तु धणीसू द्वेषभाव, जो याने मोहि झूठा दोष लगाया। सो मरकर विद्युद्वक्त्र नामा राक्षसी भई। सो पूर्व वैर थकी सकलभूषण स्वामी आहारकू जाय तब यह अन्तराय करै, कभी माते हाथियोके बंधन तुडाय देय, हाथी ग्राममें उपद्रव कर इनकू अन्तराय होय। कभी यह आहारकू जाय तब अग्नि लगाय देय। कभी यह रजोवृष्टि कर, इत्यादि नाना प्रकारके अन्तराय कर। कभी अश्वका, कभी वृषभका रूपकरि इनके सन्मुख आव। कभी मार्गमें कांटे बखेर। या भांति यह पापिनी कुचेष्टा कर। एक दिन स्वामी कायोत्सर्ग धर तिष्ठे थे अर इसने शोर किया—यह चोर है सो इसका शोर सुनकर दुष्टोंनें पकड अपमान किया। बहुरि उत्तम पुरुषोने छुडाय दिये। एक दिन यह आहार लेकर जाते थे सो पापिनी राक्षसीने काहू स्त्रीका हार लेकर इनके गलेमें डार दिया अर शोर किया कि यह चोर है, हार लिये जाय है। तब लोग आय पहुंचे इनको पीडा करी, हार लिया, भले पुरुषोने छुडाय दिये। या भांति यह क्रूरचित्त दयारहित पूर्व वैर विरोधसे मुनिकू उपद्रव करै। गई रात्रिकू प्रतिमायोग धर महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै विराजे हुते सो राक्षसीने रौद्र उपसर्ग किया, वितर दिखाये अर हस्ती सिंह, व्याघ्र, सर्प दिखाये अर रूप गुणमण्डित नानाप्रकारकी नारी दिखाई, भांति भांतिके उपद्रव किये, परन्तु मुनिका मन न डिगा। तब केवलज्ञान उपजा। सो केवलकी महिमाकर दर्शनकू इन्द्रादिक देव कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर, जोतिषी कईएक हाथिनिपर चढे, कईएक सिंहनिपर चढे, कईएक ऊंट, खच्चर, मींढा, बघेरा, अष्टापद इनपर चढे, कईएक पक्षियोंपर चढे, कईएक विमान बैठे, कईएक रथनिपर पालकी चढे इत्यादि मनोहर वाहनोपर चढे आए। देवोंको असवारीके तिर्यंच नाहीं, देवों ही की माया है। देव ही विक्रियाकरि तिर्यंचका रूप धर हैं। आकाशके मार्ग होय महाविभूति सहित सर्व दिशाविषै उद्योत करते आये। मुकुट धरे हार कुण्डल पहिरे अनेक आभूषणनिकर शोभित सकलभूषण केवलीके दर्शनकू आये। पवनसे चंचल है ध्वजा जिनकी। अप्सरानिके समूह अयोध्याकी ओर आए। महेन्द्रोदय

उद्यानविषै विराजे हैं तिनके चरणारविंदविषै है मन जिनका, पृथ्वीकी शोभा देखते, आकाशसे नीचे उतरे। अर सीताके विध्यकूं अग्निकुण्ड तयार होय रहा हुता सो देखकर एक मेघकेतु नामा देव इन्द्र से कहता भया—हे देवेन्द्र! हे नाथ! सीता महा सतीकूं उपसर्ग आय प्राप्त भया है। यह महा श्राविका पतिव्रता शीलवती अति निर्मल चित्त है। इसे ऐसा उपद्रव क्यों होय? तब इन्द्रने आज्ञा करी है मेघकेतु! मैं सकलभूषण केवलीके दर्शनकूं जाऊं हूं, अर तू महासतीका उपसर्ग दूर करियो। या भांति आज्ञाकर इन्द्र तो महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै केवलीके दर्शनकूं गया, अर मेघकेतु सीताके अग्निकुण्ड के ऊपर आय आकाशविषै विमानविषै तिष्ठा। कैसा है विमान? सुमेरुके शिखर समान है शोभा जाकी। वह देव आकाशविषै सूर्य सरीखा देदीप्यमान श्रीरामकी ओर देखै, राम महासुन्दर सब जीवनि के मनकूं हरै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै सकलभूषणकेवलीके दर्शनकूं देवनिका आगमन वर्णन करनेवाला एकसौचारवां पर्व पूर्ण भया ॥ १२ ॥

अथानन्तर श्रीराम उस अग्निवापिकाकूं निरखकरि व्याकुलमन भया विचारै है—अब इस कांताकूं कहां देखूंगा? यह गुणनिकी खान, महा लावण्यताकरि युक्त, कांतिकी धरणहारी, शीलरूप वस्त्रकरि मण्डित, मालतीकी माला समान सुगंध, सुकुमार शरीर, अग्निके स्पर्शही सौं भस्म होय जायगी। जो यह राजा जनकके घर न उपजती तो भला था। यह लोकापवाद, अग्निविषै मरण तो न होता। इस बिना मुझ क्षणमात्र भी सुख नाहीं। इस सहित वनविषै वास भला अर या बिना स्वर्गका वास भी भला नाहीं। यह शीलवती परम श्राविका है, इसे मरणका भय नाहीं, इहलोक, परलोक, मरण, वेदना, अकस्मात, असहायता, चार यह सप्त भय तिनकर रहित, सम्यकदर्शन इसके दृढ़ है, यह अग्निविषै प्रवेश करेगी। अर मैं रोकूं तो लोकनिविषै लज्जा उपजै। अर यह लोक सब मोहि कहै रहे यह

महा सती है याहि अग्निकुण्डविषै प्रवेश न करावो, सो मैं न मानी। अर सिद्धार्थ हाथ ऊंचे कर कर पुकारा सो मैं न मानी, सो वह भी चुप होय रहा। अब कौन मिसकर इसे अग्निकुण्डविषै प्रवेश न कराऊं? अथवा जिसका जिस भांति मरण उदय होय है उसी भांति होय है, टारा टरै नाहीं। तथापि इसका वियोग मुझसे सहा न जाय। या भांति राम चिंता करै है। अर वापीविषै अग्नि प्रज्वलित भई, समस्त नर नारियोंके आंसुवोंके प्रवाह चले, धूमकरि अंधकार होय गया। मानो मेघमाला आकाशविषै फैल गई। आकाश भ्रमर समान श्याम होय गया अथवा कोकिलस्वरूप होय गया। अग्निके धूमकर सूर्य आच्छादित हुवा, मानो सीताका उपसर्ग देख न सक्या सो दयाकर छिप गया। ऐसी अग्नि प्रज्वली जिसकी दूरतक ज्वाला विस्तरी, मानो अनेक सूर्य ऊगे, अथवा आकाशविषै प्रलयकालकी सांझ फूली, जानिये दशों दिशा स्वर्णमयी होय गई हैं मानो जगत विजुरीमय होय गया। अथवा सुमेरुके जीतिवे-कूं दूजा जंगम सुमेरु और प्रकटा। तब सीता उठी, अत्यंत निश्चलचित्त होय कायोत्सर्गकरि अपने हृदयविषै श्रीऋषभादि तीर्थंकरदेव विराजे हैं तिनकी स्तुतिकर, सिद्धनिकूं, साधुनिकूं नमस्कारकरि श्रीमुनिसुव्रतनाथ हरिवंशके तिलक बीसवां तीर्थंकर जिसके तीर्थविषै ये उपजे हैं तिनका ध्यानकरि सब प्राणियोंके हितू आचार्य तिनकूं प्रणामकरि, सब जीवनिसूं क्षमाभावकरि जानकी कहती भई मनकरि वचनकरि कायकरि स्वप्नविषै भी राम बिना और पुरुष मैं न जाना। जो मैं झूठ कहती हूं तो यह अग्निकी ज्वाला क्षणमात्रविषै मुझे भस्म करियो। जो मेरे पतिव्रता भावविषै अशुद्धता होय राम सिवाय और नर मनसे भी अभिलाषा होय तो हे वैश्वानर! मुझै भस्म करियो। जो मैं मिथ्यादर्शिनी, पापिनी, व्यभिचारिणी हूं तो इस अग्निसे मेरी देह दाहकूं प्राप्त होवै। अर जो मैं महा सती पतिव्रता अणुव्रतधारिणी श्राविका हूं तो मुझे भस्म न करियो, ऐसा कहकर नमोकार मंत्र जप सीता सती अग्निवापिकामें प्रवेश करती भई। सो याके शीलके प्रभावसे अग्नि थी सो स्फटिक मणि सारिखा निर्मल शीतल जल होय गया। मानो धरतीको भेदकर यह वापिका पातालसे निकसी। जलविषै कमल

फूल रहे है, भमर गु जार कर ह, अग्निकी सामग्री सब विलाय गई, न ई धन, न अगार। जलके झाग उठने लगे, अर अति गोल गम्भीर महा भयकर भमर उठने लगे। जसी मृदगकी ध्वनि होय तस शब्द जलविष होते भए, जसा क्षोभकू प्राप्त भया समुद्र गाज वसा शब्द वापीविषै होता भया। अर जल उछला, पहले गोडो तक आया, बहुरि कमर तक आया, फिर निमिषमात्रविषै छाती तक आया। तब भूमिगोचरी डरे, अर आकाशविषै जे विद्याधर हुते तिनकू भी विकल्प उपजा न जानिए क्या होय? बहुरि वह जल लोगोके कठतक आया तब अति भय उपजा। सिर ऊपर पानी चला तब लोग अति भयकू प्राप्त भए। ऊची भुजाकर वस्त्र अर बालकोको उठाय पुकार करते भए-हे देवि! हे लक्ष्मी! हे सरस्वती! हे कल्याणरूपिणी! हे धर्मधरधरे! हे मान्य! हे प्राणीदयारूपिणी! हमारी रक्षा करो! हे महा साध्वी! मुनिसमान निर्मल मनकी धरणहारी! दया करो। हे माता! बचावो, बचावो, प्रसन्न होवो। जब ऐसे वचन विह्वल जो लोक तिनके मुखसे निकसे तब माताकी दयासे जल थम्भा, लोक बचे, जलविषै नानाजातिक ठौर ठौर कमल फूले, जल साम्यताकू प्राप्त भया। जे भवर उठे थे सो मिटे, अर भयकर शब्द मिटे। वह जल जो उछला था मानो वापीरूप वधू अपने तरगरूप हस्तोंकर माताके चरणयुगल स्पर्शती हुती। कसे ह चरणयुगल? कमलके गर्भसे हू अति कोमल है, अर नखो की ज्योतिकर देदीप्यमान ह। जलविषै कमल फूले, तिनकी सुगधताकरि भमर गु जार कर हैं सो मानो सगीत कर ह। अर क्रौंच चकवा हस तिनके समूह शब्द कर ह। अति शोभा होय रही ह। अर मणि स्वर्णके सिवाण बन गए तिनकू जलके तरगोके समूह स्पर्शें ह, अर जिसके तट मरकत मणिकर निर्मापे अति सोह ह।

ऐसे सरोवरके मध्य एक सहस्रदलका कमल कोमल, विमल, विस्तीर्ण, प्रफुल्लित, महाशुभ, उसके मध्य देवनिने सिहासन रचा रत्ननिकी किरणनिकर मडित, चन्द्रमडल तुल्य निर्मल। उसमें देवागनाओने सीताकू पधराई, अर सेवा करती भई। सो सीता सिहासनविषै तिष्ठी, अति अद्भुत है

उदय जाका, शची तुल्य सोहती भई। अनेक देव चरणनिके तल पुष्पाजली चढाय धन्य धन्य शब्द कहते भए। आकाशविषै कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वृष्टि करते भए। अर नानाप्रकारके दुन्दुभी बाजे तिनके शब्दकर सब दिशा शब्दरूप होती भई। गुंज जातिके वादित्र महामधुर गुंजार करते भये। अर मृदंग बाजते भए। ढोल दमामा बाजे, नांदी जातिके वादित्र बाजे, अर कोलाहल जातिके वादित्र बाजे अर तुरही करनाल अनेक वादित्र बाजे, शखके समूह शब्द करते भए। अर वीणा बाजा, ताल, झांझ, मंजीर झालरी इत्यादि अनेक वादित्र बाजे। विद्याधरनिके समूह नाचते भए अर देवनिके यह शब्द भए—श्रीमत जनक राजाकी पुत्री, परम उदयकी धरणहारी, श्रीमत रामकी राणी अत्यन्त जयवंत होवे, अहो निर्मल शील जाका आश्चर्यकारी। ऐसे शब्द सब दिशाविषै देवनिके होते भये। तब दोनों पुत्र लवण अंकुश अकृत्रिम है मातासूं हित जिनका, सो जल तिरकर अतिहर्षके भरे माताके समीप गए। दोनों पुत्र दोनो तरफ जाय ठाढे भए। माताकूं नमस्कार किया। सो माताने दोनोके शिर हाथ धरा। रामचन्द्र मिथिलापुरीके राजाकी पुत्री मैथिली कहिए सीता उसे कमलवासिनी लक्ष्मी समान देख महा अनुरागके भरे समीप गए। कैसी है सीता? मानो स्वर्णकी मूर्ति अग्निविषै शुद्ध भई है, अति उत्तम ज्योतिके समूहकर मंडित है शरीर जाका। राम कहै हैं हे देवि! कल्याणरूपिणी, उत्तम जीवनिकर पूज्य, महा अद्भुत चेष्टाकी धरणहारी, शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है मुख जाका, ऐसी तुम सो हमपर प्रसन्न होहु। अब मैं कभी ऐसा दोष न करूंगा जिसमें तुमकूं दुःख होय। हे शीलरूपिणी! मेरा अपराध क्षमा करहु। मेरे आठ हजार स्त्री हैं तिनकी सिरताज तुम हो, मोकूं आज्ञा करहु सो करूं। हे महासती! मैं लोकापवादके भयसे अज्ञानी होयकरि तुमकूं कष्ट उपजाया सो क्षमा करहु। अर हे प्रिये! पृथ्वीविषै मो सहित यथेष्ट विहार करहु। यह पृथ्वी अनेक वन उपवन गिरियो कर मंडित है, देव विद्याधरनिकर संयुक्त है, समस्त जगतकर आदरसो पूजी थकी मोसहित लोकविषै स्वर्ग समान भोग भोगि, उगते सूर्यसमान यह पुष्पकविमान ताविषै मेरे सहित आरूढ होय, सुमेरु

पर्वतके वनविषै जिनमन्दिर है तिनका दर्शनकर अर जिनजिन स्थाननिविषै तेरी इच्छा होय वहां क्रीडा कर। हे कांते! तू जो कहै सो ही मैं करूं, तेरा वचन कदाचित न उलंघूं, देवांगनासमान यह विद्याधरी तिनकर मंडित है बुद्धिवती! तू ऐश्वर्यकूं भज, जो तेरी अभिलाषा होयगी सो तत्काल सिद्ध होयगी। मैं विवेकरहित दोषके सागरविषै मग्न तेरे समीप आया हूं सो साध्वी अब प्रसन्न होहु।

अथानन्तर जानकी बोली—हे राजन! तिहारा कुछ दोष नाहीं, अर लोकनिका दोष नाहीं। मेरे पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मके उदय से यह दुःख भया, मेरा काहूपर कोप नाहीं। तुम क्यों विषादकूं प्राप्त भए? हे बलदेव! तिहारे प्रसादसे स्वर्ग समान भोग भोगे। अब यह इच्छा है ऐसा उपाय करूं जिसकर स्त्रीलिंगका अभाव होय। यह महा क्षुद्र विनश्वर भयंकर इन्द्रियनिके भोग मूढजनोंकरि सेव्य तिनकर कहा प्रयोजन? मैं अनन्त जन्म चौरासी लक्ष योनिविषै खेद पाया। अब समस्त दुःखके निवृत्तिके अर्थ जिनेश्वरी दीक्षा धरूंगी। ऐसा कहकर नवीन अशोक वृक्षके पल्लव समान अपने जे कर तिनकर सिरके केश उपाड रामके समीप डारे। सो इन्द्रनीलमणि समान श्याम, सचिक्कण, पातरे, सुगन्ध, वक्र लंबायमान, महामृदु महा मनोहर, ऐसे केशनिकूं देख राम मोहित होय मूर्छा खाय वापिविषै पडे। सो जौलग इनकूं सचेत कर तौलग सीता पृथ्वीमती आर्यिकापै जायकर दीक्षा धरती भई। एक वस्त्रमात्र है परिग्रह जाके। सब परिग्रह तजकर आर्यिकाके व्रत धरे। महा पवित्रता परम वैराग्यकर दीक्षा धरती भई। व्रतकर शोभायमान जगतके वंदिवे योग्य होती भई। अर राम अचेत भए थे सो मुक्ताफल अर मलयागिरि चन्दनके छांटिवेकरि तथा ताडके बीजनोंकी पवनकरि सचेत भए। तब दशों दिशाकी ओर देखें तो सीताकूं न देखकरि चित्त शून्य होय गया। शोककरि कषायकरि युक्त महा गजराजपर चढे, सीताकी ओर चाले। सिरपर छत्र फिरै है, चमर ढुरै है, जैसे देवनिकर मंडित इन्द्र चालै तैसे नरेन्द्रनिकरि युक्त राम चाले। कमलसारिखे हैं नेत्र जिनके, कषायके वचन कहते भए अपने प्यारे जनका मरण भला पर तु विरह भला नाहीं। देवनिने सीताका प्रातिहार्य

किया सो भला किया पर उसने हमकू तजना विचारा सो भला न किया। अब मेरी राणी जो यह देव न दें तो मेरे अर देवनिके युद्ध होयगा। यह देव न्यायवान होयकरि मेरी स्त्रीकू हरै ऐसे अविचार के वचन कहे। लक्ष्मण समभाव सो समाधान न भया। अर क्रोध सयुक्त श्रीरामचन्द्र सकलभूषण केवलीकी गधकुटीकू चाले। सो दूरसे सकलभूषण केवलीकी गन्धकुटी देखी। केवली महाधीर सिंहासन पर विराजमान, अनेक सूयकी दीप्ति धरें केवली ऋद्धिकर युक्त, पापोके भस्म करिवेकू साक्षात अग्निरूप जस मेघपटल रहित सूयका बिब सोह तस कमपटलरहित केवलज्ञानके तेजकर परम ज्योतिरूप भासै हैं। इन्द्रादिक समस्त देव सेवा कर ह, दिव्यध्वनि खिर ह धमका उपदेश होय ह। सो श्रीराम गन्धकुटीकू देखकरि शातचित्त होय हाथीत उतरि प्रभुके समीप गए। तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड नमस्कार किया। केवलीके शरीरकी ज्योतिकी छटा राम पर आय पडी सो अति प्रकाशरूप होय गए। भाव सहित नमस्कारकरि मनुष्यनिकी सभाविष बठे। अर चतुरनिकायके देवनिकी सभा नानाप्रकारके आभूषण पहिरे ऐसी भास मानो केवलीरूप जे रवि तिनकी किरण ही ह। अर राजानिके राजा श्रीरामचन्द्र केवलीके निकट ऐसे सोह मानो सुमरुके शिखरके निकट कल्पवृक्ष ही ह। अर लक्ष्मण नरेन्द्र मुकुट कुण्डल हारादिकर शोभित ऐसे सोहैं मानो विजुरीसहित श्याम घटा ही ह। अर शत्रुघ्न शत्रुनिके जीतनहारे ऐसे सोहं मानो दूसरे कुवेर ही ह। अर लव अकुश दोऊ वीर, महा धीर, महासुन्दर, गुण सौभाग्यके स्थानक, चाद सूयसे सोह। अर सीता आर्यिका आभूषणादि रहित एक वस्त्रमात्र परिग्रह ऐसी सोह मानो सूयकी मूर्ति शातताकू प्राप्त भई ह। मनुष्य अर देव सब ही विनय सयुक्त भूमिविष बैठे। धम श्रवणकी ह अभिलाषा जिनके। तहा एक अभयघोष नामा मुनि सब मुनिन विष श्रेष्ठ, सन्देहरूप आतापको शातिके अर्थ केवलीकू पूछते भए—हे सर्वोत्कृष्ट सवज्ञदेव ! ज्ञानरूप शुद्ध आत्मतत्वका स्वरूप नीके जाननेसे मुनिनिकू केवलबोध होय उसका निणय करो। तब सकलभूषण केवली, योगीश्वरोंके ईश्वर, कर्मोंके क्षयका कारण तत्वका उपदेश दिव्यध्वनिकर कहते भए।

हे श्रेणिक ! केवलीने जो उपदेश दिया ताका रहस्य मैं तुमकू कहू हू । जैसे समुद्रमेंसे एक बूंद कोई लेय तैसें केवलीकी वाणी अति अथाह उसके अनुसार संक्षेप व्याख्यान करू हू सो सुनो ।

हो भव्य जीव हो ! आत्मतत्व जो अपना स्वरूप सो सम्यकदर्शन ज्ञान आनन्दरूप, अर अमूर्तीक, चिद्रूप, लोकप्रमाण, असंख्य प्रदेशी, अतींद्रिय अखंड अव्याबाध निराकार निर्मल निरंजन, परवस्तुसे रहित, निज गुण पर्याय स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभावकर अस्तित्वरूप है, जिसका ज्ञान निकट भव्यकू होय । शरीरादिक परवस्तु असार है, आत्मतत्व सार है सो अध्यात्म विद्याकरि पाइये हैं । वह सबका देखनहारा जाननहारा अनुभवदृष्टिकर देखिये, आत्मज्ञानकरि जानिये । अर जड पदार्थ पुद्गल धर्म अधर्म काल आकाश ज्ञेयरूप है, ज्ञाता नाहीं । अर यह लोक अनन्त अलोकाकाशके मध्य अनंतवें भागविषै तिष्ठ है । अधोलोक, मध्यलोक, ऊर्ध्वलोक ये तीनलोक । तिनविषै सुमेरु पर्वतकी जड हजार योजन उसके तले पाताल लोक है । उसविषै सूक्ष्म स्थावर तो सर्वत्र है, अर बादर स्थावर आधारविषै है । विकलत्रय अर पंचेन्द्रिय तिर्यंच नाहीं, मनुष्य नाहीं । खर भाग, पंकभागविषै भवनवासी देव तथा व्यंतरदेवनिके निवास है । तिनके तले सात नरक है । तिनके नाम—रत्नप्रभा १, शर्कराप्रभा २, बालुका प्रभा ३, पंकप्रभा ४, धूमप्रभा ५, तम प्रभा ६, महातम प्रभा ७ । सो सात ही नरककी धरा, महा दुखकी देनहारी, सदा अंधकाररूप है । चार नरकनिविषै तो उष्णकी बाधा है अर पांचवें नरकमें ऊपरले तीन भाग उष्ण, अर नीचला चोथा भाग शीत । अर छठा नरक शीत ही है । अर सातवां महाशीत । ऊपरले नरकविषै उष्णता है, सो महा विषम । अर नीचले नरकविषै शीत सो अति विषम । नरककी भूमि महा दुस्सह और परम दुर्गम है, जहां राधि रुधिरका कीच है महा दुर्गंध है, श्वान, सर्प मार्जार मनुष्य, खर, तुरंग, ऊंट इनका मृतक शरीर सड जाय, उसकी दुर्गंधसे असंख्यात गुणी दुर्गंध है । नाना प्रकार दुर्खानिके सब कारण है । अर पवन महा प्रचण्ड विकराल चलै है, जाकरि भयंकर शब्द होय रह्या है । जे जीव विषय कषाय संयुक्त है, कामी है, क्रोधी हैं, पंच इन्द्रियोंके लोलुपी है, जैसें लोह

का गोला जलविषै डूब तैसे नरकविषै डूबे है। जे जीवनिकी हिंसा करैं, मृषावाणी बोलैं, परधन हरैं, परस्त्री सेवैं, महा आरम्भी, परिग्रही, ते पापके भारकर नरकविषै पडे हैं। मनुष्य देह पाय जे निरंतर भोगासक्त भए हैं जिनके जीभ वश नाहीं, मन चंचल, ते प्रचंड कर्मके करणहारे नरक जाय हैं। जे पाप करैं करावैं पापकी अनुमोदना करैं, ते आर्त रौद्रध्यानी नरकके पात्र हैं। वह वज्राग्निके कुण्डमें डारिए हैं, वज्राग्निके दाहकर जलते थके पुकारे हैं। अग्निकुण्डसे छूटैं हैं तब वैतरणी नदीकी ओर शीतल जलकी वांछाकर जाय हैं। वहां जल महाक्षार, दुर्गंध, उसके स्पर्शसे ही शरीर गल जाय है। दुखका भाजन वैक्रियिक शरीर ताकर आयुपर्यंत नानाप्रकार दुख भोगवे हैं। पहिले नरक आयु उत्कृष्ट सागर १, दूजे ३, तीजे ७, चौथे १३, पांचवें १७, छठे २२, सातमें ३३, सो पूर्णकर मरै हैं मारेसे मरैं नाहीं। वैतरणीके दुखसे डरे छायाके अर्थ असिपत्र वनमें जाय हैं, तहां खड्ग बाण बरछी कटारी सभी पत्र असराल पवनकर पडे हैं, तिनकर तिनका शरीर विदारा जाय है, पछाड खाय भूमिमें पडे हैं, अर तिनकूं कभी कुंभीपाकमें पकावे हैं, कभी नीचा माथा ऊंचा पगकर लटकावैं हैं, मुद्गरनिसूं मारिए हैं, कुहाडोसे काटिवे हैं, करोतनसे विदारिए हैं, घानीमें पेलिए हैं, नानाप्रकारके छेदन भेदन है। यह नारकी जीव महा दीन महा तृषाकरि, तृषित, पीनेका पानी मांगे है तब तांबादिक गाल प्यावे हैं। ते कहे हैं हमको यहा तृषा नाहीं, हमारा पीछा छोड दो, तब बलात्कार तिनकूं पछाड संडासियोसे मुख फार मार मार प्यावे हैं। कंठ हृदय विदीर्ण होय जाय है, उदर फट जाय है। तीजे नरकतक तो परस्पर ही दुःख है, अर असुरकुमारनिकी प्रेरणासे भी दुःख हैं। अर चौथेसे लेय सातवें तक असुरकुमारनिका गमन नाहीं, परस्पर ही पीडा उपजावे हैं। नरकविषै नीचलेसे नीचलेमें, बहुता दुख है। सातवां नरक सबनिमें महा दुखरूप है। नारकियोकूं पहिला भव याद आवै है, अर दूसरे नारकी तथा तीजे लग असुरकुमार पूर्वलेकर्म याद करावैं हैं। तुम भले गुरुनिके वचन उलंघ कुगुरुकुशास्त्रके बलकर मासकूं निर्दोष कहते हुते, नानाप्रकारके मांसकर, अर मधुकर, अर मदिराकरि कुदेवनि

का आराधन करते हुते, सो मासके दोषतें नरकविषे पडे हो। ऐसा कहकरि इनहीका शरीर काट काट इनके मुखविषै देय है। अर लोहेके तथा ताम्बेके गोला बलते पछाड पछाड सडासियोसे मुख फाड फाड छातीपर पाव देय देय तिनके मुखविषे घाल है। अर मुदगरोसे मार है। अर मद्यपायीकू मार मार ताता ताबा शीशा प्याव ह। अर परदारारत पापिनकू वजाग्निकर तप्तायमान लोहेकी जे पूतली तिनसू लिपटाव ह। अर ज परदारारत फूलनिके सेज सते ह तिनकू सूलनिके सेज ऊपर सुवावै ह। अर स्वप्नकी माया समान असार जो राज्य उसे पायकर जे गर्वं ह, अनीति कर ह, तिनकू लोहेके कीलोपर बठाय मुदगरोसे मार ह,सो महा विलाप कर ह' इत्यादि पापी जीवनिकू नरकके दुख होय हैं। सो कहा लग कह। एक निमिषमात्र भी नरकमें विश्राम नाहीं। आयुपय त तिलमात्र आहार नाहीं, अर बूदमात्र जलपान नाहीं, केवल मारहीका आहार ह।

तात यह दुस्सह दु ख अधमके फल जान अधमकू तजहु। तें अधम मधुमासादिक अभक्ष्य भक्षण,अन्याय वचन, दुराचार, रात्रि आहार, वेश्यासेवन, परदारागमन, स्वामिद्रोह, मित्रद्रोह, विश्वासघात, कतघ्नता लपटता, ग्रामदाह वनदाह, परधनहरण, अमागसेवन परनिंदा, परद्रोह, प्राणघात, बहुआरम्भ, बहु- परिग्रह, निदयता, खोटी लेश्या रौद्रध्यान, मषावाद, कपणता, कठोरता, दुजनता, मायाचार, निर्माल्यका अगीकार माता पिता गुरुओकी अवज्ञा, बाल वद्ध स्त्री दीन अनाथनिका पीडन इत्यादि दुष्ट कर्म नरकके कारण ह। वे तज शातभाव धर जिनशासनकू सेवहु, जाकर कल्याण होय। जीव छै कायके ह–पथ्वीकाय, अप (जल) काय, तेज (अग्नि) काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय तिनकी दया पालहु। अर जीव पदगल धम अधम आकाश काल छ द्रव्य ह, अर सात तत्व, नव पदार्थ, पचास्ति- काय तिनकी श्रद्धा करहु। अर चतदश गुणस्थानस्वरूप अर सप्तभगी वाणीका स्वरूप भली भाति केवलीकी आज्ञा प्रमाण उरविष धारो। स्यात अस्ति, स्यान्नास्ति,स्यातअस्तिनास्ति, स्यादवक्तव्य, स्यात् अस्ति अवक्तव्य, स्यान्नास्ति अवक्तव्य, स्यात अस्तिनास्ति अवक्तव्य, ये सप्तभग कहै। अर प्रमाण

कहिए वस्तुका सर्वांग कथन, अर नय कहिए वस्तु का एकअंग कथन, अर निक्षेप कहिए नाम स्थापना द्रव्य भाव ये चार, अर जीवनिविषै एकेंद्रीके दोय भेद सूक्ष्म बादर, अर पचेंद्रीके दोय भेद सैनी असैनी-अर बेइन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री ये सात भेद जीवोंके ह, सो पर्याप्त अपर्याप्तकर चौदह भेद जीवसमास होय है। अर जीवक दोय भेद एक ससारी एक सिद्ध। जिसमें ससारीके दोय भेद—एक भव्य दूसरा अभव्य। जो मुक्ति होने योग्य सो भव्य, अर मुक्ति न होने योग्य सो अभव्य। अर जीवका निज-लक्षण उपयोग ह ताके दोय भेद, एक ज्ञान एक दशन। ज्ञान समस्त पदाथकू जान, दशन समस्त पदाथकू देख। सो ज्ञानके आठ भेद मति, श्रुति, अवधि, मन पयय, कवल, कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, अर दशनके चार भेद—चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल। अर जिनक एक स्पशन इन्द्री होय सो स्थावर कहिये, तिनके भेद पाच—पृथ्वी अप तेज वायु वनस्पति। अर त्रसके भेद चार—बेइन्द्री, तेइन्द्री, चौइन्द्री, पचेन्द्री। जिनके स्पश अर रसना वे द्वइन्द्री, जिनके स्पश रसना नासिका सो तेइन्द्री जिनके स्पश रसना नासिका चक्षु वे चौइन्द्री, जिनके स्पश रसना नासिका चक्ष श्रोत्र वे पचेन्द्री। चौइन्द्री तक तो सब सम्मूछन अर असनी ह, अर पचेन्द्रीविषै कई सम्मूछन, कई गभज। तिनविषै कई सनी कई असनी। जिनके मन वे सनी, अर जिनके मन नाहीं वे असनी। अर जे गभसे उपजें वे गभज अर जे गभविना उपजे स्वत स्वभाव उपजैं वे सम्मूछन। गभजके भेद तीन—जरायुज अडज पोतज। जे जराकर मडित गभते निकसे मनुष्य घोटकादिक वे जरायुज, अर जे बिना जेरके सिहादिक सो पोतज, अर जे अडावोंसे उपजे पक्षी आदिक वे अडज। अर देव नारकियोंका उपपाद जन्म ह, माता पिताके सयोग विनाही पण्य पापके उदयसे उपज ह। देव तो उत्पादकशय्याविषै उपज है, अर नारकी बिलोंमें उपज ह। देवयोनि पण्यके उदयसे है अर नारकयोनि पापके उदयसे ह। अर मनुष्य जन्म पण्य पापकी मिश्रतासे ह, अर तिर्यच गति मायाचारके योगसे ह। देव नारकी मनुष्य इन बिना सब तिर्यच जानने। जीवोंकी चौरासी लाख योनियें हैं, उनके भेद सुनो—पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, नित्य निगोद, इतरनिगोद वे तो सात सात

लाख योनि हैं, सो बयालीस लाख योनि भई। अर प्रत्येक वनस्पति दस लाख ये बावन लाख भेद स्थावरके भये। अर वइन्द्री, तेइन्द्री चौइन्द्री ये दोय दोय लाख योनि, उसके छ लाख योनि भेद विकलत्रयके भए, अर पचेन्द्री तिर्यचके भेद चार लाख योनियें, सब तिर्यच योनिके बासठ लाख भेद भए, अर देवयोनिके भेद चार लाख, नरकयोनिके भेद चार लाख, अर मनुष्य योनिके चौदह लाख। ये सब चौरासी लाख योनि महा दुखरूप हैं। इनसे रहित सिद्धपद ही अविनाशी सुखरूप है। ससारी जीव सब ही देहधारी ह, अर सिद्ध परमेष्ठी देहरहित निराकार हैं। शरीरके भेद पाच–औदारिक वक्रियक, आहारक, तजस, कार्माण। तिनविषे तजस कार्माण तो अनादिकालसे सब जीवनकू लगि रहे ह तिनका अतकरि महामुनि सिद्ध पद पावे हैं। औदारिकसे असख्यात गुणी अधिक वगणा वक्रियकके ह अर वक्रियकते असख्यातगुणी आहारकके है, अर आहारकते अनतगुणी तजसकी ह, अर तेजसते अनन्त-गुणी कार्माण ह। जा समय ससारी जीव देहकू तजकर दूसरी गतिकू जाय ह ता समय अनाहार कहिए। जितनी देर एक गतिसे दूसरी गतिविषे जाते ह जीवको लग ह उस अवस्थामें जीवकू अना-हारी कहिए। अर जितना वक्त एक गतिसे दूसरी गतिमें जानेमें लगे सो वह एक समय तथा दो समय, अधिकते अधिक तीन समय लग ह। सो ता समय जीवके तैजस अर कार्माण ये दो ही शरीर पाइय है। बगर शरीरके यह जीव सिवा सिद्ध अवस्थाके अर काहू अवस्थामें काहू समय नाहीं होता। या जीवके हर वख्त अर हर गतिमें जन्मते मरते साथ ही रहते ह। जा समय यह जीव घातिया अघातिया दोऊ प्रकारके कम क्षय करके सिद्ध अवस्थाकू जाता ह ता समय तजस अर कार्माणका क्षय होता है। अर जीवनिके शरीरके परमाणुनिकी सूक्ष्मता या प्रकार ह–औदारिकते वक्रियक सूक्ष्म, अर वैक्रियकतै आहारक सूक्ष्म, आहारकते तजस सूक्ष्म, अर तैजसते कार्माण सूक्ष्म ह। सो मनुष्य अर तिर्यचनिके तो औदारिक शरीर ह, अर देव नारकिनिके वक्रियक ह। अर आहारक ऋद्धिधारी मुनिनिके सदेह निवारिवेके अर्थ दसमें द्वारसे निकसे सो केवलीके निकट जाय सदेह निवारि पीछा आय दसमें द्वार

में प्रवेश करे है। ये पाच प्रकारके शरीर कहे, तिनमें एक काल एक जीवके कबहू चार शरीर हू पाइए ताका भेद सुनहु—तीन तो सबही जीवनिके पाईए—नर अर तिर्यचके औदारिक, अर देव नारकिनिके वैक्रियक, अर तैजस कार्माण सबके है। तिनमें कार्माण तो दृष्टिगोचर नाहीं, अर तैजस काहू मुनिके प्रकट होय है। ताके भेद दोय है—एक शुभ तैजस एक अशुभ तैजस। सो शुभ तैजस तो लोकनिकू दुखी देख दाहिनी भुजाते निकसि लोकनिका दुख निवारे है, अर अशुभ तैजस क्रोधके योगकर वामभुजाते निकसि प्रजाकू भस्म करे है, अर मुनिकू हू भस्म करे है। अर काहू मुनिके विक्रियाऋद्धि प्रकट होय है तब शरीरकू सूक्ष्म तथा स्थूल करे है सो मुनिके चार शरीर हू काहू समय पाइए एक काल पाचो शरीर काहू जीवके न होय।

अथानन्तर मध्यलोकमें जम्बूद्वीप आदि असख्यात द्वीप, अर लवण समुद्र आदि असख्यात समुद्र हैं। शुभ हैं नाम जिनके सो द्विगुण द्विगुण विस्तारकू लिए वलयाकार तिष्ठे हैं। सबके मध्य जम्बूद्वीप है, ताके मध्य सुमेरुपर्वत तिष्ठे है। सो लाख योजन ऊचा है। अर जे द्वीप समुद्र कहे तिनमें जम्बूद्वीप लाख योजनके विस्तार है, अर प्रदक्षिणा तिगुणीसे कछु इक अधिक है। जम्बूद्वीपविषै देवारण्य अर भूतारण्य दो बन हैं। तिनविषै देवनिके निवास है। अर षट कुलाचल हैं, पूर्व समुद्रसू पश्चिमके समुद्रतक लांबे पडे हैं। तिनके नाम हिमवान, महाहिमवान, निषध, नील, रुक्मी, शिखरी। समुद्रके जलका है स्पर्श जिनके, तिनमें ह्रद, अर ह्रदनिमें कमल, तिनमें षटकुमारिका देवी है—श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी। अर जम्बूद्वीपमें सात क्षेत्र है—भरत, हैमवत, हरि, विदेह रम्यक, हैरण्यवत, ऐरावत। अर षटकुलाचलनिसू गगादिक चौदह नदी निकसी हैं, आदिकेसे तीन अर अतकेसे तीन अर मध्यके चारोंसे दोय २ यह चौदह है। अर दूजा द्वीप धातकीखण्ड सो लवणसमुद्रते दूना है। ताविषै दोय सुमेरुपर्वत हैं, अर बारह कुलाचल अर चौदह क्षेत्र। यहा एक भरत वहा दोय, यहा एक हिमवान वहा दोय, याही भाति सब दूणे जानने। अर तीजा द्वीप पुष्कर ताके अर्ध भागविषै मानुषोत्तर पर्वत है, सो अढाई द्वीप ही

८३१

विषै मनुष्य पाईये है आगे नाहीं। आधे पुष्करविष दोय दोय मेरु, बारह कुलाचल चौदह क्षेत्र, धातकी खंड द्वीप समान तहा जानने। अढाई द्वीपविष पाच सुमेरु, तीस कुलाचल, पाच भरत, पाच ऐरावत, पाच महाविदेह, तिनमे एक सौ साठ विजय, समस्त कर्मभूमिके क्षेत्र एक सौ सत्तर, एक एक क्षेत्रमे छह छह खण्ड, तिनमे पाच पाच म्लेच्छखण्ड, एक एक आर्यखण्ड। आर्यखण्डमे धर्मकी प्रवृत्ति, विदेहक्षेत्र अर भरत ऐरावत इनविष कर्मभूमि, तिनमे विदेहमे तो शाश्वती कर्मभूमि अर भरत ऐरावतमें अठारा कोडाकोडी सागर भोगभूमि, दोय दोय कोडाकोडी सागर कर्मभूमि। अर देवकुरु उत्तर कुरु यह शाश्वती उत्कष्ट भोगभूमि। तिनमें तीन तीन पल्य की आयु, अर तीन तीन कोसकी काय, अर तीन तीन दिन पीछे अल्प आहार। सो पांच मेरु सम्बन्धी पाच देवकुरु, पाच उत्तरकुरु, अर हरि, अर रम्यक, यह मध्य भोगभूमि तिनविष दोय पल्यकी आयु अर दोय कोसकी काय, दो दिन गए आहार। या भाति पाच मेरु सम्बन्धी पाच हरि, पाच रम्यक यह दश मध्य भोगभूमि। अर हैमवत हैरण्यवत यह जघन्य भोगभूमि, तिनमे एक पल्यकी आयु अर एक कोसकी काय, एक दिनके आतरे आहार, सो पाच मेरु सबधी पाच हैमवत, पाच हैरण्यत, जघन्य भोगभूमि दश या भाति तीस भोगभूमि अढाई द्वीपमें जाननी। अर पच महा विदेह, पच भरत, पच ऐरावत यह पन्द्रह कर्मभूमि है तिनमे मोक्षमार्ग प्रवरते है।

अढाईद्वीपके आगे मानुषोत्तरकेपर नाहीं, देव अर तिर्यच ही है। तिनविषै जलचर तो तीन ही समुद्रविष है—लवणोदधि, कालोदधि तथा अंतका स्वयभूरमण। इन तीन बिना और समुद्रनिविषै जलचर नाहीं। अर विकलत्रय जीव अढाईद्वीपविष है। अर स्वयभूरमण द्वीप ताके अर्ध भागविषै नागेन्द्र पर्वत है। ताके परे आधे स्वयभूरमण द्वीपविष अर सारे स्वयंभूरमण समुद्रविषै विकलत्रय है। मानुषोत्तरसू लेय नागेन्द्र पर्वत पर्यंत जघन्य भोगभूमिकी रीति है। वहा तिर्यचनिकी एक पल्यकी आयु है। अर सूक्ष्म स्थावर तो सर्वत्र तीन लोकमें है अर बादर स्थावर आधारविषै सर्वत्र नाहीं।

एकराजूविषै समस्त मध्य लोक है। मध्य लोकमें अष्टप्रकार व्यंतर अर दशप्रकार भवनपतिनिके निवास है। अर ऊपर ज्योतिषी देवनिके विमान है। तिनके पांच भेद—चन्द्रमा सूर्य ग्रह तारा नक्षत्र, सो अढाई द्वीपविषै ज्योतिषी चर हू है अर स्थिर हू है। आगे असंख्यात द्वीपनिमें ज्योतिषी देवनिके विमान स्थिर ही है। बहुरि सुमेरुके ऊपर स्वर्गलोक है। तहां सोलह स्वर्ग तिनके नाम, सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लांतव, कापिष्ठ, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत, यह सोलह स्वर्ग, तिनमें कल्पवासी देव देवी है। अर सोलह स्वर्गनिके ऊपर नवग्रीव, तिनके ऊपर नव अनुत्तर, तिनके ऊपर पंचोत्तर विजय वैजयंत जयंत अपराजित सर्वार्थसिद्धि। यह अहमिंद्रनिके स्थानक है। जहां देवांगना नाहीं, अर स्वामी सेवक नाहीं, और ठौर गमन नाहीं। अर पांचवां स्वर्ग ब्रह्म ताके अन्तमें लोकांतिक देव है, तिनके देवांगना नाहीं, वे देवर्षि है। भगवानके तपकल्याणमें ही आवें। ऊर्ध्वलोकमें देव ही है अथवा पंच स्थावर ही है। हे श्रेणिक ! यह तीन लोकका व्याख्यान जो केवलीने कह्या ताका संक्षेपरूप जानना। विस्तारसूं त्रिलोकसारसूं जानना। तीनलोकके शिखर सिद्धलोक है। ता समान देदीप्यमान और क्षेत्र नाहीं, जहां कर्मबंधनसे रहित अनन्त सिद्ध विराजे है, मानो वह मोक्ष स्थानक तीन भुवनका उज्ज्वल छत्र ही है। वह मोक्ष स्थानक अष्टमी धरा है। ये अष्ट पृथ्वीके नाम, नारक १, भवनवासी २, मानुष ३, ज्योतिषी ४, स्वर्गवासी ५, ग्रीव, ६, अर अनुत्तर विमान ७, मोक्ष ८, ये आठ पृथ्वी है सो शुद्धोपयोगके प्रसादकरि जे सिद्ध भए हैं तिनकी महिमा कही न जाय। तिनका मरण नाहीं। बहुरि जन्म नाहीं, महा सुखरूप हैं, अनेक शक्तिके धारक समस्त दुखरहित महा निश्चल सबके ज्ञाता दृष्टा है।

यह कथन सुन रामचन्द्र सकलभूषण केवलीसूं पूछते भए—प्रभो ! अष्टकर्मरहित अष्टगुण आदि अनन्तगुण सहित सिद्ध परमेष्ठी संसारके भावनसे रहित है सो दुख तो उनको काहू प्रकारका नाहीं अर सुख कैसा ? तब केवली दिव्यध्वनिकर कहते भए—इस तीन लोकविषै सुख नाहीं, दुख ही है,

अज्ञानसे वृथा सुख मान रहे है। संसारका इन्द्रियजनित सुख बाधासंयुक्त क्षणभंगुर है। अष्टकर्म करि बंधे, सदा पराधीन ये जगतके जीव तिनके तुच्छ मात्राहू सुख नाहीं। जैसे स्वर्णका पिंड लोह-करि संयुक्त होय तब स्वर्णकी कांति दब जाय है तैसे जीवकी शक्ति कर्मनिकरि दब रही है सो सुख-रूप दुख ही भोगवे है। यह प्राणी जन्म मरण रोग शोक जे अनन्त उपाधी तिनकरि महा पीडित है। तिनका अर मनका दुख मनुष्य तिर्यंच नारकीनिकूं है। अर देवनिकूं दुख मनहीका है सो मनका महा दुख है ताकरि पीडित है। या संसारविषै सुख काहेका? ये इन्द्रियजनित विषयके सुख इन्द्र धरणींद्र चक्रवर्तीनिकूं शहदकी लपेटी खड्गकी धारा समान है, अर विषमिश्रित अन्न समान है। अर सिद्धनि-के मन इन्द्री नाहीं, शरीर नाहीं, केवल स्वाभाविक अविनाशी उत्कृष्ट निराबाध निरुपम सुख है। ताकी उपमा नाहीं। जैसे निद्रारहित पुरुषकूं सोयवेकरि कहा अर निरोगनिकूं औषधिकर कहा? तैसे सर्वज्ञ वीतराग कृतार्थ सिद्ध भगवान तिनकूं इन्द्रीनिके विषयनिकर कहा? दीपककूं सूर्य चन्द्रादिक कर कहा? जे निर्भय, जिनके शत्रु नाहीं, तिनके आयुधनिकरि कहा? जे सबके अंतर्यामी सबकूं देखें, जानें, जिनके सकल अर्थ सिद्ध भए, कछु करना नाहीं, वांछा काहू वस्तुकी नाहीं, ते सुखके सागर हैं। इच्छा मनसूं होय है, सो मन नाहीं, परम आनन्द स्वरूप क्षुधा तृषादि बाधारहित है। तीर्थंकर देव जा सुखकी इच्छा करें ताकी महिमा कहांलग कहिए। अहमिंद्र इन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्र चक्रवर्त्यादिक निरंतर ताही पदका ध्यान करें है। अर लोकांतिक देव ताही सुखके अभिलाषी है ताकी उपमा कहांलग करें। यद्यपि सिद्धपदका सुख उपमारहित केवली गम्य है, तथापि प्रतिबोधके अर्थ तुमकूं सिद्धनिके सुख का कछु इक वर्णन करें है।

अतीत अनागत वर्तमान तीन कालके तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिक सर्व उत्कृष्ट भूमिके मनुष्यनिका सुख, अर तीन कालका भोगभूमिका सुख, अर इन्द्र अहमिंद्र आदि समस्त देवनिका सुख, भूत भवि-ष्यत वर्तमानकालका सकल एकत्र करिए, अर ताहि अनन्त गुणा फलाइए, सो सिद्धनिके एक समय

के सुख तुल्य नाहीं। काहेसे ? जो सिद्धनिका सुख निराकुल निर्मल अव्याबाध अखण्ड अतींद्रिय अविनाशी है। अर देव मनुष्यनिका सुख उपाधिसयुक्त, बाधासहित, विकल्परूप व्याकुलताकरि भरया विनाशीक है। अर एक दृष्टांत और सुनहु—मनुष्यनितें राजा सुखी, राजानितें चक्रवर्ती सुखी, अर चक्रवर्ती नितें व्यंतरदेव सुखी, अर व्यंतरनितें ज्योतिषी देव सुखी, तिनमें भवनवासी अधिक सुखी, अर भवन वासीनितें कल्पवासी सुखी, अर कल्पवासीनितें नवग्रीवके सुखी, नवग्रीवतैं नव अनुत्तरके सुखी, अर तिनतें पचोत्तरके सुखी, पचोत्तर सर्वार्थसिद्धि समान और सुखी नाहीं। सो सर्वार्थसिद्धिके अहमिंद्र-नितें अनन्तानंतगुणा सुख सिद्धपदमें है, सुखकी हद्द सिद्धपदका सुख है, अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य्य यह आत्माका निज स्वरूप सिद्धनिमें प्रवर्तै है। अर ससारी जीवनिके दर्शन ज्ञान सुख वीर्य कर्मनिके क्षयोपशमसे बाह्य वस्तुके निमित्त थकी विचित्रतालिए अल्परूप प्रवरते है। यह रूपादिक विषय सुख व्याधिरूप विकल्परूप मोहके कारण इनमें सुख नाहीं। जैसे फोडा राध रुधिरकरि भरया फूले ताहि सुख कहा ? तैसे विकल्परूप फोडा महा व्याकुलतारूप राधका भरया जिनके है तिनके सुख कहा ? सिद्ध भगवान गतागतरहित समस्त लोकके शिखर विराजे हैं। तिनके सुख समान दूजा सुख नाहीं। जिनके दर्शन ज्ञान लोकालोककू देखै, जानैं, तिनसमान सूर्य कहा ? सूर्य तो उदय अस्तकू धरै है सकल प्रकाशक नाहीं। वह भगवान सिद्ध परमेष्ठी हथलीविषै आवलेकी नाई सकल वस्तुकू देखै जानै। छद्मस्थ पुरुषका ज्ञान उस समान नाहीं। यद्यपि अवधिज्ञान महा पर्यय ज्ञानी मुनि अविभागी परमाणु पर्यन्त देखै है, अर जीवनिके असख्यात जन्म जानै है तथापि अरूपी पदार्थनिकू न जानै हैं अर अनंतकालकी न जानै, केवली ही जानै। केवलज्ञान केवलदर्शनकरि युक्त तिन समान और नाहीं। सिद्धनिके ज्ञान अनन्त, दर्शन अनन्त अर ससारी जीवनिके अल्पज्ञान अल्प दर्शन, सिद्धनिके अनन्त सुख अनन्त वीर्य अर ससारनिके अल्पसुख अल्पवीर्य। यह निश्चय जानो। सिद्धनिके सुखकी महिमा केवलज्ञानी ही जानै, अर चार ज्ञानके धारकहू पूर्ण न जानै। यह सिद्धपद

अभव्योकू अप्राप्य है। इस पदकू निकट भव्य ही पावे, अभव्य अनन्त कालहू काय क्लेशकरि अनेक यत्न करे तौहू न पावे। अनादि कालकी लगी जो अविद्यारूप स्त्री ताका विरह अभव्यनिके न होय। सदा विद्याकू लिये भववनविषै शयन करै। अर मुक्तिरूप स्त्रीके मिलापकी वांछाविषै तत्पर जे भव्य जीव ते कईएक दिन संसारविषै रहै हैं, सो संसारमें राजी नाहीं, तपविषै तिष्ठते मोक्ष हीके अभिलाषी हैं। जिनविषै सिद्ध होनेकी शक्ति नाहीं उन्हें अभव्य कहिये। अर जे सिद्ध होनहार हैं उन्हे भव्य कहिए। केवली कहै है हे रघुनन्दन! जिनशासन विना और कोई मोक्षका उपाय नाहीं। विना सम्यक्त कर्मनिका क्षय न होय। अज्ञानी जीव कोटि भवविषै जे कर्म न खिपाय सकै सो ज्ञानी तीन गुप्तिकू धरे एक मुहूर्तविषै खिपावै। सिद्ध भगवान परमात्मा प्रसिद्ध हैं सब जगतके लोग उनकू जानै है कि वे भगवान हैं। केवली बिना उनकू कोई प्रत्यक्ष देख न जान सकें। केवलज्ञानी हो सिद्धनिकू देखें जानै हैं। मिथ्यात्वका मार्ग संसारका कारण या जीवने अनन्त भवविषै धार्या। तुम निकटभव्य हो, परमार्थकी प्राप्तिके अर्थ जिनशासनकी अखण्ड श्रद्धा धारहु।

हे श्रेणिक! यह वचन सकलभूषण केवलीके सुनि श्रीरामचन्द्र प्रणामकरि कहते भये—हे नाथ! या संसार समुद्रतै मोहि तारहु, हे भगवन! यह प्राणी कौन उपायकरि संसारके वासतैं छूटै है। तब केवली भगवान कहते भए—हे राम! सम्यकदर्शन ज्ञान चारित्र मोक्षका मार्ग है, जिनशासनविषैं यह कहा है। तत्त्वका जो श्रद्धान ताहि सम्यग्दर्शन कहिए, अनन्तगुणपर्यायरूप है ताके दोय भेद हैं—एक चेतन दूसरा अचेतन। सो जीव चेतन है, अर सब अचेतन है। अर दर्शन दोय प्रकारतैं उपजै हैं एक निसर्ग एक अधिगम। जो स्वतः स्वभाव उपजै सो निसर्गज, अर गुरुके उपदेशतै उपजै सो अधिगमज। सम्यकदृष्टि जीव जिनधर्मविषै रत है। सम्यक्त्वके अतीचार पांच हैं—शंका कहिये जिनधर्मविषै संदेह, अर कांक्षा कहिये भोगनिकी अभिलाषा, अर विचिकित्सा कहिए महामुनिकू देख ग्लानि करनी, अर अन्यदृष्टि प्रशंसा कहिये मिथ्यादृष्टिकू मनविषै भला जानना, अर संस्तव कहिये वचनकरि मिथ्या

दृष्टिकी स्तुति करना, इनकरि सम्यक्तविप दूषण उपज ह । अर मत्री प्रमोद करुणा माध्यस्थ ये चार भावना अथवा अनित्यादि बारह भावना, अथवा प्रशम सवेग अनुकम्पा आस्तिक्य अर शकादि दोष रहितपना, जिनप्रतिमा जिनमन्दिर जिनशास्त्र मुनिराजनिकी भक्ति इनकरि सम्यग्दशन निमल होय ह । अर सवज्ञके वचन प्रमाण वस्तुका जानना सो ज्ञानकी निमलताका कारण ह । अर जो काहूतें न सध ऐसी दुधरक्रिया आचरणी ताहि चारित्र कहिए । पाचो इन्द्रियनिका निरोध मन का निरोध, वचनका निरोध, सव पापक्रियानिका त्याग सो चारित्र कहिए । त्रस स्थावर सव जीवकी दया सब कू आप सनान जाने सो चारित्र कहिए । अर सुननेवालेके मन अर काननिकू आनन्दकारी स्निग्ध मधुर अथसयुक्त कल्याणकारी वचन बोलना सो चारित्र कहिए । अर मन वचन कायकरि परधनका त्याग करना, किसीका विना दीया कछू न लेना, अर दीया हुआ आहारमात्र लेना, सो चारित्र कहिए । अर जो देवनिकरि पूज्य महादुधर ब्रह्मचयव्रतका धारण सो चारित्र कहिए । अर शिवमाग कहिए निर्वाणका माग ताहि विघ्नकरणहारी मूर्छा कहिए मनकी अभिलाषा ताका त्याग सोई परिग्रहका त्याग, सो हू चारित्र कहिए ह । ये मुनिनिक धम कहे । अर जो अणुव्रती श्रावक मुनिनिकू श्रद्धा आदि गुणनिकरि युक्त नवधा भक्तिकर आहार देना सो एकदेशचारित्र कहिए । अर परदारा—परधनका परिहार, परपीडाका निवारण, दयाधमका अगीकार, दानशील पूजा प्रभावना, पर्वोपवासादिक सो ये देशचारित्र कहिए, अर यम कहिए । यावज्जीव पापका परिहार नियम कहिए, मर्यादारूप व्रत तपका अगीकार, वराग्य, विनय विवेक, ज्ञान, म ा—इन्द्रियोका निरोध ध्यान इत्यादि धमका आचरण सो एकदेश चारित्र कहिए । यह अनेक गुणकरि युक्त, जिनभासित चारित्र परम धामका कारण कल्याणकी प्राप्तिके अथ सेवने योग्य ह । जो सम्यकदृष्टि जीव जिनशासनका श्रद्धानी परनिंदाका त्यागी अपनी अशुभ क्रियाका निंदक जगत से न सध ऐसे दुद्धर तपका धारक सयमका साधनहारा सो ही दुलभ चारित्र धारिवेकू समथ होय । अर जहा दया आदि समीचीन गुण नाहीं, अर चारित्र

विना ससारसू निवत्ति नाही । जहाँ दया क्षमा ज्ञान वराग्य तप सयम नाहीं तहा धम नाहीं । विषय कषायका त्याग सोई धम ह । शम कहिए समता भाव, परम शात, दम कहिये मन इन्द्रियोका निरोध, सवर कहिए नवीन कमका निरोध, जहा ये नाही तहां चारित्र नाहीं । जे पापी जीव हिसा कर है झूठ बोले ह चोरी करे हैं परस्त्री सेवन करे ह महा आरम्भी ह, परिग्रही ह तिनके धम नाहीं । जे धमके निमित्त हिसा कर ह ते अधर्मी अधमगतिके पात्र ह । जो मूढ जिनदीक्षा लेकर आरम्भ कर हैं सो यति नाहीं । यतिका धम आरम्भ परिग्रहसू रहित ह । परिग्रह धारियोकू मुक्ति नाहीं । जे हिसा में धम जान षटकायिक जीवोकी हिंसा कर ह ते पापी ह । हिंसाविष धम नाहीं,हिसकोकू या भव पर भवके सुख नाहीं, शिव कहिए मोक्ष नाहीं । जे सुखके अथ धमके अथ जीवघात कर ह सो वथा ह । जे ग्राम क्षेत्रादिकविष आसक्त ह गाय, भस राख ह, मार ह, बाध ह, तोडे ह, दाह ह, उनके वराग्य कहा ? जे क्रय विक्रय कर ह, रसोई परहडा आदि आरम्भ राखें ह, सुवर्णादिक राखे ह तिनकू मुक्ति नाहीं । जिनदीक्षा निराम्भ ह अतिदुलभ ह । जे जिनदीक्षा धारि जगतका धधा करै ह वे दीघ ससारी ह । जे साध होय तैलादिकका मदन कर ह शरीरका सस्कार कर ह । पुष्पादिकक सूघ ह सुगध लगावै है, दीपकका उद्योत कर ह, धप खेवै ह, सो साधु नाहीं, मोक्षमागसू परागमुख ह । अपनी बुद्धिकरि जे कह ह—हिंसाविष दोष नाहीं वे मूख ह । तिनकू शास्त्रका ज्ञान नाहीं, चारित्र नाहीं ।

जे मिथ्यादष्टि तप करै ह ग्रामविष एक रात्रि बस ह, नगरविषै पाच रात्रि, अर सदा ऊध्व बाहु राख है, मास मासोपवास कर ह, अर वनविष विचर ह, मौनी ह, निपरिग्रही है, तथापि दयावान नाहीं, दुष्ट ह हृदय जिनका, सम्यक्त बीज विना धमरूप वक्षकू न उपाय सकै । अनेक कष्ट करै तौ भी शिवालय कहिए मुक्ति उसे न लहें । जे धर्मकी बुद्धिकर पवतसू पडे, अग्निविषै जरै, जल विष डूबै, धरतीविष गडे, वे कुमरणकर कुगतिकू जावै है । जे पापकर्मी कामना परायण, आत रौद्र ध्यानी, विपरीत उपाय कर वे नरक निगोद लह । मिथ्यादष्टि जो कदाचित दान दे तप करै, सो

पुण्यके उदयकरि मनुष्य अर देव गतिके सुख भोग है, परन्तु श्रेष्ठ मनुष्य न होय, सम्यग्दृष्टियोंके फलके असख्यातवें भाग भी फल नाहीं। सम्यग्दृष्टि चौथे गुणठाणे अव्रती है-तो हू नियमविषै है प्रेम जिनके सो सम्यकदर्शनके प्रसादसू देवलोकविषै उत्तम देव होवै, अर मिथ्यादृष्टि कुलिंगी महा तप भी करै तो देवनिके किंकर हीनदेव होय, बहुरि ससारभ्रमण करै। अर सम्यकदृष्टि भाव धरै तो उत्तम मनुष्य होय, तिनमें देवनके भव सात, मनुष्यनिके भव आठ या भांति पन्द्रह भवविषै पचम गति पावै। वीतराग सर्वज्ञदेवने मोक्षका मार्ग प्रकट दिखाया है परन्तु यह विषयी जीव अगीकार न करै है। आशारूपी फासीसे बंधे मोहके वश पडे तृष्णाके भरे पापरूप जंजीरसे जकडे, कुगतिरूप बंदीगृहविषै पडे हैं स्पर्श अर रसना आदि इन्द्रियोके लोलुपी दुःखहीकू सुख मानै है। यह जगतके जीव एक जिनधर्मके शरण विना क्लेश भोगै है, इन्द्रियोके सुख चाहै सो मिले नाहीं अर मृत्युसू डरै सो मृत्यु छोडे नाहीं विफल कामना अर विफल भयके वश भए जीव केवल तापहीकू प्राप्त होय है। तापके हरिवेका उपाय और नाहीं, आशा अर शका तजना यही सुखका उपाय है। यह जीव आशाकरि भरचा भोगनिका भोग किया चाहै है, अर धर्मविषै धीर्य नाहीं धरै है। क्लेशरूप अग्नि करि उष्ण महा आरंभविषै उद्यमी कछु भी अर्थ नाहीं पावै है उलटा गांठका खोवै है। यह प्राणी पापके उदयसू मनवांछित अर्थकू नाहीं पावै है, उलटा अनर्थ होय है सो अनर्थ अतिदुर्जय है, यह मैं किया यह मैं करू हू, यह करूगा, ऐसा विचार करते ही मरकर कुगति जाय है। ये चारो ही गति कुगति है। एक पचमगति निर्वाण सोई सुगति है। जहांसे बहुरि आवना नाही, अर जगतविषै मृत्यु ऐसी नाहीं देखै है, जो याने यह किया, यह न किया, बाल अवस्था आदिसे सब अवस्थाविषै आय दाबै है, जैसे सिंह मृगकू सब अवस्थाविषै आय दाबै। अहो! यह अज्ञानी जीव अहितविषै हितकी बांछा धरै है, अर दुःखविषै सुखकी आशा करै है। अनित्यकू नित्य जानै है, भयविषै शरण मानै है। इनके विपरीतबुद्धि है। यह सब मिथ्यात्वका दोष है। यह मनुष्यरूप माता हाथी मायारूप गर्तविषै पडचा अनेक दुःख

रूप बन्धनकरि बन्धे हैं, विषयरूप मासका लोभी मत्स्यकी नाई विकल्परूपी जालमें पडे हैं। यह प्राणी दुर्बल बलदकी न्याई कुटुम्बरूप कीचमें फसा खेदखिन्न होय है। जैसे बरियोसे बध्या अर अंध-कूपमें पड्या उसका निकसना अति कठिन तैसे स्नेहरूप फासीकरि बध्या संसाररूप अंधकूपविषै पडा, अज्ञानी जीव उसका निकसना अति कठिन है। कोई निकटभव्य जिनवाणीरूप रस्सेकू गहै अर श्रीगुरु निकासनेवाले होय तो निकसे। अर अभव्य जीव जिनेन्द्री आज्ञारूप अति दुर्लभ आनन्दका कारण जो आत्मज्ञान उसे पायवे समर्थ नाहीं। जिनराजका निश्चय मार्ग निकटभव्य ही पावै अर अभव्य सदा कर्मनिकरि कलंकी भए अति क्लेशरूप संसार चक्रविषै भ्रमै है। हे श्रेणिक! यह वचन श्री भगवान सकलभूषण केवलीने कहे। तब श्रीरामचन्द्र हाथ जोड सीस निवाय कहते भए—हे भगवान! मैं कौन उपायकरि भवभ्रमणसू छूटू? मैं सकल राणी अर पृथ्वीका राज्य तजिवे समर्थ हू, परन्तु भाई लक्ष्मणका स्नेह तजिवे समर्थ नाहीं। स्नेह समुद्रकी तरंगनिविषै डूबू हू। आप धर्मोपदेशरूप हस्ता-वलंबन कर काढहु। हे करुणानिधान! मेरी रक्षा करहु। तब भगवान कहते भए—हे राम! शोक न कर, तू बलदेव है। कईयक दिन वासुदेव सहित इन्द्रकी न्याई या पृथ्वीका राज्य कर जिनेश्वरका व्रतधरि केवलज्ञान पावेगा। ये केवलीके वचन सुनि श्रीरामचन्द्र हर्षकरि रोमांचित भए, नयनकमल फूलि गए, वदनकमल विकसित भया, परम धीर्य युक्त होते भए। अर रामकू केवलीके मुखसे चरम शरीरी जान सुर नर असुर सबही प्रशंसाकरि अति प्रीति करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै रामकू केवलीके मुख धर्मश्रवण वर्णन करनवाला एकसौ पांचवा पर्व पूर्ण भया ॥ १०५ ॥

अथानन्तर विद्याधरनिविषै श्रेष्ठ राजा विभीषण रावणका भाई, सुन्दर शरीरका धारक, रामकी भक्ति ही है आभूषण जाके सो दोऊ कर जोडि प्रणामकरि केवलीकू पूछता भया, हे देवाधिदेव!

श्रीरामचन्द्रने पूर्व भवविषै क्या सुकृत किया जाकरि ऐसी महिमा पाई अर इनकी स्त्री सीता दण्डक वनतै कौन प्रसंगकरि रावण हर ले गया। धर्म अर्थ काम मोक्ष चारो पुरुषार्थका वेत्ता अनेक शास्त्रका पाठी, कृत्य अकृत्यकू जाने, धर्म अधर्मकू पिछाने, प्रधानगुण सम्पन्न, सो काहेसू मोहके वश होय परस्त्रीकी अभिलाषारूप अग्निविषै पतंगके भावकू प्राप्त भया? अर लक्ष्मणने उसे संग्रामविषै हन्या। रावण ऐसा बलवान विद्याधरनिका महेश्वर अनेक अद्भुत कार्यनिका करणहारा कसै ऐसे मरणकू प्राप्त भया? तब केवली अनेक जन्मकी कथा विभीषणकू कहते भए—हे लंकेश्वर! राम लक्ष्मण दोनों अनेकभवके भाई है अर रावणके जीवसू लक्ष्मणके जीवका बहुत भवसे बैर है सो सुन। जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै एक नगर वहा नयदत्तनामा वणिक अल्प धनका धनी, उसकी सुनन्दा स्त्री, उसके धनदत्तनामा पुत्र, सो रामका जीव अर दूजा वसुदत्त सो लक्ष्मणका जीव, अर एक यज्ञवलिनामा विप्र वसुदत्तका मित्र सो तेरा जीव। अर उस ही नगरविषै एक और वणिक सागरदत्त, जिसके स्त्री रत्नप्रभा, पुत्री गुणवती सो सीताका जीव, अर गुणवतीका छोटा भाई जिसका नाम गुणवान सो भामंडलका जीव, अर गुणवतीका रूप योवन कला कांति लावण्यताकरि मण्डित, सो पिताका अभिप्राय जान धनदत्तसू बहिनकी सगाई गुणवानने करी। अर उसही नगरमें एक महा धनवान वणिक श्रीकांत सो रावणका जीव जो निरंतर गुणवतीके परिणवेकी अभिलाषा राखै, अर गुणवतीके रूपकर हरा गया है मन जाका सो गुणवतीका भाई लोभी धनदत्तकू अल्प धनवंत जान, श्रीकान्तकू महाधनवंत देख परणायवेकू उद्यमी भया।

सो यह वृत्तांत यज्ञवलि ब्राह्मणने वसुदत्तसू कहा। तेरे बडे भाईकी मांग कन्याका बडा भाई श्रीकांतकू धनवान जान परणाया चाहै है। तब वसुदत्त यह समाचार सुन श्रीकांतके मारिवेकू उद्यमी भया, खड्ग पैनाय अंधेरी रात्रिविषै श्याम वस्त्र पहिर शब्दरहित धीरा धीरा पग धरता जाय—श्रीकांतके घरविषै गया सो वह असावधान बैठा हुता सो खड्गसू मारया। तब पडते पडते श्रीकांतने भी वसुदत्त

कू खडगसू मारया सो दोऊ मरे सो बिध्याचलके वनमें हिरण भए। अर नगरके दुजन लोक हुते तिन्होने गुणवती धनदत्तकू न परणायवे दीनी कि इसके भाईने अपराध कीया। दुजन लोक विना अपराध कोप कर सो यह तो एक बहाना पाया तब धनदत्त अपने भाईका मरण अर अपना अपमान तथा मागका अलाभ जान महा दुखी होय घरसू निकस विदेश गमन करता भया अर वह कन्या धन दत्तकी अप्राप्तिकरि अति दुखी भई और भी किसीकू न परणती भई, अर कन्या मुनिनिकी निंदा अर जिनमार्गकी अश्रद्धा मिथ्यात्वके अनुरागकरि पाप उपार्जे, काल पाय आर्तध्यानकरि मूई सो जिस वनविष दोनो मृग भए हुते तिस वनविष यह मृगी भई। सो पूर्वले विरोधकरि इसीके अर्थत दोनो मृग परस्पर लडकरि मूए, सो वन सूकर भए बहुरि हाथी, भैसा, बैल वानर, गडा, स्याली, मींढा इत्यादि अनेकजन्म धरते भए। अर यह वाही जातिकी तिय चनी होती भई। सो याके निमित्त परस्पर लडकर मूए। जलके जीव थलके जीव होय प्राण तजते भए। अर धनदत्त मार्गके खेदकरि अति दुखी एक दिन सूर्यके अस्त समय मुनिनके आश्रय गया। भोला कछु जान नाहीं, साधुनिसू कहता भया म तृषाकरि पीडित हू मुझे जल पिलावहु, तुम धर्मात्मा हो। तब मुनि तो न बोले अर कोई जिनधर्मी मधुर वचन करि इसे सतोष उपजायकरि कहता भया, हे मित्र! रात्रिकू अमृत भी न पीवना, जलकी कहा बात? जिससमय आखनिकर कछू सूझ नाहीं। सूक्ष्म जीव दृष्टि न पडे ता समय, हे वत्स! यदि तू अति आतुर भी होय तो भी खानपान न करना। रात्रि आहारविष मासका दोष लाग ह इसलिये तू न कर जाकरि भवसागरविष डूबिये। यह उपदेश सुन धनदत्त शातचित्त भया, शक्ति अल्प थी इसलिए यति न होय सका। दयाकरि युक्त ह चित्त जाका सो अणुव्रती श्रावक भया, बहुरि काल पाय समाधि मरण करि सौधर्म स्वर्गविष बडी ऋद्धिका धारक देव भया, मुकुट हार भुजबंधादिककरि शोभित पूर्व पुण्यके उदयसू देवागनादिक सुख भोगे। बहुरि स्वर्गसू चयकरि महापुरनामा नगरविष मेरु नामा श्रेष्ठी ताकी धारिणी स्त्रीके पद्मरुचि नामा पुत्र भया। अर ताही नगरविष राजा छत्रछाय, राणी

श्रीदत्ता, गुणनिकी मंजूषा हूती सो एक दिन सेठका पुत्र पदमरुचि अपने गोकुलविषै अश्व चढ़ा आया सो एक वृद्धिगति बलदकूं कठगत प्राण देख्या। तब इस सुगन्ध वस्त्र मालाके धारकने तुरगतें उतरि अति दयाकरि बलदके कानविष नमोकार मन्त्र दिया। सो बलदने चित्त लगाय सुन्या, अर प्राण तजि राणी श्रीदत्ताके गर्भविषै आय उपज्या। राजा छत्रछायके पुत्र न था सो पुत्रके जन्मविषै अति-हर्षित भया, नगरकी अतिशोभा करी, बहुत द्रव्य खरच्या, बडा उत्सव कीया। वादित्रोंके शब्दकरि दशो दिशा शब्दायमान भई। यह बालक पुण्यकर्मके प्रभावकरि पूर्व जन्म जानता भया। सो बलद के भवका शीत आताप आदि महादुख, अर मरणसमय नमोकार मन्त्र सुन्या ताके प्रभावकरि राज कुमार भया, सो पूर्वअवस्था यादकरि बालक अवस्थाविषै ही महाविवेकी होता भया। जब तरुण अवस्था भई, तब एक दिन विहार करता बलदके मरणके स्थानक गया, अपना पूर्व चरित चितार यह वृषभध्वजकुमार हाथीसूं उतर पूर्वजन्मकी मरणभूमि देख दुखित भया। अपने मरणका सुधारण-हारा, नमोकारमन्त्रका देनहारा उसके जानिवेके अर्थ एक कैलाशके शिखर समान ऊंचा चैत्यालय बनाया। अर चैत्यालयके द्वारविषै एक बलदकी मूर्ति जिसके निकट बैठा एक पुरुष नमोकार मन्त्र सुनावै है ऐसा एक चित्रपट लिखाय मेल्या अर उसके समीप समझनेके मनुष्य मले। दर्शन करिवेकूं मेरु श्रेष्ठी का पुत्र पदमरुचि आया, सो देख अतिहर्षित भया। अर भगवानका दर्शनकरि पीछे आय बलदके चित्रपटकी ओर निरखकरि मनविषै विचार है बलदकूं नमोकार मन्त्र मैंने सुनाया था। सो खडा खडा देखै। जे पुरुष रखवारे थे तिन जाय राजकुमारकूं कही। सो सुनते ही बडी ऋद्धिसूं युक्त हाथी चढ्या शीघ्र ही अपने परम मित्रसूं मिलने आया। हाथीसूं उतरि जिनमन्दिरविषै गया, बहुरि बाहिर आया। पदमरुचिकूं बलदकी ओर निहारता देख्या। राजकुमारने श्रेष्ठीके पुत्रकूं पूछी तुम बलदके चित्रपटकी ओर कहा निरखो हो? तब पदमरुचिने कही एक मरते बलदको मैंने नमोकार मन्त्र दिया था सो कहां उपज्या है यह जानिवेकी इच्छा है। तब वृषभध्वज बोले वह मैं हूं। ऐसा कह पायन

पडया, अर पद्मरुचिकी स्तुति करी, जैसे गुरुकी शिष्य करे, अर कहता भया मैं पशु महा अविवेकी मृत्युके कष्टकरि दुखी था सो तुम मेरे महामित्र नमोकारमंत्रके दाता समाधिमरणके कारण होते भए। तुम दयालु पर भवके सुधारणहारेने महा मंत्र मुझे दिया उससे मैं राजकुमार भया। जैसा उपकार राजा, देव, माता, सहोदर, मित्र, कुटुम्ब कोई न करे तैसा तुमने किया। अहो! जो तुम नमोकार मंत्र दिया उस समान पदार्थ त्रैलोक्यमें नाहीं। ताका बदला मैं क्या दूं। तुमसे उऋण नाहीं, तथापि तुमविषै मेरी भक्ति अधिक उपजी है जो आज्ञा देवो सो करूं। हे पुरुषोत्तम! तुम आज्ञा दानकरि मोकूं भक्त करो। यह सकल राज्य लेहु, मैं तुम्हारा दास, यह मेरा शरीर उसकरि इच्छा होय सो सेवा करावो। या भांति वृषभध्वजने कही तब पद्मरुचिके अर याके अति प्रीति बढी। दोनो सम्यकदृष्टि राजविषै श्रावकके व्रत पालते भए। ठौर ठौर भगवानके बडे २ चैत्यालय कराए तिनमें जिन बिंब पधराए। यह पृथ्वी तिनकरि शोभायमान होती भई। बहुरि समाधि मरण करि वृषभध्वज पुण्यकर्मके प्रसादकरि दूजे स्वर्गविषै देव भया, देवांगनानिके नेत्ररूप कमल तिनके प्रफुल्लित करनेकूं सूर्य समान होता भया, तहां मन वांछित क्रीडा करता भया। अर पद्मरुचि सेठ भी समाधि मरण करि दूजे ही स्वर्ग देव भया। दोऊ वहां परम मित्र भए। वहांसे चयकरि पद्मरुचिका जीव पश्चिम विदेहविषै विजयार्धगिरि जहां नंद्यावर्त नगर वहां राजा नंदीश्वर उसकी राणी कनकप्रभा उसके नयनानन्द नामा पुत्र भया। सो विद्याधरनिके चक्रपदकी सम्पदा भोगी बहुरि महा मुनिकी अवस्था धरि विषम तप किया। समाधि मरणकरि चौथे स्वर्ग देव भया। वहां पुण्य रूप बलके सुख रूप फल महा मनोज्ञ भोगे। बहुरि वहांसे चयकरि सुमेरु पर्वतके पूर्व दिशाकी ओर विदेह, वहां क्षेमपुरी नगरी, राजा विपुलवाहन, राणी पद्मावती तिनके श्रीचन्द्र नामा पुत्र भया। वहां स्वर्ग समान सुख भोगे। तिनके पुण्यके प्रभावसूं दिन दिन राजाकी वृद्धि भई, अटूट भंडार भया, समुद्रांत पृथ्वी एक ग्रामकी न्याईं वश करी। अर जिसके स्त्री इन्द्राणी समान, सो इन्द्रकेसे सुख भोगे, हजारों वर्ष सुखसूं राज्य

किया। एक दिन महा संघ सहित तीन गुप्तिके धारक समाधिगुप्ति योगीश्वर नगरके बाहिर आय विराजे। तिनकूं उद्यानविषै आया जान नगरके लोक बन्दनाकूं चले। सो महा स्तुति करते वादित्र बजावते हर्षसे जाय है। श्रीचन्द्र समीपके लोकनिकूं पूछता भया, यह हर्षका नाद जैसा समुद्र गाजै तैसा होय है सो कौन कारण है ? तब मन्त्रियनिने किंकर दौडाए, निश्चय किया जो मुनि आए हैं तिनके दर्शनकूं लोक जाय है। यह समाचार सुनकरि राजा फूले कमल समान भए है नेत्र जाके, अर शरीरविषै हर्षकरि रोमांच होय आये। राजा समस्त लोक अर परिवारसहित मुनिके दर्शनकूं गया, प्रसन्न है मुख जिनका, ऐसे मुनिराज तिनकूं राजा देखि प्रणामकरि महा विनयसंयुक्त पृथ्वीविषै बैठा। भव्यजीव रूप कमल तिनके प्रफुल्लित करिवेकूं सूर्य समान ऋषिनाथ तिनके दर्शनकूं राजाकूं अति धर्म-स्नेह उपज्या। वे महा तपोधर, धर्म शास्त्रके वेत्ता, परम गम्भीर, लोकनिकूं तत्व ज्ञानका उपदेश देते भए। यतिका धर्म अर श्रावकका धर्म, संसार समुद्रका तारणहारा अनेक भेद संयुक्त कह्या। अर प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग द्रव्यानुयोगका स्वरूप कह्या। प्रथमानुयोग कहिए उत्तम पुरुषनिका कथन, अर करणानुयोग कहिए तीन लोकका कथन, चरणानुयोग कहिए मुनि श्रावकका धर्म, अर द्रव्यानुयोग कहिए षटद्रव्य सप्त तत्व नव पदार्थ पंचास्तिकायका निर्णय। कैसे है मुनिराज ? वक्तानिविषै श्रेष्ठ है। अर आक्षेपणी कहिए जिनमार्ग उद्योतनी, अर विक्षेपणी कहिए मिथ्यात्वखंडनी, अर संवेगिनी कहिए धर्मानुरागणी, अर निर्वेदिनी कहिए वैराग्यकारिणी यह चार प्रकार कथा कहते भए। इस संसार असारविषै कर्मके योगसूं भ्रमता जो यह प्राणी सो महा कष्टसूं मोक्षमार्गकूं प्राप्त होय है। संसारके ठाठ विनाशीक है। जैसा संध्या समयका वर्ण, अर जलका बुदबुदा, तथा जलके झाग अर लहर, अर बिजुरीका चमत्कार, इन्द्र धनुष क्षण भंगुर हैं, असार है, ऐसा जगतका चरित्र क्षण भंगुर जानना। यामैं सार नाहीं। नरक तिर्यंचगति तो दुःखरूप ही है, अर देव मनुष्यगतिविषै यह प्राणी सुख जानै है सो सुख नाहीं, दुःख ही है। जिससे तृप्ति नाहीं सो ही दुःख। जो महेंद्र स्वर्गके

भोगनिकरि तृप्त नाहीं भया, सो मनुष्यभवके तुच्छ भोगनिकरि कस तृप्त होय ? यह मनुष्यभव भोग योग्य नाहीं, वैराग्य योग्य है। काहु एक प्रकारसू दुलभ मनुष्य देह पाया, जसे दरिद्री निधान पाव, सो विषयरसका लोभी होय वृथा खोय, मोहकू प्राप्त भया। जसे सूखे ई धनसू अग्निकू कहा तृप्ति, अर नदीनिके जलकरि समुद्रकू कहा तृप्ति ? तस विषयसुखसू जीवनकू तृप्ति न होय। चतुर भी विषयरूप मदकरि माहित भया मदताकू प्राप्त होय है। अज्ञानरूप तिमिरसू मद भया है मन जाका सो, जलविष डूबता खेदखिन्न होय त्यो खेदखिन्न है। परन्तु अविवेकी तो विषय ही कू भला जानै है। सूय तो दिनकू ताप उपजाव है, अर काम रात्रिदिन आताप उपजाव। सूयके आताप निवारिवे के अनेक उपाय है, अर कामके निवारिवेका उपाय एक विवेक ही है। जन्म जरा मरणका दु ख ससार-विषै भयकर है जिसका चितवन किए कष्ट उपजे। यह कम जनित जगतका ठाठ अरहटके यत्रकी घडी समान है, रीता भर जाय है भरा रीता होय है, नीचला ऊपर, ऊपरला नीचे। अर यह शरीर दुगन्ध है, यत्र समान चलाया चल है, विनाशीक है, मोह कमके योगसू जीवका कायासू स्नेह है। जलके बुदबुदा समान मनुष्य भवके उपजे सुख असार जानि बडे कुलके उपजे पुरुष विरक्त होय जिन राजका भाषा माग अगीकार करे है। उत्साहरूप बखतर पहिर निश्चय रूप तुरगके असवार, ध्यान-रूप खडगके धारक, धीर कमरूप शत्रुकू विनाशि निर्वाणरूप नगर लेय है। यह शरीर भिन्न अर मै भिन्न, ऐसा चितवन करि शरीरका स्नेह तज है। हे मनुष्यो! धमकू करो। धम समान और नाहीं। अर धमनिमें मुनिका धम श्रेष्ठ है। जिन महामुनियोके सुख दु ख दोनो तुल्य अपना अर पराया तुल्य। जे राग द्वेष रहित महापुरुष है वे परम उत्कष्ट शुक्ल ध्यानरूप अग्निसू कमरूप वनो दु खरूप दुष्टोंसे भरी भस्म कर है।

ये मुनिके वचन राजा श्रीचन्द्र सुन बोधकू प्राप्त भया। विषयानुभव सुखत वैराग्य होय अपने ध्वजकातिनामा पुत्रकू राज्य देय समाधिगुप्त नामा मुनिके समीप मुनि भया। विरक्त है मन जाका,

सम्यक्की भावनाकरि तीनो योग मन वचन काय तिनकी शुद्धता धरता संता, पाच समिति, तीन गुप्तिसू मंडित, राग द्वेषसू पराङमुख, रत्नत्रयरूप आभूषणनिका धारक, उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण धर्म-करि मंडित, जिनशासनका अनुरागी, समस्त अंग पूर्वा गका पाठक, समाधानरूप पच महाव्रतका धारक, जीवनिका दयालु, सप्त भयरहित, परमधैर्यका धारक, बाईस परीषहका सहनहारा, बेला तेला पक्ष मासादिक अनेक उपवासका करणहारा, शुद्ध आहारका लेनहारा, ध्यानाध्ययनमें तत्पर, निर्ममत्व, अतींद्रिय भोगनिकी वाछाका त्यागी, निदान बधनरहित, महाशात जिनशासनमे है वात्सल्य जाको यतिके आचारमें सघके अनुग्रहविषै तत्पर, बालके अग्रभागके कोटिमे भागहू नाहीं है परिग्रह जाकें, स्नानका त्यागी, दिगम्बर, ससारके प्रबधतें रहित, ग्रामके वनविषै एक रात्रि अर नगरके वनविषै पाच रात्रि रहनहारा, गिरिशिखर नदीके पुलिन उद्यान इत्यादि प्रशस्त स्थानविषै निवास करणहारा, कायोत्सर्गका धारक, देहतै हू निर्ममत्व निश्चल, मौनी, पडित, महातपस्वी इत्यादि गुणनिकार पूर्ण कर्म पिंजरकू जर्जराकरि काल पाय श्रीचद्रमुनि रामचद्रका जीव पाचवें स्वर्ग इन्द्र भया। तहा लक्ष्मी कीर्ति काति प्रतापका धारक, देवनिका चूडामणि, तीन लोकविषै प्रसिद्ध, परम ऋद्धिकरयुक्त, महा सुख भोगता भया। नन्दनादिक वनविषै सौधर्मादिक इन्द्र याकी सम्पदाकू देख रहे है। याके अवलो कनकी वाछा रहै। महा सुदर विमान मणि हेममई मोतिनिकी झालरनिका मण्डित, तामे बैठा विहार करै। दिव्य स्त्रीनिके नेत्रोकू उत्सवस्वरूप महासुखतै काल व्यतीत करता भया। श्रीचन्द्रका जीव ब्रह्मेंद्र ताकी महिमा, हे विभीषण! वचन कर न कही जाय, केवलज्ञानगम्य है। यह जिनशासन अमोलिक परमरत्न उपमारहित त्रैलोक्यविषै प्रकट है तथापि मूढ न जानै। श्रीजिनेंद्र मुनींद्र अर जिनधर्म इनकी महिमा जानकर हू मूर्ख मिथ्या अभिमानकरि गर्वित भए, धर्मसे पराङमुख रहैं। जो अज्ञानी या लोकके सुखविषै अनुरागी भया है, सो बालक समान अविवेकी है। जैसे बालक विना समझे अभक्ष्य का भक्षण करै है, विषपान करै है, तैसे मूढ अयोग्यका आचरण करै हैं। जे विषयके अनुरागी हैं

सो अपना बुरा करै है। जीवोंके कर्म बन्धकी विचित्रता है। इसलिए सब ही ज्ञानके अधिकारी नाहीं। कईएक महाभाग्य ज्ञानकूं पावै हैं, अर कईएक ज्ञानकूं पाय और वस्तुकी बाछाकरि अज्ञान दशाकूं प्राप्त होय है। अर कईएक महानिंद्य जो यह ससारी जीवनिके मार्ग तिनमें रुचि करै हैं। वे मार्ग महादोषके भरे हैं जिनमें विषय कषायकी बहुलता है। जिनशासनसूं और कोई दुखतै छुडायवेका मार्ग नाहीं, तातैं हे विभीषण ! तुम आन द चित्त होयकर जिनेश्वर देवका अर्चन करहु। इस भांति धनदत्तका जीव मनुष्यसे देव, देवसे मनुष्य होयकर नवमें भव रामचन्द्र भया, उसकी विगत पहले भव धनदत्त १, दूजे भव पहले स्वर्ग देव २, तीजे भव पद्मरुचि सेठ ३, चौथे भव दूजे स्वर्ग देव ४, पांचवें भव नयनानन्दराजा ५, छठे भव चौथे स्वर्ग देव ६, सातवें भव श्रीचन्द्र ७, आठवें भव पांचवें स्वर्ग ८, नवमें भव रामचन्द्र ९, आगे मोक्ष। यह तो रामके भव कहे, अब हे लंकेश्वर ! वसुदत्तादिकका वृत्तांत सुन—कर्मनिकी विचित्रगति, ताके योगकरि मणालकुण्ड नामा नगर, तहां राजा विजयसेन, राणी रत्नचूला, उसके वज्रकबुनामा पुत्र, उसके हेमवती राणी, उसके शभु नामा पुत्र पृथ्वीमें प्रसिद्ध, सो यह श्रीकांतका जीव रावण होनहार सो पृथ्वीमें प्रसिद्ध अर वसुदत्तका जीव राजा का पुरोहित उसका नाम श्रीभूति सो लक्ष्मण होनहार, महा जिनधर्मी सम्यग्दृष्टि। उसके स्त्री सरस्वती उसके वेदवती नामा पुत्री भई। सो गुणवतीका जीव सीता होनहार गुणवतीके भवसूं पूर्व सम्यक्त बिना अनेक तिर्यंच योनिविषै भ्रमणकरि साधुनिकी निंदाके दोषकरि गंगाके तट मरकर हथिनी भई। एक दिन कीचमें फसी, पराधीन होय गया है शरीर जाका, नेत्र तिरमिराट अर मंद मंद सास लेय, सो एक तरगवेग नामा विद्याधर महादयावान, उसने हथिनीके कानमें नमोकार मंत्र दिया। सो नमोकार मंत्रके प्रभाव करि मंद कषाय भई। अर विद्याधरने व्रत भी दिए। सो जिनधर्मके प्रसादसे श्रीभूति पुरोहितके वेदवती पुत्री भई। एक दिन मुनि आहारकूं आए सो यह हसने लगी। तब पिताने निवारी सो यह शांतचित्त होय श्राविका भई। अर यह कन्या परमरूपवती सो अनेक राजानिके पुत्र

याके परिणवेकू अभिलाषी भए। अर यह राजा विजयसेनका पोता शम्भु जो रावण होनहार है सो विशेष अनुरागी भया। अर यह पुरोहित श्रीभूति महा जिनधर्मी, सो उसने जो मिथ्यादृष्टि कुबेर समान धनवान होय तो हू मैं पुत्री न दू, यह मेरे प्रतिज्ञा है। तब शम्भुकुमारने रात्रिविषै पुरोहितकू मारचा सो पुरोहित जिनधर्मके प्रसादतैं स्वर्गलोकविषै देव भया। अर शम्भुकुमार पापी वेदवती साक्षात देवी समान उसे न इच्छतीकू बलात्कार परणिवेकू उद्यमी भया। वेदवतीके सर्वथा अभिलाषा नाहीं तब कामकरि प्रज्वलित इस पापीने जोरावरी कन्याकू आलिंगनकरि मुख चुम्ब मैथुन किया। तब कन्या विरक्त हृदय, कांपे शरीर जाका, अग्निकी शिखा समान प्रज्ज्वलित अपने शील घातकरि, अर पिताके घातकरि, परम दुखकू धरती, लाल नेत्र होय महा कोपकरि कहती भई—अरे पापी! तने मेरे पिताकू मारा, मो कुमारीसू बलात्कार विषयसेवन किया, सो नीच! मैं तेरे नाशका कारण होऊंगी। मेरा पिता तने मारा सो बडा अनर्थ किया। मैं पिताका मनोरथ कभी भी न उलघू। मिथ्या-दृष्टि सेवनसू मरण भला। ऐसा कह वेदवती श्रीभूति पुरोहितकी कन्या हरिकांता आर्यिकाके समीप जाय आर्यिकाके व्रत लेय परम दुर्धर तप करती भई। केशलुंच किए, महा तपकरि रुधिर मांस सुखाय दिए। प्रकट दीखै है अस्थि अर नसां जिसके, तपकर सुखाय दिया है देह जिसने, समाधिमरणकरि पांचवें स्वर्ग गई। पुण्यके उदयकरि स्वर्गके सुख भोगे। अर शम्भु संसारविषै अनीतिके योगकर अति निंदनीक भया। कुटुम्ब, सेवक अर धनसे रहित भया। उन्मत्त होय गया, अर जिनधर्म परागमुख भया। साधुनिकू देख हंसै, निंदा करै, मद्य मांस शहदका आहारी, पापक्रियाविषै उद्यमी, अशुभ उदयकरि नरक तिर्यंचविषै महा दुख भोगता भया।

अथानन्तर कछु इक पापकर्मके उपशमसे कुशध्वज नामा ब्राह्मण, ताके सावित्री नामा स्त्रीके प्रभासकुंद नामा पुत्र भया। सो दुर्लभ जिनधर्मका उपदेश पाय विचित्रमुनिके निकट मुनि भया। काम क्रोध मद मत्सर हरे, आरम्भरहित भया, निर्विकार तपकरि दयावान, निस्पृही, जितेन्द्री, पक्ष

मास उपवास करै । जहां सूर्य अस्त हो तहा शून्य वनविषै बैठ रहै । मूलगुण उत्तरगुणका धारक, बाईस परीषहका सहनहारा, ग्रीषमविषै गिरिके शिखर रहै, वर्षामें वृक्षतले बसै, अर शीतकालविषै नदी सरोवरीके तट निवास करै । या भांति उत्तम क्रियाकर युक्त श्री सम्मेदशिखरकी वंदनाकू गया । वह निर्वाण क्षेत्र कल्याणका मन्दिर, जाका चितवन किये पापनिका नाश होय । तहां कनक प्रभ नामा विद्याधरकी विभूति आकाशविषै देख मूर्खने निदान किया जो जिनधर्मके तपका माहात्म्य सत्य है तो ऐसी विभूतिम हूं पाऊं । यह कथा भगवान केवलीने विभीषणकू कही-देखो जीवनिकी मूढता, तीनलोक जाका मोल नाहीं ऐसा अमोलिक तपरूप रत्न, भोगरूपी मूठी सागके अर्थ बेच्या । कर्मके प्रभावकरि जीवनकी विपर्यय बुद्धि होय है । निदानकरि दुःखित विषम तपकरि वह तीजे स्वर्ग देव भया । तहांतै चयकरि भोगनिविषै है चित्त जाका, सो राजा रत्नश्रवाके राणी केकसी, ताके रावण नामा पुत्र भया । लंकामें महा विभूति पाई, अनेक हैं आश्चर्यकारी बात जाकी, प्रतापी पृथ्वीमें प्रसिद्ध । अर धनदत्तका जीव रात्रि भोजनके त्यागकरि सुर नर गतिके सुख भोग श्रीचन्द्र राजा होय, पंचम स्वर्ग दश सागर सुख भोगि, बलदेव भया । रूपकरि बलकरि विभूतिकरि जा समान जगतविषै और दुर्लभ है । महामनोहर, चन्द्रमासमान उज्ज्वल यशका धारक । अर वसुदत्तका जीव अनुक्रमसे लक्ष्मीरूप लताके लिपटानेका वृक्ष वसुदेव भया । ताके भव सुनो-वसुदत्त १, मृग २, सूकर ३, हस्ती ४, महिष ५, वृषभ ६, बानर ७, चीता ८, ल्याली ६, मींढा १०, अर जलचर स्थलचरके अनेक भव ११, श्रीभूति पुरोहित १२, देवराजा १३, पुनर्वसु विद्याधर १४, तीजे स्वर्गदेव १५, वासुदेव १६ मेघा १७, कुटुम्बीका पुत्र १८, देव १६, वणिक् २०, भोगभूमि २१, देव २२, चक्रवर्तीका पुत्र २३। बहुरि कईएक उत्तमभव धर पुष्करार्द्धके विदेहविषै तीर्थंकर अर चक्रवर्ती दोय पदका धारी होय मोक्ष पावेगा । अर दशाननके भव श्रीकान्त १, मृग २, सूकर ३, गज ४, महिष ५, वृषभ ६ बानर ७, चीता ८, ल्याली ९, मींढा १०, अर जलचर थलचरके अनेक भव ११, शम्भु १२, प्रभासकुन्द १३,

तीजे स्वर्ग १४, वज्रमुख १५, बालुका १६, कुटुम्बी पुत्र १७, देव १८, वणिक १६, भोगभूमि २०, देव २१, चक्रीपुत्र २२, बहुरि कईएक उत्तम भव धरि भरतक्षेत्रविषै जिनराज होय मोक्ष पावेगा, बहुरि जगत जालविषै नाहीं। अर जानकीके भव गुणवती १, मृगी २, सूकरी ३, हथिनी ४, महिषी ५, गो ६, बानरी ७, चीती ८, स्याली ९, गारुड १०, जलचर स्थलचरके अनेक भव ११, चितोत्सवा १२, पुरोहितकी पुत्री वेदवती १३, पाचवें स्वर्ग देवी अमृतवती १४, बलदेवकी पटराणी १५, सोलहवें स्वर्ग प्रतेन्द्र १६, चक्रवर्ती १७, अहमिंद्र १८, रावणका जीव तीर्थंकर होयगा। ताके प्रथम गणधर देव होय मोक्ष प्राप्त होयगा। भगवान सकलभूषण विभीषणसू कहै हैं—श्रीकांतका जीव कईएक भवमें शम्भु प्रभासकुन्द होय अनुक्रमसू रावण भया, जाने अर्द्ध भरतक्षेत्रमें सकल पृथ्वी वश करी, एक अंगुल आज्ञा सिवाय न रही। अर गुणवतीका जीव श्रीभूतिकी पुत्री होय अनुक्रमकरि सीता भई, राजा जनककी पुत्री, श्रीरामचन्द्रकी पटराणी, विनयवती, शीलवती, पतिव्रतानिमें अग्रेसर भई। जैसे इन्द्रके शची, चन्द्रके रोहिणी, रविके रेणा, चक्रवर्तीके सुभद्रा, तैसे रामके सीता, सुन्दर है चेष्टा जाकी। अर जो गुणवतीका भाई गुणवान सो भामण्डल भया। श्रीरामका मित्र जनक राजाकी राणी विदेहाके गर्भविषै युगल बालक भए, भामण्डल भाई सीता बहिन, दोनों महा मनोहर। अर यज्ञवलि ब्राह्मणका जीव विभीषण भया अर बलका जीव जो नमोकारमन्त्रके प्रभावतै स्वर्गगति नरकगतिके सुख भोगे यह सुग्रीव कपिध्वज भया। भामण्डल, सुग्रीव अर तू पूर्व भवकी प्रीतिकर तथा पुण्यके प्रभावकरि महा पुण्याधिकारी श्रीराम ताके अनुरागी भए। यह कथा सुन विभीषण बालि के भव पूछता भया सो केवली कहै है—हे विभीषण! तू सुन! राग द्वेषादि दुखनिके समूहकरि भरा यह संसार सागर चतुर्गतिमई, ताविषै वृन्दावनविषै एक कालेरा मृग, सो साधु स्वाध्याय करते हुते तिनका शब्द अंतकालमें सुनकरि ऐरावत क्षेत्रविषै दित नामा नगर तहां विहित नामा मनुष्य, सम्यग्दृष्टि सुन्दर चेष्टाका धारक, ताकी स्त्री शिवमति, ताके मेघदत्त नामा पुत्र भया सो जिन पूजाविषै उद्यमी, भग-

दानका भक्त, अणुव्रतधारक, समाधिमरणकरि दूजे स्वर्गदेव भया। वहांसे चयकरि जम्बूद्वीपविषै पूर्व विदेह, विजयावतीपुरी, ताके समीप महाउत्साहका भरया एक मत्तकोकिला नामा ग्राम ताका स्वामी कांतिशोक, ताकी स्त्री रत्नागिनी, ताके स्वप्रभ नामा पुत्र भया, महासुन्दर, जाकूं शुभ आचार भाव। सो जिनधर्मविषै निपुण सयतनामा मुनि होय हजारो वर्ष विधिपूर्वक बहुत भांतिके महातप किए। निर्मल है मन जाका सो तपके प्रभावकरि अनेक ऋद्धि उपजी, तथापि अति निर्गर्व सयोग सबंधविषै ममताकूं तजि, उपशमश्रेणी धार शुक्लध्यानके पहिले पायेके प्रभावत सर्वार्थसिद्धि गया, सो तेतीस सागर अहमिंद्र पदके सुख भोगि राजा सूयरज ताके बालि नामा पुत्र भया विद्याधरनिका अधिपति, किहकंधपुरका धनी, जिसका भाई सुग्रीव सो महा गुणवान। सो जब रावण चढ आया तब जीव-दयाके अर्थ बालीने युद्ध न किया, सुग्रीवकूं राज्य देय दिगम्बर भया। सो जब कैलाशविषै तिष्ठै था अर रावण आय निकस्या। क्रोधकरि कैलाशके उठायवेकूं उद्यमी भया, सो बाली मुनि चैत्यालयकी भक्तिसूं ढीला सो अंगुष्ठे दाव्या, सो रावण दबने लगा। तब राणीने साधुकी स्तुति करि अभयदान दिवाया। रावण अपने स्थानक गया। अर बाली महामुनि गुरुकें निकट प्रायश्चित्तनामा तप लेय दोष निराकरणकरि क्षपकश्रेणी चढ कर्म दग्ध किए, लोकके शिखर सिद्धक्षेत्र है वहां गए, जीवका निज स्वभाव प्राप्त भया। अर वसुदत्तके अर श्रीकांतके गुणवतीके कारण महा बैर उपज्या था सो अनेक भवविषै दोऊ परस्पर लड लड मूवे। अर गणवतीसूं तथा वेदवतीसूं रावणके जीवके अभि-लाषा उपजी हुती, उस कारणकरि रावणने सीता हरी। अर वेदवतीका पिता श्रीभूति सम्यग्दृष्टि उत्तम ब्राह्मण सो वेदवतीके अर्थ शत्रुने हता, सो स्वर्ग जाय वहांसे चयकर प्रतिष्ठित नाम नगरविषै पुनर्वसु नाम विद्याधर भया। सो निदान सहित तपकर तीजे स्वर्ग जाय रामका लघु भ्राता महा स्नेहवत लक्ष्मण भया। अर पूर्वले वैरके योगसूं रावणकूं मारया। अर वेदवतीसूं शम्भुने विपर्यय करी तातैं सीता रावणके नाशका कारण भई, जो जाकूं हतै सो ताकरि हत्या जाय। तीन खण्डको

लक्ष्मी सोई भई रात्रि, ताका चन्द्रमा रावण, ताहि हतकरि लक्ष्मण सागरात पृथ्वीका अधिपति भया। रावणसा शूरवीर पराक्रमी या भांति मारचा जाय यह कर्मनिका दोष है। दुर्बलसे सबल होय, सबलसे दुर्बल होय, घातक है सो हता जाय अर हता होय सो घातक होय जाय। संसारके जीवनि की यही गति है। कर्मकी चेष्टाकरि कभी स्वर्गके सुख पावें, कभी नरकके दुःख पावें। अर जैसे काहू महा स्वादरूप परम अन्नविषै विष मिलाय दूषित करै तैसे मूढ जीव उग्र तपकूं भोगविलास करि दूषित करै हैं। जैसे कोई कल्पवृक्षकूं काटि कोदूकी बाढ करै, अर विषके वृक्षकूं अमृत रसकरि सींचे, अर भस्मके निमित्त रत्ननिकी राशिकूं जलावै, अर कोयलनिके निमित्त मलयागिरि चन्दनकूं दग्ध करै, तैसे निदान बंधकर तपकूं यह अज्ञानी दूषित करै। या संसारविषै सब दोषकी खान स्त्री है। ताके अर्थ कहा कुकर्म अज्ञानी न करै? जो या जीवनने कर्म उपार्जे है सो अवश्य फल देय है, कोऊ अन्यथा करिवे समर्थ नाहीं। जे धर्मविषै प्रीति करै बहुरि अधर्म उपार्जें वे कुगतिकूं प्राप्त होय हैं। तिनकी भूल कहा कहिए? जे साधु होयकर मदमत्सर धरै हैं तिनकूं उग्र तपकरि मुक्ति नाहीं। अर जाके शांति भाव नाहीं संयम नाहीं, तप नाहीं, उसे दुर्जन मिथ्यादृष्टिके संसार सागरके तिरवेका उपाय कहा? अर जैसे असराल पवनकरि मदोन्मत्त गजेंद्र उडे तो सुसाके उडिवेका कहा आश्चर्य? तैसे संसारकी झूठी मायाविषै चक्रवर्त्यादिक बडे पुरुष भूलैं तो छोटे मनुष्यनिकी कहा बात? या जगतविषै परम दुःखका कारण वैर भाव है सो विवेकी न करै, आत्म कल्याणकी है भावना जिनके पाप की करणहारी वाणी कदापि न बोले। गुणवतीके भवविषै मुनिका अपवाद किया था अर वेदवतीके भवमें एक मंडलकानामा ग्राम वहां सुदर्शननामा मुनि वनमें आये। लोक वंदना कर पीछे गए, अर मुनिकी बहिन सुदर्शना नामा आर्यिका सो मुनिके निकट बैठी धर्म श्रवण करै थी। सो वेदवतीने देखकर ग्रामके लोकनिके निकट मुनिकी निंदा करी कि मैं मुनिकूं अकेली स्त्रीके समीप बैठा देख्या। तब कईएकनिने बात मानी, अर कईएक बुद्धिवंतनिने न मानी, परन्तु ग्राममें मुनिका अपवाद भया।

तब मुनिने नियम किया कि यह झूठा अपवाद दूर होय तो आहारकू उतरना अन्यथा नाहीं। तब नगरके देवताने वेदवतीके मुखकरि समस्त ग्रामके लोकनिकू कहाई कि मैं झूठा अपवाद किया। यह बहिन भाई हैं, अर मुनिके निकट जाय वेदवतीने क्षमा कराई कि हे प्रभो! मैं पापिनीने मिथ्यावचन कहे सो क्षमा करहु। या भांति मुनिकी निंदाकरि सीताका झूठा अपवाद भया, अर मुनिसू क्षमा कराई, उसकरि अपवाद दूर भया। तातें जे जिनमार्गी हैं वे कभी भी परनिंदा न करें। किसीमें साचा दोष है तौहू ज्ञानी न कहै। अर कोऊ कहता होय ताहि मने करें। सर्वथा प्रकार पराया दोष ढाकें। जे कोई परनिंदा करें हैं सो अनन्तकाल संसार वनविषै दुख भोगवे हैं। सम्यकदर्शन रूप जो रत्न ताका बडा गुण यही है जो पराया अवगुण सर्वथा ढाकें। जो साचा भी दोष पराया कहै सो अपराधी है। अर जो अज्ञानसू मत्सर भावसे पराया झूठा दोष प्रकाशै उस समान और पापी नाहीं। अपने दोष गुरुके निकट प्रकाशने अर पराए दोष सर्वथा ढाकने। जो पराई निन्दा करै सो जिनमार्गसे पराङमुख है।

यह केवलीके परम अद्भुत वचन सुनकरि सुर असुर नर सब ही आनन्दकू प्राप्त भए। वैरभावके दोष सुन सब सभाके लोग महादुखके भयकरि कम्पायमान भए। मुनि तो सर्व जीवनिसू निर्वैर हैं अधिकशुद्ध भाव धारते भए। अर चतुर्निकायके सर्व ही देव क्षमाकू प्राप्त होय वैरभाव तजते भए। अर अनेक राजा प्रतिबुद्ध होय शांतिभाव धार, गर्वका भार तजि मुनि अर श्रावक भए। अर जे मिथ्यावादी थे वह हू सम्यक्तकू प्राप्त भए। सब ही कर्मनिकी विचित्रता जान निश्वास नाखते भए। धिक्कार या जगतकी मायाकू, या भांति सब ही कहते भए। अर हाथ जोड सीस निवाय केवलीकू प्रणामकरि सुर असुर मनुष्य विभीषणकी प्रशंसा करते भए जो तिहारे आश्रयसू हमनें केवलीके मुख उत्तम पुरुषनिके चारित्र सुने। तुम धन्य हो बहुरि देवेन्द्र, नरेन्द्र, नागेन्द्र सबही आनन्दके भरे अपने परिवारगण सहित सर्वज्ञ देवकी स्तुति करते भए। हे भगवान पुरुषोत्तम! यह त्रैलोक्य सकल तुमकरि शोभै है। तातैं तिहारा सकलभूषण नाम सत्यार्थ है। तिहारी केवलदर्शन केवलज्ञानमई निज विभूति सब जगत

की विभूतिकू जीतकरि शोभ ह । यह अनत चतुष्टय लक्ष्मी सब लोकका तिलक ह । यह जगतके जीव अनादि कालके कर्मवश होय रहे ह, महा दुखक सागरमें पडे है, तुम दीननिके नाथ दीनबन्धु करुणानिधान जीवनिकू जिनराजपद देहु । हे केवलिन ! हम भव वनके मग, जन्म जरा मरण रोग शोक वियोग व्याधि अनेक प्रकारके दुख भोक्ता, अशुभ कमरूप जाल विष पडे है तातै छूटना अति कठिन ह, सो तुम ही छुडायवे समथ हो । हमकू निज बोध देवहु जाकरि कमका क्षय होय । हे नाथ ! यह विषय, वासनारूप गहन वन, तामें हम निजपरीका माग भूल रहे ह, सो तुम जगतके दीपक हम कू शिवपुरीका पथ दरसावो । अर जे आत्मबोधरूप शातरसके तिसाए तिनकू तुम तृषाके हरणहारे महासरोवर हो, अर कम भर्मरूप वनके भस्म करिवेकू साक्षात दावानल रूप हो, अर जे विकल्प-जाल नाना प्रकारके तेई भए बरफ ताकरि कम्पायमान जगतके जीव तिनकी शीत व्यथा हरिवेकू तुम साक्षात सूय हो । हे सर्वेश्वर ! सब भूतेश्वर ! जिनेश्वर ! तिहारी स्तुति करिवेकू चारज्ञानके धारक गणधरदेव हू समथ नाहीं तो और कौन ? हे प्रभो ! तुमकू हम बारम्बार नमस्कार करे है ।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महापद्मपराण सस्कत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष राम लक्ष्मण विभीषण सुग्रीव सीता भामण्डलक वर्णन करनवाला एकसौ छहवा पव पण भया ।। १०६ ।।

अथानन्तर केवलीके वचन सुन ससार भ्रमणका जो महा दु ख ताकरि खेदखिन्न होय जिनदीक्षा की ह अभिलाशा जाके, ऐसा रामका सेनापति कतातवक्र रामसू कहता भया—हे देव ! म या ससार असारविष अनादिकालका मिथ्या मागकर भ्रमता हुवा दु खित भया । अब मेरे मुनिव्रत धरिवेकी इच्छा ह । तब श्रीराम कहते भए—जिनदीक्षा अति दुधर ह, तू जगतका स्नेह तजि कसे धारेगा ? महा तीव्र शीत उष्ण आदि बाईस परीषह कसे सहेगा ? अर दुजन जननिके दुष्ट वचन कटक तुल्य कस सहेगा ? अर अब तक तन कभी भी दुख सहे नाहीं, कमलकी कर्णिका समान शरीर तरा सो

कैसे विषमभूमिके दुख सहेगा ? गहन वनविषै कैसे रात्रि पूरी करेगा ? अर प्रकट दृष्टि पडै है शरीर के हाड अर नसाजाल जहां, ऐसे उग्रतप कैसे करेगा ? अर पक्ष मास उपवास, दोष टाल परघर नीरस भोजन कैसे करेगा ? तू महा तेजस्वी, शत्रुवोंकी सेनाके शब्द न सहि सकै, सो कैसे नीच लोकनिके किए उपसर्ग सहेगा ? तब कृतांतवक्र बोला—हे देव ! जब मैं तिहारे स्नेहरूप अमृतकूं ही तजवेकूं समर्थ भया तो मुझे कहा विषम है । जब तक मृत्युरूप वज्रकरि यह देहरूप स्तंभ न चिगै ता पहिले मैं महादुखरूप यह भववन अंधकारमई वासस्ूं निकस्या चाहूं हूं। जो बलते घरमेंसे निकसै उसे दयावान न रोकै । यह संसार असार महानिंद्य है, इसे तजकरि आत्महित करूं । अवश्य इष्टका वियोग होयगा या शरीरके योगकरि सब दुख है सो हमारे शरीर बहुरि उदय न आवै या उपायविषै बुद्धि उद्यमी भई है । ये वचन कृतांतवक्रके सुन श्रीरामके आंसू आए अर नीठे नीठे मोहकूं दाबि कहते भए—मेरीसी विभूतिकूं तज तू तपके सन्मुख भया है सो धन्य है । जो कदाचित या जन्मविषै मोक्ष न होय अर देव होय तो संकटविषै आय मोहि संबोधियो । हे मित्र ! जो तू मेरा उपकार जानै है तो देवगतिमें विस्मरण मत करियो ।

तब कृतांतवक्रने नमस्कारकर कही, हे देव ! जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा । ऐसा कह सब आभूषण उतारे अर सकलभूषण केवलीकूं प्रणामकरि अंतर बाहिरके परिग्रह तजे । कृतांतवक्र था सो सौम्यवक्र हो गया । सुन्दर है चेष्टा जाकी, इसको आदि दे अनेक महाराजा वैरागी भए । उपजी है जिनधर्मकी रुचि जिनके निर्ग्रंथव्रत धारते भए । अर कईएक श्रावक व्रतकूं प्राप्त भए, अर कईएक सम्यक्त्वकूं धारते भए । वह सभा, हर्षित होय रत्नत्रय आभूषणकरि शोभित भई । समस्त सुर असुर नर सकलभूषण स्वामीकूं नमस्कारकरि अपने अपने स्थानक गए । अर कमलसमान हैं नेत्र जिनके, ऐसे श्रीराम सकलभूषण स्वामीकूं अर समस्त साधुनिकूं प्रणामकरि महा विनयरूपी सीताके समीप आए । कैसी है सीता ? महा निर्मल तपकरि तेज धरे । जैसी घृतकी आहूतिकरि अग्निकी शिखा

प्रज्ज्वलित होय तसी पापोके भस्म करिवेकू साक्षात अग्निरूप तिष्ठी है। आर्यिकानिके मध्य तिष्ठती देखी, ददीप्यमान है किरणनिका समूह जाके, मानो अपूर्व चन्द्रकांति तारानिके मध्य तिष्ठी है, आर्यिकानिके व्रत धरे। अत्यन्त निश्चल है। तजे हैं आभूषण जाने, तथापि श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी लज्जा इनकी शिरोमणि सोहै है। श्वेत वस्त्रकू धरे कैसी सोहै है? मानो मंद पवनकर चलायमान है फेन कहिए झाग जाके, ऐसी पवित्र नदी ही है, अर मानो निर्मल शरद पूनोकी चांदनी समान शोभाकू धरे समस्त आर्यिकारूप कुमुदनियोंकू प्रफुल्लित करणहारी भासे है। महा वैराग्यकू धरे मूर्तिवंती जिनशासनकी देवता ही है। सो ऐसी सीताकू देख आश्चर्यकू प्राप्त भया है मन जिनका, ऐसे श्रीराम कल्पवृक्ष समान क्षणएक निश्चल होय रहे। स्थिर हैं नेत्र भृकुटी जिनकी जैसे शरदकी मेघमालाके समीप कंचनगिरि सोहै तैसे श्रीराम आर्यिकानिके समीप भासते भए। श्रीराम चित्तविषै चितवते हैं यह साक्षात चन्द्रकिरण भव्यजन कुमुदनीकू प्रफुल्लित करणहारी सोहै है। बडा आश्चर्य है–यह कायर स्वभाव मेघके शब्दसे डरती सो अब महा तपस्विनी भयंकर वनविषै कैसे भयकू न प्राप्त होयगी? नितम्बहीके भारसू आलस्यरूप गमन करणहारी महा कोमलशरीर तपसू विलाय जायगी। कहा यह कोमल शरीर, अर कहा यह दुर्धर जिनराजका तप? सो अति कठिन है। जो दाह बडे २ वृक्षनिकू दाहे, ताकरि कमलिनीकी कहा बात? यह सदा मनवांछित मनोहर आहारकी करणहारी, अब कैसे यथालाभ भिक्षाकरि कालक्षेप करेगी? यह पुण्याधिकारिणी रात्रिविषै स्वर्गके विमान समान सुन्दर महिलमें मनोहर सेजपर पौढती, अर बीण, बांसुरी, मृदंगादि मंगल शब्दकरि निद्रा लेती, सो अब भयंकर वनविषै कैसे रात्रि पूर्ण करेगी? वन तो डाभकी तीक्ष्ण अणियोकर विषम अर सिंह व्याघ्रादिकके शब्दकरि डरावना। देखहु मेरी भूल जो मूढ लोकनिके अपवादसू मैं महा सती पतिव्रता शीलवती सुन्दरी मधुर भाषिणी घरसे निकासी। या भांति चिंताके भारकरि पीडित श्रीराम पवन करि कम्पायमान कमल समान कम्पायमान होते भए। फिर केवलीके वचन चितार धीर्य धरि, आसू

पोंछि, शोकरहित होय महा विनयकरि सीताकूं नमस्कार किया। लक्ष्मण भी सौम्य है चित्त जाका, हाथ जोडि नमस्कारकरि राम सहित स्तुति करता भया। हे भगवती! धन्य, तू सती बंदनीक है, सुन्दर है चेष्टा जाकी। जैसे धरा सुमेरुकूं धारै तैसे तू जिनराजका धर्म धारै है। तैंनें जिनवचनरूप अमृत पीया उसकरि भवरोग निवारगी, सम्यक्त ज्ञानरूप जहाजकरि संसार समुद्रकूं तिरैगी। जे पतिव्रता निर्मलचित्तकी धरणहारी है तिनकी यही गति है—अपनी आत्मा सुधारें, अर दोऊ लोक अर दोऊ कुल सुधारै। पवित्र चित्तकरि ऐसी क्रिया आदरी। हे उत्तम नियमकी धरणहारी! हम जो कोई अपराध किया होय सो क्षमा करियो। संसारी जीवनिके भाव अविवेकरूप होय है सो तू जिनमार्गविषै प्रवरती संसारकी माया अनित्य जानी, अर परम आनन्दरूप यह दशा जीवनिकूं दुर्लभ है। या भांति दोऊ भाई जानकीकी स्तुतिकरि लव अंकुशकूं आगे धरें। अनेक विद्याधर महीपाल तिनसहित अयोध्यामें प्रवेश करते भए, जैसे देवनिसहित इन्द्र अमरावतीमें प्रवेश करै। अर समस्त राणी नानाप्रकारके वाहन निपै र चढी परिवारसहित नगरमें प्रवेश करती भई। सो रामकूं नगरमें प्रवेश करता देख मन्दिर ऊपर बैठी स्त्री परस्पर वार्ता करै है यह श्रीरामचन्द्र महा शूरवीर शुद्ध है अंतःकरण जिनका, महा विवेकी, मूढ लोकनिके अपवादसूं ऐसी पतिव्रता नारी खोई। तब कईयक कहती भई जे निर्मल कुलके जन्मे शूरवीर क्षत्री हैं तिनकी यही रीति है—किसी प्रकार कुलकूं कलंक न लगावें। लोकनिके संदेह दूर करिवे निमित्त रामने उसकूं दिव्य दई। वह निर्मल आत्मा दिव्यमें साची होय लोकनिके संदेह मेटि जिनदीक्षा धारती भई। अर कोई कहै—हे सखी! जानकी विना राम कैसे दीखै है जैसें विना चांदनी चांद, अर दीप्ति विना सूर्य। तब कोई कहती भई यह आप ही महा कांतिधारी है इनकी कांति पराधीन नाहीं। अर कोई कहती भई सीताका वज्रचित्त है जो ऐसे पुरुषोत्तम पतिकूं छोडि जिन-दीक्षा धारी। तब कोई कहती भई धन्य है सीता जो अनर्थरूप गृहवासकूं तजि आत्मकल्याण किया। अर कोई कहती भई ऐसे सुकुमार दोऊ कुमार महा धीर लव अंकुश कैसे तजे गए? स्त्रीका प्रेम पति

सू छूटे, परन्तु अपने जाए पुत्रनिसू न छूटे । तब कोई कहती भई ये दोऊ पुत्र परम प्रतापी हैं इनको माता क्या करगी ? इनका सहाई पुण्य ही है । अर सब ही जीव अपने अपने कर्मके आधीन हैं । या भांति नगरकी नारी वचनालाप करै है । जानकीकी कथा कौनकूं आनन्दकारिणी न होय, अर वह सबही रामके दर्शनकी अभिलाषिनी रामकूं देखती २ तृप्त न भई, जैसे भ्रमर कमलके मकरंदसू तृप्त न होय । अर कईएक लक्ष्मणकी ओर देख कहती भई ये नरोत्तम नारायण लक्ष्मीवान अपने प्रतापकरि वश करी है पृथ्वी जिन्होंने, चक्रके धारक उत्तम राज्य लक्ष्मीके स्वामी वैरनिकी स्त्रीनिकूं विधवा करणहारे, रामके आज्ञाकारी हैं । या भांति दोनों भाई लोककरि प्रशंसा योग्य अपने मंदिर में प्रवेश करते भए । जैसे देवेन्द्र देवलोकमें करै । यह श्रीरामका चारित्र जो निरंतर धारण करै सो अविनाशी लक्ष्मीकूं पावै ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै कृतांतवक्रका वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ सातवां पर्व पूर्ण भया ॥१०७॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीके मुख श्रीरामका चरित्र सुन मनविषै विचारता भया कि सीताने लव अंकुश पुत्रनिसूं मोह तज्या सो वह सुकुमार मृगनेत्र निरंतर सुखके भोक्ता कैसे माताका वियोग सहि सके ? ऐसे पराक्रमके धारक उदारचित्त तिनकूं भी इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग होय है तो औरकी कहा बात ? यह विचार करि गणधर देवसूं पूछ्या, हे प्रभो ! मैं तिहारे प्रसादकरि राम लक्ष्मणका चरित्र सुण्या, अब बाकी लव अंकुशका सुण्या चाहूं हूं । तब इन्द्रभूति कहिए, गौतम स्वामी कहते भए—हे राजन ! काकंदी नाम नगरी, तामें राजा रतिवर्द्धन, राणी सुदर्शना, ताके पुत्र दोय एक प्रियंकर, दूजा हितंकर । अर मंत्री सर्वगुप्त राज्यलक्ष्मीका धुरंधर सो स्वामीद्रोही, राजाके मारिवेका उपाय चिंतवे । अर सर्वगुप्तकी विजयावती सो पापिनी राजासूं भोग किया चाहै । अर राजा शीलवान परदारापराङ्मुख याकी मायाविषै न आया । तब याने राजासूं कही—मंत्री तुम

कू मारघा चाहे है सो राजाने याकी बात न मानी । तब यह पतिकू भरमावती भई—जो राजा तोहि मार मोहि लिया चाहै ह । तब मन्त्री दुष्टने सब सामंत राजासू फोरे, अर राजाका जो सोवनेका महिल तहां रात्रिकू अग्नि लगाई । सो राजा सदा सावधान हुता अर महिलविषै गोप्य सुरंग रखाई थी सो सुरंगके मार्ग होय दोऊ पुत्र अर स्त्रीकू लेय राजा निकस्या । सो काशीका धनी राजा कश्यप महा न्यायवान, उग्रवंशी राजा रतिवर्धनका सेवक था, ताके नगरकू राजा गोप्य चाल्या । अर सर्वगुप्त रतिवर्धनके सिंहासनपर बैठ्या । सबकू आज्ञाकारी किए । अर राजा कश्यपकू भी पत्र लिख दूत पठाया कि तुम भी आय मोहि प्रणामकरि सेवाकरो । तब कश्यपने कही, हे दूत! सर्वगुप्त स्वामीद्रोही है, सो दुर्गतिके दुःख भोगेगा, स्वामीद्रोहीका नाम न लीजै, मुख न देखिये, सो सेवा कैसे कीजै ? ताने राजाकू दोऊ पुत्र अर स्त्री सहित अग्निमें जलाया सो स्वामिघात, स्त्रीघात, अर बालघात यह महादोष उसने उपार्जे । तातै ऐसे पापीका सेवन कैसे करिये ? जाका मुख न देखना । सो सब लोकनिके देखते उसका शिर काटि धनीका वैर लूंगा । तब यह वचन कहि दूत फेर दिया । दूतने जाय सर्वगुप्तकू सर्व वृत्तांत कहा । सो अनेक राजानिकरियुक्त महासेनासहित कश्यप ऊपर आया । सो आय करि कश्यपका देश घेरा, काशीके चौगिर्द सेना पडी तथापि कश्यपके सुलहकी इच्छा नाहीं, युद्धहीका निश्चय । अर राजा रतिवर्धन रात्रिकेविषै काशीके वनविषै आया । अर एक द्वारपाल तरुण कश्यप पर भेजा सो जाय कश्यपसू राजाके आवनेका वृत्तांत कहता भया । सो कश्यप अतिप्रसन्न भया अर कहां महाराज! कहां महाराज! ऐसे वचन बारम्बार कहता भया । तब द्वारपालने कह्या, महाराज वनविषै तिष्ठै हैं । तब यह धर्मी स्वामिभक्त अतिहर्षित होय परिवार सहित राजापै गया अर उसकी आरती करी, अर पांव पडकरि जय जयकार करता नगरमें लाया, नगर उछाला । अर यह ध्वनि नगरविषै विस्तरी कि जो काहूसू न जीत्या जाय ऐसा रतिवर्धन राजेन्द्र जयवंत होहू । राजा कश्यपने धनीके आवनेका अति उत्सव किया । अर सब सेनाके सामंतनिकू कहाय भेज्या जो स्वामी तो विद्य-

मान तिष्ठ हु अर तुम स्वामीद्रोहीके साथ होय स्वामीसू लडोगे, कहा यह तुमकू उचित है ?

तब वह सकल सामंत सर्वगुप्तकू छोड़ि स्वामीप आए। अर युद्धविषै सर्वगुप्तकू जीवता पकड़ि काकदी नगरीका राज्य रतिवर्धनके हाथविषै आया। राजा जीवता बच्या सो बहुरि जन्मोत्सव किया, महा दान किए, सामंतनिके सन्मान किए, भगवानकी विशेष पूजा करी, कश्यपका बहुत सन्मान किया, अति बधाया, अर घरकू विदा किया। सो कश्यप काशीकेविषै लोकपालनिकी नाईं रमै। अर सर्वगुप्त सर्वलोकनिंद्य मृतकके तुल्य भया कोई भेंटे नाहीं, मुख देखे नाहीं। तब सर्वगुप्तने अपनी स्त्री विजयावतीका दोष सर्वत्र प्रकाशा, जो यानै राजाबीच अर मो बीच अन्तर डाल्या। यह वृत्तांत सुन विजयावती अति द्वेषकू प्राप्त भई—जो मैं न राजाकी भई, न धनीकी भई। सो मिथ्या तपकरि राक्षसी भई, अर राजा रतिवर्धनने भोगनितै उदास होय सुभानुस्वामीके निकट मुनिव्रत धरे। सो राक्षसीने रतिवर्धन मुनिकू अत्यन्त उपसर्ग किए। मुनि शुद्धोपयोगके प्रसादतै केवली भए। प्रियंकर हितंकर दोनो कुमार पहिलै याही नगरविषै दामदेव नामा विप्रके श्यामली स्त्रीके सुदेव वसुदेव नामा पुत्र हुते। सो वसुदेवकी स्त्री विश्वा अर सुदेवकी स्त्री प्रियंगु। इनका गृहस्थ पद प्रशंसा योग्य हुता। इन श्रीतिलकनामा मुनिकू आहारदान दिया सो दानके प्रभावकरि दोनो भाई स्त्रीसहित उत्तरकुरु भोगभूमिविषै उपजे, तीनपल्यकी आयु भई। साधुका जो दान सोई भया वृक्ष, ताके महाफल भोग भूमिविषै भोगि दूजे स्वर्ग देव भए। वहां सुख भोगि चये सो सम्यग्ज्ञानरूप लक्ष्मी करि मंडित पाप कर्मके क्षय करणहारे प्रियंकर हितंकर भये। मुनि होय ग्रैवेयक गये। तहांतै चयकरि लवणांकुश भये, महाभव्य, तद्भव मोक्षगामी। अर राजा रतिवर्धनकी राणी सुदर्शना प्रियंकर हितंकरकी माता पुत्रनिसे जाका अत्यन्त अनुराग था सो भरतार अर पुत्रनिके वियोगतै अत्यन्त आर्तरूप होय नाना योनिमें भ्रमणकरि किसी एक जन्मविषै पुण्य उपार्ज, यह सिद्धार्थ भया, धर्मविषै अनुरागी, सर्वविद्याविषै निपुण। सो पूर्व भवके स्नेहसू लव अंकुशकू पढाए। ऐसे निपुण किए जो देवनिकरि भी न जीते

जाय। यह कथा गौतम स्वामीने राजा श्रेणिकसू कही। अर हे आज्ञाकारी नप ! यह ससार असार है। अर इस जीवके कौन कौन माता पिता न भये ? जगतके सबही सम्बन्ध झूठे है एक धर्म हीका सम्बन्ध सत्य है। इसलिये विवेकिनिकू धर्महीका यत्न करना, जिसकरि ससारके दुखनिसू छूट। समस्त कर्म महानिंद्य, दु खकी वृद्धिके कारण, तिनकू तजकरि जनका भाव्या तपकरि अनेक सूर्यकी काति कू जीत साधु शिवपुर कहिये मुक्ति तहा जाय है।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष लवणाकुशक पव भवका वर्णन करनवाला एकसौ आठवा पव पूर्ण भया ।। १ ६ ।।

अथानन्तर सीता पति अर पुत्रनिकू तजकरि कहा कहाँ तप करती भई सो सुनहु—कसी है सीता ? लोकविष प्रसिद्ध है यश जाका। जिस समय सीता भई वह श्रीमुनिसुव्रतनाथजीका समय था। तेवीसवें भगवान महा शोभायमान, भवभ्रमके निवारणहार, जसा अरहनाथ अर मल्लिनाथका समय तसा मुनिसुव्रतनाथका समय, ताविष श्रीसकल भूषण केवली केवलज्ञानकरि लोकालोकके ज्ञाता विहार करै हैं। अनेक जीव महाव्रत किए, सकल अयोध्याके लोक जिनधर्मविष निपुण विधिपूर्वक गृहस्थका धर्म आराधें। सकल प्रजा भगवान् श्रीसकलभूषणके वचनविष श्रद्धावान। जस चक्रवर्तीकी आज्ञाकू पालें तस भगवान धर्मचक्री तिनकी आज्ञा भव्य जीव पाल। रामका राज्य महाधर्मका उद्योतरूप जा समय घन लोक विवेकी साधुसेवाविष तत्पर। देखहु जो सीता अपनी मनोग्यताकरि देवांगनानिकी शोभाकू जीतती हुती सो तपकरि ऐसी होय भई मानो दग्ध भई माधुरी लता ही है। महा वैराग्यकरि मंडित अशुभ भावकरि रहित, स्त्री पर्यायकू अतिनिन्दती, महातप करती भई। धूरकर धूसर होय रहे हैं केश जाके, अर स्नानरहित, शरीरके सस्काररहित, पसेवकरि युक्त गात्र, जाविषै रज आय पडे सो शरीर मलिन होय रहा है। बेला तेला पक्ष उपवासकरि तनु क्षीण किया, दोष टारि शास्त्रोक्त पारणा

करै । शीलव्रत गुणनिविषै अनुरागिणी, अध्यात्मके विचारकरि अत्यन्त शांत होय गया है चित्त जाका वश किये हैं इन्द्रिय जानै औरनित न बन ऐसा उग्रतप करती भई । मास अर रुधिरकरि वर्जित भया है सब अंग जाका, प्रकट नजर आवै है अस्थि अर नशाजाल जाके, मानों काठकी पुतली ही है । सूखी नदी समान भासती भई । बैठ गये हैं कपोल जाके, जूड़ा प्रमाण धरती देखती चलै, महा दयावन्ती, सौम्य है दृष्टि जाकी, तपका कारण देह ताके समाधानके अर्थि विधिपूर्वक भिक्षावृत्तिकरि आहार करै । ऐसा तप किया कि शरीर और ही होय गया । अपना पराया कोई न जानै जो यह सीता है । इसे ऐसा तप करती देख सकल आर्या याहीकी कथा करैं, याहीकी रीति देखि और हू आदरैं, सबनि विषै मुख्य भई । या भांति बासठ वर्ष महा तप कीए । अर तेतीस दिन आयुके बाकी रहे तब अनशन व्रत धार परम आराधना आराधि, जैसे पुष्पादिक उच्छिष्ट सांथरेकूं तजिये तैसे शरीरकूं तजकरि अच्युतस्वर्गविषै प्रतीन्द्र भई ।

गौतम स्वामी कहे हैं, हे श्रेणिक ! जिनधर्मका महात्म्य देखो जो यह प्राणी स्त्री पर्यायविषै उपजी हुती सो तप के प्रभावकरि देवोंका प्रभु होय सीता अच्युतस्वर्गविषै प्रतीन्द्र भई । वहां मणिनिकी कांतिकरि उद्योत किया है आकाशविषै जाने ऐसे विमानविषै उपजी, मणि कांचनादि महाद्रव्यनिकरि मंडित, विचित्रता धरे, परम अद्भुत सुमेरुके शिखर समान ऊंचा है, वहां परम ईश्वरताकरि, संपन्न प्रतेन्द्र भया । हजारों देवांगना तिनके नेत्रोंका आश्रय, जैसा ताराबोंकरि मंडित चन्द्रमा सोहै तैसा सोहता भया । अर भगवानकी पूजा करता भया । मध्यलोकमें आय तीर्थोंकी यात्रा, साधुवोंकी सेवा करता भया अर तीर्थकरोंके समोसरणमें गणधरोंके मुखसूं धर्म श्रवण करता भया । यह कथा सुनि गौतमस्वामीसूं राजा श्रेणिक पूछी—हे प्रभो ! सीताका जीव सोलहवें स्वर्ग प्रतेन्द्र भया उस समय वहां इन्द्र कौन था ? तब गौतमस्वामी ने कही उस समय वहां राजा मधुका जीव इन्द्र था । उसके निकट यह आया, सो वह मधुका जीव नेमिनाथ स्वामीके समय अच्युतेन्द्रपदसूं चयकरि वासुदेवकी रुक्मणी

राणी ताके प्रद्युम्न पुत्र भया अर उसका भाई कटभ जाम्बुवतीके शम्भु नामा पुत्र भया। तब श्रेणिकने गौतम स्वामीसू विनती करी हे प्रभो! म तुम्हारे वचनरूप अमृत पीवता पीवता तृप्त नाहीं, जसे लोभी जीव धनसू तृप्त नाहीं। इसलिए मुझे मधुका अर उसके भाई कैटभका चारित्र कहो। तब गणधर कहते भए—एक मगधनामा देश सब धान्यकरि पूण, जहाँ चारो वण हषसू बस, धम काम अथ मोक्षके साधन अनेक पुरुष पाइए, अर भगवानके सुन्दर चत्यालय, अर अनेक नगर ग्राम तिनकरि वह देश शोभित, जहा नदियोके तट गिरियोके शिखर वनमें ठौर ठौर साधुवोके सघ विराजे हैं। राजा नित्योदित राज्य कर। उस देशमें एक शालि नाम ग्राम, नगर सारिखा शोभित, वहा एक ब्राह्मण सोमदेव, उसके स्त्री अग्निला, पुत्र अग्निभूत वायुभूत सो वे दोनो भाई लौकिक शास्त्रमें प्रवीण अर पठन पाठन दान प्रतिग्रहमें निपुण, अर कुलके तथा विद्याके गवकरि गर्वित, मनविष ऐसा जाने हमते अधिक कोई नाहीं। जिनधमत परागमुख रोग समान इन्द्रिनिके भोग तिनहीकू भले जान। एक दिन स्वामी नन्दीवधन अनेक मुनिनिसहित वनविष आय विराजे, बडे आचाय अवधिज्ञानकरि समस्त मूर्तिक पदाथनिकू जान। सो मुनिनिका आगमन सुनि ग्रामके लोक सब दशनकू आए हुते अर अग्निभूत वायुभूतन काहूसू पूछी जो यह लोक कहा जाय ह? तब वाने कही नन्दीवधन मुनि आए ह तिनके दशनकू जाय ह। तब सुनकरि दोऊ भाई क्रोधायमान भए जो हम वादकरि साधुनिकू जीतेंगे। तब इनकू माता पिताने मना किया जो तुम साधुनित वाद न करो तथापि इन्होंने न मानी। वादकू गए। तब इनकू आचायके निकट जाते देखि एक सात्विकनामा मुनि अवधिज्ञानी इनकू पूछते भए—तुम कहा जावो हो? तब इन्होने कही तुमविष श्रेष्ठ तुम्हारा गुरु ह, उसकू वादकरि जीतवे जाय ह। तब सात्विक मुनिने कही हमसू चर्चा करो। तब यह क्रोधकरि मुनिके समीप बैठे अर कही तू कहांतै आया ह। तब मुनिने कही तुम कहात आए? तब वह क्रोधकरि कहते भए यह त कहा पूछी? हम ग्रामत आए ह। कोई शास्त्रकी चर्चा करहु। तब मुनिने कही यह तो हम जान ह तुम शालिग्रामसू आए

हे अर तिहारे बापका नाम सोमदेव, माताका नाम अग्निला, अर तिहारे नाम अग्निभूत वायुभूत। तुम विप्रकुल हो, सो यह तो प्रकट है परन्तु हम तमसे यह पूछे हैं—अनादिकालके भववनविषै भ्रमण करो हो सो या जन्मविषै कौन जन्मसूं आए हो? तब इनने कही यह जन्मांतरकी बात हमकूं पूछी सो और कोई जाने है? तब मुनिने कही हम जाने हैं, तुम सुनो। पूर्वभवविषै तुम दोऊ भाई या ग्रामके वनविषै परस्पर स्नेह के धारक स्याल हुते, विरूपमुख। अर याही ग्रामविषै एक बहुत दिनका वासी पामर नामा पितहड ब्राह्मण, सो वह खेतविषै सूर्य अस्त समय क्षुधाकरि पीडित नाडी आदि उपकरण तजकरि आया। अर अंजनगिरि तुल्य मेघ माला उठी। सात दिन अहो रात्रका झड भया। सो पामर तो घर से आय न सक्या। अर वे दोऊ स्याल अति क्षुधातुर अंधेरी रात्रिविषै आहारकूं निकसे। सो पामरके खेतविषै भीजी नाडी कदमकरि लिप्त पडी हुती सो उन भक्षण करी। उसकरि विकराल उदर वेदना उपजी, स्याल मूवे, अकाम निजराकरि तुम सोमदेवके पुत्र भए। अर वह पामर सात दिन पीछे खेत में आया सो दोऊ स्याल मूए देखि अर नाडी कटी देखि स्यालनिकी चम ले भाथडी करी सो अबतक पामरके घरविषै टगी है। अर पामर मरकरि पुत्रके घर पुत्र भया सो जातिस्मरण होय मौन पकडया जो मैं कहा कहो? पिता तो मेरा पूर्वभवका पुत्र अर माता पूर्व भवकी पुत्रकी वधू तातै न बोलना ही भला। सो यह पामरका जीव मौनी यहा ही बैठा है। ऐसा कहि मुनि पामरकेजीवसूं बोले—अहो तू पुत्रके पुत्र भया सो यह आश्चर्य नाहीं, संसारका ऐसा ही चरित्र है। जैसे नृत्यके अखाडेमें बहुरूपिया अनेक रूप बनाय नाचै, तैसे यह जीव नाना पर्यायरूप भेष धर नाचै है, राजातै रंक होय, रंकसूं राजा होय, स्वामीसूं सेवक, सेवकसूं स्वामी, पितासूं पुत्र, पुत्रसूं पिता, मातासूं भार्या, भार्यासूं माता। यह संसार अरहटकी घडी है। ऊपरली नीचे, नीचली ऊपर, ऐसा संसारका स्वरूप जान, हे वत्स! अब तू गूंगापन तजि वचनालाप करहु। या जन्मका पिता है तासे पिता कहि, मातासूं माता कहि। पूर्वभवका कहा व्यवहार रहा? यह वचन सन वह विप्र हर्षकरि रोमाच होय फूल गए हैं नेत्र

जाके मुनिकू तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कारकरि जस वृक्षकी जड उखड जाय अर गिर पडे तैस पायन पड्या। अर मुनिकू कहता भया—हे प्रभो! तुम सर्वज्ञ हो, सकल लोककी व्यवस्था जानो हो या भयानक ससार सागरविष म डूबू था सो तुम दयाकरि निकास्या, आत्मबोध दिया। मेरे मनकी सब जानी। अब मोहि दीक्षा देवहु ऐसा कहकरि समस्त कुटुम्बका त्यागकरि मुनि भया।

यह पामरका चरित्र सुन अनेक लोक मुनि भए, अनेक श्रावक भए, अर इन दोनो भाईनिकी पूर्व भवकी खाल लोक ले आए सो इननने देखी, लोकोने हास्य करी जो यह मासके भक्षक स्याल थे सो यह दोऊ भाई द्विज बडे मूर्ख जो मुनिनिसू वाद करने आए। ये महामुनि तपोधन, शुद्धभाव, सबके गुरु, अहिसा महाव्रतके धारक, इन समान और नाहीं, यह महामुनि महाव्रतरूप शिखाके धारक, क्षमारूप यज्ञोपवीत धरे, ध्यानरूप अग्निहोत्रके कर्ता महाशात मुक्तिके साधनविषै तत्पर। अर जे सब आरम्भविष प्रवरत ब्रह्मचर्यरहित वे मुखसू कह ह कि हम द्विज ह परन्तु क्रिया करे नाहीं। जसे कोई मनुष्य या लोकमे सिह कहाव, देव कहाव, परन्तु वह सिह देव नाहीं, तसे यह नाममात्र ब्राह्मण कहावें परन्तु इनमे ब्रह्मत्व नाहीं। अर मुनिराज धन्य ह परम सयमी महा क्षमावान तपस्वी जितेन्द्री निश्चय थकी ये ही ब्राह्मण ह। ये साधु महाभद्रपरणामी भगवतके भक्त, महा तपस्वी, यति, धीर, वीर, मूलगुण उत्तरगुणके पालक, इन समान और कोऊ नाहीं। यह अलौकिक गुण लिए ह। अर इनहीकू परिव्राजक कहिए, काहेत ? जो वह ससारकू तजि मुक्तिकू प्राप्त होय ये निग्रथ, अज्ञान, तिमिरके हर्ता तपकरि कर्मनिको निर्जरा कर हैं। क्षीण किए ह रागादिक जिन्होने महाक्षमावान पापनिके नाशक तात इनकू क्षपणक हू कहिए। यह सयमी कषायरहित शरीरतै निर्मोह दिगम्बर योगीश्वर ध्यानी ज्ञानी पडित निस्पृह सो हो सदा वदिवे योग्य ह। ए निर्वाणकू साधे तात ये साधु कहिए। अर पच आचारकू आप आचरै औरनिकू आचरावें तात आचार्य कहिए। आगार कहिए घर ताके त्यागी, तातैं अनगार कहिए। शुद्ध भिक्षाके ग्राहक तात भिक्षुक कहिए। अति कायक्लेशकरि अशुभकर्मके

त्यागी, उज्ज्वल क्रियाके कर्ता, तप करते खेद न मान तातै श्रमण कहिए। आत्मस्वरूपकू प्रत्यक्ष अनुभवै तातैं मुनि कहिए। रागादिक रोगोके हरिवेका यत्न कर तातै यति कहिए। या भांति लोकनिने साधकी स्तुति करी अर इन दोनो भाईनिकी निदा करी। तब यह मानरहित बिलखे होय घर गए रात्रिकेविषै पापी मुनिके मारिवेकू आए। अर वे सात्विक मुनि अपरिग्रही सघकू तजि अकेले मसान भूमिविषै अस्थ्यादिकसू दूर एकात पवित्र भूमिमें विराजे थे। कैसी है वह भूमि ? जहा रीछ व्याघ्र आदि दुष्ट जीवोका नाद होय रहा है। अर राक्षस भूत पिशाचोकरि भरया है, नागोंका निवास है, अधकाररूप भयकर। तहा शुद्ध शिला जीव जतुरहित उसपर कायोत्सर्ग धरि खडे थे। सो उन पापियों ने देख। दोनों भाई खडग काढि क्रोधायमान होय कहते भए जब तो तोहि लोकोने बचाया अब कौन बचावेगा ? हम पडित पृथ्वीविषै श्रेष्ठ, प्रत्यक्ष देवता, तू निलज्ज हमकू स्याल कहै। यह शब्द कहि दोनो अत्यन्त प्रचड होठ डसते लाल नेत्र दयारहित मुनिके मारिवेकू उद्यमी भए। तब वनका रक्षक यक्ष उसने देखे, मनविषै चितवता भया—देखो ऐसे निर्दोष साधु ध्यानी कायासू निर्ममत्व तिनके मारिवेकू उद्यमी भए। तब यक्षने इन दोनो भाईकू कीले, सो हलचल सकै नाहीं, दोनों पसवारे खडे। प्रभात भया, सकल लोक आए, देखें तो यह दोनो मुनिके पसवारे कीले खडे हैं। अर इनके हाथविषै नगी तलवार है। तब इनकू सब लोक धिक्कार धिक्कार कहते भए। यह दुराचारी पापी अन्याई ऐसा कर्म करनेकू उद्यमी भए इन समान अर पापी नाहीं। और यह दोनो चित्तविषै चितवते भए जो यह धर्म का प्रभाव है हम पापी थे सो बलात्कार कीले, स्थावरसम करि डारे। अब या अवस्थासू जीवते बचें तो श्रावकके व्रत आदरें। अर उस ही समय इनके माता पिता आए बारम्बार मुनिकू प्रणामकरि विनती करते भए—हे देव ! यह कपूत पुत्र है। इन्होने बहुत बुरी करी। आप दयालु हो, जीवदान देवो। तब साधु बोले हमारे काहूसू कोप नाहीं, हमारे सब मित्र बाधव है। तब यक्ष लाल नेत्रकरि अति गुजारसू बोल्या अर सबोके समीप सब वृत्तात कह्या कि जो प्राणी साधुवोंकी निंदा करें सो

अनर्थकू प्राप्त होवें। जैसे निर्मल काचविषै बाका मुखकरि निरखै तो बाका ही दीखै, तैसे जो साधुवों कू जैसा भावकरि देखै तैसा ही फल पावै। जो मुनियोकी हास्य करै सो बहुत दिन रुदन करै। अर कठोर वचन कहै सो क्लेश भोगवै, अर मुनिका वध करै तो अनेक कुमरण पावै, द्वेष करै सो पाप उपार्जे, भव भव दुख भोगवै। अर जैसा करै तैसा फल पावै यक्ष कहै है, हे विप्र! तेरे पुत्रोके दोषकरि मै कीले है, विद्याके मानकरि गर्वित मायाचारी दुराचारी सयमियोके घातक है। ऐसे वचन यक्षने कहे। तब सोमदेव विप्र हाथ जोडि साधुकी स्तुति करता भया, अर रुदन करता भया। आपकू निंदता छाती कूटता, ऊर्ध्व भुजाकरि स्त्रीसहित विलाप करता भया। तब मुनि परम दयालु यक्षकू कहते भए-हे सुन्दर! हे कमल नेत्र! यह बालबुद्धि है, इनका अपराध तुम क्षमा करो। तुम जिनशासनके सेवक हो, सदा जिनशासनकी प्रभावना करो हो, तातै मेरे कहेसू इनकू क्षमा करो। तब यक्षने कही आप कही सो ही प्रमाण। वे दोनो भाई छोडे। तब यह दोनो भाई मुनिकू प्रदक्षिणा देय नमस्कार करि साधुका व्रत धरिवेकू असमर्थ, तातै सम्यक्‌सहित श्रावकके व्रत आदरते भए। जिनधर्मकी श्रद्धा के धारक भए। अर इनके माता पिता व्रत ले छोडते भए सो वे तो अव्रतके योगसू पहिले नरक गये अर यह दोनो विप्रपुत्र निसदेह जिनशासन रूप अमृतका पानकरि हिंसाका मार्ग विषवत तजते भए। समाधिमरणकरि पहिलेस्वर्ग उत्कृष्ट देव भए। वहासू चयकरि अयोध्याविषै समुद्र सेठ, उसके धारणी स्त्री, उसकी कुक्षिविषै उपजे, नेत्रनिकू आनन्दकारी, एकका नाम पूर्णभद्र, दूजेका नाम काचनभद्र। सो श्रावकके व्रत धारि पहिले स्वर्ग गए। अर ब्राह्मण के भवके इनके पिता माता पापके योगसू नरक गए हुते वे नरकसू निकसि चाडाल अर कूकरी भए वे पूर्णभद्र अर काचनभद्रके उपदेशसू जिनधर्मका आराधन करते भए, समाधिमरणकरि सोमदेव द्विजका जीव चाडालसू नन्दीश्वर द्वीपका अधिपति देव भया, अर अग्निला ब्राह्मणीका जीव कूकरीसू अयोध्याके राजाकी पुत्री होय उस देवके उपदेशसू विवाहका त्यागकरि आर्यिका होय उत्तम गति गई। वे दोनो परम्पराय मोक्ष पावेंगे।

अर पूणभद्र काचनभद्रका जीव प्रथम स्वगसू चयकरि अयोध्याका राजा हेम, राणी अमरावती, तिसके मधु कटभ नामा पुत्र जगत विख्यात भए। जिनकू कोई जीत न सक, महा प्रबल, महा रूपवान, जिन्होने यह समस्त पृथ्वी वश करी। सब राजा तिनके आधीन भए। भीम नाम राजा गढके बलकरि इनकी आज्ञा न मान। जसैं चमरेन्द्र असुर कुमारनिका इन्द्र नन्दनवनकू पाय प्रफुल्लित होय ह तस वह अपने स्थानके बलकरि प्रफुल्लत रह। अर एक वीरसेन नाम राजा बटपुरका धनी, मधु कटभका सेवक, उसने मधु कटभकू विनती पत्र लिख्या—हे प्रभो! भीमरूप अग्निने मेरा देशरूप वन भस्म किया। तब मधु क्रोधकरि बडी सेनासू भीम ऊपरि चढ्या, सो मागविषै वटपुर जाय डेरा किए। वीरसेनने सम्मुख जाय अति भक्तिकरि मिहमानी करी। उसके स्त्री चन्द्रमा समान ह वदन जाका, सो वीरसेन मूखने उसके हाथ मधुका आरत्या कराया, अर उसहीके हाथ जिमाया। चन्द्राभाने पतिसू घनी ही कही जो अपने घरविषै सुन्दर वस्तु होय सो राजाकू न दिखाइए, पतिने न मानी। राजा मधु चन्द्राभाकू देखि मोहित भया। मनविषै विचारी इस सहित विन्ध्याचलके वनका वास भला अर या बिना सब भूमिका राज्य भी भला नाहीं। सो राजा अन्याय ऊपर आया। तब मन्त्रीने समझाया—अबार यह बात करोगे तो काय सिद्ध न होयगा, अर राज्य भष्ट होयगा। तब राजा मन्त्रियोके कहेसू राजा वीरसेनकू लार लेय भीमप गया। उसे यद्धविषै जीत वशीभूत किया अर और सब राजा वश किए। बहुरि अयोध्या आय चन्द्राभाक लेयवेका उपाय चितया। सब राजा बसतकी क्रीडाके अथ स्त्रीसहित बुलाये। अर वीरसेनकू चन्द्राभासहित बुलाया, तब हू चन्द्राभाने कही कि मुझे मत ले चलो, सो न मानी, ले ही आया। राजाने मासपर्यंत वनविषै क्रीडा करी। अर राजा आए थे तिनकू दान सन्मानकरि स्त्रियो सहित विदा किए। अर वीरसेनकू कयक दिन राख्या अर वीरसेनकू भी अतिदान सन्मानकरि विदा किया। अर चन्द्राभाके निमित्त कही इनके निमित्त अद्भुत आभूषण बनवाए हैं सो अभी बन नहीं चुके हैं। तात इनकू तिहारे पीछे विदा करेंगे। सो वह भोला कुछ समझे नाहीं, घर गया। वाके गए

पीछे मधुने चन्द्राभाकू महलविषै बुलाया। अभिषेककरि पटराणीपद दिया, सब राणियोंके ऊपर करी। भोगकरि अंध भया है मन जिसका, इसे राखि आपकू इन्द्र समान मानता भया। अर वीरसेन ने सुना कि चन्द्राभा मधुने राखी तब पागल होय कयक दिनविषै मंडवनामा तापसका शिष्य होय पंचाग्नि तप करता भया। अर एक दिन राजा मधु न्यायके आसन बैठ्या सो एक परदारारतका न्याय आया। सो राजा न्यायविषै बहुत देरतक बैठ रहे। बहुरि मन्दिरविषै गए, तब चन्द्राभाने हंस-करि कही महाराज! आज घनी वेर क्यो लागी? हम क्षुधाकरि खेदखिन्न भई। आप भोजन करो तो पीछे भोजन करू। तब राजा मधुनें कही आज एक परनारीरतका न्याय आय पड्या, तातै वेर लागी। तब चन्द्राभाने हंसकरि कही जो परस्त्रीरत होय उसकी बहुत मानता करनी। तब राजाने क्रोधकरि कह्या तुम यह क्या कही जे दुष्ट? व्यभिचारी है तिनका निग्रह करना। जे परस्त्रीका स्पर्श करें ते पापी है। सेवन करें तिनकी कहा बात? ऐसे कर्म करें तिनकू महादण्ड दे नगरसू काढनें। जे अन्याय मार्गी है वे महा पापी नरकविषै पडे हैं। अर राजाओंके दंड योग्य हैं तिनका मान कहा? तब राणी चन्द्राभा राजाकू कहती भई–हे नृप! यह परदारा सेवन महा दोष है तो तुम आपकू दंड क्यो न देवो? तुमही परदाररत हो तो औरोंकू कहा दोष? जैसा राजा तैसी प्रजा। जहा राजा हिंसक होय अर व्यभिचारी होय तहा न्याय कैसा? तातै चुप होय रहो। जिस जलकरि बीज उगै अर जगत जीवै, सो जलही जो जलाय मारे तो और शीतल करणहारा कौन? ऐसे उलाहनाके वचन चन्द्राभाके सुन राजा कहता भया–हे देवी! तम कहो हो सो ही सत्य। बारम्बार इसकी प्रशंसा करी, अर कहा मै पापी लक्ष्मीरूप पाशकरि बेढ्या विषयरूप कीचविषै फस्या, अब इस दोषसू कैसे छूटू? राजा ऐसा विचार करै है। अर अयोध्याके सहस्रीनामा वनविषै महासंघसहित सिंहपाद नामा मुनि आए। राजा सुनकरि रणवास-सहित अर लोकूसहित मुनिके दर्शनकू गया। विधिपूर्वक तीन प्रदक्षिणा देय प्रणामकरि भूमिविषै बैठ्या, जिनेंद्रका धर्म श्रवणकरि भोगोंसू विरक्त होय मुनि भया। अर राणी चन्द्राभा बडे राजाकी बेटी रूपकरि

अतुल्य, सो राज विभूति तजि आर्यिका भई। दुर्गतिकी वेदनाका है अधिक भय जिसकू। अर मधुका भाई कैटभ राजकू विनाशीक जान महा व्रतधारि मुनि भया। दोऊ भाई महा तपस्वी पृथ्वीविषैं विहार करते भए अर सकल स्वजन परजनके नेत्रनिकू आनन्दका कारण मधुका पुत्र कुलवर्धन अयोध्याका राज्य करता भया, अर मधु सकडो वरस व्रत पाल दर्शन ज्ञान चारित्र तप यही चार आराधना आराधि समाधिमरणकरि सोलहवा अच्युतनामा स्वर्ग वहा अच्युतेन्द्र भया। अर कैटभ पन्द्रहवा आरण नामा स्वर्ग वहा आरणेन्द्र भया। गौतम स्वामी कहे है—हे श्रेणिक! यह जिनशासनका प्रभाव जानो जो ऐसे अनाचारी भी अनाचारका त्यागकरि अच्युतेन्द्र पद पावै अथवा इन्द्र पदका कहा आश्चर्य ? जिनधर्मके प्रसादसू मोक्ष पावे। मधुका जीव अच्युतेन्द्र था उसके समीप सीताका जीव प्रतेन्द्र भया अर मधुका जीव स्वर्गसू चयकरि श्रीकृष्णकी रुक्मिणी राणीके प्रद्युम्न नामा पुत्र कामदेव होय, मोक्ष लही अर कैटभका जीव कृष्णकी जामवती राणीके शम्भुकुमारनामा पुत्र होय परम धामकू प्राप्त भया। यह मधुका व्याख्यान तुझे कह्या। अब हे श्रेणिक! बुद्धिवतोके मनकू प्रिय ऐसे लक्ष्मणके अष्ट पुत्र महा धीर वीर तिनका चरित्र पापोका नाश करणहारा चित्त लगाय सुनहु।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै राजा मधुका वैराग्य वर्णन करनवाला एकसौ नौवा पर्व पूर्ण भया ।। १०९ ।।

अथानन्तर कांचन स्थान नामा नगर, वहा राजा कांचनरथ, उसकी राणी शतह्रदा, ताके पुत्री दोय, अति रूपवती, रूपके गर्वकरि महा गर्वित, तिनके स्वयंबरके अर्थ अनेक राजा भूचर खेचर तिनके पुत्र कन्याके पिताने पत्र लिख दूत भेजि शीघ्र बुलाए। सो दूत प्रथम ही अयोध्या पठाया। अर पत्र विषै लिख्या मेरी पुत्रियोका स्वयंबर है सो आप कृपाकरि कुमारोकू शीघ्र पठावो। तब राम लक्ष्मण ने प्रसन्न होय परम ऋद्धियुक्त सब सुत पठाए। दोनो भाइयोंके सकल कुमार लव अंकुशकू अग्रेसर

करि परस्पर महा प्रेमके भरे काचनस्थानपुरकू चाले। सकडो विमानविष बठे अनेक विद्याधर लार, रूपकरि लक्ष्मीकरि देवनि सारिखे आकाशके माग गमन करते भये सो बडी सेना सहित आकाशसू पथ्वीकू दखते जावें, काचनस्थानपुर पहुँचे। वहा दोनो श्रेणियोके विद्याधर राजकुमार आये थे सो यथायोग्य तिष्ठे। जसें इन्द्रकी सभाविष नानाप्रकारके आभूषण पहिरे देव तिष्ठ, अर नन्दनवनविष देव नानाप्रकारकी चेष्टा करें, चष्टा तसे करते थे। अर वे दोनो कन्या मन्दाकनी अर चन्द्रवक्रा मगल स्नानकरि सव आभूषण पहिरे। निज वाससू रथ चढी निकसी, मानो साक्षात लक्ष्मी अर लज्जा ही है। महा गुणोकरि पूण तिनके खोजा लार था, सो राजकुमारोके देश कुल सम्पत्ति गुण नाम चेष्टा सब कहता भया। अर कही ए आए ह तिनविष कई वानरध्वज, कई सिहध्वज, कई वषभध्वज, कई गज ध्वज इत्यादि अनेक भातिकी ध्वजाकू धरे महा पराक्रमी ह। इनविष इच्छा होय ताहि वरहु। तब वह सबनिकू देखती भई अर वह सब राजकुमार उनकू देखि सदेहकी तुला विष आरूढ भए कि यह रूप गर्वित ह न जानिए कौनकू वरे। ऐसी रूपवती हम देखी नाहीं। मानो ये दोनो समस्त देवियो का रूप एकत्रकरि बनाई ह। यह कामकी पताका लोकनिकू उन्मादका कारण। इस भाति सब राजकुमार अपने अपने मनविष अभिलाषारूप भए। दोनो उत्तमकन्या लव अकुशकू देखि कामवाणकरि बेधी गई। उनमें मदाकिनी नामा जो कन्या उसने लवके कठविष वरमाला डारी। अर दूजी कन्या चन्द्रवक्राने अकुशके कठ विष वरमाला डारी। तब समस्त राजकुमारोके मनरूप पक्षी तनुरूप पिंजरेसू उड गए। अर जे उत्तम जन हुते तिन्होने प्रशसा करी कि इन दोनो कन्याओंने रामके दोनो पुत्र वरे सो नीके करी। ए कन्या इनही योग्य ह। इस भाति सज्जनोके मुखसू वाणी निकसी। जे भले पुरुष है तिनका चित्त योग्य सम्बन्धसू आनन्दकू प्राप्त होय।

अथानन्तर लक्ष्मणकी विशल्यादि आठ पटरानी तिनके पुत्र आठ महा सुन्दर उदार चित्त शूरवीर पृथ्वीविषै प्रसिद्ध इन्द्रसमान सा अपने अढाईस भाइयोसहित महाप्रीति युक्त तिष्ठते थे। जसे

तारावोमें ग्रह तिष्ठे । सो आठ कुमारनि विना और सब ही भाई रामके पुत्रनिपर क्रोधित भए । जो हम नारायणके पुत्र कांतिधारी कलाधारी नवयौवन लक्ष्मीवान बलवान सेनावान कौन गुणकरि हीन जो इन कन्यानिने हमकू न वरया अर सीताके पुत्र वरे । ऐसा विचारकरि कोपित भए । तब बडे भाई आठने इनकू शांतचित्त किए, जसे मंत्रकरि सपकू वश करिए । तिनके समझावेतै सब ही भाई लव अंकुशसू शांतचित्त भए अर मनविषं विचारते भए जो इन कन्यानिने हमारे बाबाके बेटे बडे भाई वरे तब ए हमारे भावज सो माता समान ह, अर स्त्री पर्याय महा निंद्य ह । स्त्रीनिकी अभिलाषा अविवेकी करें । स्त्रियें स्वभाव ही त कुटिल ह इनके अथ विवेकी विकारकू न भजें । जिनकू आत्मकल्याण करना होय सो स्त्रीनित अपना मन फेर । या भांति विचार, सबही भाई शांतचित्त भए । पहिले सब ही युद्धकू उद्यमी भए हुते, रणक वादित्रनिका कोलाहल शख झझा भेरी झझार इत्यादि अनेक जातिके वादित्र बाजने लग, अर जसे इन्द्रकी विभूति देख छोटे देव अभिलाषी होय तसे ये सब स्वयबरविष कन्यानिक अभिलाषी भए हुते । सो बडे भाईनिके उपदेशत विवेकी भये, अर उन आठो बडे भाईनिकू वराग्य उपज्या । सो विचार ह यह स्थावर जगमरूप जगतके जीव कमनिकी विचित्रताके योगकरि नानारूप ह, विनश्वर ह । जसा जीवनिके होनहार ह तसा ही होय ह । जाके जो प्राप्ति होनी ह सो अवश्य होय ह, और भांति नाहीं । अर लक्ष्मणकी राणीका पुत्र हसकर कहता भया हे भ्रात हो ! स्त्री कहा पदाथ ह ? स्त्रीनित प्रेम करना महा मूढता है । विवेकिनकू हासी आव ह जो यह कामी कहा जानि अनुराग कर है । इन दोऊ भाईनिने ये दोनो राणी पाई तौ कहा बडी वस्तु पाई । जे जिनेश्वरी दीक्षा धरें वे धन्य ह । केलाके स्तम्भ समान असार काम भोग आत्माके शत्रु, तिनके वश होय रति अरति मानना महा मूढता है, विवेकिनकू शोक हू न करना, अर हास्य हू न करना । ए सब ही ससारी जीव कमके वश भ्रमजालविष पडे ह । ऐसा नाहीं करै ह जाकर कर्मोंका नाश होय, कोई विवेकी करै सोई सिद्धपदकू प्राप्त होय, या गहन ससार वनविष ये प्राणी निज पुरका माग

भूल रहे ह, ऐसा करहु जात भवदुख निवत्ति होय । हे भाई हो! यह कमभूमि, आयक्षेत्र, मनुष्य देह उत्तम कुल हमने पाया सो एते दिन योंही खोये । अब वीतरागका धम आराधि मनुष्य देह सफल करो । एक दिन म बालक अवस्थाविषै पिताकी गोदविष बठा हुता सो वे पुरुषोत्तम समस्त राजानि कू उपदेश देते थे । वे वस्तुका स्वरूप सुदर स्वरसू कहते भए । सो म रुचिसू सुण्या–चारोगतिविष मनुष्यगति दुलभ ह । जो मनुष्यभव पाय आत्महित न कर ह सो ठगाए गए जानो । दानकरि तो मिथ्या दृष्टि भोगभूमि जाव, अर सम्यग्दष्टि दानकरि तपकरि स्वग जाय, परम्पराय मोक्ष जावें । अर शुद्धोपयोग रूप आत्मज्ञानकरि यह जीव याही भव मोक्ष पाव । अर हिंसादिक पापनिकरि दुगति लह । जो तप न कर सो भव वनविष भटक, बारम्बार दुगतिके दुख सकट पाव, या भाति विचार वे अष्ट कुमार शूरवीर प्रतिबोधकू प्राप्त भए । ससार सागरके दुखरूप भवनिसू डरे, शीघ ही पिताप गए, प्रणामकरि विनयसू खडे रहे, अर महा मधुर वचन हाथ जोड कहते भए–हे तात! हमारी विनती सुनहु । हम जनेश्वरी दीक्षा अगीकार किया चाह ह, तुम आज्ञा देवहु । यह ससार विजुरीके चमत्कार समान अस्थिर ह, केलाके स्तम्भ समान असार ह हमकू अविनाशीपुरके पथ चलते विघ्न न करहु । तुम दयालु हो, कोई महाभाग्यके उदयत हमकू जिनमागका ज्ञान भया, अब ऐसा करें जाकरि भव-सागरके पार पहुचे । ये काम भोग आशीविष सपके फण समान भयकर ह, परम दुखके कारण हम दूर हीत छोडया चाह ह । या जीवके कोई माता पिता पुत्र बाधव नाहीं, कोई याका सहाई नाहीं, यह सदा कमके आधीन भववनविष भ्रमण कर ह । याके कौन कौन जीव कौन सम्बधी न भए । हे तात! हमसू तिहारा अत्यन्त वात्सल्य ह अर माताओंका ह, सो ये ही बधन हैं । हमने तिहारे प्रसाद त बहुत दिन नानाप्रकार ससारके सुख भोगे । निदान एक दिन हमारा तिहारा वियोग होयगा, यामे सदेह नाहीं । या जीवने अनेक भोग किए परन्तु तप्त न भया । ये भोग रोग समान हैं । इनविष अज्ञानी राचें । अर यह देह कुमित्र समान ह, जसे कुमित्रकू नानाप्रकारकरि पोषिये परन्तु वह अपना

नाहीं, तसे यह देह अपना नाहीं। याके अर्थ आत्माका काय न करना यह विवेकिनका काम नाहीं। यह देह तो हमकू तजगी हम इनसू प्रीति क्यो न तज।

यह वचन पुत्रनिके सुन लक्ष्मण परम स्नेह करि विह्वल हो गए। इनकू उरसू लगाय मस्तक चूम्ब बारम्बार इनकी ओर देखते भए, अर गदगद वाणीकरि कहते भए, हे पुत्र हो! ये कैलाशके शिखर समान हजारा कनकके स्तभ तिनविष निवास करहु। नानाप्रकार रत्नोंसे निरमाए है आगन जिनके, महा सुन्दर, सव उपकरणोकरि मण्डित, मलयागिरि चन्दनकी आव ह सुगन्ध जहा, उसकरि भवर गु जार कर ह, अर स्नानादिककी विधि जहा ऐसी मजनशाला, अर सब सम्पत्तिसू भरे निमल है भूमि जिनकी, इन महिलोविष देवो समान क्रीडा करहु। अर तिहारे सुन्दर स्त्री देवागना समान दिव्यरूपकू धरें शरदके पूनोके चन्द्रमा समान प्रजा जिनकी, अनेक गुणनिकरि मडित वीण बासुरी मृदगादि अनेक वादित्र वजायवेविष निपुण, महा सुकण्ठ, सुन्दर गीत गायवेविषै निपुण, नत्यकी करण-हारी, जिनेन्द्रकी कथाविष अनुरागिणी, महापतिवता पवित्र तिनसहित वन उपवन तथा गिरि नदियो के तट निज भवनके उपवन तहा नाना विधि क्रीडा करते देवोकी न्याई रमो। हे वत्स! ऐसे मनोहर सखोकू तजकरि जिनदीक्षा धरि कसे विषम वन अर गिरिके शिखर कसे रहोगे? म स्नेहका भरचा अर तिहारी माता तिहारे शोककरि तप्तायमान तिनकू तजकरि जाना तुमकू योग्य नाहीं। कैयक दिन पृथ्वीका राज्य करहु। तव वे कुमार स्नेहकी वासनासे रहित भया है चित्त जिनका, ससारसे भयभीत, इन्द्रियोके सुखसू पराङमुख, महा उदार, महाशूरवीर, कुमारश्रेष्ठ, आत्मतत्त्वविषै लाग्या ह चित्त जिनका, क्षणएक विचारकर कहते भए—हे पिता! इस ससारविषै हमारे माता पिता अनन्त भए। यह स्नेहका बन्धन नरकका कारण ह। यह घर रूप पिंजरा पापारम्भका अर दु खका बढावन-हारा है। उसमें मूख रति माने ह, ज्ञानी न मानै। अब कबहू देह सम्बन्धी तथा मन सबधी दुख हम कू न होय निश्चयसे ऐसा ही उपाय करेंगे। जो आत्मकल्याण न करै सो आत्मघाती है। कदाचित

घर न तजे अर मनविषै ऐसा जाने मै निर्दोष हूं, मुझे पाप नाहीं तो वह मलिन है, पापी है। जैसे सुफेद वस्त्र अंगके संयोगसे मलिन होय तैसे घरके संयोगसे गृहस्थी मलिन होय है। जे गृहस्थाश्रमविषै निवास करै है तिनके निरंतर हिंसा आरम्भकर राग उपजै। तातै सत्पुरुषोंने गृहस्थाश्रम तजे। अर तुम हमसूं कही कईएक दिन राज्य भोगो सो तुम ज्ञानवान होयकर हमकूं अंधकूपविषै डारो हो? जैसे तृषाकर आतुर मृग जल पीवै अर उसे पारधी मारै तैसे भोगनिकर अतृप्त जो पुरुष उसे मृत्यु मारे है। जगतके जीव विषयकी अभिलाषा कर सदा आर्त्तध्यानरूप पराधीन हैं। जे काम सेवे हैं, वे अज्ञानी विषहरणहारी जडी विना आशीविष सर्पसे क्रीडा करें है, सो कैसे जीवै? यह प्राणी मीन समान गृहरूप तालाबविषै बसते, विषयरूप मासके अभिलाषी, रोगरूप लोहेके आंकडेके योगकर कालरूप धीवरके जालविषै पडे है। भगवान श्रीतीर्थंकर देव, तीन लोकके ईश्वर, सुर नर विद्याधरनिकर वंदित, यह ही उपदेश देते भये कि यह जगतके जीव अपने अपने उपार्जे कर्मोंके वश है। अर या जगतकूं तजै सो कर्मोंकूं हतै। तातै हे तात! हमारे इष्टसंयोगके लोभकर पूर्णता न होवे। यह संयोग सम्बन्ध बिजुरीके चमत्कारवत चंचल है। जे विचक्षण जन है वे इनसे अनुराग न करै, अर निश्चय सेती इस तनुसे अर तनुके सम्बन्धियोसूं वियोग होयगा। इनविषै कहा प्रीति! अर महाक्लेशरूप यह संसार वन उसविषै कहा निवास? अर यह मेरा प्यारा ऐसी बुद्धि जीवोंके अज्ञानसे है। यह जीव सदा अकेला भवविषै भटके है, गति गतिविषै गमन करता महा दुखी है।

हे पिता! हम संसारसागरविषै झकोला खाते अति खेदखिन्न भए। कैसा है संसार सागर? मिथ्या शास्त्ररूप है दुखदाई द्वीप जिसविषै, अर मोहरूप है मगर जिसमें, अर शोक संतापरूप सिवानकर संयुक्त सो, अर दुर्जयरूप नदियोंकर पूरित है, अर भ्रमणरूप भंवरके समूहकरि भयंकर है, अर अनेक आधिव्याधि उपाधिरूप कलोलोंकर युक्त है, अर कुभावरूप पाताल कुण्डोंकर अगम है, अर क्रोधादिकर भावरूप जलचरोंके समूहसे भरा है, अर वृथा बकवादरूप होय है शब्द जहां, अर ममत्वरूप पवनकर उठे है विकल्प

रूपतरग जहाँ, अर दुर्गतिरूप क्षार जलकर भरा ह, अर महादुस्सह इष्ट वियोग अनिष्ट सयोगरूप आताप सोई ह वडवानल जहा, ऐस भवसागरविष हम अनादिकालके खेदखिन्न पडे ह। नाना योनि-विष भ्रमण करते अतिकष्टसू मनष्यदेह उत्तम कुल पाया है सो अब ऐसा करेंगे बहुरि भवभ्रमण न होय। सो सबसे मोह छुडाय आठो कुमार महाशूरवीर घररूप बदीखानेसे निकसे। उन महाभाग्यों के ऐसी वराग्य बुद्धि उपजी जो तीनखडका ईश्वरपणा जीण तणवत तजा। तें विवेकी महेन्द्रोवय नामा उद्यानविष जायकर महाबल नामा मुनिके निकट दिगम्बर भए। सव आरम्भरहित अन्तर्बाह्य परिग्रहके त्यागी, विधिपूवक ईर्यासमिति पालते, विहार करते भए। महा क्षमावान इन्द्रियोके वश करण-हारे, विकल्परहित, निस्पृही, परम योगी, महाध्यानी, बारहप्रकारके तपकर कर्मोंकू भस्मकर अध्यात्म-योगसे शुभाशुभ भावोका निराकरण कर क्षीणकषाय होय, केवलज्ञान लह अत्यन्त सुखरूप सिद्धपदकू प्राप्त भए। जगतके प्रपचसे छूटे। गौतम गणधर राजा श्रेणिकसू कहे है—हे नप! यह अष्ट कुमारो का मगलरूप चरित्र जो विनयवान भक्तिकर पढे सुने उसके समस्त पाप क्षय जावें जस सूयकी प्रभाकर तिमिर विलाय जाय।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष लक्ष्मणके आठ कुमारोका वराग्य वर्णन करनवाला एकसो दशवा पव पूण भया ।। ११ ।।

अथानन्तर महावीर जिनेन्द्रके प्रथम गणधर मुनियोविष मुख्य गौतमऋषि श्रेणिकसू भामडलका चरित्र कहते भए—हे श्रेणिक! विद्याधरनिकी जो ईश्वरता सोई भई कुटिला स्त्री, उसका विषय-वासनारूप मिथ्या सुख सोई भया पुष्प, उसके अनुरागरूप मकरदविष भामण्डलरूप भ्रमर आसक्त होता भया। चित्तमें यह चितव जो मै जिनेन्द्रीदीक्षा धरूगा तो मेरी स्त्रियोका सौभाग्यरूप कमलनि का वन सूख जायगा। ये मेरेसे आसक्त चित्त है, अर इनके विरह कर मेरे प्राणनिका वियोग होयगा।

म यह प्राण सुखसू पाले ह, इसलिए कईयक दिन राज्यके सुख भोग कल्याणका कारण जो तप सो करू गा। यह कामभोग दुर्निवार ह। अर इनकर पाप उपजेगा सो ध्यानरूप अग्निकर क्षणमात्र विषै भस्म करू गा। केईयक दिन राज्य करू। बडी सेना राख जे मेरे शत्रु ह तिनकू राज्य रहित करू गा। वे खडगके धारी बडे सामत मुझसे परागमुख, ते भए खडगी कहिए मैडा, तिनके मानरूप खडगकू भग करू गा। अर दक्षिणश्रेणी उत्तरश्रेणी विष अपनी आज्ञा मनाऊ, अर सुमेरु पवत आदि पवतो विष मरकत मणि आदि नानाजातिके रत्ननिकी निमलशिला तिनविष स्त्रियोसहित क्रीडा करू गा। इत्यादि मनके मनोरथ करता हवा भामडल सकडो वष एक मुहूतकी न्याई व्यतीत करता भया। यह किया यह करू यह करू गा, ऐसा चितवन करता आयुका अन्त न जानता भया। एक दिन सतखणे महिलक ऊपर सु दर सजपर पौढा हुता सो विजुरी पडी अर तत्काल कालकू प्राप्त भया।

दीघसूत्री मनुष्य अनेक विकल्प करे, परन्तु आत्माके उद्धारका उपाय न कर। तष्णाकर हता क्षणमात्रमें साता न पावे, मत्यु सिरपर फिर ताकी सुध नाहीं। क्षणभगुर सुखके निमित्त दुबुद्धि आत्महित न कर। विषय वासनाकर लब्ध भया अनेक भाति विकल्प करता रह। सो विकल्प कम बधके कारण ह। धन योवन जीतव्य सब अस्थिर ह। जो इनकू अस्थिर जान सव परिग्रहका त्याग कर आत्मकल्याण कर सो भवसागर न डूबे। अर विषयाभिलाषी जीव भवविषै कष्ट सहैं, हजारो शास्त्र पढे, अर शातता न उपजी तो क्या? अर एक ही पदकर शातदशा होय तो प्रशसा योग्य है। धम करिवेकी इच्छा तो सदा करवहु करे, अर करे नाहीं, सो कल्याणकू न प्राप्त होय। जसै कटी पक्षका काग उडकर आकाशविष पहुँचा चाह पर जाय न सक। जो निर्वाणके उद्यमकर रहित है सो निर्वाण न पाव। जो निरुद्यमी सिद्धपद पाव, तो कौन काहेकू मुनिव्रत आदर? जो गुरुके उत्तम वचन उरविष धार धमकू उद्यमी होय सो कभी खेदखिन्न न होय। जो गहस्थ द्वारे आया साधु उसकी भक्ति न कर, आहारादिक न दे सो अविवकी ह अर गुरुके वचन सुन धर्मकू न आदरै सो भव-

भ्रमणसे न छूटे । जो घने प्रमादी हैं अर नानाप्रकारके अशुभ उद्यम कर व्याकुल है, उनकी आयु वृथा जाय है, जैसे हथेलीमें आया रत्न जाता रहे । ऐसा जान, समस्त लौकिक कार्यकू निरर्थक मान, दुःखरूप इन्द्रियोंके सुख तिनकू तजकर परलोक सुधारिवेके अर्थ जिनशासनविषै श्रद्धा करहु । भामंडल मरकर पात्रदानके प्रभावसू उत्तम भोगभूमि गया ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै भामण्डलका मरण वर्णन करनेवाला एकसौ ग्यारह्वा पर्व पूर्ण भया । ११९ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण परस्पर महा स्नेहके भरे प्रजाके पिता समान परम हितकारी तिनका राज्यविषै सुखसू समय व्यतीत होता भया । परम ईश्वरतारूप अति सुन्दर राज्य सोई भया कमलोंका वन, उसविषै क्रीडा करते वे पुरुषोत्तम पृथ्वीकू प्रमोद उपजावते भए । इनके सुखका वर्णन कहा तक करें ? ऋतुराज कहिए वसंतऋतु उसमें सुगन्ध वायु वहै, कोयल बोलें भ्रमर गुंजार करें, समस्त वनस्पति फूलें, मदोन्मत्त होय समस्तलोक हर्षके भरे शृंगार क्रीडा करें । मुनिराज विषम वनविषै विराजें आत्मस्वरूपका ध्यान करें । उस ऋतुविषै राम लक्ष्मण रणवाससहित अर समस्त लोकनि सहित रमणीक वनविषै तथा उपवनविषै नानाप्रकारके रंग-क्रीडा रागक्रीडा, जलक्रीडा, वनक्रीडा करते भए । अर ग्रीष्मऋतुविषै नदी सूखे दावानल समान ज्वाला वरसै महामुनि गिरिके शिखर सूर्यके सन्मुख कायोत्सर्ग धर तिष्ठें । उस ऋतुविषै राम लक्ष्मण धारामंडप महलविषै, अथवा महारमणीक वनविषै, जहा अनेक जलयन्त्र चन्दन कपूर आदि शीतल सुगन्ध सामग्री वहा सुखसू विराजे हैं, चमर ढुरे हैं, ताडके बीजना फिरे हैं, निर्मल स्फटिककी शिलापर तिष्ठे हैं, अगुरु चन्दन कर चर्चे जलकर तर ऐसे कमलदल तथा पुष्पोंके साथरे पर तिष्ठे, महामनोहर निर्मल शीतल जल, जिसविषै लवंग इलायची कपूर अनेक सुगन्धद्रव्य उनकर महासुगन्ध उनका पान करते, लतावोंके मंडपविषै विराजते

नानाप्रकारकी सुन्दर कथा करते, सारग आदि अनेक राग सुनते सुन्दर स्त्रीनि सहित उष्ण ऋतुकू बलात्कार शीतकाल सम करते, सुखसू पूर्ण करते भए। अर वर्षाऋतु विषै योगीश्वर तरु तले तिष्ठते महातपकर अशुभ कर्मका क्षयकर है। विजुरी चमक है, मेघकर अंधकार होयरह्या है, मयूर बोले है ढाहा उपाडती महाशब्द करती नदी बहे है, उस ऋतुविषै दोनो भाई सुमेरुके शिखर समान ऊचे, नाना मणिमई, जे महिल तिनविषै महा श्रेष्ठ रगीले वस्त्र पहिरे, केसरके रगकर लिप्त है अग जिनका, अर कृष्णागरुका धूप खेए रहे है महासुन्दर स्त्रियोके नेत्ररूप भ्रमरोके कमल सारिखे इन्द्र समान क्रीडा करत सुखसू तिष्ठे। अर शरदऋतुविषै आकाश निर्मल होय, चन्द्रमाकी किरण उज्ज्वल होय, कमल फूले हस मनोहर शब्द करें, मुनिराज वन पर्वत सरोवर नदीके तीर बैठ चिद्रूपका ध्यान करें। उस ऋतुविषै राम लक्ष्मण राजलोको सहित चादनीके वस्त्र आभरण पहिरे सरिता सरोवरके तीर नाना विधि क्रीडा करते भए। अर शीतऋतुविषै योगीश्वर धर्मध्यानको ध्यावते रात्रिविषै नदी तालावोके तटपर जहा अति शीत पडे, बर्फ वरसे, महाठण्डी पवन बाजे, तहा निश्चल तिष्ठे है। महाप्रचण्ड शीत पवन कर वृक्ष दाह मारे है। अर सूर्यका तेज मन्द होय गया है। ऐसी ऋतुविषै राम लक्ष्मण महिलनिके भीतरले चौबारोविषै तिष्ठते मन वाछित विलास करते, सुन्दर स्त्रीनिके समूह सहित, बीण, मृदग, बासुरी आदि अनेक वादित्रनिके शब्द कानोको अमृत समान श्रवणकर मनकू आल्हाद उपजावते, दोनो वीर महाधीर, देवा समान, अर जिनके स्त्री देवागना समान, वीणाकर जीती है वीणाकी ध्वनि जिन्होने महापतिव्रता, तिनकर आदरते सन्ते पुण्यके प्रभावते सुखसू शीतकाल व्यतीत करते भए। अद्भुत भोगोंकी सम्पदाकर मण्डित वे पुरुषोत्तम प्रजाकू आनन्दकारी दोनो भाई सुखसू तिष्ठे है।

अथानन्तर गौतमस्वामी कहे है–हे श्रेणिक! अब तू हनुमानका वृत्तात सुन। हनुमान पवनका पुत्र कर्णकुण्डल नगरविषै पुण्यके प्रभावसू देवनिके सुख भोगवे, जिसकी हजारा विद्याधर सेवा करें। अर उत्तम क्रियाका धारक स्त्रियोसहित परिवारसहित अपनी इच्छाकरि पृथ्वीमें विहार करै। श्रेष्ठ

विमानविषै आरूढ परम ऋद्धिकर मंडित महा शोभायमान सुन्दर वनोमें देवनि समान क्रीडा करै। सो बसतका समय आया। कामी जीवनकू उन्मादका कारण, अर समस्त वृक्षोकू प्रफुल्लित करणहारा, प्रिया अर प्रीतमके प्रेमका बढावनहारा, सुगन्ध चले है पवन जिसमें, ऐसे समयमें अजनीका पुत्र जिनेन्द्रकी भक्तिमें आरूढचित्त, अति हर्ष कर पूर्ण हजारां स्त्रीनिसहित सुमेरु पर्वतकी ओर चल्या। हजारां विद्याधर हैं संग जिसके, श्रेष्ठ विमानविषै चढे, परम ऋद्धिकरि संयुक्त मार्गविषै वनविषै क्रीडा करते भए। कैसे हैं वन? शीतल मंद सुगन्ध चले है पवन जहां, नानाप्रकारके पुष्प अर फलो करि शोभित वृक्ष हैं, जहां देवांगना रमे हैं, अर कुलाचलोंकेविषै सुन्दर सरोवरो करि युक्त अनेक मनोहर वन जिनविषै भ्रमर गुंजार करैं हैं, अर कोयल बोल रही हैं, अर नाना प्रकारके पशु पक्षियोंके युगल विचरै हैं जहां सब जातिके पत्र पुष्प फल शोभै हैं, अर रत्ननिकी ज्योतिकरि उद्योतरूप है पर्वत जहां, अर नदी निर्मल जलकी भरी सुन्दर हैं तट जिनके, अर सरोवर अति रमणीक नाना प्रकारके कमलोंके मकरंदकरि रंग रूप होय रहा है सुगन्ध जल जिनका, अर वापिका अति मनोहर जिनके रत्नोंके सिवान अर तटोंके निकट बडे बडे वृक्ष हैं, अर नदीमें तरंग उठै हैं, झागोंके समूहसहित महा शब्द करती बहै हैं, जिनमें मगरमच्छ आदि जलचर क्रीडा करै, अर दोनों तटविषै लहलहाट करते अनेक वन उपवन महा मनोहर विचित्रगति लिये शोभै हैं, जिनमें क्रीडा करिवेके सुन्दर महिल अर नाना प्रकार रत्ननिकरि निर्मापे जिनेश्वरके मन्दिर पापोंके हरणहारे अनेक हैं। पवनपुत्र सुन्दर स्त्रियोंकरि सेवित, परम उदयकरि युक्त अनेक गिरियोंविषै अकृत्रिम चैत्यालयोंका दर्शनकरि विमानविषै चढ्या स्त्रियोंकू पृथ्वीकी शोभा दिखावता, अति प्रसन्नतासू स्त्रियोंसू कहै हैं-हे प्रिये! सुमेरुविषै अति रमणीक जिनमन्दिर स्वर्णमयी भासै हैं। अर इनके शिखर सूर्य समान देदीप्यमान महामनोहर भासै हैं। अर गिरिकी गुफा तिनके मनोहर द्वार रत्नजडित शोभै नाना रंगकी ज्योति परस्पर मिल रही हैं। वहां अरति उपजै नाहीं, सुमेरुकी भूमितलविषै अतिरमणीक भद्रशालवन है अर सुमेरुकी कटिमेखला

विषै विस्तीर्ण नन्दनवन अर सुमेरुके वक्षस्थलविषै सौमनसवन है, जहां कल्पवृक्ष कल्पलताओंसे बेढे सोहै है, अर नानाप्रकार रत्नोंकी शिला शोभित है। अर सुमेरुके शिखरमें पांडुक वन है जहां जिनेश्वर देवका जन्मोत्सव होय है। इन चारों ही वनविषै चार चार चैत्यालय हैं, जहां निरंतर देव देवियोंका आगम है। यक्ष किन्नर गन्धर्वोंके संगीतकरि नाद होय रहा है। अप्सरा नृत्य करै हैं। कल्पवृक्षोंके पुष्प मनोहर है। नानाप्रकारके मंगल द्रव्यकरि पूर्ण यह भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय अनादिनिधन हैं। हे प्रिये! पांडुक वनविषै परम अद्भुत जिन मंदिर सोहै हैं, जिनके देख मन हरा जाय, महाप्रज्वलित निर्धूम अग्नि समान संध्याके बादरोंके रंग समान उगते सूर्य समान स्वर्णमई शोभै हैं, समस्त उत्तम रत्ननिकरि शोभित सुन्दराकार हजारों मोतियोंकी माला, तिनकरि मंडित महामनोहर है। मालावोंके मोती कैसे सोहै हैं मानो जलके बुदबुदा ही है। अर घण्टा, झांझ, मंजीरा, मृदंग, चमर तिनकरि शोभित है। चौगिरद कोट ऊंचे दरवाजे इत्यादि परम विभूति करि विराजमान है। नाना रंगकी फहराती हुई ध्वजा स्वर्णके स्तंभनि करि देदीप्यमान। इन अकृत्रिम चैत्यालयोंकी शोभा कहां लग कहें जिनका सम्पूर्ण वर्णन इन्द्रादिक देव भी न कर सकें। हे कांते! पाण्डुकवनके चैत्यालय मानो सुमेरुके मुकुट ही हैं, अति रमणीक है।

या भांति महाराणी पटराणियोंसे हनुमान बात करते, जिनमंदिरकी प्रशंसा करते मंदिरके समीप आए। विमानसूं उतरि महा हर्षित होय प्रदक्षिणा दई। वहां श्रीभगवानके अकृत्रिम प्रतिबिंब सर्व अतिशय विराजमान महा ऐश्वर्यकरि मंडित, महा तेज पुंज देदीप्यमान शरदके उज्ज्वल बादर तिनमें जैसे चन्द्रमा सोहै तैसे सर्व लक्षणमंडित हनुमान हाथ जोड रणवास सहित नमस्कार करता भया। कैसा है हनुमान? जैसे ग्रह तारावोंके मध्य चन्द्रमा सोहै तैसे राजा लोकके मध्य सोहै है। जिनेन्द्रके दर्शन करि उपज्या है अतिहर्ष जिसकूं सो सम्पूर्ण स्त्रीजन अति आनन्दकूं प्राप्त भई। रोमांच होय आए, नेत्र प्रफुल्लित भए। विद्याधरी परम भक्तिकरि युक्त सर्व उपकरणों सहित परम चेष्टाकी

धरणहारी, महापवित्र कुलविष उपजी देवागनाओको त्याई अति अनुरागसे देवाधिदेवकी विधिपूर्वक पूजा करती भई । महा पवित्र पदमह्लव आदिका जल अर महा सुगन्ध चन्दन मुक्ताफलनिके अक्षत, स्वर्णमई कमल तथा पद्मराग मणिमई तथा चन्द्रकाति मणिमई तिनकर पूजा करती भई । अर कल्पवृक्षनिके पुष्प अर अमतरूप नवेद्य अर महा ज्योतिरूप रत्नोके दीप चढाए, अर मलयागिरि चदन आदि महासुगन्ध जिनकरि दशोदिशा सुगन्धमई होय रही है, अर परम उज्ज्वल महाशीतल जल, अर अगुरु आदि महापवित्र द्रव्योकरि उपज्या जो धूप, सो खेवती भई । अर महा पवित्र अमृत फल चढ़ावती भई । अर रत्नोके चूर्णकरि माडला माडती भई । महा मनोहर अष्ट द्रव्योसे पति सहित पूजा करती भई । हनुमान राणिनि सहित भगवानकी पूजा करता कसे सोहे ह जैसा सौधर्म इन्द्र पूजा करता सोहे । कसा ह हनुमान ? जनेऊ पहिरे, सब आभूषण पहरे, महीन वस्त्र पहिरे, महा पवित्र पापरहित बानरके चिह्नका ह देदीप्यमान रत्नमई मुकुट जिसके, महा प्रमोदका भरया, फूल रहे ह नेत्रकमल जिसके, सुन्दर ह वदन जिसका, पूजाकरि पापनिके नाश करणहारे स्तोत्र तिनकरि सुर असुरोके गुरु जिनेश्वर तिनके प्रतिबिबकी स्तुति करता भया । सो पूजा करता अर स्तुति करता इन्द्रकी अप्सरावोने देख्या सो अति प्रशसा करती भई । अर यह प्रवीण बीण लेयकरि जिनेन्द्रचन्द्र के यश गावता भया । जे शुद्ध चित्त जिनेन्द्रकी पूजाविषै अनुरागी है सब कल्याण तिनके समीप है, तिनकू कुछ दुर्लभ नाहीं । तिनका दर्शन मगलरूप ह । उन जीवोने अपना जन्म सुफल किया जिन्होने उत्तम मनुष्य देह पाय श्रावकके व्रतधरि जिनवरविष दृढ भक्ति धारी । अपने करविषै कल्याण कू धर ह, जन्मका फल तिनही पाया । हनुमानने पूजा स्तुति बन्दना करि बीण बजाय अनेक राग गाय अद्भुत स्तुतिकरी । यद्यपि भगवानके दर्शनसे विछुरनेका नहीं ह मन जिसका तथापि चैत्यालय विष अधिक न रहहु, भति कोऊ आच्छादनालाग, तात जिनराजके चरण उर विष धरि मन्दिरसू बाहिर निकस्या । विमानोमें चढे । हजारो स्त्रियोकरि सयुक्त सुमेरुकी प्रदक्षिणा दी । जसे सूर्य देय

तसे श्रीशल कहिए हनुमान सुन्दर ह क्रिया जिसकी, सो शलराज कहिए सुमेरु उसकी प्रदक्षिणा देय, समस्त चत्यालयोविष दशन करि भरतक्षेत्रकी श्रोर सन्मुख भया। सो माग विष सूय श्रस्त होय गया। श्रर सध्या भी सूयके पीछे विलय गई। कष्णपक्षकी रात्रि सो तारारूप बधुश्रोकर मडित चन्द्रमा रूप पति विना न सोहती भई। हनुमानने तले उतर एक सुरदुन्दुभी नामा पवत वहा सेना सहित रात्रि व्यतीत करी। कमल श्रादि श्रनेक सुगन्ध पुष्पोसे स्पश पवन श्राई, उसकरि सेनाके लोक सुखसू रहे। जिनेश्वर देव की कथा करवो किए। रात्रिकू श्राकाशसू दवीप्यमान एक तारा टूटया सो हनुमानने देखकरि मनविष विचारी—हाय हाय! इस ससार श्रसार वनविष देव भी कालवश है। ऐसा कोई नाहीं जो कालसू बच। बिजुरीका चमत्कार श्रर जलकी तरग जसे क्षण भगुर ह तसे शरीर विनश्वर ह। इस ससारविष इस जीवने श्रनन्त भवविष दुख ही भोगे। यह जीव विषयके सुखकू सुख मान ह सो सुख नाहीं दुख ही ह। विषम क्षणभगुर ससारविष दु ख ही ह, सुख नाहीं होय है। मोहका माहात्म्य ह जो श्रनन्तकाल जीव दुख भोगता भमण करें ह। श्रनन्तावसपणी काल भमणकरि मनुष्य देह कभी कोई पाव ह, सो पायकरि धमके साधन वथा खोव ह। यह विनाशीक सुखविष श्रासक्त होय महासकट पावे ह। यह जीव रागादिकके वश भया वीतराग भावकू नाहीं जाने ह। यह इन्द्रिय जैन-मागके श्राश्रय विना न जीती जाय। ये इन्द्री चचल कुमागविष लगायकरि इस जीवकू इस भव पर भवविष दु खदायी ह। जसे मग, मीन श्रर पक्षी लोभके वशसू बधिकके जालमें पडे ह तस यह कामी क्रोधी लोभी जीव जिनमागकू पाए विना श्रज्ञानके वशसू प्रपचरूप पारधीके विछाए विषयरूप जाल विष पडे ह। जो जीव श्राशीविष सप समान यह मन इन्द्री तिनके विषयोमें रम ह सो मूढ दु खरूप श्रग्निविष जर ह। जस कोई एक दिन राज्यकरि वष दिन त्रास भोगवे तसे यह मूढ जीव श्रल्पदिन विषयोके सुख भोगि श्रनन्तकाल पयत निगोदके दुख भोगवे ह। जो विषयके सुखका श्रभि-लाषी है सो दुखोका श्रधिकारी ह। नरक निगोदके मूल यह विषय तिनकू ज्ञानी न चाह। मोहरूप

ठगका ठग जो आत्मकल्याण न करै सो महा कष्टकू पावै । जो पूर्व भवविषै धर्म उपार्जे, मनुष्यदेह पाय धर्म का आदर न करै सो जैसे धन ठगाय कोई दुखी होय तैसे दुखी होय है । अर देवोके भी भोग भोगि यह जीव मरकरि देवसू एकेन्द्री होय है । इस जीवके पाप शत्रु है, अर यह भोग ही पाप के मूल है । इनसू तृप्ति न होय । यह महा भयंकर है । अर इनका वियोग निश्चय होगा । यह रहनेके नाहीं । जो मै इस राज्यकू अर यह जो प्रियजन है तिनकू तजकरि तप न करू तो अतृप्त भया सुभूमि चक्रवर्तीकी नाई मरकर दुर्गतिको जाऊगा। अर यह मेरे स्त्री शोभायमान, मृगनयनी, सर्व मनोरथकी पूर्णहारी, पतिव्रता, स्त्रियोंके गुणनिकर मण्डित, नवयौवन है सो अबतक मैं अज्ञानसू तज न सका । सो मैं अपनी भूलको कहातक उराहना दू । देखो ! मैं सागर पर्यंत स्वर्गविषै अनेक देवांगना सहित रम्या । अर देवसू मनुष्य होय इस क्षेत्रविषै भया । सुन्दर स्त्रियो सहित रम्या, परन्तु तृप्त न भया । जैसे ई धनसू अग्नि तृप्त न होय अर नदियोसू समुद्र तृप्त न होय तैसे यह प्राणी नानाप्रकारके विषयसुख तिनकरि तृप्त न होय । मै नानाप्रकारके जन्म तिनविषै भ्रमणकरि खेदखिन्न भया । रे मन ! अब तू शांतताकू प्राप्त होहु । कहा व्याकुल होय रहा है । क्या तैने भयंकर नरकोंके दुःख न सुने । जहा रौद्रध्यान हिंसक जीव जाय है, जिन नरकनिविषै महा तीव्र वेदना, असिपत्र वन वैतरणी नदी, सकटरूप है सकल भूमि जहां । रे मन तू नरकसू न डरै है । राग द्वेष करि उपजे जे कर्म–कलंक तिनकू तपकरि नाहि खिपावे है । तेरे एते दिन यो ही वृथा गए, विषय सुखरूप कूपविषै पड़ा अपने आत्माकू भवपिंजरसू निकास । पाया है जिन मार्गविषै बुद्धिका प्रकाश तैने, तू अनादिकालका संसार भ्रमणसू खेदखिन्न भया । अब अनादिके बंधे आत्माकू छुडाय । हनुमान ऐसा निश्चयकरि संसार शरीर भोगोसू उदास भया । जाना है यथार्थ जिनशासनका रहस्य जिसने । जैसे सूर्य मेघरूप पटलसे रहित महा तेजरूप भासै तैसे मोह पटलसू रहित भासता भया । जिस मार्ग होय जिनवर सिद्ध पदकू सिधारे उस मार्गविषै चलिवेकू उद्यमी भया ।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महापद्मपराण सस्कतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष हनुमानका वराग्य चितवन वणन करनवाला एकसौ बारहवा पव पण भया ॥११२ ॥

———

अथानन्तर रात्रि व्यतीत भई, सोला बानीके स्वण समान सूय अपनी दीप्तिकरि जगतविष उद्योत करता भया, जसे साधु मोक्षमागका उद्योत करें। नक्षत्रोके गण अस्त भए, अर सूयके उदय करि कमल फूले जसे जिनराजके उद्योतकरि भव्य जीवरूप कमल फूले। हनुमान महा वराग्यका भरचा, जगतके भोगोसू विरक्त मन्त्रियोसू कहता भया जसे भरत चक्रवर्ती पूव तपोवनकू गए तसे हम जावेंगे। तब मन्त्री प्रेमके भरे परम उद्वगकू प्राप्त होय नाथसू विनती करते भए, हे दव ! हमकू अनाथ न करो प्रसन्न होवो, हम तिहारे भक्त है हमारा प्रतिपालन करो, तब हनुमानने कही तुम यद्यपि निश्चयकर मेरे आज्ञाकारी हो तथापि अनथके कारण हो, हितके कारण नाहीं। जो ससार समुद्रसू उतर अर उसे पीछे सागरमें डार ते हितू कसे ? निश्चय थकी उनकू शत्रु ही कहिए। जब या जीवने नरकके निवास-विष महादु ख भोगे तब माता पिता, मित्र भाई, कोई ही सहाई न भया। यह दुलभ मनुष्यदेह अर जिनशासनका ज्ञान पाय बुद्धिमानोकू प्रमाद करना उचित नाही। अर जसे राज्यके भोगसू मेरे अप्रीति भई तसे तुमसू भी भई। यह कमजनित ठाठ सव विनाशीक ह। निसदेह हमारा तिहारा वियोग होयगा। जहा सयोग ह तहा वियोग ह। सुर नर अर इनके अधिपति इन्द्र नरेन्द्र यह सब ही अपने अपने कर्मोंके आधीन ह। कालरूप दावानल करि कौन २ भस्म न भए ? म सागरा पय त अनेक भव दवोके सुख भोगे, परन्तु तप्त न भया, जसे सूखे ई धनकरि अग्नि तप्त न होय। गति जाति शरीर इनका कारण नाम कम ह, जाकरि ये जीव गति गतिविष भ्रमण कर ह। सो मोहका बल महाबल-वान ह, जाके उदयकरि यह शरीर उपज्या ह, सो न रहगा। यह ससार वन महाविषम है, जाविषै ये प्राणी मोहकू प्राप्त भए भवसकट भोग ह। उसे उलघकरि म जन्म जरा मृत्यु रहित जो पव तहा

गया चाहू हू । यह बात हनुमान मन्त्रियोसू कही सो रणवासकी स्त्रियोने सुनी, उसकरि खेदखिन्न होय महारुदन करती भई । जे समझानेविष समथ ते उनकू शातचित्त करी । कसे हैं समझावन हारे ? नाना प्रकारके वृत्तातविष प्रवीण । अर हनुमान निश्चल है चित्त जाका सो अपने बडे पुत्रकू राज्य देय अर सबनिकू यथायोग्य विभूति देय रत्नोके समूहकरि युक्त देवोके विमान समान जो अपना मदिर उसे तजकरि निकस्या । स्वण रत्नमई देदीप्यमान जो पालकी तापर चढि चैत्यवान नामा वन तहा गया । सो नगरके लोक हनुमानकी पालकी देख सजल नेत्र भये । पालिकीपर ध्वजा फरहरे हैं, चमरोकरि शोभित है, मोतियोकी झालरियोकरि मनोहर है । हनुमान वनविष आया सो वन नाना प्रकारके वृक्षोकरि मडित । अर जहा सूवा, मना, मयूर, हस, कोयल, भमर सुन्दर शब्द कर है, अर नानाप्रकारके पष्पोकरि सुगध है, वहा स्वामी धमरत्न, सयमी, धमरूप रत्नकी राशि, योगीश्वर, जिनके दशनसू पाप विलाय जाव ऐसे सत चारण मुनि अनेक चारण मुनियोकरि मडित तिष्ठते थे । आकाशविष है गमन जिनका । सो दूरसू उनकू देखि हनुमान पालकीसू उतरचा । महा भक्तिकर युक्त नमस्कारकरि हाथ जोडि कहता भया—हे नाथ ! म शरीरादिक परद्रव्योसू निममत्व भया । यह परमेश्वरी दीक्षा आप मुझे कपाकर देवहु । तब मुनि कहते भए—अहो भव्य ! तने भली विचारी । तू उत्तम जन है, जिनदीक्षा लेहु । यह जगत असार है, शरीर विनश्वर है । शीघ्र आत्मकल्याण करो । अविनश्वर पद लवेकी परमकल्याणकारणी बुद्धि तुम्हारे उपजी है । यह बुद्धि विवेकी जीवके ही उपजै है । ऐसी मुनिकी आज्ञा पाय मुनिकू प्रणामकरि पद्मासन धर तिष्ठा । मुकुट, कुण्डल, हार आदि सब आभूषण डारे । जगतसू मनका राग निवारचा, स्त्रीरूप बधन तुडाय, ममता मोह मिटाय, आपकू स्नेहरूप पाशसे छुडाय, विष समान विषय सुख तजकरि, वैराग्यरूप दीपकी शिखाकरि राग रूप अधकार निवारकरि, शरीर अर ससारकू असार जान, कमलोकू जीत, ऐसे सुकुमार जे कर तिन-करि सिरके केश लोंच करता भया । समस्त परिग्रहसू रहित होय मोक्षलक्ष्मीकू उद्यमी भया, महा

व्रत धरे, असयम परिहरे। हनुमानकी लार साडे सातसौ बडे राजा विद्याधर, शुद्ध चित्त विद्युवगतिकू आदि दे, हनुमानके परम मित्र, अपने पुत्रोकू राज्य देय, अठाईस मूलगुण धार योगीन्द्र भए। अर हनुमानकी रानी अर इन राजावोकी राणी प्रथम तो वियोगरूप अग्निकरि तप्तायमान विलाप करती भई फिर वराग्यकू प्राप्त होय बधुमति नामा आर्यिकाके समीप जाय महा भक्तिकरि सयुक्त नमस्कार करि आर्यिकाके व्रत धारती भई। वे महाबुद्धिवती शीलवती भवभ्रमणके भयसू आभूषण डार एक सफेद वस्त्र राखती भई। शील ही ह आभूषण जिनके तिनकू राज्यविभूति जीण तृण समान भासती भई। अर हनुमान महाबुद्धिमान महातपोधन महापुरुष ससारसू अत्यन्त विरक्त, पच महाव्रत, पच समिति, तीन गुप्ति धार शल कहिए पवत उससे भी अधिक अशेल कहिए हनुमान राजा पवनके पुत्र चारित्रविष अचल होते भए। तिनका यश निमलइन्द्रादिक देव गाव, बारम्बार वन्दना कर अर बडे २ कीर्ति कर। निमल ह आचरण जिनका, ऐसा सवज्ञ वीतराग देवका भाषा निमल धम आचरया सो भवसागरके पार भया। वे हनुमान महामुनि पुरुषोविष सूय समान तजस्वी जिनेन्द्रदेवका धम आराधि ध्यान अग्निकरि अष्ट कमकी समस्त प्रकति ई धनरूप तिनकू भस्मकरि तु गी गिरिके शिखरसू सिद्ध भए। कवलज्ञान केवलदशन आदि अनन्त गुणमई सदा सिद्ध लकविष रहगे।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष हनमानका निर्वाण गमन वणन करनवाला एकसौ तेरहवा पव पूण भया ॥ ११३ ॥

अथानन्तर राम सिहासनपर विराजे थे। लक्ष्मणके आठो पुत्रोका अर हनुमानका मुनि होना मनुष्यो के मुखसू सुनकरि हसे, अर कहते भए–इन्होने मनुष्य भवके क्या सुख भोगे? यह छोटी अवस्थामें ऐसे भोग तजकरि योग धारण कर ह सो बडा आश्चय ह? यह हठरूप ग्राहकरि ग्रहे ह। देखो! ऐसे मनोहर काम भोग तजि विरक्त होय बठे ह। या भाति कही। यद्यपि श्रीराम सम्यग्दष्टि ज्ञानी हैं

तथापि चारित्रमोहके वश कईएक दिन लोकोकी न्याई जगतविष रहते भये । ससारके अल्पसुख तिन विष राम लक्ष्मण न्याय सहित राज्य करते भए । एक दिन महाज्योतिका धारक सौधम इन्द्र परम ऋद्धिकरि युक्त महाधीय अर गम्भीरताकरि मडित, नाना अलकार धरे सामान्य जातिके देव जे गुरुजन तुल्य, अर लोकपाल जातिके देव देशपाल तुल्य, अर त्रायस्त्रिशत जातिके देव मत्री समान तिनकरि मडित, तथा अन्य सकल देव सहित इन्द्रासनविष बठे कसे सोह जैसे सुमेरु पवत और पर्वतोंके मध्य सोह । महातेज पुज अदभुत रत्नोका सिहासन, उसपर सुखसू विराजता ऐसा भासै जसे सुमेरुके ऊपर जिनराज भास । चन्द्रमा अर सूयकी ज्योतिकू जीत ऐसे रत्नोके आभूषण पहिरे । सुन्दर शरीर मनोहर रूप नेत्रोकू आनन्दकारी जसी जलकी तरग निमल तसी प्रभाकर युक्त हार पहिरे ऐसा सोह मानो शीतोदा नदीके प्रवाहकरि युक्त निषध्याचल पवत ही ह । मुकट कठाभरण कुण्डल केयूर आदि उत्तम आभूषण पहिरे देवोकरि मडित जसा नक्षत्रोकरि चन्द्रमा सोह तसा सोह ह । अपने मनुष्य लोकविष चन्द्रमा नक्षत्र ही भासें तातै चन्द्रमा नक्षत्रोका दृष्टात दिया ह । चन्द्रमा नक्षत्र जोतिषी देव ह तिनसू स्वगवासी देवोकी अति अधिक ज्योति ह । अर सब देवोसू इन्द्रकी ही अधिक ह । अपने तेजकरि दशो दिशाविष उद्योत करता सिहासनविष तिष्ठता जसा जिनेश्वर भासे तसा भासे । इन्द्रके इन्द्रासनका अर सभाका जो समस्त मनुष्य जिह्वाकरि सैकडो वष लग वणन कर तौभी न कर सक । सभाविषै इन्द्रके निकट लोकपाल सब देवनिविष मुख्य ह । सुन्दर ह चित्त जिनके स्वगसू चयकरि मनुष्य होय मुक्ति जाव ह । सोलह स्वगके बारह इन्द्र ह । एक एक इन्द्रके चार चार लोकपाल एक भवधारी ह । अर इन्द्रनिविष सौधम सनत्कुमार महेन्द्र, लातवेन्द्र, शतारेन्द्र, आरणेन्द्र यह षट एक भवधारी ह । अर शची इन्द्राणी लोकातिक देव, पचम स्वगके तथा सर्वार्थसिद्धिके अहमिन्द्र मनुष्य होय मोक्ष जावे हैं । सो सौधम इन्द्र अपनी सभाविष अपने समस्त देवनिकरि युक्त बैठे, लोकपालादिक अपने अपने स्थानक बठे । सो इन्द्र शास्त्रका व्याख्यान करते भए । वहाँ प्रसग पाय यह कथन किया अहो देवो! तुम अपने

भावरूप पुष्प निरन्तर महा भक्तिकरि अर्हन्त देवकू चढावो। अर्हन्तदेव जगतका नाथ है। समस्त दोषरूप वनके भस्म करिवेकू दावानल समान है, जिसने संसारका कारण मोहरूप महा असुर अत्यन्त दुर्जन ज्ञानकरि मारा, वह असुर जीवोका बडा बैरी निर्विकल्प सुखका नाशक है। अर भगवान वीतराग भव्य जीवोकू संसार समुद्रसे तारिवे समर्थ है। संसार समुद्र कषायरूप उग्र तरंगकरि व्याकुल है। कामरूपग्राहकरि चचलतारूप, मोहरूप मगरकरि मृत्युरूप है ऐसे भवसागरसू भगवान बिना कोई तारिवे समर्थ नाहीं। कैसे है भगवान ? जिनकू जन्म कल्याणकविषे इन्द्रादिक देव सुमेरुगिरि ऊपर क्षीरसागरके जलकरि अभिषेक करावे है। अर महा भक्तिकरि एकाग्रचित्त होय परिवार सहित पूजा करे है। अर धर्म अर्थ अर काम मोक्ष यह चारो पुरुषार्थ है तिनविषै लगा है चित्त जिनका। जिनेन्द्रदेव पृथ्वीरूप स्त्रीकू तजकरि सिद्धरूप वनिताकू वरते भए। कैसी है पृथ्वीरूप स्त्री ? विंध्याचल अर कैलाश हैं कुच जिसके, अर समुद्रकी तरंग है कटिमेखला जिसके। ये जीव अनाथ महा मोहरूप अंधकार कर आच्छादित तिनकू वे प्रभु स्वर्गलोकसे मनुष्यलोकविषै जन्म धरि भवसागरसू पार करते भए। अपने अद्भुत-अनन्तवीर्य कर आठो कर्मरूप वैरी क्षणमात्रविषै खिपाए। जैसे सिंह मदोन्मत्त हस्तियोकू नसावे। भगवान सर्वज्ञदेवकू अनेक नामकरि भव्य जीव गावै है जिनेन्द्र भगवान अर्हन्त स्वयम्भू शम्भु स्वयंप्रभु सुगत शिवस्थान महादेव कालंजर हिरण्यगर्भ देवाधिदेव ईश्वर महेश्वर ब्रह्मा विष्णु बुद्ध वीतराग विमल विपुल प्रबल धर्मचक्री प्रभु विभु परमेश्वर परमज्योति परमात्मा तीर्थंकर कृतकृत्य कृपालु संसारसूदन सुर ज्ञानचक्षु भवांतक इत्यादि अपार नाम योगीश्वर गावे है, अर इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्ती भक्तिकरि स्तुति करे है जो गोप्य है अर प्रकट है जिनके नाम सकल अर्थ संयुक्त है जिसके प्रसादकरि यह जीव कर्मसे छूटकरि परम धामकू प्राप्त होय है जैसा जीवका स्वभाव है तैसा वहां रहे है। जो स्मरण करे उसके पाप विलाय जाय। वह भगवान पुराण पुरुषोत्तम परम उत्कृष्ट आनन्दकी उत्पत्तिका कारण महा कल्याणका मूल देवनिके देव उसके तुम भक्त होवो। अपना कल्याण चाहो हो तो

अपने हृदय कमलविषै जिनराजकू पधरावो। यह जीव अनादि निधन है, कर्मोंका प्रेरया भव वनविषै भटक है। सब जन्मविषै मनुष्य भव दुर्लभ है। सो मनुष्यजन्म पायकर जे भूले है तिनकू धिक्कार है। चतुर्गतिरूप है भ्रमण जिसविषै ऐसा संसाररूप समुद्र उसमें बहुरि कब बोध पावोगे। जे अरहंतका ध्यान नाहीं करै है, अहो! धिक्कार उनकू जे मनुष्यदेह पायकर जिनेन्द्रकू न जपै है। जिनेन्द्र कर्म-रूप वैरीका नाश करणहारा उसे भूल पापी नाना योनिविषै भ्रमण करै हैं। कभी मिथ्या तपकरि क्षुद्र देव होय है। बहुरि मरकरि स्थावर योनिविषै जाय महा कष्ट भोगै है। यह जीव कुमार्गके आश्रयकरि महा मोहके वश भए इन्द्रोंका इन्द्र जो जिनेन्द्र उसे नाहीं ध्यावै है। देखो मनुष्य होयकरि मूर्ख विषयरूप मासके लोभी मोहिनी कर्मके योगकरि अहंकार ममकारकू प्राप्त होय हैं, जिनदीक्षा नाहीं धरै हैं। मदभागियोंके जिनदीक्षा दुर्लभ है। कभी कुतपकरि मिथ्यादृष्टि स्वर्गसू आन उपजे है। सो हीन देव होय पश्चात्ताप करै है कि हम मध्यलोक रत्न द्वीपविषै मनुष्य भए थे, सो अरहंत का मार्ग न जान्या, अपना कल्याण न किया, मिथ्या तपकरि कुदेव भए। हाय हाय! धिक्कार उन पापियोंकू जो कुशास्त्रकी प्ररूपणाकरि मिथ्या उपदेश देय महा मानके भरे जीवोंकू कुमार्गविषै डारै हैं। मूढोंकू जिनधर्म दुर्लभ है तातै भव भवविषै दुखी होय है। अर नारकी तिर्यंच तो दुखी ही है, अर हीन देव भी दुखी ही है। अर बडी ऋद्धिके धारी देव भी स्वर्गसू चये हैं सो मरणका बडा दुख है, अर इष्ट वियोगका बडा दुःख है। बडे देवोंकी भी यह दशा तो और क्षुद्रोंकी क्या बात? जो मनुष्य देहविषै ज्ञान पाय आत्मकल्याण करै है सो धन्य है। इन्द्र या भांति कहकर बहुरि कहता भया—ऐसा दिन कब होय जो मेरी स्वर्गलोकविषै स्थिति पूर्ण होय अर मैं मनुष्यदेह पाय, विषयरूप वैरियोंकू जीत, कर्मोंका नाशकरि तपके प्रभावसू मुक्ति पाऊं। तब एक देव कहता भया यहां स्वर्ग-विषै तो अपनी यही बुद्धि होय है परन्तु मनुष्य देह पाय भूल जाय है। जो कदाचित मेरे कहेकी प्रतीति न करो तो पंचम स्वर्गका ब्रह्मेंद्रनामा इन्द्र अब रामचन्द्र भया है। सो यहां तो यों ही कहते

थे अर अब वैराग्यका विचार ही नाहीं। तब शचीका पति सौधर्म इन्द्र कहता भया सब बंधनमें स्नेहका बडा बंधन है। जो हाथ, पग, कंठ आदि अंग अंग बंधा होय सो तो छूटै, परन्तु स्नेहरूप बंधनकरि बंध्या कैसे छूटे? स्नेहका बंध्या एक अंगुल न जाय सके। रामचन्द्रके लक्ष्मणसूं अति अनुराग है। लक्ष्मणके देखे विना तृप्ति नाहीं। अपने जीवसूं भी उसे अधिक जाने है। एक निमिषमात्र भी लक्ष्मणकूं न देखे तो रामका मन विकल होय जाय। सो लक्ष्मणकूं तजकरि कैसे वैराग्यकूं प्राप्त होय? कर्मोंकी ऐसी ही चेष्टा है जो बुद्धिमान भी मूर्ख होय जाय है। देखो सुने है अपने सब भव जिसने ऐसा विवेकी राम भी आत्महित न करे। अहो देव हो! जीवोंके स्नेहका बडा बंधन है, या समान और नाहीं तातैं सुबुद्धियोंकूं स्नेह तजि संसार सागर तरिवेका यत्न करना चाहिए। या भांति इन्द्रके मुखका उपदेश तत्वज्ञानरूप अर जिनवरके गुणोंके अनुरागसूं अत्यन्त पवित्र उसे सुनकर देव चित्तकी विशुद्धताकूं पाय जन्म जरा मरणके भयसूं कम्पायमान भए, मनुष्य होय मुक्ति पायवेकी अभिलाषा करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषैं इन्द्रका देवनिकूं उपदेश वर्णन करनेवाला एकसौ चौदहवां पर्व पूर्ण भया ।। ११४ ।।

अथानन्तर इन्द्र सभासे उठे। तब सुर कहिए कल्पवासी देव अर असुर कहिए भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी देव इन्द्रकूं नमस्कारकरि उत्तम भावधरि अपने अपने स्थानक गए। पहिले दूजे स्वर्ग लग भवनवासी व्यंतर ज्योतिषीदेव कल्पवासी देवोंकरि ले गए जाय हैं। सो सभामेंके दो स्वर्गवासी देव रत्नचूल अर मृगचूल बलभद्र नारायणके स्नेह परखिवेकूं उद्यमी भए। मनविषैं यह धारणा करी-ते दोनों भाई परस्पर प्रेमके भरे कहिये हैं, देखें उन दोनोंकी प्रीति? रामके लक्ष्मणसूं एता स्नेह है जाके देखे विना न रहै। सो रामका मरण सुनि लक्ष्मणकी क्या चेष्टा होय? लक्ष्मण शोककरि विह्वल

भया क्या चेष्टा कर ? सो क्षण एक देखकरि आवेंगे। शोककरि लक्ष्मणका कसा मुख हो जाय, कौन सू कोप कर, क्या कहे, ऐसी धारणाकरि दोनो दुराचारी देव अयोध्या आए। सो रामके महिलविषै विक्रियाकरि समस्त अन्त पुरकी स्त्रीनिका रुदन शब्द कराया। अर ऐसी विक्रिया करी—द्वारपाल उमराव मन्त्री पुरोहित आदि नीचा मुखकरि लक्ष्मणप आए। अर रामका मरण कहते भए, कि हे नाथ! राम परलोक पधारे। ऐसे वचन सुनकरि लक्ष्मणने मद पवनकरि चपल जो नील कमल ता समान सुन्दर ह नेत्र जाके सो हाय! यह शब्द हू आधासा कह तत्काल ही प्राण तजे, सिंहासन ऊपर बठ्या हुता सो वचनरूप वज्रपातका मार्‍या जीवरहित होय गया। आखकी पलक ज्यो थी त्योंही रह गई। जीव जाता रह्या। शरीर अचेतन रह गया। लक्ष्मणकू भ्राताकी मिथ्या मत्युके वचन रूप अग्निकरि जरा देखि दोनो देव व्याकुल भए। लक्ष्मणके जियायवेकू असमथ। तब विचारी याकी मृत्यु इस ही विधि कही हुती, मनविष अति पछताए। विषाद अर आश्चयके भरे अपने स्थानक गए। शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान ह चित्त जिनका। लक्ष्मणकी वह मनोहर मूर्ति मतक भई देव देखि न सके। तहा खडे न रहे, निंद्य ह उद्यम जिनका। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै ह—हे राजन! विना विचारे जे पापी काय कर तिनकू पश्चात्ताप ही होय। देवता गए। अर लक्ष्मणकी स्त्री पति कू अचेतनरूप देखि प्रसन्न करनेकू उद्यमी भई। कह ह, हे नाथ! किस अविवेकिनी सौभाग्यके गव-करि गर्वितने आपका मान न किया, सो उचित न करी। हे देव! आप प्रसन्न होवहु। तिहारी अप्र सन्नता हमकू दुखका कारण ह। ऐसा कहकरि वे परम प्रेमकी भरी लक्ष्मणके अगसू आलिंगनकरि पायन पडी। वे राणी चतुराईके वचन कहिवेविषै तत्पर कोईएक तो वीण लेय बजावती भई, कोई मृदग बजावती भई, पतिके गुण अत्यन्त मधुर स्वरसू गावती भई। पतिके प्रसन्न करिवेविष उद्यमी है चित्त जिनका। कोई एक पतिका मुख देख ह अर पतिके सुनिवेकी है अभिलाषा जिनके। कोई एक निर्मलस्नेहकी धरणहारी पतिके तनुसू लिपटकरि कुण्डलकरि मडित महासुन्दर कांतिके कपोलोकू

स्पर्शती भई। अर कोईएक मधुरभाषिणी पतिके चरणकमल अपने सिरपर मेलती भई। अर कोई मृगनयनी उन्मादकी भरी विभ्रमकरि कटाक्षरूप जे कमल पुष्प तिनका सेहरा रचती भई, जम्भाई लेती पतिका वदन निरखि अनेक चेष्टा करती भई।

या भांति ये उत्तम स्त्रियें पतिके प्रसन्न करिवेकू अनेक यत्न करें है, परन्तु उनके शरीरविषै निरर्थक भए। वे समस्त राणी लक्ष्मणकी स्त्री ऐसे कम्पायमान हैं जैसे कमलोंका वन पवनकरि कम्पायमान होय। नाथकी यह दशा होतें सतें स्त्रियोंका मन अतिव्याकुल भया। संशयकू प्राप्त भई कि क्षण मात्रमें यह क्या भया? चितवनमें न आवै अर कथनमें न आवै ऐसा खेदका कारण शोक, उसे मनमें धरकरि वे मुग्धा, मोहकी मारी पसर गईं। इन्द्रकी इन्द्राणी समान है चेष्टा जिनकी, ऐसी वे राणी तापकरि तप्तायमान सूख गईं। न जानिए तिनकी सुन्दरता कहां जाती रही? यह वृत्तांत भीतरके लोकोंके मुखसू सुनि श्रीरामचन्द्र मन्त्रियोंकरि मंडित महा सभ्रमके भरे भाईपै आए। भीतर राजलोकमें गए। लक्ष्मणका मुख प्रभातके चन्द्रमा समान मंदकांति देख्या। जैसा तत्कालका वृक्ष मूलसू उखड़ पडा होय तैसा भाईको देख्या। मनमें चितवते भये विनाकारण भाई आज मोसू रूस्या है। यह सदा आनन्द रूप आज क्यों विषादरूप होय रहा है? स्नेहके भरे शीघ्र ही भाईके निकट जाय ताकू उठाय उरसू लगाय मस्तक चूमते भए। दाहका मार्या जो वृक्ष उस समान हरिकू निरखि हलधर अंगसे लिपट गया। यद्यपि जीतव्यताके चिह्न रहित लक्ष्मणकू देख्या तथापि स्नेहके भरे राम उसे मूवा न जानते भए। वक्र होय गई है ग्रीवा जिसकी, शीतल होय गया है अंग जिसका, जगतकी आगल ऐसी भुजा सो शिथिल होय गई, सासोस्वास नाहीं, नेत्रोंकी पलक लगे न विघटे। लक्ष्मणकी यह अवस्था देखि राम खेदखिन्न होयकरि पसेवसू भर गए। यह दीनोंके नाथ राम दीन होय गए' बारम्बार मूर्छा खाय पड़े। आंसुवोंकरि भर गए है नेत्र जिनके, भाईके अंग निरखे। इसके एक नखकी भी रेखा न आई कि ऐसा यह महाबली कौन कारणकरि ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भया? यह विचार करते सतें

भया है कम्पायमान शरीर जिनका, यद्यपि आप सब विद्याके निधान, तथापि भाईके मोहकरि विद्या बिसर गई। मूर्छाका यत्न जान ऐसे वैद्य बुलाए। मन्त्र औषधिविषै प्रवीण, कलाके पारगामी ऐसे वैद्य आए सो जीवना होय तो कछु यत्न करें। वे माथा धुन नीचे होय रहे। तब राम निराश होय मूर्छा खाय पडे। जैसे वृक्षकी जड उखड जाय अर वृक्ष गिर पडे तैसे आप पडे। मोतियोके हार चंदनकरि मिश्रित जल ताडके बीजनावोकी पवनकरि रामकू सचेत किया। तब महाविह्वल होय विलाप करते भए—शोक अर विषादकरि महापीडित राम आसुवोके प्रवाहकरि अपना मुख आच्छादित करते भए। आसुवोकरि आच्छादित रामका मुख ऐसा भासै जैसा जलधाराकरि चन्द्रमा भासै। अत्यन्त विह्वल रामकू देखि सर्वराजलोकरूप समुद्रसू रुदनरूप ध्वनि होती भई। दुखरूप सागरविषै मग्न सकल स्त्रीजन अत्यर्थपणे रुदन करती भई। तिनके शब्दकरि दशोदिशा पूर्ण भई। कैसे विलाप करै हैं? हाय नाथ! पृथ्वीकू आनन्दके कारण सर्व सुन्दर हमकू वचनरूप दान देवहु। तुमने विना अर्थ क्यो मौन पकडी? हमारा अपराध क्या? विना अपराध हमकू क्यो तजो हो? तुम तो ऐसे दयालु हो जो अनेक चूक पडे तो क्षमा करो।

अथानन्तर इस प्रसंगविषै लव अंकुश परमविषादकू प्राप्त होय विचारते भए कि धिक्कार इस संसार असारकू। अर इस शरीर समान और क्षणभंगुर कौन? जो एक निमिष मात्रमें मरणकू प्राप्त होय। जो वासुदेव विद्याधरोकरि न जीत्या जाय सो भी कालके जालमें आय पड्या। इसलिए यह विनश्वर शरीर, यह विनश्वर राज्य सम्पदा उसकरि हमारे क्या सिद्धि? यह विचार सीताके पुत्र फिर गर्भमें आयवेका है भय जिनकू, पिताके चरणारविंदकू नमस्कारकरि महेन्द्रोदयनामा उद्यान विषै जाय अमृतेश्वर मुनिकी शरण लेय दोनो भाई महाभाग्य मुनि भए। जब इन दोनो भाइयोने दीक्षा धरी तब लोक अतिव्याकुल भए कि हमारा रक्षक कौन? रामकू भाई के मरणका बडा दुख सो शोकरूप भवरमें पडे। जिनकू पुत्र निकसनेकी कुछ सुधि नाहीं। रामकू राज्यसू पुत्रोसू प्रियाओसू

अपने प्राणसू लक्ष्मण अतिप्यारा। यह कर्मोंकी विचित्रता जिसकर ऐसे जीवोकी ऐसी अशुभ अवस्था होय। ऐसा ससार का चरित्र देखि ज्ञानी जीव वराग्यकू प्राप्त होय ह। जे उत्तम जन ह तिनके कछु इक निमित्त मात्र वाह्य कारण देखि अ तरग के विकारभाव दूर होय ज्ञानरूप सूयका उदय होय ह। पूर्वोपार्जित कर्मोका क्षयोपशम होय तब वराग्य उपज ह।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महापद्मपराण सस्कतग्रथ ताकी भाषावचनिकाविष लक्ष्मणका मरण अर लवणाकुशका वराग्य वणन वरनेवाला एकसौ पद्रहवा पव पण भया ॥११५॥

अथान तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कह ह–हे भव्योत्तम! लक्ष्मणके काल प्राप्त भए। समस्त लोक व्याकुल भए। अर युगप्रधान जे राम सो अति व्याकुल होय सब बातोसू रहित भए। कछु सुध नाही। लक्ष्मणका शरीर स्वभाव ही करि महासुरूप कोमल सुगध मतक भया तो जसेका तसा। सो श्रीराम लक्ष्मणकू एक क्षण न तजें। कबहू उरसें लगाय लेय, कभी पपोलें, कभी चूमें, कबहू इसे लेकर आप बठ जाव, कभी लेकर उठ चलें, एकक्षण काहूका विश्वास न कर, एकक्षण न तज। जसे बालकके हाथ अमत आव अर वह गाढा २ गह तसे राम महाप्रिय जो लक्ष्मण उसकू गाढा २ गह। अर दीनोको नाई विलाप कर। हाय भाई! यह तोहि कहा योग्य जो मुझे तजकरि तने अकले भाजिवेकी बुद्धि करी। म तेरा विरह एकक्षण सहारिव समथ नाहीं। यह बात तू कहा न जान ह? तू तो सब बातोविष प्रवीण ह। अब मोहि दुखके सागरविषै डारकरि ऐसी चेष्टा करै ह। हाय भात! यह क्या क्रूर उद्यम किया जो मेरे बिना जाने, मेरे बिना पूछे कूचका नगारा बजाय दिया। हे वत्स! हे बालक! एक बार मुझे वचनरूप अमत प्याय। तू जो अति विनयवान हुता, विना अपराध मोसू क्यो कोप किया? हे मनोहर! अब तक कभी मोसू ऐसा मान न किया, अब कछु और ही होय गया। कह म क्या किया, जो तू रूसा। तू सदा ऐसा विनय करता मुझे दूरसू देखि

उठ खडा होय, सन्मुख आवता, मोहि सिंहासन ऊपर बठावता, आप भूमिमें बठता। अब कहा दशा भई ? म अपना सिर तेरे पायनमें दू तो भी नहीं बोल ह। तेरे चरणकमल चन्द्रकात मणिसू अधिक ज्योतिकू धरे जे नखोकरि शोभित देव विद्याधर सेवै है। हे देव ! अब शीघ्र ही उठो। मेरे पुत्र वनकू गय, सो दूर न गय ह, तिनकू हम तुरत ही उलटा लावें। अर तुम विना यह तिहारी राणी आर्त्तध्यानकी भरी कुरचोकी नाईं कलकलाट कर हैं, तुम्हारे गुणरूप पाशसू बघी पृथ्वीमें लोटी फिर हैं। तिनके हार विखर गये है, अर शीशफूल चूडामणि कटिमेखला कर्णाभरण विखरे फिर हैं। यह महा विलापकरि रुदन कर हैं, अति आकुल हैं। इनकू रुदनसू क्यो न निवारो ? अब मैं तुम विना कहा करू कहा जाऊ ? ऐसा स्थानक नाहीं जहा मोहि विश्राम उपजे। अर यह तिहारा चक्र तुमसू अनुरक्त इसे तजना तुमकू कहा उचित ? अर तिहारे वियोगमें मोहि अकेला जानि यह शोकरूप शत्रु दबाव ह, अब म हीनपुण्य कहा करू ? मोहि अग्नि ऐसे न दह अर ऐसा विष कठकू न सोख जसा तिहारा विरह सोख ह अहो लक्ष्मीधर ! क्रोध तजि, घनी बेर भई। अर तुम ऐसे धर्मात्मा त्रिकालसामायिकके करणहारे, जिनराज की पूजामें निपुण, सो सामायिकका समय टल पूजा का समय टल्या। अब मुनिनिके आहार देयनेकी बेला है सो उठो। तुम सदा साधुनिके सेवक ऐसा प्रमाद क्यो करो हो ? अब यह सूय भी पश्चिम दिशाकू आया। कमल सरोवरमें मुद्रित होय गये तैसे तिहारे दशन विना लोकोके मन मुद्रित होय गये। या प्रकार विलाप करते २ दिन व्यतीत भया, निशा भई। तब राम सुन्दर सेज बिछाय भाईकू भजावोमें लेय सूते, किसी का विश्वास नाहीं। राम ने सब उद्यम तजि एक लक्ष्मणमें जीव, रात्रिकू कानोविषे कह है—हे देव ! अब तो म अकेला हू, तिहारे जीवकी बात मोहि कहो। तुम कौन कारण ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भये हो, तिहारा वदन चन्द्रमाहूत अतिमनोहर अब कातिरहित क्यो भास ह ? अर तिहारे नेत्र मद पवनकरि चचल जो नील कमल उस समान अब और रूप क्यो भास हैं ? अहो तुमकू कहा चाहिए सो ल्याऊं। हे लक्ष्मण !

ऐसी चेष्टा करनी तुमकू सोह नाहीं, जो मनविष होय सो मुखकरि आज्ञा करो। अथवा सीता तुम कू याव आई होय वह पतिव्रता अपने दुखविष सहाय थी सो तो अब परलोक गई, तुमकू खेद करना नाहीं। हे धीर! विषाद तजो। विद्याधर अपने शत्रु है सो छिद्र देख आए। अब अयोध्या लुटेगी तातै यत्न करना होय सो करो। अर हे मनोहर! तुम काहूसू क्रोध ही करते तब भी ऐसे अप्रसन्न देखे नाहीं, अब ऐसे अप्रसन्न क्यो भासो हो। हे वत्स! अब ये चेष्टा तजो, प्रसन्न होवो। मै तिहारे पायन परू हू, नमस्कार करू हू। तुम तो महा विनयवत हो। सकल पृथ्वीविष यह बात प्रसिद्ध है कि लक्ष्मण रामका आज्ञाकारी ह सदा सन्मुख ह, कभी पराङमुख नाहीं। तुम अतुल प्रकाश जगतके दीपक हो, मत कभी ऐसा होवे जो कालरूप वायुकरि बुझ जावो। हे राजनिके राजन्! तुमने या लोककू अति आनन्दरूप किया। तिहारे राज्यमें अचन किसीने न पाया। या भरतक्षेत्रके तुम नाथ हो। अब लोकनिकू अनाथकरि गमन करना उचित नाहीं। तुमने चक्रकरि शत्रुनिके सकल चक्र जीते अब कालचक्रका पराभव कसे सहो हो? तिहारा यह सुन्दर शरीर राज्यलक्ष्मीकरि जसा सोहता था, वसा ही मूछित भया सोह ह। हे राजेन्द्र! अब रात्रि भी पूण भई, सध्या फूली, सूय उदय होय गया। अब तुम निद्रा तजो। तुम जस ज्ञाता श्रीमुनिसुव्रतनाथके भक्त प्रभातका समय क्यो चूको हो। जो भगवान वीतरागदेव मोहरूप रात्रिकू हर लोकालोकका प्रकट करणहारा केवलज्ञानरूप प्रताप करते भए, वे त्रलोक्यके सूय भव्य जीवरूप कमलोकू प्रकट करणहारे तिनका शरण क्यो न सेवो? अर यद्यपि प्रभात समय भया परन्तु मुझे अधकार ही भास ह। क्योकि म तिहारा मुख प्रसन्न नाहीं देखू। तातै हे विचक्षण! अब निद्रा तजो, जिनपूजाकरि सभाविष तिष्ठो, सब सामत तिहारे दशनकू खडे ह। बडा आश्चय ह! सरोवरविषै कमल फूले, तिहारा वदनकमल म फूला नाहीं देखू हू। ऐसी विपरीत चेष्टा तुमने अब तक कभी भी नहीं करी। उठो, राज्यकार्यविषै चित्त लगावो। हे भ्रात! तिहारी दीघ निद्रासू जिनमन्दिरोकी सेवाविष कमी पडे ह, सम्पूण नगरविषै मगल शब्द मिट गए, गीत

नृत्यवादित्रादि बन्द हो गये हैं। औरोकी कहा बात ? जे महाविरक्त मुनिराज हैं तिनकूं भी तिहारी यह दशा सुनि उद्वेग उपजै है। तुम जिनधर्मके धारी हो, सब ही साधर्मीजन तिहारी शुभदशा चाहै है। वीण, बांसुरी, मृदंगादिकके शब्दरहित यह नगरी तिहारे वियोगकरि व्याकुल भई नहीं सोहै है। कोई अगिले भवमें महाअशुभ कर्म उपार्जे तिनके उदयकरि तुम सारिखे भाईकी अप्रसन्नतासूं महाकष्टकूं प्राप्त भया हूं। हे मनुष्योंके सूर्य ! जैसे युद्धविषै शक्तिके घावकरि अचेत होय गए थे अर आनन्दसूं उठे, मेरा दुख दूर किया, तैसे ही उठकरि मेरा खेद निवारो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै रामदेवका विलाप वर्णन करनेवाला एकसौ सोलहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११६ ॥

अथानन्तर यह वृत्तांत सुन विभीषण अपने पुत्रनिसहित अर विराधित सकल परिवार सहित अर सुग्रीव आदि विद्याधरनिके अधिपति अपनी स्त्रियोसहित शीघ्र अयोध्यापुरी आए। आंसुनिकरि भरे हैं नेत्र जिनके, हाथ जोडि सीस निवाय रामके समीप आए। महा शोकरूप है चित्त जिनके, अति विषादके भरे रामकूं प्रणामकरि भूमिविषै बैठे, क्षण एक तिष्ठकरि मंद २ वाणीकरि विनती करते भए–हे देव ! यद्यपि यह शोक दुर्निवार है तथापि आप जिनवाणीके ज्ञाता हो, सकल संसारका स्वरूप जानो हो, तातै आप शोक तजिवे योग्य हो। ऐसा कहि सबही चुप होय रहे। बहुरि विभीषण सब बातविषै महा विचक्षण सो कहता भया–हे महाराज ! यह अनादि कालकी रीति है कि जो जन्मा सो मूवा। सब संसारविषै यही रीति है, इनहीकूं नाहीं भई। जन्मका साथी मरण है। मृत्यु अवश्य है, काहूसूं न टरी अर न काहूसूं टरै। या संसार पिंजरेविषै पडे यह जीवरूप पक्षी सबही दुखी हैं, कालके वश है। मृत्युका उपाय नाहीं अर सबके उपाय है। यह देह निःसंदेह विनाशीक है। तातै शोक करना वृथा है। जे प्रवीण पुरुष हैं वे आत्मकल्याणका उपाय करै हैं। रुदन किएसूं मरा न जीवै अर न

वचनालाप कर । तात हे नाथ ! शोक न करो । यह मनुष्यनिके शरीर तो स्त्री पुरुषनिके सयोगसू उपजे ह, सो पानीके बुदबुदावत विलाय जाय । इसका आश्चय कहा ? अहमिंद्र इन्द्र लोकपाल आदि देव आयुके क्षयभए स्वगसू चये हं । जिनकी सागरोकी आयु अर किसीके मारे न मरें वे भी काल पाय मरें,मनुष्यनिकी कहा बात ? यह तो गभ के खेदकरि पीडित अर रोगनिकरि पूरण,डाभकी अणी के ऊपर जो ओसकी बू द आय पडे, उस समान पडनेकू सन्मुख हं, महा मलिन हाडोके पिंजरे ऐसे शरीर के रहिवेकी कहा आशा ? आप यह प्राणी अपने सुजनोका सोच कर सो आप क्या अजर अमर ह ? आप ही कालकी दाढमें बठे है उसका सोच क्यो न कर ? जो इनहोकी मत्यु आई होय, अर और अमर हैं तो रुदन करना । जब सबकी यही दशा ह तो रुदन काहेका ? जेते देहधारी हैं तेते सब कालके आधीन है । सिद्ध भगवानके देह नाहीं तात मरण नाहीं । यह देह जिस दिन उपज्या उसही दिनसू काल इसके लेयवेके उद्यममे ह । यह सब ससारी जीवोकी रीति ह । तात सतोष अगीकार करो । इष्टके वियोगसू शोक कर सो वथा ह । शोककरि मर तो भी वह वस्तु पीछी न आव । तात शोक क्यो करिये । देखो काल तो वजदण्ड लिए सिरपर खडा ह, अर ससारी जीव निभय भये तिष्ठ ह । जस सिंह तो शिर पर खडचा ह अर हिरण हरा तण चर ह । त्रलोक्यनाथ परमेष्ठी, अर सिद्ध परमेश्वर तिन सिवाय कोई तीन लोकविषै मत्युसू बच्या सुण्या नाहीं । वे ही अमर ह, अर सब जन्म मरण करै है । यह ससार विध्याचलके वन समान कालरूप दावानल समान बल ह । सो तुम क्या न देखो हो ? यह जीव ससार वनमें भ्रमणकरि अति कष्टसू मनुष्य देह पाव है सो वथा खोव ह, काम भोगके अभिलाषी होय माते हाथीकी न्याई बधनविष पडे ह, नरक निगोदके दुख भोगवे ह । कभीयक व्यवहार धमकरि स्वगविष देव भी होय ह, आयुके अन्तमें वहासू पडे हैं । जसे नदीके ढाहेका वक्ष कभी उखडे ही तैसें चारोगतिके शरीर मत्युरूप नदीके ढाहेके वक्ष हैं । इनके उखडिवेका क्या आश्चय है ? इन्द्र, धरणेंद्र, चक्रवर्ती आदि अनन्तनाशकू प्राप्त भए । जसे मेघकरि दावानल बुझै तसे शातिरूप मेघकरि

कालरूप दावानल बुझै, और उपाय नाहीं। पातालविषै, भूतलविषै अर स्वर्गविषै ऐसा कोई स्थान नाहीं जहां कालसूं बचै। अर छठे कालके अन्त इस भरतक्षेत्रमें प्रलय होयगी, पहाड विलय हो जावेंगे तो मनुष्यनिकी कहा बात? जे भगवान तीर्थंकर देव, वज्रवृषभ नाराचसंहननके धारक, जिनके समचतुरस्रसंस्थानक, सुर असुर नरोंकरि पूज्य, जो किसी कर जीते न जाय, तिनका भी शरीर अनित्य, वे भी देह तजि सिद्धलोकविषै निज भावरूप रहै तो औरोंकी देह कैसें नित्य होय? सुर, नर नारक तिर्यंचोंका शरीर केलेके गर्भ समान असार है। जीव तो देहका यत्न करै है, अर काल प्राण हरै है। जैसें बिलके भीतरसूं गरुड सर्पकूं ले जाय तैसें देहके भीतरसूं काल ले जाय है। यह प्राणी अनेक मूवोंकूं रोवै है—हाय भाई! हाय पुत्र! हाय मित्र! या भांति शोक करै है। अर कालरूप सर्प सबोंकूं निगलै है। जैसे सर्प मींडककूं निगलै। यह मूढ बुद्धि झूठे विकल्प करे है—यह मैं किया, यह मैं करूं हूं, यह करूंगा। सो ऐसे विकल्प करता कालके मुखविषै जाय है, जैसें टूटा जहाज समुद्रके तले जाये। परलोककूं गया जो सज्जन उसके लार कोई जाय सकै तो इष्टका वियोग कभी न होय। जो शरीरादिक पर वस्तुसूं स्नेह करें हैं सो क्लेशरूप अग्निविषै प्रवेश करें हैं। अर इन जीवोंके इस संसारविषै एते स्वजनोंके समूह भए जिसकी संख्या नाहीं, जें समुद्रकी रेणुकाके कण तिनसूं भी अपार है। अर निश्चयकरि देखिये तो या जीवके न कोई शत्रु है, न कोई मित्र है। शत्रु तो रागादिक हैं, अर मित्र ज्ञानादिक हैं। जिनकूं अनेक प्रकारकरि लडाईये, अर निज जानिए सो भी वैरकूं प्राप्त भया मगर महा रोषकरि हणे, जिसके स्तनोंका दुग्ध पाया, जिसकरि शरीर वृद्ध भया, ऐसी माताकूं भी हनै है। धिक्कार है इस संसारकी चेष्टाकूं जो पहिले स्वामी था, अर बार बार नमस्कार करावता सो भी दास होय जाय है, तब पावोंकी लातोंसूं मारिये है। हे प्रभो! मोहकी शक्ति देखो इसके वश भया यह जीव आपकूं नहीं जानै है, परकूं आप मानै है। जैसे कोई हाथकरि कारे नागकूं गहै तैसे कनक कामिनीकूं गहै है। इस लोकाकाशविषै ऐसा तिलमात्र क्षेत्र नाहीं जहां जीवने जन्म मरण न किए।

अर नरकविषै इसकू प्रज्ज्वलित ताम्बा प्याया । अर एतीबार यह नरककू गया जो उसका प्रज्ज्वलित ताम्रपान जोडिये तो समुद्रके जलसू अधिक होय । अर सूकर कूकर गदभ होय इस जीवने एता मलका आहार किया जो अनन्त जन्मका जोडिये तो हजारा विंध्याचलकी राशिसू अधिक होय । अर या अज्ञानी जीवने क्रोधके वशसू एते पराए शिर छेदे अर उन्होने इसके छेदे जो एकत्र करिए तो ज्योतिषचक्रकू उलघकरि अधिक होवे । जीव नरक प्राप्त भया वहा अधिक दुख पाय निगोद गया । वहा अनन्तकाल जन्म मरण किए । यह कथा सुनकरि कौन मित्रसू मोह मानै ? एक निमिषमात्र विषय का सुख उसके अर्थ कौन अपार दुःख सहै ? यह जीव मोहरूप पिशाचके वश पडचा ससार वनविषै भटकै है । हे श्रेणिक ! विभीषण रामसू कहै है हे प्रभो ! यह लक्ष्मणका मतक शरीर तजिवे योग्य है, अर शोक करना योग्य नाहीं । यह कलेवर उरसू लगाय रहना योग्य नाही । या भाति विद्याधरनिका सूय जो विभीषण उसने श्रीरामसू विनती करी अर राम महाविवेकी, जिनसू और प्रतिबुद्ध होय, तथापि मोहके योगसू लक्ष्मणकी मूर्तिकू न तजी । जैसे विनयवान गुरुकी आज्ञा न तजै ।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण सस्कत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै लक्ष्मणका वियोग रामका विलाप अर विभीषणका समारस्वरूप वर्णन करनेवाला एकसौ सत्रहवा पर्व पूर्ण भया ॥ ११७॥

अथानन्तर सुग्रीवादिक सब राजा रामचन्द्रसू विनती करते भए—अब वासुदेवकी दग्ध क्रिया करो । तब श्रीरामकू यह वचन अतिअनिष्ट लगा अर क्रोधकरि कहते भए—तुम अपने माता पिता पुत्र, पौत्र सबो की दग्धक्रिया करो, मेरे भाई की दग्धक्रिया क्यो होय ? जो तुम्हारा पापियोका मित्र बधु कुटुम्ब सो सब नाशकू प्राप्त होय । मेरा भाई क्यो मरै ? उठो लक्ष्मण ! इन दुष्टनिके सयोगतै और ठौर चलें, जहा इन पापीनिके कटुवचन न सुनिये । ऐसा कहि भाईकू उरसू लगाय काधे धरि, उठ चले । विभीषण सुग्रीवादिक अनेक राजा इनकी लार पीछे २ चले आवें । राम काहूका विश्वास न करै । भाईकू काधे

धरे फिरैं। जैसैं बालकके हाथ विषफल आया अर हितू छुडाया चाहै, वह न छोडे, तैसैं राम लक्ष्मणके शरीरकूं न छोडे। आसुनिकरि भीज रहे है नेत्र जिनके, भाईसूं कहते भए हे भ्राता! अब उठो, बहुत वेर भई, ऐसे कहा सोवो हो? अब स्नानकी बेला भई। स्नानके सिंहासन विराजो। ऐसा कहि मतक शरीरकूं स्नानके सिंहासन पर बठाया। अर मोहका भरचा राम मणि स्वणके कलशोसूं स्नान करावता भया। अर मुकुट आदि सब आभूषण पहिराये। अर भोजनकी तयारी कराई सेवकोंकूं कही नानाप्रकार रत्न स्वणके भाजनमें नानाप्रकारका भोजन ल्यावो उसकरि भाईका शरीर पुष्ट होय। सुन्दर भात, दाल, फुलका नानाप्रकारके व्यजन नाना प्रकारके रस शीघ्रही ल्यावो। यह आज्ञा पाय सेवक सब सामग्रीकरि ल्याये, नाथके आज्ञाकारी। तब आप रघुनाथ लक्ष्मणके मुखमें ग्रास देवें सो न ग्रसै, जसे अभव्य जिनराजका उपदेश न ग्रहै। तब आप कहते भए जो तैंने मोसूं कोप किया तो आहारसूं कहा कोप? आहार तो करो, मोसूं मति बोलो। जसैं जिनवाणी अमतरूप है परन्तु दीघ ससारीकूं न रुचै, तसे वह अमतमई आहार लक्ष्मणके मृतक शरीरकूं न रुच्या। बहुरि रामचन्द्र कहै है—हे लक्ष्मीधर! यह नानाप्रकारकी दुग्धादि पीवने योग्य वस्तु सो पीवो। ऐसा कहकरि भाईकूं दुग्धादि प्याया चाहैं सो कहा पीवे? यह कथा गौतमस्वामी श्रेणिकसूं कहै है। वह विवेकी राम स्नेह-करि जीवतेकी सेवा करिये तसैं मतक भाईकी करता भया। अर नानाप्रकारके मनोहर गीत, वीण, बासुरी आदि नानाप्रकारके नाद करता भया। सो मृतककूं कहा रुचै? मानो मरा हुवा लक्ष्मण राम का सग न तजता भया। भाईकूं चन्दनसूं चर्चा भुजावोसूं उठाय लेय, उरसूं लगाय लेय, सिर चूम्ब, मुख चूम्बै, हाथ चूम्ब, अर कहै है—हे लक्ष्मण! यह क्या भया? तू तो ऐसा कभी न सोवता, अब तो विशेष सोवने लगा। अब निद्रा तजो। या भांति स्नेहरूप ग्रहका ग्रहा बलदेव नानाप्रकारकी चेष्टा करैं। यह वृत्तांत सब पृथ्वीमें प्रकट भया कि लक्ष्मण मूवा, लव अकुश मुनि भये, अर राम मोहका मारचा मूढ होय रहा है। तब बैरी क्षोभकूं प्राप्त भए, जैसैं वर्षाऋतुका समय पाय मेघ गाजै। शबूक

का भाई सु दर इसका न दन विरोधरूप ह चित्त जिसका, सो इ द्रजीतके पुत्र वज्रमालीप आया, अर कहा मेरा बाबा अर दादा दोनो लक्ष्मणन मारे सो मेरा रघुवशिनिसू वर ह। अर हमारा पाताल लकाका राज्य खोस लिया, अर विराधितकू दिया, अर वानरवशियोका शिरोमणि सुग्रीव स्वामीद्रोही होय रामसू मिला, सो राम समुद्र उल्लघ लका आए, राक्षसद्वीप उजाड्या। रामकू सीताका अति दु ख, सो लका लेयवेका अभिलाषी भया। अर सिहवाहिनी अर गरुडवाहिनी दोय महाविद्या राम लक्ष्मणकू प्राप्त भई तिनकरि इ द्रजीत कुम्भकण बदीमे किए। अर लक्ष्मणके चक्र हाथ आया। उसकरि रावणकू हत्या। अब कालचक्रकरि लक्ष्मण मूवा सो वानरवशियोकी पक्ष टूटी, वानरवशी लक्ष्मणकी भुजावोके आश्रयसू उन्मत्त होय रहे थे। अब क्या करेंगे, वे निरपक्ष भए। अर रामकू ग्यारह पक्ष हो चुके, बारहमा पक्ष लगा ह, सो गहला होय रहा ह। भाईके मृतक शरीरकू लिए फिर ह। ऐसा मोह कौनकू होय ? यद्यपि राम समान योधा पथ्वीमे और नाहीं, वह हल मूसलका धरणहारा अद्वितीय मल्ल ह, तथापि भाईके शोकरूप कीचमे फस्या निकसवे समथ नाहीं। सो अब रामसू वर भाव लेनेका दाव ह। जिसके भाईने हमार वशके बहुत मारे। शम्बूकके भाईके पुत्रने इन्द्रजीतके बेटेकू यह कह्या सो क्रोधकरि प्रज्ज्वलित भया, मन्त्रियोकू आज्ञा देय रणभेरी दिवाय सेना भेलीकर शम्बूकके भाईके पुत्रसहित अयोध्याकी ओर चाल्या। सेनारूप समुद्रकू लिए प्रथम तो सुग्रीवपर कोप किया कि सुग्रीवकू मार अथवा पकड उसके देश खोसलें। बहुरि रामसू लडें। यह विचार इन्द्रजीत के पुत्र वज्रमालीने किया। सुन्दरके पुत्र सहित चढ्या। तब ये समाचार सुनकरि सब विद्याधर जे रामके सेवक थे वे रामचन्द्रके निकट अयोध्यामे आय भेल भए। जसी भीड अयोध्यामे अकुशके आयवे के दिन भई थी तसी भई। बरियोकी सेना अयोध्याके समीप आई सनकरि रामचन्द्र लक्ष्मणकू काधे लिए ही धनुष बाण हाथविष सम्हारे, विद्याधरनिकू सग लेय आप बाहिर निकसे। उस समय कृतातवक्रका जीव अर जटायु पक्षीका जीव चौथे स्वग देव भए थे तिनके आसन कम्पायमान भए।

कृतातवक्रका जीव स्वामी, अर जटायु पक्षी का जीव सेवक। सो कतातवक्रका जीव जटायु के जीवसू कहता भया—हे मित्र ! आज तुम क्रोधरूप क्यो भए हो ? तब वह कहता भया—जब मै गृध्रपक्षी था तो रामने मुझे प्यारे पुत्रकी न्याई पाल्या, अर जिनधम का उपदेश दिया। मरणसमय नमोकार मन्त्र दिया। उसकरि म देव भया। अब वह तो भाईके शोककरि तप्तायमान है अर शत्रु की सेना उस पर आई है। तब कृतातवक्र का जीव जो दव था उसने अवधि जोडकरि कही—हे मित्र ! मेरा वह स्वामी था। मैं उसका सेनापति था। मुझे बहुत लडाया, भात पुत्रोसू भी अधिक गिण्या,अर मेरे उनके वचन ह,जब तुमकू खेद उपजेगा तब तिहारे पास म आऊगा। सो ऐसा परस्पर कहकरि वे दोनो देव चौथे स्वगके वासी सुन्दर आभूषण पहिरे, मनोहर हैं केश जिनके, सो अयोध्याकी ओर आए। दोनो विच-क्षण, परस्पर दोनो बतलाए। कतातवक्रके जीवने जटायुके जीवसू कहा—तुम तो शत्रुओ की सेना की ओर जावो, उनकी बुद्धि हरो। अर म रघुनाथके समीप जाऊ हू। तब जटायुका जीव शत्रुओ की ओर गया। कामदेव का रूपकरि उनकू मोहित किया। अर उनकू ऐसी माया दिखाई जो अयोध्या के आगे अर पीछे दुगम पहाड पडे है, अर अयोध्या काहूसू जीती न जाय। यह कौशलीपुरी सुभटो करि भरी ह। कोट आकाश लग रहे ह। अर नगर के बाहिर भीतर देव विद्याधर भरे हैं। हमने न जानी जो यह नगरी महा विषम ह। धरतीविष देखिए तो आकाशमें देखिए तो देव विद्याधर भर रहे ह। अब कौन प्रकार हमारे प्राण बचें ? कसे जीवते घर जावें ? जहा श्रीरामदेव विराजे सो नगरी हमसू कैसे लई जाय ? ऐसी विक्रियाशक्ति विद्याधरनिविष कहा ? हम बिना विचारे ये काम किया। जो पटबीजना सूयसू वर विचार तो क्या कर सक। अब जो भागो तो कौन राह होयकरि भागो, माग नाहीं। या भाति परस्पर वार्ता करि कापने लगे। समस्त शत्रुओकी सेना विह्वल भई। तब जटायुके जीवने देव विक्रियाकी क्रीडा कर उनकू दक्षिणकी ओर भागनेका माग दिया। वे सब प्राण रहित होय कापते भागे जसे सिचान आगे पर वे भागें। आगे जायकरि इन्द्रजीतके पुत्रने विचारी जो

हम विभीषणकू कहा उत्तर देंगे । अर लोकोकू क्या मुख दिखावेंगे ? ऐसा विचार लज्जावान होय सुन्दरके पुत्र चारो रत्नसहित अर विद्याधरनि सहित इन्द्रजीतके पुत्र वज्रमाली रतिवेग नामा मुनि के निकट मुनि भए, तब यह जटायुका जीव देव उन साधुओका दर्शनकरि अपना सकल वृत्तात कहि क्षमा कराय अयोध्या आया, जहा राम भाईके शोककरि बालककीसी चेष्टा कर रहे ह । तिनके सबोधिवेके अर्थ वे दोनो देव चेष्टा करते भए । कृतातवक्रका जीव तो सूखे वृक्षकू सींचने लगा, अर जटायु का जीव मृतक बल युगल तिनकरि हल बाहवेका उद्यमी भया, अर शिला ऊपर बीज बोने लगा । सो ये भी दृष्टान्त रामके मनमें न आया । बहुरि कृतातवक्रका जीव रामके आगे जलकू घृत के अर्थ विलोवता भया अर जटायुका जीव बालू रेतकू घानीमें तेलके निमित्त पेलता भया । सो इन दृष्टातनिकरि रामकू प्रतिबोध न भया । और भी अनेक कार्य इसी भांति देवोने किए । तब रामने पूछी तुम बडे मूढ हो, सूखा वृक्ष सींचा सो कहा ? अर मूवे बलोसू हल बाहना करो सो कहा । अर शिला ऊपर बीज बोवना सो कहा । अर जलका विलोवना अर बालूका पेलना इत्यादि कार्य तुम किए सो कौन अर्थ ? तब वे दोनो कहते भए तुम भाईके मृतक शरीरकू वृथा लिए फिरोहो उसविषे क्या ? यह वचन सुनकरि लक्ष्मणकू गाढा उरसू लगाय पृथ्वी का पति जो राम सो क्रोधकरि उनसू कहता भया—हे कुबुद्धि हो । मेरा भाई पुरुषोत्तम उसे अमगल के शब्द क्यो कहो हो ? ऐसे शब्द बोलते तुमकू दोष उपजेगा । या भाति कृतातवक्रके जीवके और रामके विवाद होय ह । उसही समय जटायु का जीव मूवे मनुष्यका कलेवर लेय रामके आगे आया । उसे देख राम बोले मरेका कलेवर काहेकू काधे लिए फिरोहो ? तब उसने कही तुम प्रवीण होय प्राणरहित लक्ष्मणके शरीरकू क्यो लिए फिरो हो ? पराया अणुमात्र भी दोष देखो हो, अर अपना मेरु प्रमाण दोष नाहीं देखो हो । सारिखेकी सारिखेसू प्रीति होय ह । सो तुमकू मूढ देखि हमारे अधिक प्रीति उपजी है । हम वृथा कार्यके करणहारे तिनविषै तुम मुख्य हो । हम उन्मत्तताकी ध्वजा लिए फिरे ह, सो तुमकू अति उन्मत्त देखि तुम्हारे

निकट आए हैं।

या भांति उन दोनो मित्रोके वचन सुनि राम मोहरहित भया। शास्त्रनिके वचन चितार सचेत भए जैसे सूर्य मेघपटलसूं निकसि अपनी किरणकरि दैदीप्यमान भासै, तैसे भरतक्षेत्रका पति राम सोई भया भानु, सो मोहरूप मेघपटलसूं निकसि, ज्ञानरूप किरणनिकरि भासता भया, जैसे शरदऋतुमें कारी घटासूं रहित आकाश निर्मल सोहै तैसे रामका मन शोकरूप कर्दमसूं रहित निर्मल भासता भया। राम समस्त शास्त्रनिमें प्रवीण, अमृत समान जिनवचन चितार खेदरहित भए। धीरता के अवलंबनकरि ऐसें सोहै जैसा भगवानका जन्माभिषेकविषै सुमेरु सोहै। जैसे महा दाह की शीतल पवन के स्पर्शसूं रहित कमलोका वन सोहै, अर फूल तैसै शोकरूप कलुषतारहित रामका चित्त विकसता भया। जैसे कोई रात्रिके अन्धकारमें मार्गभूल गया था अर सूर्यके उदयके भए मार्ग पाय प्रसन्न होय महाक्षुधाकरि पीडित मन वांछित भोजन खाय अत्यन्त आनन्दकूं प्राप्त होय,अर जैसे कोई समुद्रके तिरिवेका अभिलाषी जहाजकूं पाय हर्षरूप होय, अर वनमें मार्ग भूल नगरका मार्ग पाय खुशी होय, अर तृषाकरि पीडित महा सरोवरकूं पाय सुखी होय, रोगकरि पीडित रोग हरण औषधकूं पाय अत्यन्त आनन्दकूं पावै, अर अपने देश गया चाहै अर साथी देखि प्रसन्न होय, अर बंदीगृहसूं छूटया चाहै, अर बेडी कटै जैसे हर्षित होय तैसे रामचन्द्र प्रतिबोधकूं पाय प्रसन्न भए। प्रफुल्लित भया है हृदयकमल जिनका परम कांतिकूं धारते, आपकूं संसार अंधकूपसूं निकस्या मानते भए। मनमें जानी मैं नया जन्म पाया। श्रीराम विचारै हैं अहो डाभकी अणीपर पडी ओसकी बूंद ता समान चंचल मनुष्यका जीतव्य एक क्षणमात्रमें नाशकूं प्राप्त होय है। चतुर्गति संसारमें भ्रमण करते मैं अत्यन्त कष्टसूं मनुष्य शरीरकूं पाया सो वृथा खोया। कौनके पुत्र, कौन का परिवार, कौनका धन,कौनकी स्त्री? या संसारमें या जीवने अनन्त सम्बन्धी पाये। एक ज्ञान दुर्लभ है। या भांति श्रीराम प्रतिबुद्ध भए। तब वे दोनो देव अपनी माया दूरकरि लोकोकूं आश्चर्यकी करणहारी स्वर्ग की विभूति प्रकट दिखा-

वते भए। शीतलमंद सुगंधपवन बाजी अर आकाशमें देवोंके विमानही विमान होय गए, अर देवांगना गावती भई, बीण, बांसरी, मृदंगादि बाजते भए। वे दोनो देव रामसूं पूछते भए—आप इतने दिवस राज्य किया सो सुख पाया? तब राम कहते भए, राज्यविषै काहेका सुख? जहां अनेक व्याधि हैं। जो याहि तजि मुनि भए वे सुखी। अर मैं तुमकूं पूछूं हूं तुम महा सौम्य वदन कौन हो, अर कौन कारण करि मोसूं इतना हित जनाया। तब जटायुका जीव कहता भया—हे प्रभो! मैं वह गृद्ध पक्षी हूं। आप मुनिनकूं आहार दिया वहां मैं प्रतिबुद्ध भया। अर आप मोहि निकट राख्या, पुत्रकी न्याईं पाल्या अर लक्ष्मण सीता मोसूं अधिक कृपा करते। सीता हरी गई तादिन मैं रावणसूं युद्धकरि कण्ठगत प्राण भया। आपने आय मोहि पंचनमोकारमंत्र दिया, सो मैं तिहारे प्रसादकरि चौथे स्वर्ग देव भया। स्वर्गके सुखकरि मोहित भया, अबतक आपके निकट न आया। अब अवधिज्ञानकरि तुमकूं लक्ष्मण के शोककरि व्याकुल जान तिहारे निकट आया हूं। अर कृतांतवक्रके जीवने कही—हे नाथ! मैं कृतांतवक्र आपका सेनापति हुता। आप मोहि भ्रात पुत्रनितेंहू अधिक जान्या। अर वैराग्य होते मोहि आप आज्ञा करीहुती जो देव होवो तो हमकूं कबहूं चिन्ता उपजै तब चितारियो। सो आपके लक्ष्मणके मरण की चिन्ता जानि हम तुमपै आए। तब राम दोनो देवनिसूं कहते भए—तुम मेरे परममित्र हो। महा प्रभावके धारक चौथे स्वर्गके महाऋद्धिधारी देव मेरे संबोधिवेकूं आए। तुमकूं यही योग्य। ऐसा कहकरि रामने लक्ष्मणके शोकसूं रहित होय लक्ष्मणके शरीरकूं सरयू नदीके दाहे दग्ध किया। श्री राम आत्मभावके ज्ञाता धर्मकी मर्यादा पालनेके अर्थ शत्रुघ्न भाईकूं कहते भए—हे शत्रुघ्न! मैं मुनिके व्रतधारि सिद्धपदकूं प्राप्त हुआ चाहूं हूं। तू पृथ्वी का राज्य करि। तब शत्रुघ्न कहते भए हे देव! मैं भोगनिका लोभी नाहीं जाकै राग होय सो राज्य करै। मैं तिहारे संग जिनराजके व्रत धारूंगा, अन्य अभिलाषा नाहीं है। मनुष्यनिके शत्रु ये काम भोग मित्र बांधव जीतव्य इनसूं कौन तृप्त भया? कोई ही तृप्त न भया। तातैं इन सर्वानका त्याग ही जीवकूं कल्याणकारी है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै लक्ष्मणकी दग्धक्रिया अर मित्रन्देवनिका आगमन वर्णन करने वाला एकसौ अठारहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११८ ॥

अथानन्तर श्रीरामचन्द्र ने शत्रुघ्न के वैराग्यरूप वचन सुनि ताहि निश्चयसूं राज्यसूं पराङमुख जानि क्षणएक विचारि अनंग लवणके पुत्रकूं राज्य दिया। सो पिता तुल्य गुणनिकी खानि, कुलकी धुराका धरणहारा, नमस्कार करै हैं समस्त सामंत जाकूं, सो राज्यविषै तिष्ठया। प्रजा का अति अनुराग है जासूं। महा प्रतापी पृथ्वीविषै आज्ञा प्रवर्तावता भया। अर विभीषण लंकाका राज्य अपने पुत्र सुभूषणकूं देय वैराग्यकूं उद्यमी भया। अर सुग्रीवहू अपना राज्य अंगदकूं देयकरि संसार शरीर भोगसूं उदास भया। ये सब राम के मित्र रामकी लार भवसागर तरिवेकूं उद्यमी भए। राजा दशरथका पुत्र राम भरतचक्रवर्तीकी न्याई राज्यका भार तजता भया। कैसा है राम? विषसहित अन्न समान जान विषय सुख जाने, अर कुलटा स्त्री समान जानी है समस्त विभूति जाने। एक कल्याण का कारण मुनिनिके सेयवे योग्य, सुर असुरोंकरि पूज्य श्री मुनिसुव्रतनाथका भाख्या मार्ग ताहि उरविषै धारता भया। जन्म मरणके भयसूं कम्पायमान भया है हृदय जाका, ढीले किए हैं कर्मबंध जाने, धोय डाले हैं रागादिक कलंक जाने, महावैराग्यरूप चित्त है जाका। क्लेशभावसूं निवृत्त जैसा मेघपटलसूं रहित भानु भासै तैसा भासता भया। मुनिव्रत धारिवेका है अभिप्राय जाके। ता समय अरहदास सेठ आया। तब ताहि श्रीराम चतुर्विधसंघकी कुशल पूछते भए। तब वह कहता भया—हे देव! तिहारे कष्टकरि मुनिनकाहू मन अनिष्टसंयोगकूं प्राप्त भया। ये बात करै है अर खबर आई है कि मुनिसुव्रतनाथके वंश में उपजे चार ऋद्धिके धारक स्वामी सुव्रत, महाव्रतके धारक, कामक्रोध के नाशक आए हैं। यह वार्ता सुनकरि महाआनन्दके भरे राम, रोमांच होयगया है शरीर जिनका, फूल गए हैं नेत्रकमल जिनके, अनेक भूचर खेचर नृपनिसहित जैसे प्रथम बलभद्र विजय स्वर्णकुम्भ स्वामी

के समीप जाय मुनि भए हुते तस मुनि होनेकू सुव्रतमुनि के निकट गये। ते महा श्रेष्ठगुणो क धारक, हजारो मुनि मान ह आज्ञा जिनकी, तिनप जाय प्रदक्षिणा देय हाथ जोडि सिरनवाय नमस्कार किया। साक्षात मुक्तिके कारण महामुनि तिनका दशन करि अमतके सागरविष मग्न भए। परमश्रद्धाकरि मुनिराजत रामचन्द्रने जिनचन्द्रकी दीक्षा धारिवेकी विनती करी। हे योगीश्वरनिके इन्द्र! म भव प्रपचसू विरक्त भया तिहारी शरण ग्रहा चाहू हू। तिहारे प्रसादसू योगीश्वरनिके मागविष विहार करू। या भाति रामने प्राथना करी। कसे ह राम? धोये ह समस्त रागद्वेषादिक कलक जिन्होने। तब मुनींद्र कहते भए--हे नरेन्द्र! तुम या बात के योग्य ही हो, यह ससार कहा पदाथ है? यह तज-करि तुम जिनधम रूप समुद्रका अवगाह करो। यह माग अनादिसिद्ध बाधारहित अविनाशी सुख का देनहारा तुमसे बुद्धिमान ही आदर। एसा मुनिने कहा तब राम ससारसू विरक्त महा प्रवीण, जस सूय सुमेरुकी प्रदक्षिणा कर तसें मुनीन्द्रकी प्रदक्षिणा करते भए। उपज्या ह महाज्ञान जिनकू, वराग्य रूप वस्त्र पहिरे, बाधी ह कर्मोंके नाशकू कमर जिन्होने, आशारूप पाश तोडि, स्नेहका पींजरा दग्ध-करि, स्त्रीरूप बधनसू छूटि, मोह का मान मारि,हार कुण्डल मुकुट केयूर कटिमेखलादि सव आभूषण डारि, तत्काल वस्त्र तजे। परम तत्त्वविष लगाह मन जिनका,वस्त्राभरण यू तजे ज्यो शरीर तजिए। महासुकुमार अपने कर तिनकरि केशलोच किए। पदमासन धरि विराजे। शीलक मन्दिर अष्टम बल-भद्र समस्त परिग्रहकू तजकरि एस सोहते भए जसा राहुसू रहित सूय सोह। पचमहाव्रत आदरे। पचसमिति अगीकार करि तीन गुप्तिरूप गढविष विराजे। मनोदण्ड, वचनदण्ड, कायदण्डके दूर करण हारे, षटकायके मित्र सप्त भयरहित, आठ कर्मोंके रिपु,नवधा ब्रह्मचयके धारक,श्रीवत्स लक्षणकरि शोभित ह उरस्थल जिनका, गुणभूषण, सकलदूषणरहित, तत्त्वज्ञानविष दढ, रामचन्द्र महामुनि भए। देवनिने पचाश्चय किए। सुन्दर दुदुभी बाजे। अर दोनो देव कृतातवक्रका जीव अर एक जटायुका जीव तिनने परम उत्साह किए। जब पृथ्वीका पति राम पथ्वीकू तजि निकस्या तब भूमिगोचरी विद्या-

धर सब ही राजा आश्चयकू प्राप्त भए। अर विचारते भए जो ऐसी विभूति, ऐसे रत्न, यह प्रताप तजकरि रामदव मुनि भए तो और हमारे कहा परिग्रह, जाके लोभत घरमें तिष्ठ। वृत विना हम एते दिन योंही खोए। ऐसा विचारकरि अनेक राजा गृहबधनसू निकसे। अर रागमई पाशी काटि द्वेषरूप वरीकू विनाशि सव परिग्रहका त्यागकरि भाई शत्रुघ्न मुनि भए। अर विभीषण, सुग्रीव, नील, नल, चन्द्रनख, विराधित इत्यादि अनेक राजा मुनि भए। विद्याधर सर्व विद्याका त्यागकरि ब्रह्म-विद्याकू प्राप्त भए। कई एकनिकू चारणऋद्धि उपजी। या भाति रामके वराग्य भए सोलह हजार कछु अधिक महीपति मुनि भए। अर सत्ताईस हजार राणी श्रीमती आर्यिकाके समीप आर्यिका भई।

अथानन्तर श्रीराम गुरुकी आज्ञा लेय एकविहारी भए। तजे ह समस्त विकल्प जिन्होने गिरिनि-की गुफा अर गिरिनिके शिखर अर विषम वन जिनविष दुष्टजीव विचरें वहा श्रीराम जिनकल्पी होय ध्यान धरते भए। अवधिज्ञान उपज्या। जाकरि परमाणुपर्यंत देखते भए। अर जगतके पदाथ सकल भासे। लक्ष्मणके अनेक भव जाने, मोह का सम्बन्ध नाहीं, तात मन ममत्वकू न प्राप्त होता भया। अब रामकी आयुका व्याख्यान सुनो। कौमार कालवष सौ १००, मडलीक पव वष तीन सौ ३००, दिग्विजय वष चालीस ४०, अर ग्यारह हजार पाच सौ साठ वष ११५६० तीन खडका राज्यकरि बहुरि मुनि भए। लक्ष्मणका मरण याही भांति था। देवनिका दोष नाहीं। अर भाईके मरण निमित्तत रामके वराग्य का उदय था। अवधिज्ञानके प्रतापकरि रामने अपने अनेक भव जाने। महा धीयकू धरे वृत शीलके पहाड, शुक्ल लेश्याकरि युक्त, महा गम्भीर गुणनि के सागर, समाधान चित्त, मोक्ष लक्ष्मीविष तत्पर, शुद्धोपयोगके मार्गविषै प्रवरते। सो गौतमस्वामी राजा श्रेणिक आदि सकल श्रोताओ सू कह ह जसे रामचन्द्र जिनेन्द्रके मार्गविष प्रवर्ते तसै तुमहू प्रवरतो, अपनी शक्ति प्रमाण महा भक्ति-करि जिनशासनविष तत्पर होवो। जिन नामके अक्षर महारत्नोकू पायकरि हो प्राणी हो! खोटा आच रण तजहु। दुराचार महादुःख का दाता ह, खोटे ग्रथनिकरि मोहित है आत्मा जिनका, अर पाखण्ड

क्रियाकरि मलिन है चित्त जिनका, वे कल्याणके मार्गकू तजि जन्मके आधे की न्याई खोटे पन्थ में प्रवरते ह। कईएक मूख साधुका धम नहीं जान है अर नाना प्रकार के उपकरण साधु के बतावे है। अर निर्दोष जान ग्रहै ह वे वाचाल ह। जे कुलिंग कहिये खोटे भेष मूढनिने आचरे ह वे वृथा है। तिनसू मोक्ष नाहीं। जसे कोई मूख मतकके भारकू वहै ह सो वृथा खेद करै ह। जिनके परिग्रह नाहीं अर काहूसू याचना नाहीं, वे ऋषि ह, निग्रन्थ, उत्तम गुणनिकरि मडित पडितोकरि सेयवे योग्य है। यह महाबली बलदेव के वैराग्य का वणन सुनि ससारसू विरक्त होवो, जाकरि भवतापरूप सूय का आताप न पावो।

इति श्रीरविषणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै श्रीराम का वैराग्य वणन करनवाला एकसौ उन्नीसवा पर्व पूण भया ॥ ११६ ॥

— ——

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहै ह—हे भव्योत्तम! रामचन्द्रके अनेक गुण धरणींद्र हू अनेक जीभकरि गायवे समथ नाहीं, वे महामुनीश्वर जगतक त्यागी, महाधीर, पचोपवासकी है प्रतिज्ञा जिनके, सो ईर्यासमिति पालते नन्दस्थलीनामा नगरी, तहा पारणाके अथ गए। उगते सूय समान है दीप्ति जिनकी, मानो चालते पहाड ही ह। महा स्फटिकमणि समान शुद्ध हृदय जिनका, वे पुरुषोत्तम मानो मर्तिवत धम ही मानो तीन लोकका आनन्द एकत्र होय रामकी मूर्ति निपजी है। महा कांतिके प्रवाहकरि पृथ्वीकू पवित्र करते मानो आकाशविषै अनेक रगकरि कमलोका वन लगवाते नगरविषै प्रवेश करते भए। तिनके रूपकू देखि नगरके सब लोक क्षोभकू प्राप्त भए। लोक परस्पर बतलावें है—अहो देखो! यह अद्भुतरूप, ऐसा आकार, जगतविषै दुलभ, कबहु देखिवेविषै न आवै, यह कोई महापुरुष महासुन्दर शोभायमान, अपूव नर दोनो बाहु लम्बाये आवै ह। धन्य यह धीय! धन्य यह

पराक्रम ! धन्य यह रूप ! धन्य यह काति ! धन्य यह दीप्ति ! धन्य यह शाति ! धन्य यह निर्ममत्वता ! यह कोई मनोहर पुराण पुरुष है ऐसा और नाहीं। जूडे प्रमाण धरती देखता,जीवदया पालता, शान्ति-दृष्टि, समाधानचित्त जनका यति चाल्या आव ह। ऐसा कौनका भाग्य जाके घर यह पुण्याधिकारी आहारकरि कौनकू पवित्र कर ? ताके बडे भाग्य जाके घर यह आहार लेय। यह इन्द्र समान रघुकुल का तिलक,अक्षोभ पराक्रमी,शील का पहाड रामचन्द्र पुरुषोत्तम है। याके दर्शनकरि नेत्र सफल होय मन निमल होय,जन्म सफल होय,देही पाये का यह फल जो चारित्र पालिए। या भाति नगर के लोक राम के दशनकरि आश्चयकू प्राप्त भए,नगर में रमणीक ध्वनि भई। श्रीराम नगरविषै पैठे,अर समस्त गली अर माग स्त्री पुरुषनिके समूहकरि भरि गया। नरनारी नानाप्रकारके भोजन है घरविष जिनके, प्रासुक जलकी झारी भरे द्वारे पेखन करै ह, निमल जल दिखावते पवित्र धोवती पहिरे नमस्कार करै है। हे स्वामी ! अत्र तिष्ठो, अन्न जल शुद्ध ह या भातिके शब्द करै ह। नाहीं समाव ह हृदयविषै हर्ष जिनके हे मुनीन्द्र ! जयवत होवो, हे पुण्यके पहाड ! नादो विरदो। इन वचनोकरि दशोंदिशा पूरित भई, घर घरविष लोग परस्पर बात कर है। स्वर्णके भाजनमें दुग्ध दधि घृत ईखरस दाल भात क्षीर शीघ्र ही तैयार करि राखो, मिश्री मोदक कपूरकरि युक्त शीतल जल। सुन्दर पूरी शिखिरणी भलीभाति विधि से राखो। या भाति नर नारिनिके वचनालाप तिनकरि समस्त नगर शब्दरूप होय गया। महासभ्रमके भरे जन अपने बालकोको न विलोकते भए। मागमें लोक दौडे सो काहूके धक्केसू कोई गिर पडे। या भाति लोकनिके कोलाहल करि हाथी खूटा उपाडते भए,अर ग्रामविष दौडते भए,तिनके कपोलोसू मद झरिवेकरि मार्गविष जलका प्रवाह होय गया। हाथिनिके भयसू घोडे घास तजि तजि बन्धन तुडाय तुडाय भाजे,अर हींसते भए, सो हाथी घोडनिकी घमसाणकरि लोक व्याकुल भए। तब दान-विषै तत्पर राजा कोलाहल शब्द सुनि मदिरके ऊपर आय खडया रहया। दूरसू मुनिका रूप देखि मोहित भया। राजाके मुनिसू राग विशेष, परन्तु विवेक नाहीं। सो अनेक सामत दौडाए अर आज्ञा

करी–स्वामी पधारे ह,सो तुम जाय प्रणाम करि बहुत भक्ति विनती करि यहा आहारकू ल्यावो। सो सामत भी मूख, जाय पायनपर पडि कहते भये–हे प्रभो ! राजाके घर भोजन करहु। वहा महा पवित्र सुन्दर भोजन ह। अर सामान्य लोकनिके घर आहार विरस आपके लेयवे योग्य नाहीं। अर लोकोकू मने किए कि तुम कहा वे जानो हो ? यह वचन सुनकरि महामुनि आपकू अन्तराय जानि नगरसू पीछे चाल्ये। तब सब लोग व्याकुल भए। वे महापुरुष जिन आज्ञाके प्रतिपालक, आचाराग सूत्रप्रमाण ह आचरण जिनका, आहारके निमित्त नगरविष विहारकरि अन्तराय जानि नगरसू पीछे वनविष गए। चिद्रूपध्यानविष मग्न कायोत्सग धरि तिष्ठे। वे अदभुत अद्वितीय सूय, मन अर नेत्रकू प्यारा लागे रूप जिनका, नगरसू विना आहार गए,तब सब ही खेदखिन्न भए।

इनि श्रीरविषणाचायविरचित महा पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविष राम मुनि का आहार के अर्थि नगर में आगमन बहुरि लोकनिके कोलाहलत अन्तराय पाय वनमे आना वणन करने वाला एकसौ बीसवा पव पूण भया ॥ १२०

अथानन्तर राम मुनियो में श्रेष्ठ, बहुरि पचोपवासका प्रत्याख्यान करि यह अवग्रह धारते भये कि वनविषै कोई श्रावक शुद्ध आहार देय तो लेना, नगर में न जाना। या भाति कातारचर्या की प्रतिज्ञा करी। सो एक राजा प्रतिनन्द वाकू दुष्ट तुरग लेय भागा। सो लोकनिकी दृष्टिसू दूर गया। तब राजाकी पटरानी प्रभवा अति चितातुर शीघगामी तुरग पर आरूढ राजा के पीछे ही सुभटनि के समूह करि चाली। अर राजाकू तुरग हर ले गया था सो वनके सरोवरनिविषै कीचमें फस गया। उतने ही में पटराणी जाय पहुची। राजा राणीपै आया। तब राणी राजासू हास्य के वचन कहती भई-हे महाराज ! जो यह अश्व आपकू न हरता तो यह नन्दनवनसा वन अर मानसरोवरसा सर कैसै

देखते ! राजाने कही हे राणी ! वनयात्रा अब सुफल भई जो तिहारा दर्शन भया। या भांति दम्पति परस्पर प्रीतिकी बातकरि सखीजन सहित सरोवरके तीर बैठि नानाप्रकार जल क्रीडा करि दोनों भोजनके अर्थ उद्यमी भए। ता समय श्रीराम मुनि कातारचर्याके करणहारे या तरफ आहारकू आए। यह साधु की क्रिया में प्रवीण, तिनकू देखि राजा हर्षकरि रोमाच भया, राणी सहित सम्मुख जाय नमस्कारकरि ऐसे शब्द कहता भया—हे भगवान! यहां तिष्ठो, अन्न जल पवित्र है। प्रासुक जलकरि राजाने मुनिके पग धोए। नवधा भक्ति करि सप्तगुण सहित मुनिकू महापवित्र क्षीर आहार दिया। स्वर्णके पात्रमे लेयकरि महापात्र जे मुनि तिनके करपात्रमे पवित्र अन्न देता भया। निरंतराय आहार भया। तब देव हर्षित होय पंचाश्चर्य करते भए। अर आप अक्षीण महा ऋद्धिके धारक सो वा दिन रसोईका अन्न अटूट होय गया। पंचाश्चर्यके नाम—पंच वर्ण रत्नोंकी वर्षा, अर महा सुगंध कल्पवृक्षों के पुष्पकी वर्षा शीतल मंद सुगंध पवन, दुंदुभी नाद, जय जय शब्द। धन्य यह दान, धन्य यह पात्र, धन्य यह विधि, धन्य यह दाता नीके करी नीके करी नादो विरधो फूलो। या भांति के शब्द आकाश में देव करते भए। अथवा नवधा भक्तिके नाम मुनिको पडगाहनो, ऊंचे स्थानक राखना, चरणार-विंद धोवने, चरणोदक माथे चढावना, पूजा करनी, मन शुद्ध, वचन शुद्ध, काय शुद्ध, आहार शुद्ध, यह नवधा भक्ति। अर श्रद्धा शक्ति, निर्लोभता, दया, क्षमा, अदेयसापणी नहीं, हर्ष संयुक्त यह दाताके सात गुण। वह राजा प्रतिनंदी मुनिदानसू देवोंकरि पूज्य भया, अर श्रावक के व्रत धारे। निर्मल है सम्यक्त जाके, पृथ्वी में प्रसिद्ध होता भया। बहुत महिमा पाई। अर पंचाश्चर्यमें नानाप्रकारके रत्न स्वर्ण की वर्षा भई, सो दशो दिशा में उद्योत भया अर पृथ्वी का दरिद्र गया। राजा राणी सहित महा-विनयवान भक्तिकरि नम्रीभूत महामुनिकू विधिपूर्वक निरन्तराय आहार देय प्रबोधकू प्राप्त भया अपना मनुष्य जन्म सफल जानता भया। अर राम महामुनि तप के अर्थ एकान्त रहें। बारह प्रकार तप के करणहारे, तप ऋद्धिकरि अद्वितीय, पृथ्वी में अद्वितीय सूर्य विहार करते भए।

इति श्रीरविषणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै राम मुनिकै निरन्तराय आहार वर्णन करने वाला एकसौ इक्कीसवां पर्व पूर्ण भया ।। १२१ ।।

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे श्रेणिक ! वह आत्माराम महामुनि बलदेव स्वामी—शान्त किए हैं राग द्वेष जान, जो और मनुष्योंसूं न बन आवे ऐसा तप करते भए। महा वन-विषै विहार करते पंचमहाव्रत, पंच समिति, तीन गुप्ति पालते शास्त्रके वेत्ता, जितेन्द्री, जिनधर्म में है अनुराग जिनका, स्वाध्याय ध्यान में सावधान, अनेक ऋद्धि उपजी, परन्तु ऋद्धिनि की खबर नाहीं। महाविरक्त निर्विकार, बाईस परीषह के जीतनहारे, तिनके तप के प्रभाव तैं वन के सिंह व्याघ्र मृगादिक के समूह निकट आय बैठें जीवों का जाति विरोध मिट गया। राम का शान्त रूप निरखि शांतरूप भए। श्रीराम महाव्रती, चिदानन्दविषै है चित्त जिनका, परवस्तु की वांछारहित, विरक्त, कर्मकलंक हरिवेकूं है यत्न जिनका, निर्मल शिला पर तिष्ठते, पद्मासन धरे आत्मध्यानविषै प्रवेश करते भए। जैसे रवि मेघमालाविषै प्रवेश करै। वे प्रभु सुमेरु सारिखे, अचल हैं चित्त जिनका, पवित्र स्थानविषै कायोत्सर्ग धरे निज स्वरूप का ध्यान करते भए। कबहुक विहार करै सो ईर्य्यासमिति पालते जूडा प्रमाण पृथ्वी निरखते, महा शांत जीवदया प्रतिपालक देव देवांगनादिक करि पूजित भए। वे आत्म-ज्ञानी जिन आज्ञा के पालक जैन के योगी ऐसा तप करते भए जो पंचम कालविषै काहू के चितवन विषै न आवै। एक दिन विहार करते कोटिशिला आए जो लक्ष्मण ने नमोकार मंत्र जप कर उठाई हुती। सो आप कोटि शिला पर ध्यान धरि तिष्ठे। कर्मों के खिपायवेविषै उद्यमी क्षपकश्रेणि चढिवे का है मन जिनका।

अथानन्तर अच्युत स्वर्ग का प्रतीन्द्र सीता का जीव स्वयंप्रभ नामा, अवधिकरि विचारता भया—

राम का अर आपका परम स्नेह, अपने अनेक भव, अर जिन शासन का माहात्म्य, अर राम का मुनि होना अर कोटिशिला पर ध्यान धरि तिष्ठना। बहुरि मन विषै बिचारी वे मनुष्यनि के इन्द्र, पृथ्वी के आभूषण मनुष्यलोकविषै पति हुते, मैं उनकी स्त्री सीता हुती। देखो कर्म की विचित्रता, मैं तो व्रत के प्रभावतैं स्वर्गलोक पाया, अर लक्ष्मण राम का भाई प्राणहूतैं प्रिय सो परलोक गया, राम अकेले रह गये। जगत के आश्चर्य के करणहारे दोनो भाई बलभद्र नारायण कर्म के उदयतैं बिछुरे। श्रीराम कमल सारिखे नेत्र जिनके, शोभायमान हल मूसल के धारक बलदेव, महाबली सो वासुदेव के वियोगकरि जिनदेव की दीक्षा अंगीकार करते भए। राज अवस्था विषै तो शस्त्रोंकरि सब शत्रु जीते, बहुरि मुनि होय मन इन्द्रिय जीते। अब शुक्लध्यान धार करि कर्म शत्रुकू जीत्या चाहै है। ऐसा होय जो मेरी देव मायाकरि कछु२क इनका मन मोहमें आवै। वह शुद्धोपयोगसू च्युत होय शुभोपयोगविषै आय यहां अच्युत स्वर्गविषै आवै। मेरे इनके महाप्रीति है। मैं अर वे मेरु नन्दीश्वरादिक की यात्रा करें, अर बाईस सागर पर्यन्त भेले रहें। मित्रता बढावें अर दोनों मिल लक्ष्मणकू देखें। यह विचारकरि सीता का जीव प्रतीन्द्र जहां राम ध्यानारूढ थे तहां आया। इनको ध्यानसू च्युत करवे अर्थ देवमाया रची। वसन्त ऋतु वनविषै प्रकट करी। नाना प्रकारके फूल फूले। अर सुगन्ध वायु बाजने लगी, पक्षी मनोहर शब्द करने लगें, अर भ्रमर गुंजार करै हैं, कोयल बोले है, मैना, सुवा नाना प्रकार की ध्वनि कर रहे हैं, आम्र मौर आये, भ्रमरोंकरि मण्डित सोहै है। काम के बाण जे पुष्प तिनकी सुगन्धता फैल रही है। अर कर्णिकार जाति के वृक्ष फूले हैं तिनकरि वन पीत हो रहा है, सो मानो वसन्तरूप राजा पीताम्बरकरि क्रीडा कर रहा है। अर मौलश्री की वर्षा होय रही है। ऐसी वसन्त की लीलाकरि आप वह प्रतीन्द्र जानकी का रूप धरि राम के समीप आया। वह मनोहर वन जहां अर कोई जन नाहीं, अर नाना प्रकार के वृक्ष, सब ऋतु के फूल रहे हैं। ता समय राम के समीप सीता सुन्दरी कहती भई—हे नाथ! पृथ्वीविषै भ्रमण करते कोई पुण्य के योगतैं

तुमकू देखे । वियोगरूप लहर का भरघा जो स्नेह रूप समुद्र ताविष में डूबू हू । सो मोहि थाभो । अनेक प्रकार राग के वचन कहे, परन्तु मुनि अकम्प । सो वह सीता का जीव मोह के उदयकरि कभी दाहिने कभी बाये भ्रमै, कामरूप ज्वर के योगकरि कम्पित ह शरीर, अर महा सुन्दर अरुण ह अधर जाके, या भाति कहती भई—हे देव ! मैं बिना बिचारे तिहारी आज्ञा बिना दीक्षा लीनी । मोहि विद्याधरनि ने बहकाया । अब मेरा मन तुमविष ह । या दीक्षाकरि पूणता होव । यह दीक्षा अत्यन्त वद्धनिकू योग्य ह । कहा यह यौवन अवस्था अर कहा यह दुद्धर व्रत ? महा कोमल फूल दावानल की ज्वाला कसे सहार सक ? अर हजारा विद्याधरनि की कन्या और हू तुमकू वरघा चाह ह मोहि आगे धार ल्याई ह कह ह—तिहारे आश्रय हम बलदेवकू वरें । यह कह ह । अर हजारा दिव्य कन्या नाना प्रकार के आभूषण पहरे राजहसनी समान ह चाल जिनकी, सो प्रतीन्द्र की विक्रियाकरि मुनीन्द्र के समीप आई । कोयलत हू अधिक मधुर बोल-ऐसी सोह मानो साक्षात लक्ष्मी ही ह, मन कू आह्लाद उपजावे, कानोकू अमृत समान ऐसा दिव्य गीत गावती भई । अर बीण, बासुरी, मदग बजावती भई । भ्रमर सारिखे श्याम केश बिजुरी समाम चमत्कार, महासुकुमार पातरी कटि, कठोर अति उन्नत ह कुच जिनके सुन्दर श्रृगार करे, नाना वर्ण के वस्त्र पहिरे, हाव भाव विलास विभ्रम कू धरती मलकती अपनी काति करि व्याप्त किया ह आकाश जिन्होने, मुनि के चौगिद बठी प्राथना करती भई—हे देव ! हमारी रक्षा करो । अर कोई एक पूछती भई—हे देव ! यह कौन वनस्पति ह ? अर कोई एक माधवी लता के पुष्प के ग्रहण के मिस बाहु ऊची करती अपना अग दिखावती भई, अर कई एक भेली होयकरि ताली देती रासमण्डल रचती भई । पल्लव समान है कर जिनके, अर कोई परस्पर जलकेलि करती भई । या प्रकार नाना भाति की क्रीडा करि मुनिके मन डिगायवे का उद्यम करती भई । सो हे श्रेणिक ! जस पवनकरि सुमेरु न डिग तैस श्रीरामचन्द्र मुनि का मन न डिग । आतमस्वरूप के अनुभवी रामदेव, सरल ह दृष्टि जिनकी, विशुद्ध ह आत्मा जिनका, परीषहरूप

वज्रपातसू न डिग । क्षपकश्रेणी चढे शुक्लध्यान के प्रथम पाएविषै प्रवेश किया । रामचन्द्र का भाव आत्माविष लगि अत्यन्त निमल भया । सो उनका जोर न पहुच्या । मूढजन अनेक उपाय करें परन्तु ज्ञानी पुरुषनि का चित्त न चलें । वे आत्मस्वरूपविषै ऐसे दृढ भए जो काहू प्रकार न डिगे । प्रतीन्द्र देव ने मायाकरि राम का ध्यान डिगायवेकू अनेक यत्न किए परन्तु कछु ही उपाय न चल्या । वे भगवान पुरुषोत्तम अनादि काल के कर्मों की वगणा के दग्ध करिवेकू उद्यमी भए । पहिले पाए के प्रसादसू माह का नाशकरि बारहवें गुणस्थान चढे । तहा शुक्लध्यान के दूजे पाए के प्रसाद तै ज्ञानावरण दर्शनावरण अन्तराय का अन्त किया । माघ शुक्लद्वादशी की पिछली रात्रि केवलज्ञानकू प्राप्त भए । केवलज्ञान विष सव द्रव्य समस्त पर्याय प्रतिभासू ज्ञानरूप दपण मे लोकालोक सब भासे । तब इन्द्रादिक देवनिके आसन कम्पायमान भए । अवधिज्ञानकरि भगवान रामकू केवल उपज्या जानकरि केवलकल्याणक की पूजाकू आए । महा विभूति सयुक्त देवनि के समूह सहित बडे श्रद्धावान सब ही इन्द्र आए । घातिया कर्म के नाशक अरहन्त परमेष्ठी तिनकू चारणमुनि अर चतरनिकाय के दव सब ही प्रणाम करते भए । वे भगवान छत्र चमर सिहासन आदिकर शोभित त्रलोक्यकरि वन्दिवे योग्य सयोगकेवली, तिनकी गधकुटी देव रचत भए दिव्यध्वनि खिरती भई । सब ही श्रवण करते भए । अर बारम्बार स्तुति करते भए । सीता का जीव स्वयप्रभ नामा प्रतीन्द्र केवली की पूजा करि तीन प्रदक्षिणा देय बारम्बार क्षमा करावता भया । हे भगवन ! मैं दुबुद्धि ने जो दोष किए सो क्षमा करहु । गौतम स्वामी कहे ह–हे श्रेणिक ! वे भगवान बलदेव अनन्त लक्ष्मी कातिकरि सयुक्त आनन्द मूर्ति, केवली तिनकी इन्द्रादिक देव महा हष के भरे अनादि रीति प्रमाण पूजा स्तुति कर विनती करते भए । केवली विहार किया तब देवहू विहार करते भए ।

इति श्रीरविषेणाचायविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविष रामक केवलज्ञान की उत्पत्ति वणन करने वाला एकसौ बाईसवा पव पूण भया ।। १ २ ।।

अथानन्तर सीता का जीव प्रतीन्द्र लक्ष्मण के गुण चितारि लक्ष्मण का जीव जहा हुता, अर खर-दूषणका पुत्र शम्बूक असुरकुमार जातिका देव हुता तहा जायकरि ताकू सम्यग्ज्ञान का ग्रहणकराया। सो तीजे नरक नारकिनकू बाधा कराव। हिसानन्द रौद्रध्यानविष तत्पर, पापी नारकीनिकू परस्पर लडाव। पाप के उदयकरि जीव अधोगति जाय। सो तीजे तक तो असुर कुमारहू लडाव आगे असुर कुमार न जाय। नारकी ही परस्पर लडें। जहा कईएकनि कू अग्निकुण्डविष डारें ह सो पुकार है। कई एकनिकू काटनिकर युक्त शालमली वक्ष तिन पर चढाय घसीटे है। कई एकनिकू लोहमई मुदगरनि करि कूटे ह। अर जे मास आहारी पापी तिनकू उनही का मास काटि खवाव ह। अर प्रज्ज्वलित लोहके गोला तिनकू मुखमे मारि २ दह। अर कइएक मार के मारे भूमिविष लोट ह अर मायामयी श्वान, मार्जार, सिह, व्याघ्र दुष्ट पक्षी भख है। तहा तिय च नाहीं नक की विक्रिया ह। कई एकनिकू सूली चढाव ह अर वज्र क मुदगरनित मार है। कई एकनिकू ताता ताम्बा गालि २ प्यावै हैं अर कह ह ये मदिरापान के फल ह। कई एको को काठ मे बाधकरि करोतासू चीर ह। अर कई एको को कुठारनिसू काट ह। कई एको को घानी मे पेले है। कईयो की आंख काढे हैं। कईयों की जीभ काढ़े है। वह क्रूर कई एकोक दात तोडे ह। इत्यादि नारकीनिकू अनेक दुख है सो अवधि ज्ञानकरि प्रतीन्द्र नारकीनिकी पीडा देखि शम्बूक के समझायबेकू तीजी भूमि गया। सो असुरकुमार जाति के देव क्रीडा करते हुते वे तो इनके तेजसू डर गए। अर शम्बूकक् प्रतीन्द्र कहते भए—अरे पापी निर्दई तैनें यह क्या आरम्भा जो जीवोकू दुख देव ह। हे नीच देव! क्रूर कर्म तजि क्षमा पकड। यह अनर्थ के कारण कर्म तिनकरि कहा? अर यह नरक के दुःख सुनकरि भय उपज ह। तू प्रत्यक्ष नारकीनिकू पीडा करै है, कराव ह सो तुझे त्रास नाही। यह वचन प्रतीन्द्र के सुन शबूक प्रशात भया। दूसरे नारकी तेज न सह सके, रोवते भए, अर भागते भए। तब प्रतीन्द्र ने कही हो नारकी हो। मुझसू मत डरहु, जिन पापनिकरि नरक मे आए हो तिनसू डरो। जब या भांति प्रतीन्द्र ने कही तब उनमे

कईएक मनमें विचारते भए जो हम हिंसा, मषावाद, परधन हरण, परनारि रमण, बहु आरम्भ, बहु परिग्रह में प्रवर्ते, रौद्र ध्यानी भए,उसका यह फल है। भोगनिविष आसक्त भए, क्रोधादिककी तीव्रता भई, खोटे कम कीए, उससू दुख पाया। देखहु यह स्वर्गलोकके देव पुण्य के उदयसू नानाप्रकार के विलास कर है, रमणीक विमान चढे जहा इच्छा होय वहा ही जाय। या भाति नारकी विचारते भए। अर शबूकका जीव जो असुरकुमार उसकू ज्ञानउपज्या। फिर रावणके जीवने प्रतींद्रकू पूछा—तुम कौन हो? तब वाने सकल वृत्तात कहा। म सीता का जीव तप के प्रभावकरि सोलहवें स्वग में प्रतींद्र भया। अर श्रीरामचन्द्र महा मुनीन्द्र होय ज्ञानावरण दशनावरण मोहनीय अन्तरायन का नाशकरि केवली भए। सो धर्मोपदेश देते जगतकू तारते भरतक्षेत्रविष तिष्ठ हैं। नाम गोत्र वेदनी आयु का अन्तकरि परमधाम पधारेंगे। अर तू विषयवासना करि विषम भूमिविष पड्या। अब भी चेत ज्यू कताथ होय। तब रावण का जीव प्रतिबोधकू प्राप्त भया। अपने स्वरूप का ज्ञान उपज्या, अशुभ कम बुरे जाने। मन में विचारता भया मैं मनुष्य भव पाय अणुव्रत महाव्रत न आराधे तात इस अवस्थाकू प्राप्त भया। हाय हाय! मैं कहा किया जो आपकू दुख समुद्र मे डारचा। यह मोह का माहात्म्य है जो जीव आत्महित न कर सके। रावण प्रतीन्द्रकू कह ह—हे देव तुम धन्य हो! विषय की वासना तजी, जिनवचन रूप अमतकू पीकर देवो के नाथ भए। तब प्रतीन्द्र ने दयालु होयकर कही तुम भय मत करो, चलो हमारे स्थानकू चलो। ऐसा कहि याके उठायवेकू उद्यमी भया। तब रावण के जीव के शरीर की परमाणु बिखर गई। जस अग्निकरि माखन पिघल जाय। काहू उपाय करि याहि लेजायवे समथ न भया। जसे दपण में तिष्ठती छाया न ग्रही जाय। तब रावण का जीव कहता भया—हे प्रभो! तुम दयालु हो,सो तुमकू दया उपजे ही, परन्तु इन जीवनिने पूर्वे जे कम उपार्जे हैं तिनका फल अवश्य भोगै ह। विषयरूप मास का लोभी दुगति की आयु बाध हैं सो आयु पयन्त दुख भोगवे ह। यह जीव कर्मों के आधीन, इसका देव क्या करें? हमने अज्ञान के योगसू अशुभ कम

९२१

उपार्जे ह, इनका फल अवश्य भोगेगे । आप छुडायवे समथ नाहीं । तिसस् कृपा करि वह उपदेश कहो जिसकरि फिर दुगति के दुख न पाव । हे दयानिधे ! तुम परम उपकारी हो । तब देव ने कही– परम कल्याण का मूल सम्यग्ज्ञान ह, सो जिन शासन का रहस्य ह, अविवेकियोकू अगम्य है, तीन लोक में प्रसिद्ध ह, आत्मा अमूर्तिक सिद्ध समान उसे समस्त परद्रव्योस् जुदा जान । जिनधर्म का निश्चयकरि यह सम्यग्दशन कर्मों का नाशक शुद्ध पवित्र परमाथ का मूल जीवो ने न पाया । तात अनन्त भव ग्रहे । यह सम्यग्दशन अभव्योकू अप्राप्य है, अर कल्याण रूप है, जगत मे दुलभ ह, सकल में श्रेष्ठ ह । सो जो तू आत्मकल्याण चाह ह तो उसे अगीकार करहु, जिसकरि मोक्ष पावै । उसस् श्रेष्ठ और नाहीं, न हुआ, न होयगा । याहीकरि सिद्ध भए है, अर होयेंगे । जे अरहन्त भगवान ने जीवादिक नव पदाथ भास ह तिनकी दृढ श्रद्धा करनी उसे सम्यग्दशन कहिए । इत्यादि वचनोकरि रावण के जीव कू सुरेन्द्र ने सम्यक्त्व ग्रहण कराया । अर याकी दशा देखि विचारता भया जो देखो रावण के भव में याकी कहा कांति थी, महासुन्दर लावण्यरूप शरीर था,सो अब ऐसा होय गया जैसा नवीन वन अग्निकरि दग्ध हो जाय । जिसे देखि सकल लोक आश्चयकू प्राप्त होते सो ज्योति कहा गई ? बहुरि ताहि कहता भया कमभूमि में तुम मनुष्य भए थे सो इन्द्रियोके क्षुद्र सुख के कारण दुरा-चारकरि ऐसे दुःख रूप समुद्र में डूबे ।

इत्यादि प्रतीन्द्र ने उपदेश के वचन कहे । तिनकू सुनकरि उसके सम्यग्दर्शन दृढ़ भया । अर मन में विचारता भया कर्मों के उदयकरि दुगति के दुख प्राप्त भए, तिनकू भोगि, यहा से छूट मनुष्यदेह पाय, जिनराज का शरण गहूगा । प्रतीन्द्रस् कही–अहो देव ! तुम मेरा बडा हित किया जो सम्य-ग्दशन मे मोहि लगाया । हे प्रतीन्द्र महाभाग्य ! अब तुम जावो । वहा अच्युत स्वग में धम के फलस् सुख भोगि मनुष्य होय शिवपुरकू प्राप्त होवो । जब ऐसा कह्या तब प्रतीन्द्र उसे समाधानरूपकरि कर्मों के उदय कू सोचते सते सम्यग्दृष्टि वहास् ऊपर आया । ससार की मायास् शकित है आत्मा

जाका। अरहन्त सिद्ध साधु जिनधम के शरणविष तत्पर ह मन जाका, तीन बेर पचमेरु की प्रदक्षिणा-करि चत्यालयो का दशनकरि, नारकीनि के दु खसू कम्पायमान है चित्त जाका, स्वगलोक में हू भोगाभिलाषी न भया। मानो नारकीनिकी ध्वनि सुन ह। सोलहव स्वग के देव कू छठे नरक लग अवधिज्ञानकरि दीख ह। तीजे नरक के विष रावण के जीवकू अर शबूक का जीव जो असुरकुमार देव था ताहि सबोधि सम्यक्त्व प्राप्त किया। हे श्रेणिक! उत्तम जीवोसू पर उपकार बन। बहुरि स्वगलोकसू भरतक्षेत्र में श्रीराम के दशन कू आए। पवनसू हू शीघ्रगामी जो विमान तामे आरूढ, अनक देवनिजू सग लिए, नानाप्रकार के वस्त्र पहिरे, हार माला मुकुटादिककरि मडित, शक्ति गदा खडग धनुष बरछी शतघ्नी इत्यादि अनेक आयुधोकू धरे, गज तुरग सिह इत्यादि अनेक वाहनोपर चढे मृदग, बासुरी, बीणा इत्यादि अनेक वादध्वनि के शब्द तिनकरि दशो दिशा पूण करते, केवली के निकट आए। देवो के वाहन गज तुरग सिहादिक तिय च नाहीं देवो की विक्रिया ह। श्रीरामकू हाथ जोडि सीस नवाय बारम्बार प्रणामकरि सीता का जीव प्रती द्र स्तुति करता भया—हे ससारसागर के तारक! तुमनें ध्यानरूप पवनकरि ज्ञान रूप अग्नि दीप्त करी, ससाररूप बन भस्म किया अर शुद्ध लेश्यारूप त्रिशूलकरि मोहरिपु हता, वराग्य रूप वज्रकरि दढ स्नेहरूप पिजरा चूण किया। हे नाथ! हे मुनीन्द्र! हे भवसूदन ससाररूप वनसू जे डरै ह तिनकू तुम शरण हो। हे सवज्ञ कतकत्य! जगत गुरु! पाया ह पाइवे योग्य पद जिन्होंने, हे प्रभो! मेरी रक्षा करो। ससारके भ्रमणसू अति व्याकुल ह मन मेरा, तम अनादिनिधन जिन शासन का रहस्य जानि प्रबल तप करि ससारसागरसू पार भए। देवाधिदेव! यह तुमकू कहा युक्त—जो मुझे भववन में तजि आप अकले विमल पद कू पधारे। तब भगवान कहते भए—हे प्रतीन्द्र! तू राग तजि जे वराग्य में तत्पर है तिनहीकू मुक्ति ह। रागी जीव ससार में डूबे ह। जसे कोई शिलाकू कठ में बांधि भुजावो करि नदीकू नही तिर सक तसै रागादिक के भारकरि चतुगतिरूप नदी न तिरी जाय। जे ज्ञान वराग्य शील सतोष के धारक ह वेई

संसारकू तिरें है। जे श्रीगुरु के वचनकरि आत्मानुभव के लगे वेई भव भ्रमणसू छूटें, और उपाय नाहीं। काहू का भी लें जाया लोकशिखर न जाय, एक वीतराग भावहीसू जाय। इस भांति श्रीराम भगवान सीता के जीवकू कहते भए। सो यह वार्ता गौतमस्वामी ने राजा श्रेणिकसू कही। बहुरि कहते भए–हे नृप! सीता के जीव प्रतींद्र ने जो केवली सू पूछी अर इनने कहा सो सुन। प्रतीन्द्र ने पूछी–हे नाथ! दशरथादिक कहा गए, अर लव अंकुश कहा जावेंगे? तब भगवान ने कही दशरथ कौशल्या सुमित्रा केकई सुप्रभा अर जनक अर जनक का भाई कनक यह सब तप के प्रभावकरि तेरहवें देवलोक गए हैं। यह सबही समान ऋद्धिके धारी देव हैं। अर लव अंकुश महा भाग्य कर्मरूप रजसू रहित होय विमलपदकू इसही जन्मसू पावेंगे। इस भांति केवली की ध्वनि सुनि भामण्डलकी गति पूछी। हे प्रभो! भामंडल कहा गया? तब आप कहते भए–हे प्रतींद्र! तेरा भाई राणी सुन्दर मालिनी सहित मुनिदान के प्रभावकरि देवकुरु भोगभूमि में तीनपल्यकी आयुके भोक्ता भोगभूमिया भए। तिनके दानकी वार्ता सुनि–अयोध्यामें एक बहुकोटि धनका धनी सेठ कुलपति, उसके मकरा-नामा स्त्री, जिसके पुत्र राजावोंके तुल्य पराक्रमी, सो कुलपतिने सुनी सीताकू वनमें निकासी। तब उसने विचारी वह महागुणवती शीलवती सुकुमारअंग निर्जन वनमें कैसे अकेली रहेगी। धिक्कार है संसारकी चेष्टाकू। यह विचारि दयालुचित्त होय द्युति भट्टारकके समीप मुनि भया। अर उसके दोय पुत्र एक अशोक दूजा तिलक। यह दोनो मुनि भए। सो द्युति भट्टारक तो समाधिमरणकरि नवम-ग्रैवेयकमें अहमिंद्र भए अर यह पिता पुत्र तीनो मुनि ताम्रचूणनामा नगर वहा केवलीकी वंदनाकू गए। सो मार्गमें पचास योजनकी एक अटवी वहा चातुर्मासिक आय पड्या। तब एक वृक्षके तले तीनो साधु विराजे मानो साक्षात रत्नत्रय ही है। वहा भामंडल आय निकस्या। अयोध्या आवै था सो विषमवन में मुनिनकू देखि विचार किया यह महापुरुष जिनसूत्रकी आज्ञा प्रमाण निर्जनवनमें विराजे, चौमासे मुनियोंका गमन नाहीं। अब यह आहार कैसे करें? तब विद्याकी प्रबल शक्तिकरि निकट एक नगर

बसाया, जहा सब सामग्री पूण, बाहिर नानाप्रकार के उपवन,सरोवर अर धानके क्षेत्र, अर नगर के भीतर बडी बस्ती, महासम्पत्ति, चारमहोना आप भी परिवारसहित उस नगर में रह्या अर मुनियों के वैयावत किय। वह वन ऐसा था जिसमें जल नाहीं,सो अदभुत नगर बसाया,जहा अन्नजलकी बाहुल्यता। सो नगरमें मुनियोंका आहार भया,अर और भी दु खित भुखित जीवोकू भाति भाति के दान दिए अर सुन्दरमालिनी राणीसहित आप मुनियोकू अनेकवार निरतराय आहार दीया। चतुर्मास पूण भए मुनि विहार करते भए। अर भामण्डल अयोध्या आय फिर अपने स्थानक गया। एक दिन सुन्दर-मालिनी राणीसहित सुखसू शयन कर था सो महलपर विजुरी पडी। राजा राणी दोनो मरकरि मुनिदानके प्रभावसू सुमेरुपवत की दाहिनी ओर देवकुरु भोगभूमि,वहा तीन पल्यके आयुके भोक्ता-युगल उपजे। सो दानके प्रभावसू सुख भोगवें ह। सम्यक्तरहित ह,अर दान करै हैं,सो सुपात्रदानके प्रभावसू उत्तमगति के सुख पाव ह। सो यह पात्रदान महासुख का दाता ह। यह बात सुनि फिर प्रतींद्र ने पूछी हे नाथ! रावण तीजी भूमिसू निकसि कहा उपजेगा, अर मै स्वगसू चयकरि कहा उपजूगा मेरे अर लक्ष्मण के अर रावण के केते भव बाकी ह सो कहो।

तब सवज्ञदव ने कही—हे प्रतींद्र सुन! वे दोनो विजयावती नगरी में सनन्दनामा कुटुम्बी सम्यक-दृष्टि उसके रोहिणीनामा भार्या, उसके गभविष अरहदास ऋषिदास नामा पुत्र होवेंगे, महा गुणवान निर्मलचित्त दोनो भाई उत्तम क्रिया के पालक, श्रावक के व्रत आराधि समाधि मरणकरि जिनराज का ध्यान धरि स्वगविषै देव होवेंगे। तहा सागरात पर्यंत सुख भोगि स्वगसू चयकरि बहुरि वाही नगरी विषै बडे कुलविषै उपजेंगे। सो मुनिनिकू दान देकर हरिक्षेत्र जो मध्यम भोगभूमि वहा युगलिया होय, दोय पल्य की आयु भोगि, स्वग जावेंगे। बहुरि उसही नगरीविष राजा कुमारकीर्ति, राणी लक्ष्मी, तिनके महा योद्धा जयकात जयप्रभ नामा पुत्र होवेंगे। बहुरि तपकरि सातवें स्वर्ग उत्कृष्ट देव होवेंगे देवलोक के महासुख भोगेगे। अर तू सोलहवा अच्युत स्वर्ग वहा सू चयकरि या भरतक्षेत्रविषै रत्न

स्थलपुरनामा नगर वहा चौदह रत्न का स्वामी षट्खण्ड पृथ्वी का धनी चक्रनामा चक्रवर्ती होयगा। तब वे सातवें स्वगसू चयकरि तेरे पुत्र होवेंगे। रावण के जीव का नाम तो इन्द्ररथ, अर वसुदेव के जीव का नाम मेघरथ, दोनो महा धर्मात्मा होवेंगे। परस्पर उनमें अति स्नेह होयगा। अर तेरा उन सू अति स्नेह होयगा। जिस रावण ने नीतिसू तीन खण्ड पृथ्वी का अखण्ड राज्य कीया अर ये प्रतिज्ञा जन्म पयन्त निभाही जो पर स्त्री मोहि न इच्छे ताहि मैं न सेऊ, सो रावण का जीव इन्द्ररथ धर्मात्मा कई एक श्रेष्ठ भवधरि तीथ कर देव होयगा, तीन लोक उसकू पूजेंगे। अर तू चक्रवर्ती राज्यपद तजि मुनिव्रत धारी होय, पचोत्तरोविष वजयतनामा विमान, तहा तप के प्रभावसू अहमिन्द्र होवेगा। तहाँ सू चयकरि रावण का जीव तीथ कर, उसके प्रथम गणधर होय निर्वाण पद पावेंगा। यह कथा श्री भगवान राम केवली तिनके मुख प्रतींद्र सुनकरि अति हर्षित भया! बहुरि सवज्ञ देव ने कही—हे प्रतींद्र! तेरा चक्रवर्ती पद का दूजा पुत्र मेघरथ सो कई एक महा उत्तम भवधरि धर्मात्मा पुष्कर द्वीप के महा विदेह क्षेत्र विष शतपत्रनामा नगर तहा पच कल्याणक का धारक तीथ कर देव चक्रवर्ती पद कू धरे होयगा—ससार का त्यागकरि केवल उपाय अनेको कू तारेगा। अर आप परमधाम पधारेगा। ये वासुदेव के भव तोहि कहे। अर म अब सात वष विष आयु पूणकरि लोक शिखर जाऊ गा। जहासू बहुरि आना नाहीं। अर जहा अनन्त तीथ कर गए अर जावेंगे, अनन्त केवली तहा पहुचे, जहा ऋषभादि भरतादि विराजे ह, अविनाशीपुर त्रलोक्यके शिखर ह। जहा अनन्तसिद्ध ह, वहा मै तिष्ठू गा। ये वचन सुनि प्रतींद्र पदमनाभ जे श्रीरामचन्द्र सवज्ञ वीतराग तिनकू बार बार नमस्कार करता भया। अर मध्यलोकके सव तीथ बदे, भगवानके कत्रिम अकत्रिम चत्यालय अर निर्वाणक्षेत्र वहा सवत्र पूजाकरि अर नन्दीश्वरद्वीपविष अजनिगिरि दधिमुख रतिकर तहा बडे निधानसू अष्टाह्निका की पूजा करी। देवाधिदेव जे अरहन्त सिद्ध तिनका ध्यान करता भया। अर केवली के वचन सुन ऐसा निश्चय भया जो म केवली होय चुका अल्प भव ह, अर भाई के स्नेहसू भोगभूमिविषै जहा भामण्डल का जीव है

तहा उसे देखा अर उसकू कल्याणका उपदेश दीया अर बहुरि अपना स्थान सोलहवा स्वग वहा गया, जाके हजारो देवागना तिनसहित मानसिक भोग भोगता भया। श्रीरामचन्द्र का सत्रह हजार वर्ष की आयु, सोलह धनुष की ऊची काया, कईएक जन्मके पापोसे रहित होय सिद्ध भये। वे प्रभु भव्यजीवों का कल्याण करो। जन्म जरा मरण महारिपु जीते। परमात्मा भये जिनशासनविषै प्रकट है महिमा जिनकी, जन्मजरा मरणका विच्छेदकरि अखण्ड अविनाशी परम अतीन्द्रिय सुख पाया। सुर असुर मुनिवर तिनके जे अधिपति तिनकर सेयवे योग्य, नमस्कार करवे योग्य, दोषो के विनाशक, पच्चीस वष तपकरि मुनिव्रत पालि केवली भये। सो आयु पयन्त केवलीदशाविष भव्योकू धर्मोपदेश देय तीन भवन का शिखर जो सिद्धपद वहा सिधारे।

सिद्धपद सकल जीवोका तिलक है। राम सिद्ध भए। तुम रामकू सीस निवाय नमस्कार करो। राम सुरनर मुनियोकरि आराधिवे योग्य है। शुद्ध ह भाव जिनके,ससारके कारण जे रागद्वेष मोहादिक तिनसू रहित है। परम समाधि के कारण ह। अर महामनोहर ह। प्रतापकरि जीत्या है तरुण सूय का तेज जिनने,अर उन जसी शरद की पूणमासी के चन्द्रमा मे काति नाहीं। सर्व उपमारहित अनुपम वस्तु है। अर स्वरूप जो आत्मरूप उसमें आरूढ ह, श्रेष्ठ है चरित्र जिनके, श्रीराम यतीश्वरो के ईश्वर देवो के अधिपति,प्रतींद्र की मायासू मोहित न भए। जीवोके हितू परम ऋद्धिकरि युक्त अष्टम बलदेव पवित्र शरीर शोभायमान अनन्त वीयके धारी, अतुल महिमाकरि मडित, निर्विकार, अठारह दोषकरि रहित, अष्टादशसहस शीलके भेद तिनकरि पूण,अति उदार, अति गम्भीर ज्ञानके दीपक, तीनलोक में प्रकट है प्रकाश जिनका,अष्टकमके दग्ध करणहारे, गुणोके सागर, क्षोभरहित सुमेरुसे अचल, धम के मूल कषायरूप रिपुके नाशक,समस्त विकल्परहित महानिर्द्वन्द्व,जिनेन्द्रके शासन का रहस्य पाय अतरात्मा-सू परमात्मा भए। उनने त्रैलोक्यपूज्य परमेश्वरपद पाया, तिनकू तुम पूजो। धोय डारे है कमरूप मल जिनने, केवल दर्शनमई। योगीश्वरोंके नाथ, सब दुःखके दूर करणहारे, मन्मथके मथनहारे तिनकू

प्रणाम करो। यह श्रीबलदेवका चरित्र महामनोज्ञ जो भावधर निरन्तर बाच, सुन, पढे, पढावैं, शका रहित होय महाहषका भरा रामकी कथाका अभ्यास कर, तिसके पुण्यकी वृद्धि होय। अर बरी खड्ग हाथमें लिए मारिवेकू आया होय सो शात होय जाय। या ग्रन्थके श्रवणसू धम के अर्थी इष्टधमकू लहै, यशका अर्थी यशकू पाव, राज्यभ्रष्ट हुआ अर राज्य कामना होय तो राज्य पाव, यामें सन्देह नाहीं। इष्ट सयोगका अर्थी इष्टसयोग लह, धनका अर्थी धन पावे, जीतका अर्थी जीत पाव, स्त्री का अर्थी सुन्दर स्त्री पावै, लाभ का अर्थी लाभ पाव, सुख का अर्थी सुख पाव, अर काहूका कोई बल्लभ विदेश गया होय अर उसके आयवेकी आकुलता होय सो वह सुखसू घर आव, जो मनविष अभिलाषा होय सो ही सिद्ध होय। सव व्याधि शात होय,ग्रामके नगरके वनके देव जलके देव प्रसन्न होय। अर नवग्रहो की बाधा न होय, क्रूर ग्रह सौम्य होय जाय, अर जे पाप चिंतवनमें न आवें वे विलाय जाय, अर सकल अकल्याण राम कथाकरि क्षय होय जाय अर जितने मनोरथ ह वे सब रामकथाके प्रसादतै पाव, अर वीतराग भाव दढ होय उसकरि हजाराभवके उपार्जे पापोकू प्राणी दूर कर। कष्टरूप समुद्र कू तिर सिद्धपद शीघ्रही पावै। यह ग्रन्थ महापवित्र ह, जीवको समाधि उपजावनेका कारण है। नाना जन्ममें जीवने पाप उपार्जे, महाक्लेशके कारण तिनका नाशक ह अर नाना प्रकार के व्याख्यान तिन-करि सयुक्त ह। जिसमें बडे बडे पुरुषोकी कथा भव्यजीवरूप कमलोको प्रफुल्लित करनहारी है। सकल लोककरि नमस्कार करिवे योग्य श्रीवधमान भगवान उनने गौतमसू कहा अर गौतमने श्रेणिकसू कहा। याही भाति केवली श्रुतकेवली कहते भए। रामचन्द्रका चरित्र साधुओंकी समाधिकी वृद्धि का कारण, सर्वोत्तम महामगलरूप सो मुनिनिकी परिपाटीकरि प्रकट होता भया। सुन्दर है वचन जिसमें, समी-चीन अर्थकू धरे, अति अदभुत इन्द्रगुरुनामा मुनि तिनके शिष्य दिवाकरसेन,तिनके शिष्य लक्ष्मणसेन, तिनके शिष्य रविषेण, तिन जिन आज्ञा अनुसार कहा। यह रामका पुराण सम्यग्दशन को सिद्धिका कारण, महाकल्याणका कर्ता, निमल ज्ञानका दायक, विचक्षण जीवोंके निरतर सुनिबे योग्य है, अतुल

पराक्रमी, अद्भुत आचरण के धारक, महासुकृती जे दशरथके नन्दन तिनकी महिमा कहा लग कहू। इस ग्रन्थमें बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण, तिनका विस्ताररूप चरित्र है। जो यामें बुद्धि लगावे तो अकल्याणरूप पापोकू तजकरि शिव कहिये मुक्ति उसे अपनी करें। जीव विषय की बाछाकरि अकल्याणको प्राप्त होय ह। विषयाभिलाष कदाचित शातिके अर्थ नाहीं। देखो विद्याधरनिका अधिपति रावण परस्त्रीकी अभिलाषाकरि कष्टकू प्राप्त भया, कामके रोगकरि हता गया। ऐसे पुरुषो की यह दशा है तो और प्राणी विषय वासनाकरि कसे सुख पावैं ? रावण हजारा स्त्रियोंकरि मण्डित निरन्तर सुख सेव था, तृप्त न भया, परदाराकी कामनाकर विनाशकू प्राप्त भया। इन व्यसनोंकरि जीव कसै सुखी होय। जो पापी परदाराका सेवन कर सो कष्टके सागरमे पडे। अर श्रीरामचन्द्र महा शीलवान, परदारा पराङ्मुख, जिनशासनके भक्त,धर्मानुरागी वे बहुतकाल राज्य भोग ससारकू असार जानि वीतरागके मागमें प्रवर्ते परमपदकू प्राप्त भए। और भी जे वीतरागके मागमें प्रवर्तेंगे वे शिवपुर पहुचेंगे। इसलिए जे भव्य जीव ह वे जिनमार्गकी दृढप्रीति कर अपनी शक्ति प्रमाण व्रतका आचरण करो जो पूर्णशक्ति होय तो मुनि होवो अर न्यून शक्ति होय तो अणुव्रतके धारक श्रावक होवो। यह प्राणी धमके फलकरि स्वग मोक्षके सुख पाव ह, अर पापके फलसू नरक निगोदके फल पावै है। यह निसदेह जानो। अनादिकालकी यही रीति ह धम सुखदाई। पाप किसे कहिये अर पुण्य किसे कहिए सो उरविष धारो। जेते धमके भेद ह तिनविष सम्यक्त्व मुख्य है। अर जितने पापके भेद हैं तिनमें मिथ्यात्व मुख्य है। सो मिथ्यात्व कहा ? अतत्त्वकी श्रद्धा,अर कुगुरु कुदेव कुधमका आराधन, परजीवकू पीडा उपजावना, अर क्रोध मान माया लोभकी तीव्रता, अर पाच इन्द्रियोंके विषय सप्तव्यसनका सेवन, अर मित्रद्रोह, कृतघ्न, विश्वासघात, अभक्ष्य का भक्षण, अगम्यविष गमन, ममका छेदक वचन, दुजनता इत्यादि पापके अनेक भेद है वे सब तजने। अर दया पालनी,सत्य बोलना, चोरी न करनी, शीलपालना, तृष्णा तजनी, कामलोभ तजने, शास्त्र पढ़ना, काहूकू कुवचन न कहना, गव न करना,

प्रपच न करना, अवेखसका न होना, शातभाव धरना, परउपकार करना, परदारा—परधन परद्रोह तजना, परपीडाका वचन न कहना, बहु आरभ बहु परिग्रहका त्याग करना, दान देना, तप करना, परदु खहरन इत्यादि जो अनेक भेद पुण्यके हैं वे अगीकार करने । अहो प्राणी हो ! सुखदाता शुभ ह अर दुखदाता अशुभ ह । दारिद्र दु ख रोग पीडा अपमान दुगति यह सब अशुभके उदयसू होय हैं । अर सुख सम्पत्ति सुगति यह सब शुभके उदयसू होय हैं । शुभ अशुभ ही सुख दु खके कारण ह । अर कोई देव दानव मानव सुख दुखका दाता नाहीं । अपने अपने उपजे कमका फल सब भोगवे है । सब जीवोसू मित्रता करना, किसी से वर न करना, किसीको दुख न देना, सब ही सुखी हों, यह भावना मनमें धरनी, प्रथम अशुभको तज शुभमें आवना, बहुरि शुभाशुभत रहित होय शुद्ध पदकू प्राप्त होना । बहुत कहिवे कर क्या ? इस पुराणके श्रवणकर एक शुद्ध सिद्धपद में आरूढ होना, उनके भेद कर्मनि-का विलयकरि आनन्दरूप रहना । हो पडित हो ! परम पदके उपाय निश्चय थकी जिनशासनमें कहे है वे अपनी शक्ति प्रमाण धारण करो, जिसकरि भवसागरसे पार होवो । यह शास्त्र अति मनोहर, जीवोंको शुद्धताका देनहारा, रविसमान सकल वस्तुका प्रकाशक ह सो सुनकर परमानन्द स्वरूप मग्न होवो । ससार असार ह, जिन धम सार ह, जाकरि सिद्धपदको पाइये ह । सिद्धपद समान और पदाथ नाहीं । जब श्रीभगवान त्रलोक्यके सूय वद्धमान देवाधिदेव सिद्धलोक को सिधारे तब चतुथ काल के तीन वष साढे आठ महीना शेष थे । सो भगवान को मुक्त भए पीछे पचमकालमें तीन केवली, अर पाच श्रुतकेवली भए । सो वहा लग तो पुराण पूण रह्या । जसे भगवान ने गौतम गणधरसू कहा अर गौतमने श्रेणिकसू कहा वसा श्रुतकेवलीनिने कहा । श्रीमहावीर पीछे बासठवष लग केवलज्ञान रहा। अर केवली पीछे सौ वर्ष तक श्रुतकेवली रहे । पचम श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामी, तिनके पीछे काल के दोषसू ज्ञान घटता गया । तब पुराणका विस्तारका न्यून होता भया । श्री भगवान महावीरकू मुक्ति पधारे बारह सौ साढ़ तीन वष भये तब रविषेणाचार्यने अठारह हजार अनुष्टुप श्लोकों में

व्याख्यान किया। यह राम का चरित्र सम्यक्त्वचारित्र का कारण केवली,श्रुतकेवली प्रणीत सदा पृथ्वी में प्रकाश करो । जिनशासन के सेवक देव, जिनभक्तिविषै परायण, जिनधर्मी जीवो की सेवा करै है। जे जिन मार्ग के भक्त है उनके सभी सम्यकदृष्टि देव आवै है, नानाविधि सेवा करे है, महा आदर सयुक्त सब उपाय कर आपदा में सहाय करै है। अनादिकालसू सम्यकदृष्टि देवो की ऐसी रीति है। जनशास्त्र अनादि है, काहूका किया नाहीं, व्यजन स्वर यह सब अनादि सिद्ध रविषेणाचार्य कहे है। मै कुछ नाहीं किया, शब्द अर्थ अकृत्रिम है। अलकार छन्द आगम निर्मलचित्त होय नीके जानने। या ग्रन्थविषै धर्म अर्थ काम मोक्ष सब है। अठारह हजार तेईस श्लोक का प्रमाण पद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ है। इस पर यह भाषा भई सो जयवत होवै, जिनधर्म की वृद्धि होवै, राजा प्रजा सुखी होवें।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण सस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै मोक्षप्राप्तिका वर्णन करनवाला एकसौतेईसवां पर्व पूर्ण भया ।। १२३ ।।

भाषाकार का परिचय

चौपाई—जम्बूद्वीप सदा शुभथान। भरतक्षेत्र ता माहिं प्रमाण। उसमें आरजखण्ड पुनीत। बसै ताहिमें लोक विनीत ॥१॥ तिनके मध्य ढुंढार जु देश। निवसें जैनी लोक विशेष। नगर सवाई जयपुर महा। तासकी उपमा जाय न कहा ॥२॥ राज्य करै माधव नृप जहां। कामदार जैनी जन तहां। ठौर ठौर जिन मन्दिर बने। पूज तिनकूं भविजन घने ॥३॥ बसें महाजन नाना जाति। सेवें जिनमारग बहु याति॥ रायमल्ल साधर्मी एक। जाके घटमें स्वपर विवेक ॥४॥ दयावत गुणवत सुजान। पर उपकारी परम निधान॥ दौलतराम सु ताको मित्र। तासो भाष्यो वचन पवित्र ॥५॥ पद्मपुराण महाशुभ ग्रन्थ। तामें लोकशिखरको पन्थ। भाषारूप होय जो येह। बहुजन बाच करें अति नेह ॥६॥ ताके वचन हियेमें धार। भाषा कीनी मति अनुसार॥ रविषेणाचारज कृतसार। जाहि पढे बुधजन गुणधार ॥ ७ ॥ जिनधर्मिनकी आज्ञा लेय। जिनशासनमाहीं चित्त देय ॥ आनन्दसुतने भाषा करी। नन्दो विरदो अति रस भरी ॥८॥ सुखी होहु राजा अर लोक। मिटो सबनिके दुख अरु शोक। बरतो सदा मंगलाचार। उतरो बहुजन भवजल पार ॥९॥ सम्वत अष्टादश शत जान। ता ऊपर तईस बखान (१८२३)। शुक्लपक्ष नवमी शनिवार। माघमास रोहिणि ऋख सार ॥१०॥

दोहा—ता दिन सम्पूरण भयो, यह ग्रन्थ सुखदाय। चतुरसंघ मंगल करो, बढ़े धर्म जिनराय।
या श्रीरामपुराणके छन्द अनूपम जान। सहस बीस द्वय पाचसौ भाषा ग्रन्थ प्रमान ॥

इति श्रीपद्मपुराणजी भाषा समाप्त